सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

४०

(फरवरी-मई १९२९)

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

भूमिका

इस खण्डमें १५ फरवरीसे ३१ मई, १९२९ तककी अवधिकी सामग्रीका समावेश है। इस अवधिमें गांधीजी मुख्य रूपसे स्वराज्य-संग्रामकी तैयारीके तौर पर खादीका प्रचार-कार्य करने और विदेशी-वस्त्र-बहिष्कार-आन्दोलनको संगठित करनेके काममें व्यस्त रहे। स्वराज्यके लिए संघर्ष आरम्भ करनेका निश्चय दिसम्बर १९२८ में कांग्रेस-के कलकत्ता-अधिवेशनमें किया गया था। कांग्रेस कार्य-समितिने १७ फरवरीको दिल्लीमें हुई अपनी बैठकमें चार घंटेकी बहसके बाद बहिष्कार-सम्बन्धी गांधीजीकी योजना-को स्वीकार कर लिया था और उनकी अध्यक्षतामें विदेशी-वस्त्र-बहिष्कार-समितिकी स्थापना की गई थी। गांधीजीने सिंधके प्रमुख कांग्रेस कार्यकर्त्ता श्री जयरामदास दौलतरामको बम्बई विधान-सभाकी सदस्यतासे त्यागपत्र देकर समितिका बाकायदा मंत्री बननेके लिए निमंत्रित किया। एक सुविस्तृत योजना बनाई गई और गांधीजी ने देशके लोगोंसे इस योजनापर जोशके साथ अमल करनेकी अपील की। उन्होंने खादी तथा अन्य रचनात्मक कार्योंके लिए धन इकट्ठा करनेके उद्देश्यसे मार्चमें बर्माकी यात्रा की और विदेशी वस्त्रके बहिष्कारका अपना सन्देश वहाँ भी लोगोंको दिया। अप्रैल-मईमें उन्होंने आन्ध्रका व्यापक दौरा किया। वे वहाँ दूर-दूर तकके गाँवोंमें गये और लाखों गाँववालोंके सामने अपनी बातें रखीं।

गांधीजी विदेशी-वस्त्रके बहिष्कारको अंग्रेजोंके विरुद्ध इस्तेमाल किया जाने-वाला कोई राजनीतिक अस्त्र नहीं मानते थे, बल्कि वे उसे देशमें फैली चिरकालिक बेरोजगारीको दूर करने और करोड़ों क्षुधाग्रस्त लोगोंके लिए स्वराज्य प्राप्त करनेका साधन मानते थे (पृष्ठ ८१)। उन्होंने हर व्यक्तिसे अपनी सामर्थ्य भर प्रयत्न करनेको कहा : "कोई स्त्री या पुरुष अपने वैयक्तिक प्रयासका महत्व कम न समझे। पूर्ण बहिष्कार वैयक्तिक प्रयत्नोंका योग ही तो है। . . . देशव्यापी पैमाने पर अगर कभी कुछ हुआ तो वह वैयक्तिक प्रयासोंके परिणामस्वरूप ही होगा" (पृष्ठ ४७-८)।

विदेशी कपड़ेकी सार्वजनिक होली जलानेका कार्यक्रम फिरसे आरम्भ किया गया और ४ मार्चको कलकत्ताके श्रद्धानन्द पार्कमें गांधीजीने स्वयं भी पुलिसके नोटिसकी अवहेलना करते हुए विदेशी कपड़ोंकी एक होली जलाई। नोटिसमें कहा गया था कि विदेशी-वस्त्रोंकी होली जलाना कानूनन अपराध माना जायेगा। गांधीजीने कानूनकी इस व्याख्याको स्वीकार नहीं किया और जब अदालतमें उनके विरुद्ध अभियोग लगाया गया तब उन्होंने वहाँ भी वही बात दोहराई जो उन्होंने सभामें विस्तारपूर्वक समझाई

थी : "यह बहिष्कार सविनय अवज्ञाका अंग नहीं है। केवल अवज्ञा करने और गिरफ्तार होनेके ख्यालसे पुलिसके नोटिसकी अवहेलना करनेका कोई इरादा नहीं था" (पृष्ठ १९१)। गांधीजीको अपराधी करार दिया गया और उनपर १ रुपयेका जुर्माना किया गया। मजिस्ट्रेटके निर्णयसे गांधीजीको आश्चर्य नहीं हुआ। इससे उनके इस विश्वासकी पुष्टि ही हुई कि "अधिकारियों और जनतामें गंभीर विरोधकी स्थितिमें न्यायाधीश, अनजाने ही क्यों न हो, अधिकारियोंको ही दोषमुक्त ठहराते हैं" (पृष्ठ २१२)।

इस घटना पर 'नवजीवन' में चर्चा करते हुए गांधीजीने कहा : "आशा है कि जो आग उस दिन उस पार्कमें सुलगी है वह लाखों सिपाहियोंकी लाठियोंसे भी नहीं बुझ सकेगी" (पृष्ठ ८८)। इस घटनासे देशमें राजनीतिक सरगर्मी बढ़ी और इसने बहिष्कार आन्दोलनको गति दी। तथापि गांधीजीको संतोष नहीं था। उन्हें देश और कांग्रेसकी दुर्बलताका ज्ञान था और उनका पक्का विश्वास था कि राष्ट्रीय पुनरुज्जीवन-के बिना, जिसे वह आत्म-शुद्धि कहते थे, सरकारको सुधारा नहीं जा सकता। गांधीजी-के लिए रचनात्मक कार्य, जिसमें खादी-कार्य भी शामिल था, आत्मबलका और आत्म-बलमें विश्वासका प्रतीक था। लेकिन अपनी यात्राओंके दौरान उन्होंने अनुभव किया कि रचनात्मक कार्यक्रमको सही भावनाके साथ कार्यान्वित नहीं किया जा रहा है। उन्होंने कहा कि "अहिंसात्मक साधनोंमें सजीव श्रद्धाके मुझे दर्शन नहीं हुए हैं। लोगोंमें अहिंसाके प्रति श्रद्धाकी कमी मैंने देखी है। चारों ओर निराशाका वातावरण फैला हुआ दिखता है। मनुष्यको गिरानेवाले इस अनिश्चयके कारण ही कार्यकर्त्ताओंमें कांग्रेस द्वारा निश्चित कार्यक्रमको उल्लासके साथ पूरा करनेका उत्साह नहीं दीख पड़ता" (पृष्ठ २७४)।

सरकारकी दमन-नीतिकी प्रतिक्रिया-स्वरूप पागलपनपूर्ण प्रतिशोध और असमर्थ क्रोधकी भावनाने जन्म लिया। ८ अप्रैलको जब अध्यक्ष विट्ठलभाई पटेल केन्द्रीय विधान सभामें सरकार द्वारा प्रस्तुत किये गये जनसुरक्षा विधेयकपर अपना निर्णय देनेको खड़े हुए, उसी समय भगतसिंह और बटुकेश्वर दत्तने दर्शक-दीर्घासे दो बम और कुछ लाल पर्चे नीचे सभा-भवनमें फेंके। गांधीजीने उनके इस कार्यकी सार्वजनिक रूपसे निंदा की। लेकिन सरकारसे भी कहा कि "बम फेंकनेवालोंके पागलपनके लिए वह खुद भी कुछ कम जिम्मेदार नहीं है" (पृष्ठ २७३)। साथ ही उन्होंने कांग्रेस कार्यकर्त्ताओंको भी चेतावनी दी : "अहिंसामें विश्वास रखनेवाली कांग्रेसके सदस्य इस कृत्यके प्रति गुप्त रूपसे भी कोई सहानुभूति प्रकट न करें, उलटे अगर उन्हें अहिंसामें सच्चा विश्वास हो तो वे अपने तरीकेपर दूने उत्साहके साथ काम शुरू कर दें" (पृष्ठ २७३)।

८ से २२ मार्च तककी अपनी बर्मा-यात्राके दौरान गांधीजीने बर्माके भारतीय निवासियोंको सलाह दी कि वे बर्मावासियोंके साथ ठीक सम्बन्ध रखें और उनकी आकांक्षाओंके प्रति सहानुभूति रखें (पृष्ठ ११२ और ११९)। बर्माके पृथक्करणके सवालके बारेमें गांधीजीने भारतीयोंको सलाह दी कि "वे किसी पक्षकी तरफदारी न करें और इस प्रश्नको बर्मी लोगोंको ही तय करने दें" (पृष्ठ १९४)।

गैर-राजनीतिक प्रश्नोंपर गांधीजीने नरमीके साथ अपने बर्मी मित्रोंको याद दिलाया कि मैंने आपके बीच कुछ बुराइयोंको देखा है। उन्होंने मांडलेकी एक सार्वजनिक सभामें कहा: "आप कुछ ऐसी चीजें करते हैं जो मुझे बुद्धके उपदेशोंके अनुरूप नहीं लगीं . . ." (पृष्ठ १७०)। मैं चाहता हूँ कि आप बर्माके लोग अहिंसाके उद्देश्यकी सिद्धि हेतु हतोत्साहित संसारका पथ-प्रदर्शन करनेवाले प्रकाश-स्तम्भ बनें और इस उद्देश्यकी पूर्तिके लिए आत्म-शुद्धि और प्रायश्चित्तका मार्ग अपनायें (पृष्ठ १७२)।

बर्माकी यात्रासे लौटकर गांधीजीने काठियावाड़ राजनीतिक परिषद्की अध्यक्षता की। उन्होंने स्थानीय कार्यकर्त्ताओंको सलाह दी कि वे देशी नरेशोंके साथ नरमी बरतें। उन्होंने कहा कि भारतीय रियासतोंमें सुधार लागू करा सकना सम्भव है और इसलिए मैं ब्रिटिश सरकारकी भाँति देशी नरेशोंको नष्ट नहीं करना चाहता (पृष्ठ २००-१)। 'नवजीवन' में लिखे अपने एक लेखमें उन्होंने कहा: "देशी राजा तो हमारे जैसे ही हैं। वे तो यहीं पैदा हुए हैं। जो दोष हममें हैं वे उनमें भी हैं, इसलिए जो गुण हममें हैं वे भी उनमें होंगे, यह स्वीकार करनेकी उदारता हममें होनी चाहिए" (पृष्ठ ३१४)।

६ अप्रैलसे २१ मईतक उन्होंने आन्ध्रका दौरा किया। इतना लम्बा दौरा उन्होंने इससे पहले किसी प्रान्तका नहीं किया था और किसी भी प्रान्तकी अपेक्षा आन्ध्रमें उन्होंने सबसे ज्यादा, लगभग २,६४,४०० रुपये इकट्ठे किये। यह उनका सबसे लम्बा और सबसे सघन दौरा था (पृष्ठ ४५०)। उन्होंने कहा कि मैं देशभक्त कोंडा वेंकटप्पैया-जैसे अधीक्षकोंकी देखभालमें और आन्ध्रकी जैसी जनताके बीच ऐसे सैकड़ों दौरे करनेको तैयार हूँ (पृष्ठ ४२६)। अपने भाषणोंमें गांधीजीने जनताको स्वराज्यके चार स्तम्भोंकी याद दिलाई और कहा: "स्वराज्यके चार स्तम्भोंको हमेशा ध्यानमें रखिए। केवल खद्दर पहनिए, शराब तथा मादक वस्तुओंकी बुराईका उन्मूलन कीजिए, अस्पृश्यताका निवारण कीजिए तथा हिन्दू-मुस्लिम एकता और अन्तर्साम्प्रदायिक एकताके लिए काम करिए" (पृष्ठ ३३०)। गांधीजीकी दृष्टिमें इस दौरेकी एक सबसे महत्वपूर्ण घटना सत्यवती देवी नामकी एक किशोरी विधवाके घर जाना था। यह विधवा अपने सारे रत्नाभूषण खादी-कोषके लिए गांधीजीको अर्पित करना

चाहती थी। बादमें गांधीजीने लिखा: सत्यवतीपर जो-कुछ घटित हुआ है वैसा हजारों हिन्दू घरोंमें हर रोज घटित होता है। यह शाप हिन्दू समाजपर तब तक लगता रहेगा जबतक कि समाज विधवाओंको अक्षम्य दासतामें जकड़े रहेगा (पृष्ठ ३३५)।

गांधीजीने मानव-जातिकी सेवामें अपना सारा जीवन अर्पित कर दिया था। मानव-मात्रकी सेवाके माध्यमसे स्वयं मोक्ष प्राप्त करनेकी दिशामें उन्होंने जो व्यक्तिगत तपश्चर्या की उसका इस खण्डमें पर्याप्त दृष्टांत मिलता है। हरिलालसे मनमुटाव होनेके बाद वे अपने पौत्र, रसिकका पालन-पोषण स्वयं कर रहे थे और उसे राष्ट्रकी सेवाके लिए प्रशिक्षित कर रहे थे। रसिककी असामयिक मृत्यु हो जानेपर लिखते हुए गांधीजीने कहा: "मौतके बारेमें मेरे जो विचार हैं उनके कारण रसिककी मृत्युसे मुझे दु:खका अनुभव नहीं हुआ है, और जो थोड़ा दु:ख हुआ भी है वह निरे स्वार्थवश . . . इस दृष्टिसे उसकी मौत मुझे ईश्वरके और भी अधिक समीप ले जाती है, और पहलेकी अपेक्षा ज्यादा जोरोंसे मुझे मेरी जिम्मेदारीका भान कराती है" (पृष्ठ १५)। अपनी बर्मा-यात्राके समाप्त होते-होते मीराबहनको पत्र लिखते हुए गांधीजीने कहा: "डाक्टर मेहतासे बिछुड़नेका मुझे दु:ख होगा। मैं देख रहा हूँ कि यहाँ रहूँ तो उन्हें आराम दे सकता हूँ। लेकिन यह तो एक ऐसा निजी सौभाग्य है, जिसका सुख मैं नहीं ले सकता" (पृष्ठ १६९)।

लेकिन गांधीजीकी अनासक्तिकी सबसे कठोर परीक्षा तो आश्रममें घटी घटनाओंमें हुई। मगनलालकी एक वर्ष पूर्व मृत्यु हो जानेके बादसे गांधीजी आश्रममें और अधिक नैतिक तथा सामुदायिक अनुशासन लागू करनेमें अधिकाधिक रुचि ले रहे थे। लेकिन अधिकांश अन्तेवासियोंके लिए शायद यह चीज उनकी सामर्थ्यसे बाहर सिद्ध हुई। संकटकी घड़ी उस समय उपस्थित हुई जब अप्रैलमें आश्रमके दो सह-कार्यकर्त्ताओंके नैतिक पतनकी और कस्तूरबा द्वारा आश्रमका एक नियम भंग करनेकी बात गांधीजीके ध्यानमें लाई गई। आश्रमकी बदनामीकी जोखिम उठा कर भी गांधीजीने इन चूकोंके बारेमें 'नवजीवन' में 'मेरा दु:ख, मेरी शर्म' शीर्षकसे एक लेख लिखा (पृष्ठ २११-१४)। उन्होंने मीराबहनको लिखा: "इन बातोंका भंडाफोड़ होनेसे हमारा लाभ ही हुआ है" (पृष्ठ २६४)। और घनश्यामदास बिड़लाको पत्र लिखकर उन्होंने इसे 'दोषके जाहिर स्वीकारका मीठा अनुभव' (पृष्ठ ३२५) बताया।

गांधीजीने इन चूकोंकी जिम्मेदारी अपने ऊपर ओढ़ ली। उन्होंने कहा: "आश्रममें जो पाप होते हैं, वे मेरे पापोंकी प्रतिध्वनियाँ हैं" (पृष्ठ २२३)। उनके मनकी व्यथा इस प्रश्नमें फूट निकलती है: "लेकिन मैं कहाँ जाऊँ, क्या करूँ? निकल भागूँ? आत्महत्या करूँ? भूखों मरूँ? आश्रममें ही गड़ जाऊँ? सार्वजनिक कामके

लिए अथवा अपने पेटके लिए एक भी कौड़ी लेनेसे इनकार करूँ?" (पृष्ठ २२३)। वे कोई भी काम यन्त्रवत नहीं कर सकते थे और उन्होंने कहा कि मुझे अपने अन्त:करणकी आवाज क्या कहती है, उसकी प्रतीक्षा करनी होगी। "प्रभु प्रीत्यर्थ जो काम शुरू किया है उसे प्रेरणाके अभावमें मैं कैसे छोड़ सकता हूँ? जिस दिन प्रभु मुझसे यह काम छुड़ाना चाहेंगे, उस दिन वह लोगोंमें मेरा तिरस्कार करनेकी बुद्धि पैदा करेंगे। उस समय भी मेरा हृदय उनसे 'मैं तेरा और तू मेरा' कह सकेगा, इसी आशापर मैं जी रहा हूँ" (पृष्ठ २२३)।

इन भंडाफोड़ोंके बाद जो तनावकी स्थितियाँ पैदा हुई उनके कारण महादेव देसाई और नारणदास गांधी आदि अनेक अन्तेवासियोंने आश्रम छोड़ देनेका विचार किया। गांधीजीने आश्रमके आन्तरिक विकासकी गतिकी सीमाएँ समझते हुए अपने नियन्त्रणको ढीला करने और अन्तेवासी जैसा ठीक समझें वैसे आश्रमको ढालनेकी स्वतन्त्रता देनेका निश्चय किया (पृष्ठ ३५२)। आश्रम "विशुद्ध 'डेमोक्रेसी' (प्रजा-तन्त्र)का प्रयोग" करनेका एक साधन था। उन्होंने आश्रमके मन्त्री छगनलाल जोशीसे कह दिया कि आश्रमकी किसी प्रवृत्ति या स्वयं आश्रमको ही यदि बन्द कर दिया जाये तो मुझे परवाह नहीं है।"मैंने घरोंको तोड़नेका धन्धा ही अपना रखा है; घरोंको खत्म करते हुए मेरे मनमें कभी क्षोभ नहीं हुआ।... इस आश्रमको भंग करके नया बनाऊँ तो इसमें मुझे तनिक भी दु:ख नहीं होगा" (पृष्ठ ३६२-६३)। गांधीजीने लिखा कि मैं एक ही चीज चाहता हूँ और वह है साथी कार्यकर्त्ताओंमें सचाई। "सत्य कई बार निर्दय दिखाई देता है। तुम मेरे प्रति निर्दय होनेमें संकोच मत करना। चाहे जो सहना पड़े, किन्तु सचाई न छोड़ो" (पृष्ठ ३६३)।

आश्रमके बारेमें छगनलाल जोशीको पत्र लिखते हुए गांधीजीने कहा: "सत्यको संसारमें कहीं भी शर्म नहीं लगती। यदि सत्य शर्माये तो यह जान लेना चाहिए कि वह असत्य है, सत्य नहीं" (पृष्ठ ३२०)।

युद्ध-सम्बन्धी अपने रवैयेके बारेमें रेवरेंड बी० द लिग्टके एक खुले पत्रका उत्तर देते हुए गांधीजीने कहा: "मैं किसी भी परिस्थितिमें कभी भी ब्रिटेनके युद्धोंमें हाथ नहीं बँटा सकता और मैं इन पृष्ठोंमें पहले लिख ही चुका हूँ कि यदि भारतने हिंसापूर्ण उपायोंसे स्वतन्त्रता हासिल की (जिसे मैं तथाकथित स्वतन्त्रता ही कहूँगा) तो मुझे इस देशपर गर्व नहीं रह जायेगा; उस समय मैं नागरिककी हैसियतसे अपनेको मृत मानूंगा" (पृष्ठ ३८०)।

डा० जॉन मॉट एक प्रसिद्ध इवेंजलिस्ट थे और उन्होंने गांधीजीसे साबरमती-में भेंट की थी। उनसे बातचीत करते हुए गांधीजीने धर्म-परिवर्तनकी निंदा की। उन्होंने कहा कि किसी अन्य व्यक्तिके धर्मका महत्व घटानेकी कोशिश नहीं की जानी

चाहिए बल्कि कोशिश यह होनी चाहिए कि प्रत्येक व्यक्ति जिस धर्मका माननेवाला है, उस धर्मका वह और अच्छा अनुयायी बने। गांधीजीने यह स्वीकार किया कि ईसाई लोकमत उनकी इस बातसे सहमत नहीं है, फिर भी उन्होंने कहा कि पैगम्बरोंने जो-कुछ कहा है वह कोरे शब्दोंमें नहीं बल्कि अपने जीवन और अपने आचरणके जरिये कहा है (पृष्ठ ६४)।

आत्म-नियंत्रणके लिए संघर्ष कर रहे नौजवानोंको सम्बोधित करके लिखे गये एक संक्षिप्त लेकिन मर्मस्पर्शी लेखमें गांधीजीने मनको बलवान और बुद्धिको शुद्ध बनानेके साधनके रूपमें 'गीता' और 'रामायण'का बारम्बार पाठ करनेकी सलाह दी। 'अन्त्यज सर्वसंग्रह'की समालोचना करते हुए अन्तमें उन्होंने यह लिखा: "सच्ची कला कभी निरुपयोगी नहीं होती। . . . प्रकृतिकी कलाका कोई अन्त नहीं है। . . . कुदरतका कण-कण उपयोगी है। मोरके पंखका एक भी रंग निरुपयोगी नहीं है। यह हमारी त्रुटिकी निशानी है कि हम उनमेंसे हरएक का उपयोग करना नहीं जानते। इसमें दोष कुदरतकी स्वच्छंदताका नहीं है" (पृष्ठ ३५६)।

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम साबरमती आश्रम संरक्षक तथा स्मारक न्यास और संग्रहालय, नवजीवन ट्रस्ट और गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदाबाद; गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय, नई दिल्ली; श्रीमती मीराबहन, गाडेन, आस्ट्रिया; श्री रामनारायण पाठक, भावनगर; श्री नारायण देसाई, बारडोली; श्रीमती वसुमती पण्डित, सूरत; श्रीमती राधाबहन चौधरी, कलकत्ता; श्रीमती शारदाबहन शाह, सुरेन्द्रनगर; श्री नारणदास गांधी, पूना; श्री बालकृष्ण भावे, उरूलीकांचन; श्री घनश्यामदास बिड़ला, कलकत्ता; श्री काकासाहब कालेलकर, नई दिल्ली और श्री वालजी गोविन्दजी देसाई, पूना एवं 'बापुना पत्रो–१ : आश्रमनी बहेनोने', 'बापुना पत्रो–७ : श्री छगनलाल जोशीने', 'बापुना पत्रो–६ : गं० स्व० गंगाबहेनने', 'बापुना पत्रो–९ : श्री नारणदास गांधीने', 'बापुनी प्रसादी' के प्रकाशकों तथा निम्नलिखित समाचारपत्रों और पत्रिकाओंके आभारी हैं : 'अमृतबाजार पत्रिका', 'आज', 'ट्रिब्यून', 'नवजीवन', 'प्रजाबन्धु', 'फॉरवर्ड', 'बॉम्बे क्रॉनिकल', 'यंग इंडिया', 'हिन्दुस्तान टाइम्स' और 'हिन्दू'।

अनुसन्धान और सन्दर्भ सम्बन्धी सुविधाओंके लिए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी पुस्तकालय, इंडियन कौंसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स पुस्तकालय, सूचना और प्रसारण मन्त्रालयका अनुसन्धान और सन्दर्भ विभाग, नई दिल्ली, राष्ट्रीय अभिलेखागार (नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया), नई दिल्ली तथा श्री प्यारेलाल नैयर, नई दिल्ली हमारे धन्यवादके पात्र हैं। कागज-पत्रोंकी फोटो-नकल तैयार करनेमें सहायता देनेके लिए हम सूचना और प्रसारण मन्त्रालय, नई दिल्लीके फोटो-विभागके आभारी हैं।

पाठकोंको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री हमें गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मिली है उसे अविकल रूपमें दिया गया है। किन्तु दूसरोंके द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदिमें हिज्जोंकी स्पष्ट भूलें सुधार दी गई हैं।

अंग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करते समय भाषाको यथासम्भव मूलके निकट रखनेका प्रयत्न किया गया है। जो अनुवाद हमें प्राप्त हो सके हैं, हमने उनका उपयोग मूलसे मिलाने और संशोधन करनेके बाद किया है। नामोंको सामान्य उच्चारणके अनुसार ही लिखनेकी नीतिका पालन किया गया है। जिन नामोंके उच्चारणके बारेमें संशय था, उनको वैसे ही लिखा गया है जैसा कि गांधीजीने अपने गुजराती लेखोंमें लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोंमें दिये गये अंश सम्पादकीय हैं। गांधीजीने किसी लेख, भाषण आदिका जो अंश मूल रूपमें उद्धृत किया है, वह हाशिया छोड़कर गहरी स्याहीमें छापा गया है, लेकिन यदि ऐसा कोई अंश उन्होंने अनूदित करके दिया है तो उसका हिन्दी अनुवाद हाशिया छोड़कर साधारण टाइपमें छापा गया है। भाषणोंकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गांधीजीके कहे हुए नहीं हैं, बिना हाशिया छोड़े गहरी स्याहीमें छापे गये हैं। भाषणों और भेंटकी रिपोर्टोंके उन अंशोंमें जो गांधीजीके नहीं हैं, कहीं-कहीं कुछ परिवर्तन किया गया है और कहीं-कहीं कुछ छोड़ भी दिया गया है।

शीर्षककी लेखन-तिथि दायें कोनेमें ऊपर दी गई है। जहाँ वह उपलब्ध नहीं है वहाँ अनुमानसे निश्चित तिथि चौकोर कोष्ठकोंमें दी गई है और आवश्यकता होने पर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन पत्रोंमें केवल मास या वर्षका उल्लेख है उन्हें आवश्यकतानुसार मास या वर्षके अन्तमें रखा गया है। शीर्षकके अन्तमें साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशनकी है। गांधीजीकी सम्पादकीय टिप्पणियाँ और लेख जहाँ उनकी लेखन-तिथि उपलब्ध है अथवा जहाँ किसी निश्चित आधारपर उसका अनुमान किया जा सका है, वहाँ लेखन-तिथिके अनुसार और जहाँ ऐसा सम्भव नहीं हुआ है वहाँ उनकी प्रकाशन-तिथिके अनुसार दिये गये हैं।

इस ग्रन्थमालाके खण्ड १ के सन्दर्भ खण्ड १ के द्वितीय संस्करणके हैं।

साधन-सूत्रोंमें 'एस० एन०' संकेत साबरमती संग्रहालय, अहमदाबादमें उपलब्ध सामग्रीका, 'जी० एन०' गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमें उपलब्ध कागज-पत्रोंका, 'एम० एम० यू०' गांधी स्मारक संग्रहालयकी मोबाइल माइक्रोफिल्म यूनिट द्वारा माइक्रोफिल्म की गई प्रतियोंका और 'सी० डब्ल्यू०' सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय (कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी) द्वारा संगृहीत पत्रोंका सूचक है।

सामग्रीकी पृष्ठभूमि देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध कुछ परिशिष्ट दिये गये हैं। अन्तमें साधन-सूत्रोंकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालकी तारीखवार घटनाएँ दी गई हैं।

विषय-सूची

१. वक्तव्य : सिन्ध कांग्रेसके मामलोंके बारेमें[1]

[१५ फरवरी, १९२९ या उसके पश्चात्][2]

इस महीनेकी १५ तारीखको मीरपुर-खासमें सिन्ध प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके सदस्योंकी एक अनौपचारिक बैठक पार्टीके विभिन्न आपसी मामलोंपर विचार करनेके लिए हुई थी, जिसमें मैं भी बुलाया गया था। यह सभा मूलतः मणिलाल कोठारी द्वारा उन कुछ विवादोंके सिलसिलेमें बुलाई गई थी जो उन्हें प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी दोनों शाखाओंने निपटानेके लिए सौंपे थे और इसमें कार्यकारिणीका चुनाव भी होना था। लेकिन दलोंके बीच तनावको देखते हुए मैंने सदस्योंको सलाह दी है कि वे आपसी सहमतिसे स्वामी गोविन्दानन्दको अध्यक्ष चुन लें। स्वामी गोविन्दानन्दने निम्नलिखित व्यक्तियोंको प्रान्तीय कार्यकारिणीके सदस्यों और निम्नलिखित व्यक्तियोंको अ० भा० कां० कमेटीके सदस्योंके रूपमें मनोनीत किया है।[3]

मैं इस बातसे अवगत हूँ कि अध्यक्ष-पद तथा कार्यकारिणीके लिए भी मनोनीत व्यक्तियोंके बारेमें काफी तीव्र मतभेद हैं। लेकिन मुझे विश्वास है कि उक्त व्यवस्थाको ईमानदारीसे काम करनेका अवसर देनेसे ही सिन्धके हितोंको सबसे अच्छे ढंगसे साधा जा सकता है; जो लोग असन्तुष्ट हैं वे चुपचाप बैठें और प्रान्तीय कमेटीके काममें अड़ंगा न लगायें। मैंने सलाह दी है और सभी सम्बन्धित पक्ष इससे सहमत हैं कि दोनों गुटोंका जिन अखबारोंपर नियन्त्रण है या जिनपर उनका प्रभाव है उनमें वे अपने विरोधियोंका वैयक्तिक रूपसे कोई उल्लेख या टिप्पणी नहीं करेंगे; और यह भी कि दोनों गुटोंको एक-दूसरेके कार्यमें प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष हस्तक्षेपके बिना कार्य करने दिया जायेगा। चूँकि कई सदस्य अनुपस्थित थे, और चूँकि स्वामी गोविन्दानन्दका कहना था कि यह बैठक अनौपचारिक रहनी चाहिए, इसलिए चुनाव नहीं किये गये।

अंग्रेजी (एस० एन० १५३४१) की फोटो-नकलसे।

१. देखिए अगला शीर्षक और "सिन्धके संस्मरण", २१-२-१९२९।

२. गांधीजी १५ फरवरी, १९२९ को मीरपुर-खासमें थे।

३. ये नाम साधन-सूत्रमें नहीं हैं।

२. पत्र : स्वामी गोविन्दानन्दको

मारवाड़ जक्शन
१६ फरवरी, १९२९

प्रिय स्वामी,

मुझे दुख है कि तुम्हारे साथ अकेलेमें बात करनेका जितना समय मिला था उससे ज्यादा नहीं मिल सका। अब मैं तुमसे अपने हृदयकी बात पत्रके अपूर्ण माध्यमसे कहूँगा।

मैं अब तुमसे आशा करता हूँ कि तुम अपने उत्तरदायित्वोंको पूरा करोगे और सबके साथ मधुर व्यवहार करोगे, जैसा कि तुमने वादा किया है। तुम्हें दूसरोंके हृदय जीतनेके लिए विनम्र बनना होगा। तुम्हें एक सच्चा संन्यासी बनना चाहिए जिसके अन्दर क्रोध न हो, विद्वेष न हो और न अपने लिए कोई इच्छा हो। मैंने इस तथ्यको नजरअन्दाज नहीं किया कि अपने निकटके इनेगिने अनुयायियोंके सिवा तुम्हारे पीछे और कोई शक्ति नहीं है। सार्वजनिक कार्यके लिए धनकी आवश्यकता होनेपर तुम उसे इकट्ठा नहीं कर सकते। ये सारी चीजें बदलनी चाहिए। तुमने त्याग किया है, तुम्हारे अन्दर साहस है; फिर वह क्या चीज है जो लोगोंकी भलाईकी खातिर ही उनके ऊपर और अधिक प्रभाव स्थापित कर पानेसे तुम्हें रोकती है?

जब पद ही तुम्हें नहीं चाहता तो तुम पदकी कामना क्यों करते हो? तुम जिस बहुत ही मामूली बहुमतकी सहायतासे पदपर आसीन रह सकते हो, वह कोई सच्चा सन्तोष नहीं दे सकता, और न तुम्हें सेवाका कोई वास्तविक अवसर ही प्रदान कर सकता है। अगर तुम पदको सेवा करनेका माध्यम मानते हो, तो तुम उस पदको तबतक ग्रहण करनेसे क्यों नहीं इनकार कर देते जबतक कि तुम्हारे विरोधी लोग भी तुमसे पद-ग्रहण करनेका आग्रह न करें?

मैं तुम्हारी इच्छाओंको जिस हदतक समझ सका, उस हदतक मैंने उन्हें यथा-सम्भव पूरा किया है। लेकिन मैं चाहूँगा कि चुनाव पूरे होनेके बाद या उससे पहले ही तुम, यदि तुममें विनयशीलता हो तो, जयरामदास तथा अन्य लोगोंसे परामर्श करके किसी दूसरे अध्यक्षका विचार करो जिसे तुम सब सर्वसम्मतिसे निर्वाचित कर सको। किसी भी सूरतमें, मैं तुमसे आशा करता हूँ कि तुम सिन्धमें कांग्रेस-संगठनका कार्य सुचारु रूपसे और ईमानदारीसे चलाओगे। अक्लमन्दको इशारा काफी है। मैं आशा करता हूँ कि तुम इस पत्रको गलत नहीं समझोगे और न इसके गलत अर्थ लगाओगे?[1]

हृदयसे तुम्हारा,

१. देखिए "सिन्धके संस्मरण", २१-२-१९२९ भी।

[पुनश्च :]

मैं इतवारसे मंगलवारतक दिल्लीमें हूँ। मेरा पता, द्वारा स्पीकर पटेल होगा; उसके बाद एक हफ्ते साबरमतीमें।

अंग्रेजी (एस० एन० १५३३९)की फोटो-नकलसे।

३. पत्र : छगनलाल जोशीको

१६ फरवरी, १९२९

चि० छगनलाल,

मीरपुर-खासमें तुम्हारा पत्र मिल गया था। रावजीभाईको नाकका ऑपरेशन कराना हो तो करा लें। मुझे तोतारामजीकी आँखकी खबर इस बार भी नहीं मिली। . . .[1] भाईका तो पूरा किस्सा दुःखद माना जायेगा। अब शायद वे वापस नहीं आयेंगे।

मलकानी वहाँ मंगलवारको पहुँचेगा। तुम्हें पत्र लिखेगा। अन्तमें उसके बारेमें फैसला तो और ही किया है। उसे बिड़ला निधिमें से हर महीने १५० रुपये देने होंगे। वह काम सिन्धमें करेगा और अभी वहाँ खादीका क्रियात्मक शास्त्र सीखनेके लिए आ रहा है।

मैं बुधवारकी शामको वहाँ पहुँचूंगा। आन्ध्रकी यात्रा मुलतवी करके रंगून जानेका निश्चय किया है। ८ मार्चको रंगून पहुँच जायें इस हिसाबसे वहाँसे रवाना होंगे। इस तरह दसेक दिन तो रहनेको मिल जायेंगे। रंगूनसे २१ मार्चतक रवाना होकर २८ मार्चके आसपास आश्रम पहुँच जाऊँगा। वहाँसे ३०, ३१ और १ अप्रैल काठियावाड़में बीतेंगे। फिर तुरन्त आन्ध्र प्रदेशकी ओर। वहाँ एक मास लगेगा। इसके बाद जहाँ भाग्य ले जायेगा वहीं।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

जयसुखलालको वेतन मन्दिरमें से देना और उसके लिए धन जिस किसी विभागसे लेना पड़े ले लेना। जयसुखलालको और हमें तो यही मानना चाहिए कि वह मन्दिरका ही सदस्य है।

गुजराती (जी० एन० ५३८९)की फोटो-नकलसे।

१. नाम यहाँ नहीं दिया गया है।

४. पत्र : शान्तिकुमार मोरारजीको

शनिवार [१६ फरवरी, १९२९][1]

चि० शान्तिकुमार,

मुझे ८ मार्चको रंगून पहुँचना है और दूसरी मार्चसे पहले आश्रम नहीं छोड़ना है। फिर कौनसे रास्तेसे जाऊँ? कलकत्तेके रास्तेसे सबसे जल्दी पहुँच सकते हैं न? डेकपर जानेका विचार है। इस विषयमें तुम कुछ सुझाव दे सकते हो। यह मैं दिल्ली जाते हुए रास्तेमें लिख रहा हूँ। तारीख १७ से १९ तक दिल्लीमें रहूँगा। अध्यक्ष पटेलके यहाँ रहूँगा। माँजी अब तो बिल्कुल ठीक हो गई होंगी। बम्बईमें क्या हुआ? ठीक पता चला हो तो लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ४७१२) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य : शान्तिकुमार मोरारजी

५. पत्र : प्रभावतीको

शनिवार [१६ फरवरी, १९२९][2]

चि० प्रभावती,

तुमारे खत मीले हैं। मैंने पिताजीको खत लीखा है उसका उत्तर दिल्लीमें मीलनेकी आशा है। जो कुछ भी हो तुमारे निश्चिंत रहना है। बाकी तो मीलने पर क्योंकी मैं बुधके रोज आश्रम पहोंचनेकी आशा रखता हूँ।

बापुके आशीर्वाद

जी० एन० ३३१४ की फोटो-नकलसे।

१. डाककी मुहरसे।
२. गांधीजी सिन्धके दौरेके बाद दिल्ली रुकते हुए बुधवार २० फरवरी, १९२९ को आश्रम पहुँचे थे।

६. सूरत जिलेमें नशाबन्दी

बारडोली सत्याग्रहके गौण परिणामस्वरूप सूरत जिलेमें नशाबन्दीका काम चल रहा है। उसके बारेमें श्रीमती मीठुबहन पेटिट लिखती हैं:[1]

जिस आन्दोलनके पीछे मीठुबहन पड़ जायें उसके असफल होनेका डर बहुत थोड़ा ही रह जाता है। इसलिए यह आशा की जा सकती है कि अगर आजके समान यह आन्दोलन आगे भी इसी वेगसे चलता रहा तो थोड़े ही समयमें सूरत जिलेमें शराबका नामोनिशान भी नहीं रह जायेगा। इस तरहका फल भले ही बारडोली सत्याग्रहका उपपरिणाम कहा जाये, लेकिन कई बार मुख्य परिणामकी अपेक्षा उपपरिणाम ज्यादा महत्त्वके साबित होते हैं।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १७-२-१९२९

७. जातिसे बहिष्कृत होनेका डर

बाल-विवाह, वृद्ध-विवाह और बेजोड़ विवाहके बारेमें मेरे लेखोंको पढ़कर गोधराकी दशा श्रीमाली जातिके एक सज्जनने एक लम्बा पत्र लिखा है। उसका सार इस तरह है:

> जिस गोधरामें आपने नौ-दस साल पहले राजनैतिक परिषद्की नींव डाली थी, उस गोधरामें तो आज भी हमारी जातिमें बाल-विवाह, वृद्ध-विवाह और बेजोड़-विवाह होते ही रहते हैं। एक विधवा बहनने अपनी लड़की एक छोटी उम्रके लड़केको दी थी। पीछेसे उसकी आँख खुली। उसने पंचोंसे प्रार्थना की कि उसे इस बन्धनसे मुक्त किया जाये। पंचोंने मंजूरी नही दी। उस बहनने दृढ़ रहकर अपनी कन्याका विवाह एक दूसरे योग्य वरके साथ कर दिया। इसपर पंचोंने उससे दण्डस्वरूप ५०० रुपये माँगे, लेकिन मिले नहीं। यह एक किस्सा हुआ। इस महीनेमें हमारी जातिके बारह विवाह होनेवाले हैं। उनमेंसे बहुतसे ऐसे हैं जो तोड़े जा सकते हैं। लेकिन ऊपरकी घटनाने सभीके दिलोंमें डर भर दिया है। उन विवाहोंमें से एक तो ५६ वर्षके बूढ़ेके साथ होगा। क्या ऐसे विवाहोंसे गरीब बालिकाओंको बचानेकी आप कोई तजवीज नहीं करेंगे?

अगर मुझमें ऐसे अवसरोंपर किसी तरहकी तजवीज करनेकी शक्ति हो तो मैं जरूर ही उसका उपयोग करूँ। किन्तु मुझमें ऐसा करनेकी शक्ति ज्यादा नही है।

१. यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें सूरत जिलेमें मद्यपान निषेध कार्यकी प्रगतिका विवरण था।

ऐसे विवाहोंको रोकनेके लिए तो उन विभिन्न जातियों और उन विभिन्न गाँवोंमें आन्दोलन किये जाने चाहिए, और सो भी प्रतिष्ठित मनुष्योंके द्वारा अथवा जिनमें प्रतिष्ठा प्राप्त करनेकी शक्ति हो उन्हींके द्वारा। मैं तो सचमुच यह भी महसूस कर रहा हूँ कि यह कोई जरूरी नहीं है कि इस तरहके स्थानीय आन्दोलन सम्बन्धित जातियोंतक ही सीमित रहें। मेरी रायमें तो दूसरी जातियोंके प्रतिष्ठित व्यक्तियों-का यह न केवल धर्म है कि वे निर्दय विवाह-सम्बन्धोंको रोकनेमें भाग लें, बल्कि ऐसा करनेका उन्हें अधिकार भी है। यह कहनेका जमाना अब नहीं रहा कि एक जातिके काममें दूसरी जातिको दखल देनेका कोई अधिकार नहीं है। जहाँ-कहीं अन्याय हो रहा हो वहाँ उसे रोकना हरएक न्याय-प्रिय और शक्तिशाली मनुष्यका धर्म है।

अब लोगोंको जातिसे बाहर किये जानेका डर छोड़ देना उचित है। कई बार तो जातिसे निकाला जाना स्वागत करनेकी चीज होती है। जिस जातिके पंच अन्याय करके अपना बड़प्पन खो बैठते हैं, उस जातिमें रहना तो अनीतिमय राज्यमें रहनेके बराबर है। इससे पहले कि जाति उसका बहिष्कार करे, व्यक्तिको स्वयं जातिसे अपना सम्बन्ध तोड़ लेना चाहिए; और उपजातियोंको तो हर हालतमें समाप्त कर देना ही इष्ट है। इस तरह अगर किसी जातिमें से कई लोग स्वेच्छासे बाहर चले आयें तो वह जाति अपने-आप खत्म हो जाये। जहाँ, जिस देशमें जातियोंके बाड़े नहीं हैं वहाँकी जनता भी जब सुखपूर्वक रहती है तो फिर हिन्दू धर्ममें इस तरह न रह सकनेका कोई कारण नहीं है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १७-२-१९२९

८. न्यायकी जय

गुजरात कालेजके विद्यार्थी और उनके संचालक अपनी जीतके[1] कारण धन्यवाद के पात्र हैं। शिक्षा-सचिवको भी साहसपूर्वक निष्पक्ष न्याय करनेके लिए धन्यवाद। शिराज साहबने[2] तो कोई ऐसा काम नहीं किया जिसकी वजहसे उन्हें धन्यवाद दिया जाये। धन्यवादकी पात्रता पानेके लिए उन्हें स्वेच्छापूर्वक इस्तीफा दे देना चाहिए। जो अध्यापक विद्यार्थियोंका प्रेम खो बैठता है और जो अपने वचनका पालन नहीं करता वह अध्यापक-पदके योग्य ही नहीं है।

जो बात बारडोलीमें थी, वही यहाँ भी थी। बारडोलीवाले न्याय चाहते थे, लड़नेवाले सरदार सावधान थे और लोग नियमके पाबन्द और दृढ़ थे। अपने शान्त

१. 'साइमन कमीशन बहिष्कार दिवस' को जो विद्यार्थी कालेजमें उपस्थित नहीं हुए थे उन्हें दण्ड दिया गया था। इसपर विरोध व्यक्त करनेके लिए विद्यार्थियोंने हड़ताल कर दी थी। विस्तृत विवरणके लिए देखिए खण्ड ३८, पृष्ठ ४१२-१४ और ४५०-५१।

२. गुजरात कालेजके प्रधानाचार्य।

बर्तावसे बारडोलीके किसान लोकमतको अपने पक्षमें कर सके थे। नतीजा यह हुआ कि आखिर सरकारको झुकना पड़ा।

ठीक यही बातें विद्यार्थियोंके मामलेमें भी पाई जाती हैं। यहाँ भी संचालक सावधान थे। विद्यार्थियोंको उनके नेतृत्वमें विश्वास था। वे दृढ़ थे। उनकी माँग न्यायपूर्ण थी। विद्यार्थी नियमके पाबन्द थे और अपने शान्त व्यवहारसे उन्होंने भी लोकमतको अपने पक्षमें कर लिया था।

मुझे आशा है कि विद्यार्थी अपनी जीतसे दर्पवश आचार्यका या अध्यापकोंका किसी भी हालतमें अपमान नहीं करेंगे। शान्तिमय लड़ाई लड़नेवाला जीतसे कभी फूल नहीं उठता और न मर्यादा ही छोड़ता है। लेकिन जिस तरह विद्यार्थियोंके लिए विनय और मर्यादाका पालन करना जरूरी है, उसी तरह उन्हें अपनी शक्तिको परखनेकी भी आवश्यकता है। सरकारी विद्यालयोंमें पढ़ते हुए भी वे अपनी स्वतन्त्रताकी रक्षा करें और कभी भी स्वाभिमानपर आँच न आने दें। इसके लिए उन्हें 'डिग्री'के प्रति उदासीन रहनेका अभ्यास करना चाहिए। सार 'डिग्री'में नहीं है। जो-कुछ सार है सो तो ज्ञान-सम्पादनमें है। और ज्ञान-सम्पादन भी वहीं तक उपयोगी है जहाँतक स्वाभिमानकी रक्षा हो। इस तरह तटस्थ होकर अगर वे विद्याभ्यास करेंगे तो दिन-दिन उनका तेज बढ़ेगा। उन्होंने अपने बलके द्वारा यह तो सिद्ध कर दिया है कि राष्ट्रीय कार्योंमें भाग लेनेसे उन्हें कोई रोक नहीं सकता। हमें आशा करनी चाहिए कि वे इस बलका संग्रह करेंगे और स्वराज्य-यज्ञमें अपना योग देंगे।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, १७-२-१९२९

९. पत्र : मीराबहनको

१८ फरवरी, १९२९

चि० मीरा,

मुझे तुम्हारे सब पत्र मिल गये। यह पत्र नई दिल्लीसे लिख रहा हूँ। [उद्योग] मन्दिर जानेके लिए कल रवाना हो जाऊँगा। मन्दिरसे बहुत करके पहली मार्चको रंगूनके लिए चल दूँगा और २७ मार्चके करीब साबरमती लौट आऊँगा। बर्माका पता है: ८, पैगोडा रोड, रंगून, मार्फत डा० मेहता।

तुम्हारे सब पत्र बहुत सान्त्वनादायक हैं। स्पष्ट है कि तुम्हारा काम फल-फूल रहा है। जब यह समझो कि तुम उसके बारेमें किसी हदतक निश्चयपूर्वक कह सकती हो, तब मैं 'यं० इं०'में उसका विवरण छापना चाहूँगा। लेकिन मुझे कोई जल्दी नहीं है। मुझे नरम तकुओंके बारेमें अपनी प्रगतिके समाचार देना। मैंने इस बातकी चर्चा केशूसे की तो उसे यकीन नहीं हुआ। अगर सब आश्रमवासी आश्रमके समयपर काम करनेकी आदत सीख लें तो अच्छा रहेगा।

मेरे आहार सम्बन्धी प्रयोगमें अबतक जो सफलता मिली है, उसपर डा० अन्सारीको बड़ा आश्चर्य है। मेरे वजनके बारेमें उन्हें कोई चिन्ता नहीं है, बशर्ते कि वह और न घटे।

देवदासने शोकको[1] अद्भुत संतुलनके साथ सहन किया है। बा और कान्ति अभी यहीं हैं। बहुत करके वे कल मेरे साथ जायेंगे।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च :]

हाँ तुम्हें 'आत्मकथा' में सुधारका काम जरा तेजीसे करना है। एन्ड्रयूज आज-कल न्यू यार्कमें हैं और ग्रेग भी वहीं हैं।

बापू

अंग्रेजी जी० एन० ९३९९ और ९४०० से; तथा सी० डब्ल्यू० ५३४४ से भी।
सौजन्य : मीराबहन

१०. पत्र : प्रभावतीको

मौनवार [१८ फरवरी, १९२९][2]

चि० प्रभावती,

तुमारे खत मीले हैं। तुमारे बारेमें कल तार आ गया प्रभावतीको घर पर जानेकी आवश्यकता नहिं है। अब तो निश्चित होकर रह सकती है। बुधको तो मीलेंगे इसलीये और कुछ लीखनेका नहिं है।

बापुके आशीर्वाद

जी० एन० ३३३३ की फोटो-नकलसे।

१. रसिकी मृत्युपर; देखिए "एक होनहार बालक", २१-२-१९२९।
२. बुधवारको मिलनेके उल्लेखके आधारपर; सोमवार १८ फरवरीको था।

११. सिन्धके संस्मरण

यह तो सच है कि भारतवर्षकी हरएक चीज मुझे आकर्षित करती है, क्योंकि उसमें मनुष्यकी ऊँचीसे-ऊँची महत्वाकांक्षाको सफल करनेके साधन भरे पड़े हैं। लेकिन जब सन् १९१६ में मैंने पहली बार सिन्धकी यात्रा की थी, तो उसने मुझे एक विशेष ढंगसे अपनी ओर आकर्षित किया था और तबसे सिन्धियोंके तथा मेरे बीच एक ऐसा सम्बन्ध स्थापित हो गया है, जो कठिनतम दबावोंमें भी उतना ही मजबूत बना रहा है। मैंने आवश्यकता पड़नेपर सिन्धियोंसे अप्रिय सत्य भी कहा है, और उन्होंने मेरी आलोचनाको कभी गलत रूपमें नहीं लिया है। सिन्धकी अपनी पिछली व्यापक लेकिन जल्दी-जल्दीमें की गई यात्रामें मैंने खरी बात कहनेमें कहीं कसर नहीं रखी। लोगोंने मेरी बातोंको अच्छी तरह सुना और जहाँ हो सका उन्होंने तत्काल ही मेरी सलाहके मुताबिक काम कर दिखलाया। कराचीके विद्यार्थियोंको मैंने अंग्रेजीमें मानपत्र देने और उसमें खोखली प्रशंसा (खोखली इसलिए कि जिन बातोंकी उसमें प्रशंसा की गई थी उसके मुताबिक कामका सर्वथा अभाव था) भरनेके विरुद्ध जो चेतावनी दी थी उसका तत्काल ही असर होता दिखाई पड़ा। इसके बाद विभिन्न अवसरोंपर जो अनेक मानपत्र मुझे दिये गये, वे कहीं अधिक संयत, सरल, सादी और सुन्दर सिन्धी भाषामें या उतनी ही सरल और सुन्दर हिन्दीमें पढ़े गये थे। इनमें अंग्रेजी मानपत्रोंकी वह शब्दाडम्बरपूर्ण भाषा नहीं थी, जिसे ९० फीसदी आदमी समझ नहीं पाते। इस विषयमें प्रायः पूरी सफलता हैदराबादके विद्यार्थियोंकी सभाको मिली। मानपत्र पहले सिन्धीमें तैयार कर लिया गया था और फिर उसका एक सुन्दर हिन्दी अनुवाद मुझे दिया गया था। इसके बारेमें विस्तारसे अगले सप्ताह लिखूँगा[1]। इस मानपत्रमें एक त्रुटि अवश्य थी; वह यह कि जिन विद्यार्थियोंकी ओरसे यह दिया गया था उन्हें स्वयं इस बातका कोई ज्ञान नहीं था कि मानपत्रमें क्या लिखा गया है। हम लोग ऐसी छोटी-छोटी बातोंमें बहुत ज्यादा असावधानीसे काम लेते हैं। जो मानपत्र संस्थाओंकी तरफसे दिये जायें, देनेसे पहले उनपर संस्थासे सम्बन्ध रखनेवाले सब लोगोंकी राय जरूर ही ले लेनी चाहिए।

लालाजी-स्मारक

लालाजी-स्मारक कोषमें चन्दा देनेकी अपीलके उत्तरमें सिन्धकी जनताने जो रकम दी, वह मेरी अपेक्षाके अनुरूप थी, बल्कि परम आशावादी और सफल राष्ट्रीय-याचक श्री मणिलाल कोठारीको जितनी आशा थी उससे ज्यादा ही थी। सिन्धके चन्देकी रकम ७०,००० रुपयेसे भी बढ़ गई है। इन पृष्ठोंमें जिन तरीकोंका मैंने उल्लेख किया है उसके अनुसार सिन्धके हिस्से जितने चन्देका कोटा अनुमानसे निर्धारित किया

१. देखिए "सच्चे बनो", १४-३-१९२९।

गया था, यह रकम उससे कहीं अधिक है। अगर दूसरे प्रान्त सिन्धके मुकाबले आधी भी कोशिश करें तो लालाजी-स्मारक कोषके लिए जितनी रकमकी अपील की गई है उससे ज्यादा रकम इकट्ठी हो जायेगी। यह काम तभी सरलतापूर्वक हो सकेगा जब लालाजीकी स्मृतिका आदर करनेवाले लोग सरगर्मीसे चन्दा एकत्र करनेमें लग जायेंगे। जिस तरह ईश्वरके अस्तित्वकी याद दिलानेके लिए और उसकी प्रार्थनाके लिए हम मन्दिरोंके घण्टनादकी प्रतीक्षा करते रहते हैं उसी तरह हम लोगोंने अभीतक, बिना लगातार याद दिलाये खुद-ब-खुद अपना फर्ज अदा करनेकी आदत सीखी नहीं है।

खादी

त्रावणकोरकी भाँति ही सिन्धमें भी खादी-प्रचारके लिए असीमित गुंजाइश है। इसका सीधा-सादा कारण यह है कि सिन्धमें युवती और वृद्धा सब स्त्रियाँ सुन्दर किनारीवाली रंग-बिरंगी साड़ियोंके पीछे नहीं भागतीं। वे बिना किनारीवाला सफेद दुपट्टा पहनती हैं। अगर सिन्धके पुरुष कार्यकर्त्ता वहाँकी स्त्रियोंमें थोड़ा भी राष्ट्रीय प्रचार-कार्य करें तो उन्हें सिन्धी महिलाओंको खादी पहनानेमें जरा भी कठिनाई पेश न होगी। लेकिन दुःखकी बात तो यह है कि कुछेक सम्माननीय अपवादोंको छोड़ कर बाकीके सिन्ध-निवासी खादीमें दिलचस्पी ही नहीं रखते। वे विदेशी वस्त्रोंके मोहको छोड़ नहीं सकते। लोगोंकी भयंकर गरीबी, जिसका वे कभी खयाल भी नहीं करते, उनके दिलको पिघलानेमें कामयाब नहीं होती। इसी कारण जहाँतक खादीका सम्बन्ध है, सिन्ध सबसे पिछड़े हुए प्रान्तोंमें से एक है।

खादीका उत्पादन तो वहाँ नाम लेनेको भी नहीं होता। आचार्य कृपलानी, जिन्हें अब आचार्य न कहकर 'फेरीवाला' कृपलानी कहना अधिक ठीक लगता है, बड़े विश्वासके साथ कहते हैं कि सिन्धमें खादीके उत्पादनके लिए बहुत सम्भावनाएँ हैं, क्योंकि उनके विचारमें सिन्धके अमीलों[1] और भाईबन्धोंकी[2] समृद्धिके बावजूद सिन्ध प्रान्तमें काफी गरीबी है। अपने कथनकी पुष्टिके लिए वह कहते हैं कि सिन्धमें आज भी पाइयोंका चलन है। इस बातकी साक्षीके रूपमें इतना तो मैं भी कह सकता हूँ कि उड़ीसाको छोड़ कर और किसी प्रान्तमें मुझे चन्देमें इतनी अधिक पाइयाँ नहीं मिली हैं जितनी कि सिन्धमें। एक जगह सौ से ज्यादा आदमियोंकी सभामें लगभग दस रुपयेका चन्दा हुआ, जिसमें ४० पाइयाँ इकट्ठी हुइ थीं। इस बातको यह कह कर टाला नहीं जा सकता कि लोग कंजूस थे या देना नहीं चाहते थे। सिन्ध में मैंने कंजूसी तो कभी देखी ही नहीं और जिन लोगोंने १२ दिनके थोड़ेसे समयमें ७०,००० रुपयेसे भी ज्यादा रकम दे डाली हो वे देना नहीं चाहते थे, यह कैसे कहा जाये? चन्देकी रकममें उन्होंने जो पाइयाँ दी थीं वे इस बातका सबूत हैं कि सिन्धमें रेलमार्गके आसपासके देहातों तकमें आज भी पाईकी कुछ कीमत है। एक जगह तो

१. नौकरी पेशा अथवा डाक्टरी-जैसे धन्धे करनेवाला वर्ग।
२. व्यापारी वर्ग।

संग्रहकी रकममें मुझे कौड़ियाँ भी दिखाई पड़ीं। पूछनेपर मालूम हुआ कि वहाँ ५ कौड़ियाँ एक पैसेके बराबर होती हैं। फिर भी मैं खुले दिलसे इतना तो मंजूर करता हूँ कि इस 'फेरीवाले' (कृपलानी)की बातको सम्पूर्ण सत्य नहीं मान लेना चाहिए, क्योंकि इसने वर्षोंसे अपने आपको एक निष्कासितके रूपमें प्रान्तके बाहर रख छोड़ा है। साथ ही यह भी सच है कि अबतक सिन्धमें खादीके उत्पादनकी दृष्टिसे जमकर गम्भीरतापूर्वक और नियोजित ढंगसे कोई प्रयत्न नहीं किया गया है और न किसी कुशल खादी-कार्यकर्त्ताका हाथ ही इस प्रयत्नके पीछे रहा है। इसके साथ ही यह भी खयाल कीजिए कि सिन्ध एक कपास पैदा करनेवाला प्रान्त है और यहाँ अनिवार्य प्रारम्भिक शिक्षाका नियम जारी है, जैसा कि हैदराबादमें है। अगर सिन्धमें खादीके अनुकूल वायुमण्डल होता तो वहाँकी पाठशालाओं द्वारा यज्ञार्थ खादी हमेशा तैयार की जा सकती थी। अगर केवल सिन्धकी पाठशालाओंमें ही उचित देखभालके साथ नियमित रूपसे प्रतिदिन सूत कतवाया जाये तो भी वहाँ अच्छी, टिकाऊ और सस्ती खादी बड़ी मात्रामें तैयार हो सकती है। कालेजोंका तो मैं जिक्र ही नहीं कर रहा हूँ। लेकिन जहाँ श्रद्धाका अभाव होता है वहाँ असंख्य शंकाएँ राज करती हैं।

कांग्रेसकी हालत

कोटरी कांग्रेस-कमेटीके साहसी अध्यक्षने वहाँकी सार्वजनिक सभामें मुझे बताया कि उनके कांग्रेस-सदस्योंकी सूचीमें केवल २० सदस्योंके नाम हैं और अगर खादी-मताधिकारका ईमानदारी और कड़ाईसे पालन करवाया जाये तो शायद वहाँ दो से ज्यादा सदस्य न रह पायें। इसके जवाबमें मैंने एक बहुत सीधी-सादी बात कही। वह यह कि अध्यक्ष महोदय खादी-मताधिकारका प्रामाणिक पालन करवानेके लिए बँधे हुए हैं और उनका कर्त्तव्य है कि वह कार्य-समितिको अपना विवरण लिख भेजें, और अगर उन्हें खादीमें विश्वास है तो उन्हें अकेले ही डटे रहनेमें हिचकना नहीं चाहिए।

सिन्धके दूसरे भागोंमें भी कांग्रेस संगठनकी यही हालत है। हर जगह कांग्रेसका काम नाम-मात्रको चल रहा है। कवि तुलसीदासके शब्दोंकी व्याख्या-रूपमें यों कह सकते हैं कि इधर नामधारीके मुकाबले उसके नामका महत्त्व ज्यादा बड़ा है। आज कांग्रेसकी जो हालत है वह बड़ी दयनीय-सी है; जीवनके हर पहलू और समाजके हर अंगमें उसका प्रसार होनेके बदले कांग्रेस अब केवल किसी राजनीतिक उथल-पुथलके अवसरोंसे ही सम्बन्धित रह गई है। सारांश यह कि इस रेतीले मैदानवाले प्रदेशमें कांग्रेसने न तो किसी तरहकी तरक्की करके दिखलाई है और न कोई रचनात्मक कार्य ही वह कर रही है। शायद दूसरे प्रान्तोंकी भी बहुत-कुछ यही हालत होगी। इसलिए मेरे विचारमें कांग्रेसके राजनीतिज्ञोंके सामने बड़ीसे-बड़ी समस्या तो यह है कि वे किसी तरह कांग्रेसको वैसी ही प्रतिष्ठा और प्रभुत्व प्रदान करायें जैसी कि उसे सन् १९२१ में प्राप्त थी। मैं निःसंकोच होकर यहाँ यह कह देता हूँ कि अगर इस कार्यमें खादी-मताधिकार बाधक होता हो तो बिना किसी संकोचके खादी-मताधिकारको कांग्रेस-संगठनकी वेदीपर बलि चढ़ा देना चाहिए और हर तरह कांग्रेस-क्षेत्रसे पाखण्ड,

अप्रामाणिकता तथा खोखलापन उठ जाना चाहिए। मेरी अपनी राय तो यह है कि स्वयं संगठनकर्त्ताओं और नेताओंमें खादीके प्रति पूर्ण विश्वास नहीं है। लेकिन मेरी रायका उस प्रत्यक्ष प्रमाणके सामने, अगर सचमुच वह प्रत्यक्ष है, कोई मूल्य नहीं रह जाता, जिसके अनुसार कहा जाता है कि खादी-मताधिकारकी योजना असफल हुई है। फिर भी इस सम्बन्धमें अपनी यह राय देनेके साथ ही मैं एक दूसरी राय भी प्रकट कर देता हूँ और वह यह है कि खादी-मताधिकारको निकाल दें तो भी हमें कोई बहुतसे ऐसे लोग नहीं मिल जायेंगे जो कांग्रेसके सदस्य बननेको लालायित होंगे।

कांग्रेसके झगड़े

सिन्धमें कांग्रेसके पतनका मूल कारण उसके आन्तरिक झगड़े हैं। मुझे आशा नहीं थी कि उन्हें मिटानेके लिए मुझे बुलाया जायेगा। लेकिन बात ठीक यही हुई और इसपर श्रीयुत मणिलाल कोठारीको कार्य-समितिने चुनाव वगैरा का निरीक्षण करनेके लिए नियुक्त किया। उन्होंने इस कामके साथ-साथ लालाजी-स्मारक-कोषके संग्रह-का काम भी हाथमें ले लिया। इस कारण मैं भी सहज ही इस फन्देमें फाँस लिया गया। जहाँ-जहाँ मैं गया वहाँ-वहाँ कार्यकर्त्ताओंसे शान्तिपूर्वक बातचीत करनेके लिए एक घण्टेका समय अलग निकाल लिया गया था। हर जगहकी बातका सार लगभग एक ही था: 'हमारे झगड़े कांग्रेसके काममें बाधक हो रहे हैं। कृपया सिन्ध छोड़नेसे पहले आप उन्हें निपटाते जाइए।' झगड़ेका कारण मेरी रायमें एक मामूली-सी बात थी, यानी अधिकारोंका बँटवारा। लेकिन दुःख तो इस बातका है कि वहाँ कोई ऐसे अधिकार ही नही हैं, जो बाँटने योग्य हों; न कोई कोष है और न किसी चीज की संरक्षाका सवाल है। सब मिलाकर सिन्धके कांग्रेस-सदस्योंकी संख्या मुश्किलसे ४०० है। ४५ सदस्य प्रान्तीय कमेटीके हैं। कार्य-समितिके १५ सदस्य हैं, जो मेरी रायमें काफीसे ज्यादा हैं। अगर केन्द्रीय संस्थाका काम १५ सदस्योंसे भलीभाँति चल जाता है तो प्रान्तीय संस्थाको ५ सदस्योंसे काम निकाल लेना चाहिए। लेकिन अभी हममें वह व्यवहार-कुशलता नहीं आई है, जिससे हम तमाम सम्भव उत्साह, धन और समयकी बचत कर सकें।

सिन्धमें कांग्रेसके दो दल हैं। दोनोंका ज्यादातर ध्येय कार्यकारिणीपर अपना प्रभुत्व जमानेका है। कार्यकर्त्ताओंमें से हरएकने मुझसे कहा कि सिन्ध कांग्रेसका प्रान्तीय संगठन, जो किसी समय बहुत समरस था, उस समय टुकड़े-टुकड़े हो गया, जब बद-नसीबीसे कौंसिल प्रवेशका सवाल एक सजीव समस्या बना। सिन्धको अलग प्रान्त बनानेके नये सवालने इस भेदको और भी पुष्ट कर दिया। एक दलके मुखिया स्वामी गोविन्दानन्द हैं और दूसरेके श्री जयरामदास। स्वामी गोविन्दानन्द पिछले तीन या उससे ज्यादा साल (मुझे याद नहीं कितने)से अध्यक्ष रहे हैं। श्री जयरामदासके दलने कई अनियमित बातोंकी निश्चित शिकायतें की हैं। लेकिन मैंने इनकी जाँच नहीं की। जब मीरपुर-खासमें दोनोंके प्रतिनिधियोंसे मुझे आखिरी बातचीत करनेका मौका मिला, तो मैंने दोनोंको समझाने और परस्पर मिलानेकी कोशिश की। वहाँकी स्थितिको देखने-भालनेके बाद मैंने एक समझौता पेश किया जो, मेरी रायमें, एक

कच्चा काम था, दोनोंको मिलानेका एक प्रयोगात्मक हल था। इस बातचीतके सिलसिलेमें मैंने देखा कि गोविन्दानन्दके दलवाले स्वामीको अध्यक्ष बनाये रखनेके ज्यादा पक्षपाती थे। स्वयं स्वामी गोविन्दानन्द कांग्रेसके शासनकी बागडोरको अपने हाथोंमें रखनेके हिमायती थे। जहाँतक मैं देख पाया हूँ, श्री जयरामदासकी ऐसी कोई इच्छा नहीं थी; हाँ, वह और उनके दलवाले चाहते थे कि कोई तीसरा आदमी, जो निष्पक्ष हो, अध्यक्ष बने। संघर्षशील चुनावके सिवाय इसका कोई रास्ता मुझे निकलता दिखाई नहीं दिया। मेरी रायमें अगर अध्यक्षकी कुछ प्रतिष्ठा होनी है तो या तो वह सर्वसम्मतिसे चुना जाना चाहिए या फिर बहुत ज्यादा बहुमतसे। लेकिन दोनों दल मुझे बराबर जोटके जान पड़े। इसी कारण दलगत मत लेकर चुनाव करनेकी सलाह देनेके लिए मैं तैयार न था। और मैंने सोचा कि अगर श्री जयरामदास और उनके खास-खास सहयोगी कांग्रेसकी लगामको अपने हाथोंमें लेनेके लिए उत्सुक या इच्छुक नहीं है तो अच्छा हो अगर वे स्वामी गोविन्दानन्दका चुनाव निर्विरोध हो जाने दें और इस तरह अपनी अनिच्छुकताका प्रमाण दें। उसके बाद कार्यकारिणीका चुनाव तो आसान था। इस सम्बन्धमें मैंने केन्द्रीय संस्थाकी परिपाटीकी ओर उनका ध्यान खींचा, यानी अध्यक्ष जिन्हें नामजद करे उन्हें ही चुन लिया जाये। और वैसे भी हरएक अध्यक्षको इस बातका अधिकार मिलना चाहिए और उसमें इतनी योग्यता तो होनी चाहिए कि वह अपनी कार्यकारिणीका चुनाव खुद कर ले। इसी विचारसे मैंने इस कामके लिए कलम स्वामीके हाथमें थमा दी। उन्होंने जयरामदासके दलमें से पाँच नाम चुन लिये और इस तरह दस सदस्य उनके अपने दलके और पाँच प्रतिपक्षके चुने गये। मैंने तो उन्हें अ० भा० कां० कमेटीके लिए भी खुद ही नाम चुन देनेकी सलाह दी, जिससे अधिकारियोंके चुनावका झगड़ा ही न रहे। मुझे आशा है, सिन्धमें इस तरहका चुनाव शीघ्र ही बिना किसी संघर्षके कर लिया जायेगा।

मैं जानता हूँ कि श्री जयरामदासके दलको इस योजनासे सन्तोष नहीं हुआ है। शायद, मेरी मूल सलाहके अनुसार काम करना उन्हें ज्यादा पसन्द होता, जिसके मुताबिक प्रान्तीय संस्थासे निवृत्ति पाकर वे उन जिलोंमें काम करते जहाँ उनका निर्विरोध और स्पष्ट बहुमत रहता। मैंने स्वामीसे पूछा कि वह क्या चाहते हैं, और उन्होंने कहा कि कार्यकारिणीमें वह श्री जयरामदासके दलके प्रतिनिधियोंको रखना चाहेंगे। इसलिए मैंने जयरामदासके दलको जोर देकर यह सलाह दी कि कार्यकारिणीमें शामिल होकर निष्क्रिय सहयोगी बने रहनेमें और इस प्रकार स्वामीको देशकी परीक्षाके इस वर्षमें कांग्रेसका कार्यक्रम पूरा करने देनेमें उनका आत्म-त्याग बढ़ेगा। मैंने उन्हें यह भी सलाह दी है कि वे कार्यकारिणीकी उन्हीं बैठकोंमें शामिल हों, जिनमें स्वामीको उनकी उपस्थितिकी जरूरत हो और अगर वे देखें कि जो-कुछ हो रहा है या जिस नीतिसे काम किया जा रहा है उसके साथ वे अपना नाम जान-बूझकर नहीं आने देना चाहते तो उस हालतमें वे पद-त्याग कर दें।

स्वामी गोविन्दानन्दके सम्बन्धमें भी दो शब्द कहे देता हूँ। उनका स्वार्थ-त्याग निर्विवाद है। उनके साहसके सम्बन्धमें भी दो मत नहीं हो सकते। फिर भी मैं

समझता हूँ कि अगर वह पदमुक्त हो जायें और किसी दूसरेको अध्यक्ष बनानेकी बातपर जोर दें तो वह अपनी सेवा करनेकी शक्तिको और बढ़ा सकेंगे।

'सिन्धके सेवक'

कुछ थोड़ेसे लोगोंने बड़े जोरोंसे यह चर्चा की कि सिन्धसे लालाजी-स्मारकके लिए जो धन इकट्ठा हो वह सबका-सब बाहर न भेजा जाये। मैंने इस बारेमें खुलासा करते हुए कहा कि स्मारक-कोषके लिए जिन नेताओंने अपील की है वे पहले ही यह प्रकट कर चुके हैं कि स्मारक-कोषका उपयोग किस उद्देश्यके लिए किया जायेगा। इस कारण अब कोषके उद्देश्यको बदलनेका मुझे कोई अधिकार नहीं है। फिर भी मैंने यह बताया कि सिन्धका ज्यादातर रुपया सिन्धके काममें आ सकता है, बशर्ते कि कुछ योग्य सिन्धी लालाजीकी सोसायटीके, जो एक देशव्यापी संगठन है, सदस्य बन जायें अथवा दलित जातियोंमें काम करनेके लिए कोई सुन्दर योजना पेश करें। मैं उन्हें विश्वास दिला चुका हूँ कि न तो लालाजीकी सोसायटी और न स्मारक-कोषके न्यासी ही सिन्धकी माँगोंकी उपेक्षा करेंगे जबकि उसने लालाजी-स्मारकके लिए इतनी उदारतापूर्वक दान दिया है। हाँ, साथ ही मैं सिन्धकी जनता को यह भी सूचित कर देता हूँ कि कुछ सिन्धी कार्यकर्त्ताओंको लालाजीकी सोसायटीमें शामिल करनेके लिए अभीसे बातचीत शुरू हो गई है। लेकिन जिस समय इस विषयपर वादविवाद चल रहा था उसी समय स्वामी गोविन्दानन्दने एक सुझाव पेश किया, जिसका आशय यह था कि लालाजीकी सोसायटीके समान ही सिन्धमें एक प्रान्तीय संगठन होना चाहिए। यह विचार मुझे बहुत ज्यादा पसन्द आया। अगर किसी व्यक्तिको सहयोगी कार्यकर्त्ता मिल जायें तो इस तरहकी सोसायटी स्थापित करनेमें किसी तरहकी बाधाकी संभावना नहीं है। सोसायटीके अनुरक्षणके लिए किसीको चिन्तित होनेकी भी आवश्यकता नहीं है। काम करनेवालेको उसकी योग्यताके मुताबिक मजदूरी मिल ही जाती है। जो स्वयंसेवक किसी राष्ट्रीय संस्थामें काम करता है, उसे अपनी सेवाओंके बाजारू मूल्यसे कम मूल्यपर काम करना पड़ता है, और उसे करना भी चाहिए। अतः जबतक वह अपने कार्यसे राष्ट्रको सन्तुष्ट कर सकता है तबतक न तो उससे किसीको ईर्ष्या हो सकती है और न उसे कोई तंगी हो सकती है। लेकिन जब मैंने देखा कि मेरे जाने हुए सिन्धी कार्यकर्त्ताओंमें डाक्टर चोइथराम जैसे पुराने राष्ट्रीय सेवक हैं और अपना सर्वस्व देशकी सेवाके लिए समर्पण कर चुके हैं, तो मैं उनसे मिला और स्वामीका प्रस्ताव उनके सामने रखा। इसपर उन्होंने कहा कि यह चीज तो पहले ही से उनके सामने है। अतः मैंने उनसे और श्री जयरामदाससे कहा कि वे मिलकर एक अच्छी-सी योजना तैयार करें, उसे प्रकाशित करें और उम्मीदवारोंके नाम माँगें। यद्यपि उनके पास साधन हैं, जनतापर प्रभुत्व भी है, और जब-जब उन्होंने धनके लिए प्रार्थना की है तब-तब लोगोंने उसमें उदारतासे धन दिया है, फिर भी उन्हें इस बातमें सन्देह है कि इस योजनाके लिए उन्हें लोगोंका पर्याप्त समर्थन मिलेगा। लेकिन अपने स्वभावके अनुसार मैंने उनसे प्रार्थना की कि वे इस व्यर्थके भयको अपने दिलसे निकाल डालें और अपने आपमें

तथा हाथमें लिए हुए कार्यमें विश्वास रखें। क्योंकि मैंने ऐसा कभी नहीं देखा कि जिस कामका हेतु अच्छा हो और उसके करनेवाले भी अच्छे हों, वह काम धनकी कमीके कारण पूरा न हुआ हो। यह जरूर होता है कि हम अक्सर बुरे कामको अच्छा मान बैठते हैं और बुरे आदमियोंको अच्छा समझ लेते हैं, और फिर शिकायत करते हैं कि धनाभावके कारण हमारा काम बिगड़ा जा रहा है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-२-१९२९

१२. एक होनहार बालक

जिन सज्जनोंने मेरे एक पौत्रकी मृत्युका समाचार सुनकर मेरे पास समवेदना-सूचक तार और पत्र भेजे हैं, मैं उन्हें नम्रतापूर्वक धन्यवाद देता हूँ। रसिक अभी सत्रह वर्षका ही था; लेकिन बचपनसे ही उसे राष्ट्र-सेवक बननेकी तालीम दी गई थी। वह होशियार, प्रगतिशील और महत्त्वाकांक्षी था। साथ ही उसने रुई धुनकनेके काममें प्रवीणता प्राप्त की थी और वह मेरे पुत्र देवदासकी सहायताके लिए दिल्ली गया था, जो जामिया मिलियामें कताई और हिन्दी-शिक्षकका काम करता है। पिछले कुछ महीनोंमें रसिककी बुद्धिमत्ता बहुत-कुछ बढ़ गई थी। मृत्युशय्याका सहारा लेनेसे कुछ दिन पहले उसने मुझे लिखा था कि वह बड़ी लगन और श्रद्धाके साथ 'रामायण' तथा 'गीता'का अभ्यास कर रहा है। उसमें जिम्मेदारीकी अच्छी भावना पैदा हो गई थी। मौतके बारेमें मेरे जो विचार हैं उनके कारण रसिककी मृत्युसे मुझे दुःखका अनुभव नहीं हुआ है, और जो थोड़ा दुःख हुआ भी है वह निरे स्वार्थ-वश। मैं देहधारी रसिकसे बड़ीसे-बड़ी राष्ट्रीय सेवाकी आशा रख रहा था। जहाँतक उसका सवाल है, उसको अब इस शरीरकी आवश्यकता नहीं रह गई थी। फिर वह उस कल्याणकारी मार्गसे गया है जिसका अनुसरण हममें से हरएकको करना चाहिए। इस दृष्टिसे उसकी मौत मुझे ईश्वरके और भी अधिक समीप ले जाती है, और पहलेकी अपेक्षा ज्यादा जोरोंसे मुझे मेरी जिम्मेवारीका भान कराती है। जब मैं सोचता हूँ कि वह अपना कर्त्तव्य करते-करते महाप्रयाण कर गया तो मुझे हर्ष होता है। उसकी मौतने मुझमें मुसलमानोंके और निकट आनेमें मदद की है। देवदासने मुझे बताया है कि रसिकके मुसलमान दोस्त उसपर हमेशा मेहरबान रहे। डाक्टर अन्सारीने न केवल उसकी एक कुशल चिकित्सककी हैसियतसे शुश्रूषा ही की थी बल्कि उसपर पिता-तुल्य प्रेमभाव भी बरसाया था। जामियाके आचार्य और अध्यापकोंने भी उसकी सार-संभालमें कोई कसर नहीं रखी थी। मैं आदरपूर्वक इन सबका आभार मानता हूँ, और तिब्बिया कालेजके डाक्टर शर्मा, रोगीकी लगनपूर्वक शुश्रूषा करनेवाली नर्सों और उन अनेक हिन्दू मित्रोंको धन्यवाद देता हूँ, जिन्होंने रसिककी सेवा-शुश्रूषामें देवदासका हाथ बँटाया था। अगर देवदासको उसके प्रेमी और सेवा-तत्पर हिन्दू, मुसलमान मित्रोंकी सहायता न मिलती तो अपने प्यारे रसिककी बीमारी

और बेहोशीकी लम्बी अवधिमें उसकी सार-संभाल करते-करते स्वयं देवदास आसानीसे टूट गया होता। रसिककी मौत दिलमें दुःख नहीं बल्कि ईर्ष्या पैदा करती है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-२-१९२९

१३. चरखा-गीत

पुरुलिया कुष्ठाश्रमके रेवरेंड डोनाल्ड मिलरने 'वाच टावर' नामक पत्रिकाकी एक कतरन भेजी है, जिसमें रानीगंज कुष्ठाश्रमकी एक महिला रोगीके बारेमें रेवरेंड एफ० डब्ल्यू० रॉस द्वारा दिया गया विवरण छपा है। श्री रॉसके रोचक विवरणको, जिसमें सरोका चरखा-गीत भी शामिल है, आंशिक रूपमें नीचे दे रहा हूँ:[1]

> **सरो हमारे अनेक चरित्रोंमें से एक है, वह सचमुचमें जानने योग्य महिला है। जब कोई माननीय दर्शक हमारे कुष्ठालयमें आता है तो उसका कार्य तब तक पूरा हुआ नहीं माना जाता जबतक सरो उसे यह आशीष नहीं दे लेती . . . 'प्रसन्न रहो, तुम्हारे धन और सन्तानमें वृद्धि हो, तुम इतने साल जियो जितने तुम्हारे सिरमें बाल हैं और तुम्हारा शरीर लोहे-जैसा मजबूत हो।' इस सूत्रको कहनेमें वह कभी थकती नहीं इसलिए यह किंचित् सौभाग्य की ही बात है कि अभीतक कोई बिलकुल गंजा आदमी यहाँ आशीष लेने नहीं आया है . . . जब बुनाईकी चर्चा की जाती है तो सरो खिल उठती है . . . जब उससे यह पूछा जाता है कि क्या वह जानती है कि चरखेका इस्तेमाल कैसे किया जाता है? . . . तब वह अपनी किशोरावस्थाका एक पुराना गीत गाने लगती है . . .**
>
> **'चरखा मेरा पति है, पुत्र है और पौत्र है;**
> **चरखेकी मददसे अब हम हाथी बाँध सकते हैं;**
> **हुम-म-म, हुम-म-म चलता चरखा।'**

इस लोकगीत और इसी तरहके और गीत जो मुझे गुजरात तथा भारतके दूसरे भागोंसे प्राप्त हुए हैं, उनमें जो साम्यता है, वह ध्यान देने योग्य है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-२-१९२९

१. यहाँ केवल कुछ अंश ही दिये जा रहे हैं।

१४. मेरी आसन्न बर्मा-यात्रा

पिछली बार बर्मा मैं सन् १९१५ में गया था, सो भी सिर्फ रंगून शहरमें। उसके बादसे अबतक समयकी कमीके कारण मैं उस महान प्रान्तमें नहीं जा सका हूँ, यद्यपि उधरसे मुझे बहुतसे निमन्त्रण आ चुके है। अगले महीनेकी शुरुआतमें ही मैं वहाँ जानेकी आशा रखता हूँ। मै बर्मा मुख्यत: खादी और गुजरात विद्यापीठके कार्यके लिए जा रहा हूँ, क्योंकि इन दोनों कामोंमें बर्माके गुजरातियोंने हमेशा उदारतापूर्वक सहयोग दिया है। मैं तो लालाजी-स्मारकके लिए भी दान पानेकी आशा रखता हूँ। और यह सोचकर कि इस यात्रामें मैं अपने आजीवन मित्र और साथी डाक्टर प्राण-जीवन मेहतासे भी मिल सकूँगा, मुझे और हर्ष होता है। जो बर्मी मित्र मुझे पहले ही निमंत्रण भेज चुके हैं, वहाँ मुझे उनसे मिलकर परिचय बढ़ानेकी भी आशा है। लेकिन मैं अपने सब मित्रोंको सूचित किये देता हूँ कि मेरे पास समय बहुत थोड़ा है। मार्चके अन्तिम सप्ताहमें मुझे गुजरात लौट आना है जिससे मैं मार्चके अन्तमें मोरवीमें सरदार वल्लभभाई पटेलकी अध्यक्षतामें होनेवाली काठियावाड़ राजनीतिक परिषद्में भाग ले सकूँ। साथ ही मै अपने मित्रोंसे यह भी कह देना चाहता हूँ कि अब मेरा शरीर ऐसा नहीं रह गया है, जो किसी समय बिना थके लगातार हर तरह की मेहनतमें लगा रहता था। इसी सिलसिलेमें मैं उन्हें यह भी याद दिला देता हूँ कि मुझे दो साप्ताहिक पत्रोंका सम्पादन करना पड़ता है और रोजाना पत्रोंका जवाब भी लिखना-लिखाना पड़ता है। अत: मैं स्वागत-समितिसे आशा रखता हूँ कि वह मुझे स्नान, भोजन, आराम, सम्पादन-कार्य और दूसरी लिखा-पढ़ीके लिए लगातार छ: घंटोंका समय देगी। मैं सवेरे ४ बजे उठता हूँ, इसलिए आशा है स्वागत-समिति इसका खयाल रखेगी और रातमें ८ बजेके बाद मेरा कोई कार्यक्रम नहीं ठहरायेगी, जिससे मैं रातमें ९ बजे ही सो सकूँ।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-२-१९२९

१५. दुर्बल गाय बचेगी ?

श्री काशिनाथजी त्रिवेदी आश्रममें रहते हैं और 'हिन्दी-नवजीवन' में मदद देते हैं। उज्जैनमें उनकी तेरह सालकी एक बहन है। वह नहीं चाहते कि उसका विवाह इतनी छोटी उम्रमें हो। लेकिन काशिनाथजी कहते हैं कि उनके पिताजी तीस वर्षके एक विधुरसे उसका सम्बन्ध तय कर चुके हैं। वह यह भी कहते हैं कि इन विधुरकी पत्नीका देहान्त पिछले जनवरी महीनेमें हुआ है। विधुर डाक्टर हैं और मध्यभारतकी एक रियासतमें नौकर हैं। काशिनाथजीके पिताजी समाजकी रूढ़िके कायल हैं और इस लिए 'योग्य वर' न मिलनेकी हालतमें 'बदर्जे मजबूरी' अपनी निर्दोष कन्याका विवाह एक विधुरके साथ करनेको तैयार हुए हैं। विवाहका मुहूर्त गुरुवार ता० ११ मार्च १९२९ के दिन रखा गया है। काशिनाथजीने इस विवाह-सम्बन्धका स्पष्ट विरोध किया है और अपने पिताजीको लिखा है कि उनकी आज्ञानुसार बहनके विवाहमें शामिल होने और उसमें किसी भी तरहका योग देनेसे कर्त्तव्यबुद्धि उन्हें रोक रही है। लेकिन मैंने काशिनाथजीसे कहा है कि केवल लेखी विरोध काफी न होगा, इसलिए वह प्रत्यक्ष जाकर इस पापमय सम्बन्धको रद करानेकी भरसक कोशिश करना चाहते हैं। लड़कीके पिताजीसे मेरी प्रार्थना है कि वह अपना निर्णय बदल दें। अगर वह न बदलें और अपनी हठधर्मीपर कायम रहें, तो मैं आशा करता हूँ कि मध्य-भारतके तमाम विचारशील और जिम्मेदार व्यक्ति काशिनाथजीको उनके पवित्र काममें मदद देंगे और हर तरहके शान्त और नम्र प्रयत्न द्वारा इस विवाहको रोकनेमें सहायक बनेंगे।

एक शब्द इन विधुर डाक्टरको भी, जो इस तरहका दुस्साहस करनेको तैयार हुए हैं। मैं आशा करता हूँ कि डाक्टर अपना धर्म समझेंगे और अपने आप गौ-माता के समान इस बालिकासे ब्याह करनेका पापी खयाल तक अपने मनसे निकाल डालेंगे। यहाँ डाक्टर महाशयको यह याद दिलाना अनुचित न होगा कि पत्नीके स्वर्गवासके बाद कमसे-कम एक वर्षतक अपनी पशुवृत्तिका निग्रह करना न केवल अनुचित ही नहीं है, बल्कि यही उनका शुद्ध कर्त्तव्य है।

हिन्दी-नवजीवन, २१-२-१९२९

१६. पत्र : डी० को

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
२१ फरवरी, १९२९

प्रिय मित्र,

आपके दो पत्र मिले। दिल्लीमें आपका पत्र मिलनेसे पहले पण्डित मालवीयजीसे मेरी बातचीत हो चुकी थी। मैंने आपको लिखे अपने पत्रका सार उन्हें बताया, और उन्होंने कहा कि मैंने आपको बिल्कुल ठीक लिखा है कि मालवीयजी शारीरिक दौर्बल्यके कारण आपको कभी अस्वीकार नहीं कर सकते थे। कुछ भी हो, उन्होंने आपको एक बहुत अच्छा प्रमाणपत्र दिया और कहा कि अगर मैं आपका काम कर सकूँ तो उन्हें बड़ी प्रसन्नता होगी, क्योंकि आपको तुरन्त अपने यहाँ लगाना उनके लिए मुश्किल है। वह सहमत हैं कि आपको अविलम्ब सहायता प्राप्त होनी चाहिए। इस बातचीतके समय संयोगवश श्रीयुत घनश्यामदास बिड़ला भी मौजूद थे। इस बातचीतमें और आपमें उनकी भी दिलचस्पी हो गई और उन्होंने आपको तुरन्त अपने पिलानीके कालेज या हाईस्कूलमें, ठीक याद नहीं है, रख लेनेका प्रस्ताव किया। वहाँके लिए उन्हें एक अच्छे प्रोफेसरको जरूरत है और वहाँ जो वेतन आप चाहते हैं वह मिलनेमें कोई दिक्कत भी नहीं होनी चाहिए। यदि यह पद आपको मंजूर हो तो आप श्रीयुत घनश्यामदास बिड़लाको लिख दें और उनसे मुलाकात तय करके वहाँ चले जायें। उनका पता है: बिड़ला ब्रदर्स, सब्जी मंडी, दिल्ली।

आप क्या कर रहे हैं, कृपया इससे मुझे अवगत कराइएगा। मैं इस पत्रकी और आपके दूसरे पत्रकी भी एक प्रति श्रीयुत घनश्यामदास बिड़लाके पास भेज रहा हूँ। मैं मार्चकी पहली तारीखको साबरमतीसे बर्माके लिए रवाना हो रहा हूँ। मैं चाहता हूँ कि इससे पहले ही आपको कामपर लगा देख लूँ।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १३२९८)की माइक्रोफिल्मसे।

१७. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
२१ फरवरी, १९२९

प्रिय सतीश बाबू,

आपके पत्र मिले। आपके तथा हेमप्रभा देवीके स्वास्थ्यके बारेमें जो विवरण मिला है वह तो बुरा है। बिना दिये कभी कुछ न लेनेके विचारको सदा मनमें जमाये रखनेकी बात मुझे पसन्द नहीं। स्वार्थमय दृष्टिकोणके एक बार समाप्त हो जानेपर बिना दिये कुछ न लेनेका सवाल तो फिर उठता ही नहीं; यह सब तो बिना सोचे सहज ही होता रहता है। यदि मुझे हमेशा स्वयं अपने आगे यही साबित करनेकी जरूरत महसूस होती रहे कि मैंने आपसे एक तोला चावल लेकर आपको बदलेमें दो तोला दाल दी है, तो ऐसी हालतमें मैंने दिया तो कुछ नहीं, लिया-भर ही है। क्योंकि इस बातका अहसास कि आपने मुझे जितना दिया, मैंने आपको उससे अधिक दिया है, मेरे उपहारका मूल्य नष्ट कर देता है। हेमप्रभा देवीके लिए यह सुखकी बात क्यों नहीं हो सकती कि वह अभय आश्रममें रहकर बदलेमें कुछ दिये बिना प्रकट रूपसे सारी सेवाएँ प्राप्त करती रहें। क्या आप हर छोटी-छोटी बातमें इसी तरह व्यवहार करते हैं और हर लेन-देनको तराजूपर रखकर देखते हैं? किन्तु कहीं संतुलन न बिगड़ जाये? और अगर आप ऐसा नहीं सोचते तो इस मामलेमें लेन-देनका विचार ही मनमें क्यों लाते हैं, खास तौरसे जब यह पति और पत्नीके बीचकी नहीं बल्कि दो भिन्न संस्थाओंके बीचकी बात है, ऐसी संस्थाओंकी जो एक-दूसरेसे खिंची भी रहती हैं। पता नहीं मैं अपना आशय स्पष्ट कर भी सका हूँ या नहीं। अवश्य, यह दलील मैं यह मानकर दे रहा हूँ कि अभय आश्रम हेमप्रभादेवीको अपने यहाँ रखनेको खुशीसे तैयार है।

आपके खूराक-सम्बन्धी प्रयोगसे मैं प्रसन्न हूँ। इसमें किया गया परिवर्तन अच्छा है। और जब आप प्रयोग कर ही रहे हैं तो विभिन्न प्रकारके तेलोंके गुणोंकी ठीक जानकारी अब आप मुझसे ज्यादा ठीक कर सकते हैं। जहाँतक मेरा अपना अन्दाज है अलसीका तेल सबको मात करता है। लेकिन यह क्या चीज है जो उसे विकार रहित बनाती है, यह मैं नहीं जानता। और अगर आप अपने तेल सम्बन्धी प्रयोगको वैज्ञानिक ढंगपर चलाना चाहते हैं तो खुदका निकाला हुआ तेल ही प्रयोगमें लायें, क्योंकि बाजारमें आप शुद्ध तेल कभी नहीं पा सकते। और पता नहीं किस कारणसे कोई भी तेल ज्यादा समयतक अच्छा नहीं रह पाता।

आप 'उपवास-उपचार'[1] पर 'यंग इंडिया'में प्रकाशित सामग्रीको सावधानीसे अवश्य पढ़ें। लेखक एक विद्वान व्यक्ति हैं और वह बहुत ही कायदेसे काम करनेवाले

१. इस सम्बन्धमें गांधीजीके विचारोंके लिए देखिए "विलक्षण उपवास-उपचार", २८-२-१९२९।

मालूम होते हैं। हेमप्रभा देवी और तारिणीके लिए मैं उपवासको हर तरहसे एक अच्छा इलाज मानता हूँ, जलवायु परिवर्तनसे भी अच्छा। आपके बारेमें मैं ठीक नहीं कह सकता। लेकिन इस उपायमें सावधानी बरती जानी चाहिए। यह तभी हो सकता है जब अन्धविश्वासकी इस भावनाको कि शक्तिको बनाये रखनेके लिए कुछ खाना जरूरी है, खत्म कर दिया गया हो। और उपवासमें धूप-स्नानकी क्रिया भी शामिल करूँगा, जो बिलकुल वस्त्रहीन होकर की जानी चाहिए। इसके लिए चारों तरफसे घिरी हुई जगह होनी चाहिए। और जब उपवाससे इलाज चल रहा हो तो एनीमाकी मददसे पेट साफ रखना चाहिए। एनीमाके जलके साथ उपवासके तीन सप्ताह उपरान्त भी कभी-कभी मलके कितने ठोस अंश निकलते रहते हैं, जैसा कि मेरे अपने मामलेमें हुआ है, और यह गौर करनेकी चीज है।

मैं नहीं समझता कि 'यंग इंडिया'में जो-कुछ मैं लिख चुका हूँ उसके अलावा खादीके बारेमें मैं आपको कुछ और बता सकूँगा। मेरी योजना[1] स्वीकार कर ली गई है। मेरा केवल यही सुझाव है कि जहाँ-कहीं भी कार्यकर्त्ता प्राप्त हो सकें, वहाँ वे इस पूरी योजनाको, या जिस हदतक उसे कार्यान्वित करना सम्भव हो उस हदतक उसे स्वयं अमलमें लायें।

कांग्रेसका शुद्धीकरण कोई आसान क्रिया नहीं है, लेकिन हम इसके लिए आशान्वित रहें। इसे तो होना ही है अगर——पत्रका यहाँ तकका अंश मंगलवारको[2] दिल्लीमें बोलकर लिखाया गया। लेकिन हम सभी इतने व्यस्त थे कि यह अधूरा पत्र भी टाइप न हो सका और न इतना साफ-साफ लिखा जा सका कि आपके पास भेजा जा सके। मैं जब पत्र लिखा रहा था तब बीचमें बाधा पड़ गई क्योंकि कार्यकारिणीके सदस्य अन्दर आ गये थे। अब मैं पत्र जहाँ छोड़ा था वहाँसे फिर जारी कर रहा हूँ——हमें सत्य और अहिंसाके द्वारा स्वराज्य हासिल करना है। जबतक हम स्वयं शुद्ध न हों सरकारको शुद्ध नहीं बना सकेंगे। इसीलिए मैं कहता हूँ कि मैं खुद अपने ढंगसे, और उन तरीकोंसे जिन्हें मै जानता हूँ, अपनी और कांग्रेसकी, दोहरी शुद्धताके लिए प्रयत्न कर रहा हूँ। और आप सदा यह मानें कि दोनों काम साथ-साथ चलेंगे। कांग्रेसमें अशुद्धताएँ हम सबकी अशुद्धताओंके ही कारण हैं, और चूँकि इस सवालको उठानेवालोंमें मैं प्रथम हूँ, इसलिए शुद्धताकी दिशामें कांग्रेसकी सफलतामें सर्वाधिक बाधक मेरी ही कमियोंको मानना होगा। मुझे एकमात्र सन्तोष इस बातमें है कि अपनी कमियोंको दूर करनेमें मै कोई कसर नहीं रख रहा हूँ।

खादीके नियमको कार्यरूप देनेके बारेमें निर्देशों सम्बन्धी आपका तार मिला। फिलहाल कोई निर्देश जारी करना जरूरी नहीं है। 'यंग इंडिया'में मैं इसके बारेमें लिखनेकी आशा रखता हूँ। फिलहाल इन सबके बारेमें जाननेके लिए आप 'यंग इंडिया'के पृष्ठोंको ही देखें। बहुत-सी चीजें कार्यसमितिके प्रस्तावोंकी अपेक्षा 'यंग इंडिया'में दिये गये सुझावोंके द्वारा ही की जा सकती हैं।

१. देखिए खण्ड ३८, पृष्ठ ४१५-१६।

२. १९ फरवरी, १९२९।

मेरा कार्यक्रम यह है। मार्चकी पहली तारीखको मैं यहाँसे चल दूँगा, नहीं तो दो तारीखको तो निश्चित ही। फिर ३ अथवा ४ को सुबह कलकत्ता पहुँचूँगा। जो गाड़ी मैं पकड़ूँगा उसीके अनुसार समयमें कुछ फेर-बदल होगा। दिल्ली होकर आनेकी मेरी इच्छा है। ऐसा करनेसे ८ रुपये प्रति यात्रीकी बचत होती है और थोड़ा समय भी बचता है। मैं रेलवेकी समयसारिणी देखूँगा। मैं मंगलवार ५ मार्चकी सुबह कलकत्तासे रंगूनके लिए चल दूँगा। मार्चके अन्तिम सप्ताहमें मैं रंगूनसे साबरमतीके लिए रवाना होऊँगा ताकि २७ मार्चतक वहाँ जरूर पहुँच जाऊँ।

रामविनोदके बारेमें लिया गया निर्णय मेरे लिए बहुत चिन्ताका कारण बन रहा है। राजेन्द्र बाबूको इससे बहुत गहरी चोट लगी है।[१] वे और उनके साथी कार्यकर्त्ता इस निर्णयको अपने ऊपर लांछन मानते हैं। उन्होंने अपने साथियोंसहित अपना त्याग-पत्र दे दिया है। मैंने इस बातको हँसीमें टाल दिया है, राजेन्द्रबाबूको सान्त्वना दी है और उनसे कहा है कि आखिरकार इसका अन्तिम निर्णायक तो मैं हूँ और इसलिए मुझे प्रसन्नतापूर्वक प्रमाणोंके हर अंशको देखना चाहिए और प्रमाणोंको सामने रखकर किये गये आपके निर्णयपर गौर करनेके बाद मुझे अपना निर्णय सुनाना चाहिए। आगेकी प्रगतिके बारेमें मैं आपको सूचित करूँगा। अभी आपको इस बारेमें परेशान होनेकी जरूरत नहीं है। जरूरत पड़नेपर मैं आपसे मददके लिए कहूँगा। आशा है इस कठिनाईपर मैं विजय प्राप्त कर सकूँगा। लेकिन इस समय मेरे ऊपर काफी बोझ पहले ही है और इस कामसे वह बोझ और बढ़ेगा। लेकिन यह तो अनिवार्य है।

इस विषयमें दूसरी चीज जो मैं सिन्ध जानेसे और भूलनेसे पहले लिखना चाहता था वह अखिल भारतीय चरखा संघकी समितिके जमानत विषयक प्रस्तावके सम्बन्धमें श्री निरंजन बाबूके पत्रके बारेमें है। प्रस्ताव उतना आलोचनीय नहीं है जितना निरंजनबाबूका खयाल है। यह काफी लोचदार है और मेरी समझसे यह आवश्यक है। जैसे-जैसे हमारा संगठन बढ़ता जायेगा जमानतकी माँग करनी ही होगी। और कोई व्यक्ति राष्ट्रभक्त अथवा राष्ट्रसेवी है, केवल इस आधारपर जमानत देनेके नियमसे मुक्त नहीं हो। जिनके बारेमें कोई शंका नहीं है और जो अपनी ईमानदारीको साबित कर चुके हैं और जमानत दे नहीं सकते उनको जमानत देनेसे मुक्त कर दिया जायेगा, और करना भी चाहिए। क्या आप इस प्रस्तावसे सहमत नहीं हैं?

हृदयसे आपका,

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० १६०३) की फोटो-नकलसे।

१. बिहारके एक खादी कार्यकर्त्ता रामविनोद सिन्हाको उनकी परियोजनाओंमें सहायता देनेके लिए २५,००० रुपयेका ऋण दिया गया था। बादमें उनपर आरोप लगाया गया कि सार्वजनिक धनसे जिस संस्थाकी स्थापना उन्होंने की है उसे वह अपनी निजी मिल्कियत मानते हैं। इस आरोपकी जाँचके लिए सतीशचन्द्र दासगुप्तको गांधीजीने नियुक्त किया। श्री दासगुप्तने निर्णय दिया कि चरखा संघकी बिहार शाखाका प्रबन्ध बहुत गड़बड़ है। डा० राजेन्द्र प्रसादने, जो इसके प्रधान थे, इसका विरोध किया और गांधीजीसे प्रार्थना की कि वे खुद इसकी जाँच-पड़ताल करें। कुछ समय बाद इस मामलेको गांधीजीने नारणदास गांधीके सुपुर्द किया और उन्होंने बिहार चरखा संघ द्वारा प्रस्तुत किये गये हिसाबको स्वीकार कर लिया।

१८. पत्र : जयरामदास दौलतरामको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
२१ फरवरी, १९२९

प्रिय जयरामदास,

तुम्हें मुझसे इस पत्रकी बहुत कम आशा थी, पर मैं भेज रहा हूँ। मैंने विदेशी वस्त्र-बहिष्कार समितिका कार्यभार सँभाल लिया है। इसको चलानेके लिए मुझे पूरे समयके लिए एक मन्त्री जरूर चाहिए। और मेरे खयालमें इस कामके लिए तुमसे ज्यादा उपयुक्त और कोई नहीं होगा। इसलिए अगर तुम यह न समझो कि देशहितके लिए कौंसिलमें तुम्हारा होना आवश्यक है, तो मैं चाहूँगा कि तुम एकदम त्याग-पत्र दे दो और मन्त्री-पदका काम सँभाल लो। सालके अन्तमें इस कामसे निवृत्त होनेके लिए तुम कह सकते हो, हालाँकि मैं तो चाहूँगा कि तुम उस समयतक रहो जबतक मुझे तुम्हारी जरूरत है। कौंसिलमें ९ महीनेकी तुम्हारी अनुपस्थितिसे कोई अधिक हर्ज नहीं होनेवाला है, और कौंसिलके दृष्टिकोणसे देखा जाये तो संभवतः यह तुम्हारे लिए अच्छा ही है। मैं तुमसे बहस नहीं करना चाहता और न इसकी जरूरत है। और न इसके लिए [मुझे] फुर्सत ही है। इस पत्रको पढ़नेसे जितना दबाव तुम महसूस कर सकते हो करो, पर ऐसा करनेके बाद जो निर्णय तुम लो वह स्वच्छन्द रूपसे लो। मैं बिना किसी शिकायतके उसे स्वीकार कर लूँगा, भले ही वह प्रतिकूल हो। अगर मेरे प्रस्तावके पक्षमें तुम्हारा झुकाव हो, और सम्भव हो तो पत्रके जवाबमें तुम स्वयं साबरमती आ जाओ। पहली मार्चको मुझे बर्माके लिए जरूर रवाना हो जाना चाहिए — ज्यादासे ज्यादा २ तारीखतक — और मैं बम्बई होते हुए नहीं जाऊँगा।

मलकानी कल मारवाड़ जंक्शनपर मेरे साथ शामिल हो गया है।

तुम्हारे तारकी अपेक्षा करता हूँ।

हृदयसे तुम्हारा,

श्रीयुत जयरामदास दौलतराम
बम्बई

अंग्रेजी (एस० एन० १५३४९) की फोटो-नकलसे।

१९. पत्र : बहरामजी खम्भाताको

आश्रम
साबरमती
२३ फरवरी, १९२९

भाईश्री खम्भाता,

तुम्हारा पत्र मिला। ९ मार्चको तो मैं बर्मामें होऊँगा। ५ अप्रैलको कुछ सम्भव हो सकता है। तुम्हें मेरा निश्चय कितनी जल्दी मालूम होना चाहिए? १ मार्चको मैं अहमदाबादसे दिल्लीके रास्ते कलकत्ता और वहाँसे बर्मा जानेके लिए रवाना होऊँगा।

मोहनदासके वन्देमातरम्

श्री बहरामजी खम्भाता
२७५, हॉर्नबी रोड
फोर्ट, बम्बई

गुजराती (जी० एन० ६५९१) की फोटो-नकलसे।

२०. पत्र : बेचर परमारको

आश्रम
साबरमती
२३ फरवरी, १९२९

भाईश्री बेचर,

तुम्हारा पत्र मिला। वह अन्त्यज शिक्षक यदि विवाह मुलतवी कर दे और अच्छे चाल-चलनका हो तो उसे विद्यापीठमें रख सकते हैं और उसे छात्रवृत्ति भी दे सकते हैं। यदि वह तैयार हो तो सभी तथ्यों सहित उसकी अर्जी अपने पत्रके साथ काकासाहबके पास भेज दो।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजराती (जी० एन० ५५७७) की फोटो-नकलसे।

२१. पत्र: माधवजी वी० ठक्करको

आश्रम
साबरमती
२३ फरवरी, १९२९

भाईश्री माधवजी,

आपका पत्र मिला। केला न खायें। सेब छिलके सहित उबालें; फिर छिलका और बीज आदि निकाल कर थोड़ा लेनेमें कोई हानि नहीं है। अनन्नास मीठा हो तो वह भी ले सकते हैं। उपवास इतना ही करें जितना सहन हो सके। कलकत्तामें सूर्य-स्नान क्यों नहीं किया जा सकता, यह मेरी समझमें नहीं आता। सूर्य-स्नानके बिना भी यदि कटि-स्नान कर सकें तो करें। यह तो मैं मानता ही हूँ कि कच्छा पहने रहना ज्यादा अच्छा होगा।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजराती (जी० एन० ६७६२) की फोटो-नकलसे।

२२. हमारी लाचारी?

बिजोलिया (राजपूताना)से श्री जेठालाल गोविन्दजी लिखते हैं:

सम्भव है, पाँच-छः महीने बाद इस जगहको छोड़ सकूँ। फिर भी यहाँ छः हजार लोग तो अपने कपड़ेके लिए खुद सूत कात ही रहे होंगे। बहुत-से तो अपना कपड़ा आप बुन भी लेते होंगे। लेकिन रंगका सवाल उलझन पैदा कर रहा है। लाल, पीले और गुलाबी, इन तीन रंगोंकी जरूरत है। इस बारेमें हम परावलम्बी हैं। हमें विलायती रंग काममें लाने पड़ते हैं। अगर इस तरह बाजारके भरोसेपर रहना पड़ा तो मुनाफेके लालचमें व्यापारी हमें धोखा देंगे, और लोगोंको बाजारोंमें जाकर कपड़ा खरीदनेका लोभ होगा। इस कारण जो काम हो चुका है, उसे आगे निभानेके लिए लोगोंको घरपर रंग तैयार करनेका रास्ता बतलाना पड़ेगा। अतः या तो आप इस उलझनको सुलझाइए अथवा इसे सुलझानेके लिए 'यंग इंडिया' और 'नवजीवन' द्वारा किसीको प्रेरित कीजिए। आशा है, इससे कुछ-न-कुछ मदद तो मिल ही सकेगी। क्या यहाँ और क्या दूसरी जगह जबतक यह समस्या नहीं सुलझती हमारी यह लाचारी बनी ही रहेगी।

घरमें ही रंग तैयार तो किये जा सकने चाहिए। आशा है, रंगाई-शास्त्रके जानकार इस काममें मदद करेंगे। लेकिन भाई जेठालालके समान अनन्य खादीभक्तोंसे एक बात यहीं कह देना ठीक समझता हूँ। जिस परिस्थितिको लानेके लोभके चक्करमें भाई जेठालाल पड़े हैं, सो तो पहले भी नहीं थी। पुराने जमानेमें भी किसानोंको कई जरूरी चीजें दूकानदारसे लेनी पड़ती थीं, और मेरी रायमें इस स्थितिका हमेशा बना रहना अनिवार्य है। मनुष्य जितना स्वावलम्बी है, उतना ही वह परावलम्बी भी है, उसे होना भी चाहिए। मनुष्यका जीवन सामाजिक है। जबतक वह समाजका सहारा नहीं लेता तबतक वह अद्वैतकी साधना नहीं कर सकता, शून्यताको पा नहीं सकता, जगतकी कसौटीपर चढ़ नहीं सकता और अपनी श्रद्धाकी परीक्षा कर नहीं सकता। अगर वह अपने आस-पास ऐसा वातावरण बना ले या बना सके, जिससे कि उसे किसी भी हालतमें दूसरेका आश्रय लेना ही न पड़े तो वह महा अभिमानी — अहंकारी — बन जाये और फलस्वरूप संसारके लिए भाररूप हो जाये। समाजका अवलम्बन मनुष्यको नम्र बनाता है। यह निःसन्देह सच है कि कई काम ऐसे हैं जिन्हें खुद कर लेना हमारे लिए जरूरी है। लेकिन अगर सभी काम स्वयं करनेका लोभ करें तो वह लोभ दोष बन बैठेगा। विचार करके देखें तो कपास बोनेसे लेकर कातने तककी क्रियाओंमें भी मनुष्य एकदम स्वाश्रयी नहीं बन सकता। अगर वह उस काममें अपने कुटुम्बियोंकी मदद न ले तो उसकी गाड़ी शुरूमें ही रुक जाये। और अगर वह कुटुम्बियोंकी मदद स्वीकार करता है तो फिर अपने पड़ोसियोंकी क्यों न स्वीकार करे? इसी तरहके विचारोंके फलस्वरूप 'वसुधैव कुटुम्बकम्' महावाक्य निष्पन्न हुआ है।

एक बात और है। भाई जेठालालके दुःखकी तहमें, बहुत गहरे अविश्वासकी गन्ध आती है। हम यह क्यों मान लें कि जितने दूकानदार हैं वे सब दगा देंगे? खादीकी प्रवृत्तिमें तो आत्मशुद्धिका अपना विशेष स्थान है। खादीकार्य करते हुए हमें समाजके लगभग सारे अंगोंसे काम लेना है और यह करते समय हम यह मान लेते हैं कि इस कामसे हम और वे दोनों शुद्ध बनेंगे। हम दूकानदारोंको समाप्त नहीं करना चाहते, हमारी इच्छा तो उनके धन्धेमें परिवर्तन करने और उनके हृदयको बदलनेकी है। हममें यह अडिग श्रद्धा होनी चाहिए कि दूकानदार भी देश-प्रेमी और ईमानदार बन सकता है। यह बात नहीं है कि आज ऐसे दूकानदार हैं ही नहीं। हर बातमें हमें तो 'अति सर्वत्र वर्जयेत्'के सिद्धान्तका प्रयोग कर देखना चाहिए; क्योंकि मध्यम मार्ग ही सच्चा मार्ग है। स्वावलम्बन स्वमान और परमार्थकी पूर्तिके लिए जरूरी है, अगर वह इससे आगे बढ़ता है तो दोषरूप बन जाता है। ईश्वरका साम्राज्य कबूल करनेके लिए मनुष्यके लिए नम्रता और आत्महितकी साधनाके लिए सम्मानपूर्ण परावलम्बन भी आवश्यक है। यही सुवर्ण मध्यम मार्ग है। जो इसे छोड़ता है वह 'इतो भ्रष्टस्ततो भ्रष्टः' हो जाता है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २४-२-१९२९

२३. दिल्लीमें क्या हुआ?

सिन्धसे मैं दिल्ली गया और वहाँ तीन दिन रहा। वाइसराय महोदयसे भी मिला था। इसलिए वहाँ क्या हुआ यह जाननेकी जिज्ञासा लोगोंमें होना स्वाभाविक ही है। यदि हम सच्चे अर्थोमें स्वावलम्बी बन गये होते तो हमें यह जाननेकी उत्सुकता न होती। वाइसरायसे मिले तो क्या और न मिले तो क्या? किन्तु एक राष्ट्रके रूपमें हम अभी ऐसी उदासीनता विकसित नहीं कर पाये हैं। अभीतक अंग्रेजी राज्यका प्रभाव हमारी दृष्टिमें चकाचौंध पैदा कर पाता है और जबतक यह हाल है तबतक वाइसरायके कार्य, उनके वचन और उनसे मिलनेवालोंने क्या देखा और क्या सुना इत्यादि जाननेकी हमारी इच्छा बनी रहेगी; और इसलिए इस जिज्ञासाको कुछ हदतक तृप्त करना भी उचित है।

दिल्ली जाते समय मुझे श्री विट्ठलभाईकी योजनाका कोई अन्दाज़तक नहीं था। विदेशी कपड़ेके बहिष्कारके कार्यके सम्बन्धमें मोतीलालजीने मुझे दिल्ली बुलाया था और कांग्रेसकी कार्यकारिणी समितिकी बैठक मुलतवी की गई थी। कुछ असुविधा होनेपर भी दिल्लीको १७ से १९ तारीखतक समय देनेका मैंने मोतीलालजीको तार किया था और उसी कारण मैं वहाँ गया। दिल्ली पहुँचनेपर श्री विट्ठलभाईकी योजनाका पता चला।

विधानसभामें जाकर कोई भारतीय जितनी कुछ देश-सेवा कर सकता है, उतनी सेवा श्री विट्ठलभाई बहुत होशियारीसे कर रहे हैं। वे अपने निर्भय व्यवहारसे देशकी और अपने पदकी शोभा बढ़ा रहे हैं। अपनी स्वतन्त्रता, निर्भयता और देश-प्रेम प्रकट करनेका एक भी मौका वे जाने नहीं देते। और ऐसा करनेपर भी वे अपने स्थानके योग्य मर्यादा और तटस्थताका पालन करते हैं। वे यों मानते हैं कि वे कुछ भी कर सकते हों फिर भी यदि भिन्न-भिन्न मतके नेताओंको यदि एक-दूसरेसे मिला सकें तो वही बहुत है, और उन नेताओंको वाइसरायसे मिला सकें तो और भी अच्छा। इसलिए उन्होंने मेरे दिल्ली जानेके अवसरपर वाइसराय और दूसरे नेताओंको चाय पीनेका निमन्त्रण भेजा। उसमें उनका मेहमान होनेके कारण सामान्यतः मुझे हाजिर तो होना ही चाहिए था। ब्राह्मणका काम विवाह करा देना है, किसीका घर चला देना नहीं। विट्ठलभाईने भिन्न-भिन्न मतके नेताओंको एकत्र तो कर दिया किन्तु इस तरह एकत्र होनेवाले चाय पीने और गप्प लड़ानेके अलावा और कर ही क्या सकते थे। किन्तु विट्ठलभाई तो बहुत-कुछ करना चाहते थे, और उन्होंने हँसी-हँसीमें बहुत-सी बातें छोड़ करके लोगोंके मनकी बात निकालनेका प्रयत्न भी किया। परन्तु ऐसे प्रयत्नकी मर्यादा होती है। इसलिए मेरे विचारसे यह कहा जा सकता है कि जिस विषयके सम्बन्धमें वे बातचीत कराना चाहते थे वह न हो सकी। इस चायकी मजलिसके कारण मियाँ और महादेव एक दूसरेसे मिले और यदि अंग्रेजी उक्तिका[1] शब्दार्थ

१. ब्रेक आइस—किसी गतिरोधको समाप्त करनेकी कोशिश करना।

करें तो उन्होंने बर्फ तोड़ी, राजपूतोंकी भाषामें कहें तो कसुंबा[१] पिया और लौकिक भाषामें कहें तो कह सकते हैं कि पारस्परिक झिझक टूटी। पाठक यह समझ लें कि इससे अधिक और कुछ नहीं हो सका। यदि कोई यह कहे भी कि कुछ हुआ है तो जो समझदार हैं वे यही समझेंगे कि ऐसा कहना केवल भोलापन है, वस्तुतः ऐसा कुछ भी नहीं हुआ होगा। वास्तवमें हमारा उद्धार हमारे अपने ही हाथों होगा। जब हममें शक्तिका संचार होगा और उसका हमें भान होगा, तभी कोई ऐसा मिलाप फलदायी हो सकेगा। आज तो हममें आत्मविश्वास नहीं है। अभी हमने कुछ भी करके नहीं दिखाया है; और जबतक हम लोगोंमें आत्मविश्वास नहीं होगा, अर्थात् जबतक हमने कुछ भी करके नहीं दिखाया है तबतक हम भले ही ऐसी मुलाकातें करें या उनके लिए प्रयत्न करते रहें, हमें उनसे अपने मनोवांछित फलकी प्राप्ति न होगी। उसकी आशा भी नही रखनी चाहिए। इसलिए दिल्लीकी उस मजलिसका मेरा निदान तो यही है कि लोग उसे भूल जायें और स्वराज्यका थोड़ा-बहुत कुछ काम करनेमें लग जायें।

इस दृष्टिसे विचार करनेपर तो मैं यह चाहता हूँ कि उस चायकी मजलिसमें क्या हुआ यह जाननेकी इच्छा करनेके बदले पाठक मुझसे कार्यकारिणी समितिमें क्या हुआ यह जाननेकी इच्छा रखें और समाचारपत्रोंमें प्रकाशित प्रस्तावसे सन्तोष न मानें। अब मैं इस विषयपर आता हूँ।

कार्यकारिणी समितिमें मुख्य रूपसे चर्चा विदेशी कपड़ेके बहिष्कारके सम्बन्धमें हुई, क्योंकि उसीके लिए मुझे वहाँ बुलाया गया था। सिन्धके सम्बन्धमें लिखे मेरे लेखमें[२] कोटड़ीके जिस अनुभवका मैंने उल्लेख किया है उसका मैंने समितिके सामने वर्णन किया, और यह सूचित किया कि यदि कार्यकारिणी समितिके सदस्य यह मानते हों कि खादीकी शर्त निकाल दी जाये तो कांग्रेस अधिवेशनके पहले ही उसे यह शर्त निकाल देनेका जोखिम स्वीकार करना चाहिए। यह जोखिम लेनेको कोई तैयार नहीं था। सबने यह महसूस किया कि जब बहिष्कारकी बात चल रही हो तब खादीकी शर्तको निकाल देनेकी बात चलाई ही नहीं जा सकती। सबने यह भी महसूस किया कि विदेशी कपड़ेका बहिष्कार ही आज हमारे पास सबसे उत्तम शस्त्र है। जो योजना मैं प्रकाशित कर चुका हूँ वह सर्वानुमतिसे पास की गई। उसके लिए एक विशेष समिति चुनी गई और समितिको अन्य सदस्य चुननेका भी अधिकार दिया गया। मुझे उसका अध्यक्ष बनाया गया है। मैंने नम्रतापूर्वक इस पदको स्वीकार किया है परन्तु इस स्थानके योग्य सामर्थ्य और आत्मविश्वास आज मुझमें नहीं है यह मुझे स्वीकार कर लेना चाहिए। 'आत्मविश्वास नहीं है' इसका यह अर्थ नहीं कि बहिष्कार के सम्बन्धमें मेरे मनमें उत्साहकी थोड़ी भी कमी हुई है। परन्तु मैं यह नहीं जानता कि इस दिशामें लोगोंसे कहाँतक काम लिया जा सकेगा। फिर भी जिस पदको

१. अफीमसे निर्मित एक पेय, जिसे बैठकर पीना मित्रताका लक्षण माना जाता है।
२. देखिए "सिन्धके संस्मरण", २१-२-१९२९।

मैं अस्वीकार नहीं कर सकता था उस पदका बोझ मैंने ईश्वरका सहारा माँग कर स्वीकार लिया है। मैं आशा करता हूँ कि गुजरात इस बोझको उठानेमें मेरी मदद करके उसे हलका कर देगा और उसमें स्त्री-पुरुष, बालक, वृद्ध सभी अपना हिस्सा अदाकर सकते हैं। जिसके पास विदेशी वस्त्र हों वह उसे बिना माँगे ही निकाल दे, और इससे भी आगे बढ़े तो उसे मेरे पास या प्रान्तीय समितिको भेज दे। वस्त्र भेजनेवाले द्वारा किसी विशेष सूचनाके अभावमें उन वस्त्रोंको जला दिया जायेगा। और जो यह न करे वह खुद ही उन्हें जला दे। लेकिन उनका उपयोग तो हमेशाके लिए छोड़ दे और उसके बदले खादी पहने। यदि इस बहिष्कारका जनता सच्चे दिलसे स्वागत करेगी तो कुछ अंशतक कपड़ेकी तंगी अवश्य होगी। तंगी न हो इस दृष्टिसे वह कम कपड़ा काममें लाये और अपनी आवश्यकतासे अधिक खादी न ले। ऐसा करनेपर खादी सबको मिल सकेगी और बिना किसी तकलीफके हम बहिष्कारको सफल बना सकेंगे। इस प्रकार अपनेसे शुरू करके लोग अपने पड़ोसी, मित्र और रिश्तेदारों तक, जो विदेशी कपड़े पहनते हों, पहुँचें। जनता यदि इस काममें जुट जाये तो विदेशी कपड़ोंका बहिष्कार जितना कठिन लगता है उससे बहुत ही आसान काम है।

इतना तो विदेशी कपड़ेके बहिष्कारके सम्बन्धमें। अब बड़े महत्त्वका दूसरा प्रस्ताव भारतभूषण पण्डित मालवीयजीका है। प्रस्ताव यह है कि १० मार्चको हर जगह जुलूस निकाले जायें और नेहरू रिपोर्टके समर्थनमें प्रस्ताव पास किये जायें। इसका मतलब यह है कि नेहरू रिपोर्टको स्वीकार किये बिना लोगोंको कभी संतोष न होगा। १० मार्चको रविवार है। लोग उसके बादके रविवारको खादीकी फेरी और प्रदर्शनियों द्वारा खादी-प्रचारका काम करें। उसके बादके रविवारको मद्यपान-निषेधका काम और उसके बादके रविवारको लाठी दाँवपेच आदि प्राचीन कसरतें करें। और इस प्रकार लगातार तीन रविवारोंको अनुक्रमसे उपरोक्त तीन प्रकारके रचनात्मक कार्य करते चले जायें। १० मार्चके प्रस्तावका पुनरावर्तन प्रति मास नहीं करना है। इस प्रस्तावका कोई यह अर्थ भी न करे कि महीनेमें एक-एक रविवारको खादी, मद्यपान निषेध और कसरत आदिका काम कर लिया तो फिर दूसरे दिनों उसे कुछ नहीं करना है। जैसा कि मैंने ऊपर बताया है कार्यकारिणी समितिने ही खादीका दैनिक कार्यक्रम तैयार किया है। दूसरे दो कार्योंके लिए और ऐसे अनेक प्रजाशक्तिवर्धक कार्योंके लिए भिन्न-भिन्न संस्थाओंको अपना कार्यक्रम तैयार करना ही होगा। मालवीयजीके प्रस्तावका हेतु प्रति मास एक-एक रविवारको उपरोक्त कार्योंमेंसे एक-एक कामको खास तौर पर और विशेष रूपसे लोगोंसे कराना है।

कार्यकारिणी समितिमें दूसरे प्रस्ताव भी हुए थे। किन्तु ऊपरके प्रश्नके उत्तरमें उनका उल्लेख नहीं हो सकता। उपरोक्त दो प्रस्तावोंसे ही दिल्लीके कामकी समाप्ति नहीं हो जाती। हिन्दू-मुस्लिम प्रश्नके बारेमें जिन्ना साहब और दूसरे भाइयोंके साथ जो चर्चा हुई उसको मैं कम महत्त्वपूर्ण नहीं मानता। मैं यह नहीं कह सकता कि इस चर्चाका कोई तात्कालिक परिणाम हुआ है। फिर भी उस विषयमें जो प्रयत्न हुआ है वह कभी निष्फल न होगा, यह मेरा दृढ़ अभिप्राय है। मुझे दिल्ली खींच ले

जानेका मोतीलालजीके मनमें यह भी एक महत्त्वका कारण था। पाठकोंको यहाँ यह बता देना आवश्यक है कि इस प्रयत्नकी स्पष्ट मर्यादा थी। और यह प्रयत्न नेहरू कमेटीकी रिपोर्टके सम्बन्धमें था। उसके सम्बन्धमें मुसलमानोंकी ओरसे जो असन्तोष प्रकट किया जाता है उसके बारेमें हममें जी-भरकर चर्चा हुई। उसका परिणाम यह हुआ कि मौका आनेपर सबकी सम्मतिसे उसमें कुछ रद्दोबदल भले ही की जाये, परन्तु जनताकी दृष्टिसे तो आज और इस वर्षके लिए यह रिपोर्ट उसकी अन्तिम और निश्चयात्मक माँगके तौरपर ही गिनी जानी चाहिए। और जहाँ-जहाँ उसका समर्थन किया जाये वहाँ-वहाँ वह बिना किसी शर्तके स्वीकार किया जाना चाहिए। यह हो सकनेपर ही तो इस रिपोर्टके द्वारा लोगोंकी शक्तिका जबर्दस्त संगठन हो सकता है। जिसके विषयमें प्रजाका मत अच्छी तरह तैयार न हो उस कामकी मार्फत कभी भी शक्तिका संगठन नहीं हो सकता। यह नियम सब प्रकारके युद्धोंके विषयमें लागू होता है। परन्तु सत्याग्रह अर्थात् असहयोगके विषयमें यह नियम अनिवार्य है। निश्चयपूर्वक कही गई वस्तुके बारेमें ही सत्याग्रह सम्भव हो सकता है और वहीं वह शोभा देता है। जहाँ अपनी इच्छासे वस्तुको घटाया-बढ़ाया जा सकता है वहाँ सत्याग्रह कैसे किया जा सकता है? अनिश्चित वस्तुके लिए तीनों कालमें निश्चित सत्यरूपी बलवान शस्त्रका उपयोग हो ही नहीं सकता। यही उसकी खूबी है और यही मर्यादा भी।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २४-२-१९२९

२४. उदय होते ही अस्त हो गया

मेरे पौत्र रसिकके देहान्तका समाचार पाकर कई लोगोंने संवेदनाके पत्र और तार भेजे हैं। मैंने उनका उत्तर व्यक्तिगत रूपसे न देकर 'नवजीवन' और 'यंग इंडिया' द्वारा देनेका निश्चय किया है। आशा है कि व्यक्तिगत रूपसे उत्तर न देनेके लिए ये सब पत्र-लेखक मुझे क्षमा करेंगे।

रसिककी मृत्युके बारेमें कुछ भी लिखनेका मेरा इरादा नहीं था। लेकिन समाचारपत्रोंमें इस खबरके छप जानेसे बहुत-से लोगोंने मुझे पत्र लिखे। इस कारण यहाँ थोड़ा लिख देना उचित समझता हूँ।

अब मुझे मित्रों या सगे-सम्बन्धियोंकी मृत्युसे बहुत वेदना नहीं होती, वह क्रमशः कम होती जा रही है। मौतके डर या शोकको सभी धर्मोंमें निषिद्ध माना गया है। तिसपर भी हम मौतसे डरते हैं और अपने प्रियजनोंकी मृत्युसे दुःखी भी होते हैं। खासकर जब किसीकी मौत चढ़ती जवानीमें होती है तो खेदकी मात्रा और भी बढ़ जाती है। सच पूछा जाये तो कहना होगा कि मौत ईश्वरकी अमर देन है। काम करनेवाला शरीर चेतनाशून्य हो जाता है और उसमें रहनेवाला पंछी उड़ जाता है। जबतक इस पंछीकी मौत नहीं होती तबतक शोक करनेका सवाल ही नहीं उठता।

इतनेपर भी सिर्फ स्वार्थ और मोहके कारण हमें स्नेहीकी मृत्युसे दुःख होता है। बहुत वर्ष पहलेसे मैं इस बातकी कोशिश कर रहा हूँ कि मैं ऐसे मोहसे मुक्त हो जाऊँ और फलस्वरूप रसिकके देहावसानके समाचारसे मुझे दुःख नहीं हुआ। जो हुआ सो तो केवल स्वार्थवश।

रसिककी उम्र १७ वर्ष थी। बचपनसे ही वह मेरी देखरेखमें था और दूसरे बालकोंकी तरह उसे भी धर्ममय देश-सेवाकी तालीम दी जाती थी। रसिक चंचल, शरारती और तेजस्वी बालक था। उसके शरीरका गठन सुन्दर था। वह साहसी था। जोखिम-भरे कामोंमें वह हमेशा आगे रहता था। पिछले एक सालसे उसकी शरारत कम हो गई थी और वह शक्तिका रूप धारण कर रही थी। वह 'गीता'का अभ्यासी था, कताई-पिंजाईमें कुशल था। एक दो बार उसने लगातार २४ घंटोंतक पींजनेका व्रत लिया था और उसमें वह सफल भी हुआ था।

मेरा सबसे छोटा पुत्र देवदास दिल्लीकी जामिया मिलियामें काम कर रहा है। वहाँ वह विद्यार्थियोंको कताई और हिन्दी सिखा रहा है। लगभग चार महीने पहले बढ़ईगिरी और पिंजाई कामके लिए उसने मेरे एक दूसरे पौत्र नवीनको और रसिकको दिल्ली बुला लिया था। दोनों दिल्ली जाकर सुन्दर सेवा कर रहे थे। इससे पहले तीव्र इच्छा होनेके कारण रसिक सेवा करनेके लिए बारडोली गया। वह जहाँ जाता लोकप्रिय बन ही जाता था। ऐसे सेवकको प्रकृतिने उठा लिया; इस स्वार्थजनित दुःखने मुझे दुःखी जरूर कर दिया। लेकिन मैंने मनमें सोचा कि प्रकृति हमेशा न्याय करती है; वह दयालु है इस कारण रसिकसे भी वह अधिक काम करा लेगी। बस इसी अटल श्रद्धाके बलपर मैं शान्तिका अनुभव कर रहा हूँ।

दिल्ली जानेपर रसिकमें भक्तिका उदय हुआ। कांग्रेस अधिवेशनसे लौटते समय मैं दिल्ली होता हुआ आश्रम आया था। दिल्लीमें रसिकने मुझे कहा था कि उसे १७वाँ वर्ष शुरू हुआ है। इस सिलसिलेमें दूसरे बालकोंकी भाँति उसने भी कुछ व्रत लिये हैं। उसने तीन व्रत लिये थे: एक बारमें केवल तीन तरहकी वस्तु खाना, २४ घंटोंमें सिर्फ तीन बार खाना, और दो वर्षोंमें अर्थसहित 'रामायण'का अध्ययन कर लेना। उसके चंचल स्वभावका खयाल करके मैंने उसे सचेत किया। लेकिन उसने कहा, "अब मुझे ऐसे व्रत कठिन नहीं मालूम होते। 'रामायण' मुझे प्रिय है।" मैं खुश हुआ।

इस व्रतके सिलसिलेमें १८ जनवरीके दिन रसिकने नीचे लिखा पत्र मुझे भेजा था। ८ फरवरीको तो वह चल ही बसा।

> **आपका पत्र मिला। मुझे कुछ दिनसे बुखार आ रहा है; रोज तो नहीं लेकिन किसी-किसी दिन आ जाता है। अच्छा हो जायेगा। व्रत चालू है। मेरे 'रामायण' सीखनेका प्रबन्ध करके जाइए। क्योंकि अगर आप बाहर प्रवासमें हों और मैं आश्रममें पहुँचूँ तो मुझे कौन सिखायेगा और उसकी सुविधा कैसी होगी? मुझे भोजन-सम्बन्धी व्रत तो बड़े सहल मालूम पड़ते हैं। इस**

समय तो मेरा वजन बहुत घटा हुआ होगा; क्योंकि मेरी तबीयत ठीक नहीं रहती। नवीनका वजन तो बढ़ा ही होगा।

आजकल यहाँ कताईका काम खूब चल रहा है। पिंजाई भी होती है। अब एक दो हफ्तोंमें एक दूसरा थान उतरेगा और महीने भर बाद तीसरा। अब तो जल्दी-जल्दी तैयार होने लगेंगे। मार्चके मध्यमें अथवा अन्तमें वहाँ आयेंगे।

रसिककी जो सेवा की गई वह शायद ही किसी व्यक्तिको प्राप्त हुई हो। वह देवदासका प्रिय भतीजा और शिष्य था। उसने तो रसिककी अनुपम सेवा की और डा० अन्सारीने उसको वैद्यकी तरह नहीं बल्कि पिताकी तरह देखभाल की। डा० शर्मा उसकी सेवामें खड़े ही रहे। डाक्टरोंने उसके लिए दो सेविकाओंका प्रबन्ध कर रखा था। जामियाके मुसलमान भाइयोंने उसकी सेवामें कोई कसर नहीं रखी। जिन हिन्दू भाइयोंको उसकी बीमारीका समाचार मिला उन्होंने दिन-रात एक कर दिया। इन सबका मैं ऋणी हूँ। रसिक इतनी छोटी उम्रमें सेवाधर्मको पहचान ले, उसमें परायण रहे, उत्साहसे 'गीता' पाठ करे, कठिन व्रत स्वीकार करे, उन्हें सरल माने, दो वर्षमें 'रामायण' का अभ्यास समाप्त करनेकी इच्छा रखे और ऐसी शुभ भावनाओंका संग्रह करता हुआ अनन्य सेवा पाकर मृत्युसे मिले, ऐसी मृत्यु पानेवालेसे सभी ईर्ष्या ही करेंगे। और ऐसे पौत्रके बारेमें मुझ-जैसा दादा शोक करे सो तो स्वार्थ और मोहवश ही कहलायेगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन २४-२-१९२९

२५. पत्र : जयरामदास दौलतरामको

आश्रम
साबरमती
२४ फरवरी, १९२९

प्रिय जयरामदास,

तुम्हारा पत्र मिला और तार भी। चायपार्टीका कोई ठोस परिणाम निकलनेकी तो सम्भावना थी नहीं। लेकिन इसके बारेमें मेरा विवरण[1] तुम आजके 'नवजीवन' में देखोगे। इसे किसीसे पढ़वा लेना।

लेखा-परीक्षक और निरीक्षकको निःसन्देह सिन्ध भी जाना होगा।

सिन्धके मामलेमें मैंने मोतीलालजीसे बातचीत की तो थी। उन्हें इस बातकी खुशी हुई कि मैंने मामलेको समझ लिया है और वे इससे भी सहमत हैं कि जहाँ कहीं भी इसमें अनियमितता हो, उसे दूर कर देना चाहिए। मेरा खयाल है कि 'यंग इंडिया' में मेरी टिप्पणीसे यह मामला साफ हो गया है।[2]

१. देखिए "दिल्लीमें क्या हुआ?", २४-२-१९२९।

२. देखिए "सिन्धके संस्मरण", २१-२-१९२९ का उपशीर्षक "कांग्रेसके झगड़े"

तुम्हारे तारसे यह जानकर कि तुम आ रहे हो, मुझे खुशी हुई। पहली मार्चको मैं दिल्ली होते हुए बर्माके लिए रवाना हो रहा हूँ। इसलिए तुम २८ तारीख [या] उससे पहले आनेकी कोशिश करना। बाकी मिलनेपर।

हृदयसे तुम्हारा,

अंग्रेजी (एस० एन० १५३५३)की माइक्रोफिल्मसे।

२६. पत्र : गिरधारीलालको

आश्रम
साबरमती
२४ फरवरी, १९२९

प्रिय लाला गिरधारीलाल,

आपके दो पत्र मिले। पहलेसे यह कहना कठिन है कि जब कभी मैं दिल्ली जाऊँगा तो आपके पास ठहरूँगा। मैं जब कभी दिल्ली जाता हूँ तो किसी खास मकसदसे ही जाता हूँ। और मेरे कार्यको देखते हुए ही मेरे ठहरनेका स्थान निश्चित होता है, जैसा कि पिछली बार मेरी दिल्ली-यात्राके समय हुआ था।

पंजाब मेरे कार्यक्रममें शामिल है। जूनमें मेरे वहाँ पहुँचनेकी आशा है। लेकिन इसे जवाहरलालके साथ तय करना चाहिए।

मैंने जो-कुछ लिखा है उससे सम्बन्धित आपके लम्बे पत्रोंकी चर्चा मुझे यहाँ नहीं करनी है। जब हम मिलेंगे तो इनके बारेमें आप स्वयं बात कर लीजिएगा।

प्रदर्शनीके बारेमें जो आपका कहना है वह मैं समझता हूँ। मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि प्रान्तीय कमेटी इसका सारा आवश्यक प्रबन्ध करनेमें बिलकुल समर्थ है। लेकिन मुझे इस बातमें भी सन्देह नहीं है कि जहाँतक खादीका और प्रदर्शनीके स्वदेशी तत्वका सम्बन्ध है, प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी गड़बड़-घोटाला कर देगी। लेकिन मुझे जो कहना है वह तो कह ही चुका हूँ।

कांग्रेस अधिवेशनके समय ही दूसरे सम्मेलन न होनेके बारेमें आपका जो सुझाव है वह विचारके योग्य है। इसके पक्षमें बहुत-कुछ कहा जा सकता है। इस सम्बन्धमें मैं डा० सत्यपालके पत्रके उत्तरमें विस्तारसे अपनी राय पहले ही लिख चुका हूँ।

महन्तवाद, राजनीतिक मठों और उद्योग मन्दिरके बारेमें आपने जो-कुछ कहा है वह रोचक है। इस प्रश्नपर आपका और मेरा मतभेद है, और उसे दूर नहीं किया जा सकता। आपने यह याद रखनेकी वाकई परवाह नहीं की कि उद्योग मन्दिर एक दीनतासूचक नाम है जो हमारी कमजोरियोंके कारण रखा गया है और

जब हमें यह लगेगा कि हमने अपनी कमजोरियोंपर विजय पा ली है तो हमारा इरादा है कि हम वास्तविक नामको फिर अपना लेंगे।[1]

नौजवानोंसे सम्बन्धित आपके प्रवचन भी इतने ही रोचक हैं।

हृदयसे आपका,

लाला गिरधारीलाल
दीवान भवन
दिल्ली

अंग्रेजी (एस० एन० १५३४६)की माइक्रोफिल्मसे।

२७. पत्र : जसवन्तरायको

आश्रम
साबरमती
२४ फरवरी, १९२९

प्रिय लाला जसवन्तराय,

आपका १३ तारीखका पत्र मिला। मीरपुरखासकी मेरी यात्राके दौरान आचार्य गिडवानी मुझसे मिले थे और अन्त्यज लड़कों तथा खादीके बारेमें मुझसे बातें की थीं। उन्होंने मुझसे कहा था कि मुझे आपका एक पत्र मिलना चाहिए। यह पत्र मुझे, जब मैं दिल्लीसे साबरमती वापस आया, तब मिला। मैं नहीं सोचता कि आपके और आचार्य गिडवानीके मामलेमें मेरा हस्तक्षेप करना जरूरी है। निश्चय ही आप वही करेंगे जो उचित है। यदि श्रीयुत मणिलाल कोठारी यहाँ होते तो मैं आपका पत्र उन्हें दिखला देता। इस समय तो वह बढवानमें अपने बीमार पिताकी सेवामें लगे हुए हैं।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत लाला जसवन्तराय
जसवन्तराय एंड सन्स
कमीशन एर्जेट्स
कराची

अंग्रेजी (एस० एन० १३३६७)की माइक्रोफिल्मसे।

१. १८ फरवरीके अपने पत्रमें गिरधारीलालने लिखा था : "मैं व्यक्ति पूजाके तथा संस्थाओंको धर्म-स्थान बनानेके बिलकुल विरुद्ध हूँ। व्यक्तिगत श्रद्धा, आदर और स्नेह अलग-अलग चीजें हैं। इस देशमें हम महन्तवाद बहुत देख चुके हैं। अब समय है कि हम इस नीतिके पुनः प्रचलनका विरोध करें। देश भरमें जो तमाम धार्मिक मठ हैं वे ही काफी बुरे हैं। अब राजनीतिक, मठोंकी स्थापना करके हम उस बुराईको बढ़ाना नहीं चाहते। किसी भी वस्तुमें धार्मिक पवित्रता आरोपित करनेके अवास्तविक रवैयेके विरुद्ध नौजवान लोग विद्रोह करेंगे। इस कारण 'सत्याग्रह आश्रम' का नाम बदल कर 'उद्योग मन्दिर' करनेका मुझे दुःख है।"

२८. पत्र : कान्तिमतीको

आश्रम
साबरमती
२४ फरवरी, १९२९

प्रिय कान्ति,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारी सास यदि इतनी हठीली हैं तो मेरे ख्यालमें यह ज्यादा अच्छा है कि तुम उन्हें दो बंगलौरी साड़ियाँ खरीद लेने दो। तुम इन्हें तभी पहनना जब तुम्हें यह लगे कि तुम्हारी सासकी दृष्टिसे इन्हें पहनना निहायत जरूरी है। मुझे यकीन है कि यदि तुम डटी रहीं तो तुम अपने इर्द-गिर्दके लोगोंको खादीमें अपनी आस्थासे प्रभावित कर दोगी।

हृदयसे तुम्हारा,

अंग्रेजी (एस० एन० १५०१२)की माइक्रोफिल्मसे।

२९. खादी और स्वराज्य[1]

[२४ फरवरी, १९२९][2]

क्योंकि जनता जिस सरकारका विरोध करती है और मिलोंको अपने अस्तित्वके लिए उसी सरकारकी सद्भावनापर निर्भर रहना होता है इसीलिए मिलें घोर संकटके समय राष्ट्रको धोखा देंगी और

क्योंकि मिलें सदा विदेशी मशीनरीपर तथा ज्यादातर विदेशी विशेषज्ञोंपर निर्भर रहती हैं।

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५३४५)से।
सौजन्य : मीराबहन

१. मीराबहनने निम्नलिखित प्रश्नके उत्तरमें जो मसविदा तैयार किया था, ये दो अनुच्छेद उसमें जोड़े गये थे। प्रश्न था : "भारतीय मिलोंके कपड़ेकी अपेक्षा खादी स्वराज्य-प्राप्तिमें क्यों अधिक सहायक है?" मीराबहनके मसविदेके लिए देखिए, परिशिष्ट १।

२. देखिए अगला शीर्षक।

३०. पत्र : मीराबहनको

आश्रम
साबरमती
२४ फरवरी, १९२९

चि० मीरा,

खादीपर लिखी गई तुम्हारी टिप्पणियोंको तथा तुम्हारे चार्टको अब मैंने ध्यानपूर्वक देख लिया है। चार्ट बहुत अच्छा है। खादीपर लिखी गई टिप्पणियाँ भी अच्छी हैं। हिज्जोंमें सुधार करो और जहाँ कहीं तुम्हें तनिक भी सन्देह हो, शब्दकोश देख लो। हिज्जोंमें सुधार करनेकी कोई गुंजाइश नहीं छूटनी चाहिए और जो भी चीज छपवाओ, उसमें कोई त्रुटि नहीं होनी चाहिए।

मिलोंसे सम्बन्धित तुम्हारी टिप्पणीमें मैंने दो अनुच्छेद[१] जोड़ दिये हैं। बाकी सब ठीक है। तुम्हारी टिप्पणियोंपर तुम्हारे हस्ताक्षर न रहें, इसके बारेमें मैं निश्चयपूर्वक कुछ नहीं कह सकता। इसलिए तुम इसके बारेमें या तो राजेन्द्रबाबूसे बात कर लेना या फिर स्वयं निर्णय कर लेना। ये टिप्पणियाँ प्राधिकृत होनी चाहिए, इसलिए यदि इनपर तुम्हारे हस्ताक्षर न हों तो ये अखिल भारतीय चरखा संघकी बिहार शाखाकी ओरसे तो अवश्य होनी चाहिए।

सप्रेम,

बापू

श्रीमती मीराबाई

अंग्रेजी जी० एन० ९४०१से; तथा सी० डब्ल्यू० ५३४५से भी।
सौजन्य : मीराबहन

३१. पत्र : कोंडा वेंकटप्पैयाको

आश्रम
साबरमती
२४ फरवरी, १९२९

प्रिय मित्र,

आपके तारसे मुझे इत्मीनान पहुँचा। मुझे बर्मा जानेका फैसला क्यों करना पड़ा, इसे आप अच्छी तरह जानते हैं। अप्रैलमें आन्ध्रकी यात्रा करनेकी प्रतिज्ञाको पूरा करनेके लिए अब मैं हर तरहसे तैयारी कर रहा हूँ। अगर काठियावाड़ राजनीतिक परिषद्में मेरा जाना जरूरी न होता तो मैं बर्मासे सीधे आन्ध्र आ जाता। फिलहाल जो स्थिति है उसके अनुसार मैं गुजरातसे अप्रैलके प्रथम सप्ताहमें आन्ध्र देशके लिए रवाना होऊँगा। कृपया एक कामचलाऊ कार्यक्रम तैयार कर लें और मुझे भेज दें। १४ मईको इलाहाबादमें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें मेरी उपस्थिति वांछनीय है। इसलिए आप मुझे उस समयतक आन्ध्रसे फुर्सत दे दें जिससे कि मैं १४ मईको इलाहाबाद पहुँच जाऊँ।

नेल्लूरसे मुझे एक अजीब ढंगका पत्र मिला है। मैंने उसका जो उत्तर दिया है उसकी प्रति भी मैं साथ भेज रहा हूँ।[1]

इस महीनेकी २८ तारीखतक मैं आश्रममें ही हूँ। पहली मार्चको मैं दिल्लीके लिए रवाना होकर दो तारीखको वहाँ पहुँच रहा हूँ। कलकत्ताके लिए दूसरी गाड़ी मिलने तक मुझे वहाँ रुकना है। दिल्लीमें मेरा पता है: मार्फत लक्ष्मीनारायण गाडोदिया, गाडोदिया स्टोर्स, चांदनी चौक, दिल्ली। ३ तारीखकी रातको मैं कलकत्ता पहुँचूँगा। सोमवार ४ तारीखको मैं कलकत्तामें रहूँगा। कलकत्तामें मेरा पता होगा: मार्फत श्रीयुत सतीशचन्द्र दासगुप्त, खादी प्रतिष्ठान, सोदपुर, (ई० बी० रेलवे)। ५ मार्चकी सुबह मैं रंगूनके लिए रवाना होऊँगा। रंगूनमें मेरा पता है: मार्फत प्रा० जी० मेहता, १४, मुगल स्ट्रीट, रंगून। मैं यह ब्योरा इसलिए दे रहा हूँ जिससे जरूरत पड़नेपर इन विभिन्न स्थानोंपर आप मुझसे पत्र-व्यवहार कर सकें।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत कोंडा वेंकटप्पैया
गुण्टूर

अंग्रेजी (एस० एन० १५३५२)की फोटो-नकलसे।

१. यह उपलब्ध नहीं है।

३२. पत्र: देवचन्द पारेखको

आश्रम
साबरमती
[२४ फरवरी, १९२९][1]

भाईश्री देवचन्दभाई,

जूनागढ़में महन्त गोपालनाथ भोलानाथ रहते हैं। वे अन्त्यज हैं और उनका पता है: रावरा मंडपका अहाता, वाघेश्वरी दरवाजेके अन्दर। वहाँ अन्त्यजोंका एक धाम है। उस स्थानपर एक कुआँ आधा बना पड़ा है। उनका कहना है कि न पैसा है और न काम करनेवाले मिलते हैं। यह काम इसीसे अधूरा पड़ा है। यदि जूनागढ़में आप किसी ऐसे व्यक्तिको जानते हों जिसकी मार्फत यह कुआँ पूरा कराया जा सके तो उसके लिए पैसेका प्रबन्ध मैं यहाँसे कर सकता हूँ। यह हो सकता हो तो मुझे तुरन्त लिखें। यह भी लिख भेजें कि कितना खर्च पड़ेगा।

चम्पा आनन्दसे होगी। मैं १ तारीखको बर्माके लिए रवाना हो रहा हूँ। आशा है, परिषद्के[2] लिए समयसे पहुँच जाऊँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५६८८)की फोटो-नकलसे।

३३. तार: एफ० डब्ल्यू० विल्सनको[3]

[२४ फरवरी, १९२९ या उसके पश्चात्][4]

सम्राट्के स्वास्थ्य-लाभपर अंग्रेजोंकी खुशीमें मैं भी शामिल हूँ, लेकिन मैं ऐसे किसी आन्दोलनमें शामिल नहीं हो सकता जिसका अनिवार्य रूपसे राजनीतिक महत्त्व है और जिसमें शामिल होनेसे मैं परोक्ष रूपसे एक ऐसी प्रणालीके साथ प्रतिबद्ध हो जाऊँगा जिसके कि सम्राट् प्रतीक हैं और जिसे नष्ट करना मेरा जीवन ध्येय है।

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १५३५१)की फोटो-नकलसे।

१. डाककी मुहरसे।

२. काठियावाड़ राजनीतिक परिषद्।

३. इलाहाबादके **पायनियर**के सम्पादक एफ० डब्ल्यू० विल्सनने सम्राट्के स्वस्थ हो जानेपर एक तार भेजकर सुझाव दिया था कि इस खुशीमें ईश्वरके प्रति कृतज्ञता-ज्ञापनके लिए एक कोष आरम्भ किया जाये जिसका उपयोग "सारे भारतके गरीब और जरूरतमन्द लोगों"के लिए किया जाये। उन्होंने चन्दा देनेवालोंकी सूचीमें गांधीजीका नाम प्रकाशित करनेके लिये उनसे इजाजत चाही थी।

४. विल्सनका तार साबरमती आश्रममें २४ फरवरी, १९२९ को प्राप्त हुआ था।

३४. पत्र : गंगादेवी सनाढ्यको

मौनवार [२५ फरवरी, १९२९ से पूर्व][१]

प्रिय भगिनि,

भाई छगनलाल लीखते हैं की दुबारा आपकी तबीयत बिगड़ी है। उपचारके लीये आश्रमके बाहर न जानेका निश्चय ही है इसलीये मैं तो इतना ही लीख सकता हुं कि ईश्वर आपको शांति दे। बीमारी और मोत देहके साथ है ही। गीताके हम पूजारी हैं इसलीये बीमारीसे या मृत्युसे क्यों दुःख मानें? हां, इतना तो है ही हम जानबूझ कर बीमार न पड़ें।

यदि हवा बदलनेके लीये आश्रमके बाहर जानेका दिल हो जाय तो उसमें कुछ शरमकी बात नहिं है न कोई पाप है। "ज्यों त्यों तुलसी कृपाल चरण शरण पावे।"[२]

बापुके आशीर्वाद

जी० एन० २५४७ की फोटो-नकलसे।

३५. पत्र : जसवन्तरायको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
२५ फरवरी, १९२९

प्रिय लाला जसवन्तरायजी,

जिन-जिन सदस्योंने कराचीमें लालाजी-स्मारक-कोषके लिए धन दिया है उन्हें मैं अलग-अलग रजिस्ट्री द्वारा रसीदें भेज रहा हूँ। कुल मिलाकर ४०,९३५-१५-० की रकमकी रसीदें भेजी जा चुकी हैं। आपने जो सूची हमें तथा कलकत्तामें कोषाध्यक्षको भेजी थी यह उसीके मुताबिक है। रसीदें भेजते समय कोषाध्यक्षने हमसे कहा है कि हम बकाया ९३५-१५-० जल्दसे-जल्द भेज देनेके लिए आपसे निवेदन करें।

आभूषणोंका आपने क्या किया? यदि आपने उन्हें बेच दिया है तो कृपया बतायें कि उनसे कितना धन प्राप्त हुआ।

पहली मार्चको हम अहमदाबादसे दिल्ली और कलकत्ता होते हुए रंगूनके लिए रवाना हो रहे हैं। दिल्लीमें मेरा पता है: मार्फत लक्ष्मीनारायण गाडोदिया, गाडोदिया

१. गंगादेवीके स्वास्थ्यके तथा गांधीजी द्वारा उन्हें 'प्रिय भगिनि' सम्बोधित करनेके उल्लेखसे लगता है कि यह पत्र २५ फरवरी, १९२९ को गंगादेवीको लिखे पत्रसे पूर्व लिखा गया था।

२. तुलसीदासकी **विनयपत्रिकासे**।

स्टोर्स, चांदनी चौक, दिल्ली जहाँ हम दो मार्चको ठहरेंगे। हमारा कलकत्ताका पता है: मार्फत श्रीयुत सतीशचन्द्र दासगुप्त, खादी प्रतिष्ठान, सोदपुर (ई० बी० रेलवे)। यहाँ हम ३ तारीखकी रातको पहुँचेंगे और ५ तारीखकी सुबहतक रहेंगे। ५ की सुबह हम रंगूनके लिए स्टीमर पकड़ेंगे और ८ मार्चको वहाँ पहुँचेंगे। रंगूनमें हमारा पता है: मार्फत डा० प्रा० जी० मेहता, १४, मुगल स्ट्रीट, रंगून।

हृदयसे आपका,

संलग्न: (अलग पंजीयित पैकिट द्वारा भेजी गई रसीदें)

अंग्रेजी (एस० एन० १३३६८)की माइक्रोफिल्मसे।

३६. पत्र : मीराबहनको

सोमवार [२५ फरवरी, १९२९][1]

चि० मीरा,

तुम्हारे शिक्षाप्रद पत्र मुझे रोज मिलते हैं। तुम्हारे कार्यका भविष्य बड़ा उज्ज्वल दिखता है। यह बहुत अच्छी बात है कि तुम इस ढंगसे काम कर रही हो, जिसमें विरोधकी गुंजाइश कमसे-कम है। योगेन्द्र बाबूकी पत्नीके आ जानेसे तुम्हारा छोटा-सा आश्रम एक अच्छा नमूना बन गया है, जिसमें ठीक प्रयोग किये जा सकते हैं।

मैं पहली मार्चको यहाँसे चलूँगा और दिल्ली होते हुए जाऊँगा। संभवतः पटना रास्तेमें पड़े। दिल्लीसे होकर जानेमें समय भी सबसे कम लगता है और पैसे भी। कलकत्ता मैं रविवारकी रात ३ मार्चको पहुँचूँगा। ४ मार्चको मौन-दिवस है। मंगलवार, ५ मार्चकी सुबह मैं कलकत्तासे चल दूँगा।

कल बालकृष्ण यहाँ आया था। वह बुनाई विभागका काम सम्भालेगा। 'गीता' अध्ययनके कार्यक्रमको ठोस रूप देनेका नया प्रयास किया जा रहा है। छोटेलालके बारेमें अब कुछ भी नहीं कहा जा सकता, लेकिन वह सदाकी तरह दूर ही है। महादेव मेरे साथ रहेगा।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजी जी० एन० ९४०३से; तथा सी० डब्ल्यू० ५३४७से भी।
सौजन्य: मीराबहन

१. लगता है कि यह पत्र १ मार्च, १९२९ से पहले वाले सोमवारको लिखा गया था, जो कि २५ फरवरीको था।

३७. पत्र: गंगादेवी सनाढ्यको

मौनवार [२५ फरवरी, १९२९][1]

चि० गंगादेवी,

तुमारा पत्र मीलनेसे मुझको बहोत अच्छा लगा। सूर्य स्नान ठीक सवेरे लेना और अच्छा लगे वहां तक ही लेना चाहीये। सर बीलकुल घूमना नहिं चाहीये। शरीरमें जो चुनी नीकल पड़ी वह तो शुभ चिन्ह है। हड्डीयोंकी पीड़ाका कारण मैं नहिं समझा हूं। एक घंटे बैठनेमें परिश्रम लगे तो आध घंटा बैठो। प्यास तो लगनी ही चाहीये। उबाला हुआ पानी खूब पीना उसमें चार पांच ग्रेन सोडा डालनेसे अच्छा रहेगा। सीसाके द्वारा घाम लेनेका आगे देखा जायगा। मुझको हालात लीखते रहो। तोतारामजीकी आंखके बारेमें कुछ नहिं लीखा है। क्यों?

बापुके आशीर्वाद

जी० एन० २५४२की फोटो-नकलसे।

३८. पत्र: जवाहरलाल नेहरूको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
२६ फरवरी, १९२९

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारे पत्र मिले। मैं तुम्हें एक लम्बा-सा पत्र भेजनेवाला था, लेकिन अब मुझे नहीं भेजना चाहिए। सीतलासहायके बारेमें मैं तुम्हें तार[2] भेज चुका हूँ। आज मैंने तुम्हें इस आशयका तार[3] भेजा है कि मैं इलाहाबादसे होकर गुजरूँगा और दिल्लीमें ७ घंटे बिताऊँगा। मैं चाहता हूँ कि दिल्ली अथवा इलाहाबादमें हमारी मुलाकात हो और यदि सम्भव हो तो तुम मेरे साथ कुछ दूरतक यात्रा भी करो।

बहिष्कार समितिके मन्त्रीके रूपमें मैं जयरामदासकी सेवाएँ उपलब्ध करनेकी कोशिश कर रहा हूँ। वह कल यहाँ आ रहे हैं। अगर वह सहमत हो गये तो अवश्य ही उन्हें कमसे-कम इस सालके लिए तो कौंसिल छोड़नी पड़ेगी। बहिष्कार समितिके

१. गांधीजी द्वारा गंगादेवीको सूर्य स्नानकी सिफारिश करनेके उल्लेखसे लगता है कि यह पत्र सोमवार ४ मार्च, १९२९ को छगनलाल जोशीको लिखे पत्रसे पहले, लिखा गया था।

२. तार उपलब्ध नहीं है। अपने २० फरवरीके तारमें जवाहरलाल नेहरूने गांधीजीसे पूछा था कि क्या वह यह चाहेंगे कि सीतलासहाय तुरन्त आश्रम चले जायें अथवा अगले महीने-भर या ६ सप्ताह उत्तर प्रदेशमें रहकर गांधीजीके दौरेके बारेमें बन्दोबस्त करनेके बाद आश्रम जायें।

३. तार उपलब्ध नहीं है।

आगेके कार्यक्रमके बारेमें हम बात करेंगे। मुझे भेंट की गई थैलियोंके उपयोगके बारेमें तुमने जो-कुछ कहा है, वह बिलकुल ठीक है। इनका उपयोग मुख्यतः खादीकार्यके लिए होगा। यात्रा तो खादीके लिए ही करनी थी परन्तु स्वभावतः अब मैं रचनात्मक कार्यक्रमोंके बारेमें बातचीत करूँगा। लेकिन यदि लोगोंने बिना किसी शर्त पैसा दिया, जैसा कि उन्हें करना चाहिए, और यदि तुम समझो कि इन थैलियोंके कुछ भागको दूसरे काममें खर्च किया जाये, तो हम इसपर भी बातचीत कर लेंगे। लेकिन इसे भी तुम मुलाकातके समय चर्चाके मुद्दोंकी सूचीमें लिख लो, वर्ना कहीं ऐसा न हो कि मुलाकातके समय मैं इन्हें भूल जाऊँ।

मैं यह नहीं चाहूँगा कि तुम मेरे दौरेका तूफानी कार्यक्रम बनाओ बल्कि मैं तो चाहूँगा कि कुछ स्थलोंपर जहाँ आसपासके स्थानोंके लोग एकत्र हो सकें, वहाँके लिए ज्यादा समय रखो, और किसी एक ही गाँवमें बहुतसे समारोहोंका आयोजन न किया जाये। यदि इस सम्बन्धमें तुमने 'यंग इंडिया'में मेरी टिप्पणी[1] न पढ़ी हो तो मेहरबानी करके अब पढ़ लेना।

हृदयसे तुम्हारा,
ए० सुब्बैया
कृते बापू

अंग्रेजी (एस० एन० १५३५४)की फोटो-नकलसे तथा गांधी-नेहरू कागजात, १९२९ से भी।

सौजन्य : गांधी स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

३९. पत्र : च० राजगोपालाचारीको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
२६ फरवरी, १९२९

आपका तार मिला। इसे मैं अपनी टिप्पणीके साथ प्रकाशित कर रहा हूँ।[2] लेकिन मैं अपनी शिकायतको फिरसे दोहराता हूँ। कारण जो भी हो, आप अपनी अपीलके समर्थनमें हर सप्ताह तथ्य और आँकड़े नहीं देते। समयकी कमीका बहाना आपको नहीं बनाना चाहिए, और यदि आप ऐसा करना ही चाहते हैं तो फिर कोई आशा मत रखिए। आप लड्डू हाथमें पकड़े भी रहना चाहें और उसे खाना भी चाहें, ये दोनों चीजें एकसाथ सम्भव नहीं हैं। अपीलके प्रकाशित होनेके बाद मैं तो खुद नहीं जान पाया था कि यह सब क्या हो रहा है। सन्तानम, अथवा जो कोई भी इन्चार्ज हो, हर सप्ताह यह अवश्य बता सकता है कि कितनी सहायता पहुँचाई गई,

१. देखिए "मेरी आसन्न बर्मा-यात्रा", २१-२-१९२९।

२. देखिए "तत्काल सहायताकी आवश्यकता", २८-२-१९२९।

किस प्रकारकी सहायता पहुँचाई गई और किसको पहुँचाई गई। आप गाँवोंमें जाकर ब्योरा एकत्र करनेवाले स्वयंसेवकोंसे भी बात कर रहे हैं। अपने कुछ प्रभावशाली अनुभव भी उन्हें बताने चाहिए। उन लोगोंके घरोंकी दशा भी बताई जानी चाहिए। सैकड़ों बातें हैं जो मेरी समझसे की जा सकती हैं। यदि इसी प्रकारके प्रभावशाली आँकड़े प्रति सप्ताह, बल्कि रोज-ब-रोज, लोगोंके सामने पेश [नहीं] किये गये, उस हालतमें आप यह कैसे आशा कर सकते हैं कि वे अपीलपर ध्यान देंगे? आप कह सकते हैं कि अगर आप ऐसे विवरण भेजेंगे तो वे छपेंगे नहीं।

मेरी टिप्पणीसे आप देखेंगे कि किसी-न-किसी प्रकार मैंने आपके तारका समर्थन ही किया है। आपसे मेरी जो शिकायत है वह यह कि आपका तार कोई बहुत आवश्यक नहीं था। तारमें जिन तथ्योंका उल्लेख किया गया है वे आपकी जानकारीमें कोई अचानक नहीं आये हैं। भू-स्खलन हो जाये या बाढ़ भयंकर रूप धारण कर ले तो आप तार दे सकते हैं, लेकिन अकालग्रस्त क्षेत्रकी रोजमर्राकी सामान्य घटनाओंके सम्बन्धमें आप तबतक तार नहीं दे सकते जबतक आप किसी दूरस्थ-समाचारपत्रको दिन-प्रतिदिन खबर न भेजते हों। कृपया अब जागिए। मैं किसी-न-किसी तरह ५,००० रुपयेका इन्तजाम कर लूँगा। लेकिन उससे फायदा क्या है? वह आपकी अपीलके जवाबमें नहीं होगा, बल्कि वह तो केवल एक मित्रकी ओरसे दूसरे मित्रको भेंट होगी और यदि मैं ठीक समझा हूँ तो आप इस ढंगसे सहायता नहीं चाहते हैं। यदि आप ऐसा चाहते तो आप केवल यह तार दे सकते थे: मेरी क्षुधापीड़ित जनताके लिए ५,००० रुपये अवश्य भेजिए। अक्लमन्दको इशारा काफी।

श्रीयुत च० राजगोपालाचारी
गांधी आश्रम
तिरूचेनगोडू

अंग्रेजी (एस० एन० १५३५५)की फोटो-नकलसे।

४०. पत्र : डी० जी० आम्बेकरको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
२७ फरवरी, १९२९

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। आपका पिछला पत्र भी मिल गया था। लेकिन सिन्धके दौरे और कामके भारी बोझके कारण पत्रका जवाब न दे सका।

मैं यह माननेके लिए तैयार नहीं हूँ कि श्रीयुत अवारीको खादीका प्रयोग करनेसे इसलिए रोका गया क्योंकि वे खादी पहनना चाहते हैं। यदि इस संदर्भमें आपके

पास कोई लिखित प्रमाण हों तो मैं उन्हें देखना चाहूँगा और यदि तथ्योंका मुझे पता चल गया तो फिर मैं आपका पथप्रदर्शन भी कर सकूँगा।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत डी० जी० आम्बेकर
मंत्री
नागपुर टाउन कांग्रेस आर्म्स ऐक्ट सत्याग्रह कमेटी
दाजी स्कूलके निकट
सर्किल नं० ८, नागपुर

अंग्रेजी (एस० एन० १५०१४)की माइक्रोफिल्मसे।

४१. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

आश्रम
साबरमती
२७ फरवरी, १९२९

श्रीयुत घनश्यामदास बिड़ला
कोषाध्यक्ष, लालाजी स्मारक कोष
८, रॉयल एक्सचेंज प्लेस
कलकत्ता

प्रिय महोदय,

लालाजी कोषके लिए कराचीसे प्राप्त चन्देकी पूरक सूची[1] इस पत्रके साथ भेज रहा हूँ। कुल मिलाकर ४५,००० रुपये हैं जिनमें से नकद अभी तक ४३,२२३ रुपये मिले हैं।

४०,००० रुपये आपको पहले ही भेजे जा चुके हैं। अब मैं बकाया नकद रुपयोंके लिए ३,२२३ रुपयेका चेक संलग्न कर रहा हूँ। जैसे ही मुझे कराचीके कोषाध्यक्षसे बाकी रुपये मिलेंगे मैं आपको भेज दूँगा।

कृपया हर सदस्यके लिए अलग-अलग रसीद और मुझे अपनी कार्यालय प्रतिमें रखनेके लिए एक कच्ची रसीद भेजनेका इन्तजाम करें।

हृदयसे आपका,

संलग्नः १ चेक (नं० ए०/सी० सी० १११०९ इम्पीरियल बैंक ऑफ इंडियाके नाम)

अंग्रेजी (एस० एन० १३३६९)की माइक्रोफिल्मसे।

१. यहाँ नहीं दी गई।

४२. पत्र : रोमाँ रोलाँको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
२७ फरवरी, १९२९

प्रिय मित्र,

इस पत्र द्वारा मैं आपका परिचय अपने युवा मित्र बी० बी० देसाईसे करा रहा हूँ। बीमारीके बाद स्वास्थ्य-लाभके लिए जब मैं इनके समुद्रके किनारे स्थित बंगलेमें ठहरा हुआ था उस समय इन्होंने मेरी बहुत अच्छी तरहसे देखभाल की थी। श्री देसाई फ्रेंच भाषाके लगनशील छात्र हैं। बम्बईके एक कालेजमें ये फ्रेंचके प्रोफेसर रहे हैं। तथापि यह अपना फ्रेंचका ज्ञान बढ़ाना चाहते हैं और इसीलिए यह फ्रेंच विद्वानोंके पास रहना चाहते हैं। अगर इस दिशामें आप इनकी कोई मदद कर सकें तो मैं आभार मानूँगा।

हृदयसे आपका,

एम० रोमाँ रोलाँ
विला ओल्गा
विलनोव
स्विटजरलैंड

अंग्रेजी (एस० एन० १५०१५)की फोटो-नकलसे।

४३. पत्र : चमनको

साबरमती
२७ फरवरी, १९२९

भाईश्री चमन,

तुम्हारा पत्र मिला। मुझे लगता है कि तुमने बहुत-कुछ शककी नजर रखकर देखा है। किन्तु तुमने जो-कुछ भी लिखा है, यदि वह सब ठीक ही है तो फिर तुम्हें मेरे ऊपर श्रद्धा कदापि नहीं होनी चाहिए। जिस तरह हम फल और बीजसे वृक्षकी पहचान करते हैं उसी तरह तुम्हें मेरी कृतिसे मुझे जानना चाहिए।

यदि छगनलाल, पण्डितजी[1] आदि खोटे और निकम्मे हों तो मैं, जिसपर उन्हें लानेकी जिम्मेदारी है, अच्छा कैसे हो सकता हूँ? हो सकता है कि मैंने भूल की हो, पर तुम्हारे जैसे किसी व्यक्तिके जता देनेके बाद तो मुझमें भूल देखनेकी शक्ति

१. नारायण मोरेश्वर खरे।

आ सकनी चाहिए न? यदि न आये तो मेरे साथियोंके बारेमें तुम्हारी राय मुझपर भी लागू की जानी चाहिए। उसी तरह यदि चरखेमें कुछ नहीं है तो मुझमें कैसे हो सकता है? किन्तु मैं जानता हूँ कि अन्तमें आश्रम, मेरे साथियों और चरखेके बारेमें तुम्हारा विचार बदलेगा। जो व्यक्ति, हमारी इच्छानुसार नहीं चलते वे सब खराब हैं ऐसा मान लेनेकी आदत ही खराब है।

'जड़ चेतन गुन दोसमय' यह दोहा याद करना। तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक होगा। क्रोधको रोकना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (एस० एन० १५३७२)की माइक्रोफिल्मसे।

४४. विलक्षण उपवास-उपचार

'यंग इंडिया'को स्वास्थ्यके सन्देश-वाहकके रूपमें परिवर्तित करनेका मेरा विचार न तो पहले था और न ही अब है। यह इसलिए नहीं कि ऐसा करना गलत होगा, बल्कि इसलिए कि इस कामके लिए न तो मेरे पास समय है और न योग्यताएँ ही; और चूँकि मैंने भारतके स्वतन्त्रता-आन्दोलनके लाभकी खातिर 'यंग इंडिया'का कार्य-भार संभाला है इसलिए श्री के० जी० डी० द्वारा उल्लिखित रिपोर्ट[1] मेरी फाइलमें चार सप्ताहतक पड़ी रही और उसको प्रकाशित करनेसे मैं झिझकता रहा। इस रिपोर्टको मैंने दो बार पढ़ा है। यह इतनी सच्ची लगती है और इतने अच्छे ढंगसे लिखी गई है कि मैं श्री के० जी० डी०के आग्रहको और अधिक नहीं टाल सकता। जैसा कि पाठकोंको मालूम ही है कि उपवासमें मेरी आस्था आध्यात्मिक और स्वास्थ्य, दोनों दृष्टियोंसे है। उद्योग मन्दिरमें इसके बारेमें मैं रोज सलाह देता हूँ और इसके परिणाम निरन्तर लाभकारी ही निकलते हैं। मैं यह जानता हूँ कि अगर चिकित्सक साहसके साथ अपने मरीजोंमें उपवासको लोकप्रिय बना दें तो लोगोंको रोगोंसे होनेवाले कष्ट बहुत कम हो जायेंगे। और जो लोग आज औषधि तथा आहार-सम्बन्धी प्रयोगोंके कारण मर रहे हैं उनमेंसे बहुत-से बच जायेंगे। इसलिए के० जी० डी०की अपनी पत्नीकी बीमारीके सम्बन्धमें ठीक-ठीक तैयार की गई रिपोर्टको मैं खुशी-खुशी प्रकाशित कर रहा हूँ। फिर भी उपवास और इसी प्रकारके दूसरे प्रयोगोंमें रुचि रखनेवाले अन्य लोगोंको मैं चेतावनी दे दूँ कि वे यह आशा न रखें कि यदि वे अपनी रिपोर्टें भेजेंगे तो उन्हें भी 'यंग इंडिया'में छाप दिया जायेगा। फिर भी, मेरी अपनी जानकारी तथा पथ-प्रदर्शनके लिए उन्हें प्रमाणित रिपोर्टें भेजनेकी स्वतन्त्रता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २८-२-१९२९

१. यह रिपोर्ट यहाँ नहीं दी गई है।

४५. दिल्ली-यात्रा

मैंने स्पीकर द्वारा दी गई पार्टीकी[1] चर्चा अन्यत्र की है, किन्तु मैं चाहूँगा कि जिस कार्यसे मुझे दिल्ली जाना पड़ा उसे पाठकगण पूरी गंभीरताके साथ समझ लें और उसपर विचार करें। कार्यसमिति चाहती थी कि विदेशी कपड़ेके बहिष्कार-सम्बन्धी मेरी योजनाको स्वीकार करनेसे पहले वह उसे मुझसे समझ ले। कार्यसमिति-का इस विषयमें काफी आग्रह था। अतः मुझे सिन्धके बाद अपने कार्यक्रमको बीचमें अधूरा छोड़कर पण्डित मोतीलालजीके बुलानेपर दिल्ली जाना पड़ा। कार्य-समितिने योजनापर बड़े विस्तारसे विचार किया और अन्तमें बिना किसी बड़े परि-वर्तनके उसे स्वीकार कर लिया। इस योजनाको कार्यान्वित करनेके लिए एक विशेष समिति बनाई गई है। मैंने काफी हिचकिचाहटके बाद इस समितिके अध्यक्ष-पदका भार उठाना स्वीकार कर लिया है। मेरी हिचककी वजह यह थी कि मुझे लगता था कि वे लोग इसमें सहयोग नहीं करेंगे जो, यदि वे चाहें तो, बहिष्कारको सफल बना सकते हैं; और शायद उन्हें खादीमें विश्वास भी नहीं है। लेकिन मैंने यह भी देखा कि केवल इस एक खयालकी वजहसे, जिसका कि मुमकिन है कोई आधार ही न हो, मेरा इस उत्तरदायित्वको उठानेसे इनकार करना ठीक नहीं होगा। मेरा कर्त्तव्य तो प्रयत्न-भर करना है।

अब यह योजना देशके सामने है। समिति इस बातकी कोशिश करेगी कि वह यथासम्भव हर व्यक्तिको इसके बारेमें बताये और समझाये। लेकिन यहाँ भी हम इतना तो कह ही सकते हैं कि यह योजना इतनी सरल है कि हर स्त्री-पुरुष इसे अपनी हदतक कार्यान्वित कर सकता है। जिस स्त्री या पुरुषके पास कोई विदेशी कपड़ा हो, वह उसे त्याग दे और उसकी जगह प्रामाणिक खादी उपयोगमें लाये। 'प्रामाणिक' शब्दपर जितना भी जोर दिया जाये, कम ही होगा। अतः योजनामें यह व्यवस्था है कि जो खादी अखिल भारतीय चरखा संघ द्वारा प्रमाणित न हो उसे प्रामाणिक न माना जाये। यह बहुत सरल बात है और सिर्फ इतना ही करना है कि खादीको अखिल भारतीय चरखा संघ द्वारा प्रमाणित भण्डारों या विश्वसनीय व्यक्तियोंसे ही खरीदा जाये। कोई स्त्री या पुरुष अपने वैयक्तिक प्रयासका महत्त्व कम न समझे। पूर्ण बहिष्कार वैयक्तिक प्रयासोंका योग ही तो है। हर एक गज विदेशी कपड़ेका त्याग बहिष्कारको निकट लाता है, हर एक गज खादीकी खरीद कुछ बहनोंको राहत पहुँचाती है। जिस प्रकार लगातार बूंदें गिरनेसे पत्थर भी घिसता जाता है उसी प्रकार विदेशी कपड़ेका बराबर और लगातार बहिष्कार भारतका धन विदेशोंमें जानेके सबसे बड़े साधनको बन्द कर देगा और इस प्रकारके बहिष्कारके सभी अवश्यम्भावी फलितार्थ सामने आयेंगे। इसलिए हाथपर हाथ धर

१. देखिए "टिप्पणियाँ", २८-२-१९२९ का उपशीर्षक "स्पीकर महोदयकी पार्टी"।

कर बैठना और यह सोचकर कुछ न करना कि एक व्यक्तिके किये क्या हो सकता है, तथा समितिके आह्वानकी अथवा देश-व्यापी पैमानेपर किसी कार्रवाईकी प्रतीक्षा करते रहना पाप है। देशव्यापी पैमानेपर अगर कभी कुछ हुआ तो वह वैयक्तिक प्रयासोंके परिणामस्वरूप ही होगा।

पण्डित मालवीयजीके प्रस्तावपर भी प्रत्येक राष्ट्रीय संगठन और राष्ट्रीय कार्यकर्त्ताको पूरा ध्यान देना चाहिए। इस प्रस्तावका उद्देश्य १० मार्चको, जो कि रविवार है, सारे देशका ध्यान नेहरू-रिपोर्टकी ओर आकृष्ट करना है। इस वर्षके लिए यह रिपोर्ट राष्ट्रीय युद्धका नारा है। हम जैसा स्वराज्य चाहते हैं वह इस रिपोर्टमें बताया गया है। आत्म-सम्मानकी माँग है कि हम इस रिपोर्टमें पारिभाषित स्वराज्यको प्राप्त करनेके लिए कार्य करें। यदि हमने अगले ३१ दिसम्बरकी मध्य-रात्रितक नेहरू-रिपोर्टकी स्वीकृतिके लिए अनवरत रूपसे काम नहीं किया, तो हम १ जनवरी, १९३० को पायेंगे कि हम पूरी तरह तैयार नहीं हैं। लेकिन पूछा जा सकता है कि नेहरू-रिपोर्टका राग अलापनेका क्या फायदा जबकि बहुतसे मुसलमान और बहुतसे सिख उससे बहुत अधिक असन्तुष्ट हैं। मेरा जवाब यह है कि इस दस्तावेजको जितना समर्थन प्राप्त हुआ है उतना न किसी अन्य दस्तावेजको कभी मिला है और न मिलनेकी सम्भावना ही है और जब मैं कहता हूँ कि हमें रिपोर्टके लिए समर्थन प्राप्त करनेकी दिशामें ध्यान केन्द्रित करना चाहिए तो मैं ऐसा मानकर नहीं चलता कि उसमें संशोधन-परिवर्धनकी सम्भावना नहीं है। हाँ, मैं यह अवश्य मानता हूँ कि उसमें संगीनके बलपर किसी संशोधनकी सम्भावना बिलकुल नहीं है। जहाँ न्यायकी दृष्टिसे आवश्यक हो वहाँ संशोधन अवश्य ही किये जायेंगे और किये जाने चाहिए। यही कारण था कि सम्मेलनको भंग नहीं किया गया बल्कि उसकी बैठकको अनिश्चित कालके लिए स्थगित ही किया गया था। ये संशोधन अभी इस समय नहीं किये जाने चाहिए बल्कि तब किये जाने चाहिए जब इस रिपोर्टको जनताका इतना भारी समर्थन प्राप्त हो जाये कि सरकार इसे स्वीकार करनेके लिए विवश हो जाये और तब उस अवस्थामें इस रिपोर्टको सर्वसम्मतिसे निर्णीत अत्यावश्यक संशोधन करनेके बाद ही सरकारको स्वीकृतिके लिए दिया जाये। इस एक शर्तके साथ मैं कहूँगा कि नेहरू-रिपोर्टको सभी सार्वजनिक सभाओंमें ज्योंका-त्यों, पूर्णतः स्वीकार करानेके लिए पेश किया जाये और जनतासे उसे स्वीकार करनेके लिए कहा जाये। आखिरकार यह रिपोर्ट बड़े परिश्रमका परिणाम है और एक पंच-फैसलेके समान है। कोई भी पार्टी इसको हँसकर टाल नहीं सकती। इसलिए मैं पूरे दिलसे इस प्रस्तावका समर्थन करता हूँ कि आगामी १७ तारीखको समस्त देशमें नेहरू-योजनाके समर्थनमें सभाओंमें प्रस्ताव पास किये जायें।

मालवीयजीके प्रस्तावका दूसरा अंश इस पूर्वांशका स्वाभाविक परिणाम है। इस अंशमें यह आशा व्यक्त की गई है कि समस्त देश प्रत्येक माहके अमुक रविवारोंको अमुक रचनात्मक कार्य करेगा। इसका यह अर्थ नहीं कि हफ्तेके और दिनोंमें हम सोते रहें, बल्कि इसका मतलब यह है कि उन-उन रविवारोंको हम सप्ताहके अन्य दिनोंकी अपेक्षा निर्धारित रचनात्मक कार्य ज्यादा पूरी तरह करेंगे। कांग्रेसने

पूर्ण गम्भीरतापूर्वक नेहरू-रिपोर्टको बल प्रदान करनेके लिए रचनात्मक कार्य करनेका तरीका निकाला है। इसलिए हमें यही शोभा देता है कि उस कांग्रेस-कार्यक्रमको, जिसे मालवीयजीके प्रस्तावमें आंशिक रूपसे करनेका ध्येय रखा गया है, हम पूरी तरह कार्यान्वित करें।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २८-२-१९२९

४६. बर्मा कांग्रेस कमेटीसे

कांग्रेस कार्यसमितिने एक प्रस्ताव द्वारा मुझसे कहा है कि मैं बर्मा कांग्रेस कमेटीके हिसाब-किताबका लेखा-जोखा कराऊँ और जाँच-पड़ताल स्वयं करूँ। इसलिए मैं बर्मा कांग्रेस कमेटीसे कहूँगा कि वह अपना हिसाब-किताब तैयार रखे, किसी प्रतिष्ठित लेखा-परीक्षकसे लेखा-परीक्षण करवा ले, और मेरे वहाँ पहुँचनेके समयतक अपना रजिस्टर आदि ठीक हालतमें कर ले, ताकि मैं बिना समय गँवाये अपना काम शुरू कर सकूँ। जिन चीजोंकी आवश्यकता होगी उनमें से एक तो वह रजिस्टर है जिसमें मूल सदस्योंके नाम, पते, उनका धन्धा और उनसे प्राप्त रकमका हवाला दिया गया हो; दूसरे, कमेटीने कांग्रेसके प्रस्तावोंके आधारपर जो कार्य किया हो उसका तथा कांग्रेसकी खातिर जो कार्य किया गया हो उसका भी एक संक्षिप्त ब्योरा तैयार रखा जाये। स्वयंसेवकोंकी सूचीवाला रजिस्टर, कमेटीके कार्यालयमें प्राप्त होनेवाले चन्देकी रकम, कार्यालयमें काम करनेवाले कर्मचारियोंका ब्योरा, बाहर भेजे जानेवाले पत्रों तथा अन्य सामग्रीका विवरण रखनेवाली पुस्तिका तथा कांग्रेस संविधानमें सदस्यों सम्बन्धी खादीकी शर्तके बारेमें कमेटीकी रिपोर्ट — ये चीजें भी तैयार रखी जानी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २८-२-१९२९

४७. टिप्पणियाँ

स्पीकर महोदयकी पार्टी

किसीने मुझसे यह नहीं पूछा है कि कार्यसमितिने क्या किया, अथवा श्री जिन्ना और अन्य मुसलमान मित्रोंके साथ बातचीतमें क्या हुआ। हर आदमी केवल यह जाननेको उत्सुक है कि उस विलक्षण स्पीकर — श्रीयुत विट्ठलभाई पटेल — द्वारा दी गई चाय-पार्टीमें क्या हुआ। उस चाय-पार्टीमें चूँकि वाइसराय महोदय उपस्थित थे, इसलिए वहाँ जो-कुछ हुआ उसके बारेमें जाननेकी उत्कट उत्सुकता यह प्रकट करती है कि हम अब भी अपनी बनिस्बत अंग्रेजोंसे ज्यादा अपेक्षाएँ रखते हैं। १९२२ में और उसके बाद हमें जो तथाकथित धक्का लगा है, उसके बावजूद १९२० के मुकाबले

आजकी स्थितिमें जो अन्तर है वह बहुत बड़ा अन्तर है, लेकिन हमारे अन्दर आत्म-विश्वासकी भावना पैदा कर दे इतना अन्तर आज भी नहीं हुआ है। हमारे लक्ष्यकी ओर हमारी प्रगतिके मार्गमें आत्म-विश्वासकी यह कमी सबसे बड़ा रोड़ा है।

इस चाय-पार्टीका आयोजन स्पीकर महोदयकी अपनी सूझ थी। हालाँकि वह अपनी भावनाओंको कभी नहीं छिपाते, लेकिन वह अपने पदकी संवैधानिक मर्यादाओं का उल्लंघन भी नहीं करते, और उस मर्यादामें रहते हुए वह अपने उद्देश्यके लिए ——स्वराज्यकी प्राप्तिके उद्देश्यके लिए——कुछ कर सकनेका कोई अवसर कभी नहीं चूकते। इसलिए उन्होंने इस चाय-पार्टीका आयोजन गत्यवरोधको तोड़नेके लिए किया था। लेकिन एक अनौपचारिक, खानगी ढंगकी चाय-पार्टीमें गत्यवरोधको तोड़नेमें बहुत सफलता नहीं मिल सकती। और मेरे विचारसे जबतक दोनों पक्ष तैयार न हों तबतक कोई प्रगति या कार्य सम्भव नही है। हम जानते हैं कि हम अभी तैयार नही हैं। इंग्लैंडको जबतक मजबूर नहीं किया जायेगा तबतक वह भारतकी आकांक्षाओंको संतुष्ट करनेके लिए कोई कदम नहीं उठायेगा। ब्रिटेन भारतमें किसी उपकार-भावनासे शासन नहीं कर रहा है। उसका शासन तो एक शुद्ध व्यावसायिक कार्य है जिसे वह दैनिक लाभालाभका ध्यान रखते हुए सावधानी और सतर्कता तथा बारीकीके साथ निर्मम भावसे चला रहा है। इसके ऊपर बीच-बीचमें उदारताका जो मुलम्मा चढ़ा दिया जाता है उससे तो हमारी पीड़ा और लम्बी खिंचती है। अतः इस प्रकारकी चाय-पार्टियाँ इसी हदतक अच्छी हैं कि इनसे सिद्ध होता है कि जब दोनों पक्ष उपयोगी समझौतेके लिए तैयार होंगे उस समय उन दोनोंको एक जगह इकट्ठा करना आसान चीज होगी। उस समयतक के लिए पाठक इस आश्वासनसे सन्तोष करके बैठें कि इस चाय-पार्टीका कोई राजनीतिक महत्त्व नहीं है। यह पार्टी स्पीकर पटेलकी अनेक सराहनीय विचित्रताओंमें से एक थी।

एक बूढ़े नौजवानकी बात

शीर्षक पढ़कर पाठक चौंकें नहीं। हम ऐसे कई बूढ़ोंको जानते है जिनमें जवानीकी उमंग होती है और बहुतसे ऐसे नौजवान देखनेमें आते है जो जवान होते हुए भी उमंगकी दृष्टिसे बूढ़ोंके समान शिथिल होते हैं। विदुषी एनी बेसेंट वृद्ध होते हुए भी जवानके समान काम करती हैं। उनके समान समयकी पाबन्दी करनेवाले बहुत थोड़े आदमी पाये जाते हैं। जोशमें भी वे किसीसे कम नहीं हैं। यही जोश बंगालके ८० वर्षीय वृद्ध नेता बाबू हरदयाल नागमें है। वे मौके-मौकेसे अपने जोश-भरे पत्र मुझे भेजते रहते हैं। इसी तरहका उनका एक पत्र अभी-अभी मिला है। यह सब देश-प्रेमियोंके जानने योग्य है, इस विचारसे उसे यहाँ दे रहा हूँ :[1]

> **मुझे हिक्काका एक गम्भीर दौरा हो गया था उससे अभी-अभी उठा हूँ। मुझे विश्वास है कि अगले दिसम्बरकी ३१ तारीखकी आधी रातके बाद**

१. यह अनुच्छेद **नवजीवन** २४-२-१९२९में प्रकाशित गुजराती टिप्पणीसे लिया गया है। २८-२-१९२९ के **यंग इंडिया**में यही अनुच्छेद संक्षिप्त रूपमें दिया गया है।

स्वाधीनताकी लड़ाई शुरू होगी। ऐसा मालूम होता है मानो प्रभुने उसमें भाग लेनेकी गरजसे ही मुझे जीवित रहने दिया है। इस युद्धका नायक तो ईश्वर आप ही को बनायेगा, मैं तो यह भी मान रहा हूँ कि आप अभीसे इस युद्धकी तैयारी करने लगे हैं। मैं जानता हूँ कि मेरे जीवनका मूल्य कुछ-नहीं के बराबर है। चाहे जो हो, मुझे इस युद्धमें अपना हिस्सा देना है। रूस और जापानकी लड़ाईमें एक जापानी सरदारको एक खाई पार करनेका मौका आया। उसने अपने सिपाहियोंसे कहा कि वे उस खाईमें कूद कर उसे अपने शरीरोंसे पाट दें और फौजके जानेके लिए रास्ता तैयार कर दें। मैं जानता हूँ कि आपको भी ऐसी बे-पुलकी खाइयाँ लाँघनी पड़ेंगी। इस तरह की खाइयोंको पूरनेवाले स्वयंसेवकोंकी नामावलिमें मेरा नाम जरूर लिख लीजिएगा। अगर मैं इतनी-सी सेवा भी कर सका तो इसे प्रभुकी कृपा समझूँगा।[1]

जिस युद्धकी बात हरदयाल बाबू करते हैं वह दिसम्बरकी आधी रातको शुरू होगा या नहीं सो तो दैव जाने। और युद्ध छिड़नेपर उसकी सरदारी मेरे हिस्से आयेगी या क्या होगा सो भी वही जाने। इसके सिवा हरदयाल बाबूके कथनानुसार कांग्रेसकी माँगें अस्वीकार ही होंगी, किन्तु इस बारेमें मैं तो अभी इस निर्णयपर नहीं पहुँचा हूँ। हरदयाल बाबू आशावादी हैं। मेरा आशावाद शायद उनसे कुछ बढ़कर हो। मृत्युसे प्रेमपूर्वक मिलनेके लिए तैयार रहते हुए भी जबतक मृत्यु न आये तबतक अमरवत् जिन्दा रहनेके धर्ममें मेरा विश्वास है। उसी तरह अगर हमारी उचित माँगें स्वीकार न की जायें तो युद्धके लिए तैयार रहते हुए भी माँगोंके मंजूर हो जानेकी आशा रखनेके धर्मको मैं मानता हूँ; और सो भी अवधिके भीतर। कई बातें ऐसी होती हैं जो मनुष्यकी दृष्टिसे या उसके लिए नामुमकिन होती हैं या नामुमकिन-सी लगती हैं। लेकिन ईश्वरकी दृष्टिसे और ईश्वरके लिए तो कुछ भी नामुमकिन नहीं है। हम देखते हैं कि जिस बातको हम सपनेमें भी नहीं सोचते वही रात-दिन होती रहती है। अतः सिर्फ हमारी माँगके बारेमें ही कोई अनहोनी नहीं होगी, यह मैं कैसे मान सकता हूँ। इसके विपरीत मैं तो यह मानता हूँ कि जिस दिन स्वराज्य मिलनेवाला होगा उस दिन वह अकल्पित रूपमें ही मिलेगा। इस कारण उसे निकट लानेके लिए हमें जो-कुछ करना चाहिए वह हम कर गुजरें, यही हमारा धर्म है। फिर भी बाबू हरदयाल नागका पत्र अवश्य ही स्वागतके योग्य है। इस पत्रमें उनका उत्साह छलका पड़ता है। वह युवकोंके मनन करनेकी चीज है। जिस तरह बंगालके यह बूढ़े नेता तैयारी कर रहे हैं, नौजवान भी वैसी ही तैयारी करें। और अगर वे तैयारी करना चाहते हैं तो कांग्रेसके रचनात्मक प्रस्तावको ध्यानमें रखें। उसकी शर्तोंका वे पालन करें। क्योंकि यह प्रस्ताव जनताको अगले सालके लिए तैयार करनेके लिए काफी है। सरदार या नेताका सवाल मौका आनेपर अपने आप ही सुलझ जायेगा। हमें मतलब सरदारसे नहीं, बल्कि सरदारके जरिये मिलनेवाली

१. इसके बादका अनुच्छेद २४-२-१९२९ के गुजराती **नवजीवन**से लिया गया है।

वस्तुसे है। वह वस्तु स्वराज्य है। उसके लिए हम जीते हैं और उसीके लिए हम मरनेकी तैयारी करें।

अमेरिकामें दीनबन्धु

दीनबन्धु एन्ड्रयूजकी अमेरिका-यात्राके बारेमें अमेरिकासे मुझे दो तार मिले हैं। पहला तो इसी १८ तारीखको बोस्टनसे भेजा गया था, जिसका आशय इस तरह है:

> **श्री एन्ड्रयूजके बोस्टन आनेपर उनके सम्मानमें यहाँ एक भोज दिया गया था, जिसमें कई प्रभावशाली संस्थाओंके प्रतिनिधि शामिल हुए थे। भारत-वासियोंके प्रति सदिच्छा और भ्रातृभावका प्रस्ताव सर्वसम्मतिसे मंजूर किया गया। जिन संस्थाओंके प्रतिनिधि आये थे उनमें 'अमेरिकी महिला बोर्डका प्रार्थना समाज', 'विद्यार्थियोंका वाई० एम० सी० ए०', 'बोस्टन फेडरेशन चर्चेज', 'मेसेच्युसेट्स फेडरेशन चर्चेज', 'फेलोशिप्स यूथ' वगैरा प्रमुख थीं।**
>
> **—आर० ए० ह्यूम**

दूसरा ता० २४ फरवरीको टस्कीगीसे भेजा गया था। उसमें लिखा है:

> **एन्ड्रयूजके सहवाससे बड़ी प्रसन्नता हुई। उनकी बातें और उनकी उप-स्थिति तो मानो प्रभुका आशीर्वाद है। पिछली रातको भारत, आफ्रिका और अमेरिका मानों एक साथ हिले-मिले। टस्कीगीकी ओरसे प्रेम और शुभकामनाएँ स्वीकार कीजिए। —मोटन, प्रिंसिपल**

जब श्री एन्ड्रयूजने यूरोप जानेका निश्चय किया था तो उन्हें वहाँ पहुँचकर थोड़ा आराम कर सकनेकी आशा थी। लेकिन उन्हें आरामके नामपर कुछ भी नहीं मिला। विलायतमें रहते हुए भारतके हितकी चिन्ताने उनसे अथक परिश्रम करवाया और अब नई दुनिया (अमेरिका)के आग्रहपूर्ण न्यौतेको पाकर वे वहाँ गये हैं। अपने पत्रोंमें उन्होंने मुझे लिखा है कि उन्हें ब्रिटिश गियाना जाना पड़ेगा और उनके विचारमें उन्हें दक्षिण आफ्रिका भी जाना चाहिए। उस उपमहाद्वीपमें माननीय शास्त्रीजीका काम आश्चर्यजनक होते हुए भी दीनबन्धुका यह विचार है कि दक्षिण आफ्रिकामें शीघ्र ही जो आम चुनाव होनेवाले हैं उन्हें मद्देनजर रखते हुए शान्तिके आत्मनियुक्त दूतके नाते उनका वहाँ जाना जरूरी है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २८-२-१९२९
नवजीवन, २८-२-१९२९

४८. तत्काल सहायताकी आवश्यकता

चक्रवर्ती राजगोपालाचारी बड़े व्यस्त आदमी हैं। वह आजकल हिन्दी-प्रचारके सिलसिलेमें सेठ जमनालालजीके साथ सारे दक्षिण भारतका दौरा कर रहे हैं। इसी कारण उन्होंने मुझे पत्र न भेजकर, जो कि यदि वह दौरा न कर रहे होते तो आसानीसे भेज सकते थे, निम्नलिखित तार भेजा है:[1]

> **पिछले अक्टूबर और दिसम्बरमें 'यंग इंडिया' में छपी अपीलोंके जवाबमें पुडुपालयम गांधी आश्रमको अबतक ७६९ रुपये प्राप्त हुए। इनमें से २२५ रुपये हमें सीधे मिले और ५४४ रुपये साबरमती आश्रमकी मार्फत। . . . हमने आश्रमके इर्द-गिर्द एक मीलतक बसे पाँच गाँवोंके आदि द्रविड़ निवासियोंतक ही अपना सहायता-कार्य सीमित रखा है। . . . प्रत्येक परिवारको एक कार्ड दिया गया है जिससे रियायती मूल्यपर हर शनिवारको आश्रमसे प्रति वयस्क ५ माप और १२ वर्षसे कम प्रत्येक बच्चेके लिए २½ मापतक ज्वार प्राप्त की जा सकती है। . . . अभीतक १०८ परिवारोंका पंजीकरण किया गया है जिनमें कुल ३४४ वयस्क और १७९ बच्चे हैं। ये लोग २ फरवरी, १९२९ से ऊपर बताई गई सहायता प्राप्त कर रहे हैं। . . . तब भी सहायताकार्यपर १,३१२ रुपये खर्च आयेगा जिसमें से हमने केवल ७६९ रुपये प्राप्त किये हैं। किन्तु आश्रमके निकट अन्य गाँव भी हैं जहाँके आदि द्रविड़ निवासी बड़ी दयनीय अवस्थामें हैं और सहायता पानेके लिए शोर मचा रहे हैं। . . . इनमें से बहुतसे लोग गाँव छोड़कर जा रहे हैं। लेकिन जो बहुत गरीब हैं या बूढ़े हैं, विशेष रूपसे औरतें और बच्चे, वे इस असहनीय स्थितिसे बचनेके लिए गाँव छोड़कर जानेका रास्ता भी नहीं अपना सकते। . . . हम बहुत चाहते हैं कि उन्हें मुफ्त खाना दे सकें। लेकिन हमारे पास सीमित कोष है। . . . किसी हदतक सन्तोषजनक काम करनेके लिए हमें कमसे-कम और ५ हजार रुपये की आवश्यकता है। सहायता तत्काल चाहिए।**

इस तारमें अपनी तरफसे और कुछ कहनेकी कोई जरूरत नहीं। लेकिन लैटिन की एक कहावत है "जो समयपर सहायता देता है उसका महत्त्व बादमें मिली सहायतासे दूना होता है।" यह एक ऐसा अवसर है जहाँ यह कहावत पूरी तरह लागू होती है। सहायता भेजनेवाले लोग जब-तब छोटी-छोटी रकमें भेजते रहे हैं जिनके लिए राजगोपालाचारी और मैं आभारी हैं। लेकिन इस बीच अकाल-पीड़ित लोग भुखमरीके शिकार बनते जा रहे हैं। और किसी भी दिन ऐसा हो सकता है कि बजाय यह कहनेके कि लोग भूखे रह रहे हैं, राजगोपालाचारीको यह सूचना देनी पड़े कि लोग भोजनके अभावमें मर रहे हैं और उस समय यदि सहायता दी भी

१. यहाँ केवल कुछ अंश ही दिये गये हैं।

गई तो बहुत देर हो चुकेगी। दानकर्त्ता जो देना चाहें वे इसी समय — अभी दें। ५ हजार रुपया जुटाना कोई बड़ी चीज नहीं। सहायताकी आवश्यकता है, यह बात तारमें दिये गये विवरणसे स्वयं-सिद्ध है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २८-२-१९२९

४९. तार : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

साबरमती
२८ फरवरी, १९२९

खादीस्थान
कलकत्ता

रामजीभाईकी सहमतिसे जैसा चाहें वैसा आप तय कर लें।

गांधी

अंग्रेजी (जी० एन० ८७१४) की फोटो-नकलसे।

५०. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

२८ फरवरी, १९२९

प्रिय सतीश बाबू,

मैं दिल्ली-कलकत्ता एक्सप्रेस द्वारा दिल्ली होता हुआ रविवार, ३ मार्चको लगभग ८ बजे रात कलकत्ता पहुँचूँगा। गाड़ीके पहुँचनेका ठीक समय मुझे नहीं मालूम। मैं अपना मौन-दिवस कहाँ बिताऊँ, इसके बारेमें आपकी क्या इच्छा है, मुझे पता नहीं। मै जीवनलालके बंगलेकी बात सोच रहा हूँ। मेरा सोदपुर जाना बेकार है। स्टीमर मंगलवार, ५ मार्चको सुबह तड़के रवाना होता है। तथापि इसके मतलब होंगे कि मैं हेमप्रभा देवीसे नहीं मिल सकूँगा। लेकिन यह अनिवार्य प्रतीत होता है। मुझे उस बीच लिखनेका भी काफी काम करना है।

मैं आशा करता हूँ कि हेमप्रभा देवी अब संकटसे निकल चुकी हैं। उन्हें बहुत ज्यादा मेहनत नहीं करनी चाहिए। क्या मैंने ऐसा सुझाव दिया था कि वह धूप-स्नान किया करें? इस उपचारका मैं रोज सेवन कर रहा हूँ।

सप्रेम,

आपका,
बापू

[पुनश्च :]

अवश्य ही आप इस बातकी सावधानी बरतेंगे कि नये संघका कांग्रेससे कोई टकराव न हो। यदि ऐसा हो तो आप संघको कांग्रेससे अलग कर लें, और इसके बावजूद भी काम जारी रखें।

मुझे अभी-अभी राजेन्द्र बाबूका पत्र मिला है। मैंने उन्हें तार कर दिया है कि मेरा मौन टूटनेके बाद सोमवारकी रात मैं उन सभीकी बातें बड़ी खुशीसे सुनूँगा। क्या आपके पास कोई कागजात है?

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० ८७१३)की फोटो-नकलसे।

५१. पत्र : पोनका कनकम्माको[1]

२८ फरवरी, १९२९

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। मैं कोई रकम इस कामके लिए अलग निश्चित करनेके पक्षमें नहीं हूँ। सबसे अच्छी चीज यह है कि इस मामलेको मेरे निर्णयपर छोड़ दिया जाये और संस्थाके बारेमें मुझसे बातचीत कर ली जाये।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९२३७) की छपी हुई प्रतिकृतिसे।

५२. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२८ फरवरी, १९२९

प्रिय मित्र,

तुम्हारा साफ-साफ लिखा हुआ पत्र मिला। मुझे तुम्हारी अच्छी तरह याद है। तुम जब चाहो तब आ सकती हो। तुम्हें यहाँ अपना खर्च निकालने लायक रकम अर्जित करनेमें कोई दिक्कत नहीं होगी।

कल सुबह मैं बाहर जा रहा हूँ और मार्चके आखिरमें वापस लौटूँगा। लौटने के तुरन्त बाद आन्ध्र देश जाऊँगा। मैं लम्बे अरसे तक आश्रममें कब रह सकूँगा, यह नहीं कह सकता।

तुम्हारा,
मो० क० गांधी

श्रीमती प्रेमाबाई कंटक
पी० एल० लेडीज होस्टल
वाच्छा गांधी रोड, गामदेवी, बम्बई

अंग्रेजी (जी० एन० १०२१२)की फोटो-नकलसे।

१. नेल्लूर-स्थित कस्तूरबा विद्यालयकी संस्थापिका।

५३. पत्रपर निर्देश

२८ फरवरी, १९२९

इन दोनों पत्रोंका जवाब दे देना। मराठी पत्र पढ़नेके बाद पैसेका जैसा उपयोग करना ठीक लगे, वैसा कर लेना।[1]

बापू

गुजराती (एस० एन० १५३७४)की माइक्रोफिल्मसे।

५४. पत्र : बेचर परमारको

२८ फरवरी, १९२९

भाईश्री बेचर,

तुम्हारा निर्मल पत्र मिला। इस समय मैं तुम्हारी बातका विरोध नहीं करूँगा। तुम चाहो तो नाईका धन्धा अवश्य करो और शाला छोड़नी हो तो छोड़ दो। वही काम करो जिससे तुम्हारी आत्माको शान्ति मिले।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५५७८)की फोटो-नकलसे।

५५. पत्र : वि० ल० फड़केको

२८ फरवरी, १९२९

भाई मामा,

तुम्हारा पत्र मिला। फाँसी देनेवाला गलेमें फाँसी डालने आ रहा है। यदि हिम्मत हो तो उसे पहनो। तुम अन्त्यज आश्रममें असफल नहीं हुए। मन्त्री बनोगे तो भी असफल नहीं होओगे। इसमें जो रचनात्मक कार्य हो वही करना। यदि वह अन्त्यज कार्यमें विघ्नरूप होता हो तो मत करना। जग्गूके बारेमें लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३८२४)की फोटो-नकलसे।

१. ये पंक्तियाँ २५-२-१९२९को लिखित शंकरराव देवके पत्र परसे ली गई हैं। उस पत्रमें किसी दान-दाता द्वारा ५१ रुपयेकी सहायताका उल्लेख था।

५६. भाषण: तिलक प्रतिमाके अनावरण समारोहपर, अहमदाबादमें

२८ फरवरी, १९२९

यह तो निर्विवाद है कि वल्लभभाईके नगरपालिकामें प्रवेश करनेके बाद उसमें हिम्मत भी दिखाई देने लगी है। नगरपालिकाने लोकमान्यकी प्रतिमा[1] प्रस्थापित करनेका जो साहस दिखाया है उसके लिए मैं उसे धन्यवाद देता हूँ। कुछ ही वर्ष पूर्व यदि कोई ऐसा काम करता तो यह धृष्टता मानी जाती। पहले तो किसी पुस्तकालयतक में लोकमान्यका चित्र होता था तो सरकार या तो उसे चित्र हटानेके लिए विवश करती थी या उसे मदद देना बन्द कर देती थी। लेकिन अब समय बदल गया है; और यह खुशीकी बात है।

स्वर्गीय लोकमान्य तिलक महाराजने स्वराज्यके लिए अपनी समस्त शक्ति समर्पित कर दी थी। उनकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा तो वही कर सकता है जो स्वराज्यके लिए प्राण बलिदान करनेको तैयार हो और जिसमें हमें थोड़े समयके भीतर स्वराज्य दिलानेकी सामर्थ्य हो। आज मेरे साथ आप सब लोग इस समारोहमें शामिल हुए हैं तो आप सबका भी यही कर्त्तव्य है कि जिस स्वराज्यको पानेके लिए लोकमान्यने अपना सर्वस्व बलिदान कर दिया, उसी स्वराज्यको प्राप्त करनेकी तैयारी करें। कांग्रेसका भी यही आदेश है, इसलिए यह तैयारी करना हरएकका कर्त्तव्य है।

इस समय यद्यपि हिन्दुस्तानका आकाश स्वच्छ है किन्तु उसमें कब बादल घिर आयेंगे, यह नहीं कहा जा सकता। इस प्रतिमाका अनावरण करनेमें और राष्ट्रीय झण्डेको फहरानेमें नगरपालिकाने जैसी हिम्मत दिखाई है वैसी कठिन समय आ जाने पर भी दिखानी चाहिए। पहले तो स्वराज्यका नाम लेना राजद्रोह माना जाता था। ऐसे कठिन समयमें भी लोकमान्यने स्वराज्य और स्वदेशीका जो मन्त्र फूँका, हमें पहले उसे अपने मस्तिष्कमें और फिर अपने हृदयमें भी स्थान देना चाहिए और उसके लिए हमें अपने प्राण देनेके लिए भी तैयार रहना चाहिए।

लोकमान्यका दूसरा बड़ा गुण उनकी सादगी थी। वे लाखों रुपये चन्देमें जमा कर सकते थे तब भी उन्हें अपने खान-पान और वस्त्रोंमें बहुत ही अधिक सादगी और किफायत पसन्द थी। इंग्लैंड और अमेरिका जैसे मालदार देशोंके मुकाबलेमें हमारा देश बहुत गरीब है। हमारे देशमें लोगोंकी दैनिक आमदनी सिर्फ सात पैसे है। और इसमें से यदि सेठ लालभाई और सेठ अम्बालाल-जैसे करोड़पति एक ओर कर द तो सामान्य मनुष्यकी स्थिति कितनी बुरी है, यह तुरन्त समझमें आ जाता

१. प्रतिमा देशके ही कलाकार श्री कोल्हटकर द्वारा निर्मित कराये जानेके लिए भी गांधीजीने नगरपालिकाको धन्यवाद दिया था।

है। इसलिए हर व्यक्तिको खानपान और वस्त्रोंमें सादगी और मितव्ययितासे काम लेना चाहिए और स्वदेशीको प्रोत्साहन देना चाहिए।

[गुजरातीसे]
प्रजाबन्धु, ३-३-१९२९

५७. भाषण: अहमदाबादकी सार्वजनिक सभामें[1]

२८ फरवरी, १९२९

शास्त्रीजी और मेरे सम्बन्ध ऐसे हैं कि मुझे उनके बारेमें अपने मुँहसे कुछ कहने की जरूरत नहीं है। उनके और मेरे राजनैतिक विचारोंमें चाहे उत्तर-दक्षिण-सा अन्तर हो, फिर भी उनके और मेरे हृदयका जो मेल है वैसा दृढ़ मिलन अन्य दो व्यक्तियोंमें हो ही नहीं सकता। बहुत-सी बातोंमें मतभेद होनेपर भी यह मित्रता निभ रही है, इसमें किसकी उदारताका हाथ ज्यादा है, यह मैं नहीं जानता। मेरे विषयमें तो उन्होंने यह भी कहा है कि मैं किसी भी दूसरे व्यक्तिकी बात सहन नहीं कर सकता। फिर भी हममें मित्रता या विरोधका सम्बन्ध मधुर ही रहा है। शास्त्रीजीने दक्षिण आफ्रिकामें भारतकी जो सेवा की है उसका मूल्यांकन इस समय करना ठीक नहीं होगा। पर्वतकी तलहटीमें खड़ा मनुष्य उसकी शोभा नहीं देख पाता। किन्तु जैसे ही वह पर्वतके दूर जाकर देखता है वैसे ही उसे उसकी शोभा दिखाई देने लगती है। उसी प्रकार शास्त्रीजीके बीस महीनेके इस कार्यकालसे आप जैसे-जैसे दूर जाते जायेंगे वैसे ही उनके कार्यका मूल्यांकन करनेके योग्य बनेंगे। दक्षिण आफ्रिका जाकर उन्होंने दोनों हाथोंसे अपना पैसा लुटाया। दक्षिण आफ्रिकामें मैं अपने देशकी प्रतिष्ठा कैसे बढ़ा सकता हूँ, यही विचार उनके मनमें था। दक्षिण आफ्रिकामें उनके कुछ आलोचक भी थे। और मुझे दोनों प्रकारके वर्णन मिले हैं। जिनकी कोई आलोचना करनेवाला नहीं होता, उनका कार्य बिलकुल ठीक है, इस विषयमें मनमें शंका रहती है। शास्त्रीजीने दक्षिण आफ्रिकामें रहकर सभी उपनिवेशवासी भारतीयोंकी सेवा की है। उनपर शास्त्रीजीने अपनी दक्षता और शुद्धताकी छाप डाली है। प्रजाके दूतकी तरह वहाँ रहकर वे स्वराज्यको भी दो कदम पास ले आये हैं। अब हमें उनके अनुभवसे कुछ सीखना है और मेरी तो यही इच्छा है कि वे दीर्घायु होकर भारत की सेवा करें।

[गुजरातीसे]
प्रजाबन्धु, ३-३-१९२९

१. यह सभा श्रीनिवास शास्त्रीके दक्षिण आफ्रिकाके अनुभव सुननेके लिए आयोजितकी गई थी। सभाकी अध्यक्षता गांधीजीने की थी।

५८. भाषण : ध्वजारोहण समारोहपर, अहमदाबादमें

२८ फरवरी, १९२९

मैंने तो यह सोचा था कि यहाँ आकर मुझे कुछ सभासदोंके समक्ष झण्डा ही फहराना होगा। किन्तु जैसा प्रमुखने कहा है यहाँ भी मुझे कुछ शब्द कहने ही होंगे। आपने मुझे राष्ट्रीय झण्डा फहरानेका अवसर दिया, इसके लिए मैं आपका आभारी हूँ। मैं नगरपालिकाको दुबारा धन्यवाद देता हूँ कि उसने राष्ट्रीय झण्डा अपनाया। इस झण्डेका जो अर्थ है, मुझे लगता है कि सब लोग उसे नहीं समझते। मैंने तो अपनी एक कल्पना व्यक्त की[1] और उसे भारतके अधिकांश लोगोंने अपना लिया। यद्यपि उसके विषयमें काफी मतभेद है तो भी जहाँतक मैं देख पाया हूँ वहाँतक भारतके अधिकांश लोग उससे सहमत हैं।

इस झण्डेमें तीन रंग हैं — लाल, हरा और सफेद। लाल हिन्दुओंके लिए, हरा मुसलमानोंके लिए तथा सफेद दूसरी जातियोंके लिए है। इसमें एक बहुत बड़ी भावना निहित है। वह तो मानो त्रिवेणीका संगम है और सभीके मिलकर चलनेकी कामना करता है। इसके बीच जो चरखेका चिन्ह है वह इस बातका सूचक है कि हम सबको उसका आश्रय लेना है। निश्चय ही इस झण्डेमें ये बाह्य चिह्न हैं किन्तु यदि चरखे और सब अलग-अलग रंगोंके होते हुए भी उसमें निहित भावना हममें न हो तो जैसा मैंने बगीचेमें[2] कहा था, वह कपड़ेका एक चिथड़ा-मात्र है।

आज भारतमें कई लोग कहते हैं कि हिन्दू और मुसलमानोंमें मेल नहीं हो सकता। वे कहते हैं मियाँ और महादेवकी न कभी बनी है, न बन ही सकती है। यहाँपर स्वराज्य या तो हिन्दुओंको मिल सकता है या मुसलमानोंको। इन दोनों कौमोंके अतिरिक्त दूसरे लोग सोचते हैं कि हमारा काम जापान या जर्मनीके राज्यके बिना नहीं चल सकता। यदि अब भी यही विचार हो तो इस झण्डेको फहरानेका कोई अर्थ नहीं है। इस झण्डेको फहरानेके समय जो लोग साक्षी हैं उन्हें यही प्रतिज्ञा करनी चाहिए कि वे हिन्दू हों, मुसलमान हों, ईसाई हों, चाहे जिस किसी और कौमके हों यदि वे भारतको अपना देश मानते हों तो उन्हें एक-दूसरेके साथ मिलकर भारतके लिए स्वराज्य प्राप्त करना है। अध्यक्षने[3] सच ही कहा है कि हम सब स्वतन्त्रता प्राप्त करना चाहते हैं।

हम जिस स्वराज्यकी कामना करते हैं, वह इन तीन रंगोंकी शक्तिसे ही प्राप्त होगा। और यदि हम [यह मानते हों कि स्वराज्य हमें दूसरे किसी भी तरीकेसे

१. देखिए खण्ड १९, पृष्ठ ५६८-७०।

२. गांधी-भवनपर ध्वजारोहणका यह कार्यक्रम विक्टोरिया बागमें लोकमान्य तिलककी मूर्तिके अनावरण समारोहके तुरन्त बाद हुआ था।

३. नगरपालिकाके अध्यक्ष दौलतरामजी।

प्राप्त नहीं हो सकता, तब तो इस झण्डेको फहराना ठीक है। चरखेमें जो संकल्प निहित है वही हम सबके मनमें होना चाहिए। अध्यक्ष और सब लोगोंके मनमें भी वही होना चाहिए। भविष्यमें प्रतिकूल अवसर आनेपर यदि आपसे यह झण्डा उतारनेको कहा जाये तो आप उसे उतारेंगे या नहीं? हिन्दुस्तानकी कई नगरपालिकाओंने यह झण्डा फहराया और फिर उतारा भी। और इसीलिए मैं आपको चेतावनी देता हूँ कि एक बार झण्डा फहरानेके बाद उसे उतारना नहीं है और इसके लिए सिर्फ नगरपालिकाके सभासदोंको ही नहीं, किन्तु मत देनेके अधिकारी हरएक नागरिकको जान लड़ा देनी है। इस कामको सम्पन्न करनेसे हमारी शक्ति बढ़ी है। मैं ईश्वरसे यही प्रार्थना करता हूँ कि यह झण्डा आप सबको प्रेरणा दे।

[गुजरातीसे]

प्रजाबन्धु, ३-३-१९२९

५९. तार: प्राणजीवन मेहताको

[फरवरी, १९२९][1]

मणिलालको उसके स्वास्थ्यकी मौजूदा हालतमें ऐसा कुछ भी करनेके लिए विवश करना जो उसके बिना हो सकता है क्रूरता है।[2]

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १५१३९ ए०)की फोटो-नकलसे।

६०. पत्र: जगन्नाथको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
[१ मार्च, १९२९ से पूर्व][3]

प्रिय जगन्नाथजी,

शिकारपुर और सक्खरसे लिखे आपके दोनों पत्र मुझे मिले। शिकारपुरवाले पत्रके साथ मुझे १,७०० रुपयेकी हुंडी भी मिली जिसे मैंने कोषाध्यक्षके पास कलकत्ता भेज दिया है।

१. इस तारकी तारीख उपलब्ध नहीं है। इस तारका मसविदा सी० एफ० एन्ड्रयूज द्वारा **एस० एस० मेजेस्टिक** नामक जहाजपरसे १५ जनवरी, १९२९ को लिखे गये पत्रके अन्तमें लिखा हुआ था। एन्ड्रयूजका यह पत्र गांधीजीको किसी समय फरवरीमें मिला होगा।

२. साधन-सूत्रमें गांधीजीके निम्नलिखित निर्देश लिखे हुए हैं: "इसकी नकल और डा० मेहताके तारको आश्रमके पतेपर मणिलालको डाकसे भेज दो।" इससे यह बात स्पष्ट है कि यह तार गांधीजीने जब भेजा तब वह आश्रममें नहीं थे।

३. गांधीजी १ मार्च, १९२९ को बर्मा-यात्राके लिए रवाना हुए थे। पत्रके पाठसे स्पष्ट है कि इसे उस तारीखसे पहले लिखा गया था।

आपने इस माह १७ तारीखको जो पत्र हैदराबादसे लिखा था उसके अनुसार तो मुझे २,६७७ रुपया २ आना ६ पाईका चैक मिलना चाहिए था। (जिसके बारेमें आप कहते हैं कि आपने १५ तारीखको उसे दिल्ली भेज दिया था) आपसे विदा लेनेके बाद मुझे अबतक पंजाब नेशनल बैंकके नाम २,००९ रुपये ४ आनाकी हुंडी ही मिली है, जो मुझे दिल्लीमें प्राप्त हुई थी और १,७०० रुपयेकी एक दूसरी हुंडी भी, जो मुझे अहमदाबादमें मिली। मैं आपका बहुत कृतज्ञ होऊँगा यदि आप मुझे यह सूचित करें कि क्या आपने मुझे तीन किस्तोंमें रकमें भेजी हैं, और यदि ऐसा हो तो आप २,६७७ रुपये २ आने ६ पाईवाले उस चैकके बारेमें फौरन पूछताछ करें, जिसके बारेमें आपका कहना है कि आपने उसे मुझे इस महीनेकी १५ तारीखको डाकसे दिल्ली भेजा था।

हम लोग अहमदाबादसे १ मार्चको दिल्ली और कलकत्तेके रास्तेसे रंगूनके लिए रवाना होंगे। हम २ तारीखकी सुबह दिल्ली पहुँचेंगे और दिल्ली आगरा कलकत्ता एक्सप्रेस पकड़ेंगे, जो हमें ३ तारीखकी शामको कलकत्ता पहुँचायेगी। हम ५ तारीखकी सुबह स्टीमरसे रवाना होकर ८ तारीखको रंगून पहुँचेंगे। दिल्लीमें हमारा पता है: मार्फत, लक्ष्मीनारायण गाडोदिया, गाडोदिया स्टोर, चाँदनी चौक, दिल्ली। हमारा कलकत्तेका पता है: मार्फत सतीशचन्द्र दासगुप्त, खादी प्रतिष्ठान, सोदपुर (ई० बी० रेलवे)। और हमारा रंगूनका पता है: मार्फत डा० प्रा० जी० मेहता, १४, मुगल स्ट्रीट, रंगून।

अभिवादन सहित,

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १३३२०)की माइक्रोफिल्मसे।

६१. भेंट : जॉन मॉटसे[1]

[१ मार्च, १९२९से पूर्व][2]

[डा० मॉट :] आपके विचारमें भारत विश्वकी प्रगतिमें सबसे महत्त्वपूर्ण योग-दान क्या कर सकता है?

[गांधीजी :] अहिंसाका; जिसका प्रदर्शन यह देश आज जिस व्यापक पैमानेपर कर रहा है, वह इतिहासमें अभूतपूर्व है। अहिंसा न होती तो देशमें आग भड़क उठी होती क्योंकि जहाँतक सरकारका प्रश्न है उसने गम्भीरसे-गम्भीर ढंगसे लोगोंको उत्तेजित करनेमें कोई कसर नहीं छोड़ी है। इसमें कोई शक नहीं कि देशमें ऐसी विचारधाराके लोग हैं जो हिंसामें विश्वास रखते हैं, लेकिन यह विचारधारा सतह पर फैली हुई मैलकी तरह है और देशमें इसके आदर्शोंको अनुकूल वातावरण मिलनेकी कोई सम्भावना नहीं है।

१. प्यारेलालकी रिपोर्टपर आधारित।
२. भेंट सम्भवतः आश्रममें सोमवारके दिन हुई थी। तिथि उपलब्ध नहीं है।

देशके भविष्यके लिए आपकी चिन्ताका क्या कारण है?

यदि मैं 'बाइबिल'की भाषामें कहूँ तो इसका कारण हमारे हृदयकी वह भावशून्यता तथा कठोरता है जो कि जनता और उसकी निर्धनताके प्रति हमारी मनोवृत्तिसे प्रकट होती है। हमारे नवयुवक उच्च भावनाओं और मनोवेगोंसे परिपूर्ण हैं लेकिन अभीतक उन्होंने कोई निश्चित और व्यावहारिक रूप ग्रहण नहीं किया है। उदाहरणके लिए, यदि हमारे नवयुवकोंको सत्य और अहिंसामें जीवन्त और सक्रिय श्रद्धा होती तो अबतक हम कहीं अधिक प्रगति कर चुके होते। फिर भी हमारे सभी नवयुवकोंमें उदासीनता नहीं है। वास्तवमें अपने कुछ शिक्षित नवयुवकों तथा नवयुवतियोंके निकट सहयोगके बिना मैं न तो जनतासे सम्पर्क स्थापित कर सकता था और न ही इतने बड़े पैमानेपर राष्ट्रकी सेवा ही कर सकता था और मेरी यह आशा बनी हुई है कि ये नवयुवक और नवयुवतियाँ खमीरका काम करेंगे और समय आनेपर सारी जनताका स्वरूप बदल कर रख देंगे।

उसके बाद उन्होंने भारतवर्षके निर्माणमें हिन्दू, इस्लाम और ईसाई धर्मोंने जो महत्त्वपूर्ण योगदान दिया उसकी चर्चा की।

भारतीय संस्कृतिमें हिन्दू-धर्मका सबसे महत्त्वपूर्ण और महान् योगदान अहिंसाका सिद्धान्त है। पिछले तीन हजार या उससे भी अधिक वर्षोंसे इसने देशके इतिहासको एक निश्चित दिशा दी है और आज भी भारतके करोड़ों लोगोंके लिए यह एक जीवन्त शक्ति है। यह एक विकासशील सिद्धान्त है, और इसका सन्देश आज भी दिया जा रहा है। इसकी शिक्षा हमारी जनताके मनोंमें इस हदतक पैठ चुकी है कि भारतमें सैनिक क्रान्ति एक लगभग असम्भव-सी चीज बन गई है। इसका कारण यह नहीं है, जैसा कि कुछ लोग सोचते होंगे, कि हमारी जातिमें शारीरिक बल नहीं है — क्योंकि इसमें शारीरिक शक्तिकी उतनी आवश्यकता नहीं होती जितनी कि किसी व्यक्तिकी हत्याके उद्देश्यसे गोली दागनेकी दानवीय इच्छा की — बल्कि यह है कि अहिंसाकी परम्पराने जनतामें अपनी जड़ें बहुत गहरी जमा ली हैं।

भारतकी राष्ट्रीय संस्कृतिमें इस्लामका महत्त्वपूर्ण योगदान है इसकी ईश्वरके एक होनेमें पक्की श्रद्धा तथा इस्लामके अनुयायियोंमें मानव-बन्धुत्वके सत्यका व्यवहारिक प्रयोग। मैं इन दो चीजोंको विशेष योगदान मानता हूँ। क्योंकि, हिन्दू-धर्ममें तो बन्धुत्वकी भावनाको बहुत ज्यादा दार्शनिक जामा पहना दिया गया है। इसी तरह यद्यपि दार्शनिक हिन्दू-धर्मका ईश्वर भी वही ईश्वर है लेकिन इस बातसे इनकार नहीं किया जा सकता कि हिन्दू-धर्मका व्यावहारिक पक्ष उतना अधिक दृढ़ और अटल नहीं है जितना कि इस्लामका।

तब फिर भारतके राष्ट्रीय जीवनमें ईसाई-धर्मका क्या योगदान है? मेरा तात्पर्य ईसाई-धर्मसे अलग ईसाका जो प्रभाव है उससे है; क्योंकि मुझे डर है कि इस समय दोनोंमें काफी अन्तर है।

हाँ, बस यही तो कठिनाई है। एक धार्मिक गुरुकी शिक्षाओंको उसके अनुयायियोंके जीवनसे अलग करके देख सकना सम्भव नहीं है। दुर्भाग्यसे, पिछले डेढ़ सौ

वर्षोंसे भारतमें ईसाई-धर्म घनिष्ठ रूपसे ब्रिटिश शासनके साथ जुड़ा रहा है। यह धर्म हमें भौतिकवादी सभ्यताका तथा बलवान गोरी जातियों द्वारा संसारकी निर्बल जातियोंके साम्राज्यवादी शोषणका पर्याय प्रतीत होता है। इसीलिए ईसाई-धर्मका भारतके प्रति योगदान ज्यादातर नकारात्मक ही है। जो लोग अपनेको ईसाई-धर्मका अनुयायी बताते हैं, उनके बावजूद इसने कुछ भलाई की है। इसने हमें चौका कर सचेत किया है और अब हम अपने घरको दुरुस्त करनेकी तरफ ध्यान देने लगे हैं। ईसाई मिशनरी साहित्यने हमारी कुछ बुराइयोंको तीव्रताके साथ हमारे सामने रखा है और हमें सोचनेपर मजबूर किया है।

जो चीज मुझे सबसे अधिक दिलचस्प लगी है वह है, अस्पृश्यता-निवारणसे सम्बन्धित आपका कार्य। क्या आप मेहरबानी करके मुझे यह बतायेंगे कि वह ऐसा कौन-सा आशाजनक चिह्न है जिससे यह प्रकट होता है कि यह प्रथा, जैसा कि आप कहते हैं, आखिरी साँस ले रही है?

रूढ़िवादी हिन्दू-धर्ममें जो प्रतिक्रिया हो रही है और वह प्रतिक्रिया जितनी तेजीसे हुई है उससे यह बात साफ प्रकट होती है। एक सुप्रसिद्ध उदाहरणके तौर पर मैं पण्डित मालवीयजीका उल्लेख करूँगा। दस साल पहले वह अस्पृश्यताके नियमों-का पालन बहुत आग्रहपूर्वक किया करते थे, जैसा कि उस समयके अधिकांश कट्टर हिन्दू किया करते थे। लेकिन आज वह गंगाके तटपर अस्पृश्योंमें शुद्धिका मन्त्र फूँककर गर्वका अनुभव कर रहे हैं और इसके चलते कभी-कभी तो नासमझ रूढ़िवादिताके कोपभाजन भी बनते हैं। इस कामकी वजहसे पिछली दिसम्बरमें कलकत्तामें वह कट्टर-पंथी लोगोंके हाथों लगभग मार खाते-खाते बचे थे। हालमें वर्धामें एक धनी व्यापारी सेठ जमनालाल बजाजने अपने सुन्दर मन्दिरको अस्पृश्योंके लिए खोल दिया है और इसमें उन्हें किसी खास विरोधका सामना नहीं करना पड़ा। इसके बारेमें सबसे महत्त्वपूर्ण बात तो यह है कि मन्दिरमें आनेवालोंका रिकार्ड देखनेपर पता चला कि जबसे मन्दिरमें अस्पृश्योंका प्रवेश शुरू हुआ है तबसे संख्यामें कमी होनेके बजाय वृद्धि ही हुई है। स्थितिका सार-संक्षेप यह है कि मैं आशा करता हूँ कि अस्पृश्यताके प्रति यह जो ज्वार उठ रहा है इसमें निकट भविष्यमें ही और अधिक तेजी आये, हालाँकि यह पहले ही आश्चर्यजनक रूपसे तेज रही है।

आपको अपने मित्र कहाँसे मिलते हैं? क्या मुसलमान और ईसाई इस काममें आपको सहायता देते है?

यह ऐसा मामला है जिसमें मुसलमान और ईसाई कुछ भी सहायता नहीं दे सकते। अस्पृश्यता-निवारणका प्रश्न खास तौरपर हिन्दू-धर्मकी शुद्धिका प्रश्न है। यह अन्दरसे ही की जा सकती है।

लेकिन मेरा तो यह खयाल था कि इस काममें ईसाई आपकी ज्यादा मदद कर सकते हैं। चर्च ऑफ इंग्लैंडकी मिशनके बिशप रेवरेंड व्हाइटहेडने मद्रास प्रेसीडेंसी में अस्पृश्योंकी दशा सुधारनेसे सम्बन्धित ईसाई जन-आन्दोलनके प्रभावके बारेमें कुछ महत्त्वपूर्ण बातें बताई हैं।

मैं इस प्रकारके जन-आन्दोलनोंको शककी निगाहसे देखता हूँ। इसका उद्देश्य अस्पृश्योंका सुधार नहीं बल्कि अन्ततः उनका धर्म-परिवर्तन करना होता है। ऐसे आन्दोलनोंके पीछे व्यापक पैमानेपर धर्म-परिवर्तनका जो उद्देश्य छिपा हुआ है उससे मिशनरी कार्य दूषित हो जाता है।

इस मुद्देपर परस्पर विरोधी मत हैं। कुछ लोगोंका तो यह दृढ़ विश्वास है कि अस्पृश्य लोग धर्मकी दृष्टिसे धर्म-परिवर्तनकी आवश्यकताके कायल होकर ईसाई बनें तो उन्हें ज्यादा लाभ होगा; और इससे उनका जीवन भी सुधर जायेगा।

मुझे दुःख है कि इस दृष्टिकोणकी पुष्टि करनेवाला कोई ठोस प्रमाण मुझे नहीं मिल सका है। एक बार मुझे ईसाइयोंके एक गाँवमें ले जाया गया था। लेकिन इन धर्मान्तरित व्यक्तियोंमें मैंने वह सरल खुलापन नहीं देखा जो आध्यात्मिक परिवर्तनको प्राप्त हुए व्यक्तिमें मिलता है। बल्कि उलटे मुझे तो उनमें आँखें चुरानेका वातावरण दिखाई दिया। वे बोलनेमें डरते थे। इससे मुझे लगा कि यह परिवर्तन भलेके लिए नहीं बल्कि बुरेके लिए हुआ है।

तब फिर आपका क्या किसी भी प्रकारके धर्म-परिवर्तनमें विश्वास नहीं है?

एक व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्तिका धर्म-परिवर्तन करनेको मैं उचित नहीं मानता। मेरी कोशिश किसी दूसरेके धार्मिक विश्वासको हिलानेकी या उनकी नींव खोदनेकी नहीं, बल्कि उसे अपने धर्मका एक अच्छा अनुयायी बनानेकी होनी चाहिए। इसका तात्पर्य है सभी धर्मोकी सच्चाईमें विश्वास और इस कारण उन सबके प्रति आदर-भावका होना। इसका यह भी मतलब है कि हममें सच्ची विनयशीलता होनी चाहिए; इस तथ्यकी स्वीकृति होनी चाहिए कि चूँकि सभी धर्मोंको हाड़-मांसके अपूर्ण माध्यमसे दिव्य ज्ञान प्राप्त हुआ है, इसलिए सभी धर्मोंमें कम या ज्यादा मात्रामें मानवीय अपूर्णताएँ मौजूद हैं।

क्या हमारा यह कर्तव्य नहीं है कि हमें जो ज्यादासे-ज्यादा सत्यका ज्ञान है उस ज्ञानको हम अपने मानव-बन्धुओंको प्रदान करें? और उन्हें अपने गूढ़ आध्यात्मिक अनुभवोंमें भागीदार बनायें?

मुझे दुख है कि मुझे आपसे फिर असहमत होना पड़ रहा है। इसका कारण यह है कि गूढ़ आध्यात्मिक सत्य सदैव अनिर्वचनीय होते हैं। आपने जिस प्रकाशका उल्लेख किया है वह वाणीसे परे है। इसकी अनुभूति केवल अन्तर्ज्ञानसे ही हो सकती है; और फिर उच्चतम सत्यको सम्प्रेषित करनेकी आवश्यकता नहीं पड़ती क्योंकि स्वाभाविक रूपसे यह स्वतःस्फूर्त होती है। यह चुपचाप प्रभावित करती है, जैसे कि गुलाब बिना किसी बाहरी मददके अपनी सुगंध फैलाता है।

लेकिन ईश्वर भी कभी-कभी अपने पैगम्बरोंके माध्यमसे बोलता है।

यह तो ठीक है, लेकिन पैगम्बर अपनी जिह्वासे कुछ नहीं कहते बल्कि अपने जीवन और आचरणके जरिये बोलते हैं। तथापि इतना मुझे पता है कि इस मामलेमें ईसाइयोंका अपना दृढ़ मत है और वह मेरी रायके खिलाफ है।

ऐसा नहीं है। ईसाइयोंमें भी ऐसी विचारधाराके लोग मौजूद हैं—और उनकी संख्या बढ़ रही है—जिनका कहना है कि इस मामलेमें लोगोंपर कोई चीज थोपी नहीं जानी चाहिए बल्कि हरेक व्यक्तिको इस बातकी छूट होनी चाहिए कि वह अपने ढंगसे जीवनके गूढ़तम सत्योंकी खोज करे। इसकी पुष्टिमें यह तर्क दिया जाता है कि हरेक व्यक्तिकी आवश्यकता तथा स्वभाव भिन्न-भिन्न होनेके कारण उनके अन्दर आध्यात्मिक खोजकी प्रक्रियाका भी तदनुसार अलग होना लाजिमी है। दूसरे शब्दोंमें उनका ऐसा खयाल है कि प्रचार शब्दके प्रचलित अर्थमें प्रचारका तरीका सबसे कारगर तरीका नहीं है।

आपके मुँहसे यह बात सुनकर मुझे खुशी हुई। वास्तवमें हिन्दू-धर्म लोगोंके मन-में यही बात बैठाता है।

आप ऐसे नवयुवकोंको क्या सलाह देंगे जो अपनी कमजोरियोंको जीतनेके लिए विफल प्रयास कर रहे हैं और आपके पास सलाह लेनेके लिए आते हैं?

म उन्हें बस प्रार्थना करनेकी सलाह दूंगा। मनुष्यको अपने आपको बिलकुल दीन बना देना चाहिए और शक्तिकी प्राप्तिके लिए ईश्वरकी तरफ देखना चाहिए।

लेकिन यदि नवयुवकोंने यह शिकायत की कि उनकी प्रार्थनाकी सुनवाई नहीं होती और उन्हें ऐसा लगता है जैसे वे एक निर्मम ईश्वरके सामने खड़े बोल रहे हैं, तो फिर क्या होगा?

अपनी प्रार्थनाका उत्तर पानेकी कामना करनेका अर्थ है ईश्वरको प्रलोभन देना। यदि प्रार्थनासे कोई आराम नहीं मिलता तो ऐसी प्रार्थना केवल झूठी प्रार्थना है। यदि प्रार्थनासे ही कोई मदद नहीं मिली तो फिर किसी चीजसे नहीं मिलेगी। व्यक्तिको निरंतर प्रार्थना करते रहना चाहिए। नवयुवकोंको मेरा यही सन्देश है। नवयुवकोंको अपनी कमजोरियोंके बावजूद प्रेम और सत्यकी सर्वविजयी शक्तिमें विश्वास रखना चाहिए।

हमारे नवयुवकोंके साथ दिक्कत यह है कि विज्ञान और आधुनिक दर्शनके अध्ययनने उनकी आस्थाको समाप्त कर दिया है और इस कारण वे अनास्था रूपी अग्निके ग्रास हो गये हैं।

इसका कारण यह है कि उनकी दृष्टिमें आस्था बुद्धि-जन्य चीज है, आत्मानुभव नहीं। जीवनके संघर्षमें बुद्धि कुछ हदतक तो हमारा साथ देती है लेकिन संकटकी घड़ीमें यह हमें दगा दे देती है। आस्था तर्कसे परेकी चीज है। जब चारों ओर अन्धेरा ही दिखाई पड़ता है और मनुष्यकी बुद्धि काम करना बन्द कर देती है उस समय आस्थाकी ज्योति प्रखर रूपसे चमकती है और हमारी मददको आती है। हमारे नवयुवकोंको ऐसी ही आस्थाकी जरूरत है और यह तभी आती है जब कोई बुद्धिके घमंडको तिलांजलि देकर अपने-आपको उस ईश्वरके सामने पूर्ण रूपेण समर्पित कर देता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-३-१९२९

६२. भेंट: विदेशी आगन्तुकोंसे[1]

[१ मार्च, १९२९से पूर्व][2]

पहली भेंट ब्रिटिश लेबर पार्टीकी एक सदस्यासे हुई जो साम्राज्यवादी विचार-धाराकी थीं। इस महिला अतिथिने बात शुरू की, "बेशक आप चाहेंगे कि हम इस देशसे बिल्कुल निकल जायें।"

नहीं, इसके विपरीत मैं अंग्रेजोंको यहाँ रखना चाहूँगा लेकिन अपनी शर्तोंपर ——स्वामियों और मालिकोंकी तरह नहीं बल्कि सच्चे जन-सेवकोंकी तरह। स्वतन्त्र भारतमें अंग्रेजोंको इस धरतीके बेटोंके साथ समान दर्जेपर रहनेके लिए राजी होना पड़ेगा, जिसका अर्थ यह हुआ कि उन्हें उन विशेष सुविधाओंका परित्याग करना पड़ेगा जिनका आज वे शासक वर्गके सदस्य होनेके नाते उपभोग कर रहे हैं।

"लेकिन हो सकता है कि वे उन शर्तोंपर यहाँ रहना पसंद न करें।" उस महिला अतिथिने आगे कहा, "और फिर आप क्या यह नहीं सोचते कि भारतको इंग्लैंड अभी बहुत-कुछ सिखा सकता है——कुछ चीजोंमें तो उसे विशेष वरदान प्राप्त है।" गांधीजीने उनसे खुलासा करनेको कहा। उन्होंने इंग्लैंडमें व्याप्त राजनीतिक चेतनाका, लोकतांत्रिक संस्थाओंके विकासका तथा इनके प्रबन्ध करनेकी कुशलताका उल्लेख किया जिन्हें वह भारतको प्रदान कर सकता है।

राजनीतिक ज्ञानपर अंग्रेजोंके इस एकांतिक अधिकारके दावेको मैं नहीं मानता। यह इस युगके महानतम अंधविश्वासोंमें से एक है और मुझे ताज्जुब तो इस बातपर होता है कि कभी-कभी तो बहुत समझदार अंग्रेज भी इसके शिकार हो जाते हैं। ब्रिटेनकी राजनीतिक संस्थाओंमें बहुत-कुछ ऐसा है जिसकी मैं प्रशंसा करता हूँ। लेकिन मैं जड़ वस्तुओंका पुजारी नहीं हूँ। मैं यह नहीं मानता कि ये संस्थाएँ पूर्णताकी आदर्श हैं या भारतको हर कीमतपर इन्हें अपना लेना चाहिए। अंग्रेज लोग अपने देशमें भी उन्हें पूरी तरह सफल नहीं बना सके हैं, सारे संसारके अपनानेके लिए उन्हें बेहतरीन नमूना बनाकर दिखाना तो दूर रहा। कुछ ऐसे अंग्रेज भी है जो यह स्वीकार करते हैं कि ब्रिटिश संसद उन सारी आशाओंको पूरी नहीं कर पाई है जिनकी उससे अपेक्षा थी।

"श्रेष्ठताकी भावना छोड़ भी दें", प्रश्नकर्त्ताने टोका, "जिसे मैं समझती हूँ कि यह केवल ऊपरी बात है, तो भी क्या अंग्रेज कुछ-एक मामलोंमें जिनमें भारत पिछड़ा हुआ है, भारतकी मदद नहीं कर सकते?"

इंग्लैंड बहुत तरहसे भारतकी मदद कर सकता है, मैं इससे इन्कार नहीं करता। मैं तो केवल उसके न्यासी होनेके दावेको अस्वीकार करता हूँ। ब्रिटेनकी राजनीतिक

१. प्यारेलालकी रिपोर्टपर आधारित।

२. भेंटकी तारीखें उपलब्ध नहीं हैं।

संस्थाओंमें जो श्रेष्ठ चीज है वह सारे विश्वके सामने है, और वह उसकी नकल कर सकता है। लेकिन महज राजनीतिक ज्ञानकी शिक्षा देनेके लिए अंग्रेजोंको शासकके रूपमें भारत आनेकी कोई जरूरत नहीं है। जो-कुछ भारतके ग्रहण करने योग्य है वह आत्मसात् करनेकी क्रियाके जरिये आना चाहिए, ऊपरसे थोपा नही जाना चाहिए। मिसालके तौर पर चित्रकलाके काममें चीनी निपुण होते हैं, इसपर उनका पूरा अधिकार है, अतः सारी दुनियाको उसकी प्रशंसा और उसका अनुकरण करना चाहिए। चीनी लोग आयें और इंग्लैंडको ललित कलाओंकी शिक्षा देनेके लिए इंग्लैंडपर कब्जा कर लें, आप यह अपेक्षा तो नहीं करेंगी या करेंगी?

"नहीं!" अंग्रेज मित्रने अपनी गलत स्थितिको महसूस करते हुए कहा जिसमें उन्होंने अपनेको अनजाने डाल दिया था।

इसके बाद इंग्लैंड और भारतके बीच आपसी सम्बन्ध किस प्रकार ठीक किये जायें, इसके बारेमें बातचीत होने लगी।

इसके लिए एक ऐसा सिद्धान्त होना चाहिए जिसके अनुसार हर राष्ट्र उस नीतिसे बाज आये जो दूसरोंके हितोंके प्रतिकूल हो।

दूसरी भेंट एक अमेरिकी महिलाके साथ हुई। "क्या अस्पृश्योंकी दशा भी उतनी ही बुरी है जितनी अमेरिकामें नीग्रो लोगोंकी?" उसने पूछा।

दोनोंमें कोई सही तुलना नहीं की जा सकती। ये एक जैसी नहीं हैं। अपने देशमें अस्पृश्य व्यक्ति दलित और उत्पीड़ित जैसा-कुछ भी हो, लेकिन उसके साथ कोई कानूनी भेदभाव नहीं रखा जाता है, जैसा कि अमेरिकामें नीग्रो लोगोंके मामलेमें है। फिर भी यद्यपि कभी-कभी हमारे रूढ़िवादी लोग बहुत कठोर व्यवहार करते हैं जिससे और कुछ तो नहीं पर मानवतावादी लोगोंको तीव्र व्यथा हो सकती है, लेकिन फिर भी अस्पृश्योंके प्रति अंधविश्वासपूर्ण पूर्वग्रह वैसी हिंसक उग्रताका रूप ग्रहण नहीं कर सकता जैसा कि अमेरिकामें नीग्रो लोगोंके विरुद्ध कभी-कभी हो जाता है। अमेरिकामें नीग्रो लोगोंको मारना-पीटना कोई असाधारण घटना नहीं है। लेकिन अहिंसाकी परम्पराकी वजहसे भारतमें ये सब बातें असम्भव हैं। इतना ही नहीं, भारतमें लोक-कल्याणकी प्रवृत्ति जातिगत भेदभावके खिलाफ रही है जिसके फलस्वरूप अस्पृश्योंमें किसी-किसीको सन्त भी स्वीकार कर लिया गया है। हमारे यहाँ बहुतसे अस्पृश्य सन्त हैं। मुझे नहीं मालूम कि आपके यहाँ भी नीग्रो सन्त हैं या नहीं। अस्पृश्यताके प्रति द्वेष तेजीसे मिट रहा है। मैं चाहता हूँ कि कोई मुझे आकर यह आश्वासन दे कि अमेरिकामें रंगभेद खत्म हो गया है।

तीसरी भेंट दक्षिण आफ्रिकाके एक उच्च शिक्षा-प्राप्त नीग्रोके साथ हुई ... उसे इस बातका बहुत दुःख था कि पढ़े-लिखे नीग्रो खुद अपनी जातिके प्रति उदासीन हैं। उसने दुखी मनसे यह शिकायत की, "वे बिल्कुल पराये-जैसे हो गये हैं। अपनी जातिको वे भूल गये हैं" ... "हमें रौंदा गया, कुचला गया, तथा उत्पीड़ित किया गया। हमें यह नहीं मालूम कि हम किस राह चलें। हममें से अधिकांश अज्ञानी

हैं। अज्ञानतासे गरीबीका जन्म हुआ है। ये दोनों चीजें साथ-साथ रहती हैं और इनका एक दुष्चक्र-जैसा चलता है। इसके अलावा, यदि वह बाह्य-शक्ति है जो प्रकृतिकी अंधशक्तिकी भाँति ही निर्मम और क्रूर है, और जिसके आगे क्षमा माँगने या याचना करनेसे कोई नतीजा नहीं निकलता। हम अपनेको दुखी और पराजित महसूस करते हैं। आशा और मुक्तिके सन्देशकी खातिर हम स्वाभाविक रूपसे भारतकी ओर झुके हैं क्योंकि हमें विश्वास है कि विश्वकी सभी उत्पीड़ित जातियोंके सम्बन्धमें भारतको अपना ध्येय पूरा करना है।" गांधीजी इससे बहुत प्रभावित हुए।

जब मैं दक्षिण आफ्रिकामें था तो मुझे वहाँके वतनियोंके साथ इस विषयपर बातचीत करनेका मौका मिला था। मैंने उन्हें बताया कि उन्हें अपनी सहायता स्वयं करनी है और उन्हें सदैव इस आशाके साथ काम करना है कि वक्त आनेपर उन्हें कहीं-न-कहींसे सहायता मिल जायेगी। इस बीच उन्हें आत्मशुद्धिकी प्रक्रिया द्वारा इस कामके लिए तैयार होना है।

मैं आपका मतलब समझता हूँ, लेकिन जो बात हम आपसे जानना चाहते हैं वह यह है कि इस आन्तरिक प्रक्रियाका सम्बन्ध हम उन वास्तविक दैनिक समस्याओंके साथ, जो इस समय हमारे सामने मौजूद हैं, कैसे स्थापित करें — इस आत्मशुद्धिकी प्रक्रियाकी शुरुआत कैसे करें।

पहला काम तो यह है कि आप अपने अन्दर झाँकिये और अपने अवगुणोंको, स्वयं अपने तथा विश्वके सामने स्वीकार कीजिए। अपनी कमजोरियोंको छिपाने और अपनी झूठी शक्तिका बखान करने-जैसा भ्रष्ट और अपमानजनक अवगुण और कोई नहीं है। दूसरा काम सार्वजनिक जीवनको शुद्ध बनानेमें निधड़क और निडर होकर जुट जाना है। दुर्भाग्यवश आज लोगोंमें यह धारणा पैदा हो गई है कि किसीके सार्वजनिक कार्योंपर उसके व्यक्तिगत आचरणका प्रभाव नहीं पड़ता। यह अन्धविश्वास अवश्य मिटना चाहिए। हमारे सार्वजनिक कार्यकर्त्ता पहले तो अपनेको सुधारें और फिर समाज-सुधारके काममें जुट जायें। आत्मशुद्धिका यह आध्यात्मिक शस्त्र हालाँकि अमूर्त लगता है, लेकिन किसीकी स्थितिका कायापलट करने और बाह्य बंधनोंसे मुक्त करानेका यह एक बहुत शक्तिशाली साधन है। यह सूक्ष्म और अप्रकट रूपमें काम करता है। यह एक गहन प्रक्रिया है; हालाँकि यह अक्सर थका देनेवाली और धीमी प्रक्रिया लगती है। पर मुक्तिके लिए यह सबसे सीधा, सुनिश्चित और द्रुतगामी रास्ता है और इसके लिए जितना भी प्रयास किया जाये वह कम ही होगा। इसके लिए जरूरत विश्वासकी है — उस विश्वासकी जो पर्वतकी तरह अटल है, जो किसी चीजके सामने पीछे नहीं हटता।

गांधीजीने समझा कि उन्होंने काफी-कुछ कह डाला है और बातचीत अब समाप्त हो गई है, लेकिन आफ्रिकी मित्रने यह बताकर कि भारत द्वारा कताई-बुनाईके घरेलू धन्धोंके पुनरुत्थानमें वे कितनी रुचि लेते हैं, गांधीजीको भारी आश्चर्यमें डाल दिया। उन्होंने बताया कि इसे वह अपने लोगोंके बीच, जो बेरोजगारी और बेकारीके

आर्थिक और नैतिक परिणामोंको भुगत रहे हैं, शुरू करना चाहते हैं। कताईके सम्बन्धमें वह जिस चीजसे सबसे अधिक प्रभावित हुए थे वह थी इसके द्वारा जनतामें भाईचारे और ऐक्यकी भावनाको जगाने और उसे विकसित करनेकी संभावनाएँ। "हमारे यहाँ कुछ गाँव ऐसे हैं जो अपनी खाद्य सामग्री स्वयं पैदा कर लेते हैं। हमने प्रयोगके तौरपर कपास भी पैदा करनी शुरू कर दी है। अब हम जनताको अपना कपड़ा स्वयं तैयार करनेके लिए शिक्षित करना चाहते हैं और इस तरह गाँवोंको व्यावहारिक रूपसे हम आत्मनिर्भर बनाना चाहते हैं। इससे समाजका एक नया रूप हमारे सामने उपस्थित होगा, एक नई चेतना लोगोंमें दिखाई देगी।" इन मित्रको पूरा विश्वास था कि राजकीय शोषणके विरुद्ध जातिगत चेतनाको बल देनेके लिए कताई एक बहुत शक्तिशाली साधन सिद्ध हो सकता है। उन्होंने गांधीजीसे पूछा कि क्या वह दक्षिण आफ्रिकामें एक शिक्षक भेज सकेंगे?

मेरा लड़का मणिलाल कताईकी शिक्षा दे सकता है। लेकिन मैं इससे अच्छी और अधिक क्रियाशील सहायता दूँगा। आपके यहाँके ६ नवजवानोंको मैं निश्शुल्क यहाँ रखूँगा और यहाँ मैं उन्हें पूर्ण रूपसे प्रशिक्षण दूँगा। उन्हें यहाँ महज आश्रमका अनुशासन और यहाँकी सादगी अपनानी होगी।

इस सहायतासे आफ्रिकी मित्रको खुशी हुई और उन्होंने कहा: "निस्सन्देह, मेरे यहाँके लोगोंको सादा जीवन बिताना चाहिए। आपकी इस उदार सहायतासे लाभ उठानेकी मैं वाकई कोशिश करूँगा। आशा है कि मैं दक्षिण आफ्रिकासे आपको लिखूँगा।"[१]

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २८-३-१९२९

६३. तार : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

दिल्ली
२ मार्च, १९२९

खादीस्थान
कलकत्ता

आपका तार मिला। खुशीसे शामिल होऊँगा।

गांधी

अंग्रेजी (जी० एन० ८७१५) की फोटो-नकलसे।

१. इसके बादके दो अनुच्छेद यहाँ नहीं दिये गये हैं। ये "धन्य हैं शान्तिके स्थापक" शीर्षकसे छपे हैं इनमें एक आस्ट्रेलियावासीसे भेंटका विवरण है।

६४. पत्र : कोंडा वेंकटप्पैयाको

दिल्ली
२ मार्च, १९२९

मै ५ या ६ अप्रैलको बम्बईसे रवाना होऊँगा और अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें भाग लेनेके लिए १४ मईको इलाहाबाद पहुँच सकूँ, इसके लिए मैं चाहूँगा कि आप मुझे उससे पहले मुक्त कर दें। मैं चाहता था कि आपको और अधिक समय दे सकूँ, लेकिन इस पूरे वर्षके लिए मेरे सामने जो तमाम काम हैं उन्हें यदि मुझे पूरा करना है तो जो समय मैंने आपको दिया है वह काफी ज्यादा है। कृपया मोटे तौर पर एक कार्यक्रम बना लीजिए और उसे ८ पॅगोडा स्ट्रीट, रंगूनके पतेपर मुझे भेज दीजिए। इसे तूफानी दौरेका कार्यक्रम मत बना दीजिए। इस कार्यक्रमको पूरी तरह कामसे ही सम्बन्धित रखिए और अलग-अलग अनेक समारोहोंके आयोजनसे बचिए। सभी अभिनन्दनपत्र एक ही स्थानपर अर्थात् एक ही सार्वजनिक सभामें दिये जायें। उन्हें पढ़ा न जाये, लेकिन इनकी प्रतियाँ मुझे पहलेसे दे दी जायें। मूल अभिनन्दनपत्र तेलुगु भाषामें होने चाहिए और वे भेंट करनेवाली संस्थाओं द्वारा विधिवत् स्वीकृत किये जाने चाहिए। अभिनन्दनपत्रोंके हिन्दी अनुवाद भी मुझे मिल जाने चाहिए। इन अनुवादोंको छपवाना अनावश्यक है। आप यथासम्भव एक-एक पाई बचाइए और मेरी शक्ति भी बचाइए। मुझे अपने पत्र-व्यवहार, सम्पादन-सम्बन्धी कार्य और विश्रामके लिए भी पर्याप्त समय दीजिए।

मैं आपको 'यंग इंडिया' के लिए लिखी गई एक टिप्पणीकी[1] अग्रिम प्रति भेज रहा हूँ जिसमें आपको वास्तवमें काफी जानकारी मिल जायेगी।

मेरे आहारमें अब बकरीका दूध शामिल नहीं है, अब मैं बहुत महीन, पिसे हुए बादाम, कुछ ताजी सब्जी और नींबू लेता हूँ। अन्य किसी आहारकी आवश्यकता नहीं।

कृपया मुझे सूचित करें कि मैं बम्बईसे पहले कहाँ जाऊँ।

अपनी दिनचर्या मैं एक बार फिर दोहरा देता हूँ :

प्रात: ४ से ७-३० बजेतक : मुझसे कोई काम नहीं लिया जायेगा।
प्रात: ७-३० से १० बजेतक : आप कार्यक्रम रख सकते हैं।
सुबह १० बजेसे शाम ५ बजेतक : कोई कार्यक्रम नहीं।
शाम ५ बजेसे रात ८ बजेतक : आप कार्यक्रम रख सकते हैं।

मेरा भोजन करनेका समय सुबह १०-३० बजे और शाम ४-३० बजे है। आम तौरपर शाम ५-३० बजे खाता हूँ। सुबह १० बजेसे शाम ५ बजेतक अपना काम करने, आराम करने और भोजन करनेके लिए मुझे निर्विघ्न समय मिल सके, इस

१. देखिए "आगामी आन्ध्र-यात्रा", ७-३-१९२९।

ख्यालसे मैं शामके भोजनका समय बदल रहा हूँ। अन्य कोई समय अनुकूल नहीं है क्योंकि मैं सूर्यास्तके बाद नहीं खाता।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ७-३-१९२९

६५. काम-विकारको कैसे जीतें

काम-विकारको जीतनेका प्रयत्न करनेवाले एक पाठक लिखते हैं:[1]

इन पाठककी भाँति और भी कई लोगोंकी यही हालत है। कामको जीतना कठिन अवश्य है पर असम्भव नही। लेकिन प्रभुका कथन है कि जो कामको जीत लेता है वह संसारको जीत लेता है और भवसागरसे पार हो जाता है। सो हम देखते हैं कि कामपर जय पाना सबसे कठिन बात है। लेकिन काम-विजयकी कोशिश करनेवाले बहुतसे लोग यह स्वीकार नहीं करते कि ऐसे कठिन उद्देश्यको पानेके लिए धीरज बहुत ही अधिक जरूरी रहता है। हम जानते हैं कि अक्षर-ज्ञानसे लेकर किसी विषयका ठीक अध्ययन कर पानेके लिए लगन, धीरज और एकचित्त होनेकी कितनी आवश्यकता पड़ती है। इस परसे अगर हम हिसाब लगा कर देखें तो हमें पता चले कि केवल ऐसे शाब्दिक ज्ञानको पानेमें धीरज आदिकी जितनी जरूरत होती है उसके अनन्त गुनी ज्यादा धैर्यकी जरूरत काम-विजयके लिए होती है।

यह तो हुई धीरजकी बात। इसी प्रकार हम काम-विजयके अन्य अनेक उपायोंके बारेमें भी उदासीन रहते हैं। साधारण बीमारीको दूर करनेके लिए दुनिया-भरकी धूल छान डालते हैं; डाक्टरोंके घर-घर भटकते हैं; जन्तरमन्तर तक नहीं छोड़ते; लेकिन काम-रूपी महारोगको मिटानेके लिए जितने चाहिए उतने उपाय-उपचार हम नहीं करते। थोड़ा-बहुत करके थक जाते हैं और उलटे ईश्वरके साथ या उपाय बतानेवालेके साथ शर्त करते हैं कि इतनी चीज तो नहीं ही छोड़ेंगे, फिर भी काम-विकारको मिटाना होगा। तात्पर्य, काम-विकारको नष्ट करनेकी सच्ची व्याकुलता हममें नहीं होती है। उसके लिए सर्वस्व न्योछावर करनेके लिए हम तैयार नहीं होते। हमारी यह शिथिलता काम-विकारको जीतनेके मार्गमें एक बहुत बड़ी रुकावट है। यह सच है कि निराहारीके विकार शान्त हो जाते हैं। लेकिन आत्मदर्शनके बिना आसक्तिका नाश नहीं होता। लेकिन उक्त श्लोकका[2] अर्थ यह नहीं है कि काम-विजयके लिए निराहार निरर्थक है। उसका अर्थ तो यह है कि आहार विषयक संयममें कभी प्रमाद नहीं करना है; हो सकता है उस तरहकी दृढ़ता और लगनसे आत्म-दर्शन हो जाये। उसके होते ही आसक्ति भी मिट जायेगी। इस तरहका निराहार किसी दूसरेके कहनेसे नहीं लिया जा सकता, न आडम्बरकी खातिर ही मंजूर किया जा सकता है। इसके लिए तो मन, वचन और शरीरका सहयोग जरूरी है। अगर यह

१. यहाँ नहीं दिया गया है।

२. **श्रीमद्भगवद्गीता** अध्याय २-५९। इसे पत्र-लेखकने पत्रमें उद्धृत किया था।

सहयोग सध जाये तो ईश्वरकी प्रसादी अवश्य ही मिले और प्रसादी मिल जाये तो फिर विकार तो शान्त होंगे ही।

लेकिन निराहार व्रतसे पहलेके कई हलके उपाय भी हैं। उनका आश्रय लेनेसे अगर विकार शान्त न भी हों तो कमसे-कम कमजोर तो जरूर ही हो जायेंगे। अतः भोग-विलासके सारे अवसरोंका एकान्त त्याग कर देना चाहिए। उनके प्रति अभाव बुद्धि जागृत करनी चाहिए। क्योंकि अभाव विहीन त्याग सिर्फ बाहरी त्याग होगा और इस कारण चिरस्थायी नहीं हो सकेगा। यहाँ यह बतानेकी जरूरत तो होनी ही नहीं चाहिए कि भोग-विलास किसे कहा जाये। जिन चीजोंसे विकार पैदा हों उन सबका त्याग किया जाना चाहिए।

इस सिलसिलेमें आहारमें क्या लिया जाये, क्या नहीं, यह सवाल भी बहुत विचारणीय है। अभी यह क्षेत्र अछूता पड़ा है। मेरे विचारमें विकारोंको शान्त करनेकी इच्छा रखनेवालोंको घी-दूधका कमसे-कम उपयोग करना चाहिए। वनपक्व अनाज खाकर अगर जीवन-निर्वाह किया जा सके तो कृत्रिम अग्निके संसर्गसे तैयार की गई खुराक न ले, अथवा बहुत थोड़ी ले। फल और कई प्रकारकी हरी शाक-सब्जियाँ बिना राँधे भी खाई जा सकती हैं और खाई जानी चाहिए। लेकिन बिना आग पर पकाई हरी शाककी खुराकका प्रमाण बहुत थोड़ा रखना चाहिए। दो-तीन तोला ऐसी हरी शाकसे काफी पोषण मिल जाता है। मिठाई, मसालों वगैराका एकदम त्याग कर देना चाहिए। इतना बता चुकनेपर भी मैं जानता हूँ कि सिर्फ खुराकसे ही ब्रह्मचर्यकी पूरी रक्षा नहीं हो सकती। लेकिन विकारोत्तेजक खुराक खाते हुए तो मनुष्य ब्रह्मचर्य पालनकी आशा न रखे; उसे रखनी ही नहीं चाहिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ३-३-१९२९

६६. बहिष्कार

विदेशी कपड़ेके बहिष्कारकी हलचलके सम्बन्धमें एक शुभ-चिन्ह तो यह है कि श्री जयरामदासने बम्बईकी धारासभामें अपनी जगहसे इस्तीफा देना और बहिष्कार समितिका मन्त्रिपद सँभालना स्वीकार कर लिया है। पाठकोंको इस निश्चयसे प्रसन्नता होगी। बहिष्कार समितिको दिल्लीमें ही इस बातकी आवश्यकता प्रतीत हुई थी कि सम्बन्धित कामके बारेमें दिन-रात विचार करने और उसे करनेके लिए एक मन्त्री होना चाहिए। मुझे फौरन ही श्री जयरामदासका खयाल आया। मैं मानता हूँ कि इस कामके लिए वे बहुत योग्य हैं। इसलिए मैंने उन्हें एक छोटा-सा पत्र[1] ही लिखा कि इस महान कार्यके लिए यदि आप धारासभा छोड़ दें तो अच्छा हो। उन्होंने मुझे तारसे जवाब दिया कि "आपसे मिलने आ रहा हूँ।" वे इस्तीफा देनेका निश्चय करके ही बम्बईसे रवाना हुए। मेरे साथ कुछ सलाह-मशविरा करके अब वे उसकी

१. देखिए "पत्र: जयरामदास दौलतरामको", २१-२-१९२९।

तैयारी करनेके लिए गये हैं; और १७ मार्चको तो वे धारासभासे अलग हो चुकेंगे। मन्त्रिपदसे सम्बन्धित उनका काम तो गत सप्ताहमें बुधवारसे ही शुरू हुआ माना जा सकता है। भाई जयरामदाससे मुझे ऐसी ही आशा थी।

श्री जयरामदासके इस तत्परतापूर्ण त्यागसे यदि हम सब अपना-अपना कर्त्तव्य समझ जायें तो बहिष्कार इसी वर्षमें सफल हो जाये। मेरा यह दृढ़ मत है कि जिस कामको समस्त जनता सरलता और शीघ्रतासे कर सकती है और जिसका जबर्दस्त असर होगा वह काम विदेशी कपड़ेका बहिष्कार ही है। दूसरी सब बातें व्यर्थकी झंझटें हैं। जो लोग हर बातपर सिर हिला दिया करते हैं, उनसे तो मै यही कहूँगा 'इसे करो, और देखो'। जो बात आजमाईश करके देखी जा सकती हैं, उसके बारेमें केवल सिर हिला देनेका तो कुछ भी अर्थ नहीं है।

'साइमन बहिष्कार' से तो यह बहिष्कार हजार गुना अधिक कारगर है। साइमन बहिष्कार आवश्यक था। उससे कुछ जागृति हुई। परन्तु उससे प्रजाकी दरिद्रताका नाश नहीं हुआ। इस महाव्याधिको दूर करनेके लिए तो विदेशी कपड़ोंका बहिष्कार ही एकमात्र औषध है।

'नवजीवन' के पाठकोंके सामने यह कहनेकी तो कोई आवश्यकता ही नहीं होनी चाहिए कि यह बहिष्कार खादीको अपनाये बिना कभी सिद्ध नही किया जा सकता।

खादी उत्पन्न करनेवालोंको मैं यही बताना चाहता हूँ कि वहिष्कारका मूल खादीकी उत्पत्तिमें ही है। खादी बिकेगी या नही इसका विचार किये बिना ही उन्हें तो जितनी मात्रामें जितनी अच्छी खादी उत्पन्न की जा सके उतनी करनेमें और करानेमें लग ही जाना चाहिए। आज या कल, निश्चित रूपसे एक दिन जनतामें ऐसा जोश आयेगा कि सब खादीकी ही माँग करेंगे। खादी उत्पन्न करनेवाले यदि उस समय उस माँगको पूरी न कर सकेंगे तो उन्हें अपना सिर नीचा करना पड़ेगा। ऐसी नौबत उन्हें नहीं आने देनी चाहिए।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, ३-३-१९२९

६७. 'आदतन खादीधारी' किसे कहें?

कांग्रेसके रचनात्मक कार्यक्रमपर अमल करनेकी थोड़ी-बहुत इच्छा सभीको है। यह कोई नई बात नहीं है कि यह इच्छा गुजरातमें विशेष रूपसे है। इस स्थितिमें यदि कार्यकर्त्ता खादी पहननेसे सम्बन्धित धाराका स्पष्टीकरण चाहें, तो उनकी यह बात समझमें आती है।

कांग्रेसके संविधानके अनुसार जो खादी न भी पहनता हो ऐसे व्यक्तिको भी कांग्रेसका सदस्य बननेका अधिकार है और उसे सदस्य बननेसे कोई रोक नहीं सकता। किन्तु इस तरह बना हुआ सदस्य खादी पहनने वाला न हो तो वह कांग्रेस या उसकी समिति या उपसमितिमें बिलकुल भाग नहीं ले सकता। वह न बोल सकता है, न मत

दे सकता है और न किसी भी समितिके चुनावमें खड़ा हो सकता है। इस प्रकार खादी-की शर्तका यही परिणाम निकलता है कि सदा खादी न पहननेवालेको कांग्रेसमें किसी प्रकारका भी अधिकार प्राप्त नहीं हो सकता। वह अनेक प्रकारकी सेवा करनेसे भी वंचित रह जायेगा; जैसे वह स्वयंसेवक नहीं बन सकता। ठीकसे देखें तो कांग्रेसमें अधिकार पानेका अर्थ ही यह है कि अधिकारी सेवा करे या उसे सेवा करनी चाहिए।

चूँकि मैं ऐसा अर्थ लगाता हूँ इससे 'आदतन खादीधारी' शब्दोंका अर्थ मालूम करना आवश्यक है। मूल अंग्रेजी शब्दोंका[1] अक्षरशः अर्थ हुआ नियमित रूपसे पहननेवाला। किन्तु जो नियमपूर्वक पहनेगा वह सदा पहननेवाला ही होगा। सदा खादी पहननेवालेके कपड़े चोरी चले जायें और उसे तुरन्त खादी न मिले तो जो मिले उसे पहन तो लेगा किन्तु मौका मिलते ही खादी प्राप्त करेगा। ऐसा होनेपर ही वह सदा खादी पहननेवाला माना जायेगा। जो सिर्फ कांग्रेसका काम पूरा करनेके लिए खादी पहने और बाकी समय विदेशी या यहींकी मिलोंका कपड़ा पहने वह आदतन खादी पहननेवाला नहीं है। उसी प्रकार जो घरमें विदेशी वस्त्र और बाहर खादी पहनता हो वह भी आदतन खादी पहननेवाला नहीं है। उसी तरह जो मिलकी धोती पहने, वह खादीकी टोपी या खादीका कुर्ता पहन लेनेपर भी आदतन खादीधारी नहीं माना जायेगा।

इस प्रकार 'आदतन खादीधारी' शब्दोंका अर्थ मेरे सामने बिल्कुल स्पष्ट है। फिर कार्यकर्त्तागण सदस्य कैसे दर्ज करें? मेरी सलाह यह है कि जो खादी न भी पहनता हो पर खादीका समर्थक हो, खादी पहननेके लिए तैयार हो, जिसे कांग्रेसके ध्येय स्वीकार हों, जो चार आना दे और अपना काता हुआ सूत दे उसे कार्यकर्त्ता-गण खादी सम्बन्धी धारा समझायें और उसे कांग्रेसका सदस्य बना लें। ऐसे चाहे जितने सदस्य बन जायें तो भी उन्हें उपसमितिके चुनावमें भाग लेनेके उपरान्त दूसरा कोई अधिकार नहीं रहता है। यदि वे खादी पहननेवाले न हों तो वे इस अधिकारको छोड़कर अनेक प्रकारसे कांग्रेसकी दूसरी मदद करें और मौका मिलते ही सिरसे पैरतक खादी पहनने लगें।

कार्यकर्त्ताओंका यह कर्त्तव्य है कि सदस्य बना लेनेपर वे उनपर नजर रखें, आँख ओट न करें और खादी पहननेका सुझाव देते रहें। उनके साथ खादीकी फेरी लगायें, उनकी कठिनाइयोंको जानें और उन्हें सुलझायें।

गुजरातमें सबसे बड़ी कठिनाई धोतियों और स्त्रियोंकी साड़ियोंकी है। ऐसा जान पड़ता है कि गुजरात महीन सूत कातनेके लिए तैयार नहीं है और खादीकी महीन धोतियाँ महँगी मिलती हैं। यदि हम चाहें तो धोतियाँ गुजरातमें ही तैयार हो सकती हैं। हमारे यहाँ रुई तो अच्छी होती है। गुजरातमें जागृति भी काफी हुई है, यहाँ स्वयंसेवक हैं और राष्ट्रीय शालाएँ भी हैं। मेरा ऐसा अनुभव है कि जो अच्छी तरह पिंजाई कर लेता है, वह अच्छी तरह कताई भी कर सकता है। बारीक और मजबूत सूत कातनेके लिए हमारे पास अच्छी तरह धुनी रुईकी पूनियाँ होना

१. कांस्टेंट वियरर।

जरूरी है। पिंजाईके काममें गुजरातने सबसे ज्यादा प्रगति की है। गुजरातमें धुनकी काफी संख्यामें बनाई जा सकती हैं। सीखनेवाले भी हैं पर क्या उनमें सीखनेकी इच्छा है? गुजरात चाहे तो जल्दी महीन सूत तैयार कर सकता है पर यदि वह महीन सूत कातनेमें आलस्य करे और महीन धोतियोंको न खरीदना चाहे तो फिर वहाँके स्त्री-पुरुषोंको मोटी खादीको कम लम्बे पनेकी धोतियाँ पहननी चाहिए।

किन्तु यह सब तो समझदार और खादीप्रेमी व्यक्तिके लिए है। जहाँ इच्छा हो वहाँ मार्ग भी निकल आता है। जहाँ इच्छा नहीं है, वहाँ मार्ग होते हुए भी हम अन्धेकी तरह भटकते रहते हैं। नाच न जाननेवालेको आँगन तो टेढ़ा लगेगा ही।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ३-३-१९२९

६८. सुन्दर सत्याग्रह

कुछ महीने पहले मिरजमें जो सत्याग्रह किया गया था उसके विषयमें अखबारों-में थोड़े-बहुत समाचार छपे थे। किन्तु अखबारोंमें प्रकाशित ऐसा वृत्तान्त अधूरा और कई बार गलत भी होता है, ऐसा सोचकर मैंने उसपर कुछ ध्यान नहीं दिया था। किन्तु उसके सिलसिलेमें मैंने भाई पुण्डरीकका नाम सुना। भाई पुण्डरीक आश्रममें रह चुके हैं; वे श्री गंगाधरराव देशपाण्डेके अनुयायी हैं इसलिए मैं उन्हें अच्छी तरह जानता हूँ। इसलिए मैंने उनसे तथ्य मँगवा भेजे। घटना विचारणीय है इस कारण मैं उनके पत्रका मुख्य भाग छाप रहा हूँ। मूल पत्र हिन्दीमें है।[1]

कहा जा सकता है कि इस छोटेसे सत्याग्रहका अन्त बड़े सुन्दर ढंगसे हुआ है। इसमें तीन बातें देखने योग्य हैं। एक तो यह कि नेताओंका काम मुख्य रूपसे शान्ति बनाये रखना है क्योंकि वही सत्याग्रहका आधार है। नेताओंने अपने झूठे मानकी खातिर लोगोंको नहीं लड़ाया और उनके द्वारा नियुक्त पंचको समझौता करनेके लिए जाने दिया। सत्याग्रहियोंके नेताको इस प्रकार अभिमान रहित होना चाहिए। तीसरी बात यह है कि यह कतई जरूरी नहीं है कि सत्याग्रहियोंका नेता कोई बड़ा विद्वान, वकील अथवा बैरिस्टर हो। उसमें सत्य, शान्ति, दृढ़ता, हिम्मत, बहादुरी आदि गुण होने चाहिए। पुण्डरीक इस सत्याग्रहका योग्य नेता सिद्ध हुआ। उसे विद्वान तो नहीं माना जा सकता। उसको अंग्रेजीका ज्ञान लगभग नहीं ही है किन्तु जिन सब गुणोंको मैंने आवश्यक माना है, वे सब उसने दिखाये हैं।

किन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि काम समाप्त हो गया है। जो काम बाकी रह गया है वह भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है। लोगोंमें हुई जागृतिका उपयोग उन्हें अपनी स्थिति, अपनी शक्ति और मर्यादाका भान करानेके लिए किया जाना चाहिए,

१. यहाँ नहीं दिया गया है। पत्रमें लेखकने मिरज ताल्लुकेमें मालगुजारीमें अनुचित वृद्धिके विरुद्ध किये गये सफल सत्याग्रहका वर्णन किया था। सत्याग्रहका नेतृत्व उन्हींने किया था।

तभी हम उससे हुए लाभको बनाये रख सकेंगे और वह फूलकी सुगन्धकी तरह आस-पास व्याप्त हो सकेगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ३-३-१९२९

६९. आदर्श छात्रालय

छात्रालयोंका सम्मेलन इस महीने यहीं होनेवाला है, इसलिए इस बारेमें मेरी राय माँगी गई है कि आदर्श छात्रालय किसे कहा जाये। सन् १९०४ से मैं अपनी बुद्धिके अनुसार छात्रालय चलाता रहा हूँ। इसलिए ऐसा कहनेका मोह भी है कि मुझे छात्रालय चलानेका थोड़ा ज्ञान है। यहाँ छात्रालयका जरा विस्तृत अर्थ करनेकी आवश्यकता है। कोई कुछ भी सीखता हो, हम उसे छात्र मान लें; और यदि कहीं एकसे ज्यादा छात्र साथ रहते हों, तो मैं कहूँगा कि वे छात्रालयमें रहते हैं।

ऐसे छात्रालयके गृहपति चरित्रवान व्यक्ति होने चाहिए।

छात्रालय ढाबेका रूप कभी अख्तियार न करे; यानी यह कदापि नहीं माना जाना चाहिए कि छात्र सिर्फ खाने-पीनेके लिए ही एक-साथ रहते हैं। छात्रोंमें कुटुम्बकी भावना व्याप्त होनी चाहिए।

गृहपति पिताकी जगह होना चाहिए। इसलिए उसे छात्रोंके जीवनमें ओतप्रोत हो जाना चाहिए और अपना खाना-पीना छात्रोंके साथ ही रखना चाहिए।

आदर्श छात्रालय विद्यालयसे बढ़कर होना चाहिए। सच्चा विद्यालय तो वही होता है। शाला या कालेजमें तो विद्यार्थियोंको किताबी ज्ञान ही मिलता है। छात्रालयोंमें विद्यार्थियोंको सब तरहका ज्ञान मिलता है। आदर्श छात्रालयका सम्बन्ध किसी अन्य शालासे नहीं होता; सारा शिक्षण एक ही तन्त्र या प्रबन्धके मातहत होता है और यथासम्भव सारे विद्यार्थी और शिक्षक साथ ही रहते हैं। इस तरह जो हालत आज स्वाभाविक कुटुम्बोंमें नहीं होती, वह हालत छात्रालयोंके जरिये नये और बड़े कुटुम्ब बना कर पैदा करनी पड़ेगी। इस दृष्टिसे छात्रालय गुरुकुलका रूप ले सकेंगे।

आजकल छात्रालयोंमें बहुत-सी बुराइयाँ पाई जाती हैं। उनका कारण मैं यह मानता हूँ कि उनमें कुटुम्बकी भावना पैदा नहीं की जाती और छात्रालय चलानेवाले लोग विद्यार्थियोंके जीवनमें पूरी तरह भाग नहीं लेते।

छात्रालय शहरके बाहर होने चाहिए और जिन सुधारोंके करनेकी जरूरत शहरों या गाँवोंमें मानी जाती है, वे सब सुधार उनमें दाखिल किये जाने चाहिए। यानी शौचादिके नियमोंका वहाँ पालन किया जाना चाहिए। चाहे जैसा मकान किराये पर लेकर उसमें आदर्श छात्रालय नहीं चलाया जा सकता। आदर्श छात्रालयमें नहाने और पाखानेकी ठीक सहूलियतें होनी चाहिए और हवा और रोशनीकी पूरी सुविधा रहनी चाहिए। उसके साथ बाग होना चाहिए।

आदर्श छात्रालयका वातावरण हर तरहसे स्वदेशी होना चाहिए। छात्रालयकी इमारतमें और सजावटमें देहाती जीवनकी छाया आवश्यक है। उसकी रचना भारतकी

गरीबीके लिहाजसे होगी। पश्चिमके ठंडे और धनी देशोंमें बने छात्रालय हमारे लिए नमूना नहीं बन सकते।

आदर्श छात्रालयोंमें ऐसा कुछ नहीं होना चाहिए, जिससे छात्र आलसी, नाजुक और आवारा बन जायें। इसलिए वहाँ साधु-जीवनको शोभा दे ऐसी सादी खुराक होगी, प्रार्थनाको स्थान होगा और सोने-बैठनेके नियम होंगे।

आदर्श छात्रालय ब्रह्मचर्याश्रम होगा। विद्यार्थी नये जमानेका शब्द है। विद्यार्थीके लिए ठीक शब्द तो ब्रह्मचारी है। विद्याभ्यासके समय ब्रह्मचर्यका पालन जरूरी है। आजकी छिन्न-भिन्न स्थितिमें मैं यह चाहूँगा कि यदि विवाहित विद्यार्थी छात्रालयमें भरती किये जायें, तो उन्हें भी विद्याभ्यास पूरा होनेतक ब्रह्मचर्य पालना चाहिए, यानी विद्याभ्यासके समयमें उन्हें अपनी स्त्रीसे बिलकुल अलग रहना चाहिए।

पाठक याद रखें कि मैंने आदर्श छात्रालयका वर्णन किया है। यह बात समझमें आ सकती है कि सब छात्रालय इस हदतक नहीं पहुँच सकेंगे। किन्तु यदि ऊपरके आदर्शको ठीक मानें तो सभी छात्रालयोंको इसे ध्यानमें रखकर तदनुसार चलना चाहिए।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, ३-३-१९२९

७०. पत्र: मीराबहनको

४ मार्च, १९२९

दुबारा नहीं पढ़ा

चि० मीरा,

इस पत्रसे तुम्हें मालूम हो जायेगा कि मैं कहाँसे लिख रहा हूँ।

कल मैं तुमसे काफी दूर चला जाऊँगा। मेरी तीसरे दर्जेकी मुसाफिरी तो एक तरहकी धोखेबाजी होती जा रही है। दिल्लीसे मुझे और मेरी मंडलीको एक पूरा डिब्बा दे दिया गया था। इस तरह इसमें दूसरे दर्जेसे भी ज्यादा आजादी थी और सारी मंडलीके मेरे साथ होनेका मुझे सन्तोष था। वियोगसे मुझे दुःख होता। साथ रहनेसे मुझे आनन्द होता है।

मेरे खयालसे उद्योग मन्दिर प्रगति करता दिखाई पड़ता है। संयुक्त भोजनालय अधिकाधिक लोकप्रिय बनता जा रहा है और मैं नहीं समझता कि साल खतम होनेपर कोई भी उसे भंग करना चाहेगा। लेकिन देखें क्या होता है।

मेरे बारेमें चिन्ता न करना। रंगूनसे सप्ताहमें तीन बार डाक आती है। इसलिए मुझे आशा है कि मैं तुम्हें सप्ताहमें तीन बार लिखूँगा। कलकत्तासे रंगूनके लिए जहाज रविवार, मंगलवार और शुक्रवारको चलते हैं। इसलिए तुम्हें भी सप्ताहमें तीन बारसे ज्यादा पत्र लिखनेकी जरूरत नहीं है। स्टीमर हमेशा सुबह ही रवाना होते हैं।

७१. पत्र : छगनलाल जोशीको

मौनवार [४ मार्च, १९२९][1]

चि० छगनलाल,

कल शामको बड़े आरामसे कलकत्ता पहुँच गये। हमें एक पूरा डिब्बा ही दे दिया गया था। पगली रुक्मिणी हमारे साथ ही है। उसके बापने तो उम्मीद छोड़ दी है। लेकिन उसे छोड़ देनेकी मेरी हिम्मत नहीं हुई। महादेव अभी पहुँचा नही है। अभी सुबहके सात बजे हैं।

भाई जवाहरलाल नेहरूको ५०० रुपये संयुक्त प्रान्तके अकालके लिए बिड़ला कोषसे भेज दो। इलाहाबादमें यह पैसा कृपलानीकी मार्फत इस्तेमाल किया जायेगा।

मैं देखता हूँ कि अभीसे सब लोग खादीकी कमी अनुभव कर रहे हैं। हम तो समुद्रमें बिन्दु-मात्र हैं। किन्तु जितनी ज्यादा खादी हम बना सकें, उतनी बनानी चाहिए। चलालामें ज्यादा बना सकें तो बनाने दें। तुम जो भेजोगे वह तो फौरन खप जायेगी।

आश्रमके सभी विभागोंका काम और हिसाब ठीक-ठाक कर लो। यह जरूरी है कि हम किसी तरफसे भी भयभीत न रहें। प्रत्येक वस्तुके बारेमें निश्चय कर लेनेसे हम बहुत-सी मुसीबतोंसे बचेंगे।

अपने स्वास्थ्यका खयाल रखना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

पद्मावतीकी आँखें डा० हरिलालकी[2] डिस्पेन्सरीमें दिखाकर चश्मेका नम्बर ले लेना। नम्बर सीतलासहायको भेज देना। उसके अनुसार चश्मा बनवाकर वहाँ भेज देगा।

तोतारामजीकी आँखें ठीक हो गई होंगी। गंगादेवीके लिए सूर्यस्नानका प्रबन्ध कर दिया होगा।

बापू

गुजराती (जी० एन० ५३९०)की फोटो-नकलसे।

१. गांधीजी बर्मा जानेके लिए ३ तारीखको कलकत्ता पहुँचे थे।

२. डा० हरिलाल देसाई।

७२. पत्र : प्रभावतीको

कलकत्ता
४ मार्च, १९२९

चि० प्रभावती,

तुमारी गभराहट मुझको दुःखकर थी। अब गभराहटको छोड़ना है। तुमारे पाससे बड़े काम तो तब ही ले सकता हुं जब कहीं भी अकेली रख सकुं।

गीताजीका अभ्यास चलता होगा। शरीरको बिगड़ने मत दो। घी की आवश्यकता लगे तो घी लेना ही।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

राजेंद्र बाबु यहां है।

जी० एन० ३३३६ की फोटो-नकलसे।

७३. भाषण : कलकत्ताकी सार्वजनिक सभामें[1]

४ मार्च, १९२९

कांग्रेसके आदेशके अनुसार हमें विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार करना ही पड़ेगा। हमें न केवल ब्रिटिश वस्त्रोंका बल्कि सभी विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार करना है। केवल ब्रिटिश वस्त्रोंका बहिष्कार करनेसे काम चलनेका नहीं। ऐसा करनेसे अन्य विदेशी वस्त्रोंके साथ ब्रिटिश वस्त्र भी हिन्दुस्तान पहुँच जायेंगे। इसकी जानकारी स्वदेशी आन्दोलनके समय बंगाली भाइयोंको अच्छी तरह हो ही चुकी है।

हिन्दुस्तान बड़ा ही दरिद्र देश है। हिन्दुस्तानके गरीबोंको अपने साथ रखकर मैं अपना बल बढ़ाना चाहता हूँ। इसलिए मैं खादीके प्रचारपर इतना जोर देता हूँ। दरिद्रोंकी सेवाका महात्म्य हमें महाभारतकारने अच्छी तरह बतलाया है। बुद्धदेवने भी इसकी चर्चा की है। हिन्दुस्तानके लोग अन्न-वस्त्रके कष्टसे मरते हैं। भूखे हिन्दुस्तानी पेटकी ज्वालासे पीड़ित होकर अपने बच्चोंतक को फेंक देते हैं। खादीके प्रचारके सिवा इनका दुःख दूर करनेका दूसरा उपाय नहीं है। सारे भारतमें भ्रमण करनेके बाद मैं इसी निष्कर्षपर पहुँचा हूँ। इन दरिद्रोंके उद्धारका दूसरा उपाय बतानेवालेके पैरपर मैं अपना सिर रख दूंगा। करोड़ों भूखे भारतीयोंके उद्धारका उपाय

१. यह सभा श्रद्धानन्द पार्कमें हुई थी।

बतानेवालोंको मैं अपना गुरु मानूंगा। इस विदेशी वस्त्र बहिष्कारसे ही गरीबोंका दुख दूर होगा। वस्त्र बहिष्कारका मुझे पूर्ण विश्वास है।

मैं आशा करता हूँ कि आपके बदनपर जो विदेशी वस्त्र हैं उन्हें आप अभी उतार कर जलानेको दे देंगे और कल कांग्रेस कमेटी द्वारा निर्धारित स्थानपर अपने घरके सभी विदेशी कपड़ोंको जलानेके लिए लाकर इकट्ठा कर देंगे। अपने विदेशी वस्त्रोंको आप फौरन उतार फेंकें।[1]

(चूंकि महीनेकी चार तारीखको कलकत्तामें विदेशी वस्त्रोंकी होली जलानेके अवसरपर दिये गये मेरे भाषण तथा अखबारोंको दिये गये मेरे वक्तव्यका महत्त्व भारत ही नहीं भारतके बाहर भी है और चूंकि इस भाषण तथा वक्तव्यसे बहिष्कार आन्दोलन तथा सविनय अवज्ञाकी सम्भावनाओंकी व्याख्या भी होती है, इसलिए मैं अखबारोंमें छपे उक्त भाषण तथा वक्तव्यको नीचे देता हूँ:)

मो० क० गांधी

मित्रो,

मैंने जो-कुछ हिन्दुस्तानीमें कहा है उसका अनुवाद करके बतानेका मेरा विचार नहीं है। मैं इतना ही कहना काफी समझता हूँ कि यदि हमें करोड़ों क्षुधाग्रस्त लोगोंके लिए स्वराज्य प्राप्त करना है तो यह नितान्त आवश्यक है कि हम केवल ब्रिटिश वस्त्रोंका ही नहीं बल्कि हर विदेशी कपड़ेका बहिष्कार करें।

कांग्रेसने इस प्रस्तावको पिछले वर्ष स्वीकार कर लिया था। कांग्रेस कार्य-समितिके कहनेपर मैंने बहिष्कारकी जो योजना प्रस्तुत की उसे स्वीकार करके कार्य-समितिने उस प्रस्तावको स्वीकार कर लिया है जो मैंने आपके सामने पेश किया है। कांग्रेस कार्यसमितिने मुझसे इस बहिष्कार-योजनाको कार्यान्वित करनेका भार उठानेको कहा। मेरे देशवासियो, मुझे आपपर विश्वास है, मुझे ईश्वरपर विश्वास है। अपने उद्देश्यके बिलकुल सही होनेका मुझे पक्का विश्वास है, और इसलिए मैंने काँपते मनसे और डरते हुए, लेकिन पूरी आशाके साथ, इस भारको उठाना स्वीकार कर लिया है और अब आपसे कहता हूँ कि आप इस भारको उठानेमें मेरी मदद करें। यह सभा मैंने नहीं बुलाई है। यह सभा आपने बुलाई है और यहाँ जो-कुछ होनेवाला है उसके बारेमें अच्छी तरह जानते हुए आप यहाँ आये हैं। मैं आशा करता हूँ कि यह इस बातका संकेत है कि आप मेरे भारको अपने कन्धोंपर लेकर उसे हल्का करनेके लिए कृतनिश्चय हैं। खादीके जरिए विदेशी कपड़ेका बहिष्कार करनेका क्या परिणाम होगा, वह ठीक है या नहीं, मैं इस बहसमें नहीं पड़ना चाहता। याद रखिए कि बहिष्कार योजनामें इसी प्रस्तावका प्रतिपादन किया गया है। कार्यसमिति मेरी योजनाको स्वीकार करनेसे पहले मुझसे बात करके अपनी तसल्ली करना चाहती थी। समितिकी बैठक चार घंटेतक चली और मुझसे जिरह करनेके बाद अन्तमें उसे पूरा इतमीनान हो गया कि यदि हमें इस कार्यक्रमको इसी वर्ष पूरा करना है और सारे

1. आरम्भके तीन अनुच्छेदोंमें गांधीजीके हिन्दी भाषणकी रिपोर्ट है जो **आज**से ली गई है। इसके बाद उनके अंग्रेजी भाषणका जिसकी रिपोर्ट **यंग इंडिया**में छपी थी, अनुवाद दिया जा रहा है।

देशको अगले वर्ष पहली जनवरीकी सुबह स्वतन्त्रताका सूर्योदय देखना है तो यही एक चीज है जो हम सम्भवत: कर सकते हैं। यदि हमें अपना उद्देश्य प्राप्त करना है तो उसके लिए यह कार्यक्रम ही एक कारगर कार्यक्रम है। इसलिए मैं चाहता हूँ कि आप अपने प्रति और इस कार्यक्रमके प्रति वफादार और सच्चे रहें। इस ढंगकी सभाओंमें तमाशबीनोंके रूपमें इकट्ठा होने, तालियाँ बजाने और फिर इन सभाओंमें जो-कुछ किया जाये उसके बारेमें सब-कुछ भूल जानेके लिए ही शामिल होकर अपनेको और अपने देशको अब और धोखा मत दीजिए। मै चाहता हूँ कि आप जो-कुछ भी कहें उसके एक-एक शब्दको कार्यान्वित करें। मैं चाहता हूँ कि आप मेरे सामने नहीं बल्कि अपने ईश्वरके सामने यह शपथ लें कि अब आगेसे आप विदेशी कपड़ोंका इस्तेमाल नहीं करेंगे, आपके पास जो भी विदेशी कपड़े हैं उन्हें आप त्याग देंगे, उन कपड़ोंको आप छुतहे कपड़ोंकी तरह जला डालेंगे — उसी प्रकार जिस प्रकार कि कोई शराबी व्यक्ति एक दिन सहसा शराब छोड़नेका निश्चय करने पर अपनी आलमारी खाली करके अपने पास रखी शराबकी सब बोतलोंको तोड़कर फेंक देता है, भले ही इसमें उसकी कितनी ही हानि क्यों न हो। आप अपने देशकी स्वतन्त्रता और सम्मानके लिए बड़ीसे-बड़ी कीमत चुकानेको तैयार रहें।

लेकिन इसमें एक बाधा भी है। मैंने प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके मन्त्रीके ऊपर तामील की गई एक नोटिस देखी है, जिसमें कुछ इस ढंगकी बात कही गई है कि इस सभामें कपड़े जलानेकी कोई घटना नहीं होनी चाहिए, क्योंकि पुलिस अधिनियम या पुलिस विनियमोंके अन्तर्गत ऐसा करना अपराध है। उक्त अधिनियमकी धारामें इस आशयकी बात कही गई है कि किसी सार्वजनिक सड़क या आम रास्तेपर घास-फूस या ऐसी ही चीजें नहीं जलाई जा सकतीं। मैं अपने दिमागपर बहुत जोर देता रहा हूँ कि इस पार्कको आम रास्ता कहा जाये या न कहा जाये। दो वकीलोंने इस प्रश्नपर बैठकर विचार किया — मैं अपनेको वकील नहीं गिनता, मैं वकीलोंकी संस्थामें से निकाल दिया गया हूँ — और उन दोनों वकीलोंने आपसमें सलाह करके मुझे बताया कि शब्दके अर्थकी कितनी ही खींचतान करनेके बाद भी इस पार्कको आम रास्ता नहीं कहा जा सकता। उन्होंने मेरा ध्यान अधिनियमके एक दूसरे खण्डकी ओर दिलाया जिसमें सार्वजनिक सड़क, आम रास्ता और सार्वजनिक मैदानका भी उल्लेख है। खण्डमें सार्वजनिक मैदानका उल्लेख खास तौरसे छोड़ दिया गया है। इस पार्कको एक सार्वजनिक मैदान कहनेकी बात तो मैं समझ सकता हूँ।

ऐसी परिस्थितिमें, मैं करूँ तो क्या करूँ? मैं ऐसा मानता हूँ कि इस नोटिसकी तामील खुद मुझ अदना आदमीके ऊपर की गई है। मैं इस कानूनके परिणामोंसे बचना नहीं चाहता। लेकिन आज मैं आपके सामने कानूनका सविनय उल्लंघन करने-वालेके रूपमें नहीं आया, मैं आपके सामने सविनय अवज्ञा करनेवालेके रूपमें नहीं आया, और मैं ऐसा नहीं चाहता कि आप इस समय किसी कानूनको भंग करें। मेरी नैतिक भावनाको जिन कानूनोंसे चोट पहुँचे ऐसे सभी कानूनोंको तोड़नेकी मुझमें क्षमता है, लेकिन मेरे लिए ऐसा करनेका समय अभी नहीं आया है, यह समय कल ही आ सकता है, लेकिन आज उसका समय नहीं है। तथापि मुझे आपके सामने एक सार्व-

जनिक कर्त्तव्यको पूरा करना है और इस कानूनका जो अर्थ मुझे बताया गया है या इसका जो अर्थ मैं लगाता हूँ उसके हिसाबसे मैं यह कहनेका साहस करता हूँ कि कांग्रेस कमेटीके मन्त्रीके ऊपर तामील की गई नोटिस खुद मेरे ही ऊपर तामील की गई मानी जाये तो इस नोटिसका मेरे ऊपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। अगर मुझे इसी अदालतके सामने ले जाया गया तो मै यह स्पष्ट वचन देता हूँ कि मैं यह दलील नहीं रखूँगा कि यह नोटिस तो मुझपर तामील नहीं की गई थी। मेरा कहना है कि यह पार्क आम रास्ता नहीं है। मैं यह भी कहता हूँ कि मैं कोई ऐसा काम नहीं कर रहा हूँ जो खतरनाक हो। यह बात सभी जानते हैं कि यह चीज कांग्रेसकी, बल्कि कहें कि कार्यसमितिकी सुनिश्चित नीति है। कार्यसमितिको इस मामलेमें अपने कर्त्तव्यको पूरा करना है। मैं कार्यसमितिका एक सदस्य हूँ, मैं बहिष्कार समितिका अध्यक्ष हूँ, और मुझे लगता है कि मेरा इस कामसे पीछे हटना और कानूनी कार्रवाईसे बचनेकी कोशिश करना अपने कर्त्तव्यसे भागना होगा।

अगर मुझे जाने दिया गया तो मैं कल यहाँसे चला जाऊँगा और एक सार्वजनिक पार्कमें, जिसके बारेमें मेरा दावा है कि वह आम रास्ता नहीं है, विदेशी कपड़ोंकी होली जलानेके आरोपमें अपने खिलाफ चलाये गये मुकदमेमें हाजिर होनेके लिए इस महीनेकी २५ या २६ तारीखको लौटूँगा। यही वह महत्त्वपूर्ण बात है जो मैं आपके सामने कहना चाहता था। होली आप नहीं जला रहे हैं, आग लगानेका काम मैं कर रहा हूँ, और इसकी सारी जिम्मेदारी केवल मेरी होगी। दर्शक-मात्र होनेके कारण आपका कोई नुकसान नहीं होता — मैं तो चाहता हूँ कि आप भी बचने न पायें। लेकिन आज यह आन्दोलन सविनय प्रतिरोधका आन्दोलन नहीं बल्कि बहिष्कारका, विदेशी कपड़ोंके जोरदार बहिष्कारका आन्दोलन है जिसे जबतक सम्भव होगा, कानूनकी मर्यादाओंके अन्दर रहते हुए ही चलाना है। मैं आज यह नहीं चाहता कि आप इस प्रकारके कानूनोंको जाने या अनजाने तोड़नेका अपराध करें, भले ही ये कानून कैसे ही हों। यदि आप कार्य-समितिके निर्देशोंका पालन करेंगे तो उचित समय आनेपर हमको देशके कुछ कानूनों अथवा सभी अनैतिक कानूनोंको तोड़नेका मौका मिलेगा। लेकिन जैसा कि मैंने पहले ही कहा है, इसका समय अभी नहीं आया है। मैं उसके लिए कोई जल्दबाजी नहीं करना चाहता और न समय आनेसे पहले ही कुछ करना चाहता हूँ। और यदि सरकार ठीक रास्तेपर चलेगी, यदि पुलिस ठीक रास्तेपर चलेगी तो मैं यह वचन देता हूँ कि सविनय अवज्ञा करनेका अवसर ही नहीं आयेगा, यहाँतक कि कर-बन्दी आन्दोलन, जो कि सविनय अवज्ञाका ही एक अंग है, की भी जरूरत नहीं पड़ेगी और हम सरकारसे समझौता कर सकेंगे। आप विश्वास कीजिए कि मैं संघर्ष बचानेकी पूरी चेष्टा करूँगा। मेरे कन्धोंपर जो जिम्मेदारी है उसके पूरे एहसासके साथ मैं यह बात जानता हूँ कि इस विशाल देशमें — ऐसे देशमें जहाँकी जनता अनुशासनविहीन है — सविनय अवज्ञा और कर-बन्दी आन्दोलनके क्या जबर्दस्त परिणाम होंगे; लेकिन मेरे जैसे व्यक्तिको, जो स्वतन्त्रताके पीछे दीवाना है, जो स्वतन्त्रताका भूखा है — और स्वतन्त्रताकी सच्ची भूख रोटीकी भूखसे कही अधिक दुःसह और कष्टकर होती है — इस अमूल्य स्वतन्त्रताको प्राप्त

करनेके लिए जबर्दस्त जोखिम उठानी पड़ती है, अपना सब-कुछ दावपर लगाना पड़ता है। और चूँकि मैं उस स्वतन्त्रताका भूखा हूँ, चूँकि मैं चाहता हूँ कि मृत्युके द्वारपर पहुँच कर भी मैं अन्तिम साँस लेनेसे पहले स्वराज्य देख लूँ, इसीलिए मैं वे तमाम जोखिम उठाना चाहता हूँ। लेकिन इसके साथ ही मैं हर प्रकारकी सावधानी बरतना चाहता हूँ, और इसलिए मैं सरकारको समझानेकी कोशिश करूँगा, उससे होशमें आनेको कहूँगा।

लेकिन यदि आप मेरी सहायता-भर करेंगे तो हम न केवल इन सब जोखिमोंको टाल सकेंगे बल्कि आगामी ३१ दिसम्बरसे पहले ही स्वतन्त्रताका सूर्य उदित होते हुए देखेंगे।

यदि [आप सच्चे रहेंगे,][1] और आपके सामने समय-समयपर जो कार्यक्रम रखा जाये उसे ईमानदारीसे, निष्ठापूर्वक और पूरी तरह कार्यान्वित करेंगे तो मैं आपको वचन देता हूँ कि आपको कोई जोखिमका कदम उठानेकी जरूरत ही नहीं पड़ेगी। क्या विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार करना कोई जोखिमका काम है? क्या कांग्रेसको संगठित और व्यवस्थित करना जोखिमका काम है? क्या हजारोंकी संख्यामें लोगोंको कांग्रेसका सदस्य बनाना या [अमीरों और गरीबों द्वारा] केवल खादीका ही प्रयोग करना कोई जोखिमका काम है? यदि आप सोचते हों कि ये काम कोई बड़े दुस्साहसके काम हैं तो मैं ईमानदारीसे आपको बता सकता हूँ कि आप जानते ही नहीं कि साहसिक कार्य क्या होते हैं; साहसिक कार्य इससे कही अधिक कठिन होते हैं। ऐसा मत मान बैठिये कि आपके सामने जो कार्यक्रम है, उसको पूरा करनेके लिए किसी साहसिक प्रयत्नकी जरूरत है। आपके सामने यह आसान कार्यक्रम रखनेका सीधा-सादा कारण यह है कि आपका संख्याबल आपके विरोधीकी तुलनामें कई गुना ज्यादा है — उसकी संख्या एक लाख है और आप कई करोड़ हैं।

यदि हम किसी सम्मोहनके वशमें न होते अथवा यदि हम निष्क्रियताके शिकार न होते और हममें आत्म-विश्वासका अभाव न होता तो हमें स्वतन्त्रताकी सांस लेना एक अत्यन्त स्वाभाविक चीज लगती, जो कि हमारा अधिकार है। यदि हम इस सम्मोहनमें न पड़े होते तो हमें संघर्षकी इन आसान अवस्थाओंसे भी गुजरनेकी जरूरत न पड़ती। [आप इन चीजोंको इस वर्ष प्रयत्न करके पूरा कीजिए और फिर मुझसे आकर पूछिए, "स्वराज्य कहाँ है?" आपको मेरे पास आनेकी जरूरत नहीं पड़ेगी। आप उसे अपनी मुट्ठीमें पायेंगे। आपके करोड़ों देशवासी आपपर मुस्कानें बिखेरेंगे। उनकी वास्तविक शिकायतोंको समझकर उन शिकायतोंको दूर करानेके लिए आप उनकी तरफसे लड़ेंगे तो वे आपको आशीर्वाद देंगे। इसीलिए मैं आपसे यह सब करनेको कहता हूँ।

मुझे आपमें भरोसा है। पुलिस कमिश्नरकी इस नोटिसने मुझे अधिकारियोंसे अपनी अपील करनेका अवसर प्रदान किया है। मैं यहाँ जोखिम उठानेके लिए आया हूँ। जो कपड़े मुझे सौंपे गये हैं, मेरा निश्चय उनको जला देनेका है, और यह

१. बड़े कोष्ठकोंमें दिये गये अंश **अमृतबाजार पत्रिका**, ५-३-१९२९ और **हिन्दुस्तान टाइम्स**, ७-३-१९२९ से लिये गये हैं।

पवित्र कार्य मैं सम्पन्न करूँ उससे पहले मैं चाहता हूँ कि आप अपने सब कपड़े यहाँ मंचपर मेरे पास फेंक दें। कोई शोर न करें।]

इस अनुष्ठानमें यदि आप चाहते हों कि मैं भाग लूँ तो आप कोई शारीरिक हिंसाका प्रयोग न करें। मैं अहिंसाका समर्थक हूँ — वह मेरा सिद्धान्त है। मैं अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त करनेका अन्य कोई रास्ता खुला नही देखता। [मेरे इस सिद्धान्तके बावजूद जबतक आप चाहते हों कि मैं इस आन्दोलनमें शामिल रहूँ तबतक मेरा आपसे यह अनुरोध है कि आप अहिंसाके नियमका पालन करें और आप देखेंगे कि आपने अच्छा ही किया है।]

कपड़ोंकी होली जलानेके इस कृत्यकी जिम्मेदारी पूरी तरह मेरे कन्धोंपर है। कृपया यह भी स्मरण रखें कि हम सभी विदेशी कपड़ोंका बहिष्कार चाहते हैं, केवल ब्रिटेनमें बने कपड़ोंका ही नहीं। इस मामलेमें आपके मनमें कोई भ्रम नहीं रहना चाहिए। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि जो लोग इस योजनाके लिए जिम्मेदार हैं उन्होंने बिना विचारे कुछ नहीं किया है। उन्होंने विदेशी कपड़े बनाम ब्रिटिश कपड़ेके सवालपर गहराईसे विचार किया और इस निष्कर्षपर पहुँचे कि सभी विदेशी कपड़ोंका बहिष्कार करना उचित है। मैं भारतीय मिलोंके सवालपर विचार नहीं करना चाहता। यदि आप खादीकी चिन्ता करेंगे तो मिलें अपनी चिन्ता आप कर लेंगी। [अन्यथा ये मिलें आपके गलेमें फंदे जैसी साबित होंगी।][1]

[अंग्रेजीसे]

आज, ८-३-१९२९ और **यंग इंडिया**, १४-३-१९२९

७४. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

[५ मार्च, १९२९][2]

पुलिसने अनुचित और सर्वथा अनावश्यक रूपसे जो हस्तक्षेप किया, विशेषकर विदेशी कपड़ोंको जलानेसे सम्बन्धित मेरे भाषणके बाद, उससे मुझे दुख और आश्चर्य हुआ है। मैंने पुलिस कमिश्नरका लिहाज करके अपने सिद्धान्तके विरुद्ध अपना भाषण, जिस हदतक उसका सम्बन्ध कपड़े जलानेकी घटनासे था, अंग्रेजीमें दिया था।

मेरे इस स्पष्ट वक्तव्यके बाद, कि हम सविनय अवज्ञा करके कोई कानून नहीं तोड़ने जा रहे हैं, लेकिन पुलिस अधिनियमकी सम्बन्धित धाराकी जो व्याख्या की गई है उसे हम स्वीकार नहीं करते, मुझे पूरी आशा थी कि कपड़ोंको जलानेके काममें कोई हस्तक्षेप नहीं होगा। दुनियाके विभिन्न देशोंमें लागू पुलिस अधिनियमोंका थोड़ा-बहुत अनुभव मुझे है। जबतक कि कोई आसन्न और गम्भीर खतरा न हो तबतक पुलिस जनताके कार्योंमें कभी हस्तक्षेप नहीं करती, भले ही ये कार्य नियमों और विनियमोंका उल्लंघन ही क्यों न करते हों। वहाँ पुलिस ऐसा करनेवालोंको अदालतके सामने पेश

१. भाषणके बाद विदेशी कपड़ोंकी होली जलाई गई। शीघ्र ही पुलिस घटनास्थलपर आ गई और उसने आग बुझा दी। देखिए अगला शीर्षक भी।

२. यह वक्तव्य इस तारीखको रातको ढाई बजे जारी किया गया था।

करती है, और यह करना उस पुलिसके लिए अत्यन्त स्वाभाविक चीज भी है, क्योंकि वह अपनी मर्यादाओंको पहचानती है और इसीलिए कानूनको अपने हाथमें लेनेकी जगह अदालतकी मार्फत कानून-भंगके मामलोंको तय कराती है। पुलिस जानती है कि आज रात कोई फौरी खतरा नहीं मंडरा रहा था; गम्भीर खतरा तो निश्चय ही नहीं था। भीड़ बिलकुल शान्त थी और प्रदर्शनका सारा दायित्व जिम्मेदार लोगोंके हाथोंमें था। पुलिसको मालूम था कि यह प्रदर्शन एक विशाल जन-आन्दोलनका अंग है और इतना ही नहीं मैं स्वयं उनको स्पष्टसे-स्पष्ट शब्दोंमें आश्वस्त कर चुका था। कपड़े जलानेका कार्यक्रम भी वास्तवमें सम्पन्न हो चुका था और मुझे पूरा विश्वास था कि पुलिस तो वहाँ महज निगरानीके लिए है। लेकिन एकाएक मैंने देखा कि पुलिसके सिपाही आगके चारों ओर खड़ी भीड़को अपनी बड़ी-बड़ी लाठियोंसे खदेड़ने और लाठियाँ पीट-पीट कर आग बुझाने लगे।

इसके बाद जो-कुछ हुआ उसका वर्णन करनेकी जरूरत नहीं। दोस्तोंसे घिरा होनेके कारण मेरे चारों तरफ जो-कुछ हो रहा था वह सब तो मैं देख नहीं सका, लेकिन इतना मैंने देखा कि एक स्थिति ऐसी आई जब पुलिसने भीड़पर अपने डंडोंका प्रयोग शुरू कर दिया। बादमें मुझे सर चार्ल्स टेगार्डसे पता चला कि पथ-रावके कारण कुछ कांस्टेबिलोंको थोड़ी-बहुत गम्भीर चोटें आ गई थीं। इसका मुझे दुख है। मुझे अपने मित्रोंसे पता चला है कि जनताके कुछ आदमी भी कमोबेश गम्भीर रूपसे घायल हुए हैं।

बस थोड़ी ही सूझ-बूझ और थोड़ी सहिष्णुता दिखानेसे, संसारके सभी देशोंमें सभ्य पुलिस द्वारा बनाई गई परम्पराका पालन करनेसे इस सारी दुर्घटनाको टाला जा सकता था। हाँ, यदि विदेशी कपड़ोंके जलानेके प्रश्नको लेकर अदालतमें मुकदमा दायर किया गया होता, उसमें पुलिस अधिनियमकी समुचित व्याख्या की गई होती और फिर यदि उक्त अधिनियमकी किसी अदालत द्वारा की गई व्याख्याकी अवहेलना करते हुए हमने अपने सविनय अवज्ञाके कार्यक्रमके दौरान या अन्य किसी प्रसंगमें विदेशी कपड़ोंकी होली जलानेकी चेष्टा की होती, तो उस समय पुलिसके हस्तक्षेपकी बात मैं ठीक मान सकता था।

हालाँकि पुलिसने सार्वजनिक प्रदर्शनमें जैसा कि मैं बता चुका हूँ उस प्रकार मनमाने ढंगसे हस्तक्षेप किया था फिर भी मुझे खुशी है कि वे मुझपर तथा उन लोगोंपर मुकदमा चलाने जा रहे हैं जिन्होंने होली जलानेमें भाग लिया था।[१] मैं इसे पुलिस

१. ४ मार्चको लगभग ११. १५ बजे दिनमें गांधीजीको असिस्टेंट पुलिस कमिश्नरने सूचित किया कि उन्हें ५ मार्चको सुबह १० बजे चीफ प्रेसिडेंसी मजिस्ट्रेटके सामने उपस्थित होना है, और इसकी स्वीकृति-स्वरूप उनसे एक वचन-पत्रपर हस्ताक्षर करनेको कहा गया। गांधीजीने कहा कि मैं "मंगलवारको अदालतमें हाजिर होनेके लिए किसी ऐसे वचन-पत्रपर हस्ताक्षर नहीं कर सकता क्योंकि यह पहले ही तय हो चुका कि मैं उस दिन बर्माके लिए रवाना हो जाऊँगा। . . . मैं बर्मामें प्रतीक्षा कर रहे हजारों व्यक्तियोंको निराश नहीं कर सकता। वहाँ जानेसे रोकनेकी जिम्मेदारी पुलिस चाहे तो अपने ऊपर ले सकती है। यदि पुलिस चाहे तो मुझे गिरफ्तार कर सकती है।" बादमें ५ तारीखकी सुबह गांधीजीने ५० रुपयेका मुचलका दे दिया।

कमिश्नरका सौजन्य मानता हूँ कि उन्होंने मुकदमेकी सुनवाई कल ही करनेका आग्रह नहीं किया और मेरे बर्मासे लौट आनेतक उसे रोक दिया है। उनका यह आशा करना उचित ही था कि जबतक इस मामलेका फैसला न हो जाये तबतक मैं वचन दूँ कि कलकत्तेके सार्वजनिक मैदानोंमें विदेशी कपड़ोंकी होली नहीं जलाई जायेगी। स्थानीय कांग्रेसी मित्रोंके साथ सलाह करनेके बाद मैंने यह वचन पहले ही दे दिया है और मैं आशा करता हूँ कि जनता इस वचनका ईमानदारीसे पालन करेगी।

तथापि मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि इसके अर्थ बहिष्कारके सिलसिलेमें प्रदर्शन करना, विदेशी कपड़ोंको इकट्ठा करना या उनकी होली जलाना भी कदापि नहीं है। इस वचनका धर्म इतना ही है कि पुलिस अधिनियमके इस खण्ड विशेषकी अधिकृत व्याख्या न हो जानेतक कलकत्ताके सार्वजनिक मैदानोंमें और स्वभावतः सार्वजनिक सड़कोंपर कपड़ोंकी होली नहीं जलाई जायेगी। लेकिन जब भी जरूरी माना जायेगा, और जब भी कांग्रेसके अधिकारी वैसा निर्णय करेंगे, तब वे इकट्ठा किये गये विदेशी कपड़ेको निजी स्थानोंपर या ऐसे स्थानोंपर जलानेमें नहीं हिचकेंगे जो उक्त खण्डकी पुलिस द्वारा की गई व्याख्याके अन्तर्गत नहीं आते।

श्रद्धानन्द पार्कमें आयोजित प्रदर्शनमें पुलिस द्वारा अनुचित और अनावश्यक हस्तक्षेप करनेके बाद भी यदि सभी लोग विदेशी कपड़ेका त्याग न कर दें और बहिष्कारको पूर्णतः सफल न बना दें तो मुझे वास्तवमें ताज्जुब होगा। पुलिस-हस्त-क्षेपका सबसे कारगर जवाब यह होगा कि नगरेतर क्षेत्रोंमें रहनेवाले लोग और अन्य प्रान्तोंके लोग जो भी विदेशी कपड़ा उपलब्ध हो उसे इकट्ठा करके आगमें झोंक दें। विदेशी कपड़ोंको जलानेके प्रश्नपर मैंने काफी गहराईसे चिन्तन किया है। मैं जानता हूँ कि कुछ मित्र मुझसे भिन्न राय रखते हैं, किन्तु यदि यह बात सत्य है कि विदेशी कपड़ोंका आयात हमारे देशके साधनोंको यहाँसे बाहर ले जानेका सबसे बड़ा साधन है और इसके कारण करोड़ों क्षुधा-ग्रस्त लोग विवश होकर कंगालीका जीवन व्यतीत कर रहे हैं, तब यह विदेशी कपड़ा, जिसमें ऐसे विषैले कीटाणु लगे हुए हों, इसी लायक है कि उसे नष्ट कर दिया जाये।

[अंग्रेजीसे]

फॉरवर्ड, ५-३-१९२९ और **यंग इंडिया**, १४-३-१९२९

७५. अग्नि-संस्कारका धर्म

[५ मार्च, १९२९][1]

ठीक १७ मार्चको यह लेख पाठकोंके हाथमें होगा। मैं इसे कलकत्तासे रंगून जाते हुए जहाजमें बैठे-बैठे लिख रहा हूँ। अतः श्रद्धानन्द पार्कमें ४ मार्चके दिन जो-कुछ हुआ उसका दृश्य अभी भी मेरी आँखोंके सामने खड़ा है। आशा है कि जो आग उस दिन उस पार्कमें सुलगी है वह लाखों सिपाहियोंकी लाठियोंसे भी नहीं बुझ सकेगी।[2]

क्योंकि धर्म किसीके मिटाये मिट नहीं सकता। एक बात मनुष्यके हृदयमें प्रकट होनेके बाद उसके शरीरके नष्ट होनेपर भी उसका नाश नहीं होता। दुनियाके अवतारों, पैगम्बरों, सन्तों, औलियाओंने जिस धर्माग्निको सुलगाया था वह उनके शरीरके न रहनेपर भी आजतक सुलग रही है।

लेकिन कहनेवाले कहेंगे, कपड़ा जलाना भी कोई धर्म है? मेरी नम्र सम्मतिमें कपड़ा जलानेका यह धर्म एक ऐसा धर्म है, जो सिद्ध किया जा सकता है। जिस देहमें प्राण नहीं रहता उसे तो हम जला डालते हैं या दफन कर देते हैं। जो चीज छूत लगनेके कारण दूषित हो जाती है उसे भी हम जला देते हैं। जिसे शराब छोड़ने लायक मालूम होती है, वह उसे छोड़ देता है। और फिर शराब चाहे जितनी कीमती हो तो भी, जिस चीजको वह स्वयं पापपूर्ण समझकर छोड़ चुका है, उसे दूसरोंके हाथों बेचकर वह पापका भागी नहीं बनेगा। जो चीज किसी संक्रामक बीमारीके कारण कीटाणुयुक्त हो गई हो वह भी जला दी जाती है; उसे जलाना धर्म माना गया है। जिस समय जोहानिसबर्गमें महामारीका प्रकोप शुरू हुआ तो वहाँकी नगरपालिकाने बिना किसी झिझक और दुखके शहरके बाजारके कीमती मकान और दुकानोंमें भरी हुई मेवा वगैरा बहुमूल्य चीजें देखते-देखते जलवा डालीं; उन्हें जलाना ही उसने अपना धर्म समझा। इन सब चीजोंको जलानेकी जरूरतके बारेमें मतभेद हो सकता है, लेकिन जो ऐसे काम करनेकी जरूरतको महसूस करता है, उसके विरोधी भी इस बातको मंजूर करेंगे कि उसके लिए तो अग्नि-संस्कार जैसे धर्म ही बन जाता है।

इसी तरह मेरी नम्र रायमें हरएक भारतवासीका यह धर्म है कि वह अपने विदेशी कपड़े जलाये और मैं मानता हूँ कि कलकत्ताकी पुलिसके उस उद्धत और क्रूरतापूर्ण बरतावके बादसे इस धर्ममें दुगुना जोर आ गया है। जिन्हें इस घटनाके पहले विदेशी कपड़े जलानेकी जरूरतके बारेमें कुछ शंका थी, इस घटनाके बाद उन्हें बिलकुल ही शंका नहीं करनी चाहिए।

१. गांधीजी ५ मार्चको सुबह रंगूनके लिए रवाना हुए थे।

२. पुलिसने विदेशी कपड़ोंकी होलीको उस दिन लाठियोंसे पीट-पीटकर बुझानेका प्रयत्न किया था और इस प्रकार जनताको उत्तेजित करके लोगोंपर भी लाठियाँ चलाई थीं।

जिस विदेशी वस्त्रने हमारे देशको कंगाल बनाया है, जो हर साल हमारे देशसे ६० करोड़से भी ज्यादा रुपया विदेशोंमें खींच ले जाता है, उस विदेशी कपड़ेका बहिष्कार करना हमारा धर्म है; इस बारेमें तो किसीको शंका नहीं है। अगर यह बात सच है तो फिर बहिष्कृत कपड़ेका सिवा जलानेके और क्या किया जा सकता है? कुछ लोग कहते हैं, उसे गरीबोंको दे डालो। इस तरहके विचार रखनेवाले यह नहीं देख पाते कि अपने इन विचारोंके कारण वे गरीबोंका और स्वयं अपना निरादर करते हैं। गरीबोंको अपनेसे कम समझना उनका अपमान करना है, और गरीबोंको नीचे दर्जेका समझ कर खुद नीचे दर्जेका बनना है, स्वयं अपनी अवगणना करना है। क्या गरीब स्वाभिमानी नहीं होते? क्या उन्हें स्वराज्य नहीं चाहिए? जिस चीजको हम छूत-भरी वस्तु समझें, उसीको किसी दूसरेके हाथों किस तरह सौंप सकते हैं? गरीबोंको जूठन देनेकी ओछी वृत्ति तो आज हममें है ही। क्या इसी ओछी वृत्तिको बहिष्कृत कपड़े गरीबोंमें बाँटकर हम और बढ़ायें, उसे उत्तेजन दें?

इन कपड़ोंके बारेमें हम थोड़ा विचार करें। आजतक जो कपड़े मैंने जलाये हैं, उनमें रूमाल, मैली या अच्छी काली टोपियाँ, नेकटाई, कालर, मोजे, महीन कुर्ते, वास्कट और महीन साड़ियाँ आदि होते हैं। इनमें की कौन-सी चीजें गरीबोंको दी जायें? गरीबोंमें उन्हें पहननेका शौक पैदा करना कितनी अजीब बात होगी? इस तरहके कार्यसे हम विदेशी वस्त्रके बहिष्कारको कबतक और कैसे सफल बना सकेंगे?

और आखिर श्रद्धानन्द पार्कमें उस दिन जो-कुछ हुआ उसके बाद तो विदेशी कपड़ेको जलानेके औचित्यके बारेमें किसीके मनमें शंकाका लेश भी नहीं बचना चाहिए। पुलिसको मैंने पहले ही चेता दिया था कि विदेशी कपड़े जलानेके सिलसिलेमें मेरा इरादा किसी कानूनको तोड़नेका नहीं था। जब वकीलोंने भी यह राय दी कि शासनने जिस कानूनकी धाराके मुताबिक कपड़े न जलानेका आदेश दिया है और उस धाराका पुलिसने जो अर्थ लगाया है वह ठीक नहीं है, मैंने उसके बाद ही उस पार्कमें कपड़े जलानेका निश्चय किया था। इतना होते हुए भी जब पुलिसने विशेषतः लोगोंको चिढ़ानेकी दृष्टिसे आग बुझानेका असफल प्रयत्न किया, तो लोगोंमें जोश फैल गया और उन्होंने पार्कमें जगह-जगह कपड़े जलाने शुरू किये; और इसी सिलसिलेमें पुलिस और जनताके बीच थोड़ी मार-पीट भी हो गई। पुलिसकी इतनी मनमानीके बाद भी अगर देशके घर-घर और गाँव-गाँवमें विदेशी कपड़ोंकी आग न जले तो मेरी रायमें इससे देशकी हर तरह नाक कटेगी। पुलिसकी इस करतूतके बाद बहिष्कारकी सफलताके बारेमें जहाँ लोगोंको अविश्वास था वहाँ अब उनमें आशाका उदय होना चाहिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १७-३-१९२९

७६. पत्र : छगनलाल जोशीको

मंगलवार [५ मार्च, १९२९]

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। कलकत्तामें मेरे आराम कर पानेका सवाल ही नहीं था। आज लगभग दो बजेके करीब सोने जा पाया। यह पत्र ५ तारीखको स्टीमर परसे लिख रहा हूँ। कलकत्ताकी बातोंका पूरा हवाला तो महादेवने 'नवजीवन' में दिया है।

यशोदाबहनसे आग्रह करके तुमने ठीक ही किया है। जहाँ धर्म क्या है इस विषयमें कोई शंका न हो वहाँ कठोर बन जानेमें कोई बुराई नहीं है। कठोर बनना ही ठीक है। उसके बालोंके बारेमें तो मैंने मजाक ही किया था। सबसे कहा था कि यदि रूक्मिणी घबराये तो और सभीको अपने बाल दे देनेके लिए तैयार रहना चाहिए। ऐसे काममें मन्त्रीका समय तो लगेगा ही। समय व्यर्थ गया ऐसा न मानना।

उद्योग-प्रशिक्षण-शाला (टेक्निकल स्कूल) की व्यवस्था एक वर्षके लिए हुई हो तो भी ठीक है। उसका कारण अविश्वास नहीं, जमनालालकी सावधानी है। यदि उसका कारण अविश्वास हो तो भी तुम्हारे लिए चिन्ताकी कोई बात नहीं है।

संदेहशीलता और अधीरताके सिवा तुममें मैंने और कोई दोष नही देखे। ये दोनों बातें कुछ समयके बाद चली जायेंगी, क्योंकि मैंने तुम्हें देखते ही अनुभव किया था कि तुम प्रयत्नशील और सरल प्रकृतिके हो। तुम्हारी सफलताके विषयमें मुझे शंका नहीं है।

हम २४को कलकत्ता वापस पहुँच जायेंगे, यह निश्चित है। मामलेकी सुनवाई २६को है। उसी दिन अहमदाबादकी गाड़ी लेनेका इरादा है। फिर जो हो सो ठीक है। 'न जाने जानकीनाथः प्रातःकाले किं भविष्यति'—कलकत्तामें जो-कुछ हुआ उसकी खबर किसे थी?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

ऊपर जो लिखा है उससे तुम देखोगे कि मैं आश्रम २८की रात या २९ तारीखको सुबह पहुँच पाऊँगा। उसी दिन रातको काठियावाड़ जाना होगा।

बापू

गुजराती (जी० एन० ५५६४) की फोटो-नकलसे।

७७. पत्र : रामनारायण पाठकको

६ मार्च, १९२९

भाई रामनारायण,

आज रंगून जाते हुए ही तुम्हारे पत्रका उत्तर दे पा रहा हूँ। किसानोंके पाससे चन्दा इकट्ठा करना भी एक कला है। इस कलाको जाननेवाले सेवक हमारे यहाँ कम ही हुए हैं। फिर किसानोंके पाससे धन जमा करनेसे पहले उन्हें धन देना जरूरी है। साहूकारोंको तो चन्दा देना ही चाहिए। यही दलील आश्रमपर भी लागू होती है। फिलहाल तो साहूकारोंके सम्पर्कमें आयें, उनका मन पिघलायें और उनसे जो कुछ भी प्राप्त हो वह लें। इसमें सारा मध्यम वर्ग आ जाता है।

मोहनदासके वन्देमातरम्

भाई रामनारायण
आश्रम, छाया
बरास्ता पोरबन्दर (काठियावाड़)

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २७८५) से।
सौजन्य : रामनारायण पाठक

७८. पत्र : मथुरादास पुरुषोत्तमको

६ मार्च, १९२९

चि० मथुरादास,

तुम्हारे पत्रका 'नवजीवन' में उपयोग किया था; किन्तु तुम्हें पत्र लिखनेका इरादा था। अब रंगून जाते हुए ही ऐसा कर पा रहा हूँ।

तुम्हारा पत्र आये हुए कोई तीन महीने हो गये हैं। इस बीच तो तुम्हारे व्रतकी और भी अच्छी तरह कसौटी हो गई होगी। मुझे सब हाल खोलकर लिखना। मुझे हर समय लगता है कि इस व्रतके पालनके लिए सतत जागृत रहनेकी आवश्यकता है। दूसरे संयमोंके पालनमें हम तनिक भी ढीले पड़ें तो उसका असर ब्रह्मचर्य पालनपर पड़ता है। कहीं सारी इन्द्रियोंका काम किसी एक ही इन्द्रियका दास बनकर रहना तो नहीं है। क्योंकि वे बरतती तो कुछ ऐसे ही हैं। इसलिए हमें इन्द्रियोंको इस दासताके बन्धनसे छुड़ाना है। ऐसा करनेसे काम-वासना निराधार और दीन बनकर रह जाती है।

आँखके रोहे कटवा लिए होंगे; यदि रोहे सचमुच नष्ट हो गये होंगे तो उससे आँखको भी लाभ होगा।

वहाँ खादीकी प्रगति कैसी है इसका समाचार दिया करो। देखता हूँ कि दर्जी सम्बन्धी तुम्हारे सुझावसे बहुत-कुछ हो सकता है। किन्तु उसमें भी लोगोंमें प्राण फूँकनेके लिए एक मनुष्यको तो खपना ही पड़ेगा। कई पत्र मेरे पास आये तो हैं किन्तु मैं उनका उपयोग किस प्रकार कर सकता हूँ?

मैं इस मासके अन्तमें आश्रम लौटूँगा; और उसके साथ ही आन्ध्रकी यात्रा शुरू हो जायेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३७२९) की फोटो-नकलसे।

७९. आगामी आन्ध्र-यात्रा

मेरे काबूसे बाहरकी परिस्थितियोंके कारण आन्ध्र देशके मित्रोंको जो बार-बार निराश होना पड़ा है, आशा है, इसके लिए वे मुझे क्षमा कर देंगे। अगर हो सकता तो मैं खुशी-खुशी इससे पहले ही आन्ध्र देशकी यात्रा कर लेता। अब मैं अगले महीनेकी शुरुआतमें आन्ध्र पहुँचनेकी आशा रखता हूँ। अभीसे जो कार्यक्रम तय हो चुका है वह पहली अप्रैलको काठियावाड़में समाप्त हो जायेगा। मैं एक या दो दिन उद्योग मन्दिरमें ठहरूँगा और शीघ्र ही वहाँसे आन्ध्रके लिए चल दूँगा। इस हिसाबसे मैं करीब ५ या ६ अप्रैलको बम्बईसे आन्ध्रके लिए रवाना हो जाऊँगा। १४ मईको इलाहाबादमें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठक है, जिसमें मेरा हाजिर रहना जरूरी है। इस कारण आन्ध्रमें मुझे एक महीनेसे कुछ ही ज्यादा समय मिलेगा। मैं चाहता तो था कि मुझे इस कामके लिए अधिक समय मिलता, लेकिन लाचार हूँ। फिर भी सुन्दर व्यवस्थाके जरिये एक महीनेके समयमें भी बहुत-कुछ काम किया जा सकता है।

मेरी यात्राका खास हेतु तो खादी ही रहेगा, लेकिन मैं लालाजी स्मारकके लिए मिलनेवाली रकमका भी स्वागत करूँगा और इसके लिए चन्देकी माँग करूँगा। इस भीख माँगनेके कामके अलावा मैं कांग्रेसके रचनात्मक प्रस्तावके सिलसिलेमें कुछ सक्रिय प्रचार करनेका भी इरादा रखता हूँ, खासकर उस बहिष्कार योजनाके प्रचारका जो कार्य-समितिने तैयार की है। अगर आन्ध्र देश बहिष्कार आन्दोलनमें पूरे उत्साहके साथ हाथ नहीं बँटायेगा तो मुझे खेद और आश्चर्य होगा। आन्ध्रवासियोंको सुन्दर खादीकी कोई शिकायत नहीं है। उनमें मोटी या महीन खादी तैयार करनेकी अनन्त शक्ति भरी पड़ी है। वे बहुत-सा कपास पैदा करते हैं। उनके पास योग्य कार्यकर्त्ता भी हैं और देशभक्तिकी लगनमें वे किसी भी प्रान्तसे पीछे नहीं हैं। बात केवल इतनी है कि उनमें नेता तो जरूरतसे ज्यादा हैं लेकिन अनुयायी मात्र इनेगिने हैं। उनमें बहुमुखी प्रतिभा होनेसे आपसमें छोटी-मोटी ईर्ष्या और कलह उत्पन्न हो गया है। क्या यह आशा करना बहुत ज्यादा होगा कि मेरे आन्ध्र देश पहुँचनेके पहले ही वे अपनी-

अपनी सामर्थ्य-भर कोशिश करके एकता स्थापित कर चुके होंगे और नेता बननेका दावा करनेके बजाय नम्रतापूर्वक अनुयायी बननेको तैयार हो चुके होंगे?

बर्माकी भाँति ही कार्य-समितिकी ओरसे मुझे सूचना मिली है कि मैं आन्ध्र और उत्कल प्रान्तोंकी प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियोंका निरीक्षण करूँ और उनके हिसाब-किताबकी जाँच-पड़ताल करूँ। मुझे आशा है कि मैंने बर्माके बारेमें जो-कुछ कहा है उसे दोनों कमेटियोंके अध्यक्ष, मन्त्री और सदस्यगण याद रखेंगे और जब मैं आन्ध्र पहुँचूँगा तो हर चीज तैयार रखेंगे। उत्कलके मन्त्री कृपा करके मुझे अपने तमाम कागजात साथ लेकर आन्ध्रमें किसी भी जगह, जो उन्हें विशेष सुविधाजनक मालूम पड़े, मिल लें।

एक बात थैलियाँ भेंट करनेके बारेमें भी कह देता हूँ। अभीसे मेरे पास इस आशयके प्रस्ताव आ रहे हैं कि जो थैलियाँ मुझे दी जायें उनपर उनका हेतु भी लिखा रहना चाहिए। मैं कार्यकर्त्ताओंको इस तरहकी कार्रवाईके खिलाफ चेतावनी दिये देता हूँ। वे स्थानीय कामके लिए मेरे नामसे लाभ न उठायें। स्थानीय कामका आधार उसका अपना गुणावगुण ही होना चाहिए। स्थानीय कार्यकर्त्ताओंका चरित्र, उनकी साख और उनकी योग्यता ऐसी होनी चाहिए कि वे स्थानीय कामके लिए जितनी आर्थिक सहायताकी जरूरत हो, स्वयं ही जुटा सकें। मैं यह बात दावेके साथ कह सकता हूँ कि अगर कोई प्रान्त खादीका उत्पादन-केन्द्र है तो वहाँके चन्देका अधिकांश मैं उसी प्रान्तके खादीकार्यमें खर्च करता हूँ। लेकिन जहाँ, जैसे लंका और बर्मामें, खादीका उत्पादन नहीं होता, वहाँका सारा चन्दा उन प्रान्तोंके बाहर ही खर्च होना चाहिए। आन्ध्र देशके बारेमें तो वस्तुस्थिति यह है कि जब मैंने शुरू-शुरूमें वहाँ जानेका निश्चय किया था उस समय मेरी यात्राका हेतु केवल आन्ध्रके खादी-कार्यके लिए धन-संग्रह करनेका था। वही निर्णय इस समय भी कायम है। हाँ, इसमें शक नहीं कि चन्देकी रकमका कुछ भाग केन्द्रीय कार्यालयकी व्यवस्थामें खर्च किया जायेगा। अतः मैं चाहता हूँ कि कार्यकर्त्तागण कृपा करके किसी विशेष हेतुसे तबतक कोई थैली अर्पण न करें जबतक उस सम्बन्धमें मुझसे राय न ले लें। इस तरहके तमाम प्रस्ताव देशभक्त श्री वेंकटप्पैयाके जरिये तथा उनकी सिफारिशके साथ आने चाहिए क्योंकि आन्ध्र-यात्राके कार्यक्रमका प्रबन्ध उन्हींके जिम्मे है।

आखिरी बात यह है कि उत्साही लोग मुझपर दया करें तो अच्छा हो। चाहे वे मेरे शरीरको ठीक हालतमें रखनेके भारको पूरा-पूरा न भी उठायें तो भी कमसे-कम वे उसमें मेरा हाथ तो जरूर ही बँटायें। अक्सर मुझसे कहा जाता है कि अपनी देहकी सार-संभाल करनेकी जिम्मेदारी मेरी नहीं है, यह तो राष्ट्रकी धरोहर है। लेकिन बात ऐसी ही है, इसका मुझे पूरा भरोसा नहीं होता। हाँ, आन्ध्रके राष्ट्र-प्रेमियोंके लिए इस बारेमें मेरी दिलजमई करनेका मार्ग अभी भी खुला पड़ा है। यहाँ मैं उन्हें थोड़ी-सी 'न करनेवाली बातों' की सूचना दिये देता हूँ:

[मेरे] शरीरसे ६ घंटेसे ज्यादा काम न लें।
सभाओंमें या और जगहोंमें शोर न मचायें।
जुलूस न निकालें।

दिखावटी वस्तुओंके पीछे न दौड़ें।

एक दिनमें बहुत-सारे कार्यक्रम निश्चित न करें।

[मेरे] शरीरको उन जगहोंपर न ले जायें जहाँ न तो द्रव्य मिलनेका ही प्रबन्ध हो और न कोई दूसरा ऐसा काम ही हो जिसका कि यात्राके हेतुसे कोई सम्बन्ध हो।

किसी व्यक्तिकी सनक अथवा किसीके स्वाभिमानकी तृप्तिके लिए [मेरे] शरीरको कहीं मत ले जाइए।

[मेरे] शरीरको बहुत जगहोंपर मत ले जाइए।

शरीरको केवल मिट्टीका लोंदा समझनेकी भूल कभी न करिए; इसमें शक नहीं कि वह मिट्टीका लोंदा है, फिर भी उसमें एक ऐसा छोटा-सा चेतनामय प्राणी निवास करता है जो शरीररूपी पार्थिव ढाँचेके साथ की जानेवाली हर चीजको बारीकीसे देखता रहता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ७-३-१९२९

८०. लालाजी-स्मारक

स्मारकके लिए धन संग्रह करनेके मामलेमें सिन्धको छोड़कर और दूसरे प्रान्तोंके परिणाम बड़े निराशाजनक रहे हैं। यहाँतक कि पंजाब भी अभी उस आशाको पूरी नहीं कर पाया है जो उससे रखी जाती है। यह उम्मीद रखनी चाहिए कि पंजाबको किसी बाहरी प्रेरणाकी आवश्यकता नहीं है। पंजाबको न केवल उससे की जानेवाली सारी आशाओंको ही पूरा करना है बल्कि उसे तो स्मारकके लिए की गई अपीलका तुरन्त उत्तर देकर दूसरे प्रान्तोंपर भी उचित प्रभाव डालना है। ऐसे मामलोंमें फुर्ती दिखानेमें जो शोभा होती है, वह सुस्ती दिखानेसे यों ही आधी रह जायेगी।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ७-३-१९२९

८१. समृद्धि-प्रदायिनी

मैं 'दुग्ध शालाओं'के बारेमें श्रीयुत तालमकीके निबन्धमें से यहाँ कुछ दिलचस्प उद्धरण दे रहा हूँ।[1] इन पृष्ठोंमें गोरक्षाके एकमात्र उपायके बारेमें जो-कुछ पहले कहा जा चुका है, ये उद्धरण उसकी पुष्टि करते हैं। राव बहादुर साहबने दुग्ध-शालाओंको एक पूरक धन्धेके रूपमें लेखकर ही उसपर विचार किया है। निस्सन्देह पूरक धन्धेके रूपमें भी दुग्धशालाओंका उपयोग काफी महत्त्वपूर्ण है। परन्तु गो-रक्षाके बृहत्तर उद्देश्यमें एक यह सीमित उद्देश्य भी शामिल है कि एक पूरक धन्धा ही नहीं बल्कि अनेक ऐसे पूरक धन्धे खोजे जायें जो पाठकोंको सूझ पड़ें। मुख्य रोगका उपचार मालूम होनेके बाद अगला काम उस उपचारको प्रयोगमें लानेका तरीका ढूँढना है। और किसी भी समझदार व्यक्तिको यह समझनेमें जरा भी देर नहीं लगेगी कि इसका एकमात्र तरीका यह है कि ऐसी प्रौढ़-शिक्षाकी व्यवस्था की जाये जो हमारी जानीमानी उन खामियोंको दूर करनेमें सहायक हो जिनको सब लोग शीघ्रातिशीघ्र खुशी-खुशी दूर करना चाहेंगे। शिक्षाका रूप यही हो सकता है कि आदर्श किस्मकी दुग्धशालाओं, चमड़ा पकानेके कारखानों और नस्ल सुधारनेके प्रजनन-केन्द्रोंको चलाकर इनका व्यावहारिक प्रदर्शन किया जाये। मैं इन पृष्ठोंमें सिद्ध कर चुका हूँ कि ये तीनों काम सम्मिलित रूपसे लाभकारी ढंगसे चलाये जा सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ७-३-१९२९

८२. भूल सुधार

अपने सिन्धवाले पत्रमें [प्यारेलाल]ने भूलसे लिख दिया था कि राष्ट्रीय ध्वज हैदराबादमें प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके कार्यालयपर फहराया गया था और यह कि प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके पास अपना भवन है। तथ्य यह है कि ध्वजारोहण समारोह जिला कांग्रेस कमेटीके कार्यालयमें सम्पन्न हुआ था और इसी जिला कांग्रेस कमेटीके पास अपना भवन है। सिन्ध प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीका प्रधान कार्यालय कराचीमें है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ७-३-१९२९

१. उद्धरण यहाँ नहीं दिये गये हैं।

८३. 'धरोहर है'

श्री पेनिंगटनकी उम्र ९० वर्षकी है। उनसे किसीका चाहे जितना मतभेद हो फिर भी उनकी सचाईके विषयमें दो मत नहीं हो सकते। वह मुझे सदा पत्र लिखा करते हैं और समय-समयपर मुझे चेतावनी देनेसे कभी नहीं थकते। उनकी अभी हालकी चेतावनी यों है:

> **मैंने अभी-अभी 'कांग्रेसमें प्रवेश' शीर्षकसे आपका लेख (३ जनवरीके अंकके ५ वें पृष्ठ पर)[1] पढ़ा। इस सालके अन्तमें (?) स्वराज्य प्राप्त करने सम्बन्धी आपके विश्वासकी बात पढ़कर मेरी उलझन पहलेसे भी ज्यादा बढ़ गई है। चाहे जिस तरह क्यों न हो, भारत आज ग्रेट-ब्रिटेनके अधिकारमें है — कुछ लोग, जिनमें मेरे पुराने सहायक स्वर्गीय सर जॉन रीस एम० पी० भी हैं, उसे विजयजन्य अधिकार (जैसा कि उसे पंजाबके मामलेमें हासिल है) के कारण अपने अधीन समझते हैं। लेकिन हममें से बहुतसे, मुझे आशा है, अपनेको भारतकी सारी आबादीका खासकर निचली श्रेणीके लोगोंका, न्यासी समझते हैं; और एक न्यासीकी हैसियतसे हमें अपने न्यासको छोड़ देनेका कोई अधिकार नहीं है, सिवा इसके कि हम किन्हीं योग्य हाथोंमें अपने इस कार्यको सौंप दें जिसे हमने अभी-अभी आरम्भमात्र किया है। क्या आपकी राष्ट्रीय कांग्रेस गणतन्त्रका आप जैसा अध्यक्ष पाकर भी इस तरहकी एक संस्था हो सकती है? मैं तो सचमुच यही सोचता हूँ कि इस कामके लिए आप ही एकमात्र योग्य व्यक्ति हैं। लेकिन क्या आप इस जिम्मेदारीके कार्यको ब्रिटिश-सेनाके साथ या बिना उसके मंजूर करेंगे? अगर आप शान्ति बनाये रखनेमें कामयाब न हुए तो क्या होगा?**
>
> **एक छोटी-सी बातके लिए क्षमा चाहता हूँ: इस समय मेरी उम्र ९० वर्षकी है और अब मैं सांसारिक प्रपंचोंकी चिन्तासे मुक्त-सा हूँ; लेकिन आजसे नहीं बल्कि सन् १८६१ से मुझे इंग्लैंडसे ज्यादा दिलचस्पी भारतके मामलोंमें रही है। एक बार फिरसे सारे भारतके दुःखोंसे आपके निर्विघ्न छुटकारेकी कामना करता हूँ और आशा करता हूँ कि आप प्रस्तुत उलझनको और ज्यादा उलझानेसे बाज आयेंगे।**

कोई श्री पेनिंगटन-जैसे आदमियोंको किसी तरह समझाये कि हम धरोहरवाली बात को नहीं मानते और यदि मत-गणना की जाये तो जिन्हें वे 'निचली श्रेणीके लोग' कहते हैं वे भी इस बातको मंजूर नहीं करेंगे। मैं इन निचली श्रेणीके लोगोंको जानता हूँ; औरोंकी अपेक्षा अधिक जाननेका दावा करता हूँ। मैं साहसपूर्वक कहता

१. *यंग इंडिया*में; देखिए खण्ड १९, *आत्मकथा*, भाग ५, अध्याय ३८।

हूँ कि ब्राण्डीकी बोतलके पतनकारी प्रभावमें जो लोग आ गये हैं उन्हें छोड़कर देशकी विशाल बहुसंख्यक जनता उन स्वयंनियुक्त संरक्षकोंसे रक्षा करानेकी इच्छा नहीं रखती है। इसे चाहे संरक्षा कहिए या विजय, लेकिन इस संरक्षणको लोगोंपर थोपा गया है और शक्तिशाली उपायों द्वारा इसे बल प्रदान किया गया है। इस कारण अंग्रेजोंका अपने-आपको भारतके विजेता कहना या संरक्षक कहना हमारे लिए कोई मूल्य नहीं रखता। हमें तो वस्तुसे मतलब है, उसके वर्णनसे सरोकार नहीं। ऐसी हालतमें पता नहीं कि श्री पेनिंगटन वर्षके आखिरमें स्वराज्यकी मेरी बातसे पहलेसे भी ज्यादा अचरजमें क्यों पड़ गये! अचरज तो यह है कि भारतके ३० करोड़ लोग आज अपनी सम्पत्ति खोये बैठे हैं और लुटेरोंके हाथोंसे उसे छुड़ानेकी अपनी ताकतमें भी उन्हें विश्वास नहीं है, भले ही ये लुटेरे विजेता कहे जायें या संरक्षक। अगर मैं किसी तरह अपना आत्मविश्वास कांग्रेसवालोंमें भर सकूँ और पुनः स्वतन्त्रता पानेकी अपनी योग्यताका उन्हें भान करा सकूँ तथा उसे पानेके तरीकेकी सचाईपर उनकी श्रद्धा जमा सकूँ तो १२ महीनोंमें से शेष १० महीने ही इस कामके लिए काफीसे ज्यादा साबित हो सकते हैं। अतः मैं श्री पेनिंगटनसे कह देना चाहता हूँ कि न तो सेनाबल और न उदारताके कारण ही भारत ग्रेट-ब्रिटेनके अधीन है बल्कि वह अधीन इसलिए है कि भारतकी सन्तानमें अभी आत्मविश्वासकी कमी है और यही सारी विपत्तिकी जड़ है। जिस दिन जनतामें इस आत्मविश्वासका उदय होगा, अद्भुत घटनाएँ घटेंगी और इस आत्मविश्वासके आते ही सारी दुनियाके साथ-साथ श्री पेनिंगटन-जैसे अंग्रेज भी हमारी सम्पत्तिपर हमारे अधिकारकी क्षमताको मंजूर करने लगेंगे। ९० सालके होते हुए भी उस मंगल दिवसको देखनेके लिए जिन्दा रहनेकी अपनी क्षमतापर श्री पेनिंगटन अविश्वास न करें। क्योंकि मैं सच कहता हूँ कि जब वह दिन आयेगा तब श्री पेनिंगटन, जो इस लूटको 'धरोहर' का नाम देते हैं और यह नहीं चाहते कि अंग्रेज लोग इसे छोड़ें, —वह भी हर्षका अनुभव करेंगे।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ७-३-१९२९

८४. सुदूर दक्षिणमें हिन्दी

त्रावणकोरकी राजधानी त्रिवेन्द्रमसे सौ मीलसे कुछ अधिक दूरीपर कन्याकुमारी-का स्थान है, जहाँ हिन्द महासागर बंगालकी खाड़ीसे मिलता है और दोनोंकी संयुक्त जलराशि भारत माताके चरणोंको धोती रहती है। उसी त्रिवेन्द्रमसे केरल प्रान्तीय हिन्दी प्रचार-परिषद्के सभापति श्रीयुत के० जी० शेष अय्यर लिखते है कि परिषद्का अधिवेशन पिछली १० फरवरीको एर्नाकुलम (कोचीन)में हुआ था और वहाँ नीचे लिखा प्रस्ताव सर्वसम्मतिसे पास किया गया :

> **यह परिषद् गांधीजी और सेठ जमनालाल बजाजके प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करती है क्योंकि ये दोनों महानुभाव दक्षिण भारतमें हिन्दी-प्रचार आन्दोलनको बढ़ानेके लिए और हिन्दीको भारतकी राष्ट्र-भाषा बनानेके लिए**

अथक परिश्रम कर रहे हैं। परिषद् भारतके तमाम देशभक्त पुत्रों और पुत्रियोंसे आग्रह करती है कि वे स्वयं हिन्दी भाषा सीखें और केन्द्रीय कोषमें चन्दा दें और इस प्रकार इस आन्दोलनकी सहायता करें।

उक्त प्रस्तावको श्रीयुत ए० शंकर पुडुवाल, बी० ए०, बी० एल० ने प्रस्तुत किया था। श्री एच० करुणाकर नैयरने उसका अनुमोदन और श्री एच० डी० कामतने समर्थन किया था।

इस प्रस्तावको प्रकाशित करके मैं अपना, सेठ जमनालालजीका या प्रस्तावसे सम्बन्धित लोगोंका विज्ञापन नहीं कर रहा हूँ। दक्षिणमें हिन्दी-प्रचारके बारेमें मुझे कितनी दिलचस्पी है सो हर कोई जानता है। जब मैं १९१५ में भारत लौटा उसके पहले ही से सेठ जमनालालजी हिन्दीके पक्के प्रेमी बन चुके थे। दक्षिण भारतकी उनकी यात्राने वहाँके हिन्दी-प्रचारके कार्यको नया उत्तेजन दिया है। प्रस्तावको पेश करने-वालोंको उनके कार्यका पुरस्कार उसी समय मिल गया जब वे अपने परिचित श्रोताओं-के सामने प्रस्तावको पेश करने, उसका अनुमोदन और समर्थन करने खड़े हुए थे। प्रस्तावके साथ ही उनके नाम छापनेका आशय केवल सार्वजनिक रूपसे यह आशा व्यक्त करना है कि जिन सज्जनोंका प्रस्तावसे सम्बन्ध है, वे खुद प्रस्तावकी दो मुख्य बातोंका पालन करते हैं, यानी वे स्वयं हिन्दी सीख रहे हैं और धनसे केन्द्रीय कोषकी सहायता भी कर रहे हैं। मैं इस घटनाको लेकर एक मोटी बातकी छाप लोगोंके दिलपर डाल देना चाहता हूँ। जहाँतक इन सज्जनोंका सम्बन्ध है, यह बहुत सम्भव है कि वे हिन्दीके ज्ञाता हैं और केन्द्रीय कोषमें बराबर चन्दा देते रहते हैं। लेकिन इस बातसे अभी हम इनकार नहीं कर सकते कि आज भी हममें ऐसे प्रस्ताव पेश करने, उनका समर्थन करने और उन्हें पास करनेकी आदत बनी हुई है, जिन्हें हम खुद कभी अमलमें लानेकी इच्छा नहीं रखते। अगर हम उन प्रस्तावोंका समर्थन न करें, उनके अनुकूल मत न दें जिन्हें अमलमें लानेकी न तो हमारी इच्छा है और न योग्यता ही, तो मैं समझता हूँ, इससे हम राष्ट्रकी प्रगतिमें सहायक होंगे और अपना बहुत-कुछ समय और कष्ट बचा सकेंगे। मुझे मालूम है कि जहाँ-जहाँ सेठ जमना-लालजी और श्रीयुत राजगोपालाचारी गये हैं वहाँकी सभाओंमें पूर्वोक्त प्रस्ताव जैसे प्रस्ताव पास किये गये हैं। अगर उन-उन स्थानोंके सब सज्जन इन प्रस्तावोंपर उसी ढंगसे अमल भी करने लगें तो हिन्दी-प्रचारका काम दिन दूना, रात चौगुना बढ़ने लगे और उसे धनकी भी कमी न रहे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ७-३-१९२९

८५. राष्ट्रीय झंडा

अहमदाबाद नगरपालिकाके टाउन हॉलपर राष्ट्रीय झण्डा फहरानेका जो समारोह उस दिन हुआ था उसने इस सम्बन्धमें मेरे गुजराती पत्रलेखकोंके दो पत्रोंकी स्मृतिको फिरसे ताजा बना दिया है। अहमदाबादकी नगरपालिकाने अपने टाउन हॉलपर राष्ट्रीय झंडा लगा कर जिस साहस और देश-प्रेमका परिचय दिया है उसके लिए मैंने ध्वजारोहण समारोह सम्पन्न करते समय उसे बधाई दी थी[1]; इन पत्रोंकी बातपर आनेसे पहले मैं उसे फिरसे बधाई देता हूँ। कुछ ही साल पहले इस तरहकी कार्रवाई असम्भव मानी जाती थी। अहमदाबादकी नगरपालिकामें सरदार वल्लभ-भाईके साहसपूर्ण कार्यसे यहाँके टाउन हॉलपर राष्ट्रीय झंडेका फहराना और नगर-पालिकाके एकमात्र सार्वजनिक उद्यानमें लोकमान्य तिलककी कांस्य-प्रतिमाकी स्थापना करना न केवल सम्भव ही बल्कि सहज हो गया। अब मैं यही आशा करता हूँ कि नगरपालिकाके सदस्य और अहमदाबादके नागरिक अपने राष्ट्रीय झंडेको कभी झुकने नहीं देंगे और उसके सम्मान और गौरवके अनुरूप व्यवहार करेंगे। साथ ही अपने नगरके उद्यानमें लोकमान्यकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा कर चुकनेके बाद अब वे तबतक सन्तुष्ट नहीं होंगे जबतक लोकमान्यका दिया हुआ स्वराज्य-मन्त्र हमारे लिए एक सजीव सत्य न बन जाये।

लेकिन उल्लिखित पत्रलेखकोंमें से एक कट्टर राष्ट्रप्रेमीका कथन है कि कांग्रेसके कार्यकर्त्ता और कांग्रेस कमेटियाँ राष्ट्रीय झंडेके उपयोगमें मनचाही स्वतन्त्रतासे काम लेती हैं। उनकी शिकायत है कि कुछ लोग झंडेमें तीन रंग नहीं रखते, कुछ चरखेको छोड़ देते हैं और कुछ ऐसे भी हैं जो हाथबुनी खादीके बजाय राष्ट्रीय झंडेके लिए विदेशी कपड़ेका उपयोग करते हैं। वह सच ही कहते हैं कि झंडेके सम्बन्धमें लोगोंका यह व्यवहार, फिर वह अनजानमें ही क्यों न हो, उसकी प्रतिष्ठाको घटानेवाला है। दूसरे पत्रप्रेषक झंडेका रूप-रंग, आकार-प्रकार आदि जैसा कुछ तय हुआ है उसका बारीकी के साथ अनुसरण करनेका आग्रह करते हैं। उनका कहना है कि तीनों रंगोंके क्रम का पालन सर्वत्र एक सरीखा होना चाहिए। इसी तरह झंडेपर चरखा निश्चित स्थान पर होना चाहिए। मैं इसमें इतनी बात और बढ़ा देता हूँ कि रंगकी पट्टियाँ आड़ी हों, खड़ी नहीं। लम्बाई और चौड़ाईके मापका पारस्परिक सम्बन्ध भी निश्चित होना चाहिए। चौड़ाईसे उसकी लम्बाई दुगनी होनी चाहिए। ऊपरी सिरेपर सफेद रंग हो, उसके बाद हरा और फिर लाल। लाल रंग भारतकी बहुसंख्यक आबादीका प्रतीक है। हिन्दू और मुसलमानोंको छोड़कर देशमें और जो अल्पसंख्यक लोग बसे हैं सफेद रंग उनका प्रतीक है। उनकी रक्षाका संयुक्त भार और हिन्दू मुसलमानोंपर है और इसी कारण उनका स्थान सर्वोपरि है। इसी तर्कके अनुसार मुस्लिम अल्प-

१. देखिए "भाषण: ध्वजारोहण समारोहपर, अहमदाबादमें", २८-२-१९२९।

संख्याका झंडेमें दूसरा नम्बर है। चरखा झंडेके बीचोंबीच इस तरह बनाया जाये कि वह तीनों रंगोंको छूता रहे।

कार्यसमितिकी पिछली बैठकमें झंडेके बारेमें अनौपचारिक ढंगसे चर्चा हुई थी। मैंने समितिका ध्यान झंडे सम्बन्धी अनियमितताओंकी ओर खींचा था और यह भी बतलाया था कि राष्ट्रीय झंडेकी विशेषताओंकी व्याख्या करनेवाला कोई भी प्रस्ताव न तो कार्यसमितिमें ही उठाया गया है और न अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीमें ही। इसपर सदस्योंकी जो राय मालूम पड़ी वह यह थी कि झंडेमें तीन रंग हों। उसमें चरखा बना हो और झंडा खादीका हो। ये तीनों चीजें इतनी बद्धमूल हो गई हैं कि अब करीब-करीब उसने नियमका रूप धारण कर लिया है और जो कोई किसी दूसरे ढंगका झंडा बनाता या काममें लाता है, स्पष्ट ही उस नियमके भंगका दोषी है।

इस स्थितिको देखते हुए मैंने सुझाया है कि कांग्रेसकी ओरसे विभिन्न आकारके झंडे तैयार कराये जायें और देश-भरके भंडारोंमें बिक्री तथा प्रचारके लिए रखे जायें। इस तरह सही ढंगके और सस्ते झंडे सुलभ हो जायेंगे। सबसे सरल और लाभदायक तरीका तो यह है कि अखिल भारतीय चरखा संघ ऐसे झंडे तैयार कराये और कांग्रेसकी ओरसे उन्हें अपने भण्डारोंमें बिक्रीके लिए रखे। चूँकि किसी भी कांग्रेस कमेटीका अखिल भारतीय चरखा संघसे सस्तेपनमें स्पर्धा करना असम्भव है इसलिए सारे भारतमें इन झंडोंकी बिक्री खूब बढ़ सकेगी। इसमें हमें यह बात पहले ही से मान कर चलना पड़ेगा कि राष्ट्रीय जागृतिका आरम्भ हो चुका है और तमाम कांग्रेसवालों द्वारा तथा कांग्रेस संगठनों द्वारा झंडेकी शुद्धताका पूरा-पूरा खयाल रखा जाता है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ७-३-१९२९

८६. विदेशी कपड़ोंका बहिष्कार

मेरे लिए यह अत्यन्त हर्षका विषय है और मुझे आशा है कि हर राष्ट्रप्रेमीको इस बातसे खुशी होगी कि श्रीयुत जयरामदासने विदेशी कपड़ा बहिष्कार समितिकी ओरसे किये मेरे आह्वानपर इस समितिका मन्त्री-पद बड़ी तत्परतासे स्वीकार कर लिया है, और उन्होंने बम्बई विधान परिषद्की सदस्यता त्याग दी है जो कि वैसा करनेके लिए जरूरी था। जयरामदास उन लोगोंमें से हैं जो कोई काम तबतक नहीं उठाते जबतक उसमें उनका विश्वास न हो। इसलिए इस आन्दोलनमें पूरा समय देनेका उनका फैसला मेरी रायमें इस आन्दोलनको एक बहुत बड़ा लाभ है। यदि जनता भी विदेशी कपड़ा बहिष्कार समिति द्वारा समय-समयपर किये जानेवाले आह्वानोंका इसी तत्परतासे जवाब देगी तो सारा देश कुछ ही महीनोंके अन्दर निश्चित प्रगति दिखा सकेगा। बहिष्कारको जनताका संकल्प-बल प्राप्त हो तो केवल सावधानीके साथ संगठन करनेकी ही जरूरत रह जाती है।

खादीका उत्पादन और उसकी बिक्री, ये दोनों काम साथ-साथ करने होंगे। जब भी जनता विदेशी कपड़ोंका बहिष्कार करनेका सचमुच इरादा कर लेगी, उस समय खादीकी जबर्दस्त माँग पैदा हो जायेगी। यदि खादीकी भावी माँगको ध्यानमें रखते हुए उत्पादन भी उसी हिसाबसे बढ़ाया नहीं गया, तो खतरा इस बातका है कि कहीं लोगोंमें गहरी निराशा न पैदा हो जाये और महज खादीकी कमीके कारण बहिष्कारकी सम्भावनापर से उनका विश्वास न उठ जाये। इसलिए यह जरूरी है कि जनता अपनी आवश्यकतासे अधिक खादी न खरीदे। लोगोंको अपनी जरूरतें यथासम्भव कमसे-कम कर देनी चाहिए।

मैं जानबूझकर देशी मिलोंके बारेमें चुप्पी साधे बैठा हूँ, क्योंकि मुझे इस बातका पक्का भरोसा है कि यदि हमने मिलोंपर ही भरोसा किया तो मिलें, अपनी जिस मर्यादाके अन्दर उन्हें काम करना पड़ता है उसके कारण, हमें आखिरकार निराश ही करेंगी। दूसरे, मिलोंका खास हेतु तो मुनाफा कमाना है, फिर चाहे उनके मुनाफेकी आयके कारण राष्ट्रको हानि ही हो। इस कारण, मिलें जनताको लूटने और दो कदम आगे बढ़कर स्वदेशीके नामपर विलायती कपड़ा बेचनेमें भी कोई संकोच नहीं करेंगी। मैं इन पृष्ठोंमें पहले कई बार बतला चुका हूँ कि किस तरह मिलें अपना कपड़ा खादीके नामपर बेचती और जनताको ठगती हैं।[1] साथ ही, एक बात यह भी है कि देशकी सारी मिलें स्वदेशी नहीं है; जिस तरह हमारी वर्तमान सरकारका निवास यहाँ होनेपर भी वह स्वदेशी सरकार नहीं है उसी तरह कई मिलें भारतमें स्थित होते हुए भी स्वदेशी मिलें नहीं हैं। उनमें से कुछ तो हर मायनेमें विलायती हैं। विदेशी भागीदारोंकी एकदम विदेशी पूंजीपर ही विदेशियों द्वारा ये मिलें चलाई जाती हैं और इनका प्रबन्ध किया जाता है। इनकी हस्ती ही देशमें इस बातके लिए है कि ये देशकी सम्पत्तिके साधनोंको सदा लूटती रहें। बड़ी अनिच्छापूर्वक जो एक काम ये मिलें करती हैं वह है इन मिलोंमें देशकी सस्ती मजदूरीका उपयोग; और ऐसा करके वे अपने स्वदेशीपनपर देशकी भोलीभाली जनताका विश्वास जमाती हैं।

लेकिन इससे मेरा यह मतलब नहीं है कि मिलें बहिष्कार-आन्दोलनमें किसी तरहका भाग ही न लेंगी। वे भाग तो लेंगी, लेकिन परिस्थितिके दबावसे और लाभ देखकर ही। कांग्रेसवालोंके लिए एक-साथ भारतके हरएक देहातमें पहुँचना सम्भव न होगा। हम तो कस्बों और उनके आसपासके देहातोंतक ही पहुँचेंगे। किन्तु मिलोंकी पहुँच तो भारतके हरएक गाँवमें है। देशमें जो नया वायुमण्डल तैयार होगा उसके कारण देहातवाले मिलोंके एजेंटोंकी मुँहजोई करने लगेंगे और एजेंट लोग स्वदेशीके नामपर मिलोंकी जो भी चीज उन्हें देंगे, वे खरीदेंगे। इस सम्बन्धमें कांग्रेसवालोंको सदा सावधान रहना पड़ेगा। देशमें कुछ देश-प्रेमी मिलें ऐसी भी हैं जो अपनी सीमाओंके कारण अगर आन्दोलनमें सक्रिय सहायता नहीं पहुँचायेंगी तो देशको ठगनेमें भी हाथ नहीं बँटायेंगी। मुझे तो विश्वास है कि वह समय आयेगा और कुछ ही महीनोंमें आयेगा जब मिलोंको निर्णय करना पड़ेगा और पिछले साल

१. देखिए खण्ड ३६, पृष्ठ २०१-३ और ३२१-२।

जो शर्तें उनके सामने रखी गई थीं उन्हें मंजूर करना पड़ेगा। लेकिन यह भी तभी होगा जब जनता विदेशी-वस्त्र बहिष्कारके लिए दृढ़ संकल्प कर लेगी और उसके बदले देशको सच्ची खादीसे पाट देनेपर तुल जायेगी। खादीके विस्तारकी कोई सीमा नहीं है; क्योंकि हमारे पास मनुष्योंके रूपमें करोड़ों तकुए और लाखों करघे हैं। केवल जिस एक बातकी जरूरत है वह है काम करनेकी इच्छा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ७-३-१९२९

८७. 'सतलज' जहाजकी दुःखद घटना

'सतलज' जहाजकी दुःखद घटनासे सम्बन्धित मेरे लेखके बारेमें कलकत्तासे डा० मेननने निम्नलिखित पत्र लिखा है:[1]

मेरी रायमें इस जोरदार पत्रसे पता चलता है कि हालातको मैं जितना खराब समझता था वे उससे कहीं ज्यादा खराब हैं। लेकिन मैं जहाजके कप्तान और अफसरोंको उतनी आसानीसे दोषमुक्त नहीं कर सकता जितनी आसानीसे डा० मेननने किया है। जहाजका हर कप्तान अपनी देख-रेखमें जहाजपर यात्रा करनेवाले यात्रियोंकी भलाई-बुराईके लिए निश्चय ही जिम्मेदार होता है। मैं ऐसे सहृदय कप्तानोंको भी जानता हूँ जिन्होंने कठिन परिस्थितियोंमें भी अपने यात्रियोंको यथासम्भव सुखी बनानेकी कोशिश की, और मैं ऐसे निर्मम कप्तानोंको भी जानता हूँ जो अपने जहाजके यात्रियोंका जीवन अकारण दुखी बना देते हैं। जहाजके अफसरोंकी उपेक्षाके कारण अक्सर यात्रियोंकी हालत असहनीय हो जाती है। लेकिन मेरा उद्देश्य लोगोंके दोषकी मात्रा निर्धारित करना नहीं था। मेरे लिए इतना दिखला देना ही काफी था कि इस मामलेको केवल इसीलिए समाप्त हुआ नहीं माना जा सकता क्योंकि सरकार उसकी एक जाँच करा चुकी है — ऐसी जाँच जिसे निष्पक्ष नहीं कहा जा सकता।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ७-३-१९२९

१. यह पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। "अमानुषिक प्रणाली", ७-२-१९२९ (खण्ड ३९) के सिलसिलेमें डा० मेननने लिखा था कि प्रवासियोंके प्रबन्धकी सीधी और पूरी जिम्मेदारी जहाजके कप्तान पर नहीं बल्कि जहाजके सर्जन-सुपरिंटेंडेंटपर ही थी और जहाज बिलकुल अनुपयुक्त थे तथा इस अमानुषिक व्यवस्थाके लिए सरकार दोषी थी।

८८. पूरक धन्धेके रूपमें चरखा

मेरे सामने पूरक धन्धोंके विषयपर एक निबन्धकी प्रति है, जिसे बम्बई प्रान्तीय सहकारिता संस्थाके अवैतनिक मन्त्री राव बहादुर एस० एस० तालमकीने पढ़ा था। यह एक सुविस्तृत प्रबन्ध है जिसमें ऐसे अधिकांश धन्धोंके ऊपर विस्तारसे विचार किया गया है जिन्हें समय-समयपर गाँवोंमें पूरक धन्धोंके रूपमें लागू करनेके सुझाव दिये गये हैं। उन्होंने कुछको अस्वीकार कर दिया है और कुछको सम्भव माना है। जिन पूरक धन्धोंको उन्होंने सम्भव माना है और जिनकी उपयोगिता वह स्वीकार करते हैं, उनमें वह हाथ-कताईका भी उल्लेख करते हैं और इसके बारेमें उन्होंने जो कई अनुच्छेद लिखे हैं मैं चाहूँगा कि उन्हें हाथ-कताईके प्रति शंकालु व्यक्ति ध्यान-पूर्वक पढ़ें। मैं उन्हें नीचे उद्धृत करता हूँ :[१]

राव बहादुर साहबको शायद ज्ञात है कि गाँवमें आत्म-निर्भरताके आधारपर हाथ-कताईको संगठित करनेका जो सुझाव उन्होंने दिया है उसकी ओर अखिल भारतीय चरखा संघ पहले ही पूरा ध्यान दे रहा है। मैं उनका ध्यान बिजौलिया और बारडोलीके उदाहरणकी ओर आकृष्ट करता हूँ। लेकिन साथ ही नगरोंकी उपेक्षा नहीं की जानी चाहिए। आजकल शहरी जीवन ग्रामीण जीवनपर इस तरह हावी है कि जबतक शहरके लोग खादीका फैशन न चला दें तबतक गाँववालोंको कातनेके लिए, यहाँतक कि अपने ही हितमें और केवल अपने ही उपयोग-भरके लिए राजी करना अत्यन्त कठिन हो जाता है। खर्चका सवाल भी वैसा सरल नहीं है जैसा कि राव बहादुर साहब समझते हैं। कपासके सटोरियों और विदेशी खरीदारोंने कपासके मूल्यों और कपासकी खेतीमें ऐसी धुंधमारी मचा दी है कि गाँववालोंके लिए कपास खरीद कर उससे कपड़ा बुनवाना ज्यादा महँगा पड़ता है और बना-बनाया कपड़ा खरीदना ज्यादा सस्ता पड़ता है। यह बात विचित्र भले ही लगे लेकिन कभी-कभी ऐसा होता है कि एक गज विदेशी कपड़ेका मूल्य एक गज हाथ-बुने कपड़ेकी बुनाईकी लागतके बराबर बैठता है और कभी-कभी तो बुनवाई और कपासकी लागत ही उस एक गज विदेशी कपड़ेके मूल्यके बराबर होती है। मैं इन बारीकियोंमें नहीं जाऊँगा। एक व्यावहारिक कतवैयेके नाते मैं तो कताई-उद्योगकी कठिनाइयोंका ही जिक्र कर रहा हूँ जिसे न केवल सरकारी सहायता प्राप्त नहीं है, बल्कि प्रच्छन्न रूपसे सरकारकी तरफसे उसका विरोध ही है, और उसकी ओरसे उदासीनता तो बराबर बनी ही हुई है। इसीलिए हाथ-कताईको आरम्भिक अवस्थामें सरकारी सहायता और शहरके लोगोंके संरक्षणकी आवश्यकता है। इसके सिवाय, आज लोकतन्त्रके जमानेमें यदि शहरों और गाँवोंके बीच अन्तर किया गया तो गाँववाले खादीके दर्शन और सत्यको नहीं समझेंगे। और अन्तमें चूँकि कताई-उद्योगके क्षेत्रमें पहल करनेवाले लोग शहरोंसे

१. ये उद्धरण यहाँ नहीं दिये गये हैं।

ही प्राप्त होने हैं, इसलिए शहरोंमें खादीके वातावरणका होना अत्यावश्यक है ताकि यह सुधार, जिसकी आवश्यकता राव बहादुर साहबने इतने अच्छे ढंगसे सिद्ध कर दी है, राष्ट्रीय पैमानेपर लागू हो सके।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ७-३-१९२९

८९. पत्र: होरेस जी० अलेक्जेंडरको

स्थायी पता:
आश्रम
साबरमती
७ मार्च, १९२९

प्रिय मित्र,

मुझे आपका पत्र मिला और डा० वाघनकी किताब भी। मैंने पुस्तिका पढ़ डाली है। कुमारी मेयोकी किताब और डा० वाघनके निबन्धमें कोई तुलना नहीं है। यह एक पेचीदे सवालके बारेमें बहुत गम्भीर और विचारपूर्ण पुस्तिका है। मेरा विचार 'यंग इंडिया' में इसका उपयोग करनेका है।

मुझे याद नहीं कि मैंने आपको पहले सूचित किया या नहीं कि आपका पत्र मिलनेके कुछ महीनों बाद मुझे क्वेकर-समाजसे सम्बधित वे पुस्तकें मिल गई थीं, जिनका आपने जिक्र किया था। इस उपहारके लिए मैं आपका कृतज्ञ हूँ।

अब आपको ज्ञात हो गया है कि मुझे यूरोप जानेका विचार क्यों छोड़ना पड़ा।

अपनी पत्नीके बारेमें लिखी गई बातोंको मैंने देखा नहीं है,[1] लेकिन मैं आपको बतला सकता हूँ कि हम दोनोंके बीच अत्यन्त प्रेमपूर्ण सम्बन्ध है। यदि उन पुस्तकोंसे आपको ऐसा लगा हो कि मेरी पत्नी बुद्धिपूर्वक मेरा अनुसरण नही करती, तो यह बिलकुल सच है। उसकी निष्ठा अद्‌भुत है और मेरे जीवनमें जो भी परिवर्तन हुए हैं उन सबमें उसने मेरा साथ दिया है। मेरा अपना दृढ़ विश्वास है कि भारतीय पुरुष भारतीय स्त्रियोंके लिए जो आदर-भाव रखते हैं, वह पश्चिममें पुरुषों द्वारा स्त्रियोंके प्रति महसूस किये जानेवाले आदर-भावके बराबर ही है; लेकिन यह जरा भिन्न ढंगका है।[2] पश्चिममें महिलाओंके लिए पहला स्थान छोड़ देनेका चलन और उनका आदर करनेके ऐसे ही अन्य कई प्रचलित तरीके मुझे अत्यन्त कृत्रिम मालूम होते हैं, और कभी-कभी तो पाखंडपूर्ण भी। तथापि हम अपनी स्त्रियोंके साथ जैसा व्यवहार करते हैं उसमें बहुत-कुछ आलोचना योग्य है। कुछ नियम खराब हैं, कुछ पति

१. ५ फरवरी के अपने पत्रमें श्री अलेक्जेंडरने लिखा था कि कुछ किताबोंको पढ़नेसे उनके मनपर यह छाप पड़ी है कि गांधीजी और कस्तूरबामें "सदैव मतैक्य नहीं रहता"।

२. अलेक्जेंडरने अन्य बातोंके अलावा यह लिखा था कि "... पूर्वको समझनेके मामलेमें सबसे बड़ी बाधा पश्चिमके लोगोंका यह विश्वास है कि पश्चिममें हम लोग अब स्त्रियोंके प्रति जो आदर-भाव रखना सीख रहे हैं, वैसा आदर-भाव रखना पूर्वके पुरुषोंने नहीं सीखा।" (एस० एन० १५३२९)।

राक्षस होते हैं, कुछ माता-पिता अपनी लड़कियोंके प्रति एकदम निष्ठुर होते हैं। इन मामलोंमें आपसी समझदारीके लिए मेरी रायमें सहिष्णुता ही कुंजी है। कोई सामाजिक नियम या व्यवस्था कितनी ही सराहनीय क्यों न हो, उसके अपने कुछ दोष अवश्य होते हैं। मैं जानता हूँ कि आपमें इतनी उदारता है कि आप इस अनुच्छेदका यह अर्थ नहीं लगायेंगे कि मैं अपने यहाँके पुरुषों द्वारा अपनी स्त्रियोंके साथ किये जानेवाले उस व्यवहारका बचाव कर रहा हूँ जो कि न्यायके स्तरसे बहुत नीचा पड़ता है। मुझे जैसा लगा है, बस वैसा ही मैंने आपको लिख दिया है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी (जी० एन० १४०६)की फोटो-नकलसे।

९०. पत्र : टी० नागेश रावको

एस० एस० 'एरोंडा'
७ मार्च, १९२९

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। हृदयसे प्रार्थना तभी निकलती है जब बिना थके निरन्तर प्रयास किया जाये।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत टी० नागेश राव
अध्यापक, बोर्ड हाईस्कूल, पुत्तुर
दक्षिण कनारा (दक्षिण भारत)

अंग्रेजी (जी० एन० ९२४०)की फोटो-नकलसे।

९१. पत्र : फ्रांसिस्का स्टैंडेनेथको

एस० एस० 'एरोंडा'
७ मार्च, १९२९

चि० सावित्री[1],

मुझे तुम्हारे दोनों रोचक पत्र मिले। मेरे बारेमें, या आश्रमके बारेमें आलोचक लोग जो कटु बातें करते हैं, उनकी तुम्हें चिन्ता नहीं करनी चाहिए। उनको ऐसा ही मान कर चलो जैसे वे तुम्हारी सहिष्णुता और उदारताकी कसौटी हैं।

१. फ्रांसिस्का स्टैंडेनेथ और उनके पति प्रोफेसर फ्रेडरिक स्टैंडेनेथ १९२८ में आश्रम गये थे, वहाँ गांधीजीने उनके नाम सावित्री और सत्यवान रख दिये थे।

मैंने वहाँकी कड़ी सर्दीके बारेमें पढ़ा है और मैं जानता हूँ कि तुम्हें बहुत अधिक असुविधा हो रही होगी। साबरमतीमें भी इस बार ऐसी ठंड पड़ी जैसी कि लोगोंकी याददाश्तमें पहले कभी नहीं पड़ी थी। आश्रममें बाल्टियों आदिका तथा टंकीका पानी भी जम गया था। लेकिन यह ठंड एक हफ्तेसे ज्यादा नहीं टिकी। बच्चोंको उसमें खूब आनन्द आया।

सत्यवानके प्रोफेसर महोदयका रुख मुझे बिलकुल पसन्द नहीं है, लेकिन मैं समझता हूँ कि उसे सहन ही करना होगा। मैं चाहूँगा कि तुम दोनों इस मिथ्या स्थितिसे उबरनेका कोई रास्ता निकाल सको। जिस नौकरीसे आजीविका चलती हो उस नौकरीको बरकरार रखनेके लिए किसी आदमीको अपनी राय दबानी पड़े, यह मानव-गरिमाके लिए हानिकारक है। कोई जल्दी नहीं है। तुम्हें कोई उपाय निकालना चाहिए।

क्या तुम्हें रसिककी याद है? वह अब शरीर रूपमें हम लोगोंके साथ नहीं रहा है। यह पत्र तुम्हें मिले, इससे पहले ही तुम 'यंग इंडिया'के पृष्ठोंमें उसके बारेमें सब-कुछ पढ़ चुकी होगी। उसकी मृत्युको बा ने बड़ी वीरतासे झेला। निःसन्देह उनका शोक बहुत गहरा था, लेकिन उसे उन्होंने बड़े साहसके साथ बर्दाश्त किया।

मैं इस समय समुद्र द्वारा बर्माके रास्तेमें हूँ। तीन दिनकी यात्रा है। इस बार मैंने अपने लिए डेकका टिकट लिया है और इससे मुझे खुशी मिली है, हालाँकि डेकपर यात्रा करनेमें जो असुविधाएँ उठानी पड़ती हैं वे मुझे नहीं हैं, क्योंकि कम्पनीके अधिकारियोंने मुझे हर सुविधा प्रदान कर रखी है।

मुझे फोटो पाकर खुशी हुई। हालाँकि मैं घी बिलकुल नहीं लेता, और आमतौर पर फल भी नहीं लेता, लेकिन उससे मुझे कोई परेशानी नहीं है। मेरी समझमें कच्ची सब्जीसे उन दोनोंकी कमी पूरी हो जाती है। कमसे-कम मेरे लिए तो यह एक बहुत बड़ी खोज है।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

श्रीमती फ्रांसिस्का स्टैंडेनेथ
ग्राज

अंग्रेजी (एम० एम० यू०/२२/६७)की माइक्रोफिल्मसे।

९२. एक पत्र[1]

एस० एस० 'एरोंडा'
७ मार्च, १९२९

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। आपके प्रश्नोंका सबसे अच्छा उत्तर यही है कि यथासम्भव कमसे-कम और वे भी अच्छा स्वास्थ्य बनाए रखनेके लिए अत्यावश्यक चीजें कमसे-कम मात्रामें ली जायें। अपने आहारकी वस्तुओंका चुनाव करनेमें उन चीजोंको ही लीजिए जो मनुष्यके लिए स्वाभाविक है और जहाँतक सम्भव हो उन्हें कच्चा ही खाइए।

आपको यह सूचना गलत दी गई कि मैंने पूनामें ब्रांडी ली थी। मैंने जीवनमें कभी नहीं ली है।

मुक्त पुरुषकी स्थिति पूर्ण आनन्दकी स्थिति है, जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी (एम० एम० यू०/२२/६५)की माइक्रोफिल्मसे।

९३. पत्र : नारणदास गांधीको

रंगून जाते हुए स्टीमरपरसे
७ मार्च, १९२९

चि० नारणदास,

रामविनोदका मामला मुझे अभी देखना है। उसके विषयमें तुमने जो जाँच की हो या जो कुछ मालूम हुआ हो उसका ब्योरा मुझे लिख भेजना। कलकत्ताके पतेसे भेज देना ही काफी होगा। मैं २४ तारीखको जीवनलालभाईके यहाँ ८, प्रिटोरिया स्ट्रीट, कलकत्ता, पहुँचूँगा; इसलिए ध्यान रहे कि पत्र वहाँ २३ को पहुँच जाये। तुम्हें जाँचमें क्या-क्या करना पड़ा सो भी लिखना।

पुरुषोत्तम मजेमें है। वही मुझे रोज 'गीता' सुनाता है। समुद्र काफी शान्त है इसलिए दो-तीन दिनकी यात्रासे जितना लाभ मिल सकता है, मिल रहा है।

१. प्रेषीका नाम ज्ञात नहीं है।

तुम्हें कलकत्ता बुलानेकी बात थी किन्तु अभी तुम्हें बहनोंके पाससे बुलवा लेनेकी इच्छा नहीं होती। जैसे-तैसे तो उनके विभागका ठीक ढंगसे चलना शुरू हुआ है; फिर तुम्हें कैसे बुलवा लूँ?

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो: श्री नारणदास गांधीने

९४. पत्र: प्रभावतीको

शुक्रवार [८ मार्च, १९२९][1]

चि० प्रभावती,

अब तो स्वस्थ होगी। तुमारे लीये में चिंता मुक्त होना चाहता हुं। वह तो तब हि हो सकता है जब तुमारे में हिम्मत आ जायगी और स्वावलंबिनी बन जायगी।

आज रंगुन पहोंच गया हुं और डाक पूरी कर रहा हूं।

बापुके आशीर्वाद

जी० एन० ३३३५ की फोटो-नकलसे।

९५. भेंट: फ्री प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिसे

रंगून
८ मार्च, १९२९

हमेशाकी तरह अर्ल विंटर्टनने अपनी इस ख्यातिको फिरसे सिद्ध किया कि वह स्थिति और तथ्योंसे अनभिज्ञ हैं। उदाहरणके लिए, उन्हें यह मालूम होना चाहिए कि यहाँ हर आदमीने यह कहा कि मुझे गिरफ्तार किया गया था, हालाँकि यह गिरफ्तारी बड़ी शराफतसे की गई थी। निःसन्देह यह बात सच है कि मेरी गिरफ्तारी कानून-के तहत हुई थी, अन्यथा इस महीने २६ तारीखको अदालतमें मेरे उपस्थित होनेका जाती मुचलका ही क्यों लिया गया होता? अर्ल विंटर्टनके इस वक्तव्यसे और भी घोर अज्ञान झलकता है कि बंगाल सरकारने यह सूचित कर दिया था कि विदेशी कपड़ों की होली जलाना गैरकानूनी है। बंगाल सरकारने ऐसी कोई सूचना नहीं दी थी। पुलिस कमिश्नरके जरिये हमें यह सूचित किया गया था कि बिना पूर्व अनुमति लिए सार्वजनिक सड़कों या आम रास्तोंपर या उनके निकट घास-फूस या ऐसी ही चीजोंका

१. गांधीजी शुक्रवार ८ मार्च, १९२९ को रंगून पहुँचे थे।

जलाना निषिद्ध है, और यह निषेध भी केवल नगरोंपर ही लागू था। अर्ल महोदयको पता होना चाहिए कि निजी जमीनोंपर होली जलानेका काम अब भी जारी है और यदि लोगोंमें सचमुच हिम्मत है तो आगे भी जारी रहेगा। यह कहना गलत है कि [पुलिस और जन-समुदायके बीच] मारपीट मेरे आग्रहके कारण हुई। पुलिस कमिश्नरके नोटिसकी वैधतामें मेरी शंका व्यक्त करनेके बावजूद, पुलिसने उसकी अवैधताकी अदालतसे जाँच करानेके बदले आग बुझानेका उपक्रम करके अपना आपत्तिजनक आचरण जारी रखा जबकि उसमें किसीके भी जान-मालको कोई फौरी खतरा नहीं था। मेरे पास जो जानकारी है उससे पता चलता है कि आहत होनेवाले पुलिसके सिपाहियोंकी संख्या बढ़ा-चढ़ाकर बताई गई है; और इस तथ्यको जानबूझकर दबाया गया है कि पुलिस द्वारा अकारण लाठी चलानेके कारण बहुतसे लोगोंको चोटें आई हैं। अर्ल महोदयका अन्तिम गलत कथन यह है कि मैंने यह शर्त स्वीकार कर ली थी कि कलकत्तामें विदेशी कपड़ोंकी अब वैसी कोई होली नहीं जलाई जायेगी। सच तो यह है कि मैंने यह बात मान ली है कि कलकत्तामें सार्वजनिक स्थलोंमें और सार्वजनिक सड़कोंपर होली नहीं जलाई जायेगी। निजी स्थानोंमें होली जलाना जारी है। अभी यह नही कहा जा सकता कि पुलिसकी दमनपूर्ण कार्रवाईसे कोई नई राजनीतिक स्थिति उत्पन्न हुई है या नही।[1]

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ९-३-१९२९

९६. भाषण : रंगूनकी सार्वजनिक सभामें[2]

८ मार्च, १९२९

चूँकि मैं देखता हूँ कि इस विशाल श्रोता-समुदायमें अधिकांश लोग हिन्दुस्तानी बोलनेवाले हैं, इसलिए मुझे लगा कि मेरे लिए अपना धन्यवाद हिन्दुस्तानीमें ही देना उचित होगा।[3] आपने यह अभिनन्दनपत्र देकर मुझे जो सम्मान प्रदान किया है उसके लिए मैं आपका हृदयसे कृतज्ञ हूँ। मैं पिछली बार जब यहाँ आया था, उसके बादके इन १५-१६ वर्षोंमें की गई अपनी प्रगतिका जो ब्योरा आपने दिया है, उसके लिए मैं आपको बधाई देता हूँ। मैं जब कभी बर्मा आया हूँ, मनमें बड़ी ललक लेकर आया हूँ। मुझे बर्माके पुरुषों और स्त्रियोंसे प्यार है। आपने अपने अभिनन्दनपत्रमें ठीक ही कहा है कि बर्माके लोग उदार और उन्मुक्त-हृदय हैं। मैं जानता हूँ कि उनकी उदारता इतनी अधिक है कि वह दोष-जैसी लगने लगती है।

१. देखिए "अहम्मन्यता और अज्ञान", २१-३-१९२९ भी।

२. यह सभा फिल्शे स्क्वेयरमें हुई थी जिसमें ५०,००० लोग उपस्थित थे। इसमें रंगून नगरपालिकाने गांधीजीको एक अभिनन्दनपत्र भेंट किया था।

३. हिन्दी भाषण उपलब्ध नहीं है।

और १९०१ में मैं पहली बार जब अपने जीवन-भरके मित्र और साथी डा० मेहतासे मिलने आया था, तभी मैंने यह अनुभव किया था कि मुझे बर्माके पुरुषों और स्त्रियोंके प्यारमें पड़नेमें बहुत समय नहीं लगा था।

मैं आपके यहाँकी स्त्रियोंमें संसारकी सबसे अधिक स्वतन्त्र नारीको देखता हूँ। मैं इसे स्वीकार करता हूँ कि बर्माके पुरुषों और स्त्रियोंकी इस निश्छलताने मेरा मन जीत लिया था। इसलिए मेरे लिए यह बड़े हर्षकी बात है कि मैं आपके पास तीसरी और अन्तिम बार आया हूँ। मैं बनिया हूँ और हालाँकि मैं उसी रूपमें कामके सिलसिलेमें आया हूँ, लेकिन मुझे इस बातकी बहुत खुशी है कि मैं ज्यादा शुभ परिस्थितियोंमें अपने बर्मी मित्रोंके साथ अपने परिचयको फिरसे ताजा कर सकूँगा। लंकामें बौद्धोंने मुझे सहज ही अपना लिया, और मेरे यह कहनेके बावजूद अपना लिया कि मैं तो पक्का हिन्दू हूँ, और मैंने इसे अपने लिए बहुत सम्मानकी बात माना कि उन्होंने मुझे अपनेमें से एकके रूपमें, एक पक्के बौद्धके रूपमें अपना लिया। निःसन्देह यदि लंका, बर्मा, चीन और जापानके बौद्ध मुझे अपना मानेंगे तो मैं इस सम्मान-को खुशीसे स्वीकार कर लूँगा क्योंकि हिन्दू धर्मके लिए बौद्ध मत वैसा ही है जैसा कैथॉलिक धर्मके लिए प्रोटेस्टेंट मत है; फर्क केवल इतना ही है कि हिन्दू धर्म और बौद्ध मतके बीच भेद कुछ ज्यादा प्रखर हैं।

महोदय, इस सुन्दर नगरी रंगूनकी नगरपालिकाने पिछले १५ वर्षोंमें जैसी तेज रफ्तारसे प्रगति की है, मैं कहने जा रहा था कि जो अद्‌भुत प्रगति की है, उसपर आपने गर्व व्यक्त किया है और वह सर्वथा उचित ही है। मैं जानता हूँ की रंगूनकी सड़कोंपर अपने मित्र डा० मेहताके साथ पहले घूम चुका हूँ, लेकिन अब आज यदि मैं अकेले यहाँ घूमने-फिरने निकलूँ तो रंगूनकी सुविस्तृत सड़कोंपर मैं रास्ता भूल जाऊँगा। आपकी शानदार सड़कोंपर से गाड़ीमें बैठकर गुजरते हुए एक घंटेमें ही मैंने इतनी प्रगति तो देख ही ली है। मैं यही आशा करता हूँ कि आपकी इस महानगरीकी यह जबर्दस्त प्रगति बर्माके अन्तर्प्रदेशमें रहनेवाले किसानों और ग्रामीणोंकी प्रगतिकी सच्ची द्योतक है। मुझे आपके सामने यह बात स्वीकार करते हुए दुख होता है कि कोई बाहरी पर्यवेक्षक भारतके बड़े-बड़े नगरोंमें जो जबर्दस्त प्रगति हुई देखता है, वह प्रगति भारतके गाँवोंकी जनताकी प्रगतिका सच्चा सूचक नहीं है बल्कि वह गाँवकी प्रगतिका सूचक है ही नहीं। लेकिन संसारके विभिन्न हिस्सोंमें मैं विविध रूपोंमें पिछले ४० वर्षसे जो सार्वजनिक कार्य करता रहा हूँ उनकी कहानी सुनाकर आपको थकाऊँ, ऐसा मेरा इरादा नहीं है।

मैं अपने-आपको नागरिक जीवनका प्रेमी मानता हूँ। मैं समझता हूँ कि नगर-पालिकाका सदस्य होना एक ऐसा सौभाग्य है जो सबको नहीं मिलता। लेकिन सार्व-जनिक जीवनका मुझे कुछ अनुभव होनेके नाते मैं आपको यह बताना चाहता हूँ कि इस विशिष्ट सम्मानकी एक अपरिहार्य शर्त यह है कि नगरपालिकाके सदस्योंको स्वार्थपूर्ण नीयतसे इस पदकी कामना करनेका साहस नहीं करना चाहिए। उन्हें सेवा-की भावनासे अपने पवित्र कर्त्तव्यको पूरा करना चाहिए। उन्हें अपनेको भंगी कहनेमें

गर्वका अनुभव करना चाहिए — जैसा कि मैंने कराची नगरपालिकाके सदस्योंसे कहा भी था। हमारी मातृभाषामें नगरपालिकाके लिए एक शब्द है। हम नगरपालिकाको 'कचरापट्टी' कहते हैं जिसका मतलब है, भंगी गाड़ी। उस नगरपालिकाका होना न होना बराबर है जो किसी नगरके सार्वजनिक और सामाजिक जीवनके सभी अंगोंको समाहित करनेवाला प्रमुख भंगी विभाग नहीं है, जो भंगीका काम करनेकी भावनासे ओतप्रोत नहीं है, जो नगरकी बाहरी सफाई ही नहीं, नागरिकोंकी आन्तरिक स्वच्छताका भी ध्यान नहीं रखती।

भारतमें अपने भ्रमणके दौरान मुझे बहुत-सी नगरपालिकाओंने अभिनन्दनपत्र दिये हैं और उनके उत्तरमें मैंने उनको बताया है कि जबतक कोई नगरपालिका अपने क्षेत्रके सभी बच्चोंको जाति, धर्म, या रंगका कोई भेद किये बिना, उनके सामाजिक दर्जोंका भेद किये बिना प्रारम्भिक शिक्षा नहीं प्रदान करती, जबतक वह अपने क्षेत्रके सभी निवासियोंके लिए सस्ता और शुद्ध दूध उसी प्रकार सुलभ नहीं करती जिस प्रकार कि आपको डाकके टिकट सुलभ हैं तबतक उसे नगरपालिका कहलानेका कोई अधिकार नहीं है। रंगून-जैसे महानगरके लिए अपने नागरिकोंकी इन बुनियादी आवश्यकताओंको पूरा कर सकना, जिनपर यदि सब नागरिकोंका नहीं तो कमसे-कम वृद्धजनों और बच्चोंका स्वास्थ्य काफी निर्भर करता है, उसके सामर्थ्यसे बाहरकी बात तो नहीं होनी चाहिए। ईश्वर करे कि आपके नगरको भारतमें, या कहूँ तो पूर्वके देशोंमें वह सबसे पहला नगर होनेका गौरव प्राप्त हो जहाँ नागरिकोंके लिए सस्ता, शुद्ध और बिना मिलावटका दूध उपलब्ध किया गया हो।

आपने मुझे यह अभिनन्दनपत्र देकर मेरा जो सम्मान किया है उसके लिए मैंने आपको धन्यवाद दिया है और एक बार फिर देता हूँ और मेरा जो सम्मान यहाँ किया गया है, उसे देखनेके लिए यहाँ आनेवाले इस विशाल श्रोता-समूहको भी मैं धन्यवाद देता हूँ। मैं आशा करता हूँ कि मैं अपने जीवनमें कभी कोई ऐसा काम नहीं करूँगा जिसके कारण आपको मुझ-जैसे तुच्छ व्यक्तिको सम्मानित करनेके अपने निश्चयपर खेदका अनुभव हो।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ११-३-१९२९

१७. भाषण: रंगूनकी सार्वजनिक सभामें[1]

८ मार्च, १९२९

मित्रो,

मुझे इस बातसे विशेष प्रसन्नता हुई है कि बर्मामें आते ही मुझे बर्मी मित्रों — पुरुषों और स्त्रियों — तथा उनके विचारों और उनकी अभिलाषाओंसे निकटका परिचय प्राप्त करनेका अवसर मिला है।

आपने मेरे लाभके लिए जो अभिनन्दनपत्र अभी पढ़ा है उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। लेकिन आपने इसमें जो बहुतसे मुद्दे उठाये हैं उनपर मेरी कोई राय पानेकी आप आशा मत रखिए। आपसे मैंने अभी जो-कुछ सुना है यदि मैं उसपर अपनी राय देनेकी कोशिश करूँ तो वह मेरा दुःसाहस-भर होगा। लेकिन इतना तो मैं मानता हूँ कि आपके बीचमें रहनेवाले भारतीयोंने आपकी राजनीतिक अभिलाषाओं और आपकी कठिनाइयों तथा दुखोंमें कोई दिलचस्पी नहीं ली है और यदि यह बात सच है तो मुझे बहुत दुख होगा। जो लोग आपके बीचमें रहते हुए अपनी जीविकाके साथ-साथ धनोपार्जन भी करते हैं उन्हें आपकी अभिलाषाओंको अपनी अभिलाषाएँ मानना चाहिए तथा आपके सुख-दुखमें भागीदार होना चाहिए। इस स्वयंसिद्ध बातको कहनेके लिए मुझे वास्तविक स्थितिका अध्ययन करनेकी आवश्यकता नहीं है।

आपने बताया है कि इस महीनेकी २३ या २२ तारीखको आप एक विशाल सम्मेलनका आयोजन कर रहे हैं और उस सम्मेलनमें आपका इरादा ब्रिटिश मालके बहिष्कारसे सम्बन्धित एक प्रस्ताव पास करनेका है। मै अत्यन्त नम्रतापूर्वक आपको इस प्रकारका कोई भी कदम उठानेके विरुद्ध आगाह कर देना चाहता हूँ। यदि आप अपने चारों ओर देखें तो व्यावहारिक पुरुष और स्त्री होनेके नाते आप देखेंगे कि यह प्रस्ताव यदि और कुछ नहीं तो केवल इस कारण ही बेकार है कि आपमें से कोई भी इस संकल्पपर अमल नहीं कर सकता। इस मामलेमें मैं अपने-आपको विशेषज्ञ मानता हूँ और इसीलिए मैं आपको जोरदार सलाह दूँगा कि आप अपना कर्त्तव्य निभायें — वह कर्त्तव्य यह है कि आप केवल ब्रिटिश मालका ही बहिष्कार न करें बल्कि सभी विदेशी वस्त्रका बहिष्कार करें जिसमें ब्रिटिश वस्त्र अनिवार्य रूपसे आ ही जाता है।

यह मर्यादा दो बातोंपर आधारित है — एक तो व्यावहारिक बुद्धिपर जो कि मैं अपने में मानता हूँ, और दूसरे अहिंसाके सिद्धान्तपर जिसके बारेमें भी मेरा दावा है कि मैंने उसका अध्ययन बड़ी श्रद्धापूर्वक, और बड़े ही धैर्य और लगनके

१. इस सभामें गांधीजीको ऑल बर्मीज एसोसिएशनकी जनरल कौंसिलकी ओरसे एक अभिनन्दनपत्र भेंट किया गया था।

साथ किया है। जो व्यक्ति अहिंसाकी भावनासे ओतप्रोत होता है उसका कभी किसी व्यक्तिसे कोई झगड़ा नहीं होता। उसका विरोध तो किसी प्रणालीके प्रति होता है; मनुष्यमें निहित बुराईके प्रति होता है, न कि स्वयं मनुष्यके प्रति।

इस कारण आपकी लड़ाई ब्रिटिश जनतासे नहीं है बल्कि संसारकी कमजोर जातियोंका शोषण करनेवाली साम्राज्यवादी भावनासे है। यदि आप इन मार्गोंका अनुसरण करेंगे — मुझे इस योजनाको तफसीलसे बतानेकी कोशिश नहीं करनी चाहिए, लेकिन यदि आपने इन बुनियादी बातोंका पालन किया तो मैं उसका परिणाम तो जरूर बता सकता हूँ — तो इसका परिणाम यह होगा कि यह अहिंसात्मक विचार-पद्धति आपके बहिष्कार-कार्यमें खुद-ब-खुद अंकुश लगा देगी और इसकी परिसीमा होगी विदेशी वस्त्र।

लेकिन बहिष्कार-मात्र करनेसे बर्माके किसानोंकी दशा सुधारनेकी दिशामें आपकी कोई प्रगति नहीं होगी। आज शामकी सभामें नगरनिगमके अभिनन्दनपत्रका उत्तर देते हुए मैंने अपने बर्मी मित्रोंको उनकी उदारता तथा निश्छलताके लिए बधाई दी थी। लेकिन मुझे दुख है कि मैं आप लोगोंको बर्माके लोगोंकी परिश्रमशीलताके लिए बधाई नहीं दे सकता। आप तो भूमिको तनिक-सा खोदकर उसमें प्रचुर मात्रामें धान उगा लेते हैं, और इतने से ही सन्तुष्ट हो जाते है। भारतके बहुत-से भागोंमें हम लोग भी बिलकुल ऐसा ही करते है। लेकिन इससे आपका साल-भरका काम नहीं चल सकता और संसारके किसी भी देशके किसान सालमें केवल सीमित समयावधिमें ही कार्य करके अपनी सभी आवश्यकताओंको पूरा करनेमें सफल नहीं हो सके हैं। अतः यदि आप विदेशी वस्त्रका आयात करते है तो आप अपने हाथों काम करके अपना कपड़ा स्वयं तैयार करनेके सौभाग्य तथा कर्त्तव्यसे स्वयंको वंचित करते हैं। यह तो अपने दोनों हाथ काट देने जैसा हुआ।

मुझे खेद है कि आपने चरखे और खादीका उल्लेख हलके ढंगसे किया है। आप मेरी इस बातका विश्वास मानिए कि विदेशी वस्त्रका बहिष्कार करने तथा केवल ब्रिटिश कपड़ेका बहिष्कार करनेके बीच जो मौलिक भेद है, यदि आपने उसे नहीं समझा तो आप चरखा शुरू करवानेमें, बल्कि कहें कि उसकी पुनः प्रतिष्ठा करनेमें, सफल नहीं हो सकेंगे।

इसलिए आप लोगोंमें जो बुद्धिमान है, उनसे मैं चाहूँगा कि चरखेका भारतके करोड़ों क्षुधा-पीड़ित लोगोंसे जो सम्बन्ध है उसका तथा उसी तरह आपके जीवनसे चरखेका जो जबर्दस्त सम्बन्ध है उसका आप जरा गहन अध्ययन कीजिए।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-४-१९२९

९८. पत्र : रिचर्ड बी० ग्रेगको

दुबारा नहीं पढ़ा

स्थायी पता :
सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
९ मार्च, १९२९

प्रिय गोविन्द,

मुझे तुम्हारे पत्र बड़े नियमित रूपसे मिलते रहे हैं और उनसे मुझे हालचालको ज्यादा अच्छी तरह समझनेमें मदद मिली है, जो अन्यथा सम्भव नहीं था। यह तो एक बहुत अच्छी बात हुई कि कुछेक ठोस कारणोंकी वजहसे मुझे अपनी यूरोप तथा अमेरिकाकी भावी यात्रा रद करनी पड़ी। मैं नहीं जानता कि मैं यूरोपमें भी कुछ ज्यादा अच्छा काम कर पाता कि नहीं, क्योंकि एन्ड्रयूजसे प्राप्त ताजा खबरके मुताबिक तो लगता है कि अमेरिका जाना बेकार साबित होता लेकिन यदि मैं यूरोप चला जाता तो अच्छा रहता। फिर भी, मैं जानता हूँ कि पश्चिम-यात्राको रद करना मेरे लिए बड़ी बुद्धिमानीकी बात थी। मेरे खयालमें बहुत-सी बातोंके लिए मेरा यहाँ रहना जरूरी है। अगर तुम कृष्णदासकी पुस्तकको संक्षिप्त करनेका समय निकाल सको और मैकमिलन ऐंड कम्पनीको उसे प्रकाशित करनेके लिए राजी कर सको तो बड़ा अच्छा होगा।

मैं इस समय बर्मामें हूँ। यह स्थान मुझे बहुत ज्यादा आकर्षित करता है। यहाँके निवासी बहुत ही सीधे-सादे, बहुत उदार हैं, लेकिन फिर भी इनका बहुत अधम ढंगसे शोषण होता रहा है। सबसे ज्यादा दुख तो इस बातका है कि ये लोग अपने शोषणका प्रभावकारी ढंगसे विरोध नहीं कर पाते।

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० ४६६१)की फोटो-नकलसे।

९९. पत्र : एडमंड प्रिवाको

कैम्प, रंगून
९ मार्च, १९२९

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। मैं तो वास्तवमें इस वर्ष अपनी यूरोप-यात्राकी आशा लगाये बैठा था। लेकिन भारतमें आपत्कालीन स्थिति होनेके कारण मुझे अपनी यात्रा रद करनेके लिए विवश होना पड़ा है। अब मेरे लिए यह कह सकना मुश्किल है कि मैं यूरोप, यदि कभी जा सका तो, कब जा पाऊँगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री एडमंड प्रिवा
स्विट्ज़रलैंड

अंग्रेजी (जी० एन० ८७९०)की फोटो-नकलसे।

१००. भाषण : रंगूनकी सार्वजनिक सभामें

९ मार्च, १९२९

अध्यक्ष महोदय और मित्रो,

मैं अपनी बात काफी हदतक हिन्दुस्तानीमें ही कहना चाहता हूँ, लेकिन चूंकि आपका अभिनन्दनपत्र अंग्रेजीमें लिखा हुआ है इसलिए पहले मैं अंग्रेजीमें एक छोटा-सा उत्तर दूंगा और फिर अपनी बात हिन्दुस्तानीमें कहूँगा।[1] इस हार्दिक स्वागतके लिए तथा अभिनन्दनपत्रमें मेरे प्रति कही गई सुन्दर बातोंके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। आपने जो मुझमें इतने गुण गिनाये हैं इस समय उन सबको अंगीकार करना तो मेरे लिए सम्भव नहीं है, उन गुणोंको अपनेमें आत्मसात कर लेना तो और भी मुश्किल है। लेकिन उनमें से दो गुणोंके अपनेमें होनेका मैं दावा कर सकता हूँ। पहली चीज तो यह है कि मेरा उद्देश्य केवल भारतीयोंमें भाईचारा बढ़ाना ही नहीं है। और न ही मेरा उद्देश्य केवल भारतको स्वतन्त्र कराना ही है, हालाँकि इसमें कोई शक नहीं कि आजकल मेरा सारा जीवन और सारा समय व्यवहारतः इसीमें

१. यह वाक्य १०-३-१९२९ के **अमृतबाजार पत्रिका**में प्रकाशित रिपोर्टसे लिया गया है।

लगा रहता है। लेकिन भारतकी स्वतन्त्रताके जरिये मैं मानव-मात्रमें बन्धुत्व स्थापित करनेका कार्य जारी रखने और उसमें सफलता प्राप्त करनेकी आशा करता हूँ। मेरी देशभक्ति कोई वर्जनशील वस्तु नहीं है। वह तो सर्वग्रहणशील है और मैं ऐसी देशभक्तिको स्वीकार नहीं करूँगा जिसका उद्देश्य दूसरे राष्ट्रोंके दुखका लाभ उठाना या उनका शोषण करना हो। मेरी देशभक्तिकी जो कल्पना है वह हर हालतमें हमेशा, बिना अपवादके, समस्त मानव-जातिके व्यापकतम हितके अनुकूल है। यदि ऐसा न हो तो उस देशभक्तिका कोई मूल्य नही होगा। इतना ही नहीं, मेरा धर्म तथा धर्मसे निःसृत मेरी देशभक्ति समस्त जीवोंको अपना मानती है। मैं केवल मानव कहलानेवाले जीवोंमें ही भाईचारा स्थापित करना या मेल-मिलाप करना नही चाहता, बल्कि मैं तो समस्त जीवधारियोंके साथ, यहाँतक कि पृथ्वीपर रेंगनेवाले जीवोंके साथ भी, यही सम्बन्ध स्थापित करना चाहता हूँ। यदि आप चौंकें नहीं तो मै कहूँगा कि मैं पृथ्वीपर रेंगनेवाले जीवोंके साथ एकात्मकता स्थापित करना चाहता हूँ, क्योंकि हम सब उसी परमात्मासे उत्पन्न होनेका दावा करते हैं और इस कारण प्रत्येक जीवधारी, चाहे उसका कोई भी रूप क्यों न हो, अनिवार्य रूपसे एक ही होना चाहिए। इसीलिए मानवमात्रके बन्धुत्वके मेरे आदर्शका वर्णन करते हुए आप मेरी जो भी प्रशंसा करेंगे उसे मैं बिना किसी अनौचित्यके स्वीकार कर सकता हूँ। आवश्यक उपसिद्धान्तके रूपमें आप स्वभावतः अस्पृश्यताका उल्लेख कर सकते है, जैसा आपने कृपापूर्वक किया भी है। मै बारम्बार कह चुका हूँ कि अस्पृश्यता हिन्दू-धर्मके ऊपर एक बहुत बड़ा कलंक है। और मेरे खयालमें, अन्तमें, जीवनकी दौड़में जिसमें आज संसारके सभी धर्म लगे हुए है, या तो हिन्दू धर्मका ही अस्तित्व मिट जायेगा या फिर अस्पृश्यताको ही पूर्णतया उखाड़ फेंका जायेगा ताकि अद्वैत हिन्दू-धर्मका मूलभूत सिद्धान्त व्यावहारिक जीवनमें फलीभूत हो सके। आपने जिन बातोंका अपने अभिनन्दन-पत्रमें उल्लेख किया है उनमें से इन दो बातोंके अलावा और किसी गुणको मैं अपनेमें न तो स्वीकार कर सकता हूँ और न उसे आत्मसात ही कर सकता हूँ। जब मेरी आँखें बन्द हो जायेंगी और यह शरीर अग्निको भेंट कर दिया जायेगा तभी मेरे कार्यके सम्बन्धमें निर्णय करनेका समय आयेगा

आपने बड़ी कृपापूर्वक मुझसे बर्माकी देशी जनताको कुछ सलाह देनेके लिए कहा है। मैं आपको यह बता दूँ कि सलाह देनेके मामलेमें मैं अपने-आपको बिलकुल अयोग्य मानता हूँ। आपकी महान् परम्पराओंके सम्बन्धमें मेरा अध्ययन सिर्फ सतही है और आपकी वर्तमान समस्याओंके सम्बन्धमें मेरा ज्ञान तो और भी मामूली है, हालाँकि आपके प्रति मेरे मनमें प्रेम और सराहनाकी जो भावना है वह किसीसे कम नहीं है, और मैं कलकी दो सभाओंमें उन्हें व्यक्त भी कर चुका हूँ। मुझे खुशी होती यदि सारे तथ्य मेरे सामने होते। मैं यह भी चाहता था कि बर्माके विभिन्न राजनीतिक दल मुझसे मिल सकते और मैं आपके मनकी बात जान सकता। मेरा दिल तो आपसे मिलनेके लिए बेकरार है लेकिन पहल आपको करनी है और यह निश्चित है कि आपकी पुकार व्यर्थ नहीं जायेगी। और अगर मैंने देखा कि

आपको थोड़ी-बहुत कामचलाऊ सलाह देनेके लिए भी मेरे पास पर्याप्त सामग्री है तो मैं आपकी सेवाके लिए तैयार रहूँगा।[1]

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-४-१९२९

१०१. मुझे दी गई सीख

"फौजदारी कानूनका उल्लंघन" नामक लेख पढ़कर एक सज्जन लिखते हैं:[2]

> **आपके पास बहुत-सी विधवाएँ हैं। . . . आपको . . . समाजका भय है। अगर न हो तो आप लोगोंके सामने विधवा-विवाहका कोई उदाहरण क्यों नहीं रखते? . . .**

मेरे पास अनेक जवान विधवाएँ रहती हैं और सो भी इस तरहकी है जैसे मेरी सगी बेटियाँ हों। लेकिन उनका विवाह करनेमें न तो मैं समर्थ हूँ और न कोई दूसरा। मैं देखता हूँ कि आजकल जो-कुछ पढ़ा जाता है, बड़ी लापरवाहीके साथ पढ़ा जाता है; लोग पढ़ी हुई बातोंपर गम्भीरतापूर्वक विचार करनेको तैयार नहीं दिखाई देते। विधवा-विवाह सम्बन्धी मेरे लेखोंमें मर्यादा निहित है। जो विधवा बच्ची है, जिसका विवाह उसकी इच्छाके बिना किया गया है, जो विवाह कर देनेसे खुश होगी, ऐसी विधवाका विवाह कर देना पुण्य है, यही मेरे लेखका आशय था। समझदार विधवाको जबर्दस्ती या समझा-बुझाकर ब्याह देनेका मेरा आशय हो ही नही सकता। मेरे साथ जो विधवाएँ रहती हैं, उनके आसपास ब्रह्मचर्यका वातावरण है। वे समझदार हैं। वे जानती हैं कि उन्हें पुनर्विवाह करनेकी स्वतन्त्रता है। वे बड़ी आजादीके साथ अपनी इच्छा मुझपर प्रकट कर सकती है। मैं इससे ज्यादा कुछ कर ही नहीं सकता; इससे आगे न मैं जाता हूँ और न यही चाहता हूँ कि दूसरा कोई जाये।

जिन बाल-विधवाओंको मैं जानता हूँ, उनका विवाह कर देनेकी कोशिश मैं कर रहा हूँ। लेकिन यह सहज ही नहीं हो पाता। माँ-बाप उन्हें अपनेसे दूर नहीं होने देते; न फिरसे उनका विवाह करते हैं, न उन्हें करने देते हैं। इन मामलोंमें माता-पिताका अंकुश घातक होता है और धर्मके नामपर अधर्मको बढ़ानेवाला होता है। वे रूढ़िकी जंजीरसे जकड़े हुए हैं, इस कारण पिसते रहते हैं। वे यह नही जानते कि उनके आश्रयमें पड़ी हुई बालाएँ भी उन्हींकी तरह पिसी जा रही है। मैं तो यहाँतक आशा लगाये बैठा हूँ कि मेरे साथ रहनेवाली कुमारियाँ और जवान विधवाएँ किसी दिन अपनी तपश्चर्याके बलसे बाल-विधवाओंके बन्धन तोड़ेंगी। वे स्वयं विवाह करके

१. इसके बाद गांधीजी हिन्दीमें बोले। और अधिक धनकी अपील करते हुए उन्होंने कहा कि संग्रहका अधिकांश खादी-कोष तथा भारतके करोड़ों क्षुधा-पीड़ितोंके लाभार्थ दिया जायेगा।

२. अंशत: दिया गया है।

कोई उत्तम आदर्श उपस्थित नहीं कर सकतीं। वे तो स्वेच्छासे ब्रह्मचर्यका पालन करके ही बालिकाओंके बन्धन काटनेकी शक्ति पा सकती हैं।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १०-३-१९२९

१०२. भाषण: गुजरातियोंकी सभा, रंगूनमें

१० मार्च, १९२९

हम हिन्दुस्तानके किसी भी भागमें जायें वहाँ गुजराती और मारवाड़ी मिल जाते हैं। यही दोनों कौमें चाहें तो खादीका व्यापार भी कर सकती हैं। फिर भी यहाँ रंगूनमें खादी-भण्डार चलानेमें बड़ी कठिनाई हो रही है, यह एक बड़ी शर्मकी बात है। यहाँ एक भी गुजरातीका खादीधारी न होना तो असहनीय ही है। आप सब तो पूर्णतया स्वतन्त्र हैं। जो लोग व्यापार करते हैं उनके लिए तो खादी न पहननेका कोई कारण ही नहीं है। जो अंग्रेजी पेढ़ियोंमें काम करते हैं यदि उन्हें यह डर हो कि खादी पहननेसे नौकरी चली जायेगी तो नौकरी छोड़ देनेमें ही उनका कल्याण है। मुझे हर गुजरातीसे यह आशा है कि इतने वर्षोंकी शिक्षाके बाद उसमें नौकरी छोड़ देनेकी हिम्मत आ गई होगी। आपमें से कितने लोग 'नवजीवन' पढ़ते हैं? (काफी हाथ ऊपर उठाये गये।) गुजरातियोंमें भी 'नवजीवन' न पढ़नेवाले व्यक्ति मौजूद हैं, यह देखकर मुझे आश्चर्य हो रहा है। मैं यह नहीं पूछना चाहता कि कितने लोग 'नवजीवन' खरीदते हैं, क्योंकि आप लोग 'नवजीवन' खरीदते हैं या नहीं, मुझे इसकी चिन्ता नहीं है। ईश्वरकी कृपासे उसे कभी घाटेपर नहीं चलाना पड़ा; हालाँकि जितना वह पहले बिकता था उतना अब नहीं बिकता। गुजराती 'नवजीवन' चलाते ही रहेंगे, इस विषयमें मुझे तनिक भी शंका नहीं है। फिर आपमें से ज्यादातर लोग 'नवजीवन' पढ़ते हैं इसलिए खादीके बारेमें मैं आपसे ज्यादा कुछ नहीं कहना चाहता।

आपकी शालाके विषयमें मैं आपसे एक बार चर्चा कर चुका हूँ; आज फिर कुछ कहना चाहता हूँ। आपको अपनी पाठशालाकी शोभा बढ़ानी चाहिए। उसे और सजाना चाहिए। शुद्ध परमार्थ नामकी तो कोई वस्तु दुनियामें है ही नहीं। सब प्रकारके परमार्थमें स्वार्थका अंश रहता है। किन्तु जिस स्वार्थके साथ दूसरोंका स्वार्थ भी सधता हो उसे हम परमार्थके नामसे जानते हैं। मैं खादीकी जो बात कहता हूँ वह इसी प्रकारका परमार्थ माना जायेगा; किन्तु इस शालामें तो आपका स्वार्थ है। आपके व्यापार और व्यवहारके लिए जितने ज्ञानकी आवश्यकता है, यह ज्ञान प्राप्त करनेकी पूरी-पूरी सामग्री आपकी इस शालामें होनी चाहिए। आज तो हम किरायेके सभा-भवनमें बैठे हैं। आपके पास तो इससे भी बड़ा अपना सभा-भवन होना चाहिए। मैं अंग्रेजोंके दोषोंको बहुत अच्छी तरह जानता हूँ। किन्तु उनमें कितने ही अनुकरणीय गुण भी हैं। वे भी व्यापार करने आये हैं और व्यापारियोंकी तरह रहते हैं। किन्तु

उन्होंने अपने बालकोंके लिए कितनी सुविधाओंका प्रबन्ध कर रखा है! दार्जिलिंग और शिमला जैसे स्थानोंमें बड़े-बड़े विद्यालय खोल रखे हैं। अपने बच्चोंकी शिक्षाके लिए वे अपार धन खर्च करते हैं। आप भी अपने बच्चोंके लिए ऐसी शाला खोलें जहाँ वायु शुद्ध हो और उन्हें स्वच्छताका पदार्थ-पाठ मिले। आपका विद्यालय किसी ऐसे ही स्थानपर बनाया जाना चाहिए।

गुजरातसे बाहर रहनेके कारण आप लोगोंकी जिम्मेदारी तो दुगुनी हो जाती है। यहाँ बहुत-से काठियावाड़ी हैं। 'मधुसे भी मीठे लोग यहाँ देखे हैं' नवलरामकी इस उक्तिमें सत्यता तो है पर उसमें ध्वनित पारस्परिक झगड़े और खुशामद आदि जो खराब आदतें हममें हैं, उन्हें छोड़कर ही हमें बाहर निकलना चाहिए। हम गुजरातमें जब अपने समाजके बीच रहते हैं तो वहाँ समाज बड़ा होनेके कारण हमारे बहुत-से दोष छिप जाते हैं। यहाँ इस छोटे-से समुदायमें हमारे दोष तुरन्त सामने आ जाते हैं। विदेशमें लोग किसी समाजके एक ही व्यक्तिसे पूरी जातिको तौलते हैं। किन्तु जिस तरह एन्ड्रयूज जैसा मनुष्य हिन्दुस्तानमें आकर अंग्रेजोंके दोषोंको छिपा देता है, उसी तरह आप भी अपने दोषोंको त्यागकर अपने गुणोंकी सुगन्ध फैलायें। आप तो गुजरातके ही नहीं, भारत-भरके प्रतिनिधि हैं। ब्रह्मदेश भारतका भाग नहीं है। जिसे हम भारतवर्ष मानते हैं यह उसका हिस्सा नहीं है। आप यहाँ विदेशीकी तरह आते हैं तो दूधमें चीनीकी तरह घुलमिल जायें। आपको अपना जीवन पवित्र बनाना चाहिए और आपके आचरणमें ऐसी कोई बात नहीं होनी चाहिए जो किसीको खटक सके।

क्या आप यह मानते हैं कि व्यापारमें ईमानदारीसे चलकर कमाई नहीं हो सकती है? व्यापारमें नीतिसे काम नहीं लिया जा सकता, यह केवल भ्रम है। इसके मेरे पास काफी उदाहरण हैं। जमनालालजीका ही उदाहरण लें। लगभग बारह वर्षसे ज्यादा समयसे वे मेरे सम्पर्कमें हैं। वे मानो तटस्थ खड़े रहकर मुझे देखते-समझते और मेरे द्वारा किये गये परिवर्तनोंका निरीक्षण करते रहे हैं। वे अत्यन्त बुद्धिमान व्यक्ति हैं, दूसरोंकी हलचलोंपर निगाह रखने आदिका अत्यन्त विचारपूर्वक काम करनेवाले मनुष्य हैं। उन्होंने अपना व्यापार किस प्रकार पूर्णतया शुद्ध रखा है, उसकी साक्षी मैं दे सकता हूँ। इसी प्रकार एक प्रातःस्मरणीय नाम उमर हाजी आमद झवेरीका भी है। यह नहीं कहा जा सकता कि इस व्यक्तिके पास सदा पैसा रहा हो, किन्तु आज तो उसके पास लाखोंकी सम्पत्ति है और मैं जानता हूँ कि उन्होंने कभी बेईमानीसे पैसा नहीं कमाया। इस प्रकार मैं कह सकता हूँ कि नीतिका मार्ग अपनानेवाला व्यक्ति करोड़पति भले न बन पाये, लखपति तो बन ही सकता है।

हिन्दू-मुस्लिम प्रश्नसे सम्बन्धित मेरे व्यवहारके विषयमें बहुत-से लोगोंको शंका है। बहुत-से लोग यह भी मानते हैं कि अली-भाइयोंका साथ और उनको प्रोत्साहन देकर मैंने भारी भूल की है। किन्तु आज भी मुझे उनके साथ सम्बन्ध जोड़नेका पश्चात्ताप नहीं है। मैं जिनके साथ मित्रता करता हूँ उनसे किसी तरहका सौदा नहीं करता। मित्रता सौदा नहीं है, वह तो एकपक्षीय व्यवहार है। बदला चाहनेवाला व्यक्ति मित्र नहीं माना जा सकता। जिस मनुष्यकी रात-दिन अहिंसाका पालन करनेकी

ही इच्छा है वह और किसी तरहका व्यवहार कर ही नहीं सकता। आज भी यदि खिलाफतपर फिरसे वैसी ही मुसीबत आ जाये तो मैं अपने प्राण दे सकता हूँ। विपत्तिके समय आज भी मैं मुसलमानोंका उतना ही साथ दूँगा। आप कह सकते हैं कि मेरे व्यवहारके परिणामस्वरूप मुसलमानोंमें बहुत जागृति हुई है; किन्तु क्या हिन्दुओंमें कम हुई है? पर यह सब मेरे कारण हुआ है, ऐसा अभिमान तो मैं नहीं करता। मैं तो केवल निमित्त-मात्र हूँ। किन्तु मुझे अपने कियेका तनिक भी पश्चात्ताप नहीं है। मुसलमानोंसे मेरी मित्रता बहुत पुरानी है। दक्षिण आफ्रिकामें भी मैं उनके घनिष्ठ सम्पर्कमें रहा। ऐसे प्रसंग भी आये जब मुझे उनकी गालियाँ खानी पड़ीं, तो भी आज मैं यही कहूँगा कि उस मित्रताके द्वारा मैंने जगतकी सेवा ही की है। अगर मुसलमानोंके लिए मैंने आपसे सेवा या धन लिया है तो मुझे नही लगता कि ऐसा करके मैंने कोई बुरा काम किया है। आप धर्मका पालन करेंगे तभी तो वह टिका रहेगा। आत्मसम्मान और स्वतन्त्रताके विषयमें भी यही कहा जा सकता है। किसीके साथ अपने व्यवहारके कारण हमें हानि हुई है, यह सोचना कायरता है। कोई हमें धोखा दे तो उससे हमारा कुछ नहीं बिगड़ता; किन्तु जिस दिन हम किसीको धोखा दें उस दिन हम ऐसा मानें कि हमारा झण्डा नीचे झुक गया है। इसलिए हम तो यही माँगें कि संसारको धोखा देनेके बजाय संसार हमें धोखा दे तो अच्छा। और यदि हम यह मानें कि संसार द्वारा धोखा खाना श्रेयस्कर है तो हमें संसारमें विश्वास करना भी सीखना होगा। क्या आप जानते हैं कि यह आप किस प्रकार सीख सकते हैं? अपने पुत्रके साथ व्यवहार करनेमें मै जितनी सावधानीसे काम लेता हूँ, दूसरोंके प्रति उससे ज्यादा सावधानी न रखूँ। अपने लड़केको धन देकर उससे जमानतनामा लेता होऊँ तो दूसरोंसे भी लूँ। किन्तु उसे पैसा देने पर कुछ नुकसान होगा, ऐसा डर तो मनमें रखूँगा ही नही।

इतना कहनेके बाद मैं डरते-डरते आपसे पूछता हूँ कि क्या आप जामिया मिलियाके लिए कुछ दे सकेंगे? दे सकें तो जरूर दें। मैं तो केवल खादी-कार्यके लिए आया हूँ इसलिए एक ही बात कहूँगा। बहुत-से काम करनेवाला हार जाता है। बहुत-से काम करनेकी शक्ति भी ईश्वरके पास ही है। वह बहुत-से काम करते हुए भी उनसे अलग बना रह सकता है। इसलिए यदि आपको मुसलमानोंके प्रति द्वेषकी छूत न लगी हो और आपके मनमें श्रद्धा हो — मेरे कहनेके कारण नहीं, किन्तु स्वतन्त्र रूपसे आपके मनमें श्रद्धा हो — तो आप सहायता करें।

तिलक स्वराज्य कोषकी क्या व्यवस्था हुई, यहाँ इस आशयकी एक पुर्जी पाकर मुझे आश्चर्य हुआ है। मैं तो यही कहूँगा कि करोड़ रुपयोंकी राशिका ऐसा कोई दूसरा कोष नहीं है जिसका इस कोषके जितना सदुपयोग हुआ हो। आपको हर वर्ष व्यापारमें कितना नुकसान उठाना पड़ता है? लगभग पाँच प्रतिशत नुकसान तो होता ही होगा। करोड़ रुपयेके इस लेन-देनमें पाँच प्रतिशत नुकसान भी नही हुआ। और जो नुकसान हुआ भी वह इसलिए नहीं कि कोई रुपया खा गया है।

इस कोषका हिसाब छुपा हुआ नहीं है। इसका पूरा हिसाब रेवाशंकर जगजीवनकी पेढ़ीके पास है। यदि आप न जानते हों तो मैं आपको बता दूँ कि

यह एक करोड़ रुपया मेरे पास नहीं आया। अनेक मारवाड़ियोंने अपना और भी पैसा अमानतके रूपमें रखा था और उसका न्यास बना दिया गया था। रामनारायण सेठके न्यासका पैसा अब भी मौजूद है। बैरिस्टर जयकर और उमर सोबानीने पच्चीस-पच्चीस हजार रुपया दिया था, वह 'इंडिपेंडेंट'के लिए दे दिया गया। देशबन्धुने पन्द्रह लाख रुपया भेजनेका वचन तार द्वारा दिया है। यह बात मैंने तारको ठीक न पढ़नेके कारण समझ ली थी। उन्हें तो नकद पाँच लाख रुपये भी प्राप्त नही हुए थे। पंजाबका पैसा लालाजीने पंजाबमें ही रख लिया था। यह तो मैंने मोटी-मोटी बातें बताईं। गुजरातियोंने इस कोषके लिए काफी धन दिया था। बम्बईके पैसेके लिए मैंने वम्बईमें ही न्यासी नियुक्त कर दिये थे। यह पैसा आज भी न्यासियोंके हाथमें है। बम्बईका कांग्रेस भवन इसी कोषके धनसे बनवाया गया है। कांग्रेसका कार्यालय भी आज इसी निधिसे चलाया जा रहा है। कांग्रेसने जो लाखों रुपया खर्च किया है, उसका पाई-पाईका लिखित हिसाब है। उस एक-एक पाईका ठीक-ठीक उपयोग हुआ है या नहीं, यह तो मैं नहीं कह सकता। हर प्रान्तने अपना धन जैसा ठीक लगा, वैसे खर्च किया। पर इसमें किसीने पैसा खाया नहीं है या अपने किसी सम्बन्धीको नही दिया है और उसका पूरा हिसाब सुरक्षित है।

मैं आज उससे भी बड़ा व्यापार कर रहा हूँ। याद रखिए कि खादीका व्यापार इतना बढ़ेगा कि जिस तरह लोग शरीरसे चींटी झाड़ देते हैं वैसे ही विदेशी कपड़ा झाड़ देंगे। चरखा संघका हिसाब तो आप जिस समय माँगें उसी समय मिल सकता है। उसकी व्यवस्था जमनालाल और शंकरलाल बैंकरके हाथमें है। वे इतने सावधान हैं कि यदि मेरा मन कहीं भी पैसा खर्चने या देनेका हो तो वे मुझे रोकते हैं। पैसोंका हेर-फेर करनेवाले या पैसा खा जानेवाले कार्यकर्त्ता हमें नहीं मिले, ऐसी बात नहीं है। हमारे कार्यकारी मण्डलके लोगोंमें हजारमें से एक खोटा हो सकता है। किन्तु खादीका काम तो जग-जाहिर है। यदि आप बारडोलीसे सम्बन्धित लेखोंको पढ़ते रहे हैं तो आप जानते ही होंगे कि खादीके आसपास कितना सुन्दर कार्य हो रहा है। खादीके प्रतापके बिना वल्लभभाई कभी बारडोली सत्याग्रह न कर पाये होते; किन्तु आज हमें खादीका व्यापक प्रचार करना है और उसका सन्देश घर-घर पहुँचाना है।

मैं यह भी चाहता हूँ कि आप गो-सेवाकी प्रवृत्तिमें भी रुचि लें। आज हमारी स्थिति यह है कि हम शुद्ध जूता[1] तैयार कर सकते हैं जिसे पहनकर मन्दिर जानेमें भी कोई आपत्ति नहीं है। आप इस प्रवृत्तिमें दिलचस्पी लें और सच्ची गोरक्षा करें। आज ये बहुत सी बातें मैंने आपसे कहीं; अभी और भी बातें कही जा सकती हैं। किन्तु यह याद रखना चाहिए कि मैंने ये सब बातें आपको इन कामोंमें खींचनेकी दृष्टिसे ही कही हैं।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २४-३-१९२९

१. मरे हुए ढोरकी खालका बना हुआ जूता।

१०३. भाषण: रंगूनमें, आर्य-समाजियोंके समक्ष[1]

१० मार्च, १९२९

मैं तो जहाँ-तहाँ अपने-आपको सनातनी हिन्दू कहता रहता हूँ, फिर भी आप मुझे आर्य-समाजी मानते हैं, यह आपकी उदारता है। आपका इतना प्रेम देखकर मुझे आनन्द होता है। आर्य-समाजके लिए मुझे कोई ऐसा-वैसा आदर नहीं है। आर्य-समाजकी विवादग्रस्त बातें समय आनेपर विस्मृत हो जायेंगी; लेकिन आर्य-समाज और महर्षि दयानन्दने हिन्दू-समाजकी जो सेवाकी है वह सदा अमर रहेगी। महर्षिने पुकार-पुकार कर हिन्दू-समाजके आगे ब्रह्मचर्यका मन्त्र रखा, भारतीय संस्कृतिके प्रचारपर जोर दिया और वेदोंके अभ्यासके महत्त्वकी ओर सारे समाजका ध्यान खींचा। ऋषि की यह सेवा भूलने योग्य नहीं है, कोई उसे भूल नहीं सकता। वैसे आर्य-समाज और हिन्दू-समाजकी जुदाई, उनके पृथक् अस्तित्वकी बातमें मुझे ज्यादा सार नहीं मालूम होता। मेरे मतमें, आर्य-समाज हिन्दू-धर्मकी शाखा है और हरएक आर्य-समाजी हिन्दू ही है। मैं आर्य-समाजियोंसे इतना ही कहूँगा कि आर्य-समाजियोंमें जिन-जिन गुणोंके होनेका दावा किया जाता है, उनके होनेकी आशा रखी जाती है, वे सारे गुण जहाँ-जहाँ आप लोग हों वहाँ-वहाँ आपके जीवनमें पाये जायें।

हिन्दी नवजीवन, ४-४-१९२९

१०४. भाषण: रंगूनमें, भारतीय द्वारपालोंके[2] समक्ष

१० मार्च, १९२९

अगर आप अपने धन्धेमें किसी तरहकी नीचता या बुराईका अनुभव करते हैं तो भूल करते हैं। जब आपके मालिकपर कोई आफत आती है तो न केवल उनकी दौलतकी बल्कि उनके कुटुम्ब और उनकी इज्जतकी रक्षाका भार भी आपको अपने हाथोंमें लेना पड़ता है। यह कोई ऐसी-वैसी जिम्मेवारी नहीं है। लक्ष्मणको रामचन्द्रकी दरबानी ही करनी थी न? आपको याद होगा कि द्वारपालका काम करते हुए जो घटना घटी थी उसके कारण लक्ष्मणने लड़ाईमें भाग लेकर अपने प्राणोंका मोह छोड़ा था, प्राणविसर्जनकी तैयारी की थी। लक्ष्मणने द्वारपालका काम कितना पवित्र माना था और उसके गौरवको कितना ज्यादा बढ़ाया था? अगर आप समझते हों कि दरबानका दर्जा नीचा है, तो मैं आपसे कहता हूँ कि ब्रिटिश सरकार अपने-आपको

१. इसे महादेव देसाई द्वारा गांधीजीकी बर्मा-यात्राके विवरणमें से लिया गया है।

२. इन लोगोंने, जिनमें अधिकांश गोरखपुरके थे, गांधीजीको १,८११ रुपयेकी एक थैली भेंट की थी। यह रिपोर्ट महादेव देसाई द्वारा गांधीजीकी बर्मा-यात्राके विवरणमें से ली गई है।

भारतका दरबान कहा करती है, और फिर भी आज वह भारतकी स्वामिनी बनकर बैठी है। इस कारण आदर्श द्वारपाल बननेके लिए जिन गुणोंकी जरूरत रहती है, वे गुण आप सीखो —— अपना चरित्र इतना पक्का बना लो कि जबर्दस्त लालच भी आपको नीचा न दिखा सके, हिम्मत इतनी इकट्ठी कर लो कि मौका पड़नेपर मालिकके लिए मरनेको तैयार रह सको।

हिन्दी नवजीवन, ४-४-१९२९

१०५. भाषण: भारतीयोंकी सभा, रंगूनमें

१० मार्च, १९२९

हमारी एक शिकायत की गई है। मैं उसकी तरफ आपका ध्यान खींचना चाहता हूँ। यहाँके लोगोंकी शिकायत है कि भारतीय उनके सुख-दुःखमें हिस्सा नहीं लेते, उलटा नुकसान ही पहुँचाते हैं। मैं सोचता हूँ कि इस शिकायतमें अतिशयोक्ति है। किन्तु मैं यह भी मानता हूँ कि इसमें कुछ-न-कुछ सत्य अवश्य है, क्योंकि मैंने यही बात लंका और दक्षिण आफ्रिकामें रहनेवाले भारतीयोंमें भी देखी है। इसलिए यहाँ भी यह शिकायत सुनकर मुझे कोई आश्चर्य नहीं होता। अतः मेरा कहना है कि जहाँसे हमें रोटी तो क्या रोटीसे भी ज्यादा मिलता है, वहाँके लोगोंके पाससे आप पैसा बटोरते हुए विचार करें। मेरी प्रार्थना है कि आप बर्माके भाई-बहनोंको न भूलें। हिन्दुओंके लिए ऐसा करना तो दुहरा कर्त्तव्य है, क्योंकि वे हिन्दू हैं और बौद्ध धर्म हिन्दू-धर्मकी शाखा है, इसलिए आप उनके दुखमें दुख, सुखमें सुख मानें। आपका व्यवहार ऐसा होना चाहिए कि कभी भगवानके आगे पश्चात्ताप न करना पड़े। ऐसा व्यवहार करें कि बर्माके लोग कहें 'ऐसे लोग बर्मामें जरूर रहें।' हिन्दुस्तानसे बहुतसे लोग यहाँ आये हैं। यह एक अच्छी बात है किन्तु वे या आप सभी यहाँके लोगोंसे मिलजुलकर रहें। उनके विचार समझें और जहाँ उनकी मददकी जरूरत हो उनकी मदद करें। मैं अपने ४० वर्षके अनुभवसे बता सकता हूँ कि संसारके साथ इस रीतिसे व्यवहार रखा जाये तो कोई नुकसान नहीं होता।

आप ऐसा न कहें कि मैं तो फकीर बन गया हूँ इसलिए मेरे लिए जो-कुछ करना सम्भव है वह आपके लिए सम्भव नहीं है। मैं फकीरीका दावा नहीं करता। मुझे भी पेट भरना है। मेरी औरत है, बच्चे हैं, सगे-सम्बन्धी हैं। ऐसा भी नहीं कि मृत्युके किनारेपर खड़ा होकर मैं ज्ञानकी ऐसी बातें कर रहा हूँ। मैं तो जब जवान था तबका अनुभव बता रहा हूँ। सच्ची कमाईसे निर्वाह करनेवाले बहुत व्यक्ति संसारमें हैं। वे खुदाको हाजिर-नाजिर मान अपना रोजगार करते हैं। इसलिए आप मेरी बात यों ही न उड़ा दें।

मेरा लिबास फकीरका नहीं —— ढेढ़, भंगी या कुलीका है। किन्तु ढेढ़, भंगी, चमार वगैरह फकीर नहीं हैं। वे भी मजदूरी करके पेट भरते हैं। व्यापारमें भी जो

मनुष्य सचाईसे काम लेता है, उसे इस लोकमें दाल-रोटी तो मिलती ही है और परलोकका सुख भी मिलता है।

मैं तो यहाँ भिक्षु बनकर आया हूँ। यहाँके भारतीय भाइयोंको लूटकर भारतके ६० करोड़ लोगोंके लिए व्यापार करना चाहता हूँ और आपके बच्चोंको आजादीकी शिक्षा देना चाहता हूँ। जिन्हें रोटीका टुकड़ा भी नहीं मिलता उन्हें कुछ देनेके लिए आपके पाससे धन माँगने आया हूँ। मुझे अच्छा लगा है कि आजका दिन मैंने धन लूटनेमें नहीं लगाया किन्तु बर्मा निवासी आप लोगोंकी पहचानमें बिताया है। आप मुझे जैसा मैं हूँ, वैसा पहचानें और फिर आपको ऐसा लगे कि मुझे कुछ देना चाहिए तो दें।[1]

मैं सिर्फ गुजरातियोंसे ही पैसा लेने नहीं आया हूँ, बल्कि यह आशा भी करता हूँ कि बंगाली, पंजाबी और तमिल लोग भी मुझे जितना दे सकते हैं उतना देंगे। यह सही है कि मैं गुजरातियोंकी जेब में से ज्यादा लेनेका प्रयत्न करूँगा। चेट्टी लोग करोड़ोंका व्यापार करते हैं। उनके पास लाखोंकी सम्पत्ति है। वे भी मेरी बात टाल न दें। वे यह न भूलें कि मैं भी उन्हींकी जातिका हूँ, गुजरातका चेट्टी हूँ। आप याद रखें कि मैं चौदह वर्षके बाद बर्मा आया हूँ। चौदह वर्षके बाद अकाल पड़े तो उसे भी सहन कर लिया जाता है और लोग बहादुरीसे उसे निभा लेते हैं। तो आप दरिद्रनारायणके इस दूतकी भूख मिटानेका यथासम्भव प्रयत्न करेंगे, ऐसी मैं आशा करता हूँ। मैं चौदह वर्षके बाद आया हूँ और हो सकता है फिर कभी न आऊँ। पर दरिद्रनारायणका पेट कभी नहीं भरता इसलिए उसके प्रतिनिधिका पेट भी कभी नहीं भरता।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य: नारायण देसाई

१०६. भाषण: विद्यार्थियोंकी सभा, रंगूनमें[2]

१० मार्च, १९२९

साथी विद्यार्थियो और मित्रो,

आपके अभिनन्दनपत्रके लिए तथा उस उदार थैलीके लिए जो मैं समझता हूँ दरिद्रनारायणके लिए दी गई है, मैं आपको हार्दिक धन्यवाद देता हूँ। आपमें से जो भारतीय हैं वे तो दरिद्रनारायणका अर्थ जानते ही होंगे, लेकिन शायद बर्मी विद्यार्थी इसके महत्त्वको न जानते हों। मानवजाति जिसे ईश्वरके नामसे जानती है—ऐसा ईश्वर जो अकथनीय है और जिसका रहस्य मानवबुद्धि नहीं पा सकती—उसके करोड़ों नामोंमें से एक है दरिद्रनारायण। दरिद्रनारायणका अर्थ है गरीबोंका ईश्वर, गरीबोंके

१. इसके बादके अनुच्छेदका मिलान **यंग इंडिया**, २८-३-१९२९ में दिये गये विवरणसे कर लिया गया है।

२. सभाका आयोजन जुबली हॉलमें किया गया था। इसमें गांधीजीको १००० रुपयेकी थैली भेंट की गई थी।

हृदयोंमें निवास करनेवाला ईश्वर। इस नामका प्रयोग दिवंगत देशबन्धु दासने एक बार सत्य-दर्शनके पावन क्षणोंमें किया था। इस नामको मैंने अपने अनुभवसे नहीं गढ़ा है बल्कि यह मुझे देशबन्धुसे विरासतके रूपमें प्राप्त हुआ है। देशबन्धु इस शब्दका प्रयोग उस ध्येयके सम्बन्धमें करते थे जिसके प्रति अन्य लोगोंके साथ-साथ मेरा जीवन भी समर्पित है। मेरा तात्पर्य चरखेके सिद्धान्तसे है। मुझे पता है कि अब भी ऐसे बहुतसे लोग हैं जो इस छोटेसे चरखेका मजाक उड़ाते है और मेरे इस खास कार्यको दिमागकी खराबी बताते हैं। इस प्रकारकी आलोचना तथा उपहासके बावजूद मैं चरखेके सिद्धान्तको अपनी सबसे महत्त्वपूर्ण गतिविधियोंमें से एक मानकर इसका पालन करता हूँ और मुझे यकीन है — उतना ही जितना कि मैं आपके सामने भाषण दे रहा हूँ इस बातका यकीन है — कि वह समय आ रहा है जब सारे व्यंग्य और ताने काफूर हो जायेंगे और ताने मारनेवाले घुटने टेककर मेरे साथ यह प्रार्थना करेंगे कि भारतके करोड़ों अधपेट और क्षुधा-पीड़ित लोगोंके उजड़े हुए घरोंमें चरखेको एक स्थायी स्थान प्राप्त हो। जो भारतीय यहाँ बस गये हैं उनके लिए मैं वह सन्देश लानेमें हिचकिचाया नहीं हूँ। बर्मियोंसे खादीके लिए चन्दा देनेकी अपील करनेका मुझे कोई अधिकार नहीं है लेकिन मैं समझता हूँ कि जो भारतीय आपके इस देशमें जीविकोपार्जनके सिवा धनोपार्जन भी करते है उनसे यह कहनेका मुझे हक है कि आप दरिद्रनारायणकी खातिर अपना धन भेंट कर दीजिए।

एक मित्रने मुझे बताया है, मैं नहीं जानता कि इसमें कितनी प्रामाणिकता है, कि विद्यार्थियोंमें ऐसी चर्चा चली है कि बर्मामें खादीके लिए संग्रह करना मेरे लिए उचित नहीं है, और मुझे बर्मामें बर्मियोंके हितके लिए भी कुछ देना चाहिए। यदि यहाँपर मौजूद किसी बर्मीकी ऐसी धारणा हो तो मुझे आशा है कि इस सभाके खत्म होनेपर वह इस बातसे आश्वस्त होकर जायेगा कि यहाँसे इकट्ठे हुए धनका कोई भाग बर्माके लोगोंके लिए खर्च करना मेरे लिए ठीक नही है। इस स्थानीय कार्यके लिए चन्दा इकट्ठा करनेके लिए एक व्यक्तिको सुदूर साबरमतीसे बुलाया जाये, इसे आपको अपनी प्रतिष्ठा और आत्म-सम्मानको चोट पहुँचानेवाली बात समझना चाहिए। उन सब कामोंके लिए तो आपको धन प्राप्त हो जायेगा, मुझे तो आप भारतके करोड़ों क्षुधा-पीड़ितोंके लिए जो-कुछ मैं कर सकता हूँ उसे पूरा करनेके लिए स्वतन्त्र छोड़ दीजिए।

विद्यार्थी जगतके सम्बन्धमें आपने जो सम्मान मुझे दिया है उसे मैं स्वीकार करनेका साहस नहीं कर सकता। लेकिन मैं एक और सम्मान पानेके लिए प्रयत्नशील हूँ। वह है विद्यार्थी-समुदायका सेवक बनना — भारत या बर्माके ही विद्यार्थी समुदायका नहीं बल्कि, यदि आप मेरी यह आकांक्षा बहुत ऊँची न समझें तो कहूँ कि विश्व-भरके विद्यार्थी समुदायका। विश्वके दूरस्थ देशोंके विद्यार्थियोंके साथ मेरा सम्पर्क रहता है और यदि ईश्वरकी कृपासे मुझे जीवनके कुछ वर्ष और मिल जायें तो सम्भव है मैं उस दावेको सार्थक कर दिखाऊँ। मैं जानता हूँ कि मैंने भारतके हजारों-हजार विद्यार्थियोंके साथ महत्त्वपूर्ण सम्बन्ध स्थापित कर लिया है। मेरे मनमें यह कुतूहल था कि यहाँके विद्यार्थियोंमें अधिकांश भारतीय होंगे या बर्मी — भारतीयोंकी

संख्या यहाँ कितनी प्रतिशत है यह जाननेसे मुझे खुशी होती और यहाँके विद्यार्थियोंके जीवनका कुछ परिचय पाना भी मुझे अच्छा लगता। आप बर्मी हैं या भारतीय, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता, आपने तो विश्व-भरके विद्यार्थियोंके लिए उपयुक्त शब्द चुना है, वह शब्द है विद्यार्थी गणतन्त्र। आपने अपनेको अनुत्तरदायी कहा है। जबतक यह चीज सीमामें रहे तबतक तो ठीक है लेकिन जिस क्षण यह सीमासे परे हुई उसी क्षण आप विद्यार्थी नहीं रहेंगे। अपना शैक्षिक जीवन खत्म कर लेनेपर कोई व्यक्ति विद्यार्थी नहीं रह जाता, ऐसी बात नहीं है। कुछ भी हो, अपने पिछले ४० वर्षके जीवनका अवलोकन करनेपर मैं देखता हूँ कि अपना अध्ययन समाप्त कर लेनेके बाद मैंने अपने विद्यार्थी जीवनकी ड्योढ़ीपर पहला कदम रखा था। जीवनका एक अनुभवी ज्ञाता होनेके नाते मुझसे आप इतना तो ग्रहण कर ही लीजिए कि बादके जीवनमें केवल किताबी शिक्षा आपके बहुत कम काम आयेगी। सम्पूर्ण भारतके विद्यार्थियोंके साथ पत्र-व्यवहार करनेपर मुझे पता चला है कि ढेरों पुस्तकोंसे प्राप्त जानकारीको अपने दिमागोंमें ठूँस-ठूँसकर भरनेके कारण उन्होंने अपनेको तबाह कर लिया है। कुछ तो विक्षिप्त गये हैं। कुछ पगला गये हैं, और कुछ अपवित्रताका दयनीय जीवन व्यतीत कर रहे हैं। जब वे कहते हैं कि वे कितनी भी कोशिश कर लें, वे जैसे हैं वैसे ही रहेंगे, क्योंकि वे शैतानसे जीत नहीं सकते, तब मुझे उनसे सहानुभूति होती है। वे दुखके साथ पूछते हैं, "हमें बताइए इस बुराईसे कैसे बचा जाये। हमपर जो मैल चढ़ गया है, उसे कैसे धोया जाये।" जब मैंने उनसे कहा कि आप रामनाम लें, ईश्वरके सामने झुककर उसकी सहायता माँगें तो वे मेरे पास आकर कहते हैं, "हमें नहीं पता ईश्वर कहाँ है। न ही हम यह जानते हैं कि प्रार्थना क्या चीज होती है।" ऐसी है उनकी अधोगति जिसे वे प्राप्त हो चुके हैं। इसीलिए मैं विद्यार्थियोंसे कहता आ रहा हूँ कि अपने ऊपर नियन्त्रण रखो, जो भी साहित्य मिल जाये उस सबको न पढ़ो। मैं तो उनके शिक्षकोंसे भी कहता हूँ कि वे अपने हृदयोंका परिष्कार करें तथा विद्यार्थियोंके साथ एक दिली सम्बन्ध स्थापित करें। मैंने तो यह महसूस किया है कि शिक्षकोंका वास्तविक काम कक्षामें उतना नहीं है जितना उससे बाहर होता है। आजकलके मामूली जीवनमें जिसमें शिक्षक और प्रोफेसर केवल उतना ही काम करते हैं जितनी कि उन्हें तनख्वाह मिलती है, उनके पास इतना समय नहीं होता कि वे कक्षासे बाहर विद्यार्थियोंको समय दे सकें और यही चीज आजकलके विद्यार्थियोंके जीवन तथा चरित्रके विकासमें सबसे बड़ी बाधा है। लेकिन जबतक शिक्षक कक्षासे बाहर अपना सारा समय विद्यार्थियोंको देनेको तैयार नहीं हों तबतक इस सम्बन्धमें कुछ ज्यादा नहीं किया जा सकता। उनको चाहिए कि वे विद्यार्थियोंके मस्तिष्कोंको प्रशिक्षित करनेके बजाय उनके हृदयोंका विकास करें। उनको चाहिए कि वे छात्रोंको अपने शब्दकोशमें से उस हरेक शब्दको मिटानेमें सहायता करें जो हतोत्साह और निराशाका सूचक है। मेरे दिलमें जो-कुछ भी भरा हुआ है वह सब मैं आपके सामने उँडेलनेकी कोशिश कर रहा हूँ। मेरी प्रार्थना है कि आप तालियाँ बजा-बजाकर इसमें रुकावट न डालें। यह आपके और आपके दिलके बीच दीवारका काम करेगा। किसी भी पवित्र कार्यमें असफलता स्वीकार

मत कीजिए और अबसे पक्का इरादा कर लीजिए कि आप जरूर पवित्र बनेंगे और ईश्वर आपकी अवश्य सुनेगा। लेकिन ईश्वर न तो घमण्डी लोगोंकी प्रार्थना सुनता है और न उनकी जो उसके साथ सौदेबाजी करते हैं। क्या आपने गजेन्द्र मोक्षकी कहानी सुन रखी है? यहाँ मौजूद बर्मी विद्यार्थियोंमें से जो विद्यार्थी संसारकी एक महानतम कविताको, संसारकी पूज्यतम वस्तुको न जानते हों, उनसे मेरा कहना है कि वे अपने हिन्दुस्तानी मित्रोंसे उसे सीख लें। एक तमिल कहावत मेरे दिमागमें हमेशा छाई रहती है, जिसका तात्पर्य है, लाचारका सहारा ईश्वर है। यदि आपको उससे सहायता माँगनी है तो आप अपने सच्चे रूपमें बिना किसी शर्तके उसके पास जाइए, और अपने मनमें ऐसा कोई भय और सन्देह भी मत रखिए कि आप जैसे पतित व्यक्तिकी वह कैसे मदद कर सकता है। जिसने अपनी शरण आनेवाले करोड़ों लोगोंकी मदद की है, वह ईश्वर भला क्या आपको छोड़ देगा? वह किसी प्रकारका पक्षपात नहीं करता और आप देखेंगे कि वह आपकी हरेक प्रार्थनाको सुनेगा। यहाँतक कि दूषितसे-दूषित व्यक्तिकी प्रार्थनाका भी जवाब मिलेगा। यह सब मैं आपको अपने व्यक्तिगत अनुभवके आधारपर बता रहा हूँ, मैं शुद्धिकी प्रक्रियामें से गुजर चुका हूँ। पहले प्रभुकी कृपा प्राप्त करिए; उसके बाद हर वस्तु आपको प्राप्त हो जायेगी। अशुद्ध हृदय लेकर अपनी पुस्तकों या अपने शिक्षकोंके पास मत जाइए। शुद्ध हृदय लेकर उनके पास जाइए, तभी आपको जो-कुछ आप चाहते हैं वह प्राप्त होगा। यदि आप चाहते हैं कि आप देशभक्त बनें, सच्चे देशभक्त बनें, निर्बलोंके संरक्षक, उन गरीबों और पीड़ितोंके हितचिन्तक बनें जिन्हें आपको मिलनेवाली शिक्षा नसीब नहीं है, और यदि आप बर्माकी हरेक लड़की और स्त्रीकी पवित्रताके संरक्षक बनना चाहते हैं, तो पहले आप अपने हृदय निर्मल बनाइए। यदि आप इस भावनासे अपने जीवनके ध्येयमें लगेंगे तो सब-कुछ ठीक हो जायेगा।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ४-४-१९२९

१०७. भाषण: श्वे डॉगोन पैगोडा, रंगूनमें

१० मार्च, १९२९

दिनभरकी व्यस्तताने थका डाला है। इसीलिए मैं विस्तारसे कोई भाषण नहीं करूँगा। आप लोग मेरी विवशताको समझ जायेंगे जब मैं आपको बतलाऊँगा कि मेरे शरीरमें इतनी शक्ति नहीं रह गई है कि मैं आपके समक्ष ऊँचे स्वरमें कोई लम्बा भाषण कर सकूँ।[1]

१. यह अनुच्छेद १२-३-१९२९ के **अमृतबाजार पत्रिका**में प्रकाशित एक विवरणसे लिया गया है। इसके बादका अंश महादेव देसाई और प्यारेलाल द्वारा प्रस्तुत गांधीजीकी बर्मा-यात्राके विवरणसे लिया गया है।

इस पावन पुण्य स्थलीमें इतने सारे फुंगियों और श्रोताओंके इतने विशाल समुदायको देखकर निस्संदेह मनको बड़ी प्रेरणा मिलती है और यदि दिनभरकी थकानने मेरे शरीरमें तनिक भी शक्ति छोड़ी होती तो मैं इस प्रेरणाके बलपर काफी लम्बा भाषण देता। परन्तु अपने फुंगी मित्रोंसे मैं इतना तो अवश्य कहूँगा कि संसारके समस्त पुरोहित वर्गके साथ ही आप लोगोंको भी संसारकी जनता निरन्तर कसौटी पर कस रही है। आपकी यह बात सुनकर मुझे खुशी हुई कि बर्मामें फुंगी लोग एक राजनीतिक आन्दोलनका नेतृत्व कर रहे हैं, पर यह याद रखिये कि राजनीतिक संघर्षके नेतृत्वका दायित्व अपने कंधोंपर लेना अपने-आपमें एक अत्यन्त गम्भीर दायित्व है। इतिहास बतलाता है कि राजनीतिक मामलोंमें पुरोहित वर्ग द्वारा किया गया हस्तक्षेप सदा ही मानवताके हितमें नहीं रहा है। बहुधा यही हुआ है कि संसारके पुरोहित वर्गने ठीक उसी भाँति किसी अवांछनीय महत्वाकांक्षाके वशीभूत होकर राजनीतिमें भाग लिया है जैसे नैतिकताहीन व्यक्ति अपने स्वार्थवश राजनीतिकी ओर प्रेरित होते हैं। इसलिए अब यदि आप फुंगी सम्प्रदायके पुरोहित संसारके इस एक सुन्दरतम प्रदेशके राजनीतिक आन्दोलनका नेतृत्व करनेको इच्छुक हैं, तो स्पष्ट है कि आप अपने ऊपर एक भारी दायित्व ओढ़ने जा रहे हैं। मैं आपसे कहता हूँ कि आपके लिए यही काफी नहीं है कि आप इतने शुद्ध-पवित्र रहें कि कोई आपपर शंका तक न करे, आपको तो निष्कलंक पवित्रताके साथ ही साथ अपने अन्दर अत्यन्त ही ऊँचे किस्मकी बुद्धिमत्ता और योग्यता भी पैदा करनी पड़ेगी। यदि बर्माकी समूची जनता आपके आह्वानपर आगे बढ़कर आपका पूरा-पूरा समर्थन करने लगे तो भी यह एक शर्त तो आपको पूरी करनी ही पड़ेगी। हम लोग यहाँ भगवान बुद्धकी छायामें बैठे हैं। इस आन्दोलनसे सम्बन्धित प्रत्येक व्यक्तिको उनका मार्गदर्शन प्राप्त हो।

इस प्रदेशमें अपनी उपस्थितिसे इस सभा-स्थलीकी शोभा बढ़ाने और मेरे पैर रखते ही हर जगह स्नेहपूर्वक मेरा स्वागत-सत्कार करनेके लिए मैं आपका आभारी हूँ। मेरी कामना है कि बर्माकी सरल-हृदय जनताका भविष्य मंगलमय हो।[1]

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २८-३-१९२९

१. यह अनुच्छेद **अमृतबाजार पत्रिकासे** लिया गया है।

१०८. प्रश्नोत्तर[1]

रंगून
१० मार्च, १९२९

प्र० — भारतकी वर्तमान राजनीतिक परिस्थिति क्या है?

उ० — परिवर्तनका क्रम जारी है।

प्र० — भारतको तात्कालिक रूपसे किस प्रकारका शासन मिलनेकी आपको उम्मीद है?

उ० — उसी प्रकारका शासन जिसका विवरण नेहरू-प्रतिवेदनमें दिया गया है।

प्र० — क्या आप समझते हैं कि भारतको औपनिवेशिक स्वराज्य मिल सकता है?

उ० — बिलकुल निश्चित है।

प्र० — क्या औपनिवेशिक शासन व्यवस्थाको वर्तमान परिस्थितियोंके लिए सर्वथा उपयुक्त व्यवस्थाके रूपमें स्वीकार किया जाना चाहिए या उसे भारतीय जनताकी महत्वाकांक्षाओंके एक लक्ष्यके रूपमें लिया जाना चाहिए?

उ० — मेरी राय तो यह है कि यदि औपनिवेशिक स्वराज्य मेरे बतलाये हुए तरीके और मेरे निर्देशित रूपमें प्राप्त किया जाये तो उसे भारतीय शासनकी व्यवस्था का अन्तिम रूप माना जा सकता है। यदि दोनों देशोंको पूर्ण समानताके आधारपर उसमें भागीदार बनाया जाये और दोनोंको इच्छानुसार उससे अलग होनेकी पूर्ण स्वतन्त्रता रहे, तो मैं तो इससे सन्तुष्ट हो जाऊँगा।

प्र० — क्या आप समझते हैं कि भारतको ब्रिटिश साम्राज्यमें शामिल रहना चाहिए?

उ० — ब्रिटिश साम्राज्यके वर्तमान स्वरूपमें तो नहीं; लेकिन साम्राज्यके उस स्वरूपमें शामिल रहना चाहिए जिसकी मैंने कल्पना की है।

प्र० — यदि ब्रिटिश संसद आपको भारतीय सुधारोंके बारेमें चर्चाके लिए आमन्त्रित करे, तो क्या आप इंग्लैंड या भारतमें वैसी किसी चर्चामें भाग लेनेको तैयार हो जायेंगे?

उ० — जी, हाँ; यदि आमन्त्रण सच्चे हृदयसे और सदाशयतापूर्ण हो।

१. बर्माके विभिन्न बौद्ध सम्प्रदायोंके धर्माचार्योंके एक शिष्ट-मण्डलकी ओरसे गांधीजीके सामने एक विस्तृत प्रश्नमाला प्रस्तुत की गई थी। यहाँ दिये गये गांधीजीके उत्तरोंको ट्रिब्यूनके विवरण और महादेव देसाई तथा प्यारेलाल द्वारा लिखे गये गांधीजीके बर्मा-दौरेके विवरणसे मिला लिया गया है।

प्र० — क्या आपका खयाल है कि सदाके लिए भारतका ही एक अंग बनकर रहना बर्माके लिए हितकर होगा ?[1]

उ० — मेरे लिए इस प्रश्नका उत्तर देना कठिन है। मैं इतना ही कह सकता हूँ कि बर्मा यदि समानताके आधारपर भारतका एक हिस्सेदार बनकर रहना चाहे और उसमें दोनों ही देशोंको इच्छानुसार अलग होनेकी पूर्ण स्वतन्त्रता रहे, तो यह बर्माके लिए हितकर ही रहेगा। मुख्य बात यह है कि बर्माको अपनी इच्छानुसार अपना भाग्य निश्चित करनेका सर्वथापूर्ण अधिकार रहना चाहिए।

प्र० — क्या आपके विचारमें भारतके स्वराज्यवादियों द्वारा अपनायी गई नीति उस देशको अपनी वांछित शासन-व्यवस्था प्राप्त करनेमें सहायक होगी ?

उ० — जी, नहीं, मैं ऐसा नहीं सोचता।

प्र० — क्या बर्मामें बसनेवाले भारतीय विदेशी वस्तुओंके बहिष्कारमें और बर्मी उद्योग-धन्धोंकी सहायता करनेमें बर्मी जनताका साथ देंगे ?

उ० — विदेशी वस्तुओंके नहीं, केवल विदेशी वस्त्रोंके बहिष्कारमें। सभी विदेशी वस्तुओंके बहिष्कारकी बात अव्यावहारिक है। हाँ, वर्तमान परिस्थितिमें विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार जरूर सम्भव है और इसे सम्पन्न करना आपके लिए अच्छा भी रहेगा। इस काममें भारत आपका साथ देगा और भारत यदि आपके देशी उद्योग-धन्धोंकी सहायता नहीं करता, तो वह एक निकम्मा पड़ोसी बन जायेगा।

प्र० — बर्मामें अल्पसंख्यकोंको क्या संरक्षण दिया जाना चाहिए ?

उ० — वही जो भारत अपने यहाँके अल्पसंख्यकोंको देता है; बर्मामें बसनेवाले भारतीय अल्पसंख्यकोंको उससे अधिक कोई संरक्षण नहीं देना है। यदि हम अपने गुणोंके बलपर ही बर्मामें नहीं रह सकते तो हमें यहाँसे हट जाना चाहिए।

प्र० — बर्मामें अपनी मनोवांछित शासन-व्यवस्था प्राप्त करनेके प्रयासमें भारतीय और बर्मी जनता, दोनों ही के धनी और निर्धन, दोनों ही वर्गोंके लोगोंका समान रूपसे सहयोग प्राप्त करनेके लिए आप हम दोनोंको क्या करनेकी सलाह देंगे ?

उ० — हमें एक-दूसरेके प्रति मैत्री और सद्भाव रखना और ऐसा ही व्यवहार करना चाहिए; सन्देह और अविश्वासकी भावनासे एक-दूसरेको नहीं देखना चाहिए। यदि किसी समाजमें चन्द धूर्त व्यक्ति हों तो पूरे समाज या समुदायको बुरा नहीं कहना चाहिए। प्रत्येक समुदायको दूसरे समुदायोंके साथ पड़ोसीकी तरह सहयोगकी भावनासे रहना चाहिए; दूसरोंपर प्रभुत्व जमानेकी कोशिश नहीं करनी चाहिए। इस प्रकार यह बात तो बिलकुल स्पष्ट है कि यदि कोई समुदाय अपने कल्पित हितोंके संरक्षणके लिए ब्रिटिश संगीनोंकी ताकतका भरोसा करेगा, तो उसके और अन्य समुदायोंके बीच कभी वास्तविक सहयोग नहीं हो सकता। सार रूपमें हमारी संस्कृति वही है जो आपकी, हालाँकि बाहरी रूपरेखामें अन्तर दिखता है। मैं चाहता हूँ कि इस क्षेत्रमें हम चीनके इतिहाससे सबक हासिल करें, जहाँ कन्फूशियस पंथी, बौद्ध,

१. यह प्रश्न और इसका उत्तर *यंग इंडिया*से लिये गये हैं।

ईसाई और मुसलमान सभी लोग एक दूसरेमें घुलमिल गये हैं और वे अपने आपको इस या उस धर्मका अनुयायी न मानकर सब अपनेको चीनी ही कहते हैं। बर्मा, लंका, स्याम, मलाया, जापान और भारत——इन सभी देशोंमें कुछ समान बुनियादी तत्व मौजूद हैं, और इसी कारण इन सभी देशोंको पाश्चात्य शोषणके समान खतरेका सामना करनेके लिए परस्पर सहयोग कर सकना चाहिए।

प्र० – बर्माकी वर्तमान राजनीतिक परिस्थितिको देखते हुए आपकी रायमें हमे क्या कार्य-नीति अपनानी चाहिए?

उ० – जहाँतक मैं समझ पाया हूँ, भारत और बर्माकी परिस्थितियाँ समान हैं। दोनोंके लिए मेरे पास एक ही इलाज है——अहिंसात्मक असहयोग। पर मैं यहाँकी स्थानीय परिस्थितिके बारेमें बिलकुल ठीक कुछ नहीं कह सकता। आपको सावधानी-पूर्वक आन्दोलनका अध्ययन करके राष्ट्रीय आधारपर एक कार्यनीति तय करनी चाहिए ——अपने वातावरण विशेष और अपनी सामाजिक परिस्थितियोंके अनुरूप। मैं नहीं चाहता कि आप अविवेकपूर्ण ढंगसे मात्र अनुकरण करें। आपके हर कदमके पीछे एक विश्वास, और उसे व्यवहार रूपमें परिणत करनेका एक संकल्प होना चाहिए। मैं यदि अपनी रायपर अमल करानेके लिए यहाँ मौजूद नहीं रह सकता तो मैं अपनी रायकी कोई उपयोगिता नहीं मानता। आप कहते हैं कि आपके देशमें भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस-जैसा कोई भी शक्तिशाली संगठन नहीं है, जो सारी जनताको एक कार्यक्रमपर चला सके। तब आपके लिए सबसे अच्छा यही रहेगा कि आप भारतकी कांग्रेससे सम्बद्ध एक ऐसी संस्था अपने यहाँ खड़ी करें जिसके कार्यकर्त्ता ईमानदार और त्यागी हों और जो कार्यकर्त्ताओंकी संख्यामें नहीं, बल्कि उनके गुणोंके बलमें भरोसा करती हो।

प्र० – क्या भारतीय नेता विषयोंके बँटवारेके बारेमें चर्चा करनेके लिए बर्मी नेताओंके साथ बैठनेको तैयार हैं?

उ० – तैयार न होनेका कोई कारण मुझे दिखाई नहीं पड़ता।[1]

बौद्ध धर्माचार्योंने गांधीजीसे शिकायतकी कि बर्मामें कोई ऐसी केन्द्रीय संस्था नहीं है जो उनके राष्ट्रको सक्रिय बनाकर किसी एक कार्यनीतिपर चला सके। गांधीजीने उनको बतलाया कि इसका इलाज उनके ही अपने हाथमें है, बशर्ते कि वे अपना कर्त्तव्य निभानेको तैयार हों।

साधुओं और मठोंके इस देशमें जहाँ स्त्रियोंको इतनी स्वतन्त्रता और पुरुषोंके साथ समानताका दर्जा प्राप्त है, जहाँ लोगोंकी प्रवृत्ति इतनी सरल और आश्चर्यजनक रूपसे आस्थावान है, ऐसे देशमें तो यदि आप फुंगी लोग बस अपनी काहिली और अपनी सुस्तीको ही त्याग दें तो चमत्कार कर दिखा सकते हैं। आपकी आध्या-त्मिकता मात्र निष्क्रियताकी आध्यात्मिकता नहीं होनी चाहिए जो निठल्ले ध्यान और मननमें समय गँवा देती है। आपकी आध्यात्मिकता एक ऐसी सक्रिय वस्तु

१. इसके बादका अंश यंग इंडियासे लिया गया है।

होनी चाहिए जो शत्रुपर आक्रमण भी कर सके और बर्माके एक कोनेसे दूसरे कोने तक जनताके हृदयमें अलख भी जगा सके। समूचे बर्मामें एक ऐसी ज्योति जग उठनी चाहिए कि वह वातावरणमें व्याप्त सारी सुस्ती, काहिली और अपवित्रताको भस्म कर दे। आपकी प्रकृति आज इतनी शान्तिप्रिय है कि आप एक मक्खीको भी चोट नहीं पहुँचायेंगे; पर इतना ही तो पर्याप्त नहीं है। किसी भी व्यक्तिको फुंगियोंके वस्त्र धारण करनेका तबतक कतई कोई अधिकार नहीं जबतक कि वह मक्खीको लगनेवाली चोटकी पीड़ा स्वयं महसूस करके उस मक्खीको बचानेके लिए दौड़ नहीं पड़ता। आपने संसार त्यागकर धर्मका जीवन अपना लिया है। आपकी स्थितिमें पहुँचकर व्यक्तिको न शासक-सम्राटोंका भय रह जाता है और न जनताका ही; क्योंकि ऐसे व्यक्तिके लिए भोजन और वस्त्र मिलना न मिलना बराबर ही होता है। वह सदा ईश्वरीय आलोकमें रमता है, सत्यके प्रति उसके मनमें दृढ़ निष्ठा होती है। इसलिए उसे हर प्रकारके अन्याय, हर प्रकारकी अपवित्रता, असत्य और अत्याचारके विरुद्ध, जहाँ भी ये दिखाई पड़ें, सीना तानकर खड़े हो सकना चाहिए। मैं चाहता हूँ कि आप अपने अन्दर ऐसी ही आन्तरिक शक्ति पैदा करें।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २८-३-१९२९ और **ट्रिब्यून**, ९-४-१९२९

१०९. भाषण: मजदूरोंके बीच, रंगूनमें[1]

१० मार्च, १९२९

आपको शायद मालूम नहीं होगा कि तिलक स्वराज्य कोष जमा करनेके दिनों मेरे सामने प्रस्ताव रखा गया था कि यदि मैं दस मिनटके लिए भी एक व्यावसायिक नाट्य-प्रदर्शनको देखने चला जाऊँ तो मुझे चन्देके रूपमें पचास हजार रुपये मिल सकते थे। पर मैंने मना कर दिया था। यह नहीं कि मुझे व्यावसायिक अभिनेताओं के बीच उठने-बैठनेसे नफरत है; क्योंकि मैं तो सभी वर्गोंके मनुष्योंके साथ भाईचारा जोड़ता हूँ। लेकिन मेरी स्थितिमें आनेपर मनुष्यके लिए जरूरी हो जाता है कि वह अपने व्यक्तिगत आचरणको ठीक रखनेके साथ ही साथ इस बातका खयाल भी रखे कि उसके आचरणका दूसरोंपर क्या प्रभाव पड़ेगा। सार्वजनिक नाटकघरोंमें जानेके अन्य जो भी परिणाम हों, यह तो निश्चित ही है कि इस देशमें नाटकोंने अनेकानेक युवकोंका आचरण और चरित्र भ्रष्ट कर दिया है। आप पक्की उम्रके लोग चाहे अपनेको नाटकोंके दुष्प्रभावसे बिलकुल बरी मान लें, लेकिन आपको

१. मजदूरोंकी ओरसे एक नाटकका आयोजन किया गया था और उससे होनेवाली आमदनी गांधीजीको चन्देके रूपमें देनेका वचन दिया गया था। गांधीजी समझ रहे थे कि उनको किसी मजदूर-प्रदर्शनमें ले जाया जा रहा है; वहाँ नाटक पाकर उनको आश्चर्य हुआ। यह भाषण महादेव देसाई और प्यारेलाल द्वारा प्रस्तुत गांधीजीके बर्माके दौरेके विवरणसे लिया गया है।

अपने छोटे-छोटे बच्चोंका भी तो खयाल करना चाहिए जिनको आपत्तिजनक नाटकोंमें ले जाकर आप उनके निर्दोष, निष्पाप मनके साथ कितना बड़ा अनाचार करते हैं। आप चारों ओर नजर तो डालिए। हमारे चारों ओर एक ज्वाला धधक रही है। वर्तमान व्यवस्थाके कुप्रभावमें पनपनेवाले सिनेमा, नाटक, घुड़-दौड़, शराबखाने और अफीमघर इत्यादिके रूपमें समाजके ये सभी शत्रु चारों ओरसे मुँह बाए हमारी घातमें खड़े हैं। तब यदि मैंने वर्तमान व्यवस्थाको शैतानियतकी व्यवस्था कहनेमें कोई संकोच नहीं किया तो क्या गजब कर दिया? इसीलिए आपको मेरी यही सलाह है कि अपने मार्गके अन्धकूपोंसे सावधान!

और अभिनयको अपना पेशा बना लेनेवालो, आप लोगोंको मेरी सलाह है कि भले ही आप अपना पेशा जारी रखें, पर हाँ आचरणकी शुद्धि बनाये रखिए। मैं जानता हूँ कि आपके सामने बड़े-बड़े प्रलोभन आते रहते हैं। तब यदि आप अपना चरित्र शुद्ध बनाये रखनेमें डगमगाने लगें तो ईश्वरके लिए एक क्षणकी दुविधाके बिना अपने पेशेको लात मार दीजिए। ईश्वर आपकी सहायता करेगा। मजदूर सदा ही अपनी मजूरीका अधिकारी तो होता ही है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २८-३-१९२९

११०. पत्र : मीराबहनको

रंगून
११ मार्च, १९२९

चि० मीरा,

तुम्हारे चार पत्र मिले, जिनमें से तीन आज ही मिले। यहाँसे केवल तीन बार जहाज आते-जाते हैं। परन्तु तुम इसकी चिन्ता मत करो। मैं रंगूनसे एक ही बारम कई दिनोंके लिए बाहर नहीं जाता। मैं बर्मासे २१ तारीखको चल दूंगा —— मुकदमे[1] में हाजिरीके लिए। आशा है कि मैं २४ तारीखको कलकत्ता पहुँच जाऊँगा और २६ को वहाँसे चल दूंगा।

इस बार तुमको जिस प्रकारकी आशंकाने घेरा था, वह शायद अनिवार्य ही ही है। जितनी सतर्कता रख सकती हो, रखो और यदि इसके बावजूद ऐसी स्थितिका सामना करना पड़ जाये तो घबड़ाओ मत। निराहार रहना निःसन्देह ही इसका सबसे सीधा और अचूक इलाज है। कमजोरी बढ़नेकी चिन्ता मत करो और आसानीसे जितना काम निबटा सकती हो, उससे ज्यादाकी जिम्मेदारी अपने ऊपर मत ओढ़ो। 'शीघ्रता करो पर धीरे-धीरे।'

१. मुकदमा कलकत्ताके प्रेसीडेंसी मजिस्ट्रेटकी अदालतमें २६ मार्च, १९२९को होनेवाला था।

प्रिवाका[1] एक पत्र मुझे मिला है। यहाँ जो भी कुछ हो रहा है, उससे यही सिद्ध होता जा रहा है कि इस वर्ष यूरोप न जानेका मेरा निर्णय कितना बुद्धिमानी-का था। वास्तवमें उपयुक्त समय आनेपर अन्तरात्मासे स्पष्ट आवाज उठेगी और मार्ग भी सामने खुल जायेगा।

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च :]

मैंने तुमको बतलाया या नहीं कि जाकिर हुसैन मेरे साथ ही है। मैं उससे जितना अधिक परिचित होता जाता हूँ उतना ही अधिक उसको पसन्द करता जाता हूँ। सब ठीक चल रहा है।

अंग्रेजी (जी० एन० ९४०५)से; तथा सी० डब्ल्यू० ५३४९ से भी।
सौजन्य : मीराबहन

१११. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

रंगून
मौनवार [११ मार्च, १९२९][2]

बहनो,

आज तो तुम्हें याद करने जितना ही समय मेरे पास है।

तुम्हारा पत्र आगामी डाकमें आये तो आये। डाकको बराबर सात दिन लग जाते हैं।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–१ : आश्रमनी बहेनोने

१. देखिए "पत्र : एडमंड प्रिवाको", ९-३-१९२९।
२. साधन-सूत्रमें "४ मार्च, १९२९" है जो कि स्पष्ट रूपसे भूल है।

११२. पत्र : छगनलाल जोशीको

मौनवार, ११ मार्च, १९२९

चि० छगनलाल,

आज तीन डाक एक साथ मिलीं। आज रात मौलमीनके लिए रवाना होंगे और वहाँसे बुधवारको लौटेंगे। तबतक एक और डाक तो आ ही जायेगी। अभी जो डाक मिलेगी वह यहाँ मंगलवारको पहुँचेगी। तुम्हें कपड़ेके अस्तरवाले लिफाफे वापस भेज रहा हूँ जिससे तुम उनका उपयोग कर सको। ऐसे ही एक लिफाफेमें तुम्हें यह डाक भेजूंगा।

यहाँ संग्रह ठीक हो रहा है।

तुम जैसे-जैसे धीरज रखना सीखोगे वैसे-वैसे तुम्हारी कठिनाइयाँ दूर होती जायेंगी।

जो मकान खाली हैं उनका उपयोग करना तो जरूरी है।

दुर्गा और मैत्रीसे दृढ़तापूर्वक काम लेना चाहिए। प्रेम और दृढ़तामें परस्पर कोई विरोध नहीं है। जरूरत पड़नेपर तो प्रेम ही दृढ़ रह सकता है क्योंकि उसे कुछ भय नहीं होता। कुशल वैद्य जिस समय चीर-फाड़ करता है, देखनेवालेकी आँखोंके आगे अंधेरा छा जाता है। लेकिन यदि वैद्यकी चीर-फाड़में किसी तरहकी कसर रह जाये तो रोगीके प्राण जायेंगे।

छगनलाल गांधीसे पूरी तरह मदद लेना। वह तो बहुत सहायता करनेवाला मनुष्य है। सिर्फ उसके साथ बनाये रखना आना चाहिए। और उसकी वृद्धावस्थाका विचार कर ऐसा करना भी चाहिए। अभी तो अशान्ति या भागदौड़में वह ज्यादा काम नहीं कर सकता। अनुकूल वातावरणमें धीरे-धीरे वह बहुत-सा काम कर सकता है।

पारनेरकरकी माताजीके बारेमें तो तुम सबको विचार कर लेना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

रतिलाल और चम्पा मेरे साथ होंगे। बंगलेके ऊपरके भागकी उन्हें जरूरत होगी। वे अपने लिए नौकर-चाकरका प्रबन्ध स्वयं करेंगे। इसलिए हमें बहुत नहीं करना पड़ेगा।

गुजराती (जी० एन० ५३९१) की फोटो-नकलसे।

११३. पत्र : बहरामजी खम्भाताको

रंगून
११ मार्च, १९२९

भाईश्री खम्भाता,

मेरे ऊपर कलकत्तामें मुकदमा चल रहा है; इसलिए तारीखका निश्चय[1] तो मुकदमेके बाद ही कर सकता हूँ। इसलिए फिलहाल तो मुझसे इतना पहले कुछ कह सकनेकी आशा तो न रखें। मुझे २५ तारीखको कलकत्तामें तार दें। मेरी प्रार्थना तो यह है कि यदि यह काम मेरे ही हाथों कराना हो तो फिलहाल धैर्य रखें। मुझे थोड़ी फुरसत मिलने दें।

बापूके आशीर्वाद

भाई बहरामजी खम्भाता
२७५ हार्नबी रोड
फोर्ट, बम्बई

गुजराती (जी० एन० ६५९२)की फोटो-नकलसे।

११४. पत्र : प्रभावतीको

रंगून
मौनवार [११ मार्च, १९२९][2]

चि० प्रभावती,

ऐसी ढीली क्यों? रोना क्या? दुःख क्या? हमारे साथ हमेशाके लीये कोई नहीं बैठेगा। हम सबसे प्रेम करें और सबके प्रेमका अनुभव करें। सेवाधर्म करते हुए हमें कहां दुसरा ख्याल करनेका भी समय रहता है?

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

आंध्रके बारेमें मैंने अबतक पिताजीसे पूछा नहिं है अब पूछुंगा।

जी० एन० ३३३२ की फोटो-नकलसे।

१. देखिए "पत्र : बहरामजी खम्भाताको", २३ फरवरी, १९२९।
२. गांधीजी मौनवार, ११ मार्च, १९२९ को रंगूनमें थे।

११५. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

मौलमीन (बर्मा)
१२ मार्च, १९२९

तुम्हारा पत्र मुझे मिल गया। सचमुच तुम्हारा यह विचार बड़ा सुन्दर है कि इस बारका ग्रीष्मकाल तुम इंग्लैंडमें वहाँकी घटनाओंपर नजर रखते हुए बिताओ और किसी भी नई घटनाके[1] लिए अपने आपको तैयार रखो।

यहाँ होनेवाली हर उथल-पुथलके बारेमें तुमको 'यंग इंडिया'से पता चलता रहेगा। आशा है वह तुमको नियमित रूपसे मिल रहा होगा।

कोल्हापुरकी तरह यदि फिर मुझे पलंगपर पड़ना ही पड़ा, तो फिर वही सही। वैसे मैं अपनी तरफसे कोशिश कर रहा हूँ कि जितनी शक्ति बचा सकूँ, बचाऊँ, लेकिन मैं यह भी महसूस करता हूँ कि मेरे ऊपर जो काम आ पड़ा है उसे मैं टाल तो नहीं सकता।

मौलमीनमें कामके भारी दबावके कारण मैं यह पत्र बोलकर लिखा रहा हूँ।

सी० एफ० एन्ड्रयूज महोदय
मार्फत श्रीमती एम्हर्स्ट
११७२, पार्क एवेन्यू
न्यू यार्क सिटी

अंग्रेजी (एस० एन० १३३७२)की फोटो-नकलसे।

११६. पत्र : प्रफुल्लचन्द्र घोषको

मौलमीन
१२ मार्च, १९२९

प्रिय प्रफुल्ल बाबू,

आपका पत्र मिल गया। आपका तार मिलते ही मैंने तार दे दिया था[2] और मुझे आशा है कि डा० अन्सारी उसका उद्घाटन कर देंगे।

मैं २४ तारीखको कलकत्ता लौटूँगा और वहाँ २६ तक रहूँगा। अब विदेशी वस्त्रोंके बहिष्कारके सिलसिलेमें आपको किसी विशेष हिदायतकी जरूरत नहीं। उसमें

१. एन्ड्रयूजने अपने ४ फरवरीके पत्रमें पूछा था: "क्या मेरे लिए यही ज्यादा ठीक नहीं रहेगा कि मैं वापस आनेपर इस बारकी ग्रीष्मऋतु इंग्लैंडमें ही बिताऊँ? मैं अपने देशवासियोंको यह समझानेकी जी-तोड़ कोशिश कर रहा हूँ कि भारतको औपनिवेशिक स्वराज्य देनेकी आवश्यकता इतनी तीव्र हो गई है कि उसमें विलम्ब नहीं किया जा सकता . . .।"

२. तार उपलब्ध नहीं है।

कहीं कोई कठिनाई नहीं है। पर कलकत्तामें मेरे ठहरनेके दौरान तो शायद हमारी मुलाकात होगी ही।

हृदयसे आपका,

डा० प्रफुल्लचन्द्र घोष
अभय आश्रम
कोमिल्ला

अंग्रेजी (एस० एन० १३३७६)की फोटो-नकलसे।

११७. पत्र : टी० एन० कालिदासको

स्थायी पता :
आश्रम
साबरमती
१२ मार्च, १९२९

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। धन्यवाद। आपने जो कागजात भेजे हैं, मैं कमसे-कम अभी तो उनको नहीं ही देख पाऊँगा। इसलिए मैं अपने ही अनुभवके आधारपर 'यंग इंडिया' में जो भी कुछ लिखूँ, आपको उसीपर सन्तोष करना पड़ेगा। मैं सम्भवतः आदर्श हिदायतोंका एक मसविदा तैयार करके उसे 'यंग इंडिया' में प्रकाशित करनेकी कोशिश करूँगा।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत टी० एन० कालिदास
वकील, हाई कोर्ट
रेलवे यात्री संघ
तंजौर
दक्षिण भारत

अंग्रेजी (एस० एन० १३३७५)की माइक्रोफिल्मसे।

११८. पत्र : मीराबहनको

मौलमीन
१२ मार्च, १९२९

चि० मीरा,

मैं यह पत्र बोलकर लिखा रहा हूँ, सिर्फ इसलिए कि एक पत्र तुम्हें मौलमीनसे भेज दूँ। मौलमीन बड़े ही सुरम्य परिवेशमें स्थित है। यह घर खाड़ीके किनारे स्थित है। इस छोटेसे नगरकी आबादी ६० हजार है। इसलिए बड़ी शान्ति रहती है। अभी गर्मीका मौसम ठीक-ठीक शुरू नहीं हुआ है। बारिशके कारण आज यहाँ खास तौर पर ठण्डक है।

मुझे आशा है कि बुखारसे शरीरमें आई तुम्हारी कमजोरी अबतक पूरी तरह दूर हो गई होगी।

बापू

श्रीमती मीराबाई
छतवाँ छोट्टाइपट्टी
जिला—दरभंगा, बिहार

अंग्रेजी (जी० एन० ९४०६)से; तथा सी० डब्ल्यू० ५३५०से भी।
सौजन्य : मीराबहन

११९. पत्र : आचार्य रामदेवको

मौलमीन
१२ मार्च, १९२९

प्रिय रामदेवजी,

आपने बिलकुल ठीक ही कहा कि इस वर्ष गुरुकुलके वार्षिक समारोहमें मेरे शामिल होनेकी कोई आशा नहीं करनी चाहिए। स्नातकोंको मेरा सन्देश है :

"आपकी कसौटी न तो आपका अंग्रेजी भाषाका और न ही आपका संस्कृतका ज्ञान होगा; आपकी सच्ची कसौटी तो आपका चरित्र ही होगा, जो आपके जीवनके नित्य-प्रतिके कामोंमें हजारों रूपोंमें प्रकट होता रहेगा। आपकी सफलता इस बातसे सिद्ध होगी कि आप सिद्ध कर दें कि आजके युगमें भी मन, वचन और कर्ममें पूर्ण ब्रह्मचर्यका पालन किया जा सकता है।"

और हाँ, आपने गुजरात विद्यापीठके विद्यार्थियोंके समक्ष दिये अपने अभिभाषणकी प्रति अबतक मुझे नहीं भेजी। मैं चाहता हूँ कि आप विदेशी वस्त्र-बहिष्कारको हर तरहकी सहायता दें।

हृदयसे आपका,

आचार्य रामदेव
गुरुकुल कांगड़ी
जिला-बिजनौर

अंग्रेजी (एस० एन० १३३७७)की फोटो-नकलसे।

१२०. पत्र : नलिनीमोहन रायचौधरीको

कैम्प, मौलमीन
१२ मार्च, १९२९

प्रिय मित्र,

आपका तार मिल गया। मुझे दुःखके साथ कहना पड़ता है कि मैं आपके कृपापूर्ण निमन्त्रणको स्वीकार नहीं कर सकता क्योंकि रंगपुरमें प्रान्तीय परिषद्की जो तिथि रखी गई है उसी तिथिको काफी पहलेसे एक सार्वजनिक कार्यक्रम निश्चित किया जा चुका है। पर मैं आपके सम्मेलनकी पूरी सफलताकी कामना करता हूँ और आशा है कि परिषद् विंटर्टनकी चुनौती[1] स्वीकार करेगी और इस वर्षके दौरान ही विदेशी वस्त्रोंका पूर्ण बहिष्कार सम्पन्न करनेके लिए हर प्रयास करेगी। इसी एक बातमें पूर्ण सफलता प्राप्त कर लेनेसे हमें अपनी शक्तिकी जैसी प्रतीति हो जायेगी वैसी किसी अन्य चीजसे नहीं हो सकती, ऐसा मेरा विश्वास है।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत नलिनीमोहन रायचौधरी
अध्यक्ष, बंगाल प्रान्तीय परिषद्
रंगपुर (बंगाल)

अंग्रेजी (एस० एन० १३३७१)की फोटो-नकलसे।

१. देखिए "अहम्मन्यता और अज्ञान", २१-३-१९२९।

१२१. पत्र : श्रीमती आर० सरदारखानको

स्थायी पता :
आश्रम
साबरमती
१२ मार्च, १९२९

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिल गया। मनमें आपके साथ सम्वेदना पैदा हुई, क्योंकि हाल ही में मेरा भी एक पौत्र[1] नहीं रहा। वह परिवारमें सभीका लाडला था। परन्तु मैंने उसकी मृत्युसे यही सीखा है कि हमें अपने आपको ईश्वरेच्छापर छोड़ देना चाहिए। आखिर जन्म और मरण, वास्तवमें अलग-अलग चीजें नहीं, एक ही तथ्यके दो पहलू हैं। और यदि ऐसा है, तो फिर दु:ख क्यों मनाया जाये?

हृदयसे आपका,

श्रीमती आर० सरदारखान
ई० सी० एच० एस०
लुधियाना

अंग्रेजी (एस० एन० १३३७४)की माइक्रोफिल्मसे।

१२२. भाषण : गुजरातियोंकी सभा, मौलमीनमें

१२ मार्च, १९२९

आप लोग काममें जुटे हुए हैं। किन्तु मुझे आपसे भी ज्यादा काम है। इसलिए मेरा एक-एक क्षण मूल्यवान है, आप यह समझ लें। मुझे जब खबर मिली कि आप लोगोंने सिर्फ ५००० रुपये एकत्र किये हैं तब मुझे दुख हुआ। क्या आपको मालूम है कि मैं किसके लिए इतना भटकता हूँ? मैं बहुत थका हुआ हूँ और इस वर्ष तो थकावटकी कोई हद ही नहीं है। मैं बहुत चाहता हूँ कि आराम करूँ। किन्तु आराम कैसे ले सकता हूँ? मैं किसीको आराम करने दूँ तभी आराम ले सकता हूँ न? और मैं दूसरोंको आराम करने भी कैसे दूँ? जहाँ अपने घरमें आग लगी हो वहाँ पर चारपाईपर पड़े रहनेसे क्या होगा? आग लगी हो तो बीमार पड़ा हुआ मनुष्य भी बिस्तरसे उठ बैठता है और आग बुझानेका प्रयत्न करता है। आज तो पूरे देशमें आग सुलग रही है। पूरे देशकी आत्माका गला घोटा जा रहा है। किन्तु जो

१. रसिक गांधी; देखिए "एक होनहार बालक", २१-२-१९२९।

सोये हुए हैं, उन्हें आग लगी हुई है इसकी खबरतक नहीं है। एक बार मेरी बुआका बेटा जिस घरमें सोया हुआ था, उसमें आग लग गई थी, पर उसे खबर नहीं पड़ी। जगानेपर वह उठकर भागा। यदि हम भी सोये हुए हैं तो आग हमें जलाकर राख कर देगी। मैं तो नींदमें डूबे हुए लोगोंको जागृत करने आया हूँ। बर्मी लोगोंको यदि मै कुछ दे सकूँ तो देने आया हूँ। किन्तु आपके पाससे तो मैं कुछ लेने ही आया हूँ। आपको यह जानकर दुख होगा और होना भी चाहिए कि खादी प्रवृत्तिका ज्यादा काम आज मारवाड़ियोंके हाथमें है। मै चाहता हूँ कि यह भार गुजराती उठायें। [गुजरातमें] हमारे यहाँ एक अद्वितीय विद्यापीठ है। यदि मैं यह कहूँ कि आज यह विद्यापीठ गुजरातके सार्वजनिक जीवन, गुजरातकी सेवा प्रवृत्तिका केन्द्र है तो इसमें कोई अतिशयोक्ति न होगी। डा० प्राणजीवन मेहता जिन्होंने यहाँकी शालाके मकानके लिए दस हजार रुपये दिये हैं, उन्हें आप जानते होंगे। एक समय उनको यह बड़ी इच्छा थी कि वे आधा समय गुजरातमें और आधा बर्मामें बितायें। वे बर्मामें कमाई करनेके बाद गुजरातमें बैंक बनाना चाहते थे ताकि उसमें से जितना पैसा देशके कामके लिए लेनेकी जरूरत हो उतना पैसा मैं लेता रहूँ। संक्षेपमें मेरा उनके साथ यह करार था कि वह जी-भर कर कमायें और मै उस कमाईमें से जी-भरकर पैसा लूँ और जी-भर कर काम करूँ। गोखलेने भी एक बार मुझे इसी प्रकार निर्भय कर दिया था। किन्तु आज गोखले नहीं हैं। आज प्राणजीवनदास शरीरसे अपंग होकर बैठे हैं। इसलिए मेरा भार कौन उठाये? यह भार मैं गुजरातियोंपर डालना चाहता हूँ। मैं आपसे करोड़ों रुपया नहीं माँग रहा हूँ। मैंने कभी जरूरतसे ज्यादा पैसा नहीं माँगा। दक्षिण आफ्रिकासे मैंने गोखलेको तार दिया था; "अब और पैसा मुझे न भेजें।" किन्तु वे भेजते ही गये। फल यह हुआ कि मैं ढाई लाख रुपया बचाकर वापस ले आया और वह साम्राज्यीय नागरिक संघको दे दिया। इस धनसे आज उपनिवेशोंमें बसनेवाले भारतीयोंका काम होता है। किन्तु मेरी कार्यप्रणाली जुदा है। मैं ब्याजसे काम नहीं चलाता हूँ। मैं तो लोगोंकी बहादुरीसे काम चलाता हूँ। हर वर्ष लोगोंके सामने बजट पेश करता हूँ और कहता हूँ कि आप लोगोंको मेरा काम पसन्द हो तो खर्चके लिए धन दें। मेरी दरिद्रनारायणकी पेढ़ीमें कितने धनकी जरूरत है? आग कितने घीसे शान्त होती है, यदि आप इसका अनुमान लगा सकें तो मेरी भूख कितने धनसे दूर हो सकेगी इसका माप मिल सकता है। तो भी मैं आपसे कह दूँ कि आज कोई मुझे ६० करोड़ रुपया दे दे, तो मुझसे उसका उपयोग नहीं हो सकेगा, क्योंकि मेरे पास इतने कार्यकर्त्ता नहीं हैं। भगवानने शक्तिकी सीमा बाँध कर मनुष्यको भटकनेसे रोकनेके लिए एक रक्षात्मक बाड़ बना दी है। इसलिए आज मैं जितनेकी व्यवस्था कर सकता हूँ, उतना ही माँगता हूँ।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २४-३-१९२९

१२३. भाषण: मौलमीनमें[1]

१२ मार्च, १९२९

मौलमीनमें भाषण करते हुए गांधीजीने कहा कि भगवान बुद्धने अहिंसा और पड़ोसियोंके प्रति कर्त्तव्यके जिन महान सिद्धान्तोंकी शिक्षा दी है, चरखा उसीका एक प्रत्यक्ष उपसिद्धान्त है।

आप लोग बुद्धकी शिक्षामें विश्वास रखते हैं, और उनकी शिक्षाओंमें विश्वास रखनेवाले व्यक्तिके लिए एक क्षण भी आलस्यमें गँवाना उचित नहीं है। प्रकृतिके नियमानुसार हमें मेहनत करके अपनी रोटी कमानी चाहिए। यदि हम एक मिनट भी आलस्यमें व्यर्थ गँवाते हैं तो उस हदतक हम अपने पड़ोसियोंके ऊपर भार बनते हैं, और ऐसा करना अहिंसाकी पहली शिक्षाका उल्लंघन करना है। अहिंसा यदि अपने पड़ोसियोंकी सुविधा-असुविधाका सुसंतुलित ध्यान रखना नहीं है तो फिर वह व्यर्थ है। और आलसी आदमीमें अपने पड़ोसीके प्रति इस बुनियादी भावनाका अभाव होता है। इस निंदनीय स्थितिको सुधारनेके लिए मैं आपसे वही उपाय अपनानेको कह सकता हूँ जो मैंने भारतमें अपने देशवासियोंको बताया है। आपके इस सुन्दर देशमें बुनकर लोग काफी संख्यामें मौजूद हैं। लेकिन वे अपने देशकी भलाईके लिए काम न करके एक विदेशी पूँजीपतिके लिए गुलामी कर रहे हैं क्योंकि वे अपनी निपुणता और कारीगरीका उपयोग विदेशी सूतसे कपड़े बुननेमें कर रहे हैं। अतः यदि आप असहायावस्थासे बचना चाहते हैं, यदि आपको आत्म-निर्भर और सुखी बनना है और यदि आप भी उस प्रकार अधभूखे नहीं होना चाहते जैसे कि हम लोग भारतमें हैं, तो आप मेरी बात मानिए और समय रहते चरखेको फिरसे अपनाइए।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ११-४-१९२९

१. यह अंश महादेव देसाई द्वारा लिखित गांधीजीकी बर्मा-यात्राके विवरणमें से लिया गया है।

१२४. पत्र : डी० को[1]

मौलमीन
१३ मार्च, १९२९

प्रिय मित्र,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम बेकार घबरा रहे हो। कलकत्ता जाते हुए जब मैं २ तारीखको दिल्लीसे गुजरा था तो मैंने श्रीयुत बिड़लासे बातचीत कर ली थी। याददाश्तकी गड़बड़ीके कारण ही उन्होंने तुम्हें बताया था कि मैंने १२०-१५० रु० देनेका सुझाव दिया था। मैंने उनको वही रकम बताई थी जो तुमने मुझे बताई थी अर्थात् १७५ रु०। लेकिन अब तुम कहते हो कि तुम्हें २०० रु० चाहिए। २०० रु० कमसे-कम हैं या नहीं, लेकिन १७५ रु० तो तुम्हें चाहिए ही। मैं चाहूँगा कि तुम धीरज और आशा रखो। श्रीयुत बिड़ला तुम्हें लेनेको उत्सुक हैं।

सैद्धान्तिक दर्शन-शास्त्रमें तो तुम विशेषता प्राप्त कर ही चुके हो, अब तुम्हें व्यावहारिक दर्शन-शास्त्रमें विशेषता प्राप्त करनी चाहिए। दर्शनका यदि कोई उपयोग है तो यही कि उसे स्वयं अपने ही जीवनमें व्यवहारमें लाना चाहिए। दार्शनिकको साहसी होना चाहिए और उसे बिलकुल मुद्देकी बात करनी चाहिए, जब कि तुम्हारे पत्र असाधारण रूपसे लम्बे होते है। मुझे या श्रीयुत बिड़लाको बधाई मत दो। यदि वह तुम्हें स्थान देते है या मैं तुम्हारे लिए कुछ करता हूँ तो यह कर्त्तव्य भावनाके कारण ही है। और कर्त्तव्य-पालनसे कोई पुण्य अर्जित नहीं होता। तुम इस बातको निश्चित मानो कि तुम्हारे लिए काम तो निकाल ही लिया जायेगा। उसमें तुम्हें १७५ रु० से कम नहीं मिलेंगे और न २०० रु० से ज्यादा ही। यदि कोई दिक्कत हो तो कृपया मुझे लिख देना।

मैं यहाँसे २१ तारीखको रवाना होऊँगा और २६ तारीखको कलकत्ता तथा २७ तारीखकी दोपहरको दिल्ली पहुँचूँगा।

आशा है कि तुम इस पत्रका बुरा नहीं मानोगे। अच्छे तो तुम हो ही, लेकिन मैं चाहता हूँ कि तुम इससे भी ज्यादा अच्छे बनो और मैं यह भी चाहता हूँ कि जिस दर्शनकी तुम शिक्षा देते हो उसपर अमल भी करो।

हृदयसे तुम्हारा,

श्रीयुत डी०
कानपुर

अंग्रेजी (एस० एन० १५३७९)की माइक्रोफिल्मसे।

१. १२ तारीखको लिखा गया इस पत्रका मसविदा भी उपलब्ध है। (एस० एन० १३३७८)। लगता है कि पत्रको कुछेक शब्द बदलनेके बाद अन्तिम रूप देकर दूसरे दिन प्रेषित किया गया था।

१२५. पत्र : चार्ल्स टेगार्टको

मौलमीन
१३ मार्च, १९२९

प्रिय मित्र,

मुझे आशा है कि मैं निश्चित तिथिको न्यायालयमें उपस्थित हो सकूँगा। लेकिन मैं समझता हूँ कि मुझे आपको यह बतला देना चाहिए कि ३० मार्चको काठियावाड़में मेरा पहुँचना बहुत पहलेसे निर्धारित किया जा चुका है। वहाँका एक सम्मेलन मेरी वहाँ उपस्थितिपर ही निर्भर है। इसलिए यदि मुझे छुट्टी दे दी गई तो मुझे २६ तारीखको दिल्ली एक्सप्रेससे कलकत्ता छोड़ देना पड़ेगा। इसलिए मुझे आशा है कि आप हावड़ासे मेरे रवाना होनेके समयतक मुकदमेकी कार्रवाई पूरी करानेका प्रबन्ध कर देंगे।

हृदयसे आपका,

सर चार्ल्स टेगार्ट
पुलिस कमिश्नर
कलकत्ता

अंग्रेजी (एस० एन० १३३८१)की फोटो-नकलसे।

१२६. पत्र : छगनलाल जोशीको

मौलमीन
१३ मार्च, १९२९

चि० छगनलाल,

आज भी डाक जानेका समय हो गया है। इसलिए इतना ही लिख रहा हूँ।

सब-कुछ ठीक चल रहा है। तुम सबको याद करता हूँ। सब लोग अब ठीक हो गये होंगे। अच्छा हो यदि सब खुले बदन सूर्य किरणोंका सेवन करें। कोई बीमार पड़े तो तुरन्त उपवास शुरू करे, खूब पानी पिये और रेचनके लिए एनीमा ले। मुझे नहीं लगता कि इससे और अच्छा कोई उपाय हो सकता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५३९३)की फोटो-नकलसे।

१२७. भाषण : मौलमीनकी सार्वजनिक सभामें

१३ मार्च, १९२९

महात्मा गांधीने इस बातपर प्रसन्नता प्रकट की कि श्रोताओंमें अधिकांश बर्मी लोग मौजद हैं। इसके पश्चात, उन्होंने शराबखोरीके बारेमें कहा :

कल यह सुनकर मुझे बड़ा ही क्लेश पहुँचा कि शराबखोरी बढ़ती जा रही है और यह जानकर अत्यधिक पीड़ा हुई कि शराबसे मिलनेवाली चुंगी भू-राजस्व की एक-तिहाईके बराबर हो जाती है। संसारका कोई भी देश हो, ऐसी स्थिति उसके लिए सचमुच बड़ी भयंकर होगी, लेकिन बर्मा-जैसे देशके लिए तो यह आत्म-घातसे किसी भी कदर कम नहीं है, क्योंकि यहाँकी जलवायु शराबखोरीके सर्वथा प्रतिकूल पड़ती है। मैं जानता हूँ कि यह लत भारतमें कितनी बर्बादी ढा रही है। शहरोंमें रहनेवाले लोगोंपर इससे एक गम्भीर दायित्व आ जाता है। मैं चाहता हूँ कि बर्मी जनताके नेतागण इस समस्यापर गम्भीरतासे विचार करें और इसे जड़से उखाड़ फेंकनेका भरपूर प्रयास करें। ठंडी जलवायुवाले देशोंमें जो भी हो, लेकिन हमारे देश-जैसी जलवायुमें शराबकी कतई कोई जरूरत नहीं। शराबखोरीके शिकार बननेवाले देशके लिए बर्बादीके अलावा कोई रास्ता नहीं रह जाता। इतिहास गवाह है कि इस लतने बड़े-बड़े साम्राज्योंको तबाह कर दिया है। हमारे देशमें श्रीकृष्णको जिस महान जातिने जन्म दिया था, शराबखोरीकी लतने उसे तभी नेस्तनाबूद कर दिया। रोम साम्राज्यके पतनमें अन्य कारणोंके साथ इस एक कारणका भी बड़ा हाथ था। इसलिए यदि आप सुसंस्कृत और सुन्दर जीवन बिताना चाहते हैं तो आपको समय रहते इस बुराईसे दूर हो जाना चाहिए।[1]

महात्मा गांधीने बर्मी महिलाओंको सम्बोधित करते हुए उनका ध्यान दो बातोंकी ओर आकर्षित किया : बढ़िया विदेशी वस्त्रोंमें उनकी रुचि और धूम्रपानकी आदत। उन्होंने बतलाया कि बर्मामें कदम रखते ही वे वहाँके स्त्री-पुरुषोंसे स्नेह करने लगे थे, और यदि बर्मी महिलाओंमें विदेशी वस्त्रोंका इतना ज्यादा शौक न होता तो उनका स्नेह और भी बढ़ गया होता। उन्होंने आशा व्यक्त की कि बर्मी महिलाएँ इस मामलेमें अगुआई करेंगी।

आप लोगोंको इस समय जितनी स्वतन्त्रता मिली हुई है, उतनी संसारके किसी भी दूसरे देशकी महिलाओंको प्राप्त नहीं है। आपकी उद्यमशीलता और आपके कौशल का सभी लोहा मानते हैं। आपके अन्दर संगठनकी बड़ी क्षमता है और यदि आप

१. यह अनुच्छेद महादेव देसाई द्वारा प्रस्तुत गांधीजीकी बर्मा-यात्राके विवरणसे लिया गया है।

बढ़िया विदेशी वस्त्रोंके अपने शौकको त्याग दें और मेरे दिये हुए सादगीके सन्देशको हृदयंगम कर लें तो आप अपने जीवनमें क्रान्ति ला सकती हैं। . . .[1]

धूम्रपानके अभिशापके बारेमें अधिक कुछ कहनेका साहस मैं अपने अन्दर महसूस नहीं करता। लेकिन मुझे पता चला है कि बर्मा-भरमें एक भी स्त्री या पुरुष इस आदतसे बरी नहीं है। हम भारतीय लोगोंको यह देखकर बड़ा दुख और आश्चर्य होता है कि सुन्दर बर्मी महिलाएँ चुरट और सिगारोंसे अपने मुँह कितने कुरूप बना लेती हैं। पर मैं यह भी जानता हूँ कि सारे संसारको अपनी लपेटमें ले लेनेवाली इस बुराईके विरुद्ध कुछ भी कहना कितना कठिन है। आपने टाल्स्टायका नाम शायद सुना होगा। उन्हें स्वयं इसकी लत थी। इसलिए उन्होंने इसके बारेमें जो भी कहा वह अपने अनुभवसे ही कहा था। मैं उनकी ही प्रामाणिक राय आपके सामने पेश करता हूँ। उन्होंने कहा है कि अन्य इन्द्रियोंकी बात तो छोड़िए, यह तमाखू मनुष्यकी बुद्धि तकको मन्द बना देती है। उन्होंने तो अनेक उदाहरण देकर सिद्ध किया है कि धूम्रपानके असरमें लोगोंने कैसे-कैसे घोर अपराध किये हैं, और उन्होंने अपनी एक सुन्दर कहानीमें चित्रित किया है कि खलनायकने शराब नहीं बल्कि तमाखू पीनेके बाद हत्या की थी। यद्यपि यह बात सच है कि धूम्रपानकी आदत बढ़ती ही जा रही है और संसारके अनेक प्रतिभाशाली व्यक्ति भी इसके समर्थक हैं, परन्तु साथ ही इसका विरोध भी चल रहा है और पश्चिमी देशोंके अनेक बड़ेसे-बड़े व्यक्ति और नीतिवान लोग इसके विरोधियोंमें शामिल हैं।

गांधीजीने भारतीयोंको ऐसा जीवन व्यतीत करनेकी सलाह दी कि लोग उनको भले आदमी मानें। उन्होंने यह भी कहा कि वे खद्दरके लिए धन एकत्र करने आये थे और लोगोंको चाहिए कि धन देकर तथा खद्दरको अपनाकर वे इसमें उनकी मदद करें। महात्मा गांधीने बर्मी श्रोताओंको बतलाया कि चूँकि वे बर्मामें अपना एक स्वार्थ लेकर आये थे इसलिए उनको बर्मी जनतासे कुछ माँगने या उससे कुछ अपेक्षा रखनेका अधिकार नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १६-३-१९२९ और यंग इंडिया, ११-४-१९२९

१. यह और इसके बादके अनुच्छेद *यंग इंडिया*से लिये गये हैं।

१२८. सच्चे बनो

हैदराबाद (सिन्ध)के विद्यार्थियोंने मुझे सिन्धी भाषामें एक सुन्दर मानपत्र दिया था। मैंने वचन दिया था कि उसका अनुवाद 'यंग इंडिया' में छापूँगा[1] लेकिन दूसरे कामोंके कारण वह इससे पहले छापा नहीं जा सका। मानपत्र इस तरह है:

हैदराबादके विद्यार्थियोंकी ओरसे हम आपका हार्दिक स्वागत करते हैं। हम जानते हैं कि आपके आदर्शोंका अनुसरण न करनेके कारण हम आपका स्वागत करनेके योग्य नहीं हैं। लेकिन हमें आशा है कि आपके मुँहसे कुछ उपदेश-वचन सुनकर हमारे दिलोंपर उनका गहरा असर होगा। हम आपको धोखा देना नहीं चाहते। हमारी इच्छा तो यह है कि हम अपना हृदय आपके सामने खोलकर रख दें।

हमारा शहर शिक्षाका केन्द्र है। भारतके दूसरे शहरोंके मुकाबले 'इंडियन सिविल सर्विस' में यहाँके लोग ज्यादा हैं। यहाँ एक कालेज, लड़कोंके तीन हाई स्कूल, लड़कियोंके दो हाई स्कूल और अन्य अनेक सिन्धी तथा अंग्रेजी स्कूल हैं। अकेले अंग्रेजी विद्यालयोंमें ही ४,००० विद्यार्थी हैं। लेकिन इनमें से सिर्फ २२ या २५ विद्यार्थी खादी पहननेवाले हैं और देशी मिलोंका कपड़ा पहननेवाले छात्रोंकी संख्या भी ३ या ४ प्रतिशतसे ज्यादा नहीं हो सकती। कुछ दूसरे, स्वदेशी, विदेशी दोनों पहनते हैं। लेकिन अधिकांश लड़के केवल विदेशी कपड़ा पहननेवाले हैं। आप भली-भाँति जानते हैं कि हमारा रहन-सहन खर्चीला है। हमें मातृ-भाषा और अपनी राष्ट्रीय संस्कृतिकी अपेक्षा अंग्रेजी भाषा और पाश्चात्य सभ्यताका ज्यादा मोह है। अपने रहन-सहनमें हम कोई सेवा और सादगी भी नहीं दिखा सकते, हालाँकि हम अपने देशकी गरीबीको अच्छी तरह जानते हैं। हम जानते हैं कि खादी और स्वदेशी चीजोंके व्यवहारसे देशको लाभ होगा; लेकिन हमें दुख है कि बाढ़-पीड़ितोंका आर्तनाद सुनकर भी हमारे दिल डोले नहीं थे। चारों ओर भुखमरी और निराशाको देखकर भी हमारे हृदय पिघल नहीं जाते हैं, इसका कारण हमारी यही उपेक्षा-वृत्ति है। हमारा संघ पिछले चार वर्षोंसे कुछ काम कर रहा है, लेकिन उसमें भी ऐसा कुछ नहीं है जिसका हम गर्वसे उल्लेख कर सकें।

हमें अपने यहाँकी 'देती-लेती' की कुप्रथाका उल्लेख करते शर्म आती है। उच्च शिक्षा पानेके बावजूद अपनी पत्नीके माता-पिता या सम्बन्धियोंसे हजारों रुपये वसूल करनेमें हमें झिझक नहीं लगती। हममें से कई लोग अपनी पत्नियोंके घरवालोंसे रुपये लेना अपना जन्मसिद्ध अधिकार समझते हैं। हममें से बहुतोंके अन्दर थोड़ा भी स्वाभिमान नहीं है; उच्च शिक्षा पाते हुए भी सिर्फ ५-६ लड़कियाँ ही ऐसी साहसी निकली हैं जिन्होंने अपने लिए पति 'खरीदने'

१. देखिए "सिन्धके संस्मरण", २१-२-१९२९।

में अपमान समझा है और उसका विरोध किया है। हाल ही में 'देती-लेती' के समर्थकोंका बहिष्कार करनेका एक प्रस्ताव पास किया गया है। फिर भी लोग इस बुरे रिवाजको छोड़ नहीं रहे हैं।

सिर्फ तस्वीरका खराब पक्ष ही आपके सामने पेश करनेका हमारा इरादा नहीं है। इसका एक उजला पक्ष भी है। आप विश्वास रखिए कि हममें अच्छा काम करनेकी असीम शक्ति है। हम सारे सिन्धमें नव-जागरणके अग्रदूत बन सकते हैं। हमारे इसी शहरमें साधु हीरानन्द, दीवान नवलराय, भाई बालचन्द्र और दीवान दयाराम-जैसे रत्न पैदा हुए, जिनकी परम्परा हमें विरासतमें मिली है। इस समय भी हमारे नगरमें ऐसे लोग हैं, जो अपनी संगठनक्षमता और अनुशासनके लिए प्रसिद्ध हैं। हमारे बीच ऐसे लोग हैं जिन्होंने राजनीति, समाज-सेवा, शिक्षा और साहित्यके क्षेत्रमें नेतृत्वकी क्षमता प्रकट की है। उन्होंने सभी राष्ट्रीय कार्योंमें प्रमुख भाग लिया है। हैदराबादके व्यापारी दुनियाके कोने-कोनेमें अपना कारोबार चलाते मिलेंगे। हम अपनी तारीफ करनेके खयालसे ये बातें नहीं कह रहे हैं, लेकिन हम बताना चाहते हैं कि हममें सेवा या काम करनेकी शक्तिका अभाव नहीं है। अगर हमारी शक्तियोंको संगठित किया जा सके तो हम तेजीसे प्रगति कर सकते हैं। हम मानना चाहते हैं कि आपके आदर्शोंका पालन न करनेके कारण हमने आपका प्रेम पानेका अधिकार खो नहीं दिया है, क्योंकि हम जानते हैं कि आपके प्रेमसे ही हमारे हृदयमें उत्साह और स्फूर्ति प्रकट होगी।

मैंने इस मानपत्रका यह स्वतन्त्र अनुवाद इन विद्यार्थियोंको वचन-बद्ध करनेकी गरजसे, और दूसरे विद्यार्थी इस उदाहरणसे कुछ सीखें इस गरजसे, यहाँ दिया है। मैं हैदराबादके विद्यार्थियोंको फिरसे याद दिला देता हूँ कि यह मानपत्र मेरे समक्ष पढ़े जानेसे पहले उन्हें पता नहीं था कि उसमें क्या लिखा है, लेकिन जब मैंने उनसे पूछा कि मानपत्रकी बातें सच हैं या नहीं तो उन्होंने उसमें कही गई हरएक बातका समर्थन किया था और मुझे वचन दिया था कि वे भूतकालकी बेदरकारी और बेपरवाहीको धो डालेंगे। इस कारण मुझे आशा है कि वे विदेशी कपड़ेका सम्पूर्ण बहिष्कार करके खादीका व्रत धारण करेंगे। मुझे यह भी आशा है कि वे 'देती-लेती' की कुप्रथाको भी हमेशाके लिए समाप्त कर डालेंगे।

दूसरे विद्यार्थी इस मानपत्रको एक नमूना समझें। नेताओंकी तारीफसे भरे हुए मानपत्र वास्तवमें निरर्थक होते हैं। जो लोग इस तरहकी तारीफकी आशा रखते हों उन्हें कोई मानपत्र न देना ही उचित है। विद्यार्थी जिसे सचमुच चाहते हैं और जिसका आदर करते हैं उसे अगर मानपत्र दिया जाये तो उसमें उन्हें लाभ पहुँचाने-वाली बातोंका ही जिक्र होना चाहिए। मेरे कहनेका मतलब यह नहीं है कि हरएक मानपत्र इस मानपत्रके जैसा ही होना चाहिए। लेकिन मैं इतना तो जरूर कहना चाहता हूँ कि हरएक मानपत्रमें स्थानीय रंग होना चाहिए और उसमें किसी महत्त्वकी बातका जिक्र किया जाना चाहिए। सच्चा प्रेम प्रशंसा करके नहीं बल्कि सेवासे

प्रकट होता है। इसके लिए आत्मशुद्धि सबसे पहली चीज है; वह सेवाकी अनिवार्य शर्त है। अतः यह मानकर कि प्रस्तुत मानपत्र हैदराबादके विद्यार्थियोंकी आत्मशुद्धिकी इच्छाकी निशानी है, मैं इसका स्वागत करता हूँ। यह अत्यन्त वांछनीय है कि स्वराज्य-प्राप्तिकी तैयारीवाले इस अनमोल वर्षमें आत्मशुद्धिकी यह साधना पूरी हो।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १४-३-१९२९

१२९. टिप्पणियाँ

पुराना शत्रु

एक मित्रने अकोलासे ये दो प्रश्न भेजे हैं, जो देखनेमें एक दूसरेसे भिन्न लगते हैं:

१. कोई व्यक्ति अपनी विषय-वृत्तिपर काबू कैसे पा सकता है?

२. यदि 'क' आदतन खादी पहनता हो और वह 'ख' से भी इसका आग्रह करे और 'ख' अपनी असमर्थता प्रकट करे, तब फिर क्या किया जाये? यदि किसीकी पत्नी खादी पहननेसे इनकार कर दे तो पति उसको कैसे राजी कर सकता है?

पहले प्रश्नका उत्तर यह है कि उस व्यक्तिको पहले तो ऐसी प्रत्येक वस्तुका परित्याग कर देना चाहिए जो उसकी विषय-वृत्तिको जगाती या उत्तेजित करती हो और उसके बाद उसे सहायताके लिए ईश्वरकी ओर देखना चाहिए।

दूसरे प्रश्नके बारेमें यह तो सर्वथा स्पष्ट है कि अपने विचार या अपनी आदतें अपनानेके लिए दूसरोंको विवश नहीं किया जाना चाहिए। मेरा अपना अनुभव यह है कि ऐसे मामलोंमें अपना स्वयंका उदाहरण पेश करना एक अचूक उपाय है, और खादी हो या अन्य कोई भी सुधार, हमें अपने विश्वासपर दृढ़ रहते हुए, दृढ़तासे उसका पालन करते हुए, बड़े धैर्यके साथ इसकी राह देखनी पड़ेगी कि हमारा पड़ोसी भी उसे अपना ले। मैंने 'क' और 'ख' दो व्यक्तियोंके बारेमें जो भी कहा है वह पति-पत्नीके बारेमें भी उतना ही लागू होता है।

गरीब विद्यार्थियों द्वारा चन्दा

न्यू इंग्लिश स्कूल, अचराके प्रधानाध्यापकने निम्नलिखित पत्र भेजा है:[1]

मुझे खेद है कि यह पत्र जिस समय मिला उस समय मैं दौरेपर था और इस कारण यह लगभग दो महीनों तक मेरे कागजातमें ही दबा पड़ा रहा। राशिकी

१. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। विद्यार्थियों और अध्यापकोंने लाजपतराय स्मारक कोष के लिए १०१ रुपये जमा करके भेजे थे। प्रधानाध्यापकने गांधीजीसे अनुरोध किया था कि जैसे भी हो गरीब विद्यार्थियोंको खादी कुछ सस्ते दामोंपर सुलभ बनाई जानी चाहिए।

प्राप्ति-सूचना तो भेज ही दी गई है, लेकिन राशि जमा करनेके अतिरिक्त इस पत्रका अलगसे अपना एक महत्त्व है। इसलिए कि अध्यापकोंने अपीलके शब्दोंपर ही नहीं, उसकी भावनापर भी अमल किया है, क्योंकि उन्होंने विदेशी वस्तुओं, यहाँतक कि चायके भी परित्यागका संकल्प कर लिया है। अध्यापकोंको मेरा सुझाव है कि विदेशी वस्तुओंके परित्यागके संकल्पको न तो अध्यापक निभा पायेंगे और न विद्यार्थी ही। इतना व्यापक संकल्प निभाया नहीं जा सकेगा। उदाहरणके लिए न तो अध्यापक-गण और न विद्यार्थी लोग ही विदेशी पुस्तकों, विदेशी पिनों, विदेशी घड़ियों या विदेशोंमें बनी सुइयोंका ही परित्याग कर पायेंगे। इसलिए मेरा सुझाव है कि वे अपनी प्रतिज्ञापर पुनर्विचार करें। ज्यादा अच्छा यह होगा कि वे उन विदेशी वस्तुओंके नाम घोषित कर दें जिनसे वे दूर रहेंगे।

खादीके बारेमें तो मैं अनेक बार कह चुका हूँ कि वह तबतक हर कीमतपर सस्ती ही है जबतक उसे स्थानीय स्टाक रखनेका मामूली-सा खर्च जोड़कर लागत मूल्यपर ही बेचा जा रहा है। हमें याद रखना चाहिए कि खादीने अपने जीवनके सात वर्षोंमें अपनी कीमत आधी घटा ली है। यदि उसे और अधिक संरक्षण मिलता, तो कीमत और भी सस्ती हो जाती। और फिर गरीब विद्यार्थियोंको अपने पैरोंपर खड़े होना क्यों नहीं सिखाया जाता; उनको यह क्यों सिखाया जाये कि वे लागत मूल्यसे भी सस्ती दरपर खादी मिलनेकी अपेक्षा रखें और इस प्रकार अपनेसे कहीं गरीब तबके के लोगोंसे आर्थिक सहायता पानेकी अपेक्षा रखें? बालक-बालिकाओंको खाली समयमें अपना सूत स्वयं कातनेकी शिक्षा देनी चाहिए। मैंने सुझाव दिया है कि वे प्रतिदिन लगभग आधा घंटा कताईको दें। वे तो उस सूतको बुन भी सकते हैं, या यदि उसमें मुश्किल पड़े, जो पड़ सकती है, तो वे उस सूतको अखिल भारतीय चरखा संघके किसी प्रतिनिधिके पास भेजकर उतने ही वजनकी तथा उतने ही नम्बरके सूतकी खादी ले सकते हैं। उनको केवल बुनाईका मामूली खर्च देना होगा।

उसकी जकड़में

आगराके एक मित्र पूछते हैं:

> **क्या आपने अपने जीवनका बीमा कराया है? क्या पाश्चात्य देशोंकी इस संस्थामें कोई आपत्तिजनक बात है? कुछ बीमा कम्पनियाँ अपनी सारी या अधिकांश आय सरकारी प्रतिभूतियोंमें नियोजित कर देती हैं। क्या ये कम्पनियाँ इस प्रकार जनताका धन लेकर उससे उसी सरकारकी मदद नहीं करतीं — जिसे आप शैतानियतकी सरकार कहते हैं? क्या वे इस प्रकार हमारा जीवन सरकारके आश्रित नहीं बना देतीं? और इस प्रकार एक हद तक सरकारके स्थायित्वको बल नहीं देतीं? यदि यह ठीक है, तो क्या देश-भक्तोंको ऐसी कम्पनियोंके प्रतिनिधि बनना या इन कम्पनियोंसे जीवन-बीमा कराना चाहिए?**

ये मित्र यदि नियमित रूपसे 'यंग इंडिया' पढ़ते हैं, तो इनको मालूम होना चाहिए कि मैंने १९०१ में अपना जीवन बीमा कराया था और थोड़े समय बाद पालिसीको इसलिए रद करा दिया था क्योंकि मैंने महसूस किया कि इस तरह मैं ईश्वरपर अविश्वास कर रहा हूँ और जिनके नाममें पालिसी ली गई थी अपने उन रिश्तेदारोंको अपना आश्रित बना रहा हूँ या मैं उनके लिए जो धन छोड़ जाऊँगा उसके प्रति उन्हें आश्रित बना रहा हूँ; उनको ईश्वरके आसरे नहीं छोड़ रहा हूँ[1]। बादके अनुभवने भी पालिसी रद करानेके समय समयके मेरे विचारकी पुष्टि ही की है। पत्र-लेखकको सरकारकी जकड़ मजबूत होनेके बारेमें जो आशंका है, वह कहीं ज्यादा सच है। सरकारी प्रतिभूतियोंमें खर्चकी गई एक-एक पाई निःसन्देह उसकी शक्तिको बढ़ाती है। सरकार ब्याजकी सस्तीसे-सस्ती दरपर हमारा धन ले लेती है और जब हमारी ओरसे अपने अस्तित्वपर आँच आती दिखाई पड़ती है तो वह उसे बिलकुल खुले रूपमें हमारे ही विरुद्ध इस्तेमाल करती है। सभी सरकारोंको यही करना पड़ेगा या वे यही करेंगी; वे और कुछ कर ही नहीं सकतीं। हमारी अपनी राष्ट्रीय सरकार बन जानेपर वह भी यही करेगी; लेकिन तब स्थिति यह होगी कि हम खुद चाहेंगे कि सरकार वैसा ही करे। वर्तमान सरकारके मामलेमें तो यह स्थिति है कि हम असहाय होकर उसके पाशमें बँधते हैं। पता नहीं हम किस हदतक उसके आश्रित बन जाते हैं। रोशनी, पानी, भोजन और बड़े-बड़े शहरोंमें तो हवा तकके लिए हम सरकारके मोहताज हो जाते हैं। इन सभी बातोंमें से प्रत्येकपर खूब विचार करनेपर ही असहयोगका विचार पैदा हुआ था। सरकार यदि अपने आपको सुरक्षित महसूस करती है तो वह इसलिए कि वह जानती है कि राष्ट्रीय संघर्ष छिड़नेपर धनी वर्गों और निहित स्वार्थोंवाले सभी लोग उसकी हिमायतमें खड़े हो जायेंगे। हम हजारों तरीकोंसे सरकारके साथ सहयोग कर रहे हैं। उनमें से सहयोगके चन्द महत्त्वपूर्ण क्षेत्रोंको असहयोगके लिए चुन लिया गया था और मैं जानता हूँ कि यदि हम अहिंसात्मक उपायोंसे अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त करना चाहते हैं, तो हमें लगभग इन क्षेत्रोंमें ही असहयोग अवश्य करना पड़ेगा।

खादीकी उपयोगिता

इन मित्रने ही पूछा है:

> **आप खादीका इस्तेमाल सदाके लिए स्थायी बना देना चाहते हैं या राजनीतिक स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए उसकी अस्थायी उपयोगिताके कारण आप उसकी सिफारिश करते हैं? पहली स्थिति यदि ठीक है तो क्या खादी सुरुचिको चोट नहीं पहुँचाती और क्या आप साधारण जनतासे आशा करते हैं कि वह सुरुचिकी अपनी सहज भावनाका गला घोंट दे?**

[1] देखिए खण्ड ३९, **आत्मकथा,** भाग ४, अध्याय ४।

मैं वास्तवमें खादीका इस्तेमाल सदाके लिए स्थायी बना देना चाहता हूँ, इसलिए कि किसानोंको नेस्तनाबूद होनेसे बचानेका बस एक यही उपाय है। मेरा दावा है कि खादीमें राजनीतिक स्वतन्त्रता प्राप्त करानेकी सामर्थ्य है और इतना ही नहीं उसमें किसानोंको शोषकोंसे बचानेकी क्षमता भी है। स्पष्ट है कि पत्र-लेखकको अपने ही देशके पिछले इतिहासकी और खादीके वर्तमान विकासकी कोई जानकारी नहीं है। दुनियामें जब कहीं भी लोगोंको सूतकी उपयोगिताकी जानकारी नहीं थी, उस कालमें ही भारतने सुरुचिका एक ऊँचा मानदण्ड स्थापित करके पश्चिमके धनी देशोंको विविध रंगोंके महीनसे-महीन उत्तम वस्त्र भेजने शुरू कर दिये थे और खादीका वर्तमान विकास सिद्ध करता है कि वह धीरे-धीरे ही सही, पर निश्चित कदमोंसे सुरुचिपूर्ण लोगोंके मनमें दिन-दिन अधिक प्रवेश करती जा रही है। आखिर सच्ची कला तो स्त्री-पुरुषोंके हाथोंके सजीव स्पर्शसे ही अभिव्यक्ति पा सकती है; बड़े पैमानेपर उत्पादनके लिए बनाई गई शक्ति-चालित निर्जीव मशीनोंसे तो उसे व्यक्त नहीं किया जा सकता। पत्र-लेखक आचार्य कृपलानी और उनके शिष्योंसे सम्पर्क स्थापित करें, जो खादीको सुन्दर बनानेके लिए बड़े पैमानेपर प्रयोग कर रहे हैं।

इस पत्र-लेखकने खादीके तथाकथित महँगेपनका प्रश्न भी उठाया है। मैंने उसके बारेमें इसलिए नहीं लिखा कि 'यंग इंडिया'के इसी अंकमें अन्यत्र उसकी चर्चा की जा चुकी है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १४-३-१९२९

१३०. भाषण: रामकृष्ण मिशन, रंगूनमें[1]

१४ मार्च, १९२९

बहनो और भाइयो,

रामकृष्ण मिशनने कृपापूर्वक मुझे जो अभिनन्दनपत्र दिया है उसके लिए मैं उसके सदस्योंको धन्यवाद देता हूँ। मुझे पूरा विश्वास है कि आप लोग मौलाना मुहम्मद अलीको यहाँ मेरे साथ देखकर बहुत खुश हैं। लोग मुझसे अक्सर पूछते हैं कि आपके अली-बन्धु कहाँ हैं? तब मैं उन्हें वही जवाब देता हूँ जो मैं अनुभव करता हूँ। आज मैं इस प्रकारकी पूछ-ताछसे बच गया हूँ। मैं आपको बताना चाहता हूँ कि खुदाकी इच्छा होकर रहेगी और मैं इन्हें हमेशा अपने साथ पाऊँगा। इससे ज्यादा मैं आपको और कुछ नहीं बताना चाहता।

अब मैं आपको रामकृष्ण परमहंस और उनके मिशनके बारेमें कुछ बताना चाहता हूँ। वह हमारे लिए एक बहुत बड़ा काम छोड़ गये हैं। मुझे उनके मिशनमें आस्था है और मैं आपसे उनका अनुकरण करनेको कहूँगा। जहाँ कहीं मैं जाता हूँ, रामकृष्णके अनुयायी मुझे सदा निमंत्रित करते हैं और मैं जानता हूँ कि मेरे कार्यको उनकी

१. इस समारोहका आयोजन रामकृष्ण परमहंसके जन्म-दिवस समारोहके सिलसिलेमें किया गया था।

शुभकामनाएँ प्राप्त हैं। रामकृष्ण सेवाश्रम और अस्पताल भारत-भरमें फैले हुए हैं। कोई जगह ऐसी नहीं है जहाँ उनका काम छोटे या बड़े पैमानेपर न चल रहा हो। अस्पताल खोले जा रहे हैं और गरीबोंको दवाएँ और चिकित्सा-सुविधा प्रदान की जा रही हैं।

मेरे पास बहुत कम समय है इसलिए मैं ज्यादा कुछ नहीं कहना चाहता। रामकृष्णका नाम याद आनेपर मैं विवेकानन्दको नहीं भूल सकता। जगह-जगह सेवाश्रमोंकी स्थापना मुख्यतः विवेकानन्दके प्रयासोंका ही फल है, और उन्होंने ही अपने गुरुको विश्व-ख्याति प्रदान की।

ईश्वरसे मेरी प्रार्थना है कि ऐसे सेवाश्रमोंकी संख्या बराबर बढ़े। मैं आशा करता हूँ कि इन सेवाश्रमोंमें ऐसे लोग शामिल होंगे जो मनसे शुद्ध हैं और जिन्हें भारतसे प्रेम है। वे भारत-प्रेमसे अनुप्रेरित होकर अपना कार्य करें।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १८-४-१९२९

१३१. भाषण: स्त्रियोंकी सभा, रंगूनमें[1]

१४ मार्च, १९२९

महोदया और मित्रो,

चूँकि मुझे आपके कार्योंकी कोई जानकारी नहीं है और न मैं इन श्रोताओंके सामने आनेको तैयार ही था, इसलिए इस सभामें भाषण देनेमें मुझे बहुत अटपटा लग रहा है। मैं तो यह समझा था कि मुझे सभी प्रकारके लोगोंसे मिलना होगा जिनमें से कुछ तो जिज्ञासाके कारण आयेंगे और बाकी मद्य-निषेधके सम्बन्धमें मेरे विचार जाननेके लिए। लेकिन देखता हूँ कि मैं तो विशेषज्ञोंके एक समुदाय — यदि इस श्रोता-समुदायको मैं यह नाम दे सकूँ तो — के सामने खड़ा हूँ। क्योंकि मुझे उम्मीद है कि इस काममें आप सब निपुण हैं। महोदया, आपने बताया है कि यदि लोगोंको नशाखोरीकी बुराइयोंके बारेमें बताने-समझानेका आन्दोलन चलाया जाये और उस प्रचारके फलस्वरूप जो लोग शराबके आदी हैं यदि वे शराबकी दूकानों-पर जाना छोड़ दें तो शराबकी सभी दूकानें स्वतः बन्द हो जायेंगी। अध्यक्षाने जो बातें बताई हैं उसका विरोध न करते हुए मैं आपको अपने अनुभवकी बात बताना चाहता हूँ।

मद्य-निषेधके सम्बन्धमें मैंने १८९३ में, जब मैं दक्षिण आफ्रिका गया था, काम करना शुरू किया था। जब मैंने अपने ही लोगोंको, अपने ही देश भाइयोंको शराब पीते देखा, यहाँतक कि उन स्त्रियोंको भी शराब पीते देखा जो भारतमें रहते हुए शराब पीनेकी कल्पना भी नहीं कर सकती थीं, और जो शराब पीनेके कारण

1. सभाका आयजोन 'बर्मा विमेन्स क्रिश्चियन टेम्परेंस यूनियन' के तत्त्वावधानमें किया गया था।

मोरीके कीड़ों-जैसा जीवन व्यतीत कर रही थीं, तब मुझे लगा कि मद्य-निषेधका काम बहुत मुश्किल है। ये पुरुष और स्त्रियाँ मद्य-निषेधपर कोई भाषण सुननेको तैयार नहीं थे, व्यक्तिगत सलाहकी तो बात ही क्या? मैंने यह भी देखा कि उनमें से कुछ तो बिलकुल लाचार थे या फिर वे अपने आपको लाचार समझते थे। मैंने बहुतसे तरीके अपनाये -- वे सब तरीके जो किसी प्रकारका भी अधिकार न रखनेवाले व्यक्तिके बसमें थे। लेकिन मुझे उन प्रयत्नोंमें कोई प्रकट सफलता मिली हो, इसका दावा मैं नहीं कर सकता। दक्षिण आफ्रिकाके संघ बननेके बाद वहाँकी संघ सरकारने एक मद्य-आयोगकी नियुक्ति की थी। उस आयोगके सामने मैंने गवाही दी थी या यों कहिए कि एक टिप्पणी लिखकर आयोगको दी थी, लेकिन आपको यह बताते हुए मुझे फिर दुख होता है कि उसका कोई परिणाम नहीं निकला। दक्षिण आफ्रिका-में स्थिति विचित्र और असामान्य थी और आज भी है। शराब रखने और पीनेके सम्बन्धमें तीन प्रकारके प्रतिबन्ध हैं। बन्टू और जुलू लोगोंके लिए शराबकी बोतल साथ रखना निषिद्ध है और न ही कैंटीनोंमें उन्हें शराब मिल सकती है, लेकिन फिर भी वे पीते अवश्य हैं। भारतीय लोग बोतल नहीं रख सकते लेकिन वे कैंटीनोंमें जितनी चाहे उतनी पी सकते हैं। उसका परिणाम विशेष रूपसे स्त्रियोंके सिलसिलेमें क्या हुआ है, वह मैंने आपको बताया है। गोरा व्यक्ति बेशक स्वतन्त्र है। उसके सम्बन्धमें कोई कानून नहीं है, लेकिन मैं क्या कहना चाहूँगा इसकी कल्पना आप कर सकती हैं। वह यह कि इस बुराईका कारण दक्षिण आफ्रिकामें गोरे व्यक्तियोंको दी गई स्वतन्त्रता है। उनमें से कुछने बन्टुओं और भारतीयोंकी इस पीनेकी आदतका फायदा उठाकर काफी धन एकत्र कर लिया है।

बादमें मैं भारत चला आया और मैंने देखा कि यहाँकी स्थिति दक्षिण आफ्रिकाकी स्थितिसे एक दृष्टिसे भिन्न है, लेकिन समस्या मूलतः दोनोंकी एक ही है। जैसा कि आप जानते हैं, १९२०-२१ में भारतमें एक जोरदार मद्य-निषेध अभियान चलाया गया था और आप मेरे यह कहनेका बुरा नहीं मानेंगी कि उस समय यदि हमें भारत-भरके सभी मद्य-निषेध संगठनोंका पूर्ण सहयोग प्राप्त हो गया होता तो हमें पूर्ण सफलता मिल गई होती। यदि आपने भारतके मद्य-निषेध आन्दोलनका सावधानीसे अध्ययन किया है तो आपको सरकारी रिपोर्टोंसे पता चलेगा कि हमें कमसे-कम कुछ प्रान्तोंमें तो लगभग पूरी सफलता मिलती प्रतीत होने लगी थी। बहुतसे शराबखाने करीब-करीब बन्द हो चुके थे। असममें सैकड़ों अफीमखाने उजड़ चुके थे। लेकिन तभी एक दुखद घटना घटी। वह थी सरकारी दमनकी। यह एक लज्जास्पद और दुखद घटना थी। मैं मानता हूँ कि आन्दोलन राजनीतिक रंगमें रँगा हुआ था। उसपर राजनीतिक रंग चढ़ना लाजिम भी था। लेकिन राजनीतिक उद्देश्यके बावजूद चूँकि वह आन्दोलन मूलतः एक नैतिक आन्दोलन था अतः मद्य-निषेध संगठनोंको उसकी मदद करनेमें हिचकना नहीं चाहिए था। यह सब इतिहास, जो दुखद होते हुए भी काफी रोचक है, बतानेके लिए आप मुझे क्षमा करेंगे। दमनकी शुरुआत इस प्रकार हुई। बिहार, असम और मध्य प्रान्तके सरकारी राजस्वमें एकदम

कमी आ गई थी। लोगोंमें आत्म-शुद्धिकी एक प्रबल भावना, इच्छा और उत्कट लालसा उत्पन्न हो गई थी। वह लालसा जागी; कैसे जागी, यह मुझे नहीं मालूम, क्योंकि ईश्वरकी रहस्यमयी लीलाका हमें सदैव पता नहीं चलता। लेकिन इतना तो सच है कि राजनीतिक आन्दोलन आत्म-शुद्धिका भी आन्दोलन बन गया और उस बहावमें हजारों लोग शराबकी दूकानों और अफीमके अड्डोंपर धरना देनेके लिए स्वयंसेवक बन गये। जनता भी यह महसूस करने लगी कि शराबखानोंसे दूर रहना उनका कर्त्तव्य है। सरकारने दमन-चक्र चलाया और हजारों स्वयं-सेवकोंको शराब और मादक वस्तुओंकी दूकानोंपर धरना देनेके अपराधमें जेलोंमें डाल दिया गया। परिणाम यह हुआ कि वे सब कैंटीनें जो उजड़ चुकी थीं और वे सब अफीमके अड्डे जो लगभग बन्द हो चुके थे, मुझे डर है कि अपना व्यापार उसी पैमानेपर चला रहे हैं जैसा कि वे १९२०-२१ से पहले चला रहे थे।

इस कथासे जो नतीजा मैं निकालना चाहूँगा वह यह है कि इस सम्बन्धमें भारत और बर्मामें — अपने तर्कके लिए बर्माको एक पृथक् इकाईके रूपमें स्वीकार करते हुए — लोगोंको नशा छोड़नेके लिए प्रशिक्षित करनेका आन्दोलन चलानेके साथ ही नशा-विरोधी कानून भी बनना चाहिए; भले हो ऐसा कानून बादमें बने। बर्मी लोगोंमें शराब पीनेकी आदतका मैं उतनी गहराईसे अध्ययन नहीं कर सका हूँ जितना कि मैं चाहता था। मैं आपको यकीन दिलाता हूँ कि जबसे मैं बर्माके लोगोंके सम्पर्कमें आया हूँ तबसे मैं बर्मी मित्रोंसे इस शराबकी आदतके बारेमें जाननेकी कोशिश कर रहा हूँ। लेकिन इसके बारेमें दूसरोंसे प्राप्त जानकारीके आधारपर ही बोल सकता हूँ; जबकि भारतके बारेमें मैं अपने अनुभवके आधारपर बोल सकता हूँ और आपके सामने मैं अपना साक्ष्य दे सकता हूँ कि मद्यपानकी आदतका प्रचलन रईस लोगोंमें नहीं है, यहाँतक कि मध्यम वर्गीय लोगोंमें भी नहीं है, बल्कि मजदूरों, खास तौर पर कारखानोंमें काम करनेवालोंमें अधिक है और आपके सामने जो साक्ष्य मैं दे रहा हूँ वह काफी दिलचस्प है। कारखानोंमें काम करनेवाले मजदूर जो वहाँ आनेसे पहले शराब नहीं पीते थे अब क्यों पीने लगे हैं, उसी प्रकार जिस प्रकार दक्षिण आफ्रिकामें मजदूरीके लिए जानेवाले स्त्री-पुरुष, जो वहाँ जानेसे पहले शराब नहीं पीते थे, वहाँ जाकर क्यों पीने लगे? इसका जवाब यह है कि वहाँकी परिस्थितियाँ ऐसी हैं और उन लोगोंके सामने ऐसे प्रलोभन प्रस्तुत किये जाते हैं जिनके कारण वे मद्यपानकी इस आदतके शिकार हो जाते हैं। लेकिन जो लोग इस आदतके शिकार हो चुके हैं वे भी इस आदतको उचित नहीं बताते। यदि आप इसके बारेमें उनसे कहें तो वे अपनी बेबसी जाहिर करेंगे; वे कहेंगे कि हम तो मजदूर हैं; वे तरह-तरहकी झूठी बातें कहेंगे और आपको धोखेमें डालनेकी कोशिश करेंगे लेकिन अपनी इस आदतपर उन्हें शर्म तो आती ही है। यूरोपमें यदि आप मेरे पास आयें और मैं आपको शराब पेश न करूँ तो यह मेरे लिए अभद्रताका सूचक होगा। मैं जब इंग्लैंडमें पढ़ता था तब मेरी स्थिति बड़ी अटपटी हो जाया करती थी, क्योंकि मैं मित्रोंको शराब नहीं पेश करता था। भारतमें ऐसी बात नहीं है और इसीलिए मैं आपसे कहता हूँ कि

आपके लिए यह कहना गलत होगा कि पहले लोगोंको मद्यपानकी बुराइयोंके बारेमें प्रशिक्षित किया जाये और उसके बाद मद्य-निषेध कानून बनाया जाये। शिक्षा इस बुराईको दूर करनेमें कभी समर्थ नहीं होगी। मद्य-निषेध इस कारण नहीं है कि शराबसे काफी राजस्वकी प्राप्ति होती है। यहाँतक कि भारतके मन्त्रिगण भी यही कहते हैं, "हम इस राजस्वको नहीं छोड़ सकते, लेकिन आप लोगोंको प्रशिक्षित करते रहिए।"

इस राजस्वके सम्बन्धमें भी एक दुखद बात है। मंत्रियोंको — यह बात बर्मा और भारत दोनोंपर लागू होती है — ऐसी अटपटी स्थितिमें नहीं डालना चाहिए था। जैसा कि आप जानते ही हैं, आबकारी एक हस्तांतरित विषय है। इसे हस्तांतरित विषय नहीं बनाया जाना चाहिए था। आबकारीसे प्राप्त होनेवाला राजस्व केन्द्रीय राजस्वका ही एक अंश बना रहना चाहिए था, ताकि सरकारके सामने यह छूट रहे कि वह इस राजस्वका किसी क्षण भी त्याग कर दे और पूर्ण मद्य-निषेध घोषित कर दे। जब अमेरिका-जैसा विशाल देश, जहाँ मद्यपान एक आम बात थी, मद्य-निषेध घोषित करनेमें सफल हो गया तब भारत और बर्माके लिए यह कितना सरल न होगा, जहाँ शराब पीना एक फैशन नहीं है, जहाँकी अधिकांश जनता शराबको पसन्द नहीं करती और जहाँ यदि आप मत-संग्रह करें तो मद्य-निषेधके बारेमें कानून बनानेसे सम्बन्धित किसी भी प्रकारके आवेदनपत्रके समर्थनमें आपको करोड़ों हस्ताक्षर प्राप्त हो जायेंगे। आबकारीसे प्राप्त होनेवाला राजस्व २५ करोड़ है। यह कोई ऐसा राजस्व नहीं है जिसके बूतेपर प्रशासन चलानेमें कोई सरकार गर्वका अनुभव कर सके। इस राजस्वका तो त्याग कर देना चाहिए और जबतक इस मदसे प्राप्त राजस्व खर्च न हो जाये तबतक इस रकमको परम पावन समझना चाहिए तथा इसका उपयोग पूर्णरूपसे शराबकी बुराईको दूर करनेमें ही करना चाहिए। लेकिन आजकल इसका उपयोग हमारे बच्चोंकी शिक्षाके लिए किया जाता है जिसका नतीजा यह है कि इस आवश्यक मद्य-निषेध कानूनके सामने एक बड़ा भारी व्यवधान उपस्थित हो गया है। लोगोंको यह समझाया जाता है कि इस राजस्वके बन्द होनेपर वे अपने बच्चोंको शिक्षा नहीं दे पायेंगे। यदि स्थिति इसी तरह बेकाबू रही तो एक सम्पूर्ण राष्ट्रका ही विनाश होनेकी सम्भावना है। बुराईके फैल जानेपर कानून बनाना व्यर्थ साबित होगा। अमेरिकामें मद्य-निषेधके समर्थनमें जनमत तैयार करना इसलिए सम्भव हो सका कि वहाँ सार्वजनिक शिक्षाका प्रबन्ध है। लेकिन भारत-जैसे देशमें, जहाँ जबर्दस्त पैमानेपर निरक्षरता तथा उसके साथी अन्धविश्वासका बोलबाला हो, वहाँ जनमत तैयार करना सम्भव नहीं है। इसलिए मैं आप लोगोंसे, खासकर स्त्रियोंसे, जो मद्य-निषेध कार्यमें लगे हुए हैं, यह अपील करता हूँ कि वे हिम्मतसे काम लें। मैं यह नहीं चाहता कि मैंने आपसे जो-कुछ कहा है उसे आप वेदवाक्य मान लें। आप स्वयं सत्यकी परख कीजिए और जब आप पायें कि जो-कुछ मैंने कहा है, आपकी जाँच-पड़ताल द्वारा उसकी और अधिक पुष्टि हो गई है तब मैं चाहूँगा कि आप अपना कर्त्तव्य मानकर पूर्ण मद्य-निषेधके लिए एक तूफानी अभियान चलायें। इस कामकी

कठिनाई इसलिए बढ़ जाती है कि मद्यपानकी बुराईके कारण जिन अधिकारोंका जन्म हुआ है उनका लाभ शासक जातिके लोगोंको मिल रहा है।

यदि प्रशासकोंके साथ आप समस्यापर विचार करें तो वे आपको तरह-तरहकी बातें बतायेंगे और मद्य-निषेध कानून पास करनेके रास्तेमें तरह-तरहके और विचित्र प्रकारके व्यवधान उत्पन्न करेंगे। इन कठिनाइयोंपर बिलकुल ध्यान मत दीजिए। वास्तवमें राजस्वकी कमीको पूरा करनेके अलावा और कोई कठिनाई नहीं है। यदि आप और मैं इरादा कर लें कि इस बुराईको तो खत्म करना ही है और यदि इसको दूर करनेका एकमात्र तरीका मद्य-निषेध कानून ही हो तो फिर यह सरकारका काम है कि वह इस घाटेकी समस्याको हल करनेका रास्ता ढूंढे। सरकारको यह अधिकार नहीं है कि वह आपसे इस घाटेको पूरा करनेके उपाय और साधन पूछे। यह तो वैसा ही होगा जैसे कि कोई आदमी गन्दे हाथ लेकर आपके पास आये और आपसे उन्हें साफ करनेमें मदद देनेको कहे। फिर भी धरने देनेका सवाल तो है ही। जब ऐसी मनोवैज्ञानिक घड़ी आ जाये — मैं उस घड़ीके लिए प्रार्थना कर रहा हूँ — जब हर शराबकी दूकान और अफीमके अड्डेपर धरना दिया गया हो, तब मैं आपसे आशा करूँगा कि आप उसमें सहयोग दें, और यह न कहें कि "हम कैसे मदद कर सकते हैं? वह तो उपद्रवी है।" इस समय भी सूरत जिलेमें मद्य-निषेधके लिए एक तीव्र आन्दोलन चल रहा है, और यह आन्दोलन इसलिए सम्भव हो सका है कि वहाँ कार्यकर्त्ताओंका एक ऐसा दल है, जिसमें सम्भ्रान्त कुलकी महिलाएँ भी शामिल हैं जो आत्म-त्यागी और साहसी हैं। जब हमारे पास विश्वसनीय और तपे हुए कार्यकर्त्ताओंका एक संगठित दल होगा तब हम यह अभियान सारे देशमें चलायेंगे। वह समय आनेपर आप सारे भारतमें धरने ही धरने देखेंगे और आशा है कि वही प्रभाव बंगालकी खाड़ीसे होकर बर्मातक फैल जायेगा। उस समय बर्मी स्त्रियाँ और पुरुष यदि चाहें तो इस धरनेको जारी रख सकते हैं और इस प्रकार वे एक महान जातिको उस आसन्न विनाशसे बचा सकते हैं, जिसका खतरा, जहाँ तक कि मैं देख सकता हूँ, भारतकी ही भाँति यहाँ भी उपस्थित है और अगर शराब रूपी अभिशापसे इस जातिको समय रहते मुक्त नहीं किया गया तो यह जाति मिट जायेगी।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८-४-१९२९

१३२. पत्र : छगनलाल जोशीको

१५ मार्च, १९२९

चि० छगनलाल,

हम लोग आज सुबह मौलमीनसे रंगून पहुँच गये। तुम्हारी डाक मिल गई है। कलकत्तासे मौनवारको भेजी गई डाक तुम्हें गुरुवारतक नहीं मिली, यह आश्चर्यकी बात है। सुब्बैया ध्यान तो बहुत रखता है।

कल तुम्हें पोस्टकार्ड लिखने लायक समय ही था। यह डाक शनिवारको यहाँसे निकलेगी। आज गुरुवार है।

यहाँपर पत्र छोड़ देना पड़ा था। अब यह शुक्रवारकी सुबह पौंगदेमें लिख रहा हूँ। हम लोग यहाँ भी तीसरे दर्जेमें यात्रा कर रहे हैं। मुझे कुछ कठिनाई नहीं होती और साथियोंके लिए तो ठीक है ही।

चलालाके बारेमें तुम्हें तार दिया है। यदि इस जमीनके बादमें बिकनेकी सम्भावना हो तो उसे लेनेमें कोई अड़चन नहीं है, ऐसा हम दोनों[1] मानते हैं। परन्तु सही निर्णय तो तुम वहीं कर सकते हो।

मैं हिसाबके विवरणकी जाँच कर लूँगा। बारीकीसे तो हम दोनोंमें से शायद ही कोई उसे देख पाये। २९ तारीखको पहुँच जानेकी आशा तो है ही।

बहियल या किसी दूसरी जगह खादी उत्पन्न कर सकें तो वह वांछनीय होगा। कलकत्तामें जितनी खादी भेज दें उतनी बिक जायेगी, ऐसा महावीर प्रसादने कहा है। इसलिए बेचनेकी तो समस्या ही नहीं है; आश्रमसे जितनी मदद दी जा सके उतनी देना। मैंने कथारके आसपास खादी उत्पन्न करनेके लिए १० हजारका दान लेनेकी स्वीकृति दे दी है। इस विषयमें मिलनेपर विस्तारसे बात करेंगे।

तुमने प्रति शुक्रवार चार घंटे कातने और पींजनेका निश्चय करके ठीक ही किया है। तुम पिंजाईका काम स्वयं करना सीख लोगे, यह तो बहुत अच्छी बात है।

छः और सातके बीच भेद न करनेका विचार मुझे अच्छा लगा है। जहाँतक हो सके, अपना कामकाज सरल और एक-सा चले यह वांछनीय ही है। विद्यापीठको दूध देनेका प्रस्ताव मुझे पसन्द आया है। उन्हें नियमपूर्वक मिलता रहे, हमें ऐसा प्रबन्ध कर लेना चाहिए।

राधा और रुखी स्वस्थ हो गई होंगी? राधाकी बीमारीके दौरान बालमन्दिरका क्या किया, यह तुमने नहीं लिखा है। किसीके बीमार पड़नेपर क्या व्यवस्था की जायेगी, इसका खयाल पहले कर लेना चाहिए।

१. गांधीजी और जमनालाल बजाज।

इसके बाद बर्मासे अब एक ही डाक अर्थात मंगलवारको जायेगी। गुरुवारको तो हम लोग यहाँसे रवाना हो जायेंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५३९३)की फोटो-नकलसे।

१३३. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

१५ मार्च, १९२९

चि० गंगाबहन,

तुम्हारा शरीर अबतक तो बिलकुल स्वस्थ हो गया होगा। इस वर्ष तुमसे और जो लोग आगे आयें, उनसे बहुत काम लेना है। देखता हूँ कि आश्रम स्वयं निश्चित हो जाये और मैं भी आश्रमके विषयमें निर्भय हो जाऊँ, इसकी बहुत आवश्यकता है। दिनके समयका आराम कदापि नहीं छोड़ना। क्रोधका बिलकुल त्याग करो और हरएक शब्द सोच-विचारकर, तोलकर मुँहसे निकालो। सबकी आलोचना सहन करो। प्रार्थनामें नियमपूर्वक जाना और कताईके लिए समय बचाना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो-६ : गं० स्व० गंगाबहेनने

१३४. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

१५ मार्च, १९२९

चि० ब्रिजकिसन,

तुमारा खत मीला है। तुमारे यहाँ ठहरना मुझको प्रिय लगता है। परंतु तुमारे घरमें तुम एक महमान हो। जिस घरके वडील वर्ग मेरे कार्यमें और मेरे विचारमें श्रद्धा न रखे वहाँ मेरा ठहरना अनुचित है। तुमारे भी आग्रह करना अयोग्य है। दूसरा कारण यह है की घरकी आर्थिक स्थितिको देखते हुए भी मुझे तुमारे यहाँ नहिं रहना चाहीये। ऐसे तो मैंने तुमारे पाससे बहोत सेवा ली है, तुमारा धनका भी उपयोग कीया है। अब ज्यादा देनेका लोभ तुमारे छोड़ना चाहीये।

तुमारा शरीर अच्छा होगा।

इतना कहनेके बाद मैं तो तुम जैसे कहोगे वैसा ही करूंगा। देवदाससे मश्वरा कर लो।

बापुके आशीर्वाद

जी० एन० २३६२ की फोटो-नकलसे।

१३५. भाषण : पौंगदेमें

१५ मार्च, १९२९

गांधीजीने अभिनन्दनपत्रोंके लिए, खास तौर पर स्त्रियों द्वारा दिये गये अभिनन्दनपत्रके लिए, धन्यवाद देते हुए कहा कि मुझे यह जानकर विशेष खुशी है कि जिस स्त्रीने अभिनन्दनपत्र पढ़ा उसे राष्ट्र-हितके कार्यमें जेल हुई थी। उन्होंने कहा कि मुझे इस बातका बहुत दुख है कि भारतीयोंमें से किसीका भी बर्मी भाषापर अधिकार नहीं हो सका है।

मुझे आशा है कि भारतीय इस अवसरसे शिक्षा ग्रहण करेंगे और बर्मी भाषाको एक अतिरिक्त भाषाके रूपमें सीखेंगे। बर्मियोंके प्रति भारतीयोंका जो कमसे-कम कर्त्तव्य है वह यह है कि वे बर्मियोंकी भाषा सीखकर उनके निकट आनेका प्रयत्न करें, और यदि भारतीयोंको ऐसा लगे कि स्वयं उनके लिए इस उम्रमें अब ऐसा करना सम्भव नहीं होगा तो मैं चाहूँगा कि वे अपने बच्चोंको तो बर्मी भाषा अवश्य सिखायें।[1]

बर्मी पुरुषों और स्त्रियोंको सम्बोधित करते हुए गांधीजीने कहा कि जितना ही मैं आप लोगोंसे मिलता हूँ, आपके प्रति मेरा आकर्षण उतना ही अधिक बढ़ता जाता है। गांधीजीने उनसे सब प्रकारके विदेशी वस्त्रोंका त्याग करनेका आग्रह किया और कहा कि बर्माकी सुन्दर रंग-बिरंगी छतरियोंकी तुलनामें विदेशी छतरियाँ फीकी प्रतीत होती हैं। उन्होंने कहा, विदेशी रेशमी वस्त्र आपका पैसा और कला, दोनोंको छीन लेता है। आप लोग शराब और सिगारसे दूर रहें। इन दोनों चीजोंमें शराब अधिक हानिकर है और इससे आप उसी प्रकार बचिए जिस प्रकार विषैले साँपसे बचते हैं।

आगे उन्होंने कहा कि यहाँ रहनेवाले भारतीयोंका कर्त्तव्य है कि वे बर्माके कल्याण-कार्यमें दिलचस्पी लें और सभी लाभकारी कार्योंमें बर्मी लोगोंके साथ सहयोग करें।

हिन्दीमें बोलते हुए गांधीजीने भारतीयोंसे बर्मियोंका मित्र बनने तथा इस प्रकारका जीवन व्यतीत करनेका अनुरोध किया जिससे कि बर्मी लोग उनके बारेमें अच्छे विचार रखें। उन्होंने खादी कार्यके लिए और धन देनेकी अपील की।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १८-३-१९२९

१. यह अनुच्छेद ११-४-१९२९ के **यंग इंडिया**में प्रकाशित और महादेव देसाई द्वारा लिखित गांधीजीकी बर्मा-यात्राके विवरणमें से लिया गया है।

१३६. भाषण : प्रोममें

१५ मार्च, १९२९

श्री गांधीने तीनों अभिनन्दनपत्रोंका संयुक्त रूपसे उत्तर देते हुए कहा कि बर्माके भीतरी प्रदेशोंकी अपनी यात्राके दौरान मैं बहुत-से बर्मी स्त्री-पुरुषोंसे मिला और इससे मुझे बहुत खुशी हुई है। उन्होंने कहा, मेरी इस यात्राका उद्देश्य स्वार्थ-पूर्ण है और यह स्वार्थ है धन इकट्ठा करना। एक अभिनन्दनपत्रमें गांधीजीसे अनुरोध किया गया था कि वह बर्माके लोगोंको उनकी स्वतन्त्रताकी लड़ाईमें मार्गदर्शनके लिए सलाह दें। इस अनुरोधका उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि मैं इस कामके लिए अपनेको उपयुक्त नहीं मानता लेकिन एक सामान्य नियमके तौर पर जो कि सभी जगह लागू होता है और जिसे मैंने अपने ४० वर्षके व्यक्तिगत राजनीतिक जीवनसे सीखा है, मैं कह सकता हूँ कि इस प्रकारकी स्वतन्त्रताके लिए पहले आत्म-शुद्धि आवश्यक है।[1]

इसके अतिरिक्त या इससे अच्छा पथ-प्रदर्शन मैं आपका नहीं कर सकता कि मैं आपका ध्यान अहिंसाके सामान्य सिद्धान्त, दूसरे शब्दोंमें आत्म-शुद्धि की ओर दिलाऊँ। इसका प्रयोग किस प्रकार और किस रूपमें किया जाये यह बात स्वभावतः इस बात-पर निर्भर करेगी कि आपके बीच कौन-कौनसी बुराइयाँ विद्यमान हैं। लेकिन मैं कमसे-कम एक चीजको विशेष रूपसे बताना चाहता हूँ। मुझे लगता है कि आपके यहाँ कृषिकी स्थिति बिलकुल भारत-जैसी ही है। प्रोमकी ओर आते हुए मैं एक गाँवसे गुजरा था जो मुख्यतः बुनकरोंका गाँव था। लेकिन वहाँ सभी करघोंपर विदेशी सूत बुना जाता है और इसीलिए उनका किसानोंके साथ कोई जीवन्त सम्पर्क नहीं है। बुनकर किसी देशप्रेमकी भावनाके वशीभूत होकर नहीं बुनते बल्कि इसलिए बुनते हैं कि इससे उन्हें प्रतिदिन ८ आनेसे लेकर एक रुपये तककी आमदनी होती है। मुझे बताया गया है कि एक समय ये सभी सुन्दर लुंगियाँ हाथ-कते सूतसे तैयार होती थीं। जो चरखा आप यहाँ तैयार करते हैं कलात्मक दृष्टिसे वह सभी भारतीय चरखोंसे बढ़िया है। कुल मिलाकर यह भारतीय चरखेसे सस्ता है और काम करनेके लिहाजसे शायद हल्का भी है। ईश्वरकी कृपासे इस देशमें बाँस खूब पैदा होता ही है, और आपको तो केवल चरखेके सन्देशको किसानोंतक पहुँचाना और हाथ-कताईकी इस सुन्दर कलाका पुनरुत्थान-भर करना है। मैं बर्माकी नगरपालिकाओंसे कहूँगा कि वे इसकी शुरुआत नगरपालिकाके स्कूलोंमें करें और उनके माध्यमसे यह सन्देश ग्रामीणोंतक पहुँचायें। तब फिर बुनकर जो काम करेंगे वह ग्रामीणोंके लिए

१. इसके आगेका अनुच्छेद महादेव देसाई द्वारा लिखे गये गांधीजीकी बर्मा-यात्राके विवरणमें से लिया गया है।

होगा और यदि बुनकर विदेशी सूतपर निर्भर रहे तो वे केवल गाँवोंसे ही दूर नहीं हो जायेंगे बल्कि एक समय ऐसा भी आयेगा जब बुनकरोंके रूपमें उनका अस्तित्व ही खत्म हो जायेगा। इसका कारण यह है कि बुनाई-मिलोंकी मनोवृत्ति कताई-मिलों द्वारा तैयार सारे सूतका उपयोग कर लेनेकी होती है। यदि आप गाँवोंके साथ एक जीवन्त सम्बन्ध स्थापित करनेके इच्छुक हैं — बुनकरोंका गाँवोंके साथ और नगरवासियोंका गाँववासियोंके साथ — तो फिर यह आप केवल चरखेके माध्यमसे ही कर सकते हैं।

गांधीजीने यह आशा व्यक्तकी कि यदि बर्मामें कभी आत्म-शुद्धि आन्दोलनकी शुरुआत हुई तो फुंगी लोग उसमें अग्रगण्य होंगे। फुंगी लोग बर्मी संस्कृतिके आधार तथा जन-कल्याणके संरक्षक रहे हैं, और आगे भी उन्हें यह भूमिका निभानी चाहिए। इसीलिए उनकी बड़ी भारी जिम्मेवारी है।

मद्यपानकी बुराईका उल्लेख करते हुए महात्मा गांधीने कहा कि असहयोगके बिना इस बुराईको कभी दूर नहीं किया जा सकता। उन्होंने कहा कि आपको शराब-विक्रेताओं और शराबके उत्पादकोंके साथ अहिंसात्मक असहयोग करना चाहिए। उन्होंने अपने श्रोताओंको चेतावनी देते हुए कहा कि हिंसासे प्राप्त की गई स्वतन्त्रता-का अर्थ होता है शक्तिका एक हाथसे दूसरे हाथमें जाना। अहिंसात्मक असहयोग ही एक ऐसी चीज है जिसकी सलाह मैं दे सकता हूँ।

हिन्दुओंको सम्बोधित करते हुए गांधीजीने उन्हें अपने अभिनन्दनपत्रमें कही गई इस बातके लिए बधाई दी कि प्रोममें सभी जातियों और सम्प्रदायोंमें काफी मित्रता है। उन्होंने भारतीयोंपर खादी पहननेके लिए जोर दिया। उन्होंने कहा कि मुझे बताया गया है कि केवल ५ हजार रुपये ही इकट्ठे हुए हैं। उन्होंने जोरदार शब्दोंमें अपील करते हुए कहा कि आप लोगोंको और रुपया इकट्ठा करना चाहिए।[1]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १८-३-१९२९ और **यंग इंडिया**, ११-४-१९२९

१३७. पत्र : मीराबहनको

[१६ मार्च, १९२९][2]

चि० मीरा,

इसके बाद बर्मासे तुम्हें भेजनेको सिर्फ एक ही डाक और रहेगी। बादकी डाकके समयतक तो मैं वापस कलकत्तेकी यात्रापर चल चुकूँगा। थोड़ा-सा कुनैन रोज ले लेती हो, यह अच्छा है। जब तुम्हारी तबीयत अच्छी हो, तब भी कभी-कभी पूरा या आधा उपवास रखनेकी आदत डाल लो। कभी-कभी घी और कभी-

१. इस भाषणके तुरन्त बाद ही गांधीजीने स्त्रियोंकी एक सभामें भाषण दिया।

२. अपने १८ मार्चके पत्रमें गांधीजीने शनिवारको एक पत्र भेजनेका उल्लेख किया है। अनुमानतः वह यही पत्र है।

कभी दूध छोड़ दिया करो। कभी-कभी केवल रसवाले फल लिया करो। ऐसा करनेसे सम्भव है तुम बुखारसे बची रह सको।

मुझे उम्मीद है कि मैं यहाँ एक लाख रुपयेके लगभग इकट्ठा कर लूँगा। व्यापारकी मन्दीके इस जमानेमें इतना रुपया दे देना बर्माके लिए कम नहीं होगा।

मुझे कई बार ऐसा लगा है कि तुम इस तरहके दौरेमें साथ होतीं तो अच्छा होता। लेकिन मैं यह भी जानता हूँ कि जो काम तुम कर रही हो, वह इससे कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है। अगर भगवान तुम्हें तन्दुरुस्ती देगा, तो तुम खुद इन स्थानोंका सफर करोगी और उस समय तुम्हारी तैयारी अधिक अच्छी होगी। जो तालीम और अनुभव तुम प्राप्त कर रही हो, वे मेरे चल बसनेके बाद अमूल्य साबित होंगे।

नरम तकुओंके बारेमें तुमने जो लिखा है, उसे मैंने लक्ष्मीदासके पास भेज दिया है। तुम्हारी दलील मुझे जरूर जँचती है। मगर मेरे मनमें हमेशा प्रश्न उठता है कि फिर मगनलालने, जिसने नरम तकुओंसे काम शुरू किया था, सख्त तकुओंका आश्रय क्यों लिया? जो बात तुम्हारे ध्यानमें आई, वह लक्ष्मीदासके ध्यानमें क्यों नहीं आई? लेकिन बेशक, इन कारणोंसे तुम्हारी खोजकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। इनसे तो केवल अत्यधिक सावधानी बरतनेकी आवश्यकता ही सिद्ध होती है।

मैंने आश्रममें स्त्रियोंको रखनेके बारेमें भी तुम्हारे कथनको ध्यानमें रख लिया है। इन सब मामलोंमें तुम जितना धीरे-धीरे चलना चाहो, चलो। और जिस चीजके बारेमें तुम्हें खुद विश्वास न हो या शंका भी हो, उसको करनेकी हरगिज कोशिश मत करना। 'धीरे परन्तु निश्चयके साथ चलनेसे ही जीत होती है।'

एन्ड्रयूज अभीतक अमेरिकामें हैं। ग्रेगने मुझे लिखा है कि उनका हाल अच्छा है। जीमंडके पत्रका एक अनुच्छेद तुम 'यंग इंडिया' में देखोगी।[1] मैकमिलन कम्पनीके लिए 'ए०'[2] 'आत्मकथा' का संक्षिप्त संस्करण तैयार करनेवाले हैं।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० ९४०७) से; तथा सी० डब्ल्यू० ५३५१ से भी।
सौजन्य: मीराबहन

१. देखिए "टिप्पणियाँ", २१-३-१९२९ का उपशीर्षक "सरोजिनी देवी और दीनबन्धु"।
२. सी० एफ० एन्ड्रयूज।

१३८. संदेश : विदाई सभा, मर्तबानमें[1]

[१७ मार्च, १९२९ या उससे पूर्व][2]

रुपये-पैसेका दान प्रेमका प्रायः सच्चा परिचायक नहीं होता। वास्तवमें हमारे महाकाव्योंमें अक्सर ऐसी कथाओंका वर्णन आता है जब ईश्वरने एक धनिक व्यक्तिके अमूल्य उपहारोंको अस्वीकार कर दिया और एक भक्त द्वारा प्रेमपूर्वक दिया गया रूखा-सूखा कौर खाना पसन्द किया। लेकिन यह मेरे लिए बड़े दुर्भाग्यकी बात है कि मुझे आपके प्रेमका मूल्यांकन दरिद्रनारायणको समर्पित धनसे करना पड़ता है। मैं जानता हूँ ऐसा करना आपके प्रति अन्याय है तथापि आपकी जो भी कसौटी की गई है आप उसमें पूरे उतरे हैं। आपके असीम प्रेमसे मैं यही शिक्षा ग्रहण कर सकता हूँ कि मैं और अधिक नम्र बनूं और स्वयंको आपके प्रेमके अधिक योग्य बनाऊँ।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८-४-१९२९

१३९. 'यह सब पेट कराता है'

एक पाटीदार भाई लिखते हैं :[3]

यह पत्र लिखनेवालेका उद्देश्य पाठकोंके मनमें गाय-भैंस आदि पशुओंके लिए दया उपजाना है। यह शुद्ध हेतु हैं। परन्तु मुझपर इस पत्रका दूसरा ही असर हुआ है। पशुओंकी ऐसी निर्दय हत्या लम्बे अरसेसे होती चली आ रही है। बम्बईके हिन्दू-मुसलमान इसके साक्षी हैं। इतना ही नहीं, इस घोर हिंसामें उनका भाग है। यहाँ प्रश्न संकुचित अर्थमें धर्मका नहीं है; यहाँ व्यापक अर्थमें धर्मका क्षय हो रहा है। इस बातके अनेक उदाहरण इतिहासमें मिलते हैं कि मांसाहारी भी दयालु हो सकते हैं। परन्तु मांसाहारी जिन जानवरोंका मांस खाते हैं, उनके प्रति जितनी दया सम्भव हो उतनी तो रखें। पश्चिमके कसाईखाने इस दृष्टिसे आदर्श होते हैं। वहाँ सदा ऐसे उपायोंकी तलाश रहती है और फिर उनका उपयोग किया जाता है, जिनसे पशुकी मृत्यु तुरन्त हो जाये और उसे कमसे-कम दुःख हो। मांस बिलकुल छोड़ देना

१. महादेव देसाई द्वारा लिखित गांधीजीकी बर्मा-यात्राके विवरणसे।

२. गांधीजीने रेल द्वारा मांडले जाते हुए यह संदेश दिया था। १८ मार्चको मौनवार था और उस दिन वे मांडलेमें थे।

३. यहाँ नहीं दिया गया है। पत्रमें लेखकने बम्बईमें सेनिटरी इन्स्पेक्टरका प्रशिक्षण प्राप्त करते समय कसाईखानोंमें निर्दोष पशुओंकी हत्याके जो दृश्य देखे थे उनका वर्णन किया था और कहा था कि जब उन्होंने साथके अंग्रेज पशु-चिकित्सकसे इसके औचित्यके विषयमें प्रश्न किये तो उन्होंने कहा, 'यह सब पेट कराता है'।

उत्तम दया है। परन्तु जो उतना त्याग करनेको तैयार न हों, वे पशुओंका दुःख कम तो जरूर करें। यह बात हिन्दुस्तानके कसाईखानोंमें नहीं पाई जाती।

पर मैं तो ऊपरका पत्र पढ़कर प्रशिक्षण लेनेवाले विद्यार्थियोंके बारेमें विचार करने लगा। वे परोपकारकी दृष्टिसे नहीं, बल्कि सिर्फ आर्थिक दृष्टिसे अच्छी नौकरी मिलनेकी आशामें, ६ महीनेके लिए २०० रुपयेकी भारी फीस देते हैं; [और यह सब देखते फिरते हैं।] क्या ऐसे धन्धे अपनाये बिना पेट नहीं भर सकता? पढ़े-लिखे आदमी ऐसे धन्धोंसे अपनी आजीविका चलाना चाहते हैं, इसीलिए न तो कत्लखानोंमें सुधार होता है और न वे बन्द होते हैं। पेट भरनेके साधनोंका निश्चय भी मनुष्यको नैतिक दृष्टिसे करना चाहिए। परन्तु किसी भी तरह धन इकट्ठा करनेकी अनीतिके पाशसे इस पत्र-लेखक जैसे पढ़े-लिखोंको तो मुक्त ही रहना चाहिए। इस पत्र-लेखकने अच्छा अध्ययन किया है, अच्छे संस्कार पाये हैं और उसमें नीतिकी दृष्टिसे धन्धा चुनने लायक बुद्धि भी है। इस बुद्धिका उसे और उसके जैसे दूसरे युवकोंको उपयोग करना चाहिए।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, १७-३-१९२९

१४०. एक पींजनेवालेका अनुभव

पिंजाईके एक अनुभवी लिखते हैं:[1]

इस तरह अगर सब लोग प्रयोग करके अच्छी कताई करें, और होनेवाला नुकसान कम करते जायें तो यही माना जायेगा कि उन्होंने उस हृदतक भारतके सूतकी उत्पत्तिमें वृद्धि की है।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, १७-३-१९२९

१४१. 'हृदय-विदारक'[2]

तमिल कवि भारतीके नामसे अब गुजरात परिचित हो गया है, ऐसा हम कह सकते हैं। उनकी कई कविताओंका श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचारी कृत अंग्रेजी अनुवाद 'यंग इंडिया' में प्रकाशित हो चुका है। उनमें से एकका श्री जुगतराम दवेने उद्योग मन्दिरके बालकोंकी पत्रिका 'मधपूडो' के लिए गुजराती अनुवाद किया है। अनुवाद रोचक और शिक्षाप्रद है इसलिए इसे नीचे दे रहा हूँ। श्री जुगतराम दवे ग्रामीणोंके कवि और सेवक बन गये हैं। उन्होंने अपना जीवन रानीपरज जातिको अर्पित कर

१. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। लेखकने ९-१२-१९२८ के **नवजीवन** में प्रकाशित 'सुन्दर पिंजाई' लेख (देखिए खण्ड ३८, पृष्ठ १९७-९८) की चर्चा करते हुए रूईको धूप दिखाकर पिंजाईके अपने अनुभव लिख भेजे थे।

२. यह कवि भारतीकी कविताके शीर्षकका अनुवाद है। कविता यहाँ नहीं दी गई है।

दिया है। मैं मानता हूँ कि उनके गीतोंसे बहुत-कुछ सीख सकते हैं। उनके गीतोंको काव्य माना जा सकता है या नहीं, इस झमेलेमें कौन पड़े? अथवा यही क्यों न मानें कि जिस रचनामें लोगोंको आगे ले जानेकी शक्ति हो वह काव्य ही है। जिसमें प्राण डालनेकी शक्ति न हो वह काव्य कैसा?

[गुजरातीसे]
नवजीवन, १७-३-१९२९

१४२. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

मांडले
मौनवार, १८ मार्च, १९२९

बहनो,

जहाँ लोकमान्यने 'गीता'की टीका लिखी, जहाँ लालाजी और सुभाष बोस कैद थे, उस शहरका नाम है मांडले। आज हम उसी शहरमें हैं। मैं तो यह सब देखनेके लिए नहीं जा सका, मगर और सबको भेजा है। यहाँ जिस परिवारमें ठहरे हैं, उसकी गृहिणी कोई साध्वी स्त्री है। धन बहुत है, पति जिन्दा है, बाल-बच्चे हैं, फिर भी रत्तीभर गहना नहीं पहनती। अपनी लड़कियोंको गहने पहननेको नहीं कहती। तेरह बरसकी एक लड़की है, जिसे उसने बीस बरसतक विवाहका विचारतक न करनेकी बात समझा दी है। उसके पास जो गहने थे, वे उसने मुझे दिलवा दिये हैं। वह आश्रमके और नियम भी पालती है। 'नवजीवन' नियमसे पढ़ती है; और यह नहीं कहा जा सकता कि वह कोई बहुत पढ़ी-लिखी महिला है।

तुम्हारे सब काम अच्छी तरह चल रहे होंगे।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–१ : आश्रमनी बहेनोने

१४३. पत्र : छगनलाल जोशीको

मांडले
मौनवार [१८ मार्च, १९२९]

चि० छगनलाल,

तुम्हारी भेजी हुई डाक आज रंगूनमें पड़ी होगी। हम वहाँ बुधवारको पहुँच जायेंगे। यह पत्र मंगलवारकी डाकमें जायेगा। इसके बादका स्टीमर गुरुवारको जायेगा और हम उसीमें रवाना होंगे।

इसके साथ रूपनारायण बाबूका[1] पत्र और नमूनेके उपनियम भेज रहा हूँ। इन्हें मैंने देख लिया है। उन्हें लिखना कि इस समय तो मुझे उनमें कोई सुधार नही सूझ रहा है। वे जहाँ हों वहाँ उन्हें यह कागज भेज देना।

आज और कुछ लिखनेको नहीं है।

लोकमान्यने जिस जेलमें 'गीता-रहस्य' लिखा था, आज हमारा पड़ाव उसीकी छायामें है, ऐसा कह सकते है।

सब सकुशल होंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५३९५) की फोटो-नकलसे।

१४४. पत्र : मीराबहनको

दुबारा नहीं पढ़ा

मांडले
सोमवार, १८ मार्च, १९२९

आज मौनका दिन है और मैं उस किलेकी छायाके नीचे लिख रहा हूँ, जहाँ भारतके एक महानतम सपूत, तिलकको जिन्दा बन्द कर रखा गया था। लालाजीको[2] भी बरसों[3] तक मांडले दुर्गमें बन्द रखा गया था। यद्यपि मैं यह पत्र मौनके दिन लिख रहा हूँ, फिर भी मैं डाक निकलनेसे पहले नहीं लिख सका। मुझे डाकके समय बहुत नींद आ रही थी। लेकिन शनिवारको रवाना होनेवाली डाकसे मैंने तुम्हें एक

१. साबरमतीके स्टेशन मास्टर।
२. लाला लाजपतराय।
३. बापूको नींद आ रही थी, और उसीके प्रभावमें उन्होंने महीनोंके बजाय बरसों लिख दिया।

पत्र[1] भेजा है। यह पत्र जिस डाकसे रवाना होगा वह तो उसी जहाजसे जायेगी जो मुझे कलकत्ते ले जायेगा।

रंगूनमें आजके दिन भारतीय डाक मिलती है। अगर तुम्हारी कोई डाक हुई तो वह मुझे रंगूनमें बुधवारको जब मैं वहाँ पहुँचूंगा, मिल जानी चाहिए।

यह दिलचस्प दौरा खतम होने आ रहा है। डाक्टर मेहतासे बिछुड़नेका मुझे दुख होगा। मैं देख रहा हूँ कि यहाँ रहूँ तो उन्हें आराम दे सकता हूँ। लेकिन यह तो एक ऐसा निजी सौभाग्य है, जिसका सुख मैं नहीं ले सकता।

यद्यपि कुछ फेरबदल करनेकी जरूरत पड़ी है, फिर भी इस दौरेमें मेरी तबीयत अच्छी रही। हाजमा उतना अच्छा नही रहता जितना ठंडके मौसममें रहता है। यहाँका जलवायु कुदरती तौर पर नमीवाला है।

तुमको अब मेरा शेष कार्यक्रम मालूम हो गया है। मैं २६ तारीखको तुम्हें तार भेजनेका खयाल रखूँगा। मैं एक्सप्रेस गाड़ीसे, जो दो बजे दिनको हावड़ासे चलती है, रवाना होनेकी पूरी कोशिश करूँगा।

सफरमें आज पहली बार मैंने काफी रुई धुनी। ऐसा रोज कर सकूँ तो मुझे बहुत अच्छा लगेगा।

पता नहीं तुम्हें उद्योग मन्दिरसे कोई पत्र मिले हैं कि नहीं। तुम्हें वहाँके कुछ पुरुषों और स्त्रियोंसे सम्पर्क बनाये रखना चाहिए।

अभी इससे अधिक नहीं, क्योंकि मुझे एक सभामें जाना है।

सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजी (जी० एन० ९४०८)से; तथा सी० डब्ल्यू० ५३५२ से भी।
सौजन्य : मीराबहन

१४५. भाषण : मांडलेकी सार्वजनिक सभामें[2]

१८ मार्च, १९२९

आप लोगोंने मुझे इस बातकी ठीक याद दिलाई है कि यहीं मांडलेमें भारतके महान सपूत लोकमान्य तिलकको जीवित दबाया गया था। उन्होंने ही भारतको स्वराज्यका मन्त्र दिया था, और उनको जीवित दबाकर ब्रिटिश सरकारने भारतको ही जिन्दा दफना दिया था। उसी प्रकार पंजाब-केसरीको भी यहाँ बन्दी बनाया गया था, और ऐसा न हो कि हम वे सब बातें भूल जायें, इस खयालसे सरकारने हालमें ही श्रीयुत बोस और बंगालके बहुतसे सपूतोंको जिन्दा दफनाया है। इस प्रकार हम भारतीयोंके लिए तो मांडले एक तीर्थस्थान है और यह एक विचित्र संयोगकी बात है कि आज हम सब उसी दुर्ग और कारागारकी दीवारोंके सायेमें

१. देखिए "पत्र: मीराबहनको", १६-३-१९२९।
२. महादेव देसाई द्वारा लिखित गांधीजीकी बर्मा-यात्राके विवरणसे।

बैठे हैं जिन्हें भारतके उन सपूतोंने पुनीत किया था। भारतमें यह एक आम कहावत है कि स्वराज्यका रास्ता मांडलेसे होकर गुजरता है तथा ब्रिटिश सरकारने भारतके महान सपूतोंको यहाँ बन्दी बनाकर आप लोगोंको वह महत्त्वपूर्ण पाठ पढ़ा भी दिया है। स्वराज्यका मार्ग कष्ट-सहनका मार्ग है। वास्तवमें कोई भी देश अपनी वर्तमान स्थितिमें बिना कष्ट-सहनके नहीं पहुँचा है और मांडले आपको और हमें, दोनोंको, उस महान् सत्यकी निरन्तर याद दिलाता रहेगा।

आप बुद्धको अपना गुरु मानते हैं, यह अच्छी बात है। उसी प्रकार अच्छा होगा कि आप अहिंसाकी असीम सम्भावनाओंकी खोज-बीन भी करें। आप कुछ ऐसी चीजें करते हैं जो मुझे बुद्धके उपदेशोंके अनुरूप नहीं लगीं, लेकिन इस समय मैं उनकी आलोचना करके आपके आतिथ्यका निरादर नहीं करना चाहता।

मैं समझता हूँ कि आपके पास एक ऐसा महान् सत्य है जो कि मानव जातिके एक अत्यन्त महान् गुरुने संसारको बताया है, और वह सत्य है अहिंसा। यदि सभामें बिलकुल खामोशी होती और वातावरण शान्त होता तो मैं उस सीधे-सादे सिद्धान्तके बारेमें आपको खुशीसे बताता। इस स्थितिमें तो मैं आपसे केवल यही कह सकता हूँ कि आप उस सिद्धान्तका अध्ययन करें और अपने जीवनके हर पहलूमें इसे व्यवहार-में लायें। यह सिद्धान्त उन मणियों और हीरोंसे कहीं अधिक श्रेष्ठ है जिन्हें लोग इतना महत्त्व देते हैं। यदि आप बुद्धिमत्तापूर्वक इसको व्यवहारमें लायें तो अहिंसाका यह सिद्धान्त आपका तथा मानवजातिका उद्धारक बन सकता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८-४-१९२९

१४६. भाषण: गुजरातियोंकी सभा, मांडलेमें

१८ मार्च, १९२९

बात तो सच है।[1] अहिंसाके मार्गमें एक ही व्यक्तिकी तपश्चर्या काफी होती है और वह दूसरोंको ढँक लेती है। उससे किसीका कपट या ढोंग छिप सकता है, ऐसा नहीं है, किन्तु उससे आसपासका वातावरण तो बदल जाता है। मेरी अहिंसा तो चारों तरफ चल रही हिंसामें उसी तरह सुशोभित है, जिस तरह वृक्षहीन स्थान-में एरंडका वृक्ष। नहीं तो मैं आपसे आग्रह क्यों करूँ? बहनोंसे आग्रह किसलिए करूँ? यदि मेरी अहिंसा सम्पूर्ण होती तो मेरी उपस्थितिसे ही यहाँ गहने ऐसे उत-रते चले आते जैसे शरीरसे मैल। मैं जिस दिन पूर्ण निर्दोष हो जाऊँगा उस दिन मेरी कलमसे शब्द निकलनेसे पूर्व उनपर अमल हो जायेगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १४-४-१९२९

१. **नवजीवन** पढ़नेवाली एक बहनने गांधीजीको आशीर्वाद दिया था: "**नवजीवन**में तुम्हारा एक वाक्य भी देशको जागृत करनेके लिए पर्याप्त हो!"

१४७. भाषण : टौंगूकी सार्वजनिक सभामें

१९ मार्च, १९२९

उत्तर देते हुए महात्मा गांधीने इस बातपर सन्तोष प्रकट किया कि पैसेकी कमीके कारण अन्य दूसरे काम न कर सकनेके बावजूद नगरपालिका मुफ्त शिक्षा दे रही है। उन्होंने कहा कि स्कूल जाते समय मुख्य बाजारसे गुजरते हुए मैंने देखा कि नालोंमें से दुर्गन्ध आ रही थी। उनकी तत्काल सफाई करनी चाहिए। यदि नगर-पार्षद सच्चे और ईमानदार हैं तो स्वयं उन्हें यह काम करना चाहिए। यहाँ तीन हाई स्कूल हैं, इसलिए लड़कोंको सफाई-कार्यका प्रशिक्षण देना चाहिए। यदि उन्हें इस कामपर लगा दिया जाये तो एक ही दिनमें सारे शहरकी सफाई हो जायेगी।

इसके बाद महात्मा गांधीने बर्मियों तथा भारतीयोंको सलाह दी कि वे मित्रकी तरह रहें तथा भारतीयोंकी ओर संकेत करते हुए कहा कि वे बर्मियोंसे सम्बन्धित मामलोंमें रुचि लें तथा उनके साथ मिलकर काम करें।[1]

इस सभाके साथ ही साथ बर्माके भीतरी प्रदेशकी मेरी दिलचस्प और शिक्षाप्रद यात्रा भी समाप्त होती है। कुछ वर्ष पूर्व जब मेरी बर्मा-यात्रा केवल रंगूनतक तथा एक दिनके लिए मौलमीनतक ही सीमित रही थी तब भी बर्मी लोगोंके साथ मेरे दिन आनन्दपूर्वक बीते थे, लेकिन इस बार मांडलेतक की अपनी यात्राके दौरान मुझे जो अनुभव हुआ उससे मेरे उस आनन्दमें और वृद्धि हो गई है। इन सब सभाओंमें बहुत-से पीत-वस्त्रधारी फुंगियों तथा बहुत सारे बर्मी बहनों और भाइयोंसे मिलकर मुझे काफी खुशी हुई है। चूँकि आगे आनेवाले कई वर्षोंकी दृष्टिसे, हमेशाके लिए न भी सही, इस प्रकारके श्रोताओंके सम्मुख दिया गया आजका भाषण आखिरी भाषण होगा, इसलिए मैं उस चीजके बारेमें कुछ कहना चाहता हूँ जो मुझे और आपको हृदयसे प्यारी है। आपके अभिनन्दनपत्रोंमें, वे चाहे कहीं भी भेंट किये गये हों, मेरे अहिंसा तथा चरखेके सन्देशका जैसा समर्थन और सराहना की गई है वह बिना किसी उद्देश्य और अर्थके तो की नहीं जा सकती। अहिंसाके सन्देशसे मेरा क्या अभिप्राय है, इसकी व्याख्या करते हुए मैं आपसे कुछ शब्द कहूँगा। मेरी दृष्टिमें तो यह विश्वकी सबसे सक्रिय शक्तियोंमें से एक है। यह उस सूर्यके समान है जो बिना नागा रोज आकाशमें उदित होता है। यदि हम इसकी ताकतको समझ लें तो यह करोड़ों सूर्योंसे भी अधिक बढ़कर है। यह जीवन, प्रकाश, शान्ति और सुखका प्रसार करती है। जो देश अहिंसाके सिद्धान्तका समर्थक होनेका दावा करता है, वहाँ हम वह प्रकाश, वह जीवन, वह शान्ति और वह सुख क्यों नहीं देखते? जैसा कि कल मैंने

१. यहाँ तककी रिपोर्ट २२-३-१९२९ के **हिन्दुस्तान टाइम्स**से ली गई है। इसके आगेका अंश महादेव देसाई द्वारा लिखित गांधीजीकी बर्मा-यात्राके विवरणसे लिया गया है।

मांडलेमें कहा था, मुझे लगता है कि भगवान बुद्धका सन्देश बर्मी लोगोंके हृदयको सतही तौर पर ही स्पर्श कर पाया है। मैं एक या दो कसौटियाँ रखना चाहूँगा। अब मैं मानता हूँ कि जहाँ अहिंसाका बोलबाला हो वहाँ ईर्ष्या, अनुचित महत्वाकांक्षा तथा अपराधके लिए कोई स्थान नहीं होना चाहिए। आपके अपराध-सम्बन्धी आँकड़ोंका अध्ययन करनेपर मैंने देखा कि अपराधकी दौड़में आप पीछे नही हैं। थोड़ा-सा बहाना मिलनेपर किसीकी हत्या कर देना बर्मामें मुझे एक आम बात लगती है। इसलिए अपने बायें बैठे मित्रों (फुंगियों)से जो उस धर्मके, जिसे आप लोगोंने बुद्धसे ग्रहण किया है, संरक्षक समझे जाते हैं, मैं एक अपील करूँगा। लंकाकी यात्राके बाद और अब बर्मामें भी काफी घूम लेनेके बाद मैं यह समझता हूँ कि आपके यहाँ की अपेक्षा भारतमें हमने बुद्धकी शिक्षाओंपर ज्यादा अच्छी तरह अमल किया है, हालाँकि उतनी अच्छी तरह तो नहीं जितना कि कर सकते थे। हमारे शास्त्रोंमें लिखा है कि जब कभी अनैतिकता फैलती है, सज्जन पुरुष तथा ऋषि-मुनि तपस्या शुरू कर देते हैं, जिसे दूसरे शब्दोंमें कष्ट-सहन कहते हैं। गौतमको जब अपने चारों ओर अत्याचार, अन्याय और मृत्यु दिखाई दी; जब उन्हें अपने आगे-पीछे तथा हर तरफ अन्धेरा ही अन्धेरा दिखने लगा तब वह वनमें चले गये और वहाँ प्रकाश प्राप्त करनेके लिए उपवास और प्रार्थना करते रहे। जब यदि ऐसे व्यक्तिको भी, जो हम सबसे कहीं ज्यादा महान् था, प्रायश्चित्तकी जरूरत पड़ी तो फिर हम लोगोंके लिए, चाहे हम पीले कपड़े पहनते हों या नहीं, भला यह कितना जरूरी न होगा? मित्रो, यदि आप अहिंसाके उद्देश्यकी सिद्धि-हेतु हतोत्साहित संसारका पथ-प्रदर्शन करनेवाले प्रकाश-स्तंभ बनना चाहते हैं तो इसके लिए आत्म-शुद्धि तथा प्रायश्चित्तके अलावा और कोई चारा नहीं है। यहाँ बहुतसे पुरोहित बैठे हुए हैं। यदि उनमें से कुछ बुद्धके सन्देशको प्रतिपादित करनेका कार्य अपने हाथमें ले लें तो वे मानव-जीवनमें क्रान्ति ला देंगे। आपको चाहिए कि आप रूढ़ और जड़ हो चुकी परम्पराओंपर न चलें बल्कि अपने हृदय टटोलें, अपने धर्मग्रन्थोंमें लिखे शब्दोंके गूढ़ अर्थको पहचानें और अपने आसपासके वातावरणको सजीव बनाएँ। अपने हृदय टटोलनेपर आप यह जान जायेंगे कि केवल पशु-हत्या न करना ही काफी नहीं है बल्कि यह भी जरूरी है कि उसे निरे जीभके स्वादके लिए खायें भी नहीं। तब आप तुरन्त यह भी समझ जायेंगे कि सब प्राणियोंसे प्रेम करनेका सिद्धान्त मुखको धुएँकी चिमनियाँ बनानेके भी विरुद्ध है। मैं जानता हूँ कि बर्मियों जैसे सीधेसादे लोगोंमें भी शराबका काफी प्रचलन बढ़ता जा रहा है, और सो भी ऐसी जलवायुवाले देशमें जहाँ उत्तेजक शराब पीनेकी कोई आवश्यकता नहीं है, और अधिक आत्म-मंथन करनेपर आप तुरन्त देखेंगे कि जिस व्यक्तिके मनमें हर प्राणीके लिए प्रेम हो, उसके मनमें भयकी कोई गुंजाइश ही नहीं है। आपको चाहिए कि स्वयं आप सत्ताधारीका भय छोड़ दें तथा अपने आस-पासके लोगोंको भी किसीसे न डरनेका पाठ पढ़ायें। आशा है कि हृदयसे उद्भूत जो-कुछ शब्द मैंने आपसे नम्रतापूर्वक कहे हैं उन्हें आप उसी रूपमें ग्रहण करेंगे जिस उद्देश्यसे उन्हें कहा गया है। आप लोगोंने सभी सभाओंमें मुझे अहिंसा और सत्यकी

भावनासे ओतप्रोत होनेका श्रेय दिया है, इसीलिए अहिंसा और सत्यका जो अर्थ मैं पिछले लगातार ४० वर्षोंके अनुभवसे जान सका हूँ, उसकी व्याख्या जितने बढ़िया तरीकेसे मैं कर सकता था उस तरह आपके सामने कर दी है। ईश्वरसे प्रार्थना है कि जो शब्द मैंने आपसे कहे हैं उन्हें आप हृदयंगम करें और वे सुफलकारी सिद्ध हों। यदि ऐसा हुआ तो फिर एक समान उद्देश्यके लिए सभी गुटों और दलोंके लोगोंके एकत्र होनेमें कोई कठिनाई नहीं होगी। आपने मेरी बात इतने धैर्य और पूरी खामोशीके साथ सुनी, इसके लिए मैं आप लोगोंका आभारी हूँ।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८-४-१९२९

१४८. भाषण : श्रमिकोंकी सभा, रंगूनमें

२० मार्च, १९२९

बहनो और भाइयो,

अब मुझमें और खड़ा रहनेका सामर्थ्य नहीं है। इस कारण मैं आपको अधिक समय नहीं दे सकता। जब मैं बैठ जाऊँ तो कृपया शान्त रहना न भूलिएगा। मेरे पास समय नहीं है। ८ बजे मुझे एक दूसरा काम करना है और इस समय पौने आठ बजे हैं। मैं चाहता हूँ कि आप सत्कार्य करें और बुराईसे बचें। न तो शराब पीजिए और न जुआ खेलिए। नीतिभ्रष्ट मत बनिए और तभी आप अपना घर प्रेमपूर्वक और शान्तिपूर्वक चला सकते हैं। मैं तमिल लोगोंको जानता हूँ। दक्षिण आफ्रिकामें आप लोगोंकी अच्छाइयों और बुराईसे मैं परिचित हूँ। आपके बहुतसे साथियोंके साथ मेरा सम्पर्क रहा है। मैं चाहता हूँ कि आप बुरी आदतोंको छोड़ दें। मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि अपने बच्चोंकी खातिर आप ऐसा जरूर करिए जिससे वे श्रमिक भाइयोंके प्रति अच्छे और ईमानदार रह सकें। मैं आपसे जो कहना चाहता हूँ वह यह है कि मैं स्वयं एक श्रमिक हूँ। मैं भंगी हूँ और चमार हूँ। मैंने चमारका काम सीखा है और मेरा लड़का भी यही कर रहा है। आपमें और मुझमें बस इतना ही अन्तर है कि आप पेट पालनेके लिए मजबूरन मजदूरी करते हैं और मैं अपनी खुशीसे करता हूँ।

अपने परिवारके प्रति जो आपके कर्त्तव्य हैं उनके अतिरिक्त आपका एक कर्त्तव्य और है। कुछ ऐसे भी लोग हैं जो आपसे भी अधिक गरीब हैं। आपको ऐसे गरीबोंकी सेवा करनी चाहिए। चटगाँवके मजदूर अपनी खुशीसे मेरे पास आये और पाँच मिनटके अन्दर ही एक थैली मुझे भेंट कर दी। आप भी अपने पैसेका कुछ त्याग करेंगे क्या? क्या उन लोगोंके लिए जो आपसे भी अधिक दुखमें पड़े हैं आपका

हृदय नहीं रोता? उनमेंसे बहुत-से ऐसे हैं जो आपके लिए खादी कात रहे हैं और बुन रहे हैं और आपको चाहिए कि आप उसे पहनें। ईश्वर आपको सुखी रखे।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, २२-३-१९२९

१४९. भाषण: विद्यार्थियोंकी सभा, रंगूनमें[1]

२० मार्च, १९२९

पिछली शाम एक भरे हुए हॉलमें मुस्लिम विद्यार्थियोंको उर्दूमें उत्तर देते हुए महात्माजीने कहा कि इस संस्थासे निमन्त्रणपत्र मिलनेपर मुझे बहुत खुशी हुई। जहाँतक सम्भव होता है मैं मुस्लिम संस्थाओंके निमंत्रणपत्र हमेशा स्वीकार करता हूँ और यही कारण है मैं इस्लामिया नेशनल स्कूल और जन्नियातुल इस्लाम गर्ल्स स्कूल देखने भी गया। दुर्भाग्यसे भारतमें राजनीतिक वातावरणमें अविश्वास और सन्देह छा चुका है तथा हिन्दुओं और मुसलमानों, दोनोंमें परस्पर आस्था और विश्वास की भावना लुप्त हो गई है। इसलिए इस अवसरका लाभ उठाकर मैं आपके सामने अपने सिद्धान्तको दोहराना चाहता हूँ। मैं बारम्बार उसे बता चुका हूँ और आप यह समझ लें कि मेरा यह विश्वास यदि सम्भव है, तो आज पहलेसे भी अधिक दृढ़ हो गया है कि हिन्दुओं और मुसलमानोंके ऐच्छिक सहयोग तथा हार्दिक एकताके बिना भारतमें वास्तविक स्वराज्यकी स्थापना नहीं हो सकती और यह एकता तथा सहयोग देर या सबेर पैदा होंगे जरूर। आपने अपने अभिनन्दनपत्रमें जामिया मिलियाका उल्लेख करके ठीक किया है क्योंकि जामिया मिलियासे मुझे बेहद प्यार है। उस कालेजके लिए मुझसे जो-कुछ हो सकता था वह मैंने किया है और भविष्यमें भी करूँगा और मुझे भरोसा है कि ईश्वर जीवनके अन्ततक यही कामना मेरे मनमें बनाये रखेगा। पिछले रोज जुबली हॉलमें मैं विद्यार्थी-आन्दोलन तथा आत्म-शुद्धिके सम्बन्धमें विस्तारसे बोला था और मेरे खयालमें उसे यहाँ दोहराना फिजूल होगा। लेकिन मैं यह चाहता हूँ कि उस अवसरपर मैंने जो-कुछ कहा था उसे महज दिमागमें ही न रखें बल्कि आप उसे हृदयंगम करें और उसपर अमल करें। १९१५ में जब मैं अलीगढ़ कालेज गया था तब मैं वहाँ मुस्लिम मित्रोंके सामने बोला था और मैंने उस कालेजसे यह आशा व्यक्त की थी कि वहाँसे निकलनेवाले पुरुष

१. मुस्लिम विद्यार्थी संघकी ओरसे गांधीजीको एक अभिनन्दनपत्र भेंट किया गया था।

ऐसे होंगे जो भारत और इस्लामके राजनीतिक उत्थानके लिए फकीरी अपनानेको तैयार रहेंगे। अन्तमें मैं समझता हूँ कि मैंने देशकी जो सेवा की है वह एक प्रकारसे धर्मकी सेवा ही है।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, २२-३-१९२९

१५०. 'पुरुषका हाथ'

निम्नलिखित लेखके लेखक, जिन्होंने लेखका शीर्षक 'पुरुषका हाथ' रखा है, लिखते हैं:[1]

इस पत्रकी भूमिकाके रूपमें मैं सिवा इसके और कुछ नहीं जोड़ना चाहता कि पाठकगण मशीन-पूजाके विरुद्ध दिये गये इस साक्ष्यको हृदयमें धार लेंगे जो पश्चिमके ही एक निवासी द्वारा दिया गया है और जिसे मशीन-युगके कड़वे-मीठे, दोनों अनुभव प्राप्त हो चुके हैं। पाठकको यह नहीं सोच लेना चाहिए कि लेखक और मैं सारी मशीनोंकी केवल इस कारण भर्त्सना करते हैं क्योंकि वे मशीन हैं। विरोध तो मशीनों द्वारा मनुष्यके कार्योंका अपहरण करने और फलस्वरूप मनुष्यको अपना दास बनानेका है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-३-१९२९

१५१. अहम्मन्यता और अज्ञान

अहम्मन्यता और अज्ञान प्रायः साथ-साथ रहते हैं। अर्ल विंटरटनमें तो हैं ही। इसका नवीनतम उदाहरण कलकत्तामें विदेशी कपड़ोंकी जो होली[2] कलकत्ता पुलिसके अकारण हस्तक्षेपकी वजहसे विश्वमें मशहूर हो गई है, उससे सम्बन्धित प्रश्नोंका इंग्लैंडके हाउस ऑफ कॉमन्समें दिये गये उनके उत्तरोंमें देखनेको मिलता है। नीचे मैं अर्ल महोदय द्वारा दिये गये उत्तरोंको तथा हरेक उत्तरके सामने उसके सही उत्तरको दे रहा हूँ:

१. लेख तथा पत्र यहाँ नहीं दिये गये हैं। अपने लेखमें लेखकने, जो अमेरिकाके एक चित्रकार थे, यह बतलानेका प्रयत्न किया था कि गांधीजीने जो काम किया वह 'विश्वमें व्याप्त अमानवीय यन्त्रवादी आदर्शके विरुद्ध' एक मानवीय कार्य था।

२. देखिए "भाषण: कलकत्ताकी सार्वजनिक सभामें", ४-३-१९२९।

अर्ल विंटरटनके उत्तर	सही उत्तर
श्री गांधी गिरफ्तार नहीं हुए थे।	मैं गिरफ्तार हुआ था और व्यक्तिगत जमानती बॉन्डपर हस्ताक्षर करनेके बाद रिहा कर दिया गया था।
बंगाल सरकारने सूचित कर दिया था कि विदेशी वस्त्रोंकी होली जलाना गैर-कानूनी है।	बंगाल सरकारने यह कभी सूचित नहीं किया कि विदेशी वस्त्रोंका जलाना गैर-कानूनी है। कलकत्तामें पुलिस कमिश्नरने नोटिस जारी करके बताया था कि कलकत्तामें राजमार्गों अथवा आम रास्तोंपर या उनके निकट विदेशी वस्त्रोंकी होली जलाना पुलिस अधिनियमके अन्तर्गत गैर-कानूनी है।
उनकी (श्री गांधीकी) जिदके परिणाम-स्वरूप संघर्ष हुआ।	संघर्ष मेरी जिदके कारण नहीं हुआ। जो-कुछ हुआ उसका कारण पुलिसकी मनमानी मूर्खता थी, वह भी पुलिसको सुनाये गये मेरे इस अत्यन्त स्पष्ट वक्तव्यके बावजूद कि कानूनको चुनौती देनेका कोई इरादा नही है और यदि वे चाहें तो मुझपर मुकदमा चला सकते हैं और विदेशी कपड़ेको जलानेसे सम्बन्धित मेरे कार्यकी वैधताकी जाँच कर सकते हैं। आगके निकट एकत्रित भीड़को पुलिसने बर्बरतापूर्वक मार-पीटकर तितर-बितर कर दिया और कपड़े जला चुकनेके बाद आगको बुझा दिया।
मुकदमा श्री गांधीके बर्मासे लौट आनेतक इस शर्तपर टाल दिया जाये कि इस दौरान कलकत्तामें इस प्रकारकी कोई होली नहीं जलाई जायेगी।	मैं इस शर्तपर सहमत हुआ था कि कलकत्ताके सार्वजनिक चौराहोंपर इस प्रकारकी होली नहीं जलाई जायेगी। कलकत्तामें निजी स्थानोंपर होली जलाना जारी है।

सार्वजनिक समाचारपत्रोंके आधारपर इन सुधारोंकी पुष्टि की जा सकती है। हम देख सकते हैं कि अर्ल महोदय द्वारा दिये गये गलत बयान महत्त्वपूर्ण हैं और इनसे ऐसा लगता था कि पुलिससे न किसी प्रकारका दोष हुआ था और न कोई भूल।

अर्ल महोदयने अपने उत्तरोंके बाद नीचे लिखा वक्तव्य देकर रही-सही कसर पूरी कर दी :

कोई नई राजनीतिक स्थिति नहीं है। सदन इत्मीनान रखे कि बंगाल सरकार उन लोगोंपर साधारण कानून लागू करेगी जो इसका उल्लंघन करनेकी कोशिश करेंगे, चाहे वे राजनीतिक नेता हों चाहे उनके प्रवंचित पिछलग्गू।

अर्ल महोदय अपने अहंकारके कारण, जिसने कि सत्यको उनकी नजरोंसे ओझल कर दिया है, यह घोषणा कर सकते हैं कि "कोई नई राजनीतिक स्थिति नहीं है।" किन्तु कोई भी व्यक्ति यह देख सकता है कि पुलिसकी मनमानी कार्रवाईसे निःसन्देह भारतमें नई राजनीतिक स्थिति पैदा हो गई है। इस नई स्थितिकी शक्तिको प्रदर्शित करना सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओंके ऊपर निर्भर करेगा। इतना तो तय है कि पुलिस द्वारा कितनी भी लाठियाँ बरसाई जायें तथा सरकारके शस्त्र-बलका सा भी प्रदर्शन किया जाये, श्रद्धानन्द पार्कमें जो होली जलाई गई थी, उसकी आग इस तरह बुझनेवाली नहीं है। यह तो तभी बुझेगी जब विदेशी वस्त्रका पूरी तरह बहिष्कार कर दिया जायेगा।

साधारण कानूनको, राजनीतिक नेताओंके या उनके भोले-भाले अनुयायियोंके विरुद्ध लागू करनेके सम्बन्धमें जो आश्वासन अर्ल महोदय द्वारा सदनको दिया गया वह नेताओं और जनताका अकारण अपमान था। इस अपमानके हम आदी हो चुके हैं। इसका महज एक ही उत्तर है जो स्वाभिमानी व्यक्ति दे सकता है, और वह यह कि लक्ष्य तक पहुँचनेके लिए और तेजीसे कदम उठाये जायें। लेकिन यहाँ यह बतला देना जरूरी है कि बंगाल सरकार महज साधारण कानून लागू नहीं कर रही है, वह तो 'लिंच लॉ[1]' लागू कर रही है। साधारण कानूनका तो अर्थ होता है पुलिस विनियमका उल्लंघन करनेवाले पर महज मुकदमा चलाना। केवल असाधारण परिस्थितियोंमें ही पुलिस अपने हाथमें कानून ले सकती है। इसके बारेमें और फिर कभी लिखूँगा। मैं यह बर्मासे लिख रहा हूँ और हालकी घटनाओंकी मुझे कोई जानकारी नहीं है। ऐसी परिस्थितिमें जबकि कोई कानून द्वारा निर्धारित सीमाओंके भीतर ही कार्य कर रहा हो तब पुलिस कानूनको अपने हाथमें कब ले सकती है—यह एक ऐसा प्रश्न है जिसपर बहुत सावधानीसे विचार करनेकी आवश्यकता है।[2]

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-३-१९२९

१. अंग्रेजीमें 'लिंच लॉ' के मतलब हैं किसी तथाकथित अपराधीको न्याय-विधिकी उपेक्षा करके मनमानी सजा दे डालनेका बर्बर कानून।

२. लेखके अन्तमें यह टिप्पणी दी गई थी: "यह लेख बर्मासे भेजा गया था और लॉर्ड महोदय द्वारा अपने उत्तरोंको सुधार लेनेके पहले ही यहाँ मिल गया था।—सहायक सम्पादक **यंग इंडिया**।"

१५२. महिलाएँ तथा युद्ध

पश्चिममें युद्धके खिलाफ एक प्रभावशाली आन्दोलन सुस्थिर गतिसे प्रगति कर रहा है, और यहाँकी महिलाएँ इस आन्दोलनमें, अगर मुख्य नहीं तो, अत्यन्त महत्त्व-पूर्ण भूमिका अवश्य निभा रही हैं। 'वीमेन्स इन्टरनेशनल लीग फॉर पीस ऐंड फ्रीडम' ने ४ जनवरीको फ्रैंकफर्ट-ऑन-मेनमें हुए अपने सम्मेलनमें निम्नलिखित प्रभावशाली अपील जारी की:[1]

हम बहुत गरीब हैं और किसी प्रकारकी आर्थिक मदद देनेकी स्थितिमें नहीं हैं। इसके अलावा हमारे राष्ट्रको किसी युद्धमें भाग भी नहीं लेना है। जबतक हम स्वाधीन सत्ता नहीं प्राप्त कर लेते तबतक हमें उस युद्धका शिकार तो होना ही पड़ेगा, जो विश्वमें छिड़ सकता है। लेकिन युद्ध जैसे साधनोंके स्थानपर अहिंसात्मक साधनों द्वारा स्वतन्त्रता प्राप्त करके इस आन्दोलनको नैतिक तथा आर्थिक मददसे भी कहीं ज्यादा बड़ी मदद दे सकना हमारे लिए सम्भव है। मैं विश्व-शान्तिके समर्थकोंको यह बताना चाहता हूँ कि १९२० में कांग्रेसने यह घोषणा करके शान्तिकी दिशामें एक जबर्दस्त कदम उठाया था कि वह स्वराज्यको अहिंसात्मक और सत्यके साधनोंके बलपर हासिल करेगी, और मेरा यह निश्चय है कि अगर हम अपने लक्ष्यकी सिद्धिके लिए इन साधनोंका दृढ़तापूर्वक पालन करते रहे तो विश्व-शान्तिकी स्थापनामें यह हमारा सबसे बड़ा योगदान होगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-३-१९२९

१५३. टिप्पणियाँ

कुमारी मेयोसे भेंट

कुमारी मेयोसे अपनी भेंटके बारेमें दीनबन्धु एन्ड्रयूजने निम्नलिखित विवरण भेजा है:[2]

> **'मदर इंडिया' के बारेमें अपने पहले लेखमें मैंने कुमारी मेयोपर वह पुस्तक राजनीतिक उद्देश्यसे लिखनेका आरोप लगाया था इसलिए उनसे व्यक्तिगत भेंट करना मुझे जरूरी लगा; और इसका अवसर भी उपस्थित हो गया।**
>
> **उनके साथ काफी लम्बी बातचीत करनेके बाद, जिसमें ज्यादातर बात उन्होंने ही की, मुझे यह स्पष्ट हो गया कि वह अपनी ही इच्छासे गई थीं**

१. अपील यहाँ नहीं दी गई है। इसमें निरस्त्रीकरण आन्दोलनके लिए नैतिक समर्थन और आर्थिक मददकी माँग की गई थी।

२. केवल कुछ अंश ही दिये गये हैं।

और जहाँतक सचेतन मनकी बात है उनके मनमें कोई राजनीतिक उद्देश्य नहीं था। . . .

लेकिन कुमारी मेयो-जैसी मनोरचनावाले व्यक्तिसे हम कभी अपनी बात समझ सकनेकी आशा नहीं रख सकते। इसलिए जब वह भारतके सम्बन्धमें लिखती हैं तो यह लाजिमी है कि उसमें गलत तस्वीर ही पेश की जाये।

कुमारी मेयोकी बात सुनते और उसका जवाब देते हुए मुझमें यह धारणा क्षण-प्रतिक्षण बढ़ती चली गई। मुझे इस बातका दुःख है कि मैंने अनुदारतावश उनके ऊपर राजनीतिक मंशा रखनेका दोष मढ़ा। इसे अब मैं वापस लेता हूँ, लेकिन उनसे बात करते समय मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि अलगावकी एक लम्बी-चौड़ी खाई बन गई है जो पश्चिमी जीवनके दिखावटीपनमें रँगे हुए लोगों तथा हमारे बीच बढ़ती जा रही है। . . .

दीनबन्धुने मुझे इस टिप्पणीको छापने या न छापनेकी छूट दी है, और यद्यपि कुमारी मेयोके प्रति न्यायकी दृष्टिसे इसे प्रकाशित करना मैंने जरूरी समझा है तथापि इसके साथ ही जनताके प्रति अपने कर्त्तव्यके ख्यालसे मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि दीनबन्धु एन्ड्रयूज द्वारा अपना आरोप वापस लेनेपर भी मैं अपने इस विचारसे डिगा नहीं हूँ कि इस पुस्तकमें राजनीतिक पूर्वग्रहके स्पष्ट प्रमाण मौजूद हैं। इसमें कुछ ऐसी झूठी बातें हैं जिन्हें लेखिका निश्चय ही जानती थीं कि वे झूठ हैं। इसके बाद भी उन्होंने कुछ ऐसी बातें लिखी हैं जो सम्भवतः झूठ हैं। इन स्पष्ट तथ्योंको देखते हुए इनके विपरीत जो भी प्रमाण हों उन्हें असंगत समझा जाना चाहिए।

सरोजिनी देवी और दीनबन्धु

'लिविंग इंडिया' के लेखक श्री सावेल जिमंडने अपने एक पत्रमें भारतके इन दो राजदूतोंके[1] बारेमें लिखा है:[2]

अपने असाधारण आकर्षक व्यक्तित्वके कारण उन्हें (सरोजिनी देवीको) ऐसा सम्मान प्राप्त हुआ है जो उनके जैसे महान् व्यक्तिको मिलना सुनिश्चित होता है। उन लोगोंसे जिन्हें उनसे मिलनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था और जिन्हें उनके प्रेरणादायक शब्दोंको सुननेका मौका मिल चुका है, मेरी जो बातचीत हुई उसके आधारपर मैं कह सकता हूँ कि जहाँ कहीं वह गईं, लोगोंके ऊपर उनका गहरा प्रभाव पड़ा है।

अब एन्ड्रयूजको लीजिए। मैं ऐसी तीन दावतोंमें उपस्थित रहा हूँ जिनमें वे अतिथि थे। उनमें से दो दावतोंमें उन्होंने वाइकोम सत्याग्रहके संघर्षकी कहानी सुनाई और मैंने वर्षोंमें कभी श्रोताओंको किसी वक्तासे इस कदर प्रभावित होते नहीं देखा है। इस नैतिक युद्धकी व्याख्या उन्होंने बहुत ही सहानुभूतिके

१. सरोजिनी नायडू और सी० एफ० एन्ड्रयूज।

२. कुछ अंश ही दिये गये हैं।

साथ की और यह उनके हृदयसे निकल रही थी। इनमें से एक सभामें तो एक वकील साहब मेरे पास आये और बोले: "मैं किसी वक्ताको सुनकर आसानीसे कभी आँसू नहीं बहाता। हालाँकि मैं बहुत रूखा समझा जाता हूँ, लेकिन फिर भी जैसे-जैसे श्री एन्ड्रयूज बोलते थे मेरी आँखोंसे आँसुओंकी धारा बहती जाती थी। . . ."

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-३-१९२९

१५४. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

स्टीमरपर से
२२ मार्च, १९२९

चि० मणिलाल और सुशीला,

इधर मैं तुम्हें पत्र नहीं लिख सका। दो सप्ताह बर्मामें बितानेके बाद आज हम सब स्टीमरसे रवाना हो गये हैं। बर्मामें डाकके निकलनेका समय साधकर पत्र नहीं लिख पाया। आज भी स्टीमर कब छूट जायेगा यह सोचे बिना, यह पत्र लिख रहा हूँ।

रसिकके बारेमें मैंने 'नवजीवन' और 'यंग इंडिया' में जो लिखा है वह तुमने देखा होगा। मेरे विचारमें तो वह मरा नहीं है।

बर्मामें डेढ़ लाखसे ज्यादा रुपये इकट्ठा हुए हैं। डाक्टर मेहता रंगूनमें ही थे। मेरे साथ महादेव, प्यारेलाल, सुब्बैया, गिरधारी और पुरुषोत्तम हैं। कलकत्तामें मुझ पर मुकदमा चल रहा है। उसका परिणाम तो तुम्हें यह पत्र मिलनेसे पहले मालूम हो जायेगा।[1]

देवदास अभी दिल्लीमें ही है। केशु वहाँ सेठ बिड़लाके कारखानेमें काम कर रहा है। नवीन देवदासके पास है।

नये एजेंटके बारेमें जो अनुभव हुए हों, सो लिखना।

नीमू रामदासके पास है। उसका पाँव भारी है।

काशीकी बहन और माणिकलालकी पत्नी मणि का, देहान्त हो गया है।

मेरा स्वास्थ्य ठीक रहता है। अभी तक फिरसे दूधका उपयोग शुरू नहीं करना पड़ा।

आजकल तीसरे दर्जेमें यात्रा करता हूँ। स्टीमरके लिए डेकका टिकट ले लिया है। डेकपर यात्रा जरा कठिन काम है, किन्तु यात्री किसी प्रकार निर्वाह कर लेते हैं और कर्मचारी ठीक हैं इसलिए काम चल जाता है।

बा आश्रममें ही रह गई। रामीको वहाँ बुला लिया है।

कह सकते हैं कि उद्योग-मन्दिर ठीक चल रहा है।

१. देखिए "वह परीक्षात्मक मुकदमा", ४-४-१९२९।

सुशीलाका अध्ययन कैसा चल रहा है?
शान्तिसे मोरवीमें मिल सकूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ४७५४)की फोटो-नकलसे।

१५५. पत्र : वसुमती पण्डितको

२२ मार्च, १९२९

चि० वसुमती,

यह पत्र स्टीमरपर लिख रहा हूँ। तुम्हारा पत्र मिल गया है। मैंने तो आदर्श बताया है। उसमें से प्रकृति जो तुम्हें करने दे वही करना। अलग कोठरीमें रहनेकी अनुमति मैंने तो दे ही दी है। यशोदा देवीकी बातसे आश्चर्य हुआ है। मैं आकर उसके साथ बात तो करूँगा ही। रातको वे सब बातें करते रहते हैं, इसके असह्य होनेमें तो कोई शंका ही नहीं है। इसका उपाय करना। मैं भी लिख रहा हूँ। छगनलाल जोशीकी सहायता लेना। मिलनेपर और बातें करेंगे। सुलोचनाबहन सकुशल होंगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ५०६)की फोटो-नकलसे।
सौजन्य : वसुमती पण्डित

१५६. पत्र : छगनलाल जोशीको

स्टीमरपर से
२३ मार्च, १९२९

चि० छगनलाल,

तुम्हारे चार पत्र एकसाथ मिले। जवाब स्टीमरसे दे रहा हूँ। डेक ठीक सुकानकी साँकलके ऊपर पड़ता है; इसलिए खूब हिल रहा है और इसीलिए ठीक लिखा नहीं जाता। इस समय डेकपर यात्राका पूरा-पूरा अनुभव मिल रहा है; पर उसका वर्णन करनेका मेरे पास अभी समय नहीं है।

खादीके लिए संचालक मण्डल बनाकर अच्छा ही किया है। तुम जागृत हो और खादीमें तुम्हारी श्रद्धा है इसलिए मुझे कोई डर नहीं है। तुम्हें जो ठीक लगे, वही करते रहो। हो सकता है भूल भी हो जाये, मैं उसके लिए मनमें भी दोषी

नहीं मानूँगा। क्या मगनलालसे कभी भूल नहीं होती थी? लक्ष्मीदाससे भी भूलें हुई हैं। मनुष्य तो भूलका पुतला माना जाता है। मनुष्यकी भावना शुद्ध हो, वह पूर्णतया जागरूक हो, पूर्ण उद्यम करे और कुशलता प्राप्त करनेका पूर्ण प्रयत्न करे, इसपर भी यदि भूलें हों तो वे सब क्षन्तव्य और सह्य हैं।

हम जितनी वस्तुएँ बनाते हैं उनकी सूचना अवश्य छपनी चाहिए। ऐसा करना हमारा कर्त्तव्य है।

सुलोचनाबहनकी मुझपर बहुत अच्छी छाप पड़ी है। उन्हें अपने यहाँ बनाये रखनेकी शक्ति हममें होनी चाहिए। वसुमती और सुलोचनाबहन साथ रहेंगी, यह तो अच्छा है। उन्हें कुछ दे सको सो देना और वे जो सेवा कर सकें, वह कराना। जहाँ तक उनकी इच्छाके अनुकूल काम दिया जा सके, देना।

छोटा पिंजाई वर्ग शुरू करनेका विचार अच्छा है। उसके बारेमें 'नवजीवन' में लिखना चाहो तो लिखना। अभी दूसरे प्रान्तोंसे सीखनेवालोंको बुलाना नहीं है। किन्तु यदि कोई योग्य मनुष्य आना चाहे तो उसे ना न करना। गुजराती 'नवजीवन' में इस विषयमें जो लिखो उसका विवरण 'हिन्दी नवजीवन' में न हो इसका ध्यान रखना। इस सम्बन्धमें मैं यहाँसे नहीं लिख रहा हूँ। वहीपर एक टिप्पणी लिखकर अपने हस्ताक्षरसे छाप देना।

रोमाँ रोलाँका पत्र मीराबहनको भेजकर ठीक ही किया है।

मगनलाल-स्मारक आश्रममें ही रहे इस विषयमें शंकरलालसे बात करना। मुझे तो बात पसन्द आई है। शायद कुछ लोग यह मानेंगे कि उसमें हमारे नियम बाधक होते हैं। क्या डा० मेहताका बंगला उसके लिए ठीक है? मैं जब आऊँगा इस विषयमें मुझसे चर्चा करना।

गोसेवा संघका संविधान तो कबका भेज चुका हूँ।

बाल-मन्दिरको चलानेके बारेमें मेरे विचार तुम जानते हो। अब उसमें फेरफार या वृद्धि करनेके बारेमें मेरा कुछ बताना जरूरी नहीं है। मैं वहाँ उपस्थित होता तो दूसरी बात थी। किन्तु मेरी गैरहाजिरीमें सिद्धान्तके अनुकूल सभी फेरफार किये जा सकते हैं।

गंगाबहनका काम अलौकिक है। उनकी भावना और उद्यम तो ईर्ष्या करने लायक हैं। उन्होंने तो आश्रमके लिए संन्यास ही ले लिया है। उनका स्वभाव सहन करना हमें सीख लेना चाहिए।

जहाँ आवश्यक हो, मामाको चेतावनी देते रहना। फिर भी भूल करें तो वह जोखिम उन्हें उठानी होगी। किसी बातकी शंका भी हो तो उनके सामने स्पष्ट रीतिसे रखना।

तोतारामजीकी आँखोंके बारेमें चिन्ता होती है। शायद उनकी खूराकमें फेरफार-की जरूरत है। उन्हें सिर्फ दूध, मुनक्का तथा नींबू लेना चाहिए या उपवास करें और खूब पानी पियें। आँखका पेटके साथ निकट सम्बन्ध है; कौनसे अवयवका नहीं है?

भड़ौंचकी यात्रा मुझे तो असह्य-सी लगती है। शायद इस विषयमें थोड़ा कठोर बननेकी जरूरत है। मैं जानता हूँ कि कठोर बनना भी कठिन है और वह भी तुम्हारे लिए। इसलिए यदि यह बात मुझपर छोड़नी हो तो छोड़ देना।

लक्ष्मीदासके विचार तो मैं जानता हूँ। फिलहाल उन्हें बदलनेका आग्रह नहीं करूँगा। हरएक बातके बारेमें उसके विचार जाननेके बाद जो नया कदम उठाना जरूरी होगा, वह उठायेंगे। उससे उसे दुःख नहीं होगा। उसे बहुत अनुभव है और उसने काफी ठोकरें खाई हैं। वह खादीका पुजारी है और कार्य-कुशल है। इतना जानते हुए उसके विचारोंको पूरा-पूरा महत्त्व देते हुए भी हमें जो-कुछ करना ठीक लगे, वही करें। न करना दोष होगा। जबतक हमें अपने विचारोंके बारेमें शंका हो तबतक उनपर अमल न करके लक्ष्मीदासके अनुभवको मान दें। उसके पत्र वापस भेज रहा हूँ।

अभीतक तो २८की रात आश्रम पहुँच जानेकी आशा है ही। पद्माने[1] दिल्ली छोड़ देनेका निश्चय किया है।

मुसाफिरीमें जो चरखा मेरे पास रहता था, उसे मैंने सौ रुपयेमें बेच दिया है। इसलिए मेरे लिए दूसरा तैयार करा लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५३९४) की फोटो-नकलसे; तथा **बापुना पत्रो-७ : श्री छगनलाल जोशीने** से भी।

१५७. पत्र : रामेश्वरदास पोद्दारको

२३ मार्च, १९२९

भाई रामेश्वरदास,

आज सब पुराने खत देख रहा हुं इसमें तुमारा एक कवर भी मीला। चित्त-शांतिका उपाय एक ही है। रामनाम लेना।

बापूके आशीर्वाद

जी० एन० १९० की फोटो-नकलसे।

१. फोटो-नकलमें स्पष्ट नहीं है, किन्तु पुस्तकमें "काका" है।

१५८. पत्र : मीराबहनको

एस० एस० 'एरोंडा' जहाजसे
२३ मार्च, १९२९

दुबारा नहीं पढ़ा

चि० मीरा,

हम इस समय कलकत्ताके निकट पहुँच रहे हैं। २३ तारीखको रात्रिमें भोजनोपरान्त मैं यह पत्र लिख रहा हूँ। जहाजके डेकपर यात्राका वास्तविक अनुभव मुझे इस बार ही हुआ है। पिछली बार तो लोगोंने मुझे अलग कर दिया था और इस बातपर आग्रह किया था कि मैं द्वितीय श्रेणीके स्नानागारका इस्तेमाल करूँ। अपने अनुभवको मैं 'यंग इंडिया' में प्रकाशित करने जा रहा हूँ।[1]

डा० मेहताका लड़का रतिलाल और चम्पा मेरे साथ हैं। वे द्वितीय श्रेणीके यात्री हैं। वह पागल लड़की जिसके बारेमें मेरा खयाल है कि मैं तुम्हें लिख चुका हूँ, अभी भी मेरे साथ है। उसने मुझे हरा दिया है। वह बहुत उद्धत हो गई है। इसलिए मैं उसे उसके पिताके पास वापस भेज रहा हूँ। वह इस समय बिलकुल विक्षिप्त है और बेचारे सुब्बैयाको उसकी देखभाल करनी पड़ती है।

मेरा काम अभी भी दूधरहित आहारसे चलता जा रहा है।

तुम इन तिथियोंको याद रखना।

कलकत्तासे प्रस्थान	२६ तारीख
दिल्ली पहुँचूंगा	२७ ,,
साबरमती पहुँचूंगा	२८ ,, रात्रि
साबरमतीसे प्रस्थान	२९ ,, ,,
मोरवी पहुँचूंगा	३० ,,
मोरवीसे प्रस्थान	१ अप्रैल
साबरमती पहुँचूंगा	२ ,,
साबरमतीसे प्रस्थान	४ ,,
बम्बई पहुँचूंगा	५ ,,
बम्बईसे प्रस्थान	५ ,, रात्रि
बैजवाड़ा पहुँचूंगा	७ ,,

यह कार्यक्रम इसपर निर्भर करेगा कि कलकत्तामें क्या होता है।[2] बैजवाड़ामें पतेके तौरपर मेरा नाम ही काफी है। बैजवाड़ाके बादका कार्यक्रम बादमें भेजूंगा।

१. देखिए "डेकके मुसाफिर", ११-४-१९२९।

२. कलकत्तामें २६ मार्चको अदालतमें गांधीजीके मुकदमेकी पेशी थी।

बर्मामें चन्दा अच्छा मिला, १½ लाख रुपयेसे अधिक।

कल तुम्हारे बहुत सारे पत्र मिलने चाहिए। आशा है कल राजेन्द्रबाबूसे मुलाकात होगी।

सुरेन्द्रका चर्मालय अच्छा चल रहा है। उसका अनुभव बराबर बढ़ रहा है। उद्योग-मन्दिरमें बालकृष्णके आ जानेसे जोशीको बहुत आराम मिला है। क्या मैं तुम्हें यह बतला चुका हूँ कि छगनलाल गांधी और उसकी पत्नी उद्योग-मन्दिरमें वापस आ गये हैं? कुछ ही दिन हुए उसकी साली चल बसी।

एक सुसंस्कृत और अनुभवी महिला[1] अभी-अभी मन्दिरके लिए रवाना हुई है। वह केवल कुछ दिनके अनुभवके लिए ही वहाँ गई है। मन्दिरमें लगातार मंथन चल रहा है। यह एक अच्छा संकेत है। चि० जोशीको जिस पदपर रखा गया है वह उस पदके योग्य सिद्ध होनेके लिए जबर्दस्त प्रयत्न कर रहा है। दूसरे लोग भी अपनी भरसक पूरा प्रयत्न कर रहे हैं। कुसुम उसी दिन अपनी माँके पास चली गई थी जिस दिन मैं मन्दिरसे बर्माके लिए रवाना हुआ था; अब तो शायद वह वापस आ गई होगी। वसुमती मन्दिरमें ही है। क्या मैंने तुम्हें यह बताया है कि केशूको मैं अपने साथ दिल्ली ले आया था और वहाँ उसे श्री बिड़लाके पास उनके इंजीनियरिंग कारखानेमें अनुभव प्राप्त करनेके लिए छोड़ दिया है?

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० ९४०९) से; तथा सी० डब्ल्यू० ५३५३ से भी।
सौजन्य: मीराबहन

१५९. पर्दा और सूरज

डाक्टर केथलीन ओल्गा बेडनने कश्मीरमें स्त्रियोंके अस्पतालमें वर्षोंसे प्रधान डाक्टरका काम किया है। इसके सिवा, उन्हें डाक्टरीका और भी काफी अनुभव है। कश्मीरमें सदा सर्दी रहनेके कारण वह प्रदेश तन्दुरुस्तीके लिए अच्छा माना जाता है; लेकिन इन डाक्टर महिलाका अनुभूत मत है कि मध्यम वर्गकी स्त्रियोंके लिए वहाँकी जलवायु हानिकारक है। कश्मीरकी जो स्त्रियाँ बुर्का पहननेकी आदी हैं वे केवल बुर्का ही नहीं पहनतीं बल्कि रात दिन घरमें ही घुसी रहती हैं। नतीजा यह होता है कि उनकी हड्डियाँ कमजोर पड़ जाती हैं। खासकर गर्भाशयके सामने और उसके आसपासकी हड्डियाँ इतनी कमजोर और बेडोल हो जाती हैं कि उनके कारण बच्चा पैदा होते समय स्त्रियोंको बहुत ज्यादा तकलीफ उठानी पड़ती है। कई स्त्रियाँ तो चल-फिर भी नहीं सकतीं; उनके पैरोंकी हड्डियाँ तक टेढ़ी हो जाती हैं। इन डाक्टर बहनने अपने अनुभवोंकी एक छोटी-सी पुस्तक लिखी है। उसमें उन्होंने अपनी राय जाहिर करते हुए लिखा है कि कश्मीरकी ज्यादातर स्त्रियोंके इस तरह दु:खी

१. सुलोचनाबहन।

रहनेका एकमात्र और मुख्य कारण यह है कि उन्हें सूर्यकी रोशनी प्राप्त नहीं होती है। वे ऐसे घरोंमें बन्द पड़ी रहती हैं जहाँ उन्हें सूर्यके दर्शन तो दूर, सूर्यकी रोशनी भी नहीं मिलती। कई तरहकी मिसालें और दलीलें देकर इन बहनने यह साबित कर दिया है कि सूर्य-प्रकाशसे वंचित रहनेवाले व्यक्तिका ढाँचा कमजोर हो जाता है, उसकी हड्डियाँ निःसत्व हो जाती हैं, उसकी ठीक बाढ़ नहीं होती और उसका चेहरा फीका और निस्तेज पड़ जाता है, इसके विपरीत जो व्यक्ति खुली हवा, उजाला और त्वचापर सूर्यकी किरणोंका सीधा स्पर्श पाते रहते हैं उनके शरीरका ढाँचा मजबूत बन पाता है, उनकी ठीक बाढ़ हो पाती है; वे निस्तेज नहीं होते और क्षय आदि रोगोंसे बच जाते हैं। उन्होंने अपने लेखमें यह भी सिद्ध किया है कि सूर्यकी किरणों और मनुष्यकी त्वचाके बीच बिल्लौरी काँच-जैसी कोई चीज भी हो तो सूर्यसे सत्ववर्धक पदार्थ पानेके मार्गमें रुकावट होती है। इस कारण उनका कहना है कि हरएक स्त्री-पुरुषको और खासकर सन्तान पानेकी अभिलाषा रखनेवाली माताओंको अपने खुले शरीरपर सूर्यकी किरणोंका सेवन करना चाहिए और सो भी दिनके पहले प्रहरोंमें। इस तरहका सूर्य-स्नान प्रखर धूपमें बैठ कर नहीं लेना चाहिए। यह तो उस समय लिया जाना चाहिए जब सूर्यकी रोशनीमें नंगे बदन बैठनेसे सर्दी न लगे और सूर्यकी गर्मी सुहावनी लगे।

इन बहनका कहना है कि भारतमें बच्चा पैदा होने समय जच्चाको जो कई तरहके कष्ट होते हैं उसकी खास वजह है जच्चाका सूर्यकी रोशनीसे वंचित रहना। भारतके जिन घरोंकी चहारदीवारीमें स्त्रियाँ रात-दिन बन्द रहती हैं उनमें न तो बगीचा होता है और न ऐसा खुला मैदान ही, जहाँ स्त्रियाँ या बालिकाएँ खुले बदन घूम-फिर सकें। उनका मत है कि देशमें पर्देकी प्रथाका जड़मूलसे नाश होनेमें अभी समय लगेगा; इस बीच ऐसी स्थिति लानी चाहिए कि जिससे पर्दानशीन स्त्रियोंको सूर्य-स्नान और व्यायामकी सुविधा मिल सके। अतः वह कहती हैं कि देशके अस्पतालोंमें इस बातका प्रबन्ध होना चाहिए कि वहाँ, पुरुषोंकी आँखोंसे दूर, स्त्रियाँ आजादीसे सूर्यकिरणें पा सकें और खुले बदन घूम-फिर सकें। इसी तरह उनकी रायमें लड़कियोंके मदरसोंमें भी इन बातोंका बन्दोबस्त किया जाना चाहिए। उनके मदरसे खुले मैदानमें बनाये जाने चाहिए, जिसमें आसपासकी छतों परसे किसीकी निगाह उनपर न पड़ सके और न रास्ता चलते लोग ही उन्हें देख सकें। इन बहनका तो यह भी मत है कि गर्मीके दिनोंमें घरोंमें अन्धेरा करनेसे बजाय फायदेके नुकसान ही होता है।

इस छोटी-सी पुस्तकमें से स्त्रियोंके हितार्थ हम एक बात सीख सकते हैं। वह यही कि पर्देकी कुप्रथाका नाश करनेके लिए जितने प्रयत्न किये जा सकें, किये जाने चाहिए। दूसरी बात यह है कि स्त्रियाँ और पुरुष सूरजसे बिलकुल न डरें, उलटे जितने ज्यादा समयतक सम्भव हो, खुले बदन रहें और सूर्य-स्नान करें। सवेरे स्नान करके खुले बदन सूर्यको सौ या अधिक नमस्कार करना, गायत्रीका जप करना, आदि बातें ऐसी हैं, जिनमें आध्यात्मिक भाव और हित तो है ही, साथ ही उनसे

मनुष्यको उतना ही जबर्दस्त भौतिक सुख और फायदा भी पहुँचता है। हमें इस बातका नित्य अनुभव प्राप्त होता है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २४-३-१९२९

१६०. अन्त्यज क्या करें?

एक अन्त्यज सेवक लिखते हैं:[1]

मैं तनिक भी ढीला नहीं पड़ा हूँ। मैं अपनी समझमें जिस तरीकेसे अस्पृश्यताको दूर करनेकी सम्भावना देखता हूँ उस तरीकेसे उसे मिटानेमें कुछ भी कसर उठा नहीं रखता। मैं देख रहा हूँ कि देशमें से अस्पृश्यताकी भावना घोड़ेके वेगसे भागी जा रही है। मैं रात-दिन कामना तो यह करता हूँ कि वह वायुवेगसे चली जाये, और मुझे विश्वास है कि किसी दिन जरूर ही वह वायुवेगसे निकल भागेगी। लेकिन तबतकके लिए धीरजकी जरूरत है। उक्त पत्रमें जिन अन्त्यज भाइयोंके उद्‌गार दिये गये हैं, वे समझमें आते हैं, लेकिन फिर भी उन्हें शान्तिसे काम लेना चाहिए। इस संसारमें सुधारकको सदासे शुरुआतमें अकेला रहना पड़ा है। अगर सुधारकको इच्छा करते ही साथी मिल जायें तो उस सुधारककी कीमत ही न रहे। अस्पृश्यता हमारे देशकी एक बहुत पुरानी बुराई है। और फिर इसे धर्मका चोगा पहना दिया गया है। ऐसी बुराईको मिटानेवालेको तत्काल सहयोगी मिलनेकी आशा नहीं रखनी चाहिए। इस दिशामें आजतक जो काम हो सका है, और जितने साथी इसके लिए मिल सके हैं, सो तो केवल प्रभुकी कृपाका ही फल है। इस अन्त्यज युवकको इतनी बात ध्यानमें रखनी चाहिए कि जो शुचिता और सुधार उसने कष्ट द्वारा प्राप्त किये हैं वे लोगोंके लिए नहीं बल्कि उसके अपने लिए हैं। इस कारण इस शुचितामें से ही उसे शान्ति प्राप्त करनी चाहिए। जो यह मानता है कि लोग उसकी शुचिताकी कद्र करें, वह सचमुच शुद्ध नहीं हुआ है। शुद्धिका आधार तो सदा स्वयं हम हैं। दूसरे, इस युवकको चाहिए कि वह निराश होकर अन्य अन्त्यज भाइयोंको छोड़ न दे। जो लोग सदियोंसे कुचले जाते रहे हैं, उन्हें तेजस्वी बनते, जागृत होते थोड़ा समय जरूर लगेगा। उनके प्रति तो धीरज और प्रेमकी भावना बढ़ानेकी जरूरत है। जो शिक्षा और सुविधाएँ प्रस्तुत अन्त्यजभाईको मिली हैं वही सारे अन्त्यज समाजके लिए भी सम्भव हैं। अतः हमें उक्त अन्त्यज भाईकी उदासीनताको समझ लेना चाहिए। पत्थरके बारेमें इन भाईने एक बात कही है;[2] मैं उन्हें दूसरी बातकी याद

१. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। लेखकने अनुभवमें आये उदाहरण देते हुए यह कहा था कि भारतमें अछूतोद्धारके पर्याप्त प्रचार हो जानेके बावजूद अन्त्यजोंका अपमान होता रहता है और लोगोंको लगता है कि इस विषयमें गांधीजी भी ढीले पड़ गये।

२. "पत्थरपर पानी गिरायें तो भी वह सूखाका सूखा ही रहेगा।"

दिलाना चाहता हूँ; 'रसरी आवत जात तें, सिलपर परत निशान।' इस पंक्तिमें पहली कहावतसे अधिक सत्य है। जब हिमालयका पानी पत्थरोंसे टकराता हुआ नीचे आता है तो वे पत्थर सूखे बने रहना तो दूर, चूर-चूर हो जाते हैं। प्रेमरूपी पानी से तो पाषाण-हृदय भी पिघल जाता है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २४-३-१९२९

१६१. पत्र: छगनलाल जोशीको

[२४ मार्च, १९२९][1]

चि० छगनलाल,

स्टीमरमें लिखे पत्र कल डाकमें छोड़ दिये गये थे, वे मिल गये होंगे। कलकत्ता पहुँचकर तुम्हारी डाक मिल गई।

तुम्हारा वाडजमें आग बुझाने पहुँच जाना ठीक ही था। हम बीमा न करायें, किन्तु आग बुझानेके साधन अवश्य रखें और हर मास उनके उपयोगका अभ्यास भी करें। यह हमारे लिए उपयोगी होगा। मकानमें सामान भी इस तरीकेसे रखें कि आगका भय कम रहे। बच्चोंको भी इस सम्बन्धमें उनकी जिम्मेदारीका भान कराते रहें। नियम तो यह है: हम बाह्य साधनोंसे अपनी जितनी रक्षा करते हैं उतने अंशतक आत्माका हनन होता है और वह निर्बल बनती है।

भैंसका घी रसोई-घरमें इस्तेमाल नहीं किया जाये। इस नियमका पालन सबको करना चाहिए।

खादी प्रतिष्ठानके सदस्योंके सूतके विषयमें बात करूँगा। बंगालसे सीखनेवाले व्यक्तियोंके आनेकी ज्यादा सम्भावना नहीं है।

सन्देहशीलताके बारेमें[2] मुझसे अवकाश मिलनेपर पूछोगे तो मैं अच्छी तरह समझा दूँगा।

बम्बईमें जो खादी पड़ी है वह तथा उसके अतिरिक्त और खादी भी कलकत्ता भेज सकते हो। खादी पुरानी या गली हुई नहीं होनी चाहिए। यहाँके भण्डारमें आजकल खादी कम है। कपड़ेकी होलीके बाद यहाँ खादीकी माँग बहुत बढ़ गई है।

रोहड़ीसे बिचलदास आया है; क्या वह कोई पत्र नहीं लाया? उससे दर्जीका पूरा-पूरा काम लेना और उसे अच्छी तरह सिखा भी देना। यह भी देखना कि वह सभी नियमोंका पालन करता है या नहीं। उसका मलकानीके साथ परिचय कराना। चलालाकी जमीनके बारेमें मुझसे पूछना।

आश्रममें कोई मौत हो जाये तो संयुक्त रसोई घर बन्द न हो; भोजन न बनाना हो तो न बनायें। हमारे पास खानेकी ऐसी चीजें तो हमेशा होती ही हैं

१. गांधीजीने यह पत्र कलकत्ता पहुँचते ही अर्थात् २४ तारीखको लिखा होगा।

२. देखिए "पत्र: छगनलाल जोशीको", ५-३-१९२९।

जिससे जो खाना चाहें उनका काम चल सकता है। इस विषयमें और बात करना चाहो तो करना। मुझे तो भोजन बनानेमें भी कोई दोष नहीं दिखाई देता। मृत्यु कोई शोकका प्रसंग नहीं है। शोक दिखानेके लिए कुछ भी बन्द करनेकी जरूरत नहीं है। किन्तु अग्निदाह आदि क्रियाओंमें शामिल होनेके बाद कई लोग भोजन नहीं कर पाते। कई लोगोंको शोक न करना चाहते हुए भी अपने सम्बन्धके कारण शोक होता है। इसी विचारसे मैंने रसोई बन्द रखनेका सुझाव दिया है। रसोईका काम चलते हुए अगर किसी की मृत्यु हो जाये तो रसोई बन्द न की जाये। सूतक जैसा रिवाज तो अपने यहाँ है ही नही।

दक्षिण-संकट-निवारणका पैसा राजाजीको भेज देना।

मारी गई बकरीके चमड़ेका उपयोग अनिवार्य मानता हूँ। लेकिन यह कमसे कम किया जाना चाहिए। जहाँ गायके चमड़ेसे काम चले वहाँ उसीका उपयोग करना ठीक होगा। हमने अभी तो अपने धर्मकी मर्यादा गाय-भैंस तक ही सीमित रखी है।

मीराबहनका एक पत्र इसके साथ भेज रहा हूँ। उसमें योगेन्द्रसे[1] सम्बन्धित भाग समझने लायक है। इस विषयमें उसने तुम्हें लिखा तो है ही। किन्तु उसके बारेमें तुम और भी जान लो ताकि उसके वहाँ पहुँचनेपर सुविधा रहे। राजेन्द्र बाबू यहीं हैं। उन्होंने उन दम्पतीको भेजनेको कहा है। उन्हें अपने कामके लिए तैयार कर लेना चाहिए। मीराबहनका काम आश्चर्यचकित कर देनेवाला जान पड़ता है। राजेन्द्र बाबू देख आये हैं और उससे बहुत प्रसन्न हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५४९८)की फोटो-नकलसे।

१६२. पत्र : मीराबहनको

२५ मार्च, १९२९

चि० मीरा,

स्टीमरपर तुम्हें लिखा एक पत्र[2] कल मैंने डाकमें डाला था। यहाँ पहुँचने पर तुम्हारे तीन पत्र मुझे मिले। आज तुम्हारा एक पत्र मुझे मिलना चाहिए पर ४ बजे शामतक तो कोई पत्र मिला नहीं। लगता है कि मेरे कल यहाँसे रवाना हो सकनेमें कोई कठिनाई नहीं होगी।

राजेन्द्रबाबू यहीं हैं। तुम जो-कुछ कर रही हो उसके बारेमें उन्होंने मुझे सब कुछ बताया है। दूसरोंसे अब तुम्हारे बारेमें जाननेको कुछ नहीं बचा है।

१. एक आश्रमवासी।

२. अनुमानतः यह पत्र २३ मार्चको कलकत्तामें छोड़ा गया था; देखिए "पत्र : मीराबहनको", २३-३-१९२९।

दिनमें यहाँ काफी तेज गर्मी पड़ती है। सुबहके समय मौसम ठंडा था और कल रातको हवा चलती रही।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० ९४१०)से; तथा सी० डब्ल्यू० ५३५४से भी।

सौजन्य: मीराबहन

१६३. पत्र: आश्रमकी बहनोंको

कलकत्ता

मौनवार, २५ मार्च, १९२९

बहनो,

आज तो तुम्हें याद करनेको ही पत्र लिख रहा हूँ, क्योंकि आशा है कि इस पत्रके साथ-साथ ही वहाँ पहुँच जाऊँगा।

बहनें जो सच्ची (अनुभवकी) शिक्षा उद्योग-मन्दिरमें पा रही हैं, वैसी मैं कहीं नहीं देखता। मगर अभी हमें बहुत-कुछ करना बाकी है। हमारी यह स्थिति हो जानी चाहिए कि हम किसी भी बहनको निर्भयतासे भरती कर सकें।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो–१: आश्रमनी बहेनोने

१६४. पत्र: प्रभावतीको

मौनवार [२५ मार्च, १९२९][1]

चि० प्रभावती,

तुमारा पत्र मीला है। वसुमति बहेन लीखती है तुमको सिरमें दर्द रहता है। पिताजीका पत्र आ गया है। इसके साथ रखता हुं। और तो मीलनेसे।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

राजेन्द्र बाबु यहाँ हैं।

[पुनश्च:]

वसुमतिबहन और कुसुमबहनसे कहो आज मैं नहिं लीखुंगा।

जी० एन० ३३२२ की फोटो-नकलसे।

१. यह पत्र बर्मासे लौटते हुए कलकत्तासे लिखा प्रतीत होता है। इसी तारीखके मीराबहनके नाम लिखे पत्रमें राजेन्द्र बाबूके कलकत्तामें उपस्थित होनेकी चर्चा है।

१६५. अदालतमें बयान[1]

कलकत्ता
२६ मार्च, १९२९

सार्वजनिक जीवनमें मेरा एक महत्त्वपूर्ण दर्जा है, और उस नाते अदालत और जनताके सामने मुझे अपने आचरणके सम्बन्धमें, जो इस अभियोगका मुख्य विषय है, सफाई देनी है। मैं राष्ट्रीय कांग्रेसकी कार्य-समिति द्वारा गठित विदेशी-वस्त्र-बहिष्कार समितिका अध्यक्ष हूँ। कार्य-समिति द्वारा स्वीकृत बहिष्कार योजनामें, जहाँ-कहीं सम्भव हो, विदेशी वस्त्रको जलानेकी बात भी शामिल है। इसीलिए स्वभावतः मैंने श्रद्धानन्द पार्कमें हुई सभामें विदेशी वस्त्र इकट्ठा करने और उसे जलानेकी सलाह दी थी। पुलिस कमिश्नरके यहाँसे जो नोटिस मेरे और मेरे साथियोंके नाम आया था, उससे हमें परेशानी हुई। हम एकदम समझ गये कि इसका उद्देश्य सम्पत्तिको आगके खतरेसे बचाना नहीं था बल्कि इसका मकसद तो प्रदर्शनको रोकना था। किसी निजी स्थानपर होली जलानेकी हमें छूट थी। लेकिन दोनों वकील इस निष्कर्षपर पहुँचे कि पुलिस अधिनियमकी धारा ६६ की जो व्यवस्था की गई है वह यदि बिल्कुल गलत नहीं तो शंकास्पद तो जरूर है। इसलिए हमने पूर्व घोषणाके मुताबिक पार्कमें पूरी तरह प्रदर्शन करनेका निर्णय किया ताकि अदालतके सामने पुलिसकी व्याख्याकी परख हो सके।

यह बहिष्कार सविनय अवज्ञाका भाग नहीं है। केवल अवज्ञा करने और गिरफ्तार होनेके ख्यालसे पुलिसकी नोटिसकी अवहेलना करनेका कोई इरादा नहीं था।

मैंने वस्त्रोंमें आग लगानेसे पहले अंग्रेजीमें बोलकर यह बात स्पष्ट कर दी थी ताकि वहाँ उपस्थित पुलिसवाले उसे सुन और समझ लें। मेरा विश्वास है कि जब मैं बोल रहा था तो पुलिसके डिप्टी कमिश्नर वहाँ मौजूद थे। इसीलिए जब मैंने वस्त्र जलानेकी क्रियाके करीब-करीब समाप्त होनेके बाद, पुलिसको आगके चारों तरफ खड़े लोगोंपर टूट पड़ते, अपनी बड़ी-बड़ी लाठियोंसे उन्हें पीटते और उन्हें वहाँसे भगाते तथा अंगारोंको बुझाते देखा तो मुझे आश्चर्य हुआ और बहुत पीड़ा हुई। आगेके दर्दनाक दृश्यका वर्णन मैं यहाँ नहीं करूँगा लेकिन यदि अदालत चाहेगी तो मैं इससे सम्बन्धित प्रश्नोंके उत्तर शौकसे दूँगा।

मैं साहसपूर्वक यह कह सकता हूँ कि कानूनको अपने हाथमें लेकर, खासकर मेरे उस स्पष्ट वक्तव्यके बावजूद जिसका कि मैं ऊपर उल्लेख कर चुका हूँ, पुलिसने गलती की है और उन्हें मेरे स्थानपर और मुझे उनके स्थानपर होना चाहिए। उन्हें अभियुक्त होना चाहिए और मेरे साथी और मुझे फरियादी। इसके पहले भी कई अवसरोंपर मुझे संसारके दूसरे देशोंमें कानूनोंकी पुलिस द्वारा की गई व्याख्यासे

१. यह बयान कलकत्ताके चीफ प्रेसीडेंसी मजिस्ट्रेटकी अदालतमें दिया गया था।

मतभेद जाहिर करने तथा उनके नोटिसोंके विरुद्ध आचरण करनेके लिए विवश होना पड़ा था। लेकिन वहाँ उन्होंने विवादग्रस्त मुद्दोंको पहले अदालतमें परखनेकी सभ्य पद्धतिको स्वीकार किया है। वहाँकी पुलिस किसी मामलेपर कोई पूर्व निर्णय नहीं लेती और कानूनको स्वयं तोड़नेकी जोखिम नहीं उठाती, और इससे भी बड़ी चीज यह है कि वहाँ पुलिस सार्वजनिक शान्ति भंग होनेका मौका अपनी तरफसे नहीं उठने देती।

मेरा दृढ़ मत है कि भीड़ पूरी तरह शान्त और अनुशासित थी। जो मामूली-सी आग वहाँ जलाई गई थी उससे आस-पासकी सम्पत्तिको कोई खतरा नहीं था। जलानेके लिए जो जगह चुनी गई थी वह सुरक्षित तथा अलग थी। इसलिए पुलिसका यह कर्त्तव्य था कि शान्तिपूर्ण तथा संयमित रूपसे हो रहे इस प्रदर्शनमें वह हस्तक्षेप न करती। मेरी रायमें तो पुलिसका यह हस्तक्षेप निहायत अविचारपूर्ण, मनमाना और अनावश्यक था। आगको बुझाकर उन्होंने अदालतके कामको अपने हाथमें ले लिया और ऐसा मान लिया कि अदालतका भी यही फैसला होगा। इन मामलोंके मुतल्लिक जो बयान मैंने दिया है यदि आप उसपर विश्वास करें तो, महानुभाव, मैं आपसे निवेदन करूँगा कि मुझे तथा मेरे साथियोंको रिहा कर दें, और पुलिसके दुर्व्यवहार पर आप जैसी कार्रवाई करना चाहें वैसी करें। और जिस धाराके अन्तर्गत मुझपर अभियोग लगाया गया है, अदालत उसकी जो भी व्याख्या करना चाहे, करे; मैं रिहाईकी माँग फिर भी करता हूँ।

दो शब्द धाराकी व्याख्याके बारेमें। जिन वकील दोस्तोंका उल्लेख श्रद्धानन्द पार्कमें हुए मेरे भाषणमें हुआ है उनमें से एक श्रीयुत सेनगुप्त भी थे। उनसे हुई एक दूसरी बहससे मेरे दिमागमें यह बात साफ हो गई कि इस धाराके अनुसार श्रद्धानन्द पार्क न तो कोई गली है और न कोई आम रास्ता ही। चूँकि विदेशी वस्त्र-बहिष्कार-समितिका इरादा, जहाँतक सम्भव है, इस आन्दोलनके सिलसिलेमें सविनय अवज्ञा करनेका नहीं है, अतः इस धाराकी प्रामाणिक व्याख्या हो जाना जरूरी है। लेकिन मैं किसी कानूनी मसलेपर बहस नहीं करूँगा।

मेरे जिन तीन साथियोंको मुख्य अपराधी कहा गया है, उनके बारेमें मैं यह कहना चाहूँगा कि वस्त्र जलानेकी क्रिया तो वास्तवमें मैंने प्रारम्भ की थी। इसलिए अगर हममें से किसीने कोई अपराध किया है तो उसमें मुख्य अपराधी मैं ही हूँ, बाकी ये तीन तो गौण अपराधी हैं।[१]

[अंग्रेजीसे]
फॉरवर्ड, २७-३-१९२९

१. फैसला दूसरे दिनके लिए रोक लिया गया था। अदालतके फैसलेके सम्बन्धमें गांधीजीके विचारों के लिए देखिए "वह परीक्षात्मक मुकदमा", ४-४-१९२९।

१६६. तार: मीराबहनको

कलकत्ता
२६ मार्च, १९२९

मीराबहन
खादी भण्डार
मधुबनी

फैसला रोक लिया गया है। दिल्ली एक्सप्रेससे आज रवाना हो रहा हूँ।

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० ९४११)से; तथा सी० डब्ल्यू० ५३५५ से भी।
सौजन्य: मीराबहन

१६७. बर्मा प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके मामलोंपर रिपोर्ट

[२७ मार्च, १९२९से पूर्व][1]

गोपनीय

[कांग्रेसकी] कार्य-समितिके आदेशपर मैंने बर्मा प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके मामलोंकी जाँच की।

कमेटी तो केवल नाममात्रकी है। श्रीयुत वी० मदनजीत ही इसके कर्त्ताधर्त्ता हैं। वही कमेटी हैं और वही सब कुछ हैं। नामके लिए भी कोई कार्यकारिणी समिति नहीं है। शायद ही कोई बैठक कभी होती हो। बर्मा प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीसे सम्बद्ध स्वयंसेवकोंका कोई संगठन नहीं है। मुझे बताया गया कि वकील लोग कांग्रेसमें शामिल होनेसे डरते हैं। कांग्रेसका गाँवोंसे कोई सम्पर्क नहीं है। पुराने सदस्योंकी सूची देखे बिना हर साल नये सदस्य बना लिये जाते हैं। श्री मदनजीत दौड़-धूप करके सदस्योंके नाम और चवन्नीका सदस्यता-शुल्क एकत्र करते हैं। जो-कुछ चन्दा इकट्ठा होता है उससे मुश्किलसे उनका यात्रा-व्यय पूरा होता है। श्रीयुत मदनजीत अवैतनिक कार्यकर्त्ता हैं और उनमें बड़ीसे-बड़ी कुर्बानी करनेकी क्षमता है। जनतामें उनका प्रभाव भी है। लेकिन यह प्रभाव नकारात्मक ढंगका है। लोगोंसे वह कोई रचनात्मक काम नहीं करा सकते। मुझे कोई लिखित संविधान नहीं मिला। यदि खादी भण्डारके पतेको ही इसका कार्यालय न मानें तो समझिए कि कमेटीका अपना कोई कार्यालय भी नहीं है। कार्यालयमें कोई कर्मचारी नहीं है। नाममात्रके करीब ८०० सदस्य हैं जिनमें

१. यह रिपोर्ट अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीको २७ मार्च, १९२९ को प्राप्त हुई थी।

बर्मी लोगोंकी संख्या १० से अधिक नहीं है। अधिकांश सदस्य रंगूनके भारतीय हैं। अक्याबमें एक जिला कांग्रेस कमेटी है, लेकिन वह भी बस नाममात्र की। १९२१ में यहाँ कांग्रेसके ५,६०० सदस्य और १४ ताल्लुका कमेटियाँ थीं।

कमेटीका जो भी हिसाब-किताब है उसका खाता एक योग्य गुजराती व्यापारी द्वारा बहुत अच्छे ढंगसे रखा जाता है। हिसाब-किताबके लेखेकी एक नकल इसमें संलग्न कर रहा हूँ। पुस्तकें देखीं। वे अच्छी और साफ-सुथरी स्थितिमें हैं।

यहाँ एक खादी भण्डार है जो अखिल भारतीय चरखा संघके तत्वावधानमें बिना घाटा उठाये चल रहा है। कांग्रेसके नामपर इस भण्डारके रूपमें ही एकमात्र ठोस और रचनात्मक कार्य हो रहा है। लेकिन इस भण्डारमें भी बहुतसे लोग सक्रिय दिलचस्पी ले रहे हों, ऐसी बात नहीं है। इसके चलनेका यह भी कारण है कि इसके पीछे व्यावसायिक योग्यता काम कर रही है। रंगूनमें और अन्य स्थानोंपर ऐसे भारतीयोंकी संख्या काफी है जो केवल खादी ही पहनते हैं।

बर्माके पृथक्करणकी माँगसे बर्मी तथा भारतीयोंके बीच एक खाई पैदा हो गई है। बर्मी लोगोंका यहाँ एक ऐसा दल है जो पृथक्करणके विरुद्ध है। अपने लोगोंको मैंने सलाह दी है कि वे किसी पक्षकी तरफदारी न करें और इस प्रश्नको बर्मी लोगोंको ही तय करने दें। एक विचित्र किन्तु सत्य बात यह है कि एक भारतीय दलने साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्वकी माँग की है। भारतीय लोग बिना बाकायदा विवाह किये बर्मी औरतोंके साथ जो अवैध सम्बन्ध रखते हैं, उसके प्रति बर्मी लोगोंमें बढ़ती हुई राष्ट्रीय चेतनाके साथ ही रोषभाव भी पैदा हो रहा है।

मो० क० गांधी

संलग्न १

[अंग्रेजीसे]

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी फाइल नं० १५१, १९२९।
सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

१६८. अनुकूल व्यापारका थोथा तर्क

कुछ दिन हुए हंगरीके एक प्रोफेसरने मुझसे पूछा कि जब भारतको आयात-निर्यातके व्यापारमें हर साल लाभ हो रहा है तब मेरा यह कहना कहाँतक ठीक है कि भारतकी गरीबी दिनोंदिन बढ़ रही है। अध्यापक महाशय भारतके शहरोंसे आगे नहीं बढ़े थे और उनकी जानकारीका आधार स्वभावतः सरकारी आँकड़े थे। इन आँकड़ोंसे प्राप्त उनकी जानकारीको ऊपर-ऊपरसे समृद्धिशाली दिखाई देनेवाले उन-उन शहरोंकी छापने और भी दृढ़ कर दिया, जहाँ वह गये थे।

इन विद्वान अध्यापकने जो प्रामाणिक शंका उठाई है, वैसी शंका सम्भवतः उन कई लोगोंके दिलमें भी है, जो रूढ़ अर्थशास्त्रीय सिद्धान्तोंका उतने ही रूढ़ ढंगसे

अध्ययन करते हैं। इस कारण यहाँ अध्यापक महाशयको मैंने जो उत्तर दिया था उसका सारांश दे देना अनुचित नहीं होगा। मैंने दलील देते हुए कहा कि मान लीजिए कि कोई देश ऐसे लोगोंकी मिल्कियत है जो गुलामोंके मालिक हैं और जो अपने गुलामोंसे बेगार करवाकर अनाज और दुनियाके काम आनेवाली दूसरी कई चीजें पैदा करवाते हैं, जो गुलामोंको इतनी थोड़ी मजदूरी देते हैं कि वे बेचारे मुश्किलसे अपना पेट भर पाते हैं, लेकिन खुद उन गुलामों द्वारा पैदा की गई चीजोंसे देश-विदेशमें व्यापार करके खूब मुनाफा कमाते हैं; और यह भी मान लीजिए कि इस देशसे अनाज तथा अन्य वस्तुओंका निर्यात देशमें आनेवाली वस्तुओंके आयातसे ज्यादा है। ऐसी हालतमें ऊपर-ऊपरसे तो व्यापार देशके अनुकूल जान पड़ेगा, लेकिन यह अनुकूल व्यापार उस देशकी जनताकी आम खुशहालीका माप नहीं होगा। उस देशमें आयात-निर्यात व्यापारकी अनुकूल स्थितिके साथ-साथ ही आम जनताकी बढ़ती हुई गरीबी और दर्दनाक पामाली भी रह सकती है। मैंने अध्यापक महाशयसे कहा कि ऊपर हमने जिस गुलाम देशकी कल्पना की है, भारतकी हालत उससे भिन्न नहीं है। इस कारण मैंने उनसे कहा कि इस लगातार अनुकूल व्यापारके भेदको समझनेके लिए भारतके कुछ आम गाँवोंकी अवस्थाका अध्ययन करना और गाँव-वालोंकी हालतको अपनी आँखों देखना जरूरी है। मैंने फिर कहा कि भारतका अनुकूल व्यापार देहातके गरीबोंके किस कामका है, जबकि वे उससे कोई लाभ नहीं उठा पाते और जैसा कि मैं कहता हूँ, उन्नति करनेके बदले उनकी दशा दिन-दिन गिरती जाती है।

स्वर्गीय दादाभाई नौरोजीने प्रामाणिक आँकड़ों द्वारा यह बखूबी साबित कर दिखाया था कि किस तरह विदेशी शासकोंके कारण भारतका धन हर साल विदेशोंमें बहा चला जा रहा है। ये विदेशी शासक नाम-मात्रके लिए अपने भौतिक शरीरसे भारतमें भले ही रहते हों, इनका सच्चा राजसी जीवन तो भारतके बाहर विदेशोंमें बड़े मौजसे बीतता रहता है। भारतका अनुकूल व्यापार और कुछ नहीं, एक लगातार खून चूसनेवाली प्रक्रिया है, और एक ऐसे शासनको कायम रखनेका साधन है, जो जनताकी सहानुभूतिसे वंचित है और इस कारण गैरमामूली तौरपर धन-व्यय करके जबर्दस्ती इस देशमें बना हुआ है और इस धनका अधिकांश भाग भारतसे बाहर चला जाता है।

स्वयं अर्थशास्त्रियोंने सच ही कहा है कि आँकड़ोंके द्वारा दो परस्पर-विरोधी बातें सही सिद्ध की जा सकती हैं। इस कारण जो बुद्धिमान पुरुष किन्हीं पूर्व-निश्चित प्रमेयोंको केवल किसी तरह सिद्ध कर देनेकी दृष्टि नहीं रखता है, बल्कि जिसका एकमात्र ध्येय सत्यकी खोज करना है, उसका कर्त्तव्य है कि वह आँकड़ोंकी तहमें जाये और उनसे सिद्ध होनेवाली बातोंकी स्वतन्त्र रूपसे जाँच करे। बेशक किसी नदीकी औसत गहराई जान लेना अच्छा है, लेकिन जिस आदमीको तैरना नहीं मालूम है, वह अगर यह पता पाकर कि नदीकी औसत गहराई उसकी ऊँचाईसे कम है, उसे पैदल पार करने चले तो बहुत सम्भव है कि उसे जल-समाधि लेनी पड़े। इसी तरह जो आदमी कोरे दिखावटी आँकड़ोंपर विश्वास करता है, लोगोंको

उसकी बुद्धिमत्तापर विश्वास नहीं रह जाता। जिस तरह नदीको पैदल पार करने-वाले आदमीको उसकी कमसे-कम और ज्यादासे-ज्यादा गहराई अच्छी तरह जान लेनी चाहिए उसी तरह आँकड़ोंका सही उपयोग करनेकी इच्छा रखनेवाले आदमीको आँकड़ोंके इस सार-संक्षेपकी तहमें जो वास्तविक आँकड़े होते हैं उन्हें और उनके उपयोगके तरीकेको जान लेना चाहिए। लेकिन सामान्य आदमीके पास न तो इतना समय होता है और न इतनी योग्यता ही होती है कि वह आँकड़ोंके गोरखधन्धेका अध्ययन कर सके। उसके लिए तो देशकी हालतको जाँचनेकी सच्ची कसौटी गाँवोंका आँखों-देखा अनुभव है। इस तरहके अनुभवको आँकड़ोंकी कोई भी करामात झूठा नहीं साबित कर सकती।

भारतका आँखों-देखा तजुर्बा रखनेवालोंने, जिनमें ऐसे कई अंग्रेज अधिकारी भी शामिल हैं, जिनका स्वार्थ ही इस बातमें है कि वे कोई विरोधी बात ढूँढ़ पायें तो अच्छा, इस बातको कबूल किया है कि ब्रिटिश शासनमें भारत दिन-दिन गरीब होता जा रहा है। आप देहातमें जाकर जरा देखिए, गाँववालोंके चेहरोंपर निराशा और दुखकी छाया ही आपको नजर आयेगी। वे और उनके मवेशी, दोनों पूरा भोजन नहीं पाते। मृत्युसंख्या सपाटेसे बढ़ रही है। उनके शरीरमें रोगसे लड़नेकी ताकत नहीं है। यह तो जानी हुई बात है कि मलेरिया कोई खतरनाक बीमारी नहीं है, बशर्ते कि मरीजको कुनैन और शुद्ध दूध पीनेको मिलता रहे। फिर भी हर साल हजारों देहाती मलेरियाकी भेंट होते रहते हैं। कुनैन उनको भले ही दे दी जाती हो, लेकिन बीमारीकी कमजोरीसे छुटकारा पानेके लिए उन्हें दूध कहीं भी नहीं मिल सकता। उनकी कर्जदारी बराबर बढ़ रही है। यह कहना सत्यका जघन्य अपलाप है कि ब्याह वगैरामें फिजूलखर्चीके कारण वे कर्जदार होते जा रहे हैं। ये कोई नये खर्च नहीं हैं जो कोई आज नये सिरेसे उनकी गरीबीको बढ़ा रहे हों। धन जमा करने और चाँदीके सिक्कोंके गहने बना लेनेकी कथाएँ तो कोरी कल्पनाएँ हैं। करोड़ों लोगोंके पास सोने-चाँदीके गहने न कभी थे और न आज ही हैं। स्त्रियाँ लकड़ी और यहाँ-तक कि पत्थरकी भोंडी चूड़ियाँ और अँगूठियाँ पहनती हैं और इन्हें पहननेसे उनको स्वच्छंद अंग-संचालनमें बाधा पड़ती है, यही नहीं उनकी तन्दुरुस्तीको भी नुकसान पहुँचता है। गाँववालोंमें निरक्षरता तो बढ़ती ही जा रही है। ये सब चीजें देशकी बढ़ती हुई समृद्धिके लक्षण कदापि नहीं हैं।

आइए, अब हम देशके आयात-निर्यातकी हालतपर थोड़ा विचार करें। १९२७-२८में देशसे ३०९ करोड़ रुपयोंका माल बाहर भेजा गया और २३१ करोड़से अधिक रुपयेका माल विदेशोंसे देशमें आया। जो चीजें बाहर भेजी गईं उनमें कच्चा माल, जैसे, कपास, अनाज, तिल, मूंगफली वगैरा, कच्चा और कमाया हुआ चमड़ा, कच्ची और पक्की धातुएँ आदि मुख्य हैं। अगर हमारे पास इस कच्चे मालका उपयोग करनेके लिए आवश्यक हुनर होता और लगानेको पर्याप्त पूँजी होती अथवा हमारी अपनी एक सरकार होती जो इस तरहका हुनर और पूँजी हमारे लिए उपलब्ध करना अपना कर्त्तव्य समझती, तो यह कच्चा माल भारतमें ही रहता। भारतके निर्यातकी

कथा हमारी बेबसीकी कथा है और वह बतलाती है कि सरकार लोकहितके प्रति कैसी घोर उदासीनता बरतती है।

जो चीजें विदेशोंसे भारतमें आती हैं उनमें ६५ करोड़का सूती कपड़ा, ४ करोड़का नकली रेशम, १८ करोड़की शक्कर, २३ करोड़की धातु और धातुसे निर्मित वस्तुएँ, ५ करोड़की मोटर गाड़ियाँ, ३ करोड़की शराब और लगभग २ करोड़की सिगरेटें शामिल हैं। इन वस्तुओंका आयात भी हमारी बेबसीकी उसी दर्दनाक कथाको दोहराता है। स्वस्थ रूपसे प्रगति कर रहे किसी देशमें ऐसी ही वस्तुओंका आयात होना चाहिए जिसकी देशको अपनी अभिवृद्धिके लिए आवश्यकता हो। विदेशोंसे आने-वाली जिन चीजोंके नाम मैं ऊपर गिना गया हूँ वे हमारी उन्नतिके लिए आवश्यक नहीं हैं। शराब और सिगरेट हमारे पतनमें सहायक होती हैं। सूती कपड़ेका सबसे अधिक आयात किया जाता है और इससे हमारी शर्म और हमारी फटेहालीका पर्दा-फाश हो जाता है। इनसे हम समझ सकते हैं कि जब भारतमें लोग घर-घर अपने हाथों कपड़ा बनाया करते थे उस समय हमारे देहातोंकी दशा कितनी अच्छी रही होगी। किसानोंको उनके बेकारीके दिनोंमें काम देनेवाला सिवा चरखेके और कौन-सा साधन है? ये देहाती लोग कमजोर विदेशी कपड़ेपर जो करोड़ों रुपये खर्च करते हैं उसको देशसे बाहर जानेसे रोकनेका और कौन-सा जरिया है? जो लोग इस तरह अपना धन विदेशोंमें भेज रहे हैं, उनका दिन-दिन गरीब और असहाय होना एक निश्चित बात है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २८-३-१९२९

१६९. विधान-सभाओंमें खादी

विदेशी-वस्त्र-बहिष्कार-योजनाकी उस धाराको प्रभावशाली बनानेके लिए, जो विधानसभाओं द्वारा खादीकी रक्षा करने तथा उसे लोकप्रिय बनानेकी अपेक्षा रखती है, श्री राजगोपालाचारी किसी युक्तिकी खोजमें लगे हुए हैं और इस काममें वे अपनी कानूनी प्रवीणताकी मदद ले रहे हैं। इसीलिए उन्होंने विधेयकका नीचे लिखा मसविदा कांग्रेसाध्यक्षको विचारणार्थ भेजा है:

चूँकि 'खद्दर' और 'खादी' का तात्पर्य उस सूती कपड़ेसे है जो भारतमें हाथसे काता और बुना जाता है;

और चूँकि इन कथित नामोंको बनाये रखना वांछनीय है; इसलिए निम्नलिखित कानून बनाया जाता है:

१. इस अधिनियमको भारतीय खद्दर (नाम सुरक्षा) अधिनियम १९२९ कहा जाये।

२. इस अधिनियमके अनुसार 'खद्दर' और 'खादी' का अर्थ सूतके उस कपड़ेसे है जो भारतमें हाथसे काता और बुना गया हो।

३. 'खद्दर' और 'खादी' नामसे अंग्रेजी अथवा भारतकी किसी भी भाषामें चूँकि भारतमें हाथसे कते-बुने सूती कपड़ेका ही अर्थ निकलता है लिए मरकेंडाइज मार्क्स ऐक्ट ४, १८८९ के अन्तर्गत इसे इसकी व्यापारिक परिभाषा माना जाये।

उद्देश्य और हेतुकी व्याख्या

हालके वर्षोंमें, इस देशके कृषक वर्गमें, जिन्हें एक अतिरिक्त आयके साधनकी जरूरत पड़ती है, कपासके हाथसे कातने और बुननेका एक पूरक धन्धेके रूपमें पुनः प्रचलन करने तथा उसे लोकप्रिय बनानेमें जो सफलता मिली है उसके पीछे उन सम्पन्न वर्गोंकी देशभक्तिकी भावनाका बहुत-कुछ हाथ रहा है जो त्यागकी भावनासे खादी खरीद रहे हैं। भारत तथा विदेशोंमें नकली खद्दरके उत्पादक इस स्थितिका फायदा उठाने लगे हैं और जो उद्योग आसानीसे राष्ट्रीय उद्योगका स्थान ले सकता है उस उद्योगको हानि पहुँचानेके लिए ग्राहकोंको खुले आम गुमराह कर रहे हैं। इसलिए मरकेंडाइज मार्क्स ऐक्ट, १८८९ के अन्तर्गत 'खद्दर' और 'खादी' नामोंको, जिसका तात्पर्य केवल हाथ-कते और हाथ-बुने कपड़ेसे ही है, जो सुरक्षा प्रदान की गई है, यह विधेयक उसकी सीमाको बढ़ाना चाहता है। मात्र इसी कपड़ेके लिए इन नामोंके एकान्तिक प्रयोगसे दूसरे किसी प्रकारके कपड़ेके प्रामाणिक उत्पादकों या वितरकों पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ सकता।

विधेयक छोटा और प्रभावशाली है। अगर यह कानून बन गया तो यह उन अदेशभक्त-मिल मालिकों और विदेशियोंपर, जो मोटा कपड़ा तैयार करते हैं और इनपर खादी अथवा खद्दरका लेबिल लगाकर बेचते हैं, तुरन्त रोक लगा सकता है। ऐसे लोगोंने नकली खादीका व्यापार किस कदर बढ़ा-चढ़ा लिया है, मैं इस सम्बन्धमें आँकड़े पहले ही दे चुका हूँ।[1] असम परिषदने एक ऐसा प्रस्ताव पहले ही सफलतापूर्वक पास कर रखा है जिसमें स्थानीय सरकारसे कहा गया है कि वह कपड़ेकी अपनी सारी खरीदारी असली खादीमें ही करे। आशा है सदस्यगण उस समयतक आरामसे नहीं बैठेंगे जबतक प्रस्ताव व्यवहारमें नहीं आ जायेगा। और वे इस बातका भी ध्यान रखेंगे कि सरकार मिलकी खादी न खरीदने पाये। अगर विधानसभाओंके सदस्यगण रचनात्मक कार्योंके प्रति सतर्क रहें तो वे विदेशी वस्त्र तथा शराब और अफीम दोनोंके बहिष्कारका हरदम खयाल रख सकते हैं। अगर सभी सदस्य पूर्ण नशाबन्दी चाहें और इसके लिए प्रयत्न करें तो कोई कारण नहीं है कि हम इस काममें सफल न हों।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २८-३-१९२९

१. देखिए खण्ड ३६, पृष्ठ २०२-३ और ३२१-२२।

१७०. पत्र : बहरामजी खम्भाताको

२९ मार्च, १९२९

भाईश्री खम्भाता,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। मैं वहाँ पाँच तारीखको पहुँच तो जाऊँगा; फिर भी कोई दूसरा दिन तय करना ही ठीक लगता है। मुझसे बम्बईमें मिल लें।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ६५९३)की फोटो-नकलसे।

१७१. भेंट : एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिसे[1]

अहमदाबाद
२९ मार्च, १९२९

श्री गांधीने कहा कि मुझे इस बातका यकीन नहीं होता कि जुर्मानेकी रकम बंगाल कांग्रेस कमेटीने अथवा उसकी तरफसे किसी औरने भरी थी। इस संसारमें मैं किसी भी वस्तुको अपना नहीं कह सकता जिसके बूतेपर मैं जुर्माना भर सकूँ। जुर्मानोंके बारेमें मेरा अपना निश्चित मत है। श्री सेनगुप्त इस मतसे परिचित थे, इसीलिए जिस किसीने भी जुर्माना भरा है वह मेरा मित्र तो हो ही नहीं सकता।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ३०-३-१९२९

१७२. भाषण : काठियावाड़ राजनीतिक परिषद, मोरवीमें[2]

३० मार्च, १९२९

मेरे बिना इस परिषदका आयोजन न हो सकनेकी बात ठीक हो तो यह मेरे लिए शर्मकी बात है। मैं आऊँ ही, शासकोंके लिए ऐसी इच्छा करना शर्मकी बात नहीं है; किन्तु यह उनके अविश्वासकी सूचक है, और संचालकोंके लिए तो यह अवश्य ही लज्जाजनक है। काठियावाड़का निवासी होनेके नाते मैं सहज ही चला आऊँ, इतना

१. एसोसिएटेड प्रेसके एक प्रतिनिधिने गांधीजीसे यह पूछा था कि क्या यह बात सच है कि चीफ प्रेसिडेंसी मजिस्ट्रेटने उनपर जो जुर्माना किया था उसकी रकम बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी ओरसे एक वकील साहबने भरी थी।

२. पाँचवी काठियावाड़ परिषद वल्लभभाई पटेलकी अध्यक्षतामें मोरवीमें हुई थी।

तो समझा जा सकता है। किन्तु मेरा आना अनिवार्य मानकर मेरी सुविधा देखकर परिषदका आयोजन किया जाये तो यह मेरे लिए लज्जाकी बात है। इस स्थितिको अब समाप्त कर ही दिया जाना चाहिए। यदि मेरी उपस्थितिके बिना परिषदका काम न चल सकता हो तो परिषदका आयोजन ही न किया जाये, यही बेहतर है। यह मैं कह रहा हूँ; किन्तु दुःखकी बात तो यह है कि यहाँ उपस्थित युवक इस प्रकार नहीं सोचते। उनसे तो मैंने कहा है कि आप इस प्रवृत्तिकी निन्दाका प्रस्ताव रखें; मैं उसका अनुमोदन करूँगा। देवचन्द भाईकी भी बुरी आदत छुड़ानेका प्रयत्न मैं कर ही रहा हूँ। उन्हें भी मैं यही समझाना चाहता हूँ कि वे यह सोचकर लाचारीका अनुभव न करें कि मेरे बिना परिषद हो ही नहीं सकती। यदि हम जनताको संगठित करना चाहते हों तो चाहे कितना ही प्रतिष्ठित, कितना ही बुद्धिमान व्यक्ति क्यों न हो, उसके बिना काम चलानेकी शक्ति हममें होनी चाहिए। आत्मा तो एक है, यह सभी मानते हैं। और सभीकी आत्मामें ऐसी गुप्त शक्ति है कि उसे जब चाहे जागृत किया जा सकता है और हम शक्तिशाली बन सकते हैं। यह समझ लेनेपर ही हम प्रजासत्तात्मक राज्य प्राप्त कर सकते हैं। किचनर चल बसा तो राजकाज बन्द नहीं हुआ, राज्य समाप्त नहीं हो गया, युद्ध बन्द नहीं हुआ — उसका स्थान दूसरे व्यक्तिने ले लिया। ग्लैड्सटन गया तो भी राजकाज बन्द नहीं हुआ। प्रजामें यह विश्वास रहना चाहिए कि हम चाहे जितने ग्लैड्सटन पैदा कर सकते हैं।

इस प्रस्तावसे[1] हमें लाभ ही हुआ है। इसमें हमारी मानहानि नहीं अपितु मानवृद्धि ही है। उससे हमने रियासतोंकी भी सेवा की है। यदि हम उन लोगोंमें हों जो यह सोचते हैं कि रियासतोंको सुधारा ही नहीं जा सकता और उनका नाश ही होना चाहिए तो फिर यह सेवा हमें अवश्य ही अखरेगी। प्रतिष्ठित और बुद्धिमान व्यक्ति गम्भीर अध्ययनके बाद इसी निष्कर्षपर पहुँचे हैं कि ये रियासतें और उनके शासक इतने खोखले हो चुके हैं कि उनमें कुछ सुधार किया ही नहीं जा सकता। ऐसा विचार रखनेवाले लोगोंकी संख्या बढ़ती जा रही है। इसके कारण हैं। कुछ कारण तो शासकोंने जानबूझकर दिये हैं और कुछ कारण आजकल फैली हुई अराजकताके कारण खड़े हुए हैं। मुझे भी यह अराजकता प्रिय है। किन्तु मेरी अराजकतामें एक प्रकारकी व्यवस्था है। मेरी अशान्तिमें भी एक प्रकारकी शान्ति है। किन्तु मेरे मित्र इस बातको स्वीकार नहीं करते। अराजकतापूर्ण और विप्लवी विचार रखनेपर भी मैं यह मानता हूँ कि इन रियासतोंमें सुधारकी गुंजाइश है। यदि मैं यह मानने लगूँ कि इन रियासतोंमें सुधार नहीं हो सकता और इनको नष्ट ही कर देना चाहिए तो मैं परिषदमें भाग लेना बन्द कर दूँ, क्योंकि मैं जिसके नष्ट होनेकी इच्छा करूँ उसकी विनती क्यों करूँ? मैं उनको लाठी दिखाकर नहीं, बल्कि उनसे प्रेमपूर्वक काम लेना चाहता हूँ। मैं तो ब्रिटिश सरकारके साथ भी प्रेमपूर्वक ही पेश आना चाहता हूँ; किन्तु उसे प्रेमसे नष्ट कर देना चाहता हूँ। बहुत-से अंग्रेज मेरे मित्र हैं; मैं उन्हें नहीं, उनकी शासन-व्यवस्थाको समाप्त कर देना चाहता हूँ। इस

१. कुछ शर्तोंपर परिषदका आयोजन करनेके सम्बन्धमें पोरबन्दरमें पास किया गया प्रस्ताव।

लिए मैं उनकी विनती नहीं करता। रियासतोंकी बात दूसरी है। यह स्थिति देखते हुए जो मर्यादा हमने बाँधी है उसमें कोई मानहानि नहीं है। वह एक सुन्दर वृक्ष है, उसमें से सुन्दर फल निकलेगा। इससे राजाओंकी सेवा होगी क्योंकि वे तो पराधीन हैं। उनकी पराधीन अवस्थाको पहचानकर हम अपनी मर्यादाकी रक्षा करें और उन्हें कठिन स्थितिमें न डालें। हमारे आजके प्रस्ताव दोनों दलोंके हितमें होने चाहिए। यदि ये प्रस्ताव राजा-प्रजा दोनोंके हितकी रक्षा करनेवाले हों तभी हम शान्तिसे अपना काम कर सकेंगे। यदि आपका मन पोरबन्दरके बाद डाँवाडोल हो गया हो तो मैं यही कहूँगा कि आप शान्त रहें। मर्यादाका पालन करते हुए आप खूब काम कर सकेंगे, ऐसा मैं मानता हूँ। . . .

आप लोगोंने कितना काता है, चरखेका कितना प्रचार किया है, कितनी खादी उपयोगमें लाये हैं? अमरेलीकी खादीके लिए मुझे कलकत्तेमें ग्राहक ढूँढ़ने पड़े, यह कितनी शर्मकी बात है। आप २५ लाख किसानोंके प्रतिनिधि बनकर यहाँ आये हैं, तो प्रतिनिधिके रूपमें आपने क्या किया है? यदि आप सचमुच कुछ करना चाहते हैं तो रचनात्मक काम करके ही आपका छुटकारा हो सकता है, नहीं तो आपको परिषदका रूप ही बदलना पड़ेगा। राजनीतिक परिषद जैसी परिषदमें तो हमें सत्यसे काम लेना चाहिए; इसके बदले हम कृत्रिमता और असत्यसे काम लें तो कितने खेदकी बात है। अन्त्यजोंके लिए मूलचन्दको सिर्फ मुट्ठीभर पैसा चाहिए। यदि उसके लिए भी उसे मेरे पास आना पड़ेगा तो कितने शर्मकी बात है। दो-चार हजार रुपये कोई बड़ी रकम नहीं है। मैं कुछ कहूँ या सरदार माँग करें तो यह सारी रकम आ जानी चाहिए। यह काम करनेके लिए चरित्रवान नवयुवकोंकी आवश्यकता है। यदि आप यह और दूसरे ऐसे काम करेंगे तो आपकी राजनैतिक शक्ति बढ़ेगी। हम राजनीतिक काम न करें तो परिषदको राजनीतिक परिषदके नामसे क्यों बुलायें? चरखा परिषद या लोक-सुधार परिषद आदि कोई गुणवाचक नामसे बुलायें। आप कोई भी काम क्यों न करें, २५ लाख किसानोंपर तो आपको विजय प्राप्त करनी ही है; यह उन्हें प्रेमकी डोरीसे बाँध कर ही सम्भव है। वल्लभभाईने क्या किया? ब्रिटिश सल्तनतके समूचे इतिहासमें जब उसका जोर सबसे ज्यादा था तब एक व्यक्तिने सरकारसे एक करोड़ व्यक्ति अपने हाथमें कर लिये और उनकी व्यवस्था भी खुद सँभाली। बारडोलीमें गवर्नरने जोरदार धमकियाँ दीं, परन्तु वल्लभ-भाई अपनी बात पूरी करके ही रहे। वल्लभभाई भी तो हमारे-तुम्हारे जैसा मनुष्य ही है; लेकिन वह किसान बना, बारडोलीके सुख-दुखका भागी बना, उनके इशारों पर चला। इसलिए किसान आज वल्लभभाईके इशारेपर चलते हैं। फिर भी हम यह न भूलें कि बारडोलीकी चाभी चरखा ही था। सभी प्रकारकी राजनैतिक चर्चा कर ली और काम हो गया, ऐसा नहीं है। आप यह मिथ्या विचार भी मनसे निकाल दें कि राजाओंके दोषोंका बखान करनेसे काम चल जायेगा। दक्षिण आफ्रिकामें मैंने राजनीतिकी बात नहीं की। चम्पारनमें कांग्रेसका नाम भी नहीं लिया; किन्तु आज वहाँ कांग्रेसका सबसे ज्यादा काम हो रहा है। हम बड़े-बड़े भाषणोंसे शासकोंको डराना चाहें तो बात नहीं बनेगी। उससे तो बच्चोंका मनोरंजन भी नहीं होगा। अव्यवस्था

फैलानेसे राज्य हाथमें आता हो तो दूसरी बात है। अगर आप यह मानते हों कि हमारे उत्तेजित होनेसे अव्यवस्थासे डरकर कोई मूर्खतामें पड़कर हमारी माँगें स्वीकार कर लेगा तो मेरा भाषण देना बेकार है और आपका उसे सुन लेना बेकार है।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, ७-४-१९२९

१७३. सन्देश: काठियावाड़ व्यापारिक परिषदको

[३१ मार्च, १९२९से पूर्व][1]

काठियावाड़के व्यापारियोंको यह बात प्रमाणित कर दिखानी चाहिए कि व्यापारमें भी परोपकारकी गुंजाइश होती है।

[अंग्रेजीसे]
ट्रिब्यून, ६-४-१९२९

१७४. अहिंसा बनाम दया

नीचे लिखा पत्र बहुत समय पहलेसे मेरे पास पड़ा था। सोचा था कि फुरसत मिलनेपर इसका उत्तर दूँगा। आज जहाजपर थोड़ी फुरसत मिली है। पत्र संक्षेपमें इस तरह है:[2]

पत्र-लेखककी भावना सुन्दर है, लेकिन मेरे विचारमें उनका अहिंसाका अनुभव और अध्ययन कम है। अहिंसा और दयामें उतना ही भेद है जितना सोनेमें और सोनेके गहनोंमें, बीजमें और वृक्षमें। जहाँ दया नहीं वहाँ अहिंसा नहीं। दया अहिंसाकी कसौटी है, अहिंसाका मूर्त रूप है। अत: यों कह सकते हैं कि जिसमें जितनी दया है, उसमें उतनी ही अहिंसा है। मुझपर आक्रमण करनेवालेको मैं न मारूँ, उसमें अहिंसा हो भी सकती है और नहीं भी। डर कर उसे अगर न मारूँ तो वह अहिंसा नहीं हो सकती। दयाभावसे ज्ञानपूर्वक न मारनेमें ही अहिंसा है।

जो बात शुद्ध अर्थशास्त्रके विरुद्ध हो वह अहिंसा नहीं हो सकती। जिसमें परमार्थ है वही अर्थशास्त्र शुद्ध है। अहिंसाका व्यापार घाटेका व्यापार नहीं होता। अहिंसाके दोनों पलड़ोंका जमाखर्च शून्य होता है। यानी उसके दोनों पलड़े समान होते हैं। जो जीनेके लिए खाता है, सेवा करनेके लिए जीता है, केवल जीवन-निर्वाह

१. परिषद ३१ मार्चको मोरवीमें हुई थी।

२. यहाँ नहीं दिया गया है। लेखकने कहा था कि गांधीजी कई बार 'दया'के बदले 'अहिंसा' और 'अहिंसा'के बदले 'दया' शब्दका प्रयोग करते हैं। उससे गलतफहमी हो सकती है। उसने यह भी कहा था कि गांधीजी अहिंसाको अर्थ-शास्त्रसे जोड़ते हैं, जब कि ये दोनों तत्त्व परस्पर विरोधी हैं।

करनेके लिए कमाता है वह काम करते हुए भी अकर्मा है; वह हिंसा करते हुए भी अहिंसक है। क्रियाहीन अहिंसा आकाश-कुसुमके समान असम्भव है। क्रिया हाथ-पैरसे ही होती हो, सो नहीं। मन हाथ-पैरकी अपेक्षा बहुत ज्यादा काम करता है। विचार-मात्र क्रिया है। विचार-रहित अहिंसा हो ही नहीं सकती। शरीरधारी मनुष्यके लिए ही अहिंसा धर्मकी कल्पना [आदर्शके रूपमें] की गई है।

सर्वभक्षी जब दयासे प्रेरित हो कर भक्ष्य पदार्थोंकी मर्यादा निश्चित करता है तब उस हदतक वह अहिंसा धर्मका पालन करता है। इसके विपरीत, जो रूढ़िके कारण मांसादि नहीं खाता, वह अच्छा तो करता है, लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि उसमें अहिंसाका भाव है ही। जहाँ अहिंसा है वहाँ ज्ञानपूर्वक दया होनी ही चाहिए।

अगर अहिंसा धर्म सच्चा धर्म हो तो हर तरह व्यवहारमें उसके आचरणका आग्रह करना भूल नहीं, बल्कि कर्त्तव्य है। व्यवहार और धर्मके बीच विरोध नहीं होना चाहिए। धर्म-विरोधी व्यवहार छोड़ देने योग्य है। सब समय, सब जगह, सम्पूर्ण अहिंसा सम्भव नहीं है, यों कह कर अहिंसाको एक ओर रख देना हिंसा है, मोह है और अज्ञान है। सच्चा पुरुषार्थ तो इसमें है कि हम अपने आचरणमें सदा अहिंसाका पालन करें। इस तरह आचरण करनेवाला मनुष्य अन्तमें परमपद प्राप्त करेगा, क्योंकि वह सम्पूर्णतया अहिंसाका पालन करने योग्य बनेगा। और यों तो देहधारीके लिए सम्पूर्ण अहिंसा बीज-रूप ही रहेगी। देहधारणके मूलमें हिंसा है, इसी कारण देहधारीके पालने योग्य धर्मका सूचक शब्द निषेधवाचक अहिंसाके रूपमें प्रकट हुआ है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ३१-३-१९२९

१७५. बर्मावासी गुजरातियोंके नाम

जहाँ जाता हूँ वहाँ ऐसा प्रेम मिलता है कि उसका वर्णन नहीं कर सकता। लोगोंकी अपार भीड़, वैसा ही उत्साह, वैसी ही पैसोंकी वर्षा! इसलिए ईश्वरपर मेरा विश्वास बढ़ता जाये, चरखेकी शक्ति मुझे ज्यादा दिखाई दे, तो इसमें विचित्र क्या है? यदि लोगोंके मनमें मेरी किसी दूसरी शक्तिके प्रति श्रद्धा हो तो वे मुझे चरखेके लिए धन क्यों दें? यदि मैं लोगोंसे चरखा बनानेके बजाय छुरी बनानेके लिए भिक्षा माँगूँ तो वे मुझे कभी दान न दें।

मेरा बर्मामें एक मास रहनेका विचार था। किन्तु इस वर्ष मैं इस तरह व्यस्त रहा हूँ कि जितना समय दिया उससे ज्यादा देना सम्भव ही नहीं था। इसलिए कई स्थानोंपर नहीं जा सका, हजारों लोगोंको निराश करना पड़ा और उसी अनुपातसे दरिद्रनारायणकी झोली खाली रही।

इस लेखमें सभी संस्मरण लिखनेकी मेरी इच्छा नहीं है। वह तो महादेव और प्यारेलाल लिखेंगे। मैं तो उस बातका उल्लेख-भर करना चाहता हूँ, जिसके सम्बन्धमें लिखना मुझे जरूरी लगता है।

मुझे ब्रह्मदेशके लोग भोले, सादे और विश्वासी जान पड़े। वहाँकी स्त्रियोंको जितनी स्वतन्त्रता प्राप्त है उतनी संसारकी अन्य स्त्रियोंको नही है। इस स्वतन्त्रताके परिणामस्वरूप उनमें कुछ बुराई आई हो, ऐसा मुझे नहीं लगा। उनकी आँखोंमें शील है। हो सकता है उनके कई रिवाज हमें अच्छे न लगें। उनकी विवाह-पद्धति कुछ ढीली लग सकती है, किन्तु इसमें स्त्रियोंका कोई दोष नही है। उन्हें अपवित्रता छू तक नहीं गई है।

मुझे लगता है कि भारतीय इन भोली स्त्रियोंके भोलेपनका लाभ उठाते हैं। बर्माके शिक्षित लोगोंको वहाँकी स्त्रियोंके प्रति भारतीयोंका व्यवहार अच्छा नहीं लगता। यदि भारतीय बर्माकी किसी लड़कीके साथ विधिवत विवाह करें तो उन्हें इसमें कोई दुःख नहीं होता, किन्तु मुझे ऐसा लगता है कि जो लोग उन्हें विषयभोगका साधन-मात्र मानते हैं उनसे वे लोग चिढ़ते हैं। भारतीयोंको इस सम्बन्धमें अपना व्यवहार पूरी तरह शुद्ध रखनेकी आवश्यकता है। मैं जानता हूँ कि जो ऐसा व्यवहार करनेके दोषी हैं, 'नवजीवन' उनतक नहीं पहुँचता। यदि पहुँच भी जाये तो वे उसे पढ़ते नहीं हैं। और कभी संयोगवश उसे पढ़ लेते हों तो क्रुद्ध होकर या बिना सोचे फेंक देते होंगे। किन्तु जो यह लेख पढ़ें, जिन्हें उपर्युक्त अनुभव हो, यदि वे ऐसे मलिन सम्बन्ध रखनेवाले किसी भारतीयको जानते हों तो उसे जागृत करनेका प्रयत्न करेंगे, इसी आशासे मैंने यह चेतावनी दी है।

दूसरे प्रान्तोंकी तरह बर्मामें भी कांग्रेसका काम नाममात्रका ही चल रहा है। वहाँ उसके सदस्योंकी नियमित सूची नहीं है। जो नाम दर्ज हैं उन्हें भाई मदनजीतने ही दर्ज किया था। नाम दर्ज करानेवालेका कांग्रेससे सम्बन्ध चार आने देनेके साथ ही शुरू होता है और उसके साथ ही समाप्त हो जाता है। कांग्रेसके नामसे अखिल भारतीय चरखा संघकी मारफत चलाये जा रहे खादी भण्डारके अलावा और कोई रचनात्मक काम नहीं किया जा रहा है। इस तरह जो लोग नाम-मात्रके सदस्य हैं वे भी केवल भारतीय ही हैं, यह कहें तो वह गलत नहीं होगा।

यह दयनीय स्थिति बदली जानी चाहिए। यह अकेले मदनजीत या किसी दूसरे एक व्यक्तिका काम नहीं है। उसमें सबको रुचि लेनी चाहिए। कोई ऐसा रचनात्मक काम खोज लेना चाहिए जो बर्मामें चल सके।

कांग्रेसके कामके बारेमें एक अच्छी बात भी दिखाई दी। उसका हिसाब-किताब ठीक है और उसकी जाँच होती है। भण्डारके पास धन तो कम ही है किन्तु जितना है उसका पाई-पाईका हिसाब उसके पास है।

मैं खादी भण्डार देखने तो नहीं जा सका, किन्तु कह सकता हूँ कि यदि उसे पूरा-पूरा प्रोत्साहन मिले तो उसके विकासकी काफी गुंजाइश है। यदि कोई खादी-प्रेमी बर्मामें जाकर बसना चाहे और उसे खादीके निर्माणकी जानकारी हो तो वहाँ उसका काम चल सकता है। बर्माके दूसरे गाँवोंके व्यापारी अपने यहाँ थोड़ी-बहुत

खादी रखें और खादी-प्रेमियोंकी आवश्यकता पूरी करें तो खादीका ज्यादा प्रचार हो सकता है और खादी पहननेवालोंको भी सुविधा हो।

बर्माके निवासियोंमें चरखेके प्रचारकी बहुत गुंजाइश है। वे गरीब हैं। उन्हें चरखा चलाना आता है। उनके पास समय है। पहले वे काता करते थे, बुनाईका काम तो आज भी ठीक-ठीक चलता है। मुख्य रूपसे यह प्रचारका काम बर्मी लोगोंके लिए ही करना चाहिए। किन्तु कोई परोपकारी चरखा-विशेषज्ञ इस कामको हाथमें लेकर शुरू कर सकता है और अच्छे बर्मी लोगोंमें उसके प्रति रुचि उत्पन्न कर सकता है। उनकी ओरसे दिये गये सभी मानपत्रोंमें चरखेकी प्रशंसा तो होती ही थी।

अब दो शब्द विशेषरूपसे गुजरातियोंके लिए कहूँगा। उनकी आर्थिक स्थिति अच्छी है, इसलिए यदि वे निश्चय कर लें तो बहुत-से परोपकारी काम कर सकते हैं। इस लेखमें तो मैं गुजराती राष्ट्रीय पाठशालाकी बात करना चाहता हूँ। उसके पास कीमती इमारत है। उसमें काफी विद्यार्थी हैं। इसमें कोई शंका नहीं कि उन्हें एक सुन्दर विद्यालयकी जरूरत है। वर्तमान शालामें भी सुधारकी काफी गुंजाइश है। उसकी इमारत छोटी है और वह ऐसे स्थानपर स्थित है जहाँ शालाके बालकों और बालिकाओंके लिए खेलनेको स्थान नहीं है। अगर उन्हें कारीगरी सिखानी हो तो वहाँ कोई छोटा-सा कारखाना खोलने लायक स्थान नहीं है। जितने विद्यार्थी हैं या जितनी कक्षाएँ हैं, उनके लिए भी शायद जगह काफी नहीं है। एक ऐसे बड़े मकानकी जरूरत है जिसके साथ जमीन हो। यह स्थान नगरसे दूर हो और बालक तथा बालिकाएँ वहाँ चलकर न जा सकें तो उन्हें ले जानेके लिए सवारीका प्रबन्ध कर दिया जाये। ऐसा प्रबन्ध कई स्थानोंपर किया जाता है। और कक्षाएँ भी अधिक होनी चाहिए। विनय मन्दिरके बराबर पहुँचना रंगूनके गुजरातियोंकी सामर्थ्यसे बाहर नहीं है।

यह शाला नाम-भरके लिए राष्ट्रीय शाला जान पड़ती है। उसे राष्ट्रीयताके रंगमें पूरी तरह रँग डालना चाहिए। लोगोंको दृढ़ प्रतिज्ञा लेनी चाहिए और न्यास-पत्रमें यह धारा रहनी चाहिए कि शाला कभी सरकारकी मदद या उसके नामका आश्रय नहीं लेगी। उसमें देशी हिसाब, हिन्दी, संगीत और व्यापार सम्बन्धी शिक्षा अनिवार्य होनी चाहिए। उसे अपना पाठ्यक्रम गुजरात विद्यापीठसे लेना चाहिए और विद्यापीठको चाहिए कि वह उसका निरीक्षण किया करे। यदि इस शालाकी नींव सुदृढ़ कर दी जाये और अच्छी व्यवस्था कर दी जाये तथा उसकी सम्पत्ति और उसकी मिल्कियतका स्पष्टीकरण कर दिया जाये तो श्री छोटूभाई गलियाराने ५०,००० रुपये तुरन्त देनेकी प्रतिज्ञाका पत्र मुझे दिया है। उनकी इच्छा शालाके साथ किसी न किसी रूपमें अपना नाम जोड़नेकी है। पर ऐसा करना-न-करना उन्होंने शालाकी समिति अथवा गुजराती लोगोंपर छोड़ दिया है।

मुझे पूरी आशा है कि रंगूनके गुजराती इस दानको हाथसे जाने नहीं देंगे। शालाकी ठीक व्यवस्था कर दी जानी चाहिए। मैंने तो सलाह दी है कि एक खास रकम, जैसे कमसे-कम १००० रुपये दान देनेवाले दस या पन्द्रह संरक्षकोंका एक

व्यवस्थापक-मण्डल नियुक्त करके उसमें से एक छोटा मण्डल नियुक्त किया जाये। प्रबन्ध-सम्बन्धी सभी अधिकार व्यवस्थापकको सौंप दिये जायें। वर्तमान सम्पत्ति उसी मण्डलके कब्जेमें रहे और वही इसका प्रबन्ध करे। ऐसा हो जाये और शालाको राष्ट्रीय बनाये रखनेकी प्रतिज्ञा ले ली जाये तो श्री गलियाराके दानका तुरन्त लाभ मिल सकता है। यह सब कर देना चाहिए।

मेरी यह भी सलाह है कि हम श्री गलियाराकी पाठशालाके साथ अपना नाम जोड़नेकी इच्छाको भी मान लें। ऐसी शर्तोंके साथ कई दान दिये जाते हैं और स्वीकार किये जाते हैं। श्री गलियाराने शर्त नहीं रखी, सिर्फ अपनी इच्छा व्यक्त की है। इसे स्वीकार करनेमें ही गुजरातियोंकी प्रतिष्ठा है। नाम शालाके साथ भी जोड़ा जा सकता है या जो मकान खरीदें उसके साथ जोड़ सकते हैं।

यों इतने दानसे भी शालाकी नींवको सुदृढ़ नहीं किया जा सकता। उसके लिए कमसे-कम ५०,००० रुपये और इकट्ठे करने चाहिए। इस धनको एकत्र करनेमें दो घंटे भी न लगने चाहिए। रंगूनमें इतनी अच्छी आर्थिक स्थितिवाले गुजराती हैं जिनसे पैसा एकत्र करनेमें तनिक भी कठिनाई नहीं होनी चाहिए।

यह काम तुरन्त हो जाना चाहिए। यदि यह काम इस लेखके प्रकाशित होनेसे पूर्व न हो गया हो तो इसे पढ़कर जिन्होंने इसे निबटानेकी प्रतिज्ञा की हो, वे तुरन्त ऐसा करेंगे, मैं यही आशा करता हूँ। इसमें कोई भी कठिनाई नहीं है। इस शालाको आदर्श शाला बनाना बर्माके, और मुख्यतः रंगूनके, गुजरातियोंका कर्त्तव्य है। उनकी आर्थिक स्थिति अच्छी है, वे बुद्धिमान हैं। आवश्यकता केवल इस कामको करनेकी तीव्र इच्छा-भरकी है।

कोई यह कहे कि अभी-अभी तो गांधी डेढ़ लाखसे ज्यादा रुपया ले गया है। अब यह पैसा कहाँसे आये? ऐसा सोचना ओछी बात सोचना कहलायेगा। दरिद्र-नारायणके लिए गुजरातियोंने काफी धन दिया है। पर उसमें दूसरोंने भी योग दिया है। उसके साथ शालाके कोषमें धन देनेमें तो गुजरातियोंका अपना स्वार्थ है। उसके द्वारा वे अपने बालकोंके प्रति अपने कर्त्तव्यका पालन करेंगे। दोनों बातें भिन्न हैं। एकमें ९५ प्रतिशत परमार्थ है, दूसरेमें ९५ प्रतिशत स्वार्थ।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ३१-३-१९२९

१७६. तार : माधवजी ठक्करको

मोरवी
[१ अप्रैल, १९२९][1]

इम्पॉर्टेन्स
कलकत्ता

उपवास कैसा चल रहा है, इसकी खबर तारसे साबरमतीके पतेपर दीजिए।

गांधी

अंग्रेजी (जी० एन० ६७६३)की फोटो-नकलसे।

१७७. पत्र : मीराबहनको

मोरवी
१ अप्रैल, १९२९

चि० मीरा,

तुम्हारे सभी पत्र मुझे मिल गये हैं। ताज्जुब है कि २७ तारीखतक भी तुम्हें मेरा तार[2] नहीं मिला। इसे मुकदमेके तुरन्त बाद ही भेज दिया गया था। मोरवीके बारेमें तो तुम जानती ही हो। हर एक जानना चाहता था कि तुम कहाँ हो।

हम यहाँसे आज रात रवाना होंगे।

तुम्हें यह जानकर दुख होगा कि छगनलाल गांधीकी यह पोल खुली है कि वह पिछले कई वर्षोंसे छोटी-छोटी चोरियोंका बाकायदा धन्धा चला रहा था। अपना भेद खुलनेपर उसने जालसाजो करके अपना अपराध छिपानेकी कोशिश की थी। लेकिन अब उसने अपना अपराध स्वीकार कर लिया है। लेकिन अपराध स्वीकार करनेसे वह बदल नहीं गया है। आश्रममें उसको अपना जीवन भार हो गया था और दो दिन हुए वह राजकोट चला गया। वहाँ भी उसे शान्ति मिलनेकी बहुत कम सम्भावना है। यह जानकारी मेरे जीवनकी शायद सबसे बुरी घटना है। फिर भी इससे मैं विचलित नहीं हुआ हूँ। मैंने अपने ऊपर कोई प्रायश्चित्त भी नहीं थोपा है। और सारी बस्तीको इस दुखद घटनाकी सूचना देनेके अलावा मैंने इस बुरे कार्यके बारेमें और कुछ नहीं किया है। मैंने उसे यह सलाह बेशक दी है कि उसका यह कर्त्तव्य है कि उसके पास जो-कुछ भी है उसे वह वापस कर दे।

१. डाककी मुहरसे।
२. देखिए "तार : मीराबहनको", २६-३-१९२९।

मुझे खुशी है कि तुम इमारतको बढ़वा रही हो। यदि तुम्हारे पास रहनेवालोंकी तादाद ज्यादा हो, तो फिर अधिक स्थानका बन्दोबस्त तो तुम्हें करना ही पड़ेगा। जब हाजमा जरा-सा भी खराब हो, भोजन छोड़ दो। कमजोरीकी परवाह मत करो। जब तुम खाना खाने लगोगी, तब ताकत तो आ ही जायेगी। लेकिन शरीर जब पचा न सके तब स्वयं भोजन कमजोरी पैदा करेगा।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० ९४१२)से; तथा सी० डब्ल्यू० ५३५६से भी।
सौजन्य : मीराबहन

१७८. तार : माधवजी ठक्करको

साबरमती
२ अप्रैल, १९२९

इम्पॉर्टेन्स
कलकत्ता

सुधारकी खबर सुनकर खुशी हुई। नहानेमें साबुनका इस्तेमाल मत करो।

गांधी

अंग्रेजी (जी० एन० ६७६५)की फोटो-नकलसे।

१७९. पत्र : माधवजी ठक्करको

२ अप्रैल, १९२९

भाईश्री माधवजी,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। आज ही तार भेजा है। उसका जवाब कल साबरमती मिलेगा। लगता है कि सब काम ठीक चल रहा है। एक परिवर्तन कर लो। शरीरपर साबुन लगानेकी कोई जरूरत नहीं है। पानीमें रूमाल गीला कर उससे शरीर रगड़ना ही काफी होगा। साबुन शरीरके लिए हानिकारक है और उससे त्वचा की उपयोगी चर्बी चली जाती है। शरीरको अच्छी तरह पोंछ लेनेसे वह बिल्कुल साफ हो जाता है। बाहरसे शरीरपर लग जानेवाला मैल दूर करनेके लिए कभी-कभी साबुन उपयोगी होता है। पसीनेसे उत्पन्न मैलका उससे साफ किया जाना जरूरी नहीं है।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजराती (जी० एन० ६७६४)की फोटो-नकलसे।

१८०. पत्र : मीराबहनको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
३ अप्रैल, १९२९

चि० मीरा,

तुम्हारे और पत्र मिले। मुझे खुशी है कि तमाम मरीज तुम्हारे पास सहायताके लिए आ रहे हैं। तुम्हें मालूम है कि क्या करना चाहिए। यह पत्र मैं तुम्हें दवाओंके बारेमें सही रास्ते लगा देनेके लिए लिख रहा हूँ। हिन्दुस्तानके गाँवोंके लिए अण्डीका तेल और मुलेठीका चूर्ण भी महँगी चीजें हैं। इंग्लैंड या जर्मनीमें बने हुए मुलेठीके चूर्णके बजाय ऐसी देशी औषधियाँ हैं, जिन्हें तुम्हें इस्तेमाल करना चाहिए। तुम्हें साबुत मुलेठीका ही प्रयोग करना चाहिए। वह बिलकुल कारगर है और हरएक गाँवमें मिल सकती है। वह एक डंठलके रूपमें मिलती है। डंठलको तोड़ लो और उसके अन्दरसे निकलनेवाला गोंद जैसा पदार्थ निकाल लो। उसे तोला भर लेकर सिर्फ थोड़ेसे गरम दूधमें मिलाकर रातको सोते वक्त या ज्यादा अच्छा हो कि तड़के ही चार बजे दे दिया जाये, तो बीमारको साफ दस्त हो जाता है। यह सस्ता होता है। इसे पानीके साथ भी दिया जा सकता है। इसके अलावा, सनायकी पत्तियाँ हैं, जो मुलेठीसे भी सस्ती होती हैं और हर जगह मिलती हैं। सनायकी पत्तियोंका चूर्ण या उसका काढ़ा दे सकती हो। तुम ऐसे वैद्य-हकीमोंको भी पकड़ सकती हो, जो थोड़े-बहुत ईमानदार और भले हों, और उनकी मददसे ये बहुत सादा दवाएँ प्राप्त कर सकती हो। हाँ, मुझे अन्देशा है कि एक चीज ऐसी है जो तुम्हें रखनी पड़ेगी, और वह है मलेरियाके रोगियोंके लिए कुनैन। लेकिन यह सब बात तो यों ही कह दी है। मैं तुमपर अनावश्यक बोझ नहीं डालना चाहता। और शायद तुम यह न चाहोगी कि इन दवाओंके अध्ययनके लिए, चाहे वह अध्ययन कितना ही सतही हो, समय देनेमें तुम्हारा ध्यान बँटे। इसलिए तुम अपनी ही बुद्धिसे काम लो और जो तुम्हें शक्य मालूम हो वही करो।

सप्रेम,

बापू

श्रीमती मीराबहन
छतवाँ
छोटईपट्टी
जिला दरभंगा

अंग्रेजी (जी० एन० ९४१३) से; तथा सी० डब्ल्यू० ५३५७ से भी।
सौजन्य : मीराबहन

१८१. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
बी० बी० सी० आई० रेलवे
३ अप्रैल, १९२९

प्रिय जवाहर,

तुम्हारा पत्र मिला। स्थिति ऐसी है कि आन्ध्रवालोंने मेरे लिए एक दिनका भी मौका नहीं छोड़ा है कि मैं आश्रम जा सकूँ और फिर वहाँसे बम्बई आ सकूँ, और अब चूँकि यात्राका मईवाला अंश वास्तवमें मेरे मनोरंजनार्थ है, अतः मैं २७ मईको बम्बई छोड़कर इलाहाबादके लिए रवाना होना नहीं चाहूँगा। लेकिन मैं कुछ दिनोंके लिए आश्रम आकर, फिर वहाँसे अल्मोड़ा जाना चाहूँगा। अल्मोड़ाके लिए रवाना होनेसे पहले कानपुर, इलाहाबाद और लखनऊकी यात्रा मैं फिर भी कर सकूँगा, और यदि पंजाबके लोगोंकी वैसी इच्छा हो तो मैं पंजाब भी जा सकता हूँ। इसलिए इस समय कोई घोषणा करनेकी जरूरत नहीं है, लेकिन यदि कानपुर और लखनऊ, यहाँतक कि अल्मोड़ाके लिए भी पहलेसे ही तारीख तय करना चाहते हो, तो उसे १० जूनके बादके लिए ही रखो। मैं बाहर निकलनेसे पहले पूरा एक सप्ताह आश्रम-को देना चाहता हूँ। मैं चाहूँगा कि तुम पंजाबवालोंसे पता चला लो कि वे मुझसे क्या करनेकी इच्छा करते हैं।

मैंने आन्ध्र देशका कार्यक्रम अभी बिलकुल पक्का नहीं किया है। इसलिए फिलहाल तुम बैजवाड़ाको मेरा मुख्य कार्यालय मानना। मैं इसी ८ तारीखको बैजवाड़ा पहुँचनेकी आशा करता हूँ।

यदि सीतलासहायकी फिलहाल वहाँ कोई जरूरत न हो तो मैं चाहूँगा कि वह यहाँ आ जायें। उनकी पत्नी और लड़कीके ख्यालसे मैं चाहता हूँ कि वह यहीं रहें, खास तौरसे मेरी अनुपस्थितिके दौरान।

पद्मके चश्मेकी नाप मैं भेज रहा हूँ। कृपया इसे उसको दे देना। मैंने वादा किया था कि नाप प्राप्त करके उसके पास भेज दूँगा।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९२९।
सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

१८२. वह परीक्षात्मक मुकदमा

कपड़ोंकी होलीके मामलेमें आखिर कलकत्ताकी पुलिसकी, दूसरे शब्दोंमें, बंगाल सरकारकी पूरी-पूरी जीत हुई है। इस मामलेके सिलसिलेमें मैंने जो-कुछ किया है, कोई भी उसकी नकल न करे, उसे आदर्श न माने। मनुष्यके जीवनमें ऐसी कई बातें होती हैं जिन्हें वह चाहता है कि लोग उनका अनुकरण करें, दूसरी कई बातें ऐसी भी होती हैं जो वस्तुतः बुरी न होते हुए भी न तो अनुकरणीय होती हैं और न उनका अनुकरण किया ही जाना चाहिए। अतः मुझे यह देखकर खुशी हुई थी कि कई मित्रोंको इस बातसे उलझन हुई और दुःख भी हुआ कि मैंने व्यक्तिगत जमानत देकर भी नजरबन्दीसे अपनेको छुड़ा लिया, मुकदमेमें अपना बचाव पेश किया और इससे भी ज्यादा यह कि मैंने अपने बचावके लिए वकील खड़ा किया। उन्होंने जोरदार शब्दोंमें मुझसे पूछा कि मैं एक पक्के असहयोगीकी हैसियतसे ये तीनों काम किस तरह कर सकता हूँ और इस तरह जिन बातोंका मैं अबतक उपदेश देता रहा उनके खिलाफ कैसे जा सकता हूँ।

मनुष्य दो तरहसे अपनी बातपर दृढ़ रह सकता है: बुद्धिपूर्वक और अबुद्धि-पूर्वक। जो आदमी भारतकी गर्मीमें नंगे बदन रहता है वह अपनी बातपर कायम रहनेकी गरजसे अगर नार्वेकी सर्दीमें भी नंगे बदन रहेगा तो मूर्ख समझा जायेगा और ऊपरसे अपनी जान गँवा बैठेगा।

जो काम मैं व्यक्तिगत हैसियतसे नहीं कर सकता, एक प्रतिनिधिके तौर पर वही मेरे लिए अनिवार्य हो जाता है। एक ओर अखिल भारतीय चरखा संघके ट्रस्टीके नाते मेरे पास लाखों रुपये हैं, लेकिन दूसरी ओर व्यक्तिगत रूपमें एक दमड़ी भी मेरे पास नहीं है। उस संघके ट्रस्टीके नाते अनिवार्य होनेपर मैं मुकदमा दायर करनेका अधिकार देता हूँ, मुकदमा दायर करनेका आदेश भी देता हूँ। अपनी व्यक्तिगत हैसियतमें मैं ऐसी किसी आवश्यकताकी कल्पना नहीं कर सकता। कपड़ेकी होलीके मामलेमें विदेशी वस्त्र बहिष्कार समितिके अध्यक्षके नाते मेरी हैसियत एक ट्रस्टीकी थी। अगर मुझे ऐसा लगा होता कि होलीको रोकनेके सम्बन्धमें पुलिसका नोटिस कानून-सम्मत है, तो मैं श्रद्धानन्द पार्ककी होलीको रोकनेकी सलाह देता। कारण, मैं उस समय सविनय अवज्ञाकी सलाह देनेके लिए तैयार नहीं था। लेकिन मुझे लगा कि जिस धाराके अधीन नोटिस दिया गया था उसके दो अर्थ किये जा सकते थे। अतः परीक्षणके लिए यह एक योग्य विषय बन गया। इस सिलसिलेमें आगे जो कार्रवाई हुई वह परिस्थितिके अनुसार स्वाभाविक थी। अगर होलीको रोकनेके सम्बन्धमें पुलिसके अधिकारकी जाँच जरूरी थी तो मामलेकी सफाई देनी चाहिए थी और अगर सफाई देनी जरूरी थी तो मुझे विनम्र भावसे किसी वकील द्वारा अपनी सफाई पेश करानी चाहिए थी क्योंकि बहुत समयसे छोड़ी हुई अपनी वकालतकी योग्यताके आधारपर कानूनके शास्त्रीय मुद्दोंपर बहस करना दम्भपूर्ण कार्य

होता। और मेरा व्यक्तिगत जमानत न देना सार्वजनिक जीवनमें अपने स्थानकी मर्यादाओंका उल्लंघन करना होता। अगर मैं जमानतके पत्रकपर दस्तखत न करता तो भी मेरे विचारमें पुलिस कमिश्नरने मुझे बर्मा जानेकी इजाजत दे दी होती। किन्तु यदि मैं दस्तखत न करता तो लोगोंमें एक शिष्ट और सज्जन पुरुषके रूपमें मेरी जो ख्याति है उसे मैं खो बैठता।

लेकिन असहयोगियोंके सामने ऐसे मामले बार-बार पेश नहीं होते। वे ऐसे जिम्मेदारीके काम हाथमें लेंगे ही नहीं, या लेनेसे बचेंगे, जिनमें व्यक्तिगत आचार और सार्वजनिक उत्तरदायित्वके बीच संघर्षकी सम्भावना हो। इसी कारण मैं जनताको इस मामलेमें मेरी नकल न करनेके लिए सचेत कर चुका हूँ। साधारण तौरपर कसौटी तो यही है कि असहयोगीको अपने लाभ या आरामके लिए न तो जमानतका सहारा लेना चाहिए और न अपना बचाव पेश करनेका।

कलकत्तेके मामलेका जो परिणाम प्राप्त हुआ है वह निराशाजनक है और उससे ब्रिटिश अदालतोंके सम्बन्धमें मेरी धारणाकी पुष्टि होती है। अदालतने पुलिसके व्यवहारको जिस ढंगसे उचित साबित किया है, मुझे उसकी आशा नहीं थी। अदालतका कर्त्तव्य तो यह था कि वह पुलिसके कार्यकी निन्दा करती, क्योंकि मेरे इस अत्यन्त स्पष्ट वक्तव्यके बावजूद उसने होलीके काममें रुकावट पेश की थी कि मैं सविनय अवज्ञा करनेके लिए यह काम नहीं कर रहा हूँ, बल्कि मेरा पक्का विश्वास है कि प्रस्तुत धारा श्रद्धानन्द पार्क-जैसे स्थानोंपर लागू नहीं होती। लेकिन वस्तुस्थिति तो यह है कि कलकत्ताकी पुलिसको उसकी हुल्लड़बाजीके लिए शाबाशी और सदाचारका प्रमाणपत्र मिला है।

अदालतके इस निर्णयसे मेरा यह विचार और भी दृढ़ हो गया है कि अधिकारियों और जनतामें गम्भीर विरोधकी स्थितिमें न्यायाधीश, अनजाने ही क्यों न हो, अधिकारियोंको ही दोषमुक्त ठहराते हैं।

लेकिन यह अच्छा हुआ कि यह मामला परीक्षात्मक मुकदमेके रूपमें लड़ा गया था। अन्यथा श्रद्धानन्द पार्कमें जो विशाल प्रदर्शन हुआ उसका होना असम्भव था। पुलिसके उद्दण्डतापूर्ण कार्यके चलते बहिष्कार आन्दोलनका जैसा प्रचार हुआ और उसे जो प्रोत्साहन मिला, वह अन्यथा शायद ही कभी मिलता। अतः पुलिसको सदाचारका जो प्रमाणपत्र मिला है, वह स्वागतकी चीज है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-४-१९२९

१८३. टिप्पणियाँ

अन्धाधुन्ध गिरफ्तारियाँ

मजदूर नेताओं या तथाकथित साम्यवादियोंकी गिरफ्तारीसे सरकारकी भयभीत अकुलाहटका पता चलता है और वह ऐसे काम कर रही है जिनके कि हम आदी हो चुके हैं और जो दमनचक्र आरम्भ होनेकी पूर्व-सूचना देते हैं। इससे यह भी स्पष्ट है कि देशकी सरकार तमाम कानूनोंकी उपेक्षा करनेकी अपनी ताकतका समय-समयपर प्रदर्शन करनेकी बातमें विश्वास रखती है, और भयभीत भारतको परदेकी आड़में छुपे रहनेवाले अपने खूनी पंजे कभी-कभी दिखाते रहना जरूरी समझती है। बेशक, गिरफ्तार लोगोंके ऊपर बाकायदा अदालतमें मुकदमा चलानेका स्वांग भी रचा जायेगा। अगर गिरफ्तार किये गये नेता बुद्धिमान हैं तो वे इस जालमें नहीं फँसेंगे और वकीलों द्वारा अपना बचाव उपस्थित करके इस स्वांगमें मदद नहीं करेंगे। उलटे उन्हें साहस-पूर्वक कैदकी सजाका जोखिम उठाना चाहिए। अगर कानूनके नामपर चलनेवाली इस अराजकताकी स्थितिका हमेशाके लिए अन्त करना है तो शीघ्र ही हजारों लोगोंको न केवल कैद पानेके खतरेका सामना करना पड़ेगा बल्कि उसका स्वागत करके उसे स्वीकार करना पड़ेगा।

मेरे विचारमें, इन गिरफ्तारियोंका हेतु साम्यवादको मिटाना नहीं है, इसका हेतु तो जनतामें आतंक पैदा करना है। अगर साम्यवादके मानी हिंसापूर्ण साधनों द्वारा सत्ता और सम्पत्तिको अपने अधीन करना है, तो कहना होगा कि देशका जनमत साम्यवादरूपी इस राक्षसका सफलतापूर्वक मुकाबला कर ही रहा था। कांग्रेसका ध्येय, न केवल कांग्रेसका ही बल्कि तमाम राजनैतिक दलोंका ध्येय, अहिंसात्मक साधनों द्वारा राजनैतिक स्वतन्त्रता प्राप्त करना है। लेकिन सरकारने अपनी करतूतोंसे हिंसा में विश्वास रखनेवालोंको वह उत्तेजन दिया है जो उनमें पहले कभी नहीं था। सरकार बहुत चतुर है और उससे यह छुपा नहीं था कि यह सब अवश्य होगा। अतः इन गिरफ्तारियोंके हेतुका पता पानेके लिए दूसरी दिशामें कोशिश करनी चाहिए। एक बात तो निश्चित है। जनतामें से प्लेगकी भाँति ही दमन-चक्रका भी डर दूर हो गया है। स्वराज्य आन्दोलनने भी जनताके दिलमें इतनी गहरी जड़ जमा ली है कि उसे हिलाना या नष्ट करना कठिन है। इन गिरफ्तारियोंसे उसका और अधिक जोर पकड़ना एक निश्चित बात है। स्वातन्त्र्य आन्दोलनकी जड़पर कुठाराघात करनेवाले सरकारके प्रत्येक कार्यका अब यही परिणाम होगा। श्री साम्बमूर्ति और श्री खाडिलकरकी गिरफ्तारी और उनपर चलाया गया मुकदमा, पण्डित सुन्दरलालकी पुस्तककी जब्ती, श्रद्धानन्द पार्कमें पुलिसका व्यवहार, और ऐसी ही दूसरी घटनाएँ जिनकी ओर मेरा ध्यान नहीं जा पाया है, संयुक्त रूपसे एक ही बातकी घोषणा करती हैं।

दिन-दहाड़े डाका

पण्डित सुन्दरलालकी विद्वत्तापूर्ण हिन्दी पुस्तकके दोनों खण्डोंकी बिना मामला चलाये, बिना परीक्षा किये और ग्रन्थकर्त्ताको किसी भी रूपमें अपना बचाव प्रस्तुत करनेका अवसर न देते हुए, जो जब्ती की गई है, वह संयुक्त प्रान्तकी सरकार द्वारा दिन-दहाड़े डाका डालनेसे किसी कदर कम नहीं है। ये पुस्तकें वर्षोंकी मेहनतका नतीजा हैं। इनके प्रकाशनमें भी बहुत ज्यादा रुपया खर्च हुआ है और अगर जब्तीका हुक्म कायम रखा गया तो उससे ग्रन्थकर्त्ता या प्रकाशकका, जिस किसीने भी इनपर इतना धन खर्च किया हो, सर्वनाश ही हुआ समझ लेना चाहिए। प्रकाशकने जो वक्तव्य स्पष्ट शब्दोंमें प्रकट किया है उससे पता चलता है कि सरकारको इन पुस्तकोंके बारेमें पहलेसे जानकारी थी। उसे पता था कि पुस्तकके दोनों भाग शीघ्र ही प्रकाशित होनेवाले हैं और उसे यह भी मालूम था कि उनमें क्या होगा। तिसपर भी उसने बिना कोई चेतावनी दिये और बिना कोई समुचित जाँच किये इन पुस्तकोंको एकदम जब्त कर लिया। प्रकाशकके कथनानुसार संयुक्त प्रान्तकी सरकारको पुस्तककी परीक्षाके लिए दो दिनसे ज्यादाका समय नहीं मिल सकता था। ग्रन्थकर्त्ताको और जनताको यह जाननेका पूर्ण अधिकार था कि इन पुस्तकोंमें कौन-सी बातें आपत्तिजनक थीं। मैं यह बात अपने कड़वे अनुभवके आधारपर लिख रहा हूँ। आजतक मुझे मालूम नहीं हुआ है कि मेरी लिखी 'हिन्द स्वराज्य' नामक पुस्तक और रस्किन की 'अनटु दिस लास्ट' पर आधारित मेरी 'सर्वोदय' पुस्तक क्यों जब्त की गई थीं। मुझे उनकी जब्तीकी कोई पूर्व-सूचना नहीं दी गई थी। सिर्फ एक मित्रसे मुझे मालूम हुआ था कि ये पुस्तकें जब्त की गई थीं। लेकिन जनताको इस दिन-दहाड़ेकी लूटसे एक तरहका सन्तोष होना चाहिए। क्योंकि सरकार अपनी इन करतूतोंसे हमें सविनय अवज्ञाके ऐसे सरल साधन प्रदान कर रही है जिनका यदि आवश्यक हुआ तो अगले वर्ष बड़े पैमानेपर उपयोग किया जा सकेगा।

'नवाकाल'का मुकदमा

'नवाकाल' वाले श्री खाडिलकरके विरुद्ध जो मामला चलाया गया उसे मैंने मुकदमा कहा है। वस्तुतः यह मुकदमा नहीं, उत्पीड़न है। लेकिन जो सरकार जनताके विरोधके बावजूद चलायी जा रही है, और विशेष रूपसे उस हालतमें जब, जैसा कि हमारे मामलेमें है, इस जन-विरोधका दमन किया जाता है, उस सरकारके राज्यमें स्पष्टवक्ता पत्र-सम्पादकोंका उत्पीड़न एक निश्चित बात होनी चाहिए। श्री खाडिलकरकी नीति हमेशा अपनी बात बिना किसी लाग-लपेटके स्पष्टतापूर्वक कहनेकी रही है। और वे एक प्रभावशाली तथा जनप्रिय लेखक हैं। अपनी स्पष्टवादिताके कारण उन्हें जो लोकप्रियता मिली है उसका मूल्य उन्होंने चुकाया है। मैं उन्हें हार्दिक बधाई देता हूँ। मैं जानता हूँ कि श्री खाडिलकर एक तत्ववेत्ता हैं। एक दिन उन्होंने मुझसे कहा था कि एक पत्रकारकी हैसियतसे उन्हें समय-समयपर जोखिम-भरे कार्योंके लिए जो जुर्माना देना पड़ा था, उसे उन्होंने अक्सर नाटक लिख-लिखकर चुकाया है। वह अपने पत्रको जुर्मानेके कारण होनेवाले कर्जसे बचाकर उसे चलाने और उसके

द्वारा अपनी बुद्धिके अनुसार लोकमतको शिक्षित करनेमें सन्तोष अनुभव करते थे। जिस उदासीनताके साथ उन्होंने अपनी जोखिमभरी जीवन-घटनाओंका जिक्र किया था, उसने मेरी उस आदर-भावनाको और भी बढ़ा दिया जो योग्यता, दृढ़ संकल्प, देशहितके लिए आत्मबलिदान आदि उनके गुणोंके कारण उनके प्रति मेरे दिलमें पहलेसे विद्यमान थी। अच्छा होता कि उन्होंने अपने गाढ़े पसीनेकी कमाईको वकीलकी फीसमें बर्बाद न किया होता। इस देशमें अन्य सरकारी संस्थाओंकी तरह कानूनी अदालतें भी जरूरतके मौकोंपर सरकारकी रक्षा करनेके लिए कायम की गई हैं। इस तरहके अनुभव हमें बार-बार हो चुके हैं। अदालतें बुनियादी तौरपर ऐसी ही हैं। बात इतनी ही है कि जब जनताकी स्वतन्त्रता और सरकारका हित एक ही बातमें होता है तब हमें इसका पता नहीं चलता। जब सरकारके विरोधके रहते हुए भी जनताकी स्वतन्त्रताकी रक्षा करनी होती है, तब अदालतें उनकी रक्षामें असमर्थ पाई जाती हैं। उनसे हमारा जितना कम सम्बन्ध रहे उतना अच्छा है।

राजद्रोहका कर्त्तव्य

अपनी बर्मा-यात्राके दौरान जब मैंने सुना कि श्रीयुत साम्बमूर्तिको सजा सुना दी गई है, तो मैंने सोचा कि उन्होंने अवश्य ही यह कठोर सजा पाने योग्य कोई बहुत खराब बात सरकारके विरुद्ध कही होगी। लेकिन अदालतके प्रकाशित निर्णयमें श्रीयुत साम्बमूर्तिके सात भाषणोंका जो सार-संक्षेप दिया गया है उसे पढ़नेपर देखा जा सकता है कि, जैसा कार्यसमितिने अपने प्रस्तावमें ठीक ही कहा है, उन भाषणोंमें ऐसी कोई बात नहीं कही गई है जिसे अधिकांश कांग्रेसजन विभिन्न मंचोंसे बार-बार कह न चुके हों।

श्री साम्बमूर्तिपर राजद्रोह-सम्बन्धी धाराके अन्तर्गत आरोप लगाया गया था। लेकिन कांग्रेसजनोंके लिए, बल्कि प्रत्येक राष्ट्रवादी व्यक्तिके लिए राजद्रोह तो बहुत समयसे एक पवित्र कर्त्तव्य बना हुआ है। जो सरकार प्रजाकी निष्ठा खोने योग्य कार्य करेगी वह राजद्रोहसे कबतक बची रह सकती है? तथ्य यह है कि श्रीयुत साम्बमूर्तिसे भी कड़ी भाषाका प्रयोग करनेवाले बहुतसे लोगोंको सजा देकर सम्मानित नहीं किया जाता तो इसका कारण यही है कि श्री साम्बमूर्तिकी बातोंका जनता और सरकारपर प्रभाव पड़ रहा था, उनकी शिक्षा संक्रामक सिद्ध हो रही थी जबकि हममें से अधिकांश लोगोंका राजद्रोहका गुण प्रभावहीन होता है। यदि हमें श्रीयुत साम्बमूर्तिको प्रदान किये गये सम्मान जैसा सम्मान प्राप्त करने योग्य बनना है तो हमारा राजद्रोह वैसा ही प्रबल और क्रियाशील होना चाहिए जैसा कि श्रीयुत साम्बमूर्तिका होता जा रहा था। उनमें वह इतना प्रबल और क्रियाशील हो गया था कि वे सरकारकी नजरोंमें खटकने लगे थे।

उन्होंने जमानतपर रिहा होने या अपना बचाव पेश करनेसे इनकार करके एक अच्छा उदाहरण प्रस्तुत किया है। व्यक्तिगत तौर पर मैं अपने मामलेमें एक संक्षिप्त बयान अदालतमें जरूर देता, अदालतके मार्ग-दर्शनकी खातिर नहीं बल्कि जनताकी खातिर। उदाहरणके तौर पर जनता यह जानना चाहेगी कि उनके भाषणोंके

सही विवरण प्रस्तुत किये गये थे या नहीं। लेकिन मैं स्वीकार करता हूँ कि यह एक तुच्छ-सी बात है। भाषणोंकी अतिरंजित और गलत रिपोर्ट छपनेके हम आदी हैं। और जहाँ किसी कार्य-विशेषकी न केवल निन्दा नहीं की जाती, बल्कि उसका बचाव पेश किया जाता है वहाँ इससे क्या फर्क पड़ता है कि बातको बढ़ा-चढ़ाकर प्रस्तुत किया गया है या घटाकर? उनका जनताके लिए कोई सन्देश देनेसे इनकार करना उनके स्वभावके अनुकूल ही था। यदि उनको सजा दिया जाना ही लोगोंके लिए पर्याप्त सन्देश नहीं है तब तो फिर शब्दोंसे कोई सन्देश देना व्यर्थ है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-४-१९२९

१८४. मद्य-निषेध अभियान

श्रीयुत च० राजगोपालाचारी द्वारा भेजी गई निम्नलिखित योजनाको[1] कार्य-समितिने स्वीकार कर लिया है तथा कार्यके सम्पादनके लिए एक समिति नियुक्त कर दी गई है जिसमें डा० अन्सारी, श्रीयुत वल्लभभाई पटेल, राजेन्द्रप्रसाद तथा च० राजगोपालाचारी शामिल हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-४-१९२९

१८५. तार: माधवजी वी० ठक्करको

साबरमती

[४ अप्रैल, १९२९][2]

इम्पॉर्टेन्स

कलकत्ता

खबर मिली। वजन और सामान्य हालत के बारेमें तो लेबरनम रोड बम्बईके पतेपर तार दो। मैं वहाँ कल पहुँच रहा हूँ।

गांधी

अंग्रेजी (जी० एन० ६७६६)की फोटो नकलसे।

१. योजनाके लिए देखिए परिशिष्ट २।

२. डाककी मुहरसे।

१८६. तार : माधवजी वी० ठक्करको

बम्बई
[५ अप्रैल, १९२९][1]

इम्पॉर्टेन्स
कलकत्ता

रिपोर्ट सन्तोषजनक लगती है। छः या सातको हैदराबाद दकन होऊँगा उसके बाद बैजवाड़ा।

गांधी

अंग्रेजी (जी० एन० ६७६७) की फोटो-नकलसे।

१८७. पत्र : छगनलाल जोशीको

५ अप्रैल, १९२९

चि० छगनलाल,

[क]के[2] बारेमें तुम्हें तार भेजा है। वह मुझे अत्यन्त सीधा मनुष्य जान पड़ता है। उसके विषयमें शक करनेका कारण नहीं है। और यदि उसके बारेमें शक करनेका कारण नहीं है तो [ख]के[3] बारेमें भी यही होना चाहिए। [ख] बहुत झूठ बोलती है वह अलग बात है। किन्तु यदि उसने व्यभिचार किया भी हो तो वह एकपक्षीय माना जायेगा। उसे छुट्टी नहीं दी जा सकती ऐसा मैं मानता हूँ। उसकी कोई चर्चा न करे और तुम उसे आफिसमें अपनी नजरके नीचे रखो या उसे कोई ऐसा काम सौंपो जिसमें कोई हानि न हो। [क]ने तो स्वयं कहा ही है कि [ख]को कोई दूसरा काम देना चाहिए। [क] चाहता है कि उसके विषयमें मनमें कोई शंका आनेपर उससे स्पष्ट बातकी जाये। यह ठीक लगता है।

छगनलालका एक पत्र आया था। वह इसके साथ भेज रहा हूँ। अब सामानके बारेमें जो-कुछ करना ठीक हो, कर लेना। दोनों पत्र नारणदासको पढ़नेको दे देना ठीक होगा।

तीन बहुत अच्छी गायें मिली हैं। और प्राप्त करनेका प्रयत्न कर रहा हूँ। कृष्णावतारको[4] भेज दिया होगा?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५३९६) की फोटो-नकलसे।

१. डाककी मुहरसे।
२ और ३. नाम यहाँ नहीं दिये गये हैं।
४. आश्रम-गोशालाका एक कार्यकर्ता।

१८८. भाषण: बम्बईकी सार्वजनिक सभामें[1]

५ अप्रैल, १९२९

हिन्दीमें भाषण आरम्भ करते हुए[2] उन्होंने कहा कि यह सच है कि मैं कई सालों बाद बम्बईमें किसी सार्वजनिक सभामें बोल रहा हूँ। इस बार भी मुझे पता नहीं था कि मुझसे किसी सभामें बोलनेके लिए कहा जायेगा। मैं तो बम्बई प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी तथा बम्बई यूथ लीगके तारोंके उत्तरमें आया था। उन्होंने कहा कि बम्बईके इतिहासमें एक समय ऐसा भी था जब आज जहाँ आप इकट्ठा हुए हैं, इतनी थोड़ी-सी जगहमें एक सार्वजनिक सभामें भाषण करना मेरे लिए सम्भव नहीं होता था। यहाँतक कि कभी-कभी तो चौपाटीका मैदान भी छोटा पड़ जाता था। उस समय जनतामें बहुत उत्साह हुआ करता था। चालू वर्षके लिए देशने जो राष्ट्रीय कार्यक्रम अपनाया है उसको देखते हुए तो मैं यही कहूँगा कि देशकी सेवाके लिए १९२१-२२ की अपेक्षा आज उत्साह तथा शक्तिसे काम करनेकी कहीं अधिक जरूरत है।

राष्ट्रीय सप्ताहके मनानेके बारेमें बोलते हुए महात्मा गांधीने यह ध्यान दिलाया कि जलियाँवाला बागका हत्याकाण्ड १३ अप्रैलको हुआ था। उस घटनाके बादसे पिछले सभी सालोंमें ६ से १३ अप्रैलतक राष्ट्रीय सप्ताह मनाया जाता रहा है। कांग्रेसके माध्यमसे राष्ट्रने जो संकल्प किया है यदि वह कोरी शान नहीं है तो कन्याकुमारीसे कश्मीरतक तथा डिब्रूगढ़से कराचीतक लोगोंको फिरसे लगनपूर्वक काम करना पड़ेगा।

स्वर्गीय श्री उमर सोबानीकी स्मृतिमें स्थापित पुस्तकालय, जिसका कि उद्‌घाटन होना था, का उल्लेख करते हुए महात्माजीने कहा कि उमर सोबानीने बम्बईकी जो सेवा की वह वास्तवमें अद्वितीय थी। इसके बाद गांधीजीने बम्बई प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके नये भवनकी चर्चा की जिसका कि उद्‌घाटन वह शीघ्र करने ही वाले थे। उन्होंने विनोद-भावसे कहा कि यदि कांग्रेस नया कार्यालय खोल सकती है तो वह देशके लिए स्वतन्त्रताका नया युग भी आरम्भ कर सकती है। उन्होंने आगे कहा कि इसके लिए जिस चीजकी जरूरत है वह है आत्म-विश्वास। भाषण जारी रखते हुए उन्होंने अपने श्रोताओंको इस बातकी याद दिलाई कि कांग्रेसने देशवासियोंसे उस जबरदस्त राष्ट्रीय संग्राममें जूझनेके लिए तैयार रहनेको कहा है जो १९२९ के अन्तमें शुरू होनेवाला है। उन्होंने कहा, मैं आशा करता हूँ कि इस वर्षके दौरान देशवासी कांग्रेस द्वारा निर्धारित कार्यक्रमको पूरा करेंगे। कांग्रेस कार्यक्रमका सर्वप्रथम और सबसे महत्त्वपूर्ण

१. यह सभा कांग्रेस हाउसके अहातेमें हुई थी।

२. हिन्दी पाठ उपलब्ध नहीं है।

भाग खद्दरका प्रयोग तथा सारे विदेशी कपड़ेका बहिष्कार है। उन्होंने आगे कहा कि बड़े दुखकी बात है कि बहुतसे पुरुषों और स्त्रियोंने, जो इस सभामें आये हैं, अपने शरीरपर विदेशी वस्त्र धारण कर रखे हैं। यहाँ मैंने जो बाजार देखा वह भी विदेशी है हालाँकि मुझे यहाँ खद्दर बाजारका उद्घाटन करनेके लिए बुलाया गया था। . . . गांधीजीने कहा, मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि खादीके बिना स्वराज्य नहीं मिलेगा। उन्होंने कहा, मैं खद्दरको कांग्रेसकी मुख्य वस्तुके रूपमें जो महत्त्व देता हूँ वह इस कारण देता हूँ कि यह ऐसी चीज है जिसमें सब शामिल हो सकते हैं।

इसके बाद उन्होंने श्रोताओंसे अपील की कि आप अपनी विदेशी टोपियाँ तथा अन्य विदेशी वस्त्र यहींपर उतार दें।[1]

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ६-४-१९२९

१८९. भाषण: सार्वजनिक सभा, हैदराबादमें

६ अप्रैल, १९२९

गांधीजीने, जो मंचपर एक कुर्सीपर बैठे थे, उर्दूमें बोलते हुए अपने संक्षिप्त भाषणमें कहा कि मैं हैदराबाद पहले भी आ चुका हूँ, लेकिन तब मैंने रुपयेकी माँग नहीं की थी। लेकिन इस बार मैं दरिद्रनारायणके नामपर उसकी माँग करूँगा। उन्होंने लोगोंका ध्यान इस बातकी ओर दिलाया कि भारत सबसे गरीब राष्ट्र है और तीन करोड़से भी ज्यादा लोग यहाँ क्षुधा-पीड़ित रहते हैं और कहा कि आप लोगोंको समझना चाहिए कि इसके मतलब क्या हैं। चरखेके बारेमें बोलते हुए उन्होंने कहा कि चरखा तो कामधेनु है जो हमारी आवश्यकताएँ पूरी करता है। मेरी रायमें तो हैदराबाद राज्य, जिसे हर प्रकारकी सहूलियतें नसीब हैं, काफी मात्रामें खादीका उत्पादन करके ब्रिटिश भारतकी मदद कर सकता है। श्रीमती सरोजिनी देवीने मुझे बताया था कि यहाँ बहुत ही बढ़िया किस्मकी खादी तैयार होती है और मुझे इससे बड़ी खुशी भी हुई। मुझे भेंट किये गये हारमें जिस खादीका प्रयोग किया गया है उतनी बढ़िया किस्मकी खादी मुझे बहुत कम देखनेको मिली है और यदि इसे दलित जातियोंके बच्चोंने तैयार किया है तो मैं उन्हें बधाई देता हूँ और मुझे इससे बहुत खुशी हुई है।

इसके बाद उन्होंने ब्रिटिश भारतमें विद्यमान हिन्दू-मुस्लिम प्रश्नका उल्लेख किया और कहा कि वह समय फिर आ रहा है जब वह एकता जिसके दर्शन एक बार १९२१ में हुए थे, अब फिर देखनेको मिलेगी। उन्होंने श्रोताओंसे कहा कि वे इस एकताको हासिल करनेमें भारतकी जनताकी मदद करें। मद्यपानकी बुराईका उल्लेख

१. इसके बाद गांधीजीने बम्बई प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी नई इमारतका उद्घाटन किया तथा उमर सोबानी-स्मारक-पुस्तकालयको देखने गये।

करते हुए उन्होंने कहा कि किसी राष्ट्रके लिए यह अपमानकी बात है कि उसके बच्चे उस पैसेपर शिक्षा ग्रहण करते हों जिसकी उगाही शराब जैसे साधनोंसे की गई है। उन्होंने कहा कि हैदराबादमें परिस्थितियाँ भिन्न हैं; आप लोगोंको चाहिए कि आप परम माननीय निजामके पास प्रतिवेदन भेजें तथा इस दिशामें एक नया कदम उठाकर ब्रिटिश भारतके सामने एक उदाहरण प्रस्तुत करें। गांधीजीने कहा, गोवधको समाप्त करने तथा इस प्रकार हिन्दू-मुस्लिम एकताकी दिशामें एक बड़ा कदम उठानेके लिए मैं निजामको बधाई देता हूँ। अन्तमें उन्होंने दलित जातियोंके प्रश्नकी चर्चा करते हुए कहा कि अस्पृश्यताके अभिशापका शास्त्रोंमें कहीं समर्थन नहीं किया गया है। हिन्दुओंको चाहिए कि वे समाजसे इस बुराईको दूर कर दें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ८-४-१९२९

१९०. पत्र : छगनलाल जोशीको

[७ अप्रैल, १९२९ से पूर्व][1]

चि० छगनलाल,

तुम्हें छगनलाल गांधीके विषयमें लिखना भूल गया। उसने जो रुपया दिया है उसमें चोरीका धन भी है। यह शायद तुम्हें न मालूम हो। इसमें थोड़े गहनों और ब्याजका पैसा है, जिसे लौटा देना मैं अधर्म मानता हूँ और हममेंसे किसीको उसे वापस करनेका अधिकार नहीं है। हमें मानना चाहिए कि यह पैसा इस्तेमाल किया जा चुका है। हमें ट्रस्टके रूपमें दान लेनेका अधिकार है। उसे वापस देनेके लिए हमारे पास कोई नैतिक या कानूनी कारण होना चाहिए। इस मामले में दोनोंमें एक भी कारण नहीं है। छगनलालको पेन्शन देनी हो तो दी जा सकती है। ऐसा करना हमारा कर्त्तव्य भी हो सकता है। छगनलाल क्या करना चाहता है, क्या करेगा, यह देखना बाकी है। मैंने उसे पिछले सप्ताह पत्र लिखा है।

वह जानता है कि हम उसे भूखों नहीं मरने देंगे। काशीकी जिम्मेदारी तो हमारे ऊपर है ही।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

इसके साथ सेठ गोविन्ददासका पत्र वापस भेज रहा हूँ। क्या इस समय वहाँ किसीको भेज सकते हैं? और कोई न हो तो सीतलासहाय तो है ही। विचार करना। सूरजभानको इस विषयमें कितना अनुभव हो चुका है।

गुजराती (जी० एन० ५४२५)की फोटो-नकलसे।

१. छगनलाल गांधीकी भूलके उल्लेखसे। देखिए "पत्र : छगनलाल जोशीको", ५-४-१९२९।

१९१. मेरा दुःख, मेरी शर्म

इस अध्यायको लिखने या न लिखनेके सम्बन्धमें लगातार विचार करनेके बाद आखिर मैं इस नतीजेपर पहुँचा कि न लिखना अधर्म होगा। सत्याग्रह आश्रम यानी उद्योग मन्दिरको बहुत-से मित्र पवित्र स्थान समझते हैं। कई अपने प्रियजनोंकी मौतके बाद उनकी पवित्र स्मृतिमें यहाँ खादी कार्यक्रमोंके लिए द्रव्य भेजते हैं। मैं उसे स्वीकार भी करता हूँ।

फिर भी इस मन्दिरमें बड़े-बड़े पाप प्रकट हुए हैं। मन्दिरमें रहनेवालोंसे तो मैं इस बातकी चर्चा कर चुका हूँ, लेकिन इतना ही काफी नहीं है। 'नवजीवन' के पाठकोंके साथ मेरा सम्बन्ध धार्मिक है। इस सम्बन्धके पीछे मेरी और मुझसे सम्बन्ध रखनेवालोंकी पवित्रता निहित है। मैंने कई बार लिखा है कि पाप छुपाया नहीं जा सकता। मेरे पास तो छुपानेके लिए कुछ है ही नहीं। मन्दिरमें जो पाप प्रकट हुए हैं उनकी खबर उससे सम्बन्ध रखनेवालोंको दे देना उचित है और आवश्यक है। यही सोचकर पाठकोंके सामने उन्हें दीनतापूर्वक उपस्थित करता हूँ।

मेरे प्रिय भतीजे -- स्वर्गीय मगनलाल गांधीके बड़े भाई -- छगनलाल गांधीके विषयमें यह पता चला है कि वे वर्षों पहलेसे चोरी करते चले आ रहे हैं; उन्हें मैंने अपने पुत्रके समान पाला और बचपनसे अपने पास रखा है। अगर उन्होंने खुद चोरीकी बात कबूल कर ली होती तो मुझे इतना दुःख न होता। लेकिन यह चोरी तो आश्रमके उनके हमनाम, जागृत मन्त्रीने[१] अनायास पकड़ी। पुत्रके समान मेरे इस भतीजेने इसे छुपानेकी जो कोशिश की थी वह बेकाम हुई। फिर तो उनके पछतावेका पार न रहा। अब तो वे गला फाड़ कर बुरी तरह रोते हैं। फिलहाल उन्होंने अपनी खुशीसे मन्दिर भी छोड़ दिया है। लेकिन मैं यह आशा लगाये बैठा हूँ कि चित्त शुद्ध करनेके बाद वे फिर लौटेंगे। अगर वे शुद्ध हो जायेंगे तो मन्दिर उनका स्वागत करेगा। उन्होंने जो चोरियाँ की हैं वे सब मामूली थोड़े-से पैसोंकी और छोटी, हलकी चीजोंकी हैं। चोरीकी रकमका खयाल करते हुए मैंने इसे छगनलाल गांधीका एक रोग माना है। इस चोरीसे मन्दिरको आर्थिक नुकसान हुआ हो, सो नहीं। छगनलाल गांधीने लगभग दस हजार रुपये बचाये थे। कैसे, सो तो अभी नहीं बताऊँगा। कुछ ही महीने हुए, उन्होंने यह रकम, मेरे कहनेसे, मन्दिरको दे डाली थी। इस दानमें उदारता नहीं थी, सिर्फ धर्म-पालन था। अपरिग्रहके व्रतका पालन करनेवालोंके पास अपनी निजकी मिल्कियत नहीं होती। छगनलालके पास वह देखी गई। यह बात मुझे खटकी। छगनलालने, उनकी पत्नीने, उनके दोनों लड़कोंने कबूल किया कि यह धन अपने पास नहीं रखा जाना चाहिए। इस कारण यह सब रकम मन्दिरको मिली। मैं मानता हूँ कि अब छगनलालके पास उनके पिताजीकी मिल्कियतके हिस्सेके सिवा

१. छगनलाल जोशी।

कुछ भी नहीं रहा है। जब मैं छगनलाल गांधीकी तीस बरसकी सेवाका और उनकी सरलताका विचार करता हूँ तो इस चोरीके कारणको समझ नहीं सकता। प्रकृति बलीयसी है। यह तो मेरी शर्मकी एक बात हुई।

अब दूसरी सुनिए। 'आत्मकथा' में मैंने कस्तूरबाईकी बहुत तारीफ की है। मेरे जीवनके बड़े-बड़े परिवर्तनोंमें, इच्छासे या अनिच्छासे, उसने मेरा साथ दिया है। मैं मानता हूँ कि उसका जीवन पवित्र है, उसने समझ-बूझ कर नहीं, लेकिन केवल पत्नी-धर्मका खयाल करके यह सब त्याग किया है। मेरे त्यागमें उसने कभी रुकावट नहीं डाली। मेरी बीमारीमें मेरी सेवा करके उसने मुझे कितना सुख दिया, किन्तु उसे कष्ट देनेमें मैंने कोई कमी नहीं की। मैं यह कह सकता हूँ कि उसने ब्रह्मचर्यके पालनमें न केवल मेरी मदद की है, बल्कि मेरी रक्षा भी की है। इन गुणोंको आच्छादित कर देनेवाले दोष भी उसमें हैं। उसने पत्नी-धर्म समझ कर उसके पास जो धन आदि था सो तो दे डाला, फिर भी उसमें कुछ ऐसा क्षुद्र मोह रह गया है जो समझमें नहीं आता। इसी कारण उसने एक साल या उससे कुछ पहले जुदे-जुदे लोगोंसे जुदे-जुदे मौकोंपर मिले हुए सौ या दो सौ रुपये इकट्ठे कर रखे थे। नियम तो यह है कि कोई उसके निजके लिए भी कुछ दे जाये तो वह उसे भी रख नहीं सकती। इस कारण ऊपरकी इकट्ठी की हुई रकम चोरीकी रकम ही हुई। उसकी और मन्दिरकी खुशनसीबीसे एक बार मन्दिरमें चोर आये। उन्हें तो कुछ नहीं मिला, लेकिन इस बहाने कस्तूरबाईकी चोरी प्रकट हो गई। उसे शुद्ध पश्चात्ताप हुआ लेकिन वह क्षणिक साबित हुआ। उसका सच्चा हृदय परिवर्तन नहीं हुआ था; पैसा जोड़नेका मोह अभी छूटा नहीं था। कुछ दिन पहले कुछ अपरिचित भाई उसे चार रुपये भेंटके नामसे दे गये। नियमानुसार इन रुपयोंको आफिसमें जमा करानेके बदले उसने अपने पास रख छोड़ा। एक जिम्मेवार आश्रमवासीने यह सब देखा था; उनका धर्म तो यह था कि वह कस्तूरबाईको सावधान कर देते। लेकिन झूठी मर्यादाके कारण वह इस पापके साक्षी बने रहे। छगनलाल गांधीके किस्सेके बाद मन्दिरवासियोंकी आँखें खुलीं। कस्तूरबाईकी चोरीके साक्षीने छगनलाल जोशीको खबर दी। जोशी कतूरबाईके पास काँपते-काँपते पहुँचे। कस्तूरबाई समझ गई। उसने दीनतापूर्वक रुपये दे दिये और वचन दिया कि आगेसे ऐसा नहीं होगा। मैं जानता हूँ कि उसका पछतावा सच्चा है। लेकिन अब अगर पहले किया हुआ कोई दूसरा पाप प्रकट हो या भविष्यमें ऐसा कोई पाप करनेपर वह प्रकट हो जाये तो कस्तूरबाईने प्रतिज्ञा की है कि वह मुझे और मन्दिरको छोड़ देगी। मन्दिरने उसके पश्चात्तापको स्वीकार किया है। अब वह मन्दिरमें एक निर्दोष व्यक्ति मानी जायेगी और अगर लोग निभा लेंगे तो मौके-बे-मौके मेरे साथ मुसाफिरी भी करेगी।

अब तीसरी घटना सुनिए। मन्दिरमें तीन साल पहले एक विधवा बहन रहती थी। हम सब उसे पवित्र मानते थे। उन्हीं दिनों आश्रममें एक नौजवान भी रहते थे। उनका पालन-पोषण किसी अनाथालयमें हुआ था। उन्हें भी हम सब अच्छा समझते थे। उस समय वह कुँवारे थे। उक्त विधवा बहनके साथ वह पतित हुए।

यह किस्सा वैसे बहुत पुराना हो चुका है। लेकिन जिस आश्रममें ब्रह्मचर्य पालनके लिए भगीरथ प्रयत्न किये जाते हैं, उसमें इस तरहकी गन्दगी, ऐसी सड़नका दिखाई देना बड़ा करुणाजनक है। यही है आश्रम, यही है मन्दिर!

मित्र और अनजान-अपरिचित भोले पाठक मन्दिरका और मेरा त्याग करें तो दुहरी भलाई हो। मैं छूटूँ, वे छूटें। मेरा बोझ हलका हो। लेकिन दुनियाकी कठिन समस्याएँ इस तरह सहज ही नहीं सुलझ सकतीं। इस समस्याको हल करनेका एक तरीका तो यह है कि मन्दिरमें रहनेवाले पवित्र स्त्री-पुरुष मुझे छोड़ दें। दूसरे, अगर मन्दिरमें रहनेवाले तमाम सदोष नर-नारी भाग जायें तो भी, मेरे विचारमें, सुन्दर परिणाम निकले। मैं भाग जाऊँ, यह तो और भी अच्छा है, सोनेमें सुगन्ध है। लेकिन इनमेंकी एक भी बात अभी सम्भव नहीं है।

पाठक कृपा कर इन बातोंपर विश्वास करें। यह समझना चाहिए कि ये पाप मेरे पापोंकी प्रतिमाएँ — प्रतिमूर्तियाँ हैं। ऊपर जो-कुछ मैंने लिखा है वह इस उद्धत विचारसे नहीं लिखा है कि "मैं अच्छा हूँ, मेरे साथी खराब हैं।" मुझे पक्का विश्वास है कि मेरे हृदयकी गहराईमें छुपी हुई अनेक कमजोरियाँ ही इस तरह फोड़ोंके रूपमें फूट पड़ती हैं। मैंने कभी सम्पूर्णताका दावा नहीं किया है। आश्रममें जो पाप होते हैं, वे मेरे पापोंकी प्रतिध्वनियाँ हैं। मैं तो यही कह सकता हूँ कि मैं अपने पापोंको नहीं जानता। अनन्त विचार-जगत्‌में कितने पाप करके मैं आसपासकी हवाको गन्दी करता होऊँगा, कौन जानता है? 'महात्मा' पद मुझे हमेशा शूलके समान चुभा है, आज तो मैं उसे अपने लिए एक गाली समझ रहा हूँ। लेकिन मैं कहाँ जाऊँ, क्या करूँ? निकल भागूँ? आत्महत्या करूँ? भूखों मरूँ? आश्रममें ही गड़ जाऊँ? सार्वजनिक कामके लिए अथवा अपने पेटके लिए एक भी कौड़ी लेनेसे इनकार करूँ? इनमें से कोई बात ऐसी नहीं जिसे अभी करनेकी इच्छा हो, हिम्मत भी नहीं है।

मैं इतना आशावादी हूँ कि दूसरे भले ही मेरी बात न मानें, लेकिन अगर केवल मन्दिरमें रहनेवाले ही मन, वचन और कायासे मेरा कहना मानें तो भी मैं अपनी कल्पनाका स्वराज्य पानेकी आशा रखता हूँ। मैं अपने पापोंको देखने और उन्हें दूर करनेके लिए हमेशा तैयार रहता हूँ। इस कारण ऐसे-ऐसे दोषोंको देखते हुए भी मैं यह आशा रखकर जी रहा हूँ कि आश्रम अपने नामकी योग्यता भी सिद्ध करेगा और [उद्योग] मन्दिर न रहकर फिरसे आश्रम बन जायेगा। इसी कारण अभी तो मेरा यही विचार है कि जैसे-जैसे कमजोरियाँ प्रकट होती जायें वैसे-वैसे उन्हें जाहिर करता जाऊँ और मन्दिरको निभाता रहूँ।

प्रभु प्रीत्यर्थ जो काम शुरू किया है, उसे प्रेरणाके अभावमें मैं कैसे छोड़ सकता हूँ? जिस दिन प्रभु मुझसे यह काम छुड़ाना चाहेंगे, उस दिन वह लोगोंमें मेरा तिरस्कार करनेकी बुद्धि पैदा करेंगे। उस समय भी मेरा हृदय उनसे 'मैं तेरा और तू मेरा' कह सकेगा, इसी आशापर मैं जी रहा हूँ।

इस पापी, अपूर्ण संस्थाके द्वारा मैं प्रभुसे मिलनेकी आशा रखता हूँ। इस संस्थाको मैं अपनी अच्छीसे-अच्छी कृति मानता हूँ। मैं तो यह मानता हूँ कि यह

संस्था मुझे नापनेका गज है। इन पापोंके प्रकट हो जानेपर भी मेरी इस कल्पनामें कोई फेरफार नहीं हुआ है। हो सकता है, यह मेरा निरा भ्रम हो, सयानेपनके बदले पागलपन हो। ऐसी दशामें :

रजत सीप महुं भास जिमि जथा भानुकर वारि।
जदपि मृषा तिहुंकाल सोई भ्रम न सकई कोउ टारि।।

सीपमें चाँदीका, सूर्यके तापमें जलका भ्रम होना सर्वथा झूठा है, फिर भी अज्ञानी आदमीको वह सच्चा ही मालूम होता है। इस भ्रमको सिवा ज्ञानके और कोई नहीं मिटा सकता।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ७-४-१९२९

१९२. जोडणी-कोश[1]

गुजरात विद्यापीठकी तरफसे इस हफ्ते 'जोडणी-कोश' प्रकाशित हुआ है। अपने प्रकारका यह पहला ही कोश है। हमारी भाषामें शब्दकोश तो दो-चार हैं, पर उनमें हिज्जोंका कोई माप या प्रमाण नहीं। जैसे बिना नाकका आदमी अच्छा नहीं लगता, वैसे ही बिना हिज्जेकी जबानको समझना चाहिए। इसीलिए प्रामाणिक हिज्जे देनेवाले कोशकी कमी मुझे हमेशा होती रही है। 'नवजीवन' पढ़नेवालोंकी संख्या कम नहीं है। गुजरात विद्यापीठका आसरा लेनेवालोंकी तादाद भी काफी है। इन सबका काम किसी वर्तनी-कोशके बिना कैसे चले? इस प्रश्नका विचार करनेके फलस्वरूप यह कोश तैयार हुआ है।

यह कैसे कहा जा सकता है कि इस कोशमें दिये गये हिज्जे ही सही हैं, और दूसरे गलत हैं? कोई ऐसा सवाल करे तो उसका जवाब यह है कि यहाँ सही-गलतका निर्णय करनेका प्रश्न नहीं है। ठीक-ठीक गुजराती जाननेवालों और व्याकरण-शुद्ध गुजराती लिखनेकी कोशिश करनेवालोंकी कलमसे जो हिज्जे निकलते हैं वे सही माने जायेंगे। इस मोटे नियमका अनुसरण करके यह कोश तैयार किया गया है।

जिस गुजराती-व्यक्तिको अपनी भाषासे प्रेम है, जो शुद्ध भाषा लिखना चाहता है या जो उन हिज्जोंको अपनाना चाहता है, जिसे राष्ट्रीय आन्दोलनमें पड़े हुए बेशुमार गुजराती लिखना चाहते हैं, उन सबको यह शब्द-कोश ले लेना चाहिए।

अंग्रेजी भाषाके शब्दोंके हिज्जे गलत करनेमें हमें जितनी शर्म आती है, मातृभाषाके हिज्जोंकी हत्या करनेमें हमें उससे ज्यादा शर्म आनी चाहिए। अब आगे किसीको

१. 'जोडणी' का अर्थ है वर्तनी अथवा हिज्जे। जोडणी-कोशका उद्देश्य शब्दोंकी प्रचलित वर्तनी सम्बन्धी अव्यवस्थाको दूर करना था।

मनमाने हिज्जे करनेका अधिकार नहीं है। मैं अपने जैसे अधूरी गुजराती जानने-वालोंको इस कोशकी मदद लेकर ही अपनी चिट्ठी-पत्री लिखनेकी सिफारिश करता हूँ।

इस कोशमें ४३,७४३ शब्द हैं। कोशकी रचना, उसमें आये हुए शब्दोंके हिज्जोंके नियमों आदिके बारेमें लिखना नहीं चाहता। सब लोग कोश खरीदकर यह ब्योरा जान लें। जिन अमीरोंको भाषाका शौक हो, उन्हें चाहिए कि वे अपने हरएक गुमाश्तेको यह कोश देकर उसे तदनुसार गुजराती लिखनेका सब काम करनेको कहें।

संचालकोंने आत्मविश्वासकी कमीके कारण पहला संस्करण सिर्फ ५०० प्रतियोंका निकाला है। मुझे उम्मीद है कि यह संख्या तो 'नवजीवन' के ग्राहकोंको भी पूरी नहीं पड़ेगी। कोशकी लागत कीमत पौने चार रुपया पड़ी है; फिर भी उसका विक्रय मूल्य तीन रुपया रखा गया है। जिल्द पक्की बँधी है और कोशमें ३७३ पृष्ठ हैं। मुझे आशा है कि भाषा-प्रेमी गुजराती कोशको तुरन्त खरीदकर संचालकोंके आत्म-विश्वासकी कमी दूर कर देंगे और शब्दकोशके प्रति अपनी सहानुभूति सिद्ध कर दिखायेंगे।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, ७-४-१९२९

१९३. पत्र : मीराबहनको

स्थायी पता :
सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
७ अप्रैल, १९२९

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र मुझे बम्बईमें मिला। बैजवाड़ा भेजा हुआ तुम्हारा पत्र पता बदल कर मेरे पास यहाँ हैदराबाद भेज दिया गया है। यहाँसे मैं आज शामको रवाना हो रहा हूँ।

तुम्हारा आखिरी पत्र चिन्ताप्रद है। तुम्हें समय-समयपर बुखार आ ही जाता है। इसकी चिन्ता तो न करो, मगर उपेक्षा भी न करो। अगर वहाँ तुम्हारा स्वास्थ्य अच्छा नहीं रह सकता, तो तुम्हें स्थान-परिवर्तन कर ही देना चाहिए। कुछ दिन कुनैन लेना अच्छा हो सकता है। तुम्हें नींबू पटना या कलकत्ता जहाँसे भी मिल सकें मँगा लेने चाहिए। मुझे आशा है कि तुम मच्छरदानी नियमपूर्वक काममें ले रही हो। अगर तेल माफिक न आता हो तो न लो। अगर तुम्हें अच्छा घी न मिल सके, तो मैं तुम्हारे लिए भेज सकता हूँ। सार यह कि तुम्हें अपने शरीरको धरोहर समझकर उसके लिए जिस चीजकी भी जरूरत हो ले लेनी चाहिए।

हाँ, नरम तकुओंके लिए गुजरातमें मेरे सिवाय तुम्हारा कोई समर्थक नहीं है। लेकिन मेरी वकालतका आधार अज्ञान है। मैं तो उसकी वकालत इसलिए करता हूँ क्योंकि वह मुझे पसन्द है।

मिलनेवाले मेरा इन्तजार कर रहे हैं।
मैं श्रीमती नायडूके घर ठहरा हूँ।
सप्रेम,

बापू

[पुनश्च :]
बा, प्रभावती, इमाम साहब, प्यारेलाल और सुब्बैया मेरे साथ हैं। महादेवकी वल्लभभाईको जरूरत थी।

अंग्रेजी (जी० एन० ९४१४) से; तथा सी० डब्ल्यू० ५३५८से भी।
सौजन्य : मीराबहन

१९४. पत्र : छगनलाल जोशीको

७ अप्रैल, १९२९

चि० छगनलाल,

तुम्हें बम्बईसे पत्र लिखा था।[1] वह पहुँच गया होगा। यह पत्र हैदराबादसे लिख रहा हूँ। किशोरलालने ह. . .[2] शा. . .[3] मिलनेकी सलाह दी है। इसलिए वह उसे मिलेगा। उसने मेरी अनुमति माँगी थी, सो मैंने दे दी है। तुम इसे लेकर परेशान मत होना। शान्त रहना। हमारे हाथों अन्याय न हो, इसके विषयमें हमें सावधान रहना है। हमारे साथ धोखा हो तो कोई बात नहीं; पर किसीके साथ अन्याय हो तो वह ठीक नहीं होगा। हमारे सावधान रहते हुए भी कोई पाप करता रहे तो उसके बारेमें हम निश्चिन्त रहें, क्योंकि उसमें हमारा कोई हाथ नहीं है। अधिक विस्तारसे लिखनेका समय नहीं है। इस समय मुझे भागना होगा। वामन नायक[4] मेरे सामने बैठा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५३९७)की फोटो-नकलसे।

१. देखिए "पत्र : छगनलाल जोशीको", ५-४-१९२९।
२ और ३. नाम नहीं दिये गये हैं।
४. आन्ध्र प्रदेशके एक प्रसिद्ध वकील।

१९५. पत्र : मीराबहनको

स्थायी पता :
सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
८ अप्रैल, १९२९

चि० मीरा,

कल मैंने हैदराबाद (दक्षिण)से तुम्हें एक पत्र भेजा था। मैं बैजवाड़ाके नजदीक पहुँच रहा हूँ, मगर अभी उससे दूर हूँ। हम एक छोटे गाँवमें हैं, जहाँ तारघर नहीं है। डाक बैजवाड़ासे यहाँ लाई गई है, अतः मुझे तुम्हारे दो पत्र, दूसरा और तीसरा, मिले हैं। अगर तुम पूरी तरह अच्छी नहीं हो सकतीं तो तुम्हें जलवायु परिवर्तन कर ही लेना चाहिए। तुम किसी समुद्रतट या पहाड़पर जा सकती हो।

अगर तुम जूनतक चला सको, तो शायद मेरे साथ अलमोड़ा चल सकोगी। जहाँतक मुझे मालूम है, जूनमें अलमोड़ेका कार्यक्रम रहेगा। तुम्हें दूसरे दर्जेमें सफर करना पड़ेगा। इस कमजोर हालतमें तुम्हें तीसरे दर्जेमें बैठानेमें मुझे डर लगेगा। मगर यह सब तो हवाई किले बाँधना हुआ। तुम्हारे लिए सबसे पहली चीज तो यह है कि अच्छी हो जाओ। फलोंपर खुले हाथों खर्च करना सच्ची किफायत है। तुम ताजे फलोंके बिना स्वास्थ्यकी रक्षा नहीं कर सकतीं। नींबू फलोंका राजा है। डा० राजबली मुझसे कहते थे कि एक नींबू छः नारंगियोंके बराबर है। मुझे इसपर विश्वास है। मगर तुम्हें जो भी फल पसन्द हों लेने ही चाहिए। कच्ची हरी पत्तियाँ अच्छी हैं, मगर उन्हें थोड़ा-थोड़ा ही लेना चाहिए। एक बारमें तोले भरसे अधिक नहीं और वह भी यदि उससे पेटमें गड़बड़ न होती हो। शायद तेल भी तुम्हें अनुकूल नहीं पड़ता। तुम्हें मुख्य ध्यान कोई सस्ती खुराक खोजनेका नहीं रखना है, बल्कि इस बातका रखना है कि हर साल पहाड़पर जानेकी आवश्यकता पड़े बिना देहातमें रह सको। इसलिए तुम्हारा ध्यान अपने प्रयोगको सफल बनानेपर केन्द्रित होना चाहिए, भले ही खर्च कुछ भी हो जाये। ज्यों ही मैं किसी तारघरवाले स्थान-पर पहुँचूँगा, त्यों ही तुम्हें तार दूँगा।[1] दोनों ही तरफ तारघर न होना कैसी बढ़िया बात है! मैं जानता हूँ कि मुझे तार देनेकी जरूरत नहीं है। अगर मैं सचमुच गरीब होता, तो तार नहीं दे सकता था। अगर मैं अधीर न होऊँ और ईश्वरपर पूरा भरोसा रखूँ तो मुझे तार नहीं देना चाहिए। मगर मैं यन्त्रवत् आचरण नहीं करूँगा। जब उतनी श्रद्धा आ जायेगी, तब मैं तार देनेका विचार छोड़ दूँगा। फिलहाल इतना ही काफी है कि यद्यपि तुम्हारी बीमारीके बारेमें पत्र आते हैं और यहाँ कोई तारघर नहीं है, फिर भी मैं बहुत अशान्त नहीं हूँ।

१. देखिए "तार : मीराबहनको", ९-४-१९२९।

मालूम होता है कि मेरी खुराक, तीसरे दर्जेका सफर और सतत कार्य-व्यस्ततासे मेरा स्वास्थ्य बढ़ रहा है। मुझे खुद आश्चर्य है कि अभीतक मेरा शरीर टूट क्यों नहीं गया। अलबत्ता, मैं बीच-बीचमें खूब आराम ले लेता हूँ और जब जीमें आये तभी नींद ले लेनेकी मेरी क्षमता मुझे बचा रही है। सच तो यह है कि जबतक ईश्वर मेरे शरीरकी रक्षा करना चाहता है, तबतक वह मुझे बचाता है। जिस क्षण उसकी जरूरत पूरी हो जायेगी, उस क्षण मेरी कोई सावधानी मुझे नहीं बचा सकेगी।

हाँ, नक्शेमें बैजवाड़ा देख लेना। पाँच-छः जिलोंका दौरा करना है।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० ९४१५)से; तथा सी० डब्ल्यू० ५३५९से भी।
सौजन्य : मीराबहन

१९६. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

मौनवार, ८ अप्रैल, १९२९

बहनो,

उद्योग मन्दिरमें हुई घटनाओंकी याद भुलाई ही नहीं जाती। सारी घटनाओंमें हिम्मतकी कमी देखता हूँ। जहाँ हिम्मत नहीं वहाँ सत्य हो ही नहीं सकता। भूल करनेमें तो पाप है ही, परन्तु उसे छिपानेमें उससे भी बड़ा पाप है। शुद्ध हृदयसे जो अपने-आप भूल कबूल कर लेता है, उसका पाप धुल जाता है और वह सीधे रास्ते लग सकता है। जो झूठी शर्म रखकर भूलको छिपाता है, वह गहरे गड्ढेमें गिरता है, यह हमने तमाम मामलोंमें देख लिया है। इसलिए मैं तो बहनोंसे यही माँगता हूँ कि तुम झूठी शर्मसे बचना। जाने या अनजाने बुरा हो जाये, तो फौरन जाहिर कर देना और दुबारा ऐसा न करनेका निश्चय कर लेना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो-१ : आश्रमनी बहेनोने

१९७. पत्र : छगनलाल जोशीको

मौनवार [८ अप्रैल, १९२९]

चि० छगनलाल,

आज बैजवाड़ा पहुँचना था किन्तु वेंकटप्पैया और उसके साथियोंने दूसरा ही निर्णय किया। बैजवाड़ाके इस ओर तीन स्टेशन पहले रातके तीन बजे मुझे उतार लिया और वहाँसे फौरन मोटरमें २० मील दूर एक जमींदारके गाँवमें ले आये। इस समय सुबहके नौ बजे हैं। रास्तेमें लगभग एक मील लम्बा नदीका रेतीला पाट पड़ा, मोटरको भैंसेसे जोतकर खींचना पड़ा। मैं तो खूब थका हुआ था। मोटरमें ही सो गया। हैदराबादसे भी तुम्हें पत्र लिखा था। मिला होगा।

शा. . . का[१] किस्सा उलझता जा रहा है। तुम धीरज रखना, घबराना नहीं। दूसरोंको इसकी चर्चा करनेसे रोकना। इस पूरे किस्सेसे हम सीख सकेंगे कि प्रेम क्या है। मोह और प्रेमका भेद समझेंगे और अपने आपको शुद्ध भी कर सकेंगे।

तुम्हारा कोई पत्र तो मिला नहीं है; इसलिए और कुछ नहीं लिख रहा हूँ। हैदराबादसे वामन नायककी हुंडी मिलेगी। उसे भी अभी रोककर रखना। इसमें भी किसी विशेष कामके लिए अंकित रकम थोड़ी ही रहेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५५६१)की फोटो-नकलसे।

१९८. तार : मीराबहनको

बैजवाड़ा
९ अप्रैल, १९२९

मीराबाई
खादी डिपो
मधुबनी

यहाँ पहुँचनेपर चार और पाँच के पत्र मिले, तार भी; ईश्वरको धन्यवाद है; जो भी खर्च हो दूध और नींबू जरूर लो। दो खुराकोंमें

१. नाम नहीं दिया गया है।

६ ग्रेन कुनैन, हर खुराकमें ३ ग्रेन, सोडा और नींबूके साथ लेनेकी सलाह देता हूँ। सस्नेह।

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० ९४१६)से; तथा सी० डब्ल्यू० ५३६०से भी।
सौजन्य: मीराबहन

१९९. तार: माधवजी वी० ठक्करको

बैजवाड़ा
९ अप्रैल, १९२९

इम्पॉर्टेन्स
कलकत्ता

खुशी हुई कि तुमने व्रत तोड़ दिया। सन्तरे और अंगूरका रस जारी रखो। तीन दिन उसमें पानी मिलाकर लो। उबला हुआ पानी ज्यादासे-ज्यादा पियो, पानी चाहे ठंडा हो या गरम, उसे चाहे सादा लो या नींबूका रस और नमक डालकर या फिर शहदके साथ। जमीनपर सोनेके बजाय ऊँचे पलंगका इस्तेमाल करो। वजन रोज लिया करो।

गांधी

अंग्रेजी (जी० एन० ६७७०)की फोटो-नकलसे।

२००. पत्र: मीराबहनको

स्थायी पता:
सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
९ अप्रैल, १९२९

चि० मीरा,

मैंने तुम्हें कल पत्र भेजा है। आज मैंने लगभग पूरे समाचार तारसे भेजे हैं। मुझे खुशी है कि इस समय तुम संकटसे मुक्त हो। परन्तु रोगके ये दौरे तुम्हारे लिए ऐसी चेतावनी हैं, जिनकी तुम्हें उपेक्षा नहीं करनी चाहिए।

हाँ, मुझे रोलाँके पत्रका अनुवाद जरूर मिल गया, मेरे खयालसे अहमदाबादमें मिला, कलकत्तेमें तो हरगिज नहीं। मुझे उम्मीद है कि मैं तुम्हारे पास जवाब भेजूँगा और तुम उसे अनुवादके साथ भेज देना।

तुम अपने शरीर या मस्तिष्कपर बेजा बोझ न डालना।

मैं अब भी तुम्हें अपना कोई निश्चित कार्यक्रम बतानेमें असमर्थ हूँ। स्वागत समिति अभीतक निश्चय नहीं कर पाई है कि वह मुझे कहाँ-कहाँ ले जायेगी। इसलिए सदर मुकाम बैजवाड़ा ही रहता है।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च :]

६ तारीखको[1] तुमने बुखारके कारण उपवास नहीं किया। मैं इसलिए न कर सका कि कामकी व्यग्रतामें याद ही नहीं रहा, हालाँकि पहले मुझे उसका खयाल था। दौड़ाभागी बुरी है। यह भुलक्कड़पन अच्छा लक्षण नहीं है।

अंग्रेजी (जी० एन० ९४१७)से; तथा सी० डब्ल्यू० ५३६१से भी।
सौजन्य : मीराबहन

२०१. पत्र : छगनलाल जोशीको

बैजवाड़ा
९ अप्रैल, १९२९

चि० छगनलाल,

कलकी डाक मिल गई होगी। यहाँ पहुँचनेपर तुम्हारे दो पत्र मिले। हम अपनी पूँजी नहीं गँवा बैठे हैं; उसमें जितनी खोट थी उतनी चली गई; इसमें शोक या दुख किस लिए? हमारा भार हलका हो गया। काम तो करेंगे ही। पाप किया था, इतना ही कहनेको बच रहे तो भी मान सकते हैं कि बहुत कमाया। डर तो इस बातका है कि पापका घड़ा पूरा नहीं फूटा है और फिरसे नहीं भरेगा इसका कोई भरोसा नहीं है। किन्तु ऐसा भरोसा दे कौन सकता है? हम तो प्रयत्न करते रहें; जहाँ बुराई दिखाई दे, उसे दूर करते जायें। जहाँतक लोग हममें विश्वास करेंगे, हम उनकी सेवा करते रहेंगे। सच तो यह है कि इससे लोगोंके स्नेहमें शायद ही कुछ परिवर्तन हो। शायद वे पहलेसे भी अधिक उदार हो बनें, जो होगा, उसे देख लेंगे।

. . . के[2] विषयमें मेरा पत्र मिला होगा। वह निर्दोष ही है, ऐसा मैं नहीं कह सकता। . . . के[3] बारेमें मुझे शंका नहीं है। . . . का मन विषयासक्त हो तो कहा नहीं जा सकता। पर उसपर यों शक नहीं कर सकते हैं। वह जो कहता है हमें उसीको मान लेना चाहिए। गोशालामें तो वह काम नहीं करेगा। किन्तु अब . . . [4]आ गया है इसलिए हमारा बोझ कम होगा।

१. राष्ट्रीय सप्ताहका प्रथम दिन जो १९१९ से मनाया जाता है।
२, ३, ४. पत्रमें नाम छोड़ दिये गये हैं।

छोटेलाल बेशक कश्मीर चला जाये। कहीं जानेके बाद ही वह शान्त होगा।

बा के बारेमें तुम्हें दुख करनेका कोई कारण नहीं है। उसके पास साहसपूर्वक जाकर तुमने आश्रमकी सेवा ही की है और साहस दिखाया है। पुत्रधर्मका पालन किया है। बा का तो उद्धार हुआ ही है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

प्रभुदासका सुन्दर पत्र आया है। साथ भेज रहा हूँ। सबको पढ़ाना। काका साहबको भेजना।

बापू

[पुनश्चः]

आनन्दशंकरभाईको थडानीकी टाइप की हुई पुस्तक भेज दी होगी।

गुजराती (जी० एन० ५३९९) की फोटो-नकलसे।

२०२. पत्र : माधवजी वी० ठक्करको

९ अप्रैल, १९२९

भाईश्री माधवजी,

तुम्हें आज मैं उपवास छोड़ देनेके लिए तार देने ही वाला था कि तुम्हारा तार मिल गया। छोड़ दिया है सो अच्छा किया। मैंने ब्योरेवार तार भेजा है वह मिला होगा। तुम पूरी तरह आराम तो कर ही रहे होओगे। मैंने हर रोज तार देनेके लिए कहा है। धीरज रखोगे तो शरीरमें ताकत आती जायेगी। कल तुम्हें ब्योरेवार पत्र भेजा है।[1] फिलहाल बैजवाड़ाके पतेपर ही लिखना।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजराती (जी० एन० ६७६९) की फोटो-नकलसे।

१. यह पत्र उपलब्ध नहीं है।

२०३. भाषण: नन्दीगाँवम

९ अप्रैल, १९२९

महात्माजीने कहा कि १९२० से यहाँ जो शान्ति बनी हुई है उसकी मुझे बहुत खुशी है। मेरे विचारमें तो स्वराज्यका अर्थ मनकी शान्ति तथा सब लोगोंके साथ शान्तिपूर्वक रहना है। बड़े शहरोंके लोगोंको सुधारना तो बहुत मुश्किल होता है लेकिन गाँवोंमें, जो मुझे गन्दे और उजड़े हुए दिखाई देते हैं, इसके बहुतसे अवसर हैं। जो लोग इन गाँववासियोंकी स्वच्छता तथा स्वास्थ्यके लिए उत्तरदायी हैं क्या वे इस कार्यकी ओर ध्यान नहीं दे सकते? मुझे आशा है -- और मेरा विश्वास है कि मेरी यह आशा निष्फल नहीं होगी -- कि सैकड़ों नवयुवक जो आजके दिन मेरे सामने इकट्ठा हुए हैं, इस कार्यमें सहयोग देनेके लिए आगे आयेंगे।

आपके यहाँ रुई उपलब्ध है और अपने अभिनन्दनपत्रोंमें आपने कहा है कि सब लोगोंको खद्दर ही पहनना चाहिए। यदि आप ऐसा ही करें भी तो इससे मुझे वास्तवमें बहुत खुशी होगी। यहाँ मुझे कुछ बहनें दिखाई दे रही हैं जिनमें से कुछ खादी पहने हुई हैं। सिर्फ कुछ ही क्यों खादी पहने हुई हैं? स्त्रियोंको भी पुरुषोंकी भाँति ही स्वराज्य तथा आत्म-शुद्धिकी प्राप्तिमें हिस्सा लेना चाहिए। मैं स्वराज्यकी बात नहीं बल्कि रामराज्यकी बात कह रहा हूँ। यदि सीता नहीं होगी तो रामराज्य भी नहीं होगा। यदि आप रामराज्य चाहती हैं तो आप सब सीताकी तरह बनिए। इतिहासके अनुसार सीता केवल खद्दर पहनती थीं और देशी वस्तुओंका ही प्रयोग करती थीं। इसी पवित्रताके कारण रावण सीताको छू तक नहीं सका था। सीताने अग्निप्रवेश किया लेकिन वह सुरक्षित रहीं। हिन्दू नारियाँ भी यदि प्रयत्न करें तो इतनी ही पवित्र बन सकती हैं।

आजकल लोगोंमें शराब पीनेकी बुरी आदत है। शराबी यह भेद नहीं कर पाता कि कौन उसकी माँ और कौन उसकी पत्नी है। यदि आप पवित्रता चाहते हैं तो शराब छोड़ दीजिए। आप तो बेशक यह जानते ही हैं कि स्वराज्यमें अस्पृश्यता नहीं होनी चाहिए।

आपने मुझे १,१७० रु० भेंट किये हैं। मैं जानता हूँ कि आप इससे भी अधिक दे सकते हैं। आन्ध्र देशमें पुरुष भी स्त्रियोंके समान आभूषण पहनते हैं। स्त्रियोंको बाहर निकलकर मुझसे मिलनेमें डर लगता है, क्योंकि जब वे आती हैं तो मैं उनके आभूषणोंको ही देखता हूँ। मैं उनसे आभूषण ले चुका हूँ। जब करोड़ों लोग भूखसे मर रहे हों तब दूसरे लोग आभूषण पहनें, यह ठीक नहीं है। उन्हें अपने सारे आभूषण दरिद्रनारायणको अर्पित कर देने चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १०-४-१९२९

२०४. तार : माधवजी वी० ठक्करको

बैजवाड़ा
[१० अप्रैल, १९२९][१]

इम्पॉर्टेन्स
कलकत्ता

बकरीके दूधमें पानी मिलाकर ले सकते हो। हर बार चार औंस लेना लेकिन तीन बारसे ज्यादा नहीं। अगर अंगूर और फलको भली प्रकार पचा सकनेका पूरा निश्चय न हो तो रविवार तक उससे परहेज करो।

गांधी

अंग्रेजी (जी० एन० ६७७१)की फोटो-नकलसे।

२०५. पत्र : मीराबहनको

१० अप्रैल, १९२९

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र मिला। चूंकि कोई तार नहीं आया है, इसलिए मैं मान लेता हूँ कि [बुखारका] थोड़ा-सा बढ़ जाना क्षणिक ही था। अधिक परिश्रम न करना। मेरी तबीयत अभीतक अच्छी है।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० ९४१८)से; तथा सी० डब्ल्यू० ५३६२ से भी।
सौजन्य : मीराबहन

१. डाककी मुहरसे।

२०६. पत्र : छगनलाल जोशीको

१० अप्रैल, १९२९

चि० छगनलाल,

तुम्हारा ७ तारीखका पत्र मिल गया है। जहाँ मन्दिरका खर्च घटाने लायक लगे वहाँ जरूर घटाओ। किसी भी विभागको जबरदस्ती बन्द करनेकी जरूरत नहीं है। कर्ज लेकर हमें कुछ काम नहीं चलाना है, इतना निश्चय कर लेना ही काफी है। मित्र मदद देना बन्द कर देंगे तो विभाग उसी घड़ी बन्द हो जायेंगे। हमारी बुराई सामने आ गई है, इससे डर जानेकी कोई बात नहीं है, सावधान रहनेकी है। 'नवजीवन'का लेख[1] लिखनेपर बोझ हलका हो गया है। मुझे नहीं लगता है कि अभी हम अपनी प्रवृत्तियाँ कुछ कम कर सकेंगे। . . .[2] जैसा या . . .[3] जैसा कोई किस्सा फिर हो जाये तो हो। इससे डरना नहीं है। ऐसा फिर न हो सके, इसके बारेमें सावधान रहें, तो काफी है। पाई-पाईकी रसीदें रखें। इतना तो अच्छा ही है कि . . .[4] ने शर्म-हया छोड़ नहीं दी और पैसा लेकर भाग नहीं गया। उसने जितनेकी चोरी की, उससे ज्यादा लौटा दिया है। . . .[5] ने सब शर्म छोड़ नहीं दी है; वह शायद अब पवित्र जीवन भी व्यतीत करे। . . .[6] का तो कुछ नहीं कहा जा सकता। हम पापोंमें कोई रस न लें तो सब ठीक हो जायेगा।

विनोबा या काकासाहबको इस सम्बन्धमें तकलीफ नहीं दी जा सकती। यदि कुछ हो सकता है तो यही कि तुम मेरी उपस्थितिका आग्रह करो। वहाँ जुलाई और अगर हो सके तो अगस्त, दो महीने रहनेकी व्यवस्था अभीसे कर रहा हूँ। तुम खुद हारना नहीं; हिम्मतसे काम लेना और जो कुछ हो सके करते रहना।

जयकरन तुम्हारी सुने बिना जाना चाहे तो जाने देना। जबतक तुम्हें ठीक न लगे तबतक उसकी मदद बेशक न करना।

रतिलाल और चम्पाका पत्र मुझे मिला है। तुम्हें पढ़नेके लिए भेज रहा हूँ। मेरा जवाब पढ़कर उन्हें भेज देना। उसमें जो लिखा है उसके अनुसार प्रबन्ध करना। यदि थोड़ा और देनेसे वे प्रसन्न होते हों तो वैसा करना। २०० रुपये तक प्रतिमास खर्च कर सकते हैं। किन्तु यदि हर मास इतना दें तो उनके पास मुसाफिरी आदिके लिए कुछ नहीं बचेगा।

योगेन्द्रबाबू जबतक चाहें रह सकते हैं। यदि जाना चाहें तो जाने देना। मुख्य बात तो उनकी पत्नीको कुछ आजादीसे रहना सिखाना है। वह तो उन्हें आसानीसे आ जायेगा।

१. देखिए "मेरा दुःख, मेरी शर्म", ७-४-१९२९।

२ से ६. नाम नहीं दिये गये हैं।

क्या बर्माका रुपया भाई शंकरलालको भेजा है।

अपने स्वास्थ्यका ख्याल रखते होगे। दूध-घी की जितनी जरूरत हो उतना लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५४००)की फोटो-नकलसे।

२०७. पत्र : राधाबहन गांधीको

१० अप्रैल, १९२९

चि० राधिका,

मैं तुम्हारे स्वास्थ्यकी चिन्ता निरन्तर किया करता हूँ। तुम्हें अपने शरीरका अच्छी तरह निरीक्षण करके उसे स्वस्थ बनाना चाहिए। अपनी शक्तिसे बढ़कर काम तो कभी न करना। तुम्हारा मन शान्त होगा। क्या केशुका पत्र नियमपूर्वक आता है? पत्र लिखनेमें वह बहुत आलसी माना जाता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८६७५)से।
सौजन्य : राधाबहन चौधरी

२०८. भाषण : बैजवाड़ाकी सार्वजनिक सभामें

१० अप्रैल, १९२९

भाइयो और बहनो,

मेरी आपसे प्रार्थना है कि आप शान्त रहें। मैं आप सबको तथा उनको जिन्होंने मुझे अभिनन्दनपत्र भेंट किये हैं धन्यवाद देता हूँ। सभी अभिनन्दनपत्र मातृ-भाषामें ही लिखे हैं। इसके लिए भी मैं आपको बधाई देता हूँ, क्योंकि यह भाषा भी भारतकी राष्ट्रभाषा हिन्दीकी तरह ही है। आपने अभिनन्दनपत्रोंको पढ़कर सुनाये बिना ही मुझे स्वीकार करनेकी अनुमति दे दो, इससे मुझे खुशी हुई। आन्ध्र देशसे मुझे बहुत स्नेह है। आपकी विनम्रताको देखकर मुझे आश्चर्य नहीं हुआ बल्कि एक तरहसे खुशी ही हुई। मैं आपको अभिनन्दनपत्र भेंट करनेका एक बढ़िया तरीका सुझाऊँगा। मैं आपके सामने निर्धनों तथा दलितोंके प्रतिनिधिके रूपमें खड़ा हूँ। जबकि मैं आपके पास गरीबोंका प्रतिनिधि बनकर आया हूँ उस हालतमें अभिनन्दनपत्रोंको तैयार करनेमें हुए खर्चको देखकर मुझे पीड़ा होती है। यदि ये अभिनन्दनपत्र हस्तलिखित होते या फिर वे ताड़पत्रोंपर अंकित होते तो मुझे ज्यादा खुशी होती।

मेरे प्रति आपका स्नेह अत्यन्त सच्चा है और मुझे लगता है कि मैं उसे सहन करनेके नाकाबिल हूँ। अभिनन्दनपत्रका अनुवाद मैंने पढ़ लिया है, और मेरे विचारमें तो उसमें चापलूसी ज्यादा है और आपकी खास-खास जरूरतोंका, जिनसे कि आप परेशान हैं, वर्णन बहुत कम। मैं तो यह जानना चाहता था कि आपकी क्या परिस्थितियाँ हैं, आप किस प्रकार रहते हैं, और जो लोग आपकी सहायता कर सकते थे वे आपकी क्या सहायता करते हैं।

आजकल राष्ट्रीय सप्ताह है जिसमें से चार दिन बीत चुके हैं। यह सप्ताह आत्म-शुद्धि तथा राष्ट्रीय प्रयत्नका सप्ताह है। इस महीनेकी १५ तारीखतक हमें राष्ट्रीय उत्साहका एक उच्च स्तर बनाये रखना है। १३ अप्रैलका दिन हमारे लिए सारे राष्ट्रको जनरल डायरकी करतूतोंकी याद दिलानेवाला दिन है। अब हमें बुद्धि-रूपी चेतना तथा अनुभव रूपी सामर्थ्यकी आवश्यकता है। कांग्रेसने आपसे कहा है कि आप देशके लिए अपनी सामर्थ्य-भर थोड़ा-बहुत काम करें। कांग्रेसके तो केवल दो ही आदेश हैं— विदेशी वस्त्रका त्याग तथा खद्दर पहनना; और इस समय कोई भारत-वासी इससे ज्यादा कुछ नहीं कर सकता। इस कर्यक्रमने सब भारतीयोंको राष्ट्रीय जागृतिमें हिस्सा लेनेका एक अवसर प्रदान किया है। खद्दरको स्वीकार करना हरएकके लिए आसान है। यदि आन्ध्र देश खद्दरपर अटल रहा और उसके लिए काम करता रहा तो आप लोगोंने महान् राष्ट्रीय सेवा की है, ऐसा माना जायेगा। १९२१ में पहली बार बैजवाड़ामें तैयार किये गये राष्ट्रीय कार्यक्रमने सारे देशका ध्यान अपनी ओर खींचा था और बैजवाड़ाको इसपर गर्व करना चाहिए। अब मैं आपसे पूछता हूँ कि १९२१ से लेकर अबतक आपने क्या किया? आपमें साहस है, बुद्धि है। लेकिन आपमें ऐक्यकी कमी है। अभी आपने मिल-जुलकर काम करना नहीं सीखा है। मेरी आपसे प्रार्थना है कि आप मिल-जुलकर काम करें, खद्दरका प्रचार करें तथा विदेशी वस्त्रके विरुद्ध मोर्चा संभाल लें।

इस मौकेपर ईसाई, हिन्दू, पारसी और मुसलमान, सबको हाथ बँटाना चाहिए। इस विषयपर मेरे बहुत-कुछ कहनेकी जरूरत नहीं है। उत्तर भारतमें हिन्दुओं और मुसलमानोंमें बहुत वैमनस्य है। महाशय राजपालकी हत्याने स्थितिको और विकट रूप दे दिया है। एक मुसलमानकी कायर करतूतने हिन्दुओंको मुसलमानोंके विरुद्ध कर दिया है। एक हिन्दू होनेके नाते, मेरी आपसे प्रार्थना है कि आप मुसलमानोंके प्रति कोई दुर्भाव न रखें। महाशय राजपालकी हत्या करके न तो हत्यारेको कोई लाभ पहुँचा है और न इससे इस्लामका ही कोई फायदा हुआ है। पहले भी ऐसी घटनाएँ हो चुकी हैं। जब दिमागमें पाप और वासना भरी होती है, तब वे प्रकट होकर ही रहते हैं। हमें चाहिए कि हम अपने दिमागोंसे बदला लेनेकी भावना निकाल दें।

विधान सभामें भी इसी तरहका एक जघन्य अपराध किया गया है। इस अपराधके कारण स्वराज्य एक पग पीछे हट गया है। जिन दो नवयुवकोंने बम फेंका था उन्होंने आपके राष्ट्रीय आन्दोलनकी प्रगतिमें बाधा पहुँचाई है। कांग्रेस सदस्योंको अपने ऊपर लगे हिंसाके कलंकको धो डालना चाहिए। दिल्लीके ये दो पागल नवयुवक

बहुत-कुछ राजपालके हत्यारेकी तरह हो हैं। हमें इन भूलोंसे हतोत्साहित नहीं होना चाहिए। इस सप्ताहके दौरान हमारा कर्त्तव्य है कि हम अपनेको शुद्ध करें। मुझे दुख है कि श्री साम्बमूर्ति हमारे बीच नहीं हैं और इस समय मुझे आन्ध्र-रत्न डी० गोपालकृष्णय्याका भी स्मरण हो आया है, जो अब नहीं रहे। हमारे साथी हमारे साथ रहें या हमसे बिछुड़ जायें, लेकिन जो-कुछ वे छोड़कर गये हैं उसको आगे जारी रखनेका भार तो अब भी हमपर ही है। कांग्रेसने खद्दर और मद्यपानके सम्बन्धमें जो आदेश दिये हैं उनका अवश्य पालन होना चाहिए। एक अभिनन्दनपत्रमें इस बातका संकेत किया गया है कि हम धीरजके साथ प्रतीक्षा करते रहे और फिर भी सरकार कुछ नहीं कर सकी। सरकारसे प्रार्थना करने तथा उसे याचिकाएँ देनेसे हमारा कोई लाभ नहीं होनेका है। हमारा सम्बल तो आत्मनिर्भरता होना चाहिए, सरकारसे प्राप्त होनेवाली किसी प्रकारकी सहायता नहीं। उस कामके लिए हमें अहिंसामें प्रशिक्षित स्वयंसेवकोंकी जरूरत है।

और फिर अस्पृश्यताकी समस्या है। नगरोंकी अपेक्षा गाँवोंमें बाधाएँ कहीं ज्यादा और कहीं अधिक प्रबल हैं। हमारे नवयुवकोंको चाहिए कि वे गाँवोंमें काम करके अस्पृश्यताको दूर करें। गाँवोंमें उनका शुद्ध जीवन गाँववासियोंके अनुकरणके लिए एक उदाहरण साबित होगा। खद्दरके लिए आपने मुझे २,५०० रुपये दिये हैं लेकिन ये तो बहुत थोड़े हैं। बैजवाड़ा तो इससे ज्यादा दे सकता है। जो अच्छे कार्य मुझे सौंपे गये हैं उनको पूरा करके मैं आजकी सभाका समापन करूँगा। अब मैं बड़े हर्षके साथ श्री कृष्णदेव रायके चित्रका अनावरण करता हूँ। इसके बाद मैं उच्च-स्तरीय जलाशयका उद्घाटन करनेमें खुशीका अनुभव कर रहा हूँ। मैं इस जलाशयको देख चुका हूँ और नगरपालिकाको धन्यवाद देता हूँ कि उसने मुझे जलाशयका उद्घाटन वहीं जाकर करनेसे बरी कर दिया। जो काम मैं पाँच या दस साल पहले किया करता था आज उसे करनेमें मुझे दिक्कत होती है। आज तो मैं उस कामका अंश मात्र ही कर सकता हूँ। मैं नगर-परिषदका आभारी हूँ कि उसने मेरी असमर्थताके लिए तथा मेरी अनुपस्थितिके लिए मुझे क्षमा कर दिया है। हमारे धर्म-ग्रन्थोंके अनुसार लोगोंको पानीकी सुविधाएँ प्रदान करनेका कार्य एक पुण्य कार्य है। भारत जैसे गर्म देशमें तो जलाशयका होना जरूरी है। मुझे विश्वास है कि इससे शहरके गरीबोंको पानी सबसे पहले प्राप्त होगा। आपने मेरी बातको धैर्यपूर्वक सुना इसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ और यह देखकर मुझे खुशी हुई कि इन इलाकोंमें हिन्दी प्रचारका कार्य कमोबेश ठीक तरह चल रहा है। फिर भी इसके प्रसारकी काफी जरूरत है। इसकी ऐसी प्रगति हो जानी चाहिए कि आगेसे आपको हिन्दी भाषणका अनुवाद सुनानेकी फिर जरूरत न पड़े। आशा है आप खादी कोषमें अपनी सामर्थ्य-भर चंदा देंगे। मेरी आदत है कि जो अभिनन्दनपत्र तथा बहुमूल्य वस्तुएँ मुझे मिलती हैं मैं उन्हें नीलाम कर देता हूँ। नुज्वीड़में मुझे तीन अभिनन्दन-पत्र भेंट किये गये थे, जिन्हें नीलाम करनेपर मुझे ६० रुपये प्राप्त हुए। मैं आपको एक बार फिर धन्यवाद देता हूँ।

मेरे पास अभी एक तीसरा काम बकाया पड़ा है, और मैं बड़ी प्रसन्नतापूर्वक अपंग निर्धनोंके लिए एक औद्योगिक केन्द्रका उद्‌घाटन करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ११-४-१९२९

२०९. डेकके मुसाफिर

मैंने रेलगाड़ीके तीसरे दर्जेमें और समुद्री जहाजके डेकपर फिरसे मुसाफिरी करना शुरू कर दिया है। फलस्वरूप पुराने अनुभव थोड़े फेरबदलके साथ फिरसे ताजा हो रहे हैं। जब मुझे लोग बिल्कुल नहीं जानते थे, उस समय मैं आसानीसे लोगोंमें हिलमिल जाता था और उनके सुख-दुखमें भी पूरी तरह भागीदार होता था। अब मैं एक प्रतिष्ठित 'अछूत' बन गया हूँ। अब लोग कर्त्तव्य समझकर मेरे लिए जगह बना देते हैं और मुझे ऐसी सहूलियतें देते हैं, जैसी मेरे दूसरे साथी मुसाफिरोंको नहीं देते। इसलिए जब बर्मा जाते समय मैं एस० एस० 'एरोंडा' जहाजपर चढ़ा और उसके तीसरे दर्जे (डेक)का मुसाफिर बना तो मुझे अपने सब साथियोंसे अलग कर दिया गया। बर्मा जाते समय जहाजके अधिकारियोंने भी यात्रियोंसे मुझे अकेला छोड़ देनेके बारेमें थोड़ी गुफ्तगू-सी कर ली थी। उन्होंने डेककी दूसरी सलूनवाला कुछ भाग मेरे लिए अलग रख दिया था और उनका आग्रह था कि मैं उसी सलूनके पाखानोंका इस्तेमाल करूँ। इस कारण डेकपर मुसाफिरी करनेवालोंको क्या-क्या अड़चनें होती हैं, मैं उन्हें बहुत कम जान पाया। बर्मासे वापस आते समय भी संयोगवश उसी जहाजपर आना पड़ा था, लेकिन इस बार जहाजके अधिकारियोंने कोई खास इन्तजाम नहीं किया था, फलस्वरूप मैं डेकके मुसाफिरोंके बीच जा पड़ा था, उनमें हिल-मिल सका था। इसमें शक नहीं कि महात्मापन के कारण यहाँ भी सामान्य यात्रियोंके अनुभवोंसे मैं वंचित ही रहा, फिर भी मैं लोगोंकी कठिनाइयोंमें काफी-कुछ भागीदार बन सका। इस बार मुझे जहाजके सबसे निचले दर्जेकी यात्राके बारेमें जो अनुभव मिला उसके आधारपर मैं कह सकता हूँ कि रेलगाड़ीकी भाँति जहाजोंमें भी सन् १९१५ और १९२९ की मुसाफिरीके बीच मुझे कोई खास फर्क नहीं दीख पड़ा। इस बार भी जहाजमें मैंने पहले जैसा ही शोरगुल देखा, वैसी ही लापरवाही या उपेक्षा देखी, वैसी ही भीड़-भाड़, वैसी ही गन्दगी और बदबू देखी। 'एरोंडा' जहाजपर मैंने देखा कि मुसाफिरोंके लिए सुरक्षित जगहमें मोटरगाड़ियाँ, मुर्गे-मुर्गियाँ और मवेशी भर दिये गये थे। मुसाफिरोंकी भलाई और उनकी भावनाओंकी ऐसी घोर उपेक्षासे मुझे बहुत दुख हुआ। वास्तवमें मैंने देखा कि जहाजके मालिक लोग मानव-यात्रियोंके मुकाबले अन्य माल तथा पशु-पक्षियोंकी ज्यादा अच्छी देखभाल करते हैं। क्योंकि अगर उनकी सार-सँभालमें लापरवाहीसे काम लिया जाये तो जहाजके अधिकारियोंको उनकी वजहसे आर्थिक नुकसान होनेका डर बना रहता है। जहाजके पाखाने इतने गन्दे थे कि उनका बयान नहीं किया जा सकता। पाखानोंतक पहुँचनेमें मेरी बुरी तरह परीक्षा हो जाती थी;

क्योंकि वहाँ जानेका गलियारा पेशाबकी बदबूसे भरा होता था, और किसी तरह पाखानेमें पहुँचनेपर मैं देखता था कि पाखानेका दरवाजा आधा भी बन्द नहीं होता।

अपनी जिस लाचारीका जिक्र मैं ऊपर कर चुका हूँ, उसके कारण मैं खुद तो जाँच कर नहीं सकता था, इसलिए मैंने अपने एक साथीसे कहा कि वह सारे जहाजके डेक-विभागकी होशियारीसे जाँच कर जाये और उसकी मुख्तसर रिपोर्ट मुझे दे। उनकी रिपोर्ट नीचे देता हूँ :

> एस० एस० 'एरोंडा' जहाजके डेक-विभागमें करीब १,५०० मुसाफिरोंके बैठनेका इन्तजाम है, लेकिन भीड़-भाड़के दिनोंमें इस मर्यादाका कोई ख्याल नहीं रखा जाता। इन १,५०० मुसाफिरोंके उपयोगके लिए सारे डेकपर आदमियोंके लिए दो छोटे-छोटे स्नान-घर और ४ पाखाने हैं और स्त्रियोंके लिए भी दो वैसे ही स्नान-घर और ८ पाखाने हैं। इस तरह प्रति ७५ मुसाफिरोंपर एक पाखाना और प्रति ३७५ यात्रियोंपर एक स्नान-घरका औसत आता है।
>
> स्नान-घरोंमें समुद्री-जलका एक नल है, ताजे-मीठे पानीका कोई नल नहीं है, न नहाते वक्त सूखे कपड़ोंको रखनेका कोई सुभीता है। स्नान-घरोंमें यों तो कोई साँकल ही नहीं है और जो हैं वे टूटी हुई हैं। एक स्नान-घरका तो आंशिक रूपसे पेशाब-घरकी तरह उपयोग भी किया जाता है और शायद उसे बन्द रखनेकी कोई जरूरत नहीं समझी गई है। इस कमरेका दरवाजा हमेशाके लिए एक रस्सीके जरिये खूँटीसे बाँध दिया गया है, जिससे जहाजके डगमगाने और झोंके खानेके समय वह टकराकर आवाज न कर सके। कमरेकी जितनी जगह पेशाब-घरका काम देती है वह बिलकुल खुली है, और शेष स्नान-घरसे उसे अलग करनेके लिए बीचमें कोई परदा या आड़ नहीं रखी गई है।
>
> स्नान-घरकी तरह ही पाखानोंकी साँकलें भी टूटी हुई हैं। पाखाने जिस ढंगसे बनाये गये हैं, उसमें सुधारकी बहुत-कुछ गुंजाइश है। पाखानोंके हरएक वर्गके सामने एक छोटा-सा संकरा गलियारा है, यही स्नान-घरका भी रास्ता है। पाखानोंका गन्दा पानी और पेशाब इस रास्तेमें बहता रहता है, और नालियोंके खराब होनेके कारण यह सारा दूषित पानी जहाजके झोंकोंके साथ-साथ फर्शपर इधर-उधर दौड़ता रहता है।
>
> जहाजका सबसे निचला डेक काल-कोठरीसे किसी कदर कम नहीं है। वह इतना अन्धेरा, गन्दा, और गर्म है कि उसमें दम घुटने लगता है। बिजली-की रोशनी तमाम वक्त जलाई जाती है। समुद्री हवाके आने-जानेका कोई खुला रास्ता उसमें नहीं है। हवा आनेके लिए जो दो-एक नामलेवा मार्ग हैं वे दो छोटी चिमनियों और छतके एक वर्गाकार सूराखके रूपमें हैं, जो ऊपरी डेकपर खुलते हैं। कूड़ा-करकट और रद्दी फेंकनेके लिए न तो टोकरियाँ हैं

और न कोई दूसरा इन्तजाम ही है। इस कारण मुसाफिर जहाजके फर्शपर ही थूकते हैं, पानकी पीक थूकते हैं, नारंगीके छिलके और दूसरी रद्दी चीजें डालते हैं। मेरी रायमें यह डेक मनुष्योंके बजाय ज्यादासे-ज्यादा मवेशियोंका बाड़ा हो सकता है।

मुख्य डेकका सबसे अगला हिस्सा कभी-कभी आंशिक रूपसे मवेशियोंके बाड़ेके रूपमें प्रयुक्त किया जाता है, जैसा कि जब हम पिछली बार कलकत्तासे रंगून गये थे तब किया गया था। मवेशियोंके इस बाड़े और मुसाफिरोंके स्थानके बीच लकड़ीकी पटियोंकी एक बाड़ लगा दी गई है। इसी तरह जहाजके पिछले हिस्सेमें छायादार डेकपर एक पिंजरा है, जिसमें भेड़, बकरी, बत्तख और मुर्गा-मुर्गी वगैरा रखे रहते हैं। यह स्थान इतना गन्दा और दुर्गन्धपूर्ण है कि उसके आसपास भी खड़ा हो सकना नामुमकिन है।

इस जहाजमें तीसरे दर्जेके मुसाफिरोंके लिए दवाखानेका कोई इन्तजाम नहीं दीख पड़ता। अगर तीसरे दर्जेका कोई मुसाफिर बीमार पड़ जाये या कोई संक्रामक रोग फैल जाये तो मरीजोंको अलग रखनेकी कोई खास व्यवस्था भी इसमें नहीं है।

एस० एस० 'एरोंडा' जहाज जिस कम्पनीका है वह दुनियाकी सबसे बड़ी कम्पनियोंमें से एक है। अतः अगर वह चाहे तो डेकके मुसाफिरोंके आरामके लिए अच्छा और सुन्दर इन्तजाम कर सकती है। पहली और दूसरी सलूनमें तो इस तरहके बढ़ते हुए सुधार मैं देख सका था, हालाँकि स्पष्टतः मैं उनकी ध्यानपूर्वक जाँच नहीं कर सकता था। जो परिवर्तन हुए थे वे इतने स्पष्ट थे कि स्वतः नजरमें आते थे। ऐसी हालतमें कोई वजह नहीं है कि डेकपर मुसाफिरी करनेवाले लोगोंके, जिनसे वस्तुतः जहाज कम्पनीको सलूनके यात्रियोंके मुकाबले ज्यादा पैसा प्राप्त होता है, सुख और आरामके लिए अच्छे स्थानका इंतजाम न किया जाये। मुसाफिरोंने मुझसे कहा था कि सालके इन दिनोंमें तो डेकपर सफर करना उतना कठिन नहीं होता, लेकिन बरसातके दिनोंमें, जब कि ऊपरी डेक लगभग बेकाम हो जाता है, मुसाफिरोंको अवर्णनीय कष्ट सहने पड़ते हैं; उनमें से अधिकांश तो बीमार पड़ जाते हैं और कई तो यात्राकी तकलीफोंके कारण प्राण छोड़ देते हैं। किसी भी जहाजरानी कम्पनीके लिए यह एक कलंक है; पी० ऐंड ओ० और बी० आई० एस० एन० कम्पनियों जैसी पैसेवाली और दुनिया-भरमें मशहूर कम्पनीके लिए तो यह दोहरे कलंककी बात है। जहाजके मालिकों और मैनेजरोंको यह समझ लेना चाहिए कि दिन-ब-दिन डेकपर मुसाफिरी करनेवाले पढ़े-लिखे और चतुर लोगोंकी संख्या बढ़ती जा रही है। कम्पनीका यह फर्ज है कि वह उनकी जरूरतों और उम्मीदोंको पूरा करनेका इन्तजाम करे।[1]

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ११-४-१९२९

१. कम्पनीके उत्तर तथा उससे सम्बन्धित गांधीजीके विचारोंके लिए देखिए "बी० आइ० एस० एन० कम्पनी द्वारा प्रतिवाद", २५-४-१९२९ और "एक कुत्सित दोषारोप", २-५-१९२९।

२१०. आवारा कुत्ते

संयुक्त प्रान्तके एक हाई स्कूलके मैनेजर लिखते हैं:

> **एक सार्वजनिक महत्त्वके मामलेमें मैं आपकी राय जानना चाहता हूँ। मेरा मतलब नगरपालिकाओं द्वारा उन कुत्तोंको मरवा डालनेसे है, जो यों ही भटकते फिरते हैं। इनकी वजहसे, खासकर रोगी कुत्तोंके कारण, आदमियोंको जो हानि उठानी पड़ती है वह बड़ी दुखद है। इनसे किसी तरह बचनेका उपाय खोज निकालनेकी बड़ी भारी जरूरत है। मैं इस बारेमें आपकी राय इसलिए ले रहा हूँ कि लोग इस मामलेको हिंसा-अहिंसाका सवाल मानते हैं।**

मेरे विचारमें, ऐसे कुत्तोंको मारना हिंसाकी गिनतीमें तो आ जाता है, लेकिन अगर हमें इससे भी बड़ी हिंसासे बचना है तो मैं इसे एक अनिवार्य हिंसा समझता हूँ। हरएक कुत्तेका अपना मालिक होना चाहिए और उसके गलेमें पट्टा भी। मैं कुत्तोंका लाइसेन्स जारी करनेका सुझाव दूँगा। जिन कुत्तोंका लाइसेन्स नहीं है, वे सब पुलिस द्वारा पकड़ लिये जायें और 'महाजन' के सुपुर्द कर दिये जायें, बशर्ते कि उसके पास उनके पोषणका पूरा इन्तजाम हो और वह इस मामलेमें नगरपालिकाकी अपने ऊपर देखरेखको मंजूर करता हो। अगर यह न हो सके तो ऐसे सब कुत्ते गोलीसे मार डाले जायें। कुत्तोंके उपद्रवका इलाज करनेका, मेरे विचारमें, यह सबसे अच्छा मानवीय तरीका है। लोग कुत्तोंकी समस्याको महसूस तो करते हैं, लेकिन उससे निपटनेकी या तो चिन्ता नहीं करते या साहस नहीं करते। लोगोंमें सामान्य उदासीनताका जो वातावरण दिखाई पड़ता है, सरकार द्वारा अहस्तक्षेपकी नीति भी उसी ढरपर चल रही है। लेकिन मेरी रायमें इस तरहकी उदासीनता स्वयं एक तरहकी हिंसा है, और अहिंसामें विश्वास रखनेवाला कोई भी आदमी इन मसलोंको उदासीनताकी निगाहसे नहीं देख सकता, फिर वे चाहे जितने मामूली क्यों न हों, बशर्ते कि उनका उपाय अहिंसाके सिद्धान्तपर करना हो। अगर अहिंसाके महासिद्धान्तको ठीक-ठीक समझना है तो हमें गम्भीर भूलें करनेका खतरा उठाकर भी निडर होकर उन समस्याओंका सामना करना चाहिए।[1]

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ११-४-१९२९

१. आवारा कुत्तोंके प्रश्नपर गांधीजीके विचारोंके लिए खण्ड ३१ और ३२ में प्रकाशित "क्या यह जीवदया है?" शीर्षक लेखमाला भी देखिए।

२११. विधान सभामें मद्य-निषेध

विधान सभाके सदस्य पूर्ण मद्य-निषेधके प्रश्नपर ध्यान दे रहे हैं, यह एक स्वस्थ लक्षण है। मेरे दिमागमें जो दृष्टान्त है वह सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदासका है। चालू वर्षके वित्त विधेयकपर विचार करनेसे सम्बन्धित प्रस्तावपर दिये गये उनके भाषणमें से मैं निम्नलिखित रोचक उद्धरण नीचे दे रहा हूँ।[१]

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ११-४-१९२९

२१२. तार: माधवजी वी० ठक्करको

बैजवाड़ा

[११ अप्रैल, १९२९][२]

इम्पॉर्टेन्स

कलकत्ता

वर्णनसे तो प्रकट होता है कि तुमने जरूरतसे ज्यादा खाया है। अब केवल फलोंके रसमें पानी मिलाकर लो। दो दिनतक गूदा और दूध बिलकुल मत लो। यदि जरूरत पड़े तो चिकित्सककी सलाह ले लेना।

गांधी

अंग्रेजी (जी० एन० ६७७२)की फोटो-नकलसे।

२१३. पत्र: छगनलाल जोशीको

११ अप्रैल, १९२९

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला है। अब क्या करना है, इस विचारसे मिलनेकी कोई जरूरत नहीं है। मिलो भी तो करनेके लिए बात तो एक ही है। हम नालायक हैं, यह बात कहकर उठ जाओगे तो अन्तमें निराशा ही बाकी रह जायेगी। किसी विशेष मुसीबतको सुलझानेके लिए, जरूरी प्रस्तावपर विचार करनेके लिए मिलें तो ठीक माना जायेगा। ध्यानसे सोचें तो प्रस्ताव करनेकी भी जरूरत नहीं है। सिर झुका कर अपना कर्त्तव्य करता जाये, और विपत्तिपर उसका इलाज कर ले, यही योद्धाका काम है। हम सब अनीतिसे संघर्ष करनेवाले योद्धा हैं। जो-कुछ करना था वह हम

१. उद्धरण यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें पुरुषोत्तमदास ठाकुरदासने भारतमें मद्य-निषेध लागू करनेके लिए वित्त सदस्यसे जोरदार अपील की थी।

२. डाककी मुहरसे।

कर चुके हैं। अपनी बुराई प्रगट कर दी है। दो नियम बना दिये हैं। सब अपना-अपना हृदय टटोल रहे हैं। इतना ही काफी है। 'रामायण' और 'गीता' के सम्बन्धमें मेरा लेख[1] 'नवजीवन' में है, उसपर विचार करना। उलटे-सीधे किसी भी तरीकेसे विषयोंका ध्यान न करें। इसीका नाम असहयोग है। जबतक मैं जीवित हूँ, जागृत हूँ, तबतक जितनी स्वतन्त्रता तुम लोगोंको अभी है, उससे ज्यादा नहीं मिलेगी। इसलिए मुझे पूछे बिना काम चले तो जरूर चलाओ। कुछ पूछना पड़े तो पूछ भी लेना। मुझपर दया करके कोई भी बात छुपाई न जाये।

एक बात तो मैं सचमुच देख रहा हूँ। मैं स्वयं असत्यको निभा रहा हूँ। यह बात मुझे चुभती है। आजकल यहाँ 'गीता' का कोई जानकार नहीं है। प्यारेलाल, सुब्बैया और प्रभावती पढ़ सकते हैं; उनसे बारी-बारीसे पढ़वाता हूँ। मेरी दृष्टिमें तीनों इसमें पास नहीं हुए; इसका मुझे खेद है। आजकल सुब्बैया छुट्टीपर है। प्रभावतीका दोष तो क्षम्य है; पर प्यारेलाल और सुब्बैयाको क्या कहें? वे मेरे पास वर्षोंसे रह रहे हैं; मैं 'गीता' का प्रेमी हूँ और वे मेरे प्रियजनोंमें से हैं। किन्तु मैंने उनके गीता-पाठ और कताईकी तरफ कभी ध्यान नहीं दिया। फिर उन्होंने भी नहीं दिया, इसमें उनका दोष क्यों मानूँ? प्यारेलालकी अंग्रेजी खराब हो तो उसे कभी आगे न जाने दूँ। अपने लिए पढ़वाते समय 'गीता' का उसका उच्चारण सुनता हूँ तो मन ही मन दुखी हो जाता हूँ। वह रोज कताई नहीं करता; पर क्या मैं कताई करवाता हूँ? उसे भाषण देकर बैठ जाता हूँ। आश्रम मेरी सबसे बड़ी कृति है और मैं उसीसे दूर रहता हूँ। मैं देखता हूँ कि इस प्रकार मैं स्वयं असत्यका आचरण कर रहा हूँ। फिर आश्रममें चोरी हो या व्यभिचार, तो उसमें अजब क्या है?

इसलिए तुममें से किसी औरके विचार करनेके बजाय मेरा विचार करना सबसे ज्यादा जरूरी है। किन्तु इस आत्मनिन्दासे क्या लाभ? मैं मानता हूँ कि अपनी त्रुटियोंको पूरी तरह परखनेकी शक्ति मुझमें है। उनपर पार पानेका प्रयत्न करता रहता हूँ।

इस आत्मनिन्दाका हेतु यह है:

(१) वहाँ 'गीता' के उच्चारण और अर्थपर जोर देना।

(२) कताई यज्ञके विषयमें सावधान रहना।

(३) रसोई घरको अच्छी तरह सँभालना।

ये तीनों सार्वजनिक कार्य हैं और हम सबके लिए अनिवार्य हैं। गोशालाके काममें सब लोग भाग नहीं ले सकते, खेतीमें सब नहीं लग सकते। ऊपरके तीनों कामोंमें सबको भाग लेना है। इसलिए इन तीनोंपर जोर दिया है। यदि इनमें असत्यको स्थान नहीं मिलेगा तो हम बच जायेंगे। हम इन्हें सरल भावसे करेंगे तो उसका असर दूसरी सभी बातोंपर जरूर पड़ेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५४०१) की फोटो-नकलसे।

१. देखिए "गीता और रामायण", १४-४-१९२९।

२१४. पत्र : माधवजी वी० ठक्करको

११ अप्रैल, १९२९

भाई माधवजी,

तुम्हारा तार मिल गया है। मैं ताज्जुबमें पड़ गया हूँ। कलके तारने भी हैरान कर दिया था। दूध बहुत जल्दी लेना शुरू कर दिया और ग्रेपफ्रूटमें उपवासीको पच सकनेकी दृष्टिसे अधिक 'प्रोटीन' है। लगता है कि मुनक्का और सन्तरे भी बहुत जल्दी शुरू कर दिये गये थे। इसीलिए आज चेतावनी भेजी है।[1] फिलहाल इसके अतिरिक्त और कुछ हजम करने योग्य पाचन-शक्ति नहीं है। उपवास करनेकी अपेक्षा उपवास छोड़नेमें ज्यादा चतुराईकी जरूरत है। कई लोगोंमें तदनुकूल धीरज नही होता। तुम्हारा वजन भी एकदम बहुत बढ़ गया मालूम होता है। किन्तु चिन्ताका कोई कारण नहीं है। अब समझ गये होगे। रस भी धीरे-धीरे और थोड़ा-सा पीना। चुस्की लें या चाटें; खानेपीनेकी तरह जल्दबाजी न करें। चम्मचसे धीरे-धीरे लें। दूसरे तारकी राह देख रहा हूँ। वह तो कल ही मिलेगा। आज शामसे बैंजवाड़ाके आसपास चक्कर शुरू होगा। तुम्हारा तार मुझे वहाँ भेजनेसे कुछ देरी तो होगी ही। किन्तु और कोई इलाज नहीं है। ईश्वर तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक करे।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजराती (जी० एन० ६७७३)की फोटो-नकलसे।

२१५. भाषण : गुणादला खद्दर आश्रममें

११ अप्रैल, १९२९

मैं अपेक्षा करता हूँ कि आप और अधिक मन लगाकर काम करें। आपको अपनी सारी शक्ति देशके लाभार्थ लगा देनी चाहिए। मुझे खुशी है कि मुझे इस आश्रममें लाया गया। मैं आपसे सिर्फ यही कहता हूँ कि आप अपनी रुई यहाँ स्वयं पैदा करें और जबतक आप ऐसा नहीं करेंगे तबतक आप अच्छे कतैये नहीं बन सकते। हिन्दी सीखिए। अपने आभूषण मुझे दे दीजिए। मैं इसका ज्यादा अच्छा उपयोग करूँगा। यदि आपमें इन्हें मुझे देनेका साहस नहीं है तो इन्हें बेचकर पैसोंमें बदल दीजिए, और उन्हें बैंकमें जमा करा दीजिए जिससे आवश्यकता पड़नेपर वह काम आ सकें। आभूषण तो शहरों और गाँवोंमें पहने जाते हैं, इस प्रकारके आश्रमोंमें नहीं।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ११-४-१९२९

१. देखिए "तार : माधवजी वी० ठक्करको", ११-४-१९२९।

२१६. भाषण : पदमतामें

११ अप्रैल, १९२९

मैं केवल पैसेसे ही सन्तुष्ट नहीं हूँ, पैसा देनेके पीछे सच्ची भावना भी होनी चाहिए। यदि आपको इस [कार्य] से वाकई कोई लगाव है तो इसी क्षणसे शराब छोड़ दीजिए क्योंकि यह लोगोंके दिलोंको जलाती है। शराब बनानेवाले व्यवसायियोंको भी शराब तैयार करनी छोड़ देनी चाहिए। इस दानवको बाहर निकाल फेंकनेके लिए आप सबको एक हो जाना चाहिए। तभी जो रुपया आप देंगे उसका फायदा होगा। मुझे वेश्याओंसे तथा शराब विक्रेताओंसे पैसा मिलता है और मैं उसे इस आशासे स्वीकार कर लेता हूँ कि वे अपने पापोंपर प्रायश्चित्त करेंगे। मेरा अनुरोध है कि आप यह सुधार तो तत्काल ही कर दें। मैं चाहता हूँ कि आप विदेशी वस्त्र त्याग दें और खद्दर पहनें। जिन लोगोंने अभीतक अपना हिस्सा नहीं दिया है उनसे मेरी अपील है कि वे अब दे दें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ११-४-१९२९

२१७. निर्भीक सभापति

[१२ अप्रैल, १९२९][१]

[केन्द्रीय] विधान सभाके सभापति [स्पीकर] और सरकारके बीचके मतभेदका परिणाम चाहे जो हो, इतना तो सच है कि विधान सभाने श्री विट्ठलभाई झ० पटेलको अपना सभापति चुनकर जो काम किया था उसके औचित्यका श्री पटेलने अपने कार्य द्वारा जरूरतसे ज्यादा प्रमाण दे दिया है। अपनी कठोर निष्पक्षता द्वारा उन्होंने अपने पदके सम्मानकी रक्षा की है।[२] साथ ही परम्परा अथवा कानून द्वारा निर्धारित मर्यादाके भीतर रहते हुए, राष्ट्रीय हित करनेका एक भी मौका उन्होंने हाथसे नहीं जाने दिया है। इस कारण सहज ही उनमें और सरकारमें हर बार मतभेद पैदा होता गया है। फिर भी हर बार जीत उनकी ही हुई है, वह उस अवसरपर भी विजयी हुए हैं जब क्षणिक उत्तेजनावश उन्होंने अपने सहज शिष्ट स्वभावके विरुद्ध कटु भाषा प्रयुक्त कर दी थी। ऐसा होनेपर भी दूसरे ही दिन उन्होंने स्वेच्छासे उपयुक्त, सम्मानपूर्ण, शब्दोंमें क्षमा-याचना करके अपनी गलती सुधार ली। उन्होंने कभी अपने

१. यह लेख बुय्यूरमें इसी तारीखको लिखा गया था।

२. देखिए "वाइसरायकी लाल आँखें", २१-४-१९२९ भी।

हृदयके भाव छिपाये नहीं हैं। सभापतिकी हैसियतसे निर्भीकता-पूर्वक कार्य-संचालन करके उन्होंने राष्ट्रकी प्रतिष्ठाको बढ़ाया है।

अतएव यहाँ उनकी महान सफलताके कारणकी जाँच करना अनुचित न होगा। उनका अपना कोई स्वार्थ नहीं है। सादा जीवन बितानेके कारण उनकी आर्थिक जरूरतें बहुत थोड़ी हैं। यही कारण है कि उन्हें न तो ऊँचे पदका और न बड़ी तनख्वाहका कोई लोभ है। और इस विरक्तिके साथ ही उनके अन्दर ऐसी अद्भुत उद्यम-शक्ति है, जिसके कारण अपने उच्च पदका कार्य-संचालन करनेके लिए जिन नियमों और कार्यप्रणालीका ज्ञान आवश्यक है, उसपर उनका अनन्य अधिकार हो गया है। विट्ठलभाई पटेलके लिए राजनीति फुरसतके वक्तका मनोरंजन नहीं है, वह तो उनके जीवनका प्रधान अंग बन गई है। अतएव उन्होंने राजनीतिके अध्ययनमें अपनी सारी बुद्धि और सारा समय खर्च कर दिया है, और इसके फलस्वरूप अपने क्षेत्रमें उन्होंने अपने-आपको अजेय बना लिया है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८-४-१९२९

२१८. तार: माधवजी वी० ठक्करको

वुय्यूर

[१२ अप्रैल, १९२९][1]

इम्पॉर्टेन्स

कलकत्ता

जबतक पाखाना अपने आप खुलकर न आने लगे तबतक रोज एनिमा लगाना जरूरी है।

गांधी

अंग्रेजी (जी० एन० ६७७४)की फोटो-नकलसे।

१. डाककी मुहरसे।

२१९. पत्र : मीराबहनको

१२ अप्रैल, १९२९

चि० मीरा,

मुझे सदा तुम्हारा ध्यान रहता है। शरीरके इतने दुबलेपनसे काम नहीं चलेगा। अपनी विशाल कायाके सहारेके लिए तुम्हारे शरीरपर काफी मांस होना ही चाहिए। लेकिन, हाँ, जल्दबाजीकी कोई जरूरत नहीं है। आग्रह करके अपने लिए एक कमरा जरूर ले लो, ताकि चाहो तो उसमें अपनेको बन्द कर सको।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० ९४१९) से; तथा सी० डब्ल्यू० ५३६३ से भी।
सौजन्य : मीराबहन

२२०. पत्र : छगनलाल जोशीको

१२ अप्रैल, १९२९

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। दूसरोंकी सलाह न मानना। जो कुछ हो और जो मुझे मालूम होना चाहिए उसके बारेमें मुझे अवश्य लिखना।

रतिलालको चोरवाड़के बारेमें बताना। उसे प्रसन्न करके वहीं रोक लेना।

अब पुरुषोत्तमने क्या फैसला किया है, यह लिखना।

शा. . . के[1] बारेमें जो ठीक लगे करना। ह. . .[2] उसे ले जानेको तैयार हो तो ले जाये। मेरी अनुमतिकी जरूरत नहीं है। उसे अपनी जिम्मेदारीपर ही ऐसा करना चाहिए।

मामाके साथ हुई बातचीतके बारेमें तुम्हें लिखा था न?

क्या रंगूनसे प्राप्त पैसा शंकरलालको दे दिया है?

पा. . .[3] अभी समितिमें नहीं रहना चाहता, यह समझ सकता हूँ। उससे मिलना।

तुम्हें स्वयं अभी भी शक हो तो मुझे निस्संकोच लिखना।

छगनलालवाली कोठरीका उपयोग कर सकते हो। क्या उसका कोई पत्र आया है?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५४०२) की फोटो-नकलसे।

१, २ और ३. नाम यहाँ नहीं दिये गये हैं।

२२१. पत्र : माधवजी वी० ठक्करको

१२ अप्रैल, १९२९

भाईश्री माधवजी,

तुम्हारा ७ तारीखका पत्र मिल गया है। तुम्हारे लिए खूराककी ठीक मात्रा बताना मैं अपनी शक्तिसे बाहर मानता हूँ। मेरी रायमें तो इतनी दूर बैठे-बैठे वैद्य भी बीमारके लिए खूराककी ठीक मात्रा नहीं बता सकता। इसलिए मै तो सुझाव मात्र ही दे सकता हूँ। उसमें जो माफिक आ जाये वही करना। यदि कोई गड़बड़ न हो तो एक सप्ताह तक इस प्रकार करो।

(१) ८० तोला गायका दूध दिनमें चार बारमें निश्चित समयपर पियो। एक बार उबालनेके बाद ठंडा दूध भी पीनेमें कोई हानि नहीं है, पर मात्रा निश्चित ही रहे।

(२) यदि इच्छा हो तो हर बार गिनकर बीस सूखे काले मुनक्केके दाने धोकर चूसो।

(३) और यदि भार न लगे तो हर बार ताजा ब्राउन डबलरोटी एक तोला तौलकर दूधके साथ अच्छी तरह चबा कर खाओ।

(४) एक तोला चौलाईका साग काटकर उसमें सेंधा नमक मिलाना हो तो मिला लो और उसे टोस्टके साथ खाओ। एक सप्ताह तो दिनमें भोजनके साथ एक ही बार खाओ; हर बार नहीं।

बीचमें प्यास लगे तो एक बार उबालकर ठण्डा किये हुए पानीमें २० ग्राम सोडा बाईकार्ब मिला लो। दूसरे गिलासमें एक खट्टा नींबू निचोड़ लो। यह रस पानीमें डालकर पी जाओ। पर दिनमें एक ही बार पियो।

सबेरे उठकर दातून करनेके बाद एक प्याला गरम पानी पी जाओ। देखोगे, कि मैंने उसमें शहद डालनेके लिए नहीं कहा। शहद तो काले मुनक्केसे मिल जायेगी और विटामिन कुछ कच्ची भाजीसे और नींबूसे मिल जायेंगे।

बलगम आता हो तो उसका ध्यान रखना; पर उससे घबरानेकी कोई बात नहीं। साँस न फूले इतना ही काफी है। जैसे-जैसे शक्ति आयेगी बलगम कम हो जायेगा।

इस खूराकसे भारीपन लगे तो टोस्ट कम कर देना। टोस्ट बिल्कुल बन्द करने पर भी बोझ लगे तो दूधकी मात्रा कम कर देना। बहुत करके तो एक सेर दूध पच जायेगा और रोटी भी। सोडासे मदद मिलेगी। यह तो सिर्फ तुम्हारे मार्ग-दर्शनके लिए है। काममें लगे रहनेमें कोई हानि नहीं है।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजराती (जी० एन० ६७७७)की फोटो-नकलसे।

२२२. भाषण: स्त्रियोंकी सभा, मसूलीपट्टममें

१३ अप्रैल, १९२९

यहाँ इतनी सारी बहनोंको देखकर मुझे खुशी हुई है, लेकिन यह देखकर कि उनमें से बहुत-सी बहनें विदेशी वस्त्र पहने हुई हैं, मुझे दुख हुआ। मेरी प्रार्थना है कि आप विदेशी वस्त्र त्याग दें तथा खादी पहनें। भारतमें एक बार फिर रामराज्य हो जाना चाहिए। सीताके बिना तो रामराज्य हो नहीं सकता और मैं चाहता हूँ कि आप सब सीताकी प्रतिमूर्ति बनें।

किसीको अस्पृश्य मत समझिए, अपने बच्चों, लड़के तथा लड़कियोंका प्रशिक्षण अपने पूर्वजोंसे गृहीत श्रेष्ठतम परम्पराओंके अनुकूल ही करिए। बाल-विवाहको न तो प्रोत्साहन दीजिए और न उसका समर्थन करिए। अपने बच्चोंको जितनी अच्छी शिक्षा दे सकते हों, दीजिए। मैं चाहता हूँ कि खद्दरके लिए आप अपनी मूल्यवान वस्तुएँ तथा आभूषण समर्पित कर दें, क्योंकि हमारी घरेलू और आर्थिक कठिनाइयोंके लिए आभूषणोंकी अपेक्षा खद्दर अधिक महत्त्वपूर्ण तथा उपयोगी है। मेरी बहुत-सी बहनोंने इस दिशामें जबरदस्त त्याग करके एक उदाहरण प्रस्तुत किया है और मुझे उम्मीद है कि खद्दरके लक्ष्यके लिए आप भी उनसे पीछे नहीं रहेंगी।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १५-४-१९२९

२२३. भाषण: अरुन्धती आश्रम, मसूलीपट्टममें

१३ अप्रैल, १९२९

इस प्रकारकी संस्थामें बुलाये जानेपर मैं सम्मानित अनुभव करता हूँ। मुझे ऐसी संस्थाओंमें जानेमें हमेशा दिलचस्पी रही है जहाँ पंचम बालकोंको उनकी शिक्षा तथा भलाईके लिए विशेष सुविधाएँ दी जाती हों।

आइए, हम इस बातपर जरा सच्चे दिलसे विचार करें कि अस्पृश्यता वास्तवमें किस चीजमें है। यह तो स्वास्थ्य, सफाई और सुव्यवस्थित जीवनके नियमोंके प्रति उपेक्षा भाव रखनेके कारण ही हम अस्पृश्य बनते हैं।

मुझे मालूम नहीं कि और जगहोंकी तरह ही यहाँ पंचमोंके बीच भी मद्यपानकी बुराईका प्रचलन है या नहीं। यदि यहाँपर भी वैसा ही है तो मैं बिना झिझकके अपने पंचम भाइयोंको मद्यपानके अभिशाप तथा गोमांस खानेके विरुद्ध चेतावनी देता हूँ। अपने इतने सारे पंचम भाइयोंको यहाँ शिक्षा प्राप्त करते देखकर मैं अपना सन्तोष प्रकट किये बिना नहीं रह सकता। हमारे इतने सारे पंचम भाई अन्य जातियोंके

समान ही जो आर्थिक कठिनाइयाँ झेल रहे हैं उनकी तरफसे मेरी आँखें बन्द नहीं हैं और इसका उपाय, जिसे बतानेमें मैं कभी थका नहीं हूँ, खद्दर है। इसलिए यहाँ उपस्थित पंचम भाइयोंसे मैं अपील करूँगा कि वे खद्दरको अपनायें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १५-४-१९२९

२२४. भाषण : आन्ध्र जातीय कलाशाला, मसूलीपट्टममें[1]

१३ अप्रैल, १९२९

आप लोगोंसे दुबारा मिलनेका, खास तौर पर आपकी राष्ट्रीय संस्थाके उसी परिचित और पवित्र प्रांगणमें मिलनेका अवसर पाकर मुझे बहुत खुशी हुई है। लेकिन इस खुशीमें पीड़ा और दुख भी मिले हुए हैं, क्योंकि आज मुझे यहाँ हनुमन्तरावके परिचित मुखड़ेका अभाव खटक रहा है, जो कि इस राष्ट्रीय कालेजके प्रवर्तक और प्राण थे। इसलिए इससे पहले कि मैं अपने भाषणके दूसरे अंशोंपर आऊँ, मैं अपने आपको दिलमें उमड़ रहे उन विचारोंके बोझसे हल्का कर लेना चाहता हूँ जिनका सम्बन्ध इस संस्थासे है। यह अब जगजानी बात है कि इस समय इस संस्थामें आपसी मनमुटाव है और इस बातका डर है कि हनुमन्तरावने जो श्रेष्ठ कार्य हमें वसीयतके रूपमें दिया था उसपर पानी न फिर जाये। उन सब लोगोंसे जो इस संस्थाके भविष्यके लिए उत्तरदायी हैं मैं सलाह तथा चेतावनीके तौरपर एक-दो शब्द कहूँगा। वह यह कि इस संस्थाके विशुद्ध राष्ट्रीय चरित्रको हर हालतमें सुरक्षित रखें। भारतमें अपनी यात्राके दौरान मैं लोगोंको गर्वपूर्वक बताता रहा हूँ कि यह संस्था हमारे प्यारे देशके अन्दर उस विशाल मरुभूमिमें नखलिस्तानकी तरह है जिसने हमें इस समय चारों ओरसे घेर रखा है। परीक्षाकी घड़ीमें अपने विश्वासको डिगने मत दीजिए। केवल अनुकूल परिस्थितियोंमें ही पनपनेवाला विश्वास किसी कामका नहीं होता। विश्वासका कोई मूल्य तभी है जब वह कड़ी-से-कड़ी परीक्षामें भी अडिग बना रहे। आपका विश्वास सारे संसारकी निन्दाके सामने भी यदि अडिग न रह सके तो फिर वह ठोस दिखकर भी भीतरसे खोखला ही है। इसलिए आपको अपनी संस्थाकी सफलताका मूल्यांकन इस संस्थामें प्रवेश लेनेवालोंकी संख्याके आधार पर कभी नहीं करना चाहिए, बल्कि इस राष्ट्रीय संस्थाकी भावी नीतिका निर्णायक तत्व गुण और केवल गुण ही होना चाहिए। यदि आपको अपने ऊपर भरोसा है तो आपकी इस संस्थामें पढ़नेकी इच्छासे यदि केवल एक बच्चा भी आयेगा तो उसको पढ़ानेमें आपको सन्तोष मिलेगा। इसके विपरीत, यदि आपसे कोई इस शर्तपर एक

१. यह भाषण "आन्ध्र देशमें" शीर्षक लेखके एक अंशके रूपमें २५-४-१९२९ को प्रकाशित हुआ था।

हजार बच्चोंको दाखिला दिलानेका वादा करे कि आप [सरकारी संस्थाके साथ] सम्बद्ध होना स्वीकार कर लें, तो भी आप झुकेंगे नहीं।

आपने जो मुझे बहुत-सी थैलियाँ और अभिनन्दनपत्र भेंट किये हैं उनके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। इन सब अभिनन्दनपत्रोंका विस्तारसे उत्तर देनेके लिए मेरे पास समय नहीं है, लेकिन फिर भी मैंने दो अभिनन्दनपत्रों — बांदर डिस्ट्रिक्ट बोर्डके और बांदर नगरपालिकाके अभिनन्दनपत्रों — को उत्तर देनेके लिए चुना है, क्योंकि उनमें आलोचना की गई है। मैं इन अभिनन्दनपत्रोंको उनकी आलोचनाके कारण महत्त्वपूर्ण मानता हूँ। आलोचनासे मुझे फायदा हो सकता है, प्रशंसासे नहीं। इन अभिनन्दनपत्रोंमें विदेशी वस्त्रके जलाये जानेके विरुद्ध एक आपत्ति उठाई गई है। जो तर्क दिया गया है वह कोई मौलिक या नया तर्क नहीं है। इन अभिनन्दनपत्रोंमें जिस प्रकारकी आपत्तियाँ उठाई गई हैं, मेरे कुछ घनिष्ठ मित्र भी बिलकुल उसी तरहकी आपत्तियाँ उठा चुके हैं। लेकिन इन आपत्तियोंपर बहुत ध्यानपूर्वक विचार कर लेनेके बाद भी इस प्रश्नपर मेरा जो मत सदा रहा है, उसे मैं बदल नहीं सका हूँ। वह दृष्टिकोण यह है कि हम लोगोंका यह कर्त्तव्य है कि हम अपने विदेशी वस्त्र उतार फेंकें और उन्हें आगमें डाल दें। और मैं साहसपूर्वक यह कह सकता हूँ कि विदेशी वस्त्र जलाना न केवल अहिंसाके सिद्धान्तके अनुकूल है बल्कि ठीकसे समझा जाये तो उस सिद्धान्तकी यह माँग है कि भारतमें विदेशी वस्त्र जलाया जाये। कपड़ोंकी इस होलीके बारेमें एक महत्त्वपूर्ण बात याद रखिए; वह यह कि जिस व्यक्तिके पास विदेशी कपड़े हैं उसीसे कहा जाता है कि उसके पास जो विदेशी कपड़े हैं उन्हें वह जलानेके लिए दे दे। यह तो आप मानेंगे ही कि यदि मेरे पास कोई कपड़ेका ऐसा टुकड़ा या अन्य ऐसी कोई चीज हो जिसमें प्लेगके कीटाणु हों तो उसे जला डालना मेरा कर्त्तव्य होगा। मुझे याद है कि जब मैं दक्षिण आफ्रिकामें था तब जोहानिसबर्गकी नगरपालिकाने एक बाजारको, जिसके निर्माणमें १४,००० पौंड खर्च हुए थे, वहाँ रखे समस्त माल असबाबके सहित आग लगा दी थी। कारण यह था कि उक्त मालमें प्लेगके कीटाणु भरे होनेका शक था। जोहानिसबर्ग नगरपालिकाकी इस कार्रवाईकी मैंने बहुत सराहना और प्रशंसा की थी और मेरा अब भी यही विचार है कि शायद इस कार्यने ही जोहानिसबर्गको प्लेगकी महामारीकी सम्भावनासे बचा लिया था। एक वैष्णव होनेके नाते मैं आपके सामने अपने जीवनके तथा अपने मित्रोंके जीवनके ऐसे अनुभव बता सकता हूँ जब कि बढ़ियासे-बढ़िया खान-पानकी वस्तुओंको केवल इस कारण नालीमें फेंक दिया गया कि वे शास्त्रीय दृष्टिसे अशुद्ध हो गई थीं। विदेशी वस्त्रके सम्बन्धमें मेरा निवेदन यह है कि यह अशुद्ध ही नहीं है बल्कि इसमें ऐसे भयंकर कीटाणु भरे हुए हैं जो भारतके नैतिक, आर्थिक और राजनैतिक कल्याणके लिए घातक हैं। आप मसूलीपट्टमके निवासियोंको इस बन्दरगाहका इतिहास याद दिलाने और यह बतानेकी जरूरत नहीं है कि विदेशी वस्त्रने किस प्रकार भारतके इस बन्दरगाहकी व्यापारिक समृद्धिको तथा यहाँकी अद्वितीय कलाको नष्ट कर दिया है। मैं तो यह मानता हूँ कि चरखेका त्याग करके

तथा भारतकी आर्थिक स्वतन्त्रताको थोड़ेसे विदेशी वस्त्रोंके बदले बेचकर हमने भारतीय जनताके प्रति एक भयंकर अपराध किया है और आज अपनी अकर्मण्यताके कारण हम उसी अपराधको फिर दुहरा रहे हैं। इसलिए मैंने यह अनुभव किया कि मेरा यह परम कर्त्तव्य है कि मैं भारतको उसकी इस काहिलीसे जगाऊँ। आपको इस मामूली-सी सचाईको समझनेके लिए अर्थ-शास्त्रके ज्ञानकी जरूरत नहीं है कि हमारे जो ६० करोड़ रुपये विदेशी वस्त्र खरीदनेमें खर्च होते हैं उसे यदि हम भारतके करोड़ों क्षुधा-पीड़ित लोगोंमें बाँट दें तो फिर उनमेंसे किसीको भूखों मरनेकी जरूरत नहीं होगी। इसी प्रकार आप बिना अंकगणितका ज्ञान हुए भी यह सीधा-सादा तथ्य समझ सकते हैं कि यदि हम भारतकी जरूरत-भर का सारा कपड़ा स्वयं तैयार कर सकें तो इन ६० करोड़ रुपयोंको भारतसे बाहर जानेसे रोकना सम्भव है। यह काम हम आजसे केवल १०० साल पहले तक कर ही रहे थे। हमारे पास उन करोड़ों स्वस्थ पुरुषों तथा स्त्रियोंके बाजुओंकी ताकत मौजूद है जो भारतकी झोंपड़ियोंमें निठल्ले बैठे-बैठे सड़ रहे हैं। कोई कारण नहीं है कि ये करोड़ों निठल्ले हाथ भारतके सात लाख गाँवोंकी झोपड़ियोंमें चरखे न चलायें। इंग्लैंडमें रुई पैदा नहीं होती, लेकिन फिर भी वह इसे सम्भव पाता है कि भारतमें पैदा होनेवाली रुईको लादकर सुदूर लंकाशायर तक ले जाये तथा वहाँसे उसका कपड़ा तैयार करके भारतको वापस भेजे। तब फिर हम लोगोंके लिए उस रुईको, जिसका हम स्वयं उत्पादन करते हैं, भारतके उन स्थानोंपर, जहाँ इसकी आवश्यकता है, ले जाना तथा उसका कपड़ा बुनवाना कितना आसान होगा? लोगोंकी उदासीनताके बावजूद तथा निष्क्रिय और सक्रिय विरोधके बावजूद भी यह कार्य आज इस देशके दो हजार गाँवोंमें किया जा रहा है, और हमारी जरूरतमन्द बहनें अपनी कोमल उँगलियोंसे काते गये सूतके बदले पैसा या रुई लेनेके लिए खुशी-खुशी प्रतिदिन या प्रति सप्ताह मीलों पैदल चलना बरदाश्त करती हैं। इसलिए यदि हमें इन जरूरतमन्द बहनोंके प्रति तथा भारतके उन करोड़ों क्षुधा-पीड़ित लोगोंके प्रति — जिनमें स्वयं अंग्रेज प्रशासकोंके अनुसार दस प्रतिशत लोग ऐसे हैं जिन्हें पूरे वर्षमें एक दिन भी दोनों जून भरपेट भोजन नहीं मिलता — थोड़ा भी दर्द है तो आपको चाहिए कि आप एक इंच विदेशी कपड़ा भी अपने पास न रखें और उसे आगमें झोंक दें। यह कमसे-कम प्रायश्चित्त है जिसकी अपेक्षा भारत माता अपने बेटोंसे करती है।

लेकिन इनमें से एक अभिनन्दनपत्रमें यह सुझाव पेश किया गया है कि खादीकी बिक्री दलालोंके माध्यमसे नहीं होनी चाहिए बल्कि प्रत्येक व्यक्तिको अपनी जरूरतकी खादी स्वयं तैयार करनी चाहिए। पूर्णताका यह परामर्श मुझे पसन्द है, केवल इतना ही है कि इस सुझावमें खादीके उत्पादनसे सम्बन्धित व्यावहारिक तथ्योंका अज्ञान झलकता है, और यदि इन अभिनन्दनपत्रोंको तैयार करनेवाले इजाजत दें तो मैं कहूँगा कि इनमें खादी-उत्पादनकी विधिका अज्ञान प्रकट होता है। जिस प्रकार हरेक व्यक्तिके लिए अपनी जरूरतका चावल स्वयं पैदा करना शारीरिक रूपसे असम्भव है उसी प्रकार प्रत्येक व्यक्तिके लिए अपनी खादी स्वयं तैयार करना भी शारीरिक

रूपसे सम्भव नहीं है। भारतके शहरोंमें रहनेवाले लोग यदि चाहें तो भी वे अपनी खादी स्वयं तैयार नहीं कर सकते। भारतके ज्ञात इतिहासमें ऐसा समय कोई नहीं हुआ जब प्रत्येक व्यक्तिके लिए अपनी खादी स्वयं तैयार करना सम्भव रहा हो। लाख कोशिश करके भी मैं नहीं समझ सकता कि इस कथनके पीछे क्या दर्शन है: 'या तो स्वयं तैयार की हुई खादी पहनो या फिर विदेशी वस्त्र पहनो।' यह बात जान लेनी चाहिए कि भारतमें ऐसे करोड़ों लोग हैं जो दिनमें आठ घंटे चरखेपर काम कर सकते हैं और उस सूतसे तैयार की गई सारी खादीको उपयोगमें लाना उनके लिए असम्भव है। इसलिए भारतके अच्छे नागरिकोंका यह कर्त्तव्य है कि वे अपने इन भाइयों और बहनों द्वारा तैयार की गई खादीका फालतू अंश खरीद लिया करें। हम यह भी नहीं भूलना चाहिए कि यह मनुष्यकी समाजके साथ मिल-जुलकर चलनेवाली वृत्ति ही है जो उसे पशुओंसे अलग करती है। यदि स्वतन्त्रता उसका विशेषाधिकार है तो साथ ही साथ एक दूसरे पर निर्भर रहना उसका कर्त्तव्य है। कोई घमण्डी व्यक्ति ही दूसरोंसे स्वतन्त्र रहते हुए आत्म-निर्भरताका दावा करेगा। लेकिन इन अभिनन्दनपत्रोंके तैयार करनेवालोंको मैं नम्रतापूर्वक यह बताना चाहता हूँ कि 'आत्म-निर्भर' प्रणालीसे खादी तैयार करनेवाला आन्दोलन भारतमें कई स्थानोंपर चल रहा है और यदि नगरपालिकाएँ, ताल्लुका बोर्ड तथा डिस्ट्रिक्ट बोर्ड अपना बुनियादी कर्त्तव्य निभायें और इसकी मदद करें तो हमारे गाँवोंका इस प्रकार पुनर्गठन किया जाना सम्भव है जिसमें सामूहिक रूपसे हमारे गाँव — व्यक्तिगत रूपसे एक-एक ग्रामीण नहीं — जहाँतक उनकी कपड़ेकी जरूरतोंका सवाल है, आत्म-निर्भर हो जायेंगे। इन अभिनन्दनपत्रोंको तैयार करनेवाले यदि अ० भा० च० सं० द्वारा छापे गये साहित्यको पढ़नेका कष्ट करें तो उन्हें पता चलेगा कि इस दिशामें क्या किया जा रहा है। इसी वजहसे मैं कई बार यह कह चुका हूँ कि जब भारतमें खादीका प्रचलन आम हो जायेगा तब इसे विदेशी कपड़ेसे और यहाँतक कि भारतीय मिलोंके कपड़ेसे होड़का कोई डर नहीं रह जायेगा। थोड़ा-सा भी विचार करने पर यह देखा जा सकता है कि यह बात स्वयंमें इतनी स्पष्ट है कि इसे और समझानेकी जरूरत नहीं है।

लेकिन अब मुझे इस विषयको छोड़कर दूसरे विषयोंपर आना चाहिए जो इतने ही महत्त्वपूर्ण हैं। कार्यसमिति ऐसे हरेक भारतीयसे, जो अपने देशको स्वतन्त्र करानेका इच्छुक है, केवल विदेशी वस्त्रका बहिष्कार करनेकी ही अपेक्षा नहीं करती बल्कि वह यह भी चाहती है कि वह भारतमें मद्यपानको समाप्त कर दे। शराबका अभिशाप भारतीय समाजको खोखला किये डाल रहा है और कारखानोंमें काम करने वाली मजदूर जनता इस शराबकी लतके कारण धीरे-धीरे पतित होती जा रही है। मसूलीपट्टमके हरेक बुद्धिमान नागरिकसे मेरा कहना है कि यह उसका कर्त्तव्य है कि वह भारतमें मद्य-निषेध लागू करानेका भरसक प्रयत्न करे और यदि हम अपना कर्त्तव्य निभायेंगे तो फिर हम विदेशी सरकारको भी मद्य-निषेध कानून लागू करनेके लिए बाध्य कर देंगे।

देश-भरमें राष्ट्रीय धनके साथ बहुत खिलवाड़ किया जा रहा है। मित्रो, आपको मालूम नहीं है कि खादी-उत्पादन तथा अस्पृश्यता-निवारणके लिए आन्ध्र देशको कितनी रकम दी गई है और आप मुझे यह कहनेकी इजाजत देंगे कि जिन विभिन्न कार्यकर्त्ताओंको यह रकम सौंपी गई थी उन्होंने इसका जिस ढंगसे इस्तेमाल किया है उससे मुझे खुशी नहीं हुई है। अब हमें नींदसे जाग जाना चाहिए। जबतक हम राष्ट्रीय पैसेकी वैसी ही कदर नहीं करेंगे जैसी कि हम अपने पैसेकी करते हैं, जबतक हम देशके सम्मानकी रक्षा उसी प्रकार नहीं करेंगे जिस प्रकार अपने सम्मानकी करते हैं, तबतक हमें स्वराज्य हासिल नहीं होगा। यदि हम चाहते हैं कि हमें राष्ट्रीय सेवककी उपाधि मिले तो हमें इन सब मामलोंमें सीजरकी पत्नीकी तरह शक व शुबहसे ऊपर रहना चाहिए। यही काफी नहीं है कि कार्यकर्त्ता इस पैसेका इस्तेमाल अपने लिए न करें बल्कि यह भी ठीक नहीं है कि वे इसे असावधानीसे खर्च करें या निर्धारित कार्योंके बजाय दूसरे कार्योंपर खर्च करें।

आन्ध्र प्रदेशमें असीम सम्भावनाएँ हैं। इसके पुरुष शक्तिशाली हैं। दक्षिण आफ्रिकामें भी मैंने देखा है कि आन्ध्रकी स्त्रियाँ स्फूर्तिवान और उद्यमी हैं। आपकी उदारता इतनी ज्यादा है कि वह दोष जैसी लगती है। यदि आपका नेतृत्व ठीक प्रकारसे किया जाये तो आपमें अद्भुत आत्म-त्यागकी क्षमता है। आपकी वीरता असन्दिग्ध है। लेकिन दुर्भाग्यवश जो लोग देशके प्रति अच्छा कार्य कर सकनेकी स्थितिमें हैं वे सेवा करनेके बजाय नेतृत्व करनेके ज्यादा उत्सुक हैं। जहाँ आलोचना करनी चाहिए वहाँ आप आलोचना करनेमें झिझकते और डरते हैं तथा हरेक दोषको छिपानेकी राष्ट्रीय कमजोरी आप लोगोंमें भी है। यदि इस शिष्टाचार, अनुशासन तथा परीक्षणके वर्षके दौरान मैंने आपको उन कमियोंकी ओरसे सावधान नहीं किया या आपसे उन्हें दूर करनेके लिए नहीं कहा तो मैं आपके प्रति सच्चा नहीं होऊँगा।

आप देख ही चुके हैं कि हमारे अत्यन्त योग्य स्पीकर महोदय,[1] जिनसे अधिक योग्य स्पीकर शायद ही हमें कभी मिले, द्वारा किये गये अत्यन्त शानदार और प्रभावकारी कामको शक्तिशाली वाइसरायके मुँहसे निकले एक ही शब्दने किस प्रकार एक मिनटमें व्यर्थ कर दिया है। मैंने आपका ध्यान इस घटनाकी ओर इसलिए दिलाया है ताकि आप देख सकें कि आपके सामने कितना बड़ा काम करनेको पड़ा है। चाहे आज आये या आजसे बरसों बाद आये, लेकिन भारतमें स्वतन्त्रता तथा मुक्ति तथाकथित विधान सभाओंके जरिये नहीं आयेगी बल्कि वह तो कांग्रेस द्वारा निर्दिष्ट विधिके अनुसार गाँवोंमें काम करके हासिल होगी। यदि वाइसरायको इसका ज्ञान होता कि स्पीकर महोदय एक ऐसे राष्ट्रके प्रतिनिधि हैं जो जागरूक है और साहसिक कार्य करनेमें समर्थ है तो वह विट्ठलभाई द्वारा दिये गये निर्णयको शिरोधार्य कर लेते। वाइसरायको तथा सरकारको, जिसके वाइसराय प्रमुख हैं, जो शक्ति प्रभावित कर सकती है वह कोई बम फेंकनेवाली उन्मत्त शक्ति नहीं है बल्कि करोड़ों लोगों द्वारा किये गये कामसे उत्पन्न एक सामूहिक, शान्त और अथक शक्ति

१. केन्द्रीय विधान सभाके स्पीकर विट्ठलभाई पटेल।

है। मुझे एक ऐसी एकता रखनेवाली कांग्रेसके दर्शन कराइए जिसमें रुपये-पैसेका ठीक-ठीक हिसाब रखा जाता हो, जिसके करोड़ों ग्रामीण सदस्य हों, हरेक गाँवमें जिसने खादी भण्डार खोल रखे हों, जिसे हरेक व्यक्तिके सम्मानकी फिक्र हो, जिसने अस्पृश्यताके कलंकको धो डाला हो, जिसने हिन्दू और मुसलमान, पारसी, ईसाई, यहूदी और सिखोंमें एकता स्थापित कर दी हो; — ऐसी कांग्रेसके दर्शन कराइए और तब आप देखेंगे कि इस देशका प्रतिनिधित्व करनेवाले किसी स्पीकरके अधिकारकी अवहेलना या अवज्ञा करनेका दुस्साहस कोई वाइसराय नहीं कर सकेगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५-४-१९२९

२२५. टिप्पणियाँ

श्री मंचरशा अवारी

पाठक जानते हैं कि श्री मंचरशा अवारी नागपुर जेलमें हैं। उनके भाई लिखते हैं :[1]

मैंने श्री अवारीको पत्र लिखा है, लेकिन फिर क्या हुआ सो सफरपर होनेके कारण मालूम नहीं कर सका हूँ। इस बारेमें मैं स्थानीय कांग्रेसको भी सलाह दे चुका हूँ। मेरी रायमें, जेलमें सत्याग्रही कैदीको खादीके कपड़ोंका आग्रह नहीं करना चाहिए। सत्याग्रहीको चाहिए कि वह जेलके सामान्य नियमोंको न तोड़े। लेकिन जब अपमानजनक व्यवहार किया जाये, बेहद जुल्म हो, धर्मपर आँच आती दिखे या जिस कामके न करनेके कारण दण्ड मिला हो, वही काम जबर्दस्ती कराया जाये तो अवश्य ही नियमोंकी सविनय अवज्ञा की जा सकती है। जैसे जेलर गालियाँ दे, अखाद्य खूराक खानेको दे, मैले कपड़े पहननेको दे, तब विरोध किया जा सकता है। या जब बाहर खादी पहननेको अपराध मानकर सजा दी गई हो और जेलमें खादीकी जगह विदेशी कपड़े पहननेको दिये जाते हों तो खादी पहननेका आग्रह करना उचित है, वह किया जाना चाहिए। श्री अवारीको खादी पहननेके जुर्मपर जेलकी सजा नहीं मिली है। इस कारण मेरी रायमें जेलमें उनका खादीके लिए जिद करना ठीक नहीं है। साथ ही मैं यह भी मानता हूँ कि अगर जेलके अधिकारी श्री अवारीको बाहरसे खादी मँगाकर पहननेसे मना करते हों, तो वे अन्याय करते है और श्री अवारीका आग्रह तोड़नेकी उनकी जिद अनुचित है। मैं आशा करता हूँ कि श्री अवारीको खादी न देनेमें कोई दूसरा और खास कारण होगा। इस बारेमें स्थानीय नेता ठीक-ठीक जाँच करें तो अच्छा हो।

१. यहाँ नहीं दिया गया है। श्री मंचरशा जेलमें भी खादीके कपड़े पहनना चाहते थे किन्तु जेलके सुपरिटेंडेंट द्वारा वैसी सुविधाके अभावमें वे सारा दिन नंगे बदन रहते थे। पत्र-लेखकने इस विषयमें गांधीजीकी राय ली थी। देखिए खण्ड ३७, पृष्ठ ४५ भी।

घर फूँक तमाशा देख

बढवानसे एक दूकानदार लिखते हैं:[1]

इसकी एक सरल तरकीब है, लेकिन वह जरा मुश्किल भी है। तथाकथित ऊँची जातिके लोग जो-कुछ करते हैं अन्त्यज भी उसीकी नकल करते हैं। इसलिए अगर ऊँची जातिवाले ऐसे अवसरोंपर भोज आदि देना छोड़ दें तो अन्त्यज भाई भी सहज ही उन बुरी आदतोंको छोड़ देंगे, जिन्हें उन्होंने ऊँची जातिवालोंके कारण अपना लिया है। लेकिन इस शुभ घड़ीको आनेमें अभी दिन लगेंगे। इसलिए तुरन्त ही फल देनेवाला मार्ग तो यह है कि अन्त्यज भाइयोंको उनकी हालतका भान कराया जाये और उन्हें सुधारके लाभ समझाये जायें; उनसे सुधार करवाये जायें। अनेक लोग तो केवल डरके मारे 'औसर मौसर'[2] आदि करते हैं। अन्त्यजोंमें भी जातिच्युत होनेका डर रहता है; 'ऊँची' जातिवालोंसे भी ज्यादा। जो 'ऊँची' जातिके सज्जन जातिसे बाहर हो जाते हैं उनके सहारेके लिए तो बाकीका सारा हिन्दू जगत बचा रह जाता है। लेकिन जातिच्युत अन्त्यजका रक्षक तो अकेला भगवान ही है; अन्यथा वह लालचमें पड़कर दूसरे धर्ममें चला जाता है। जिस दिन अन्त्यज भाई अपने आपको पहचानने लगेंगे उस दिन उनकी सुधार करनेकी शक्ति 'उच्च' जातिवालोंसे भी कहीं अधिक बढ़ जायेगी। 'उच्च' जातिके मार्गमें तो कई दूसरे स्वार्थके प्रलोभन रोड़े अटकाते हैं, लेकिन अन्त्यज जहाँ एक बार अपने आपको समझने लगा और निडर बना कि फिर उसके रास्तेमें एक भी रुकावट खड़ी नहीं होती। उन्हें इस तरह जागृत और निडर बनाना 'ऊँची' जातिवालोंका धर्म है, यही उनका प्रायश्चित्त है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन १४-४-१९२९

२२६. 'गीता' और 'रामायण'

बहुतेरे नौजवान कोशिश करते हुए भी पापसे बच नहीं पाते। वे हिम्मत खो बैठते हैं और फिर दिन-प्रतिदिन पापमें और गहरे-गहरे धँसते चले जाते हैं। बहुतेरे तो बादमें पाप ही को पुण्य भी मानने लगते हैं। ऐसोंको मैं प्रायः बारबार 'गीता' और 'रामायण' पढ़ने और उनपर विचार करनेकी सलाह देता हूँ। लेकिन वे इसमें दिलचस्पी नहीं ले पाते। इसी तरहके नौजवानोंको धीरज बँधानेके लिए एक नौजवानके पत्रका कुछ हिस्सा, जो इस विषयसे सम्बन्धित है, नीचे देता हूँ:[3]

१. यहाँ नहीं दिया गया है। एक गरीब अन्त्यजके पिताका देहान्त होनेपर जातिवाले उससे कर्ज लेकर जाति-भोज देनेका आग्रह कर रहे थे। लेखकने उससे बचनेका उपाय पूछा था।

२. मृत व्यक्तिके संस्कारके सन्दर्भमें दिये जानेवाले भोज आदि।

३. यहाँ नहीं दिया गया है। लेखकने **गीता** और **रामायणके** अध्ययनसे पहलेकी अपनी निराशा और उनके अध्ययनके बादके उत्साह और आनन्दका वर्णन किया था।

इस पत्रके लेखकमें पहले जितनी निराशा और जितना अविश्वास था, किसी दूसरे नौजवानमें शायद ही उतनी निराशा और उतना अविश्वास हो। दोषोंने उसके शरीरमें घर कर लिया था। लेकिन आज उसमें जिस श्रद्धाका उदय हुआ है, उससे नवयुवक-जगतमें आशाका संचार होना चाहिए। जो लोग अपनी इन्द्रियोंको जीत सके हैं उनके अनुभवपर भरोसा करके लगनके साथ 'रामायण' वगैराका अध्ययन करनेवालेका दिल पिघले बिना रह ही नहीं सकता। मामूली विषयोंके अध्ययनके लिए भी जब हमें अक्सर बरसोंतक मेहनत करनी पड़ती है, कई तरकीबोंसे काम लेना पड़ता है, तो जिसमें सारी जिन्दगीकी और उसके बादकी शान्तिका भी रहस्य छुपा हुआ है, उसके अध्ययनके लिए हममें कितनी लगन होनी चाहिए? तिसपर भी जो लोग बहुत ही थोड़ा समय और ध्यान देकर 'रामायण' तथा 'गीता'में से रसपान करनेकी आशा रखते हैं, उनके लिए क्या कहा जाये?

ऊपरके पत्रमें लिखा है कि अपने स्वस्थ होनेका खयाल आते ही विकार फिरसे प्रबल हो जाते हैं। जो बात शरीरके लिए ठीक है वही मनके लिए भी ठीक है। जिसका शरीर बिलकुल चंगा है उसे अपने स्वस्थ होनेका खयाल कभी आता ही नहीं, न उसकी कोई जरूरत ही है, क्योंकि तन्दुरुस्ती तो शरीरका स्वभाव है। यही बात मनपर भी लागू होती है। जिस दिन मनकी तन्दुरुस्तीका ख्याल आये, समझ लो कि विकार पास आकर झाँक रहे हैं। अतः मनको हमेशा स्वस्थ बनाये रखनेका एकमात्र उपाय उसे हमेशा अच्छे विचारोंमें लीन रखना है। इसी कारण रामनाम वगैराके जपकी बातकी शोध हुई और वे गेय माने गये। जिसके हृदयमें हर घड़ी रामका निवास हो उसपर विकार चढ़ाई कर ही नहीं सकते। सच तो यह है कि जो शुद्ध बुद्धिसे रामनामका जप करता है, समय पाकर रामनाम उसके हृदयमें घर कर लेता है। इस तरह हृदयमें प्रवेश होनेके बाद रामनाम उस मनुष्यके लिए एक अभेद्य किला बन जाता है। बुराईको सोचते रहनेसे वह नहीं मिटती; अच्छाईका विचार करनेसे बुराई जरूर मिट जाती है। लेकिन बहुत बार देखा गया है कि लोग अच्छी नीयतसे भी उलटी तरकीबोंको काममें लाते हैं। यह बुरा विचार कैसे आया, कहाँसे आया? आदि सोचनेसे कुविचारका ध्यान बढ़ता जाता है। बुराईको मेटनेका यह उपाय हिंसक कहा जा सकता है। इसका सच्चा उपाय तो बुराईसे असहयोग करना है। जब बुराई हमपर आक्रमण करे तो उससे 'भाग जा' कहनेकी कोई जरूरत नहीं; हमें तो यह समझ लेना चाहिए कि बुराई नामकी कोई चीज है ही नहीं; हमेशा स्वच्छताका, अच्छाईका विचार करते रहना चाहिए। 'भाग जा' कहनेमें डरका भाव है। उसका विचारतक न करनेमें निडरता है। हमें सदा यह विश्वास बढ़ाते रहना चाहिए कि बुराई मुझे छू तक नहीं सकती। अनुभव द्वारा यह सब सिद्ध किया जा सकता है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १४-४-१९२९

२२७. एक युवककी मनोदशा

कालेजका एक विद्यार्थी लिखता है:[1]

मैं देखता हूँ कि पत्रमें न तो नवयौवनका छलकता आशावाद है, न तारुण्यकी वीरता। हाँ, उसमें मेरे समान मौतके किनारे बैठे हुओंकी निराशा और सूम बनियेकी कंजूसी जरूर है। इस नवयुवकने यह क्यों सोच लिया है कि आजकी हालत देखते हुए, सरकार औपनिवेशिक स्वराज्य नहीं ही देगी? यह नवयुवक भूल जाता है कि सरकारको तो कुछ भी देना नहीं है, जो कुछ लेना है, सो तो हमें अपने ऐक्य और त्यागके बलपर लेना है। कौड़ियोंका हिसाब लगानेवालोंको जो बात अशक्य मालूम पड़े, साहसी नवयुवकके लिए वही बात बिलकुल सम्भव लगनी चाहिए। अशक्यको शक्य बनानेमें ही नवयुवककी बहादुरी और उसके यौवनकी शोभा है।

लेकिन आज जिस ढंगसे काम हो रहा है, अगर देशके नौजवान और दूसरी जनता भी उसे उसी तरह चलने देंगे तो मैं मानता हूँ कि इस सालके आखिरमें हम विजय नहीं पा सकेंगे। अगर यही हुआ तो भी वीरोंके लिए तो वह एक स्वागतकी चीज होगी, क्योंकि उन्हें तो संघर्षका मौका मिलेगा। युद्धका प्रसंग आनेपर मुझे जमीन छोड़नी पड़ेगी, क्या कोई योद्धा इस भयसे अपनी जमीन छोड़कर भाग खड़ा होता है?

मैं तो विद्यार्थियोंकी घबराहटका कोई कारण नहीं देखता। युद्ध करनेका समय आया ही तो भी उन्हें विश्वास रखना चाहिए कि छोड़े हुए कालेज आखिर उन्हींके हैं। स्वराज्य यज्ञके मुकाबले फीसका सवाल तो बिलकुल मामूली है। जिस समय बहुतोंके अपना सर्वस्व त्यागनेकी बारी आयेगी उस समय फीसकी गिनती ही क्या हो सकती है?

अब मैं मूल प्रश्नपर आता हूँ। सरकारी शालाओंका बहिष्कार करना है या नहीं करना है, इस बातका निर्णय करना तो कांग्रेसका काम है। मेरा बस चले तो मैं जरूर ही सरकारी शालाओं और कालेजोंका बहिष्कार कराऊँ। यह बात दीपकके समान स्पष्ट है कि इन शालाओं और कालेजोंके द्वारा सरकार देशपर राज्य कर रही है। विद्यापीठमें भाषण देते हुए आचार्य रामदेवजीने अंग्रेजोंकी ही साक्षी देकर यह सिद्ध कर दिया था कि वर्तमान शिक्षण नीति तैयार करते समय राज्यके लिए नौकर पैदा करनेकी बात खास तौरपर ध्यानमें रखी गई थी। आज हजारों नवयुवक उपाधिरूपी सरकारी सिक्का, सरकारी मुहर चाहते हैं। किस लिए? सिर्फ नौकरीके

१. यहाँ नहीं दिया गया है। लेखकका कहना था कि अगर सरकार इस वर्ष औपनिवेशिक स्वराज्य देनेसे इनकार कर देती है तो कांग्रेसके निश्चयके अनुसार सभी विद्यार्थियोंको सरकारी स्कूल और कालेज छोड़ने पड़ेंगे। इससे उन्हें आर्थिक हानि होगी और गरीब विद्यार्थियोंके लिए उस हानिको सहन करना कठिन होगा।

लिए ही न? लेकिन यह मुहर पानेमें ज्ञानकी सिद्धि नहीं है। ज्ञानसिद्धि तो अभ्यासका फल है। सरकारी छापके नीचे तो सिर्फ नौकरी मिलनेकी इच्छा छुपी हुई है। नौजवानों की यह इच्छा स्वराज्यके मार्गमें रुकावट पैदा करती है। मैं युवकोंमें नये तेजके दर्शन कर रहा हूँ। मुझे उससे खुशी होती है। लेकिन वह तेज इतना प्रचण्ड नहीं है कि मेरी आँखोंको चौंधिया दे। यह तेज आज तो क्षणिक और बहुत अंशतक यान्त्रिक और बनावटी है। जब सच्चा तेज प्रकट होगा तब वह सूर्यकी किरणोंकी तरह सारे जगतको चौंधिया देगा। इस तेजोदयके बाद किसी भी विद्यार्थीको सरकारी शालाओं या कालेजोंकी गरज नहीं रहेगी। लेकिन आज तो सरकारके कागजी नोटोंकी भाँति उसके मदरसे और कालेज भी सिक्कोंकी तरह चल रहे हैं। यह मोह कौन दूर कर सकता है?

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १४-४-१९२९

२२८. पत्र: छगनलाल जोशीको

१४ अप्रैल, १९२९

चि० छगनलाल,

तुम्हें कल पत्र नहीं लिखा। मैंने ह . . .[1] को लिखा है कि जैसा उसकी अन्तरात्मा कहती है वैसा ही करे। जिस पुरुषका मन किसी स्त्रीके प्रति विकारमय हो, वह उसकी सेवा नहीं कर सकता; उसके दोष तो वह देख ही नहीं सकता। अधिकतर पति-पत्नी भी एक दूसरेके दोष नहीं देख सकते। इसके पीछे भी एक कारण है। यदि इतना मोह न होता तो स्त्री-पुरुषकी गृहस्थी चलना असम्भव हो जाता। इसलिए वह शा . . .[2] के दोष नहीं देख सकता, यह स्वाभाविक ही है। यह बात मैंने उसे बता दी है।

तुम इसके और ऐसे ही मामलोंके बारेमें निश्चिन्त रहो। शा . . . नियमोंका पालन करते हुए नम्रतासे रहना चाहे तो उसे रहने देना हमारा कर्त्तव्य है।

छोटेलालका पत्र इसके साथ भेज रहा हूँ। उसके जानेके लिए न तुम दोषी हो और न वह।

बालकोबाका[3] शरीरके प्रति मोह कम हो गया है, इसका क्या अर्थ है?

गिरिराज कितने दिनोंके लिए गया है? कट्टो और विमलाको कुसुमके पास छोड़कर अच्छा किया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५४०३)की फोटो-नकलसे।

१ और २. नाम नहीं दिये गये हैं।

३. बालकृष्णभावे, आचार्य विनोबाभावेके छोटे भाई।

२२९. पत्र : मथुरादास पुरुषोत्तमको

रविवार, १४ अप्रैल, १९२९

चि० मथुरादास,

तुम्हारा पत्र बहुत दिनोंके बाद मिला। कर्नाटकके बारेमें लिखी बातें समझ गया हूँ। जो-कुछ तुम कर सकते थे, सो तो तुम कर चुके हो।

मलाबारमें खादीका काम करनेका तुम्हारा विचार मुझे अच्छा लगा है, किन्तु फिलहाल यह नहीं किया जा सकेगा। तुम काका साहबके साथ काम करनेका निश्चय कर चुके हो। काका साहब तुम्हें जल्दी बुलानेका प्रयत्न कर रहे हैं। हालमें उनका पत्र भी आया था। शायद तुम्हें उनका पत्र मिल भी गया होगा। विद्यापीठमें खादीका वातावरण बनानेकी काका साहब तुमसे बड़ी आशा बाँधे हुए हैं। इसलिए अभी तो वहींका विचार करना। वहाँका काम पूरा करनेके बाद चाहे मलाबार चले जाना। दूसरी दृष्टिसे विचार करें तो शायद विद्यापीठ तुम्हारे लिए ज्यादा अनुकूल स्थान होगा। ब्रह्मचर्यके पालनमें वहाँ अधिक सहायता मिलना सम्भव है और आश्रम तो पासमें है ही।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

यह पत्र आन्ध्र देशके एक गाँवसे लिख रहा हूँ। मुझे उत्तर बैजवाड़ाके पतेसे भेजना। पर यदि यह पत्र फौरन मिल जाये तभी। तुम दोनों स्वस्थ होगे। यन्त्रके बारेमें तुम्हारी बात समझ गया हूँ।

बापू

गुजराती (जी० एन० ३७३०)की फोटो-नकलसे।

२३०. पत्र : माधवजी वी० ठक्करको

१४ अप्रैल, १९२९

भाईश्री माधवजी,

तुम्हारा पत्र मिल गया है और तार भी। उसमें जवाब देने लायक कुछ नहीं था।

मैंने साबुन लगानेको मना किया था। उसके कारणके विषयमें तुम्हारा अनुमान ठीक नहीं है। साबुनमें रहनेवाला सोडा शरीरके लिए ठीक नहीं है। गन्दगी और पसीना गर्म पानीसे धोने और बादमें तौलिए से खूब पोंछ लेनेसे साफ हो जाता है और त्वचा भी मजबूत बनती है। सोडासे त्वचाकी ऊपरकी आवश्यक चिकनाई निकल जाती है और त्वचा नाजुक बन जाती है और उसके लिए जो ऊपरी परत

आवश्यक होती है उसका भी नाश होता है। मिट्टीका उपयोग करनेमें कोई हानि नहीं है। मैं उसे भी आवश्यक नहीं मानता। उससे अच्छा तो चने या गेहूँका आटा रहता है। यों सामान्य रीतिसे गर्म पानीके सिवा किसी चीजकी जरूरत नहीं रहती। पानी डालकर एक छोटे गीले तौलिएसे शरीरको रगड़ें और नहानेके बाद खादीके सूखे तौलिएसे शरीर पोंछ लें। खास खादीका तौलिया इसलिए कहा है कि उसमें रहनेवाला खुरदरापन शरीरके लिए उत्तेजक होता है।

मुनक्का या नारंगीका गूदा धीरे-धीरे चूसनेमें कोई हानि नहीं।। दोनोंके ऊपरका छिलका या बीज पेटमें बिलकुल नहीं जाना चाहिए। इसलिए मुनक्का या नारंगीका बीज निकालकर चूसनेमें ही सलामती है, और ऐसा करते हुए स्वाभाविक तौरसे चूसनेमें भी समय लगता है।

मैकफेडनके सिर्फ दूध लेनेके प्रयोगके विषयमें मैं जानता हूँ। मेरे विचारमें उससे चर्बी बढ़ती है। तुम यह प्रयोग बेशक करो, लेकिन कुछ शक्ति आ जानेपर ही करके देखना। मैकफेडनको आदमियोंके विषयमें ही अनुभव है और उसका प्रयोग दूसरी तरहकी जलवायुमें रहनेवाले बड़े डीलडौलवाले आदमियोंके विषयमें है, इतना याद रखते हुए हमें अपने शरीरके मुताबिक उसमें फेरफार कर लेना चाहिए। हम उसकी बताई हुई मात्रामें दूध न लें। इसमें अपना शरीर देखते हुए जितनी आवश्यकता हो, उतना दूध लेना ही अच्छा है। यदि मेरी सलाह भी शरीरको अनुकूल न पड़े तो उसे निरर्थक मानो और फिर दूध लेना शुरू कर दो। शक्तिके लिए उतावली न करो। जैसे-जैसे खुराक पचने लगेगी, शक्ति तो बढ़ेगी ही। मुझे रोटीकी जल्दी नहीं है।

गुड़ सबेरे राबमें[1] लेता हूँ। अपने लिए मैं गुड़को आवश्यक नहीं मानता। सबके लिए राब बनती है; इसलिए उसमेंसे थोड़ी-सी ले लेता हूँ और उसीके लिए गुड़ लेता हूँ। डाक्टर मेरे लिए मधुका उपयोग अच्छा मानते हैं, इसलिए यदि अपने लिए ही राब बनवाऊँ तो मधु ही लूँ। मित्र लोग मुझे अच्छा मधु भेज देते हैं। कहाँसे मिलता है इसकी खबर तो मुझे नहीं है। किन्तु यदि तुम प्रबन्ध न कर सको तो मधु भिजवानेका प्रबन्ध मैं कर दूँगा। तुम्हें ज्यादा मधुकी आवश्यकता नहीं होगी। खादी प्रतिष्ठानके सतीशबाबूको पत्र लिखो। शायद वे अच्छा मधु भेज सकेंगे।

अभी थोड़ा-थोड़ा चलनेमें भी हानि नहीं है। एनीमाकी जरूरत तो है ही। जबतक जरा भी जोर लगाये बिना पाखाना न आये तबतक सबेरे एनीमा लेनेकी जरूरत रहेगी। एनीमाकी आदत पड़ जायेगी इसकी तनिक भी चिन्ता न करना। उपवासमें अँतड़ियोंका बल कुछ समयतक ही टिकता है; इसलिए उपवास करनेवालेको एनीमाकी मददकी जरूरत तो रहती ही है।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजराती (जी० एन० ६७७५)की फोटो-नकलसे।

१. गुजरातीमें आटे की लपसीको राब कहते हैं।

२३१. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

रविवार, १४ अप्रैल, १९२९

चि० गंगाबहन,

छगनलालने मुझे लिखा है कि तुम कभी-कभी आश्रमके दोषोंको देखकर व्याकुल हो जाती हो और कहीं जाना चाहती हो।

यदि तुम्हारे ध्यानमें कोई ऐसी जगह हो जो पूर्णतया दोषमुक्त हो तो हम दोनों ही वहाँ चले जायें। किन्तु यदि तुम यह मानती हो कि दोष तो सभी स्थानोंमें थोड़े-बहुत होंगे ही तो तुम, मैं या जो भी व्यक्ति अपनेको आश्रमका अंग मानता है वह आश्रममें बने रहकर उसे शुद्ध करे, इसीमें उसके जीवनकी सार्थकता है। दोषोंको बर्दाश्त कर सकना आश्रमकी अपनी प्रकृति है; और उसकी विशेषता यह है कि वह दिन-प्रतिदिन इस दिशामें विकास कर रहा है।

सामान्यतया जीवनमें तो होता यह है कि लोग बुराई देखते हैं तो उसपर पर्दा डाल देते हैं। यही आम चलन है; इसलिए संसारमें बुराइयाँ बढ़ती हैं। परन्तु बुराइयाँ बढ़नेपर भी जगतका स्वभाव शुद्ध बने रहना ही है। इसीलिए तो वह चल रहा है। नहीं तो वह कभीका नष्ट हो गया होता।

यह सब सोचकर तुम दृढ़ बनो और निश्चित तथा शान्त रहो। शरीरको स्वस्थ बनाओ। थोड़ा कच्चा शाक खाती हो न? कितना दूध पच जाता है?

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–६ : गं० स्व० गंगाबहेनने

२३२. पत्र : मीराबहनको

१५ अप्रैल, १९२९

चि० मीरा,

तुम्हारे दोनों पत्र मुझे मिल गये। तुम्हें मैं वचन देता हूँ कि अगर मुझे कुछ हो गया, तो तुम्हें तारसे सूचना मिल जायेगी। इसलिए जबतक मेरी ओरसे पुष्टि न हो जाये, तबतक तुम्हें तमाम अफवाहोंको निराधार समझकर माननेसे इनकार कर देना चाहिए। आश्रमकी बात तो तुम जानती ही हो।[1] ये घटनाएँ मुझे मेरे कामसे विरत नहीं कर सकी हैं। मनके अन्तरालमें कोई चीज अनुभव होती है, लेकिन वह

१. देखिए "मेरा दुःख, मेरी शर्म", ७-४-१९२९।

स्वाभाविक है। इन बातोंके उद्घाटनसे मेरे विचारमें आश्रमका लाभ ही होगा। पापाचारोंके चलते रहनेपर आश्रम भ्रष्ट था। इन बातोंका भंडाफोड़ होनेसे हमें लाभ ही हुआ है।

तुम्हारा फर्ज अपने शरीरको फिरसे बनाना और हो सके तो उसे रोगोंके लिए अभेद्य करना है। मगर इस बातकी भी चिन्ता नहीं होनी चाहिए।

लोगोंकी जो हालत तुमने बयान की है, वह मेरे लिए कोई नई बात नहीं है। लेकिन उनकी हालतके बारेमें मेरी अधीरता अब तुम्हारी समझमें आ रही है।

आज इससे अधिक नहीं।

मुख्य केन्द्र अभी बेजवाड़ेमें ही है।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च :]

आज मैं मसूलीपट्टममें हूँ।

अंग्रेजी (जी० एन० ९४२०)से; तथा सी० डब्ल्यू० ५३६४से भी।
सौजन्य : मीराबहन

२३३. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

मौनवार, १५ अप्रैल, १९२९

बहनो,

आज ज्यादा लिखनेका समय नहीं है। मैं यही माँगता हूँ कि जो वहाँ हैं वे मन्दिरको चलायें और उसका नाम उज्ज्वल करें।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–१ : आश्रमनी बहेनोने

२३४. पत्र : छगनलाल जोशीको

१५ अप्रैल, १९२९

चि० छगनलाल,

यह सब इतनी गतिसे हो रहा है कि सारी बात एकाएक मैं समझ नहीं पा रहा हूँ। तुमने लिखा है कि शा ...[1] जा रही है। कहाँ और किस प्रकार, यह शायद तुमने इससे पहले लिखा होगा; वह पत्र अभी नहीं मिला है। क्योंकि आज दो पत्र मिलने चाहिए थे। किशोरलालका पत्र आया है उससे अनुमान लगाता हूँ कि ह ...के[2] पास जायेगी। यह भी ठीक है। मनुष्य अपने-आप हमारी किसी त्रुटिके बिना चले जायें तो उससे हमें घबराना नहीं है। वे हमारा त्याग करें तो उसके लिए भी हम योग्य हैं। जो-कुछ हम कर रहे हैं वे उसको समझ सकें तो रहें। कम व्यक्ति हो जानेसे तुम्हारे काममें कुछ कठिनाई आती हो तो बड़े विद्यार्थियोंसे काम लेना। किसी विभागका काम कम करना हो तो मजेसे कर सकते हो। अपनी सामर्थ्यसे बढ़कर काम करनेके कारण हम पिछड़ें, ऐसा नहीं होने देना चाहिए।

कृष्णदास अब स्वस्थ हो और उसे बुलाया जा सके तो बुला लेना। कान्ति, बाल, जयन्ती इनमें से जिससे तुम ठीक समझो काम लेनेमें मुझे कोई दोष नहीं दिखाई देता। सीतलासहायकी सहायता तो ली ही जा सकती है। रमणीकलाल लापरवाह क्यों हो गया है?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

इसके साथ प्रभुदासका पत्र भेज रहा हूँ। कार्यवाहक मण्डल इसे पढ़ ले। काकाको दिखा देना।

गुजराती (जी० एन० ५४०४)की फोटो-नकलसे।

१ और २. नाम छोड़ दिये गये हैं।

२३५. पत्र : माधवजी वी० ठक्करको

१५ अप्रैल, १९२९

भाईश्री माधवजी,

तुम्हारा तार मुझे मिल गया था किन्तु उसमें जवाब देने लायक कुछ नहीं था। अब तो धीरजसे काम लेनेकी बात है। कमजोरी है, इसकी चिन्ता न करना। एक-एक घंटे पर दूध लेनेके बदले अन्तर बढ़ने दो। दो घंटेके बाद लेना ठीक होगा। मात्रा चाहे उतनी ही रहे। पेट उसे पचा सके, इसके लिए भी तो समयकी जरूरत रहती है।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजराती (जी० एन० ६७७६)की फोटो-नकलसे।

२३६. पत्र : छगनलाल जोशीको

[१६ अप्रैल, १९२९][1]

चि० छगनलाल,

मसूलीपट्टम छोड़नेसे पहले यह लिख रहा हूँ ताकि आजकी डाक खाली न जाये।

जो मन्दिरके नियमोंका पालन करे, मन्दिर उसीका है। जो नियम भंग करेगा, पकड़ा जानेपर उसे मन्दिर छोड़ना ही होगा। यदि कोई दोष करे और वह दोष पकड़में आ जाये तो हम इसपर खेद न करें। हम दोष करनेवालेसे बड़े नहीं हैं। परिस्थितिमें पड़कर शायद हम भी वैसा ही आचरण करते। यह समझकर उनपर प्रेम बनाये रखें। प्रायश्चित्त रूपमें उपवास करनेकी बात भूल जायें। इसपर मनसे विचार करके कुछ भी नहीं हुआ, यह मानते हुए जो काम सामने हो, सो करते रहें। इसके बाद दुख माननेका कोई कारण नहीं बच रहना चाहिए। फिर दोष होंगे, हम यह मानकर उनके लिए तैयार रहें। इसमें मैंने कोई नई बात नहीं कही है। किन्तु तुम, मन्दिरकी आध्यात्मिक उन्नति कैसे हो, इस समय इसकी चिन्ता न करो। इसी हेतुसे यह लिखा है। तुम स्वस्थ रहोगे तो उसीमें सब कुछ पा लिया है, ऐसा मानो।

१. गांधीजी १५ अप्रैलको मसूलीपट्टममें थे। लगता है कि उन्होंने यह पत्र दूसरे दिन बेजवाड़ाके लिए रवाना होनेसे पहले लिखा था।

रंगूनका रुपया न भेजा हो तो भेज देना। हैदराबादसे आया हो तो वह भी दे देना। इन सबमें लालाजीके कोष आदिके लिए रकमें हैं; उनके आँकड़े प्राप्त हों तो उतना पैसा निकाल लेना और अगर न प्राप्त हुए हों तो पीछे देख लेंगे।

रतिलाल कैसा चल रहा है?

क्या पुरुषोत्तम वहीं है? उसका स्वास्थ्य कैसा है? यदि वह वहीं हो तो मुझे पत्र लिखनेको कहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५४२७)की फोटो-नकलसे।

२३७. पत्र : छगनलाल जोशीको

१७ अप्रैल, १९२९

चि० छगनलाल,

तुमपर अच्छी मुसीबत आ पड़ी है। शा . . . के[1] किस्सेमें जो भूल हुई थी वह मैंने तुम्हें बता दी है। पा . . . के[2] साथ पहले बात करनेके बजाय शा . . . के ही ऊपर हमला हुआ सो तो चींटीको हाथीके पाँवसे मसल देने जैसा हुआ। जानते हुए भी मैं उसमें शामिल हो गया, इसलिए इसमें भी मुझे तुम्हारा दोष ज्यादा नहीं दिखाई देता। जो-कुछ किया गया, भलेके लिए ही किया गया। जो-कुछ हुआ है वह ठीक ही हुआ है। शा . . . का ह . . . के[3] पास जाना स्वाभाविक ही है। अब दोनोंकी परीक्षा हो रही है। शा . . . को व्यर्थ ही दबाया गया इसका मुझे दुख जरूर है। किन्तु इसमें मुझे तुमसे ज्यादा अपना दोष दिखाई देता है। किन्तु यह प्रकरण तो अब समाप्त हो गया है।

वसुमती और कुसुमका निबटारा करना बाकी है। इसमें मेरी सलाह लेना और फिर तुम्हें जो ठीक लगे वही करना। वसुमतीको आज पत्र तो लिखा ही है। मैं देख रहा हूँ कि उसे अलग कोठरी देनेपर ही छुटकारा है। छोटेलालवाली कोठरीका आग्रह छोड़ देनेको कहा है। नई बनानेका विचार भी छोड़ देनेको लिखा है। आठ कोठरियोंमें से एक ले ले, यही ठीक लगता है। बा को भी अलग कोठरी लेनेके लिए समझाऊँगा। स्त्री विभागके बारेमें मुझे अपनी भूल कबूल कर लेनी चाहिए। वसुमतीसे जो आशा की इस समय वह तो निष्फल हुई दिखाई देती है। इसमें मैं उसका दोष नहीं निकाल रहा हूँ। शा . . . गई। कुसुम वहाँ अकेली रह सकेगी ऐसा मुझे दिखाई नहीं देता है, वह तो मेरे साथ घूमना चाहती है। इसके बाद यात्रामें उसे रोकूँगा नहीं, किन्तु अन्तमें क्या होगा यह कुछ कहा नहीं जा सकता। अब स्त्री विभागमें कौन रह गया है? यशोदा देवी या सरोजिनी देवी हैं,

१, २ और ३. नाम छोड़ दिये गये हैं।

यह तो नहीं कहा जा सकता। लगता है कि उन्हें भी अलग कोठरी देनेपर ही छुटकारा होगा। इस तरहसे मेरी तो पूरी हार मानी जायेगी। जबतक मैं आश्रममें बारह महीने न रहूँ तबतक ऐसे प्रयोग नहीं हो सकते, यह तुम्हें और मुझे नम्र भावसे समझ लेना चाहिए। जैसा नानुभाईके लिए किया है वैसा ही इन दोनोंके लिए भी करना हो तो कर लेना। दोनों बहनों और उन दोनोंके पतियोंकी भी यही इच्छा होनी चाहिए।

विमला और कट्टोको अभी कौन देखता है?

मैं तुम्हारा बोझ कम करना चाहता हूँ। सूरजभान और सीतलासहायको ब्रह्मचर्यकी शर्तके बारेमें तो मालूम है ही। वे इस प्रकार रहें कि इस शर्तका पालन हो सके। यदि पालन न कर सकें तो वे जा सकते हैं। हम उनपर विश्वास रखें। इतने तक तुम मुझे पूछे बिना कर सकते हो, और बातोंके बारेमें भी मैं विचार करता रहता हूँ। मेरी आत्मा तो वहीं रहती है।

यदि ऐसा लगे कि नारणदास इसमें और दूसरी बातोंमें मदद कर सकता है तो उसके साथ सलाह करना। शायद वह तुम्हारा बोझ कुछ हलका कर सके।

ह . . . ने मुझे पत्र लिखा है। उसे पढ़नेके लिए तुम्हें भेज रहा हूँ।

जैसे-जैसे आश्रमसे व्यक्ति जाते हैं, वैसे-वैसे अपना बोझ हलका हुआ समझो। आश्रम सूना हो जाये तो उससे घबराना नहीं और उसमें अपना दोष न सोचना।

काका विद्यापीठमें रहते हुए सहज ही जितनी मदद कर सकें हम उतनी मदद उनसे लें। उन्हें आश्रममें रहनेके लिए नहीं कहा जा सकता। आश्रमको सुधारनेकी खातिर विद्यापीठका काम बिगाड़ना नहीं है। कई बातें तुम निश्चित मान लो तब तुम्हें विचार करनेमें कोई उलझन नहीं होगी।

काकाको नहीं बुला सकते, विनोबाको नहीं बुला सकते, लक्ष्मीदासको नहीं बुला सकते। महादेवको वहीं रख सकते हो। और अपनी ताकतसे बढ़कर कुछ भी काम न करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५४०५)की फोटो-नकलसे।

२३८. पत्र: तुलसी मेहरको

१७ अप्रैल, १९२९

चि० तुलसी महेर,

मैं तो मुसाफरीमें भटक रहा हुं। तुमारे खत देख कर इतना हि लीखनेका दिल तो जाता है की तुमारा शरीर अच्छा होगा। और चित्त शांत होगा। आज कई दिनोंसे तुम्हारा खत मैंने नहिं देखा है।

बापुके आशीर्वाद

जी० एन० ६५२९ की फोटो-नकलसे।

२३९. पत्र: रामेश्वरदास पोद्दारको

गुन्टूर
बुधवार [१७ अप्रैल, १९२९][1]

भाई रामेश्वर,

मेरी उमेद है की अब चित्त शांत होगा और शरीर प्रवृत्ति ठीक होगी।

बापुके आशीर्वाद

जी० एन० १९७ की फोटो-नकलसे।

२४०. पत्र: रामेश्वरदास पोद्दारको

१७ अप्रैल, १९२९

भाई रामेश्वर,

पुराने खतोंमें यह भी मीला है। कोई हमसे किस तरह चलते हैं न देखें। हम संसारसे किस तरह चलते हैं वही देखते रहें।

बापुके आशीर्वाद

जी० एन० २०० की फोटो-नकलसे।

१. गांधीजीके यात्रा-कार्यक्रमसे।

२४१. पत्र : भोलानाथ सिंहको

१७ अप्रैल, १९२९

भाई भोलानाथ,

आपका बहोत दिनोंसे आया हुआ पत्रका उत्तर आज ही दे पाता हुं। दुधमूंहि बच्चियोंके बारेमें और कोई तरीका मैं नहिं जानता हुं इसके सिवायके प्रत्येक केस प्रकट कीया जाय और जो मा बाप इस तरह खून करते हैं उनको मीलनेकी और समजानेकी कोशीष की जाय।

आपका,
मोहनदास गांधी

भाई भोलानाथ सिंह
राष्ट्रीय विद्यालय
पो० आ० हवेली खड़गपुर
डिस्ट्रिक्ट मुंगेर
बिहार

जी० एन० ७७७८ की फोटो-नकलसे।

२४२. भाषण : गुन्टूरकी सार्वजनिक सभामें

१७ अप्रैल, १९२९

नगरपालिका द्वारा भेंट किये गये अभिनन्दनपत्रका उत्तर देते समय महात्माजीने दिवंगत दुग्गीरालु गोपालकृष्णैयाकी स्मृति तथा उनके कार्योंके प्रति श्रद्धांजलि अर्पित की और कहा कि जैसे-जैसे नेतागण मृत्युको प्राप्त होते जायेंगे, जनताके ऊपर कर्त्तव्यका भार बढ़ता जायेगा। नगरपालिकाके अभिनन्दनपत्रका उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि जनता द्वारा सार्वजनिक उद्यानों और मैदानोंको खराब करनेकी बुरी आदतोंपर काबू पानेके लिए नगरपालिकाको बहुत-कुछ करना है। आज कृष्णा नदीको पार करते समय मैंने एक दारुण दृश्य देखा। एक पवित्र नदीके इस्तेमालका यह कोई तरीका नहीं होता। बहुतसे व्यक्ति उस पवित्र नदीकी पावन रेतका गलत इस्तेमाल कर रहे हैं। अब समय आ गया है जब जनता और नगरपालिकाको इन आदतोंको दूर करनेका प्रयत्न करना चाहिए। मैं नगरपालिकासे एक प्रश्न पूछना चाहूँगा: आप आजकल क्या काम कर रहे हैं, खास तौरपर जनताके स्वास्थ्य तथा सफाईके सम्बन्धमें।

यहाँसे जानेसे पहले मैं आप लोगोंसे यह बात जान लेना चाहता हूँ कि इधरके इलाकोंमें कांग्रेसके कार्यक्रमका कहाँतक पालन किया गया है। बेशक मेरा यह सवाल आप सबसे है। अपने देशके करोड़ों गरीब और क्षुधा-पीड़ित लोगोंकी ओरसे मेरा आपसे यह नम्र निवेदन है कि आप खद्दर पहनें और इसका उत्पादन बढ़ायें। यदि आप उन लोगोंकी भूख और उनकी असहाय स्त्रियों और बच्चोंकी भूखके बारेमें सोचेंगे तो आप सच्चे भारतीयोंकी तरह उनकी मदद करनेको तैयार हो जायेंगे और तब आप अस्पृश्यता तथा जात-पाँतका भी खयाल नही करेंगे। यदि आपके मनमें उन भूखे लोगोंके प्रति सच्ची सहानुभूति है और यदि आप सच्चे दिलसे उनकी सेवा करना चाहते हैं तो आप काम करनेके लिए आगे आयेंगे और न केवल अपने रास्तेसे अस्पृश्यताकी बुराईको हटा देंगे बल्कि अपने उन गरीब देशभाइयोंको शराबके अभिशापसे छुटकारा पानेमें भी मदद देंगे। अब मेरा आपसे यह प्रश्न है: क्या आप सचमुच ऐसा करना चाहते हैं?

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १८-४-१९२९

२४३. भाषण : सार्वजनिक सभा, केरिंचेडुमें

१७ अप्रैल, १९२९

मुझे पता चला है कि आप लोग यहाँ साढ़े पाँच बजेसे बैठे हैं। देरीके लिए मैं क्षमा चाहता हूँ। इस समय रातके ११ बजे हैं, लेकिन आप लोगोंको देखकर मुझे खुशी हुई और आपके इस धैर्यके लिए मैं आपको हार्दिक बधाई देता हूँ। इन सब चीजोंके लिए तथा आपकी थैलीके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। लेकिन एक प्रश्न मैं आपसे पूछना चाहूँगा: जिस तरह आप मुझे देखनेके लिए इच्छुक हैं क्या उसी तरह आप अपने देशको स्वतन्त्र देखनेके भी इच्छुक हैं? क्या आप वहाँ भी इसी तरहका धीरज दिखायेंगे? मैं आपको एक बात और बताना चाहता हूँ। थैलीमें रुपया डालते समय यह मत सोचिए कि आप लोगोंको जो-कुछ करना था, कर चुके। आपको ऐसा नहीं सोचना चाहिए कि खादी कोषमें पैसा देकर आपने कांग्रेसके रचनात्मक कार्यक्रमपर अमल कर लिया है। इसके अतिरिक्त, आपको विदेशी कपड़ेका बहिष्कार करना चाहिए और केवल खादी ही पहननी चाहिए। मैं यहाँ कुछ स्वयंसेवकोंको विदेशी वस्त्र पहने हुए देख रहा हूँ। मैंने यह भी देखा कि यहाँ जो बहनें रुपया देने आई थीं वे खादी नहीं पहने हुई थीं। याद रखिए, यह पैसा आपके अपने कपड़े ही बनानेके लिए है। और यदि आप अपने देशके कपड़े नहीं पहनते, लेकिन खादी कोषमें पैसा देते रहते हैं तो आपका यह दान सच्चा दान नहीं है। आशा है कि आजसे हरेकके घरमें चरखा होगा और बराबर रहेगा। आपको शराब छोड़ देनी चाहिए। जब आपके भाई और बहन भूखों मर रहे हों उस हालतमें

आपके पास शराब पीनेका न तो समय है और न बरबाद करनेके लिए पैसा ही है। रातको आप इन शब्दोंपर विचार करियेगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १९-४-१९२९

२४४. भाषण: पेडानानडिपाडुकी सार्वजनिक सभामें

१७ अप्रैल, १९२९

आपने खादी कोषके लिए जो थैली भेंट की है उसके लिए मैं आपको बहुत धन्यवाद देता हूँ। इसके मायने हैं कि आपके मनमें इस देशमें रहनेवाले अपने निर्धन और भूखसे मर रहे देशभाइयोंका ख्याल आया है। मैंने आपका अभिनन्दनपत्र पढ़ा है जिसमें आपने लिखा है कि एक बार १९२१ में आपने सविनय अवज्ञा आन्दोलन चलाया था। यह सब जानकर मुझे बहुत खुशी हुई है और आपकी वीरताके लिए मैं आपको बधाई देता हूँ तथा यह आशा रखता हूँ कि आह्वान करनेपर आप इसी तरहकी वीरता दिखायेंगे। मुझे विश्वास है कि जरूरत पड़नेपर आप ऐसी ही वीरताका प्रदर्शन करेंगे। आपने यह भी बताया है कि आपने अस्पृश्यताको दूर करनेका प्रयत्न किया है लेकिन उसमें आप पूरी तरह सफल नहीं हुए हैं। मुझे आशा है कि आपको शीघ्र ही पूर्ण सफलता मिलेगी। यदि आप किसी फिरकेमें सविनय अवज्ञा आरम्भ करनेको आतुर हों तो मैं बता दूँ कि इसके लिए आपके पास ५० प्रतिशत खद्दरधारी होने चाहिए क्योंकि खद्दरके अर्थ हैं अनुशासन और संगठन। सविनय अवज्ञा आन्दोलन चलानेसे पहले आपको सारी बुराइयोंको दूर कर देना चाहिए और दुर्बलताके सभी लक्षण मिटा देने चाहिए। इसके अतिरिक्त आपको शराब भी छोड़ देनी चाहिए और आपको चाहिए कि आप केवल आत्मबलके सहारे खड़े हों। आपको अस्पृश्यता भी दूर कर देनी चाहिए क्योंकि इस लड़ाईमें इसके लिए कोई गुंजाइश नहीं है। इस सम्बन्धमें हमें एक महान तैयारी और करनी है; वह है हिन्दू-मुस्लिम एकताकी स्थापना। स्वराज्यकी प्राप्तिके लिए ये सब वस्तुएँ बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। ध्यान रहे १९३० बड़ी तेजीसे आ रहा है, और आपकी तैयारी जितनी कम या ज्यादा होगी उसीके मुताबिक लड़ाईकी शुरुआत बुरी या अच्छी होगी। क्या मुझे यह कहनेकी आवश्यकता है कि आप कमर कस कर तैयार हो जायें? ईश्वर आपको साहस प्रदान करे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १९-४-१९२९

२४५. बम और छुरी

अभी उस दिन [केन्द्रकी] विधानसभामें कुछ हिन्दू नामधारी व्यक्तियोंने बम फेंका था और लाहौरमें एक मुस्लिम नामधारी व्यक्तिने छुरीसे राजपालकी हत्या की थी। ये दोनों काम पागलपनसे भरे हुए बदलेकी और कायरतापूर्ण गुस्सेकी एक ही भावनाके फल थे। आजादीके नामपर बम फेंकनेवालोंने देशकी आजादीके कामको नुकसान पहुँचाया है, इस्लामके नामपर उन्मत्त होकर छुरीसे हत्या करनेवालेने इस्लामको बदनाम किया है। अगर सरकार भी इस मामलेमें धीरज छोड़कर पागलपनसे काम लेगी तो मूर्ख ठहरेगी। अगर वह बुद्धिमान है, तो समझ जायेगी कि बम फेंकनेवालोंके पागलपनके लिए वह खुद भी कुछ कम जिम्मेदार नहीं है। लोकमतकी लगातार अवहेलना करके सरकार राष्ट्रको अधीर बना रही है, और इस अधीरताके चलते कुछ लोगोंका गलत राहपर चल पड़ना अनिवार्य है। अहिंसामें विश्वास रखनेवाली कांग्रेसके सदस्य इस कृत्यके प्रति गुप्त रूपसे भी कोई सहानुभूति प्रकट न करें, उलटे अगर उन्हें अहिंसामें सच्चा विश्वास हो तो वे अपने तरीके पर दूने उत्साहके साथ काम शुरू कर दें।

राजपालकी हत्याने उन्हें शहीद बना दिया है और उन्हें वह कीर्ति प्राप्त हो गई है, जिसके वह योग्य न थे। अपनी प्रकाशित किताब[1] द्वारा हुए नुकसानकी वह पूरी भरपाई कर चुके थे। उसके लिए वह कष्ट भी सह चुके थे। इस हत्याके कारण आज मौतके बाद उनका महत्त्व बढ़ गया है। मैं इन शहीदके परिवारवालोंके साथ अपनी संवेदना प्रकट करता हूँ और आशा रखता हूँ कि न तो वे और न आर्यसमाजी भाई भी एक पागल व्यक्तिके कारण सारे मुसलमान समाजके प्रति अपने खयाल बिगाड़ लेंगे। मुझे उम्मीद है कि समय आते ही हत्यारेको अपनी करतूतके लिए बड़ीसे-बड़ी सजा भोगनी पड़ेगी। हम यह आशा करें कि अब्दुल रशीदके जनाजे के वक्त जो दुखद दृश्य देखे गये थे उन्हें फिरसे नहीं दोहराया जायेगा।

यह बिलकुल सच है कि काल्पनिक न्यायकी प्राप्तिके उपायके रूपमें हिंसामें दुनियाका विश्वास ही बम और छुरीको जीवन-दान देता है। राष्ट्रोंके दण्ड-विधानमें विनाश अपराध नहीं माना जाता, महज इसलिए वह कोई कम अनैतिक वस्तु नहीं बन जाती। जिस बेहोश चालसे पश्चिमी राष्ट्र लड़ाईके लिए हर घंटे नये-नये विनाशक हथियारोंको ईजाद कर रहे हैं उसके कारण हिंसाकी भावनासे दुनियाका दम घुटा जा रहा है। इसमें कोई आश्चर्यकी बात न होगी अगर किसी दिन दुनियाके तमाम देशों और धर्मोंके कुछ गरम मिजाज लोग अपनी जानको खतरेमें डाल कर भी कानून तोड़ने लगें। जबतक संसारका लोकमत युद्धको बर्दाश्त करता रहेगा तबतक दुनियामें

१. रँगीला रसूल।

बम फेंकनेवाले और हत्यारे भी बने रहेंगे। अगर स्थानीय जनता उनसे हमदर्दी न रखे, उनके कामोंसे नफरत करे, तो अवश्य ही उनपर अंकुश रखा जा सकता है।

छुरीकी अपेक्षा बमका सवाल बहुत आसानीसे तय हो सकता है। बमके लिए भारतमें कोई अनुकूल वातावरण नहीं है। अगर सरकार चाहे तो उसे आज ही बन्द कर सकती है; डर या आतंकसे नहीं बल्कि उदारतापूर्वक, समय रहते, राष्ट्रकी माँगको स्वीकार करके। लेकिन इसकी आशा करना तो दुराशामात्र है। सरकार केवल अपनी नीति बदल कर यह काम नहीं कर सकती, उसका हृदय बदलनेपर ही यह हो सकता है। और आज इस बातके कोई आसार नहीं दिखाई पड़ते कि सरकार यह सब करेगी।

हमारी सच्ची आशा तो राष्ट्रमें और कांग्रेसजनोंमें निहित है। मैंने अपनी यात्राओंमें कहीं भी यह अनुभव नहीं किया कि राष्ट्रीय कार्यकर्त्ता हिंसापूर्ण उपायोंमें विश्वास रखते हैं। हाँ, अहिंसात्मक साधनोंमें सजीव श्रद्धाके मुझे दर्शन नहीं हुए हैं। लोगोंमें अहिंसाके प्रति श्रद्धाकी कमी मैंने देखी है। चारों ओर निराशाका वातावरण फैला हुआ दिखता है। मनुष्यको गिरानेवाले इस अनिश्चयके कारण ही कार्यकर्त्ताओंमें कांग्रेस द्वारा निश्चित कार्यक्रमको उल्लासके साथ पूरा करनेका उत्साह नहीं दीख पड़ता। वे यह नहीं देखते कि अगर आजादी पानेके लिए राष्ट्रीय कार्योंमें अहिंसाको स्थान देना है तो कांग्रेस द्वारा निर्धारित कार्यक्रम ही उसका अनिवार्य और सहज परिणाम है। अगर हमें अपने कार्यक्रममें श्रद्धा हो, हम उसे लगनके साथ करते रहें, तो एक बड़ी हद तक हम बम फेंकनेवालोंपर अंकुश लगा सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १८-४-१९२९

२४६. विदेशी-वस्त्र-बहिष्कार

कार्य-समिति द्वारा नियुक्त की गई विदेशी वस्त्र-बहिष्कार-समितिके मन्त्री श्रीयुत जयरामदासने बड़ी तत्परताके साथ काम करना शुरू कर दिया है। समितिका प्रधान कार्यालय कांग्रेस हाउस, बम्बई है। वहाँसे मन्त्री बुलेटिन, पत्रिकाएँ आदि प्रकाशित करते हैं और म्युनिसिपल संस्थाओं आदिके नाम पत्र लिखते हैं। एक महत्त्वपूर्ण पत्रिका में भारतके खादी-उत्पादन और खादी-विक्रयके केन्द्रोंके नाम मय पतेके प्रकाशित किये गये हैं। पाठकोंको यह सूची विदेशी-वस्त्र-बहिष्कार-समिति, कांग्रेस हाउस, बम्बई-४, के नाम एक आनेका टिकट भेजनेपर मिल सकती है। समितिका रजिस्ट्री किया हुआ तारका पता 'बायकाट' है। पाठकोंको यह जानकर हर्ष होगा कि देश-भरमें ऐसे कुल ३२८ केन्द्र हैं, जिनमेंसे ६६ बंगालमें और ६४ तमिलनाडमें हैं। इनके अलावा ३९ आन्ध्रमें और ३३ बिहारमें हैं। वैसे तो यह सूची उत्साहवर्धक है, फिर भी देशकी विदेशी कपड़ोंकी दूकानोंके मुकाबले यह समुद्रमें एक बूंदके बराबर है। यह एक मानी हुई बात है कि अकेले बम्बई शहरमें विदेशी वस्त्रके ३२८ से अधिक बिक्रीके डिपो हैं। देशकी जनताको चाहिए कि वह इस व्यापारको रोके, जिसकी वजहसे हर साल

करोड़ों रुपये विदेशोंको चले जाते हैं। खादीपर खर्च किया गया एक रुपया देशको जिलाता है, विदेशी कपड़ोंपर खर्च करनेसे वही देशका नाश करता है।

विदेशी-वस्त्र-बहिष्कार-समितिके कार्यालयसे जो पत्रिकाएँ प्रकाशित होती हैं उनसे बहिष्कार-आन्दोलनकी प्रगतिके समाचार मिलते हैं। पहली पत्रिकामें बहिष्कारके पक्षका समर्थन किया गया है। इसकी ३०,००० प्रतियाँ छापी गई हैं और नाम-मात्रके लिए एक पैसा मूल्य रखा गया है। मैं पत्रिकाके कुछ रोचक अंश नीचे दे रहा हूँ:[1]

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८-४-१९२९

२४७. आन्ध्र देशमें [–१]

आन्ध्र देशकी पहले कई बार स्थगित यह यात्रा इस समय मैं ऐसे मौसममें कर रहा हूँ, जो मेरे साथ-साथ कार्यकर्त्ताओंके लिए भी कष्टप्रद है। यह सबसे कड़ी गर्मीका मौसम है और मुसाफिरीकी लम्बी-लम्बी मंजिलोंके कारण मैं प्रायः थक कर चूर हो चुका हूँ। सन्तोष यही है कि यात्राके उबानेवाले कार्यक्रमके होते हुए, और प्रायः प्रतिदिन मोटरकी मुसाफिरीके अनिवार्य रहते हुए भी मैं सुबह १० से तीसरे पहर ५ बजेतक अकेला रह सकता हूँ, बीचमें सिर्फ कातते समय १ घंटेके लिए मिलने-जुलनेवालोंसे बातचीत हो जाती है। इससे मुझे विश्राम लेने, पत्र-सम्पादन करने और पत्र-व्यवहारके लिए समय मिल जाता है।

हमारी इस यात्राका आरम्भ हैदराबादसे ही हो गया था। हैदराबादके डा० लतीफी हमें वाड़ी जंकशनपर मिले और उन्होंने हममें से हरएकका ध्यान बड़ी खूबीसे रखा।

हैदराबादमें जनताकी एक विशाल भीड़ने हमारा स्वागत किया। सिर्फ गाड़ीसे उतर कर मोटरमें बैठते-बैठते ४५ मिनट बीत गये। दोनों ओरके नातेके कारण हमारे ठहरनेका प्रबन्ध सरोजिनी देवीके 'गोल्डन थ्रेशोल्ड' नामक बंगलेमें किया गया। यहाँ डाक्टर नायडू और पद्मजाने हमें घरकी यादतक न आने दी। श्रीयुत वामनराव नायक हमारी इस सारी खातिरदारीके संयोजक थे। अपने योग्य स्वयंसेवकोंकी मदद और स्वेच्छापूर्वक दी गई हैदराबाद पुलिसकी सहायताके रहते हुए भी श्री नायक सार्वजनिक सभामें जनताका जो समुद्र चारों ओरसे उमड़ा हुआ चला आ रहा था उसे काबूमें न ला सके। मैं यहाँ उन सब सभाओं और संस्थाओंका उल्लेख नहीं करूँगा, जहाँ श्री वामनराव नायक हमें ले गये थे।

देशभक्त कोंडा वेंकटप्पैयाने हैदराबादके चन्देकी जो सूची तैयार की है उसे नीचे दे रहा हूँ।[2] श्री वेंकटप्पैया अपनी अर्द्धांग-पीड़ित पत्नीको घरपर बीमार छोड़कर हमसे हैदराबादमें आ मिले थे।

१. इन्हें यहाँ नहीं दिया गया है।

२. यहाँ नहीं दी गई है।

७ तारीखको हम लोग हैदराबादसे रवाना हुए। पहलेके कार्यक्रमके अनुसार हम और कहीं जाते लेकिन समय बचानेकी गरजसे देशभक्त हमें दूसरे रास्तेसे ले चले और दूसरे दिन सवेरे ३ बजे बोनकल स्टेशनपर ला उतारा। वहाँसे मोटरपर सवार होकर हम प्रान्तके भीतरी भागोंमें घुस पड़े। जो व्यवस्था की गई है उसके मुताबिक मुझे उन-उन गाँवोंमें जाना है, जो थैलियाँ देंगे। गाँवोंकी यह यात्रा हमारी हार्दिक लगनका परिणाम नहीं, बल्कि मजबूरीका तकाजा है। बढ़ती हुई लोक-जागृति ने लोगोंमें अपने महत्त्वकी भावनाको जगा दिया है और यही वजह है कि इस बार उन्होंने अपनी शर्तें पेश की थीं। मानों वे कहते हैं: 'अगर गांधीजीके दर्शन कराओगे, तो हम चन्दा देंगे।' ये भोले-भाले ग्रामीण शायद ही यह अनुभव करते हों कि मुझ-जैसे एक कमजोर बूढ़े आदमीके लिए दुनिया-भरके शोरोगुल और लज्जित करने वाले भक्ति-भावके बीच, एक जगहसे दूसरी जगह भागते फिरना कितना कष्टप्रद है। लेकिन इस 'दर्शन' विधिके कारण मुझे आन्ध्र देशके ग्रामीण जीवनकी भीतरी हालतको नजदीकसे समझनेका अवसर मिलता है, भले ही वह कितना ही थोड़ा क्यों न हो। 'थोड़ा' इसलिए कहता हूँ कि भीड़वाली सभाओंमें जाकर चन्दा स्वीकार करनेके सिवा मैं और कुछ कर भी नहीं पाता। अगर प्रबन्ध समितिने मुझे देहातमें ठहरनेके लिए कुछ समय दिया होता तो अच्छा होता; क्योंकि उस हालतमें मैं ग्राम-वासियोंसे बैठकर बातचीत कर सकता। मेरे लिए यह एक बड़े भारी सौभाग्यकी बात होती और साथ ही इससे मैं बहुत कुछ सीख भी पाता। लेकिन ऐसा होना नहीं था।

बस आज यहींतक। अगले अंकोंमें कुछ अधिक मनोरंजक संस्मरण देनेकी आशा रखता हूँ। नीचे लिखी सूचीके[1] साथ ही मैं इन जल्दीमें लिखी हुई पंक्तियोंको भी समाप्त करता हूँ। पाठकोंको इनसे पता चलेगा कि हम कितनी तेज रफ्तारसे आगे बढ़े हैं, और देशके अन्तर्प्रदेशमें कितने गहरे उतर गये हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८-४-१९२९

२४८. पत्र : हरीशचन्द्र बेहरावालाको

१८ अप्रैल, १९२९

भाईश्री हरीचन्द,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारी सभी शंकाओंका निवारण कई बार 'नवजीवन' में किया जा चुका है। तुम्हारे पत्रमें आजकी स्थिति सम्बन्धी तुम्हारे अज्ञानसे मुझे आश्चर्य और दुख हुआ है।

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

गुजराती (जी० एन० ५६७५) की फोटो-नकलसे।

१. यहाँ नहीं दी गई है। इसमें विभिन्न जिलोंमें प्राप्त चन्देकी रकमका ब्योरा था।

२४९. पत्र: छगनलाल जोशीको

१८ अप्रैल, १९२९

चि० छगनलाल,

आजकल इस तरह घूमना पड़ रहा है कि डाक मिलनेका कोई ठिकाना ही नहीं है। गाँवोंमें डाक मँगायें तो भी मुश्किल है। खास मोटरका प्रबन्ध करें तभी वह पहुँच सकती है। इसलिए कलकी और आजकी डाक कहाँ मिलेगी, यह मालूम नहीं है।

रूपनारायण बाबूका पुराना पत्र मिला है। इसके साथ भेज रहा हूँ। बादमें क्या हुआ यह तुम्हें मालूम होगा; अथवा उनसे पूछ लेना और मुझसे कुछ कहना हो तो पत्र लिखना या उन्हें लिखनेको कहना।

कल तुम्हें ब्योरेवार पत्र लिखा है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

इसके साथ वर्धाके खर्चके सम्बन्धमें जो टिप्पणी तैयार कराई थी वह भेज रहा हूँ। वापस मत भेजना।

रंगूनसे काठियावाड़ परिषदके लिए कितना पैसा मिला है, इसके बारेमें पूरी बात लिखना। यह पैसा मणिलालने इकट्ठा किया था।

बापू

गुजराती (जी० एन० ५५६०) की फोटो-नकलसे।

२५०. पत्र: ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

१८ अप्रैल, १९२९

चि० ब्रिजकिसन,

तुमारा खत मीला है। जमनालालजीने भी मेरे से बात की थी। गांध [ी] सेवा संघामां तुमारा मील जाना मुझको प्रिय है। मात्र इतना समझो कि उसमें प्रवेश करनेके बाद कभी नीकलनेका ख्याल न कीया जाय। कौटुंबिक जन तो इसमें भी नाराज होनेका संभव है। किसी न किसी तरह उनको नाराज तो होना हि है क्योंकि उनके और तुमारे आदर्शमें अंतर है तुमारा शरीर तो आच्छा होगा।

बापुके आशीर्वाद

जी० एन० २३६३ की फोटो-नकलसे।

२५१. पत्र: छगनलाल जोशीको

[१९ अप्रैल, १९२९][1]

चि० छगनलाल,

तुम्हें कल पत्र नहीं लिख पाया। सारा समय 'यंग इंडिया' में लगाना पड़ा।

मुझे छोटीसे-छोटी खबर भी लिखनेमें संकोच न करना। मुझे मालूम होना ही चाहिए। मगनलाल मुझे रोज पत्र नहीं लिखता था। कई बार तो पत्र मिलता ही न था। उसे मेरे विचारोंका पता था। और मैं यह भी देखता हूँ कि मुझपर झूठी दया करते हुए या किसी अन्य कारणसे उसने मुझे कई बातें नहीं बताई थीं। किन्तु हमें किसीके दोषोंका अनुकरण नहीं करना। मगनलालकी अविचल श्रद्धा, उसका आश्रममें निमग्न हो जाना, उसकी जबरदस्त जागरूकता आदि अनुकरणीय गुण थे। यह तो अब हम समझ गये हैं। मुझसे एक बात छिपाना भी पाप समझना। अब मुझे क्या आघात पहुँच सकता है?

मा...के[2] बारेमें तुम्हें थोड़ा-बहुत लिख चुका हूँ। मुझे तुरन्त लिखना था पर ऐसा कर नहीं पाया। मा... मुझे मिल गया है। उसने अपनी पवित्रताकी सौगन्ध खाई, इसलिए मैं चुप रह गया और मैंने कहा, "अब तुम अपनी इच्छासे अपनी जिम्मेदारी पर काम करो। मैंने तो तुम्हें अपना शक बता दिया है, इसलिए मेरा काम तो हो गया है।"

इसलिए अब मा...के बारेमें शक न करना। वह सयाना है। जो उसके मनमें आये सो करे। भूल करे अथवा पाप उन दोनोंसे दूसरे लोग मुक्त रहेंगे। फिर भी मा... साथी है इसलिए उस हदतक तो दोष हमारे सिर भी पड़ेगा। हमें उस लड़कीको मन्दिरमें रखनेकी जरूरत नहीं है। जिस प्रकार मन्दिर एक भयंकर प्रयोग है, उसी तरह मा...को भी समझो।

यदि तुम्हें यशोदा बहनके झूठ बोलनेके बारेमें शंका न हो तो उसे अवश्य चले जाना चाहिए। सूरजभान आग्रह करे और तुम उसे रहने दो तो मैं तुम्हें दोषी नहीं मानूंगा। यह तुम्हें परसों लिख ही चुका हूँ। अब यह विचार और पक्का हो गया है। सूरजभान और यशोदा बहन चाहे एक-साथ रह लें, जैसा कि नानुभाई और डाहीबहनके बारेमें किया है। काम दोनों करें। मेरी सलाह है कि इसी प्रकार सीतलासहाय और सरोजिनी बहन भी रहें। नये दम्पतिको न लेनेका निर्णय कर सकते हो। किन्तु यदि उन्हें आश्रममें आने दें तो वे ब्रह्मचर्य पालनकी शर्तपर एक-साथ

१. सूरजभानके आश्रममें रहनेके उल्लेखसे, जिसके बारेमें गांधीजीका कहना है कि उन्होंने "परसों" लिखा था; देखिए "पत्र: छगनलाल जोशीको", १७-४-१९२९।

२. नाम नहीं दिया गया है।

रह सकते हैं। साथ रहते हुए भी उनके बिछौने अलग हों। वे एकान्तमें न मिलें। यह सब वह कर सकते हों तो करें। पर हम उसके सम्बन्धमें कोई नियम न बनायें। अगर वह भ्रष्ट होंगे तो जायेंगे।

जो मकान खाली हुए हैं उन्हें दूसरोंको दे देना ठीक है। आनेवाले नियमोंके पालनका प्रयत्न करें सो भी ठीक है। उन्हें दूध, भण्डारसे सामान देनेका बन्धन हम न लें। उनकी रखवाली करनेका बन्धन भी हम न लें। यदि हमारे पास दूध हो तो दे दें। मतलब यह कि जिस प्रकार बुधाभाई हमारे पड़ोसमें रहते हैं उसी प्रकार सब रहें। इस शर्तपर लोगोंके रहनेमें मुझे कोई अड़चन नहीं दिखाई देती। मन्दिर अभी कुछ छोटा तो हो जायेगा, यह मैं देख रहा हूँ। यह ठीक भी है। यह मैंने इसी समय विचार करनेके बाद ही लिख दिया है। इसलिए अपूर्ण होगा तो तुम बाकी विचार कर लेना। महादेव वहाँ है, उसके साथ सलाह कर लेना।

महावीर पोद्दारके[1] पत्रसे मुझे आश्चर्य हुआ है। उसीने और खादी भेजनेके लिए कहा था। मैं उसे लिखूँगा। इस बीच और खादी मत भेजना। तुम तो यह लिख देना कि तुमने मेरे कहनेसे ही खादी भेजी थी।

महादेवका आज तार आया है कि उसने पत्र लिखा है। पत्र मिलनेपर विचार करूँगा। उसे भी जबरदस्ती तो नहीं रखना है। उसमें उसकी भलाई नहीं होगी। सबके जानेपर भी जो रहनेका विचार कर सकते हैं वही रहें। इसके बारेमें भी सलाह-मशविरा न करना। सलाह बहुत कर चुके हैं। पाण्डवोंके महाप्रयाणकी कथा पढ़ी है न? एकके बाद एक थकता गया। बड़ी अद्‌भुत कथा है। हमारे यहाँ भी जो थकता जाये वह पीछे छूटता जायेगा। जो थकेगा वह नीचे है और जो नहीं थकेगा वह ऊँचा है ऐसा भी नहीं माना जायेगा। सभी अपनी-अपनी शक्तिके अनुसार करें। और गाय लेनेसे पहले पारनेरकरसे पूछ लेना कि उसकी मानसिक स्थिति कैसी है। यदि वह स्वस्थ हो और उसमें हिम्मत हो तो जरूर नये मवेशी रख सकते हैं।

सूत वगैराकी चोरीकी बात पढ़कर मुझे कुछ नहीं हुआ। छगनलाल आदिके किस्सेसे सब-कुछ फौरन सीधा हो जायेगा, ऐसी आशा मनमें रखनेकी मूर्खता मैंने नहीं की।

तुम्हें यात्राका कार्यक्रम भेज रहा हूँ। महादेवको बता देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५५५९) की फोटो-नकलसे।

१. कलकत्ताके एक बड़े खादी भण्डारके संचालक।

२५२. तार : मीराबहनको

तेनाली
२० अप्रैल, १९२९

मीराबाई
खादी भण्डार
मधुबनी

तुम्हारा तार मिला। कमजोरी बनी रहती हो तो तुम्हें अम्बालालके कारखानेमें या जहाँ उचित हो तुरन्त चले जाना चाहिए। राजेन्द्रबाबूसे सलाह ले लो और वे न हों तो लक्ष्मीबाबूसे ले लो। अन्तिम निर्णयकी खबर बैजवाड़ा भेजो।

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० ९४२१)से; तथा सी० डब्ल्यू० ५३६५से भी।
सौजन्य : मीराबहन

२५३. पत्र : मीराबहनको

२० अप्रैल, १९२९

चि० मीरा,

मुझे कल तुम्हारे दो पत्र मिले। और अब तुम्हारा तार मिला है। १४ मईको मैं इलाहाबाद नहीं जा रहा हूँ। २२ मईतक मैं आन्ध्रमें ही हूँ, इसके बाद मैं २३ तारीखको बम्बई पहुँचूँगा, वहाँसे २८ तारीखको आश्रमके लिए रवाना होऊँगा जहाँ मैं कमसे-कम १० जूनतक रहूँगा। इसलिए २३ मईसे तुम जब चाहो तब आकर मेरे साथ शामिल हो सकती हो।

यह दुर्भाग्यकी बात है कि आश्रमकी जड़ जमनेसे पहले ही तुम्हें उसे तोड़ना पड़ रहा है। लेकिन तुम अपनी स्वाभाविक मर्यादाओंके विरुद्ध काम नहीं कर सकतीं। बोया हुआ बीज फलेगा अवश्य। तुम्हें अपने शरीरपर बहुत अत्याचार नहीं करना चाहिए। मिलनेपर हम इस विषयमें और चर्चा करेंगे। मेरे खयालमें अम्बालालकी फैक्टरी तुम्हारे लिए ठीक रहेगी। यदि ऐसा न हो तो तुम कहीं और चली जाना, यदि शान्तिनिकेतन जाना ठीक लगे तो वहाँ चली जाना। वरना तुम्हें माथेरान भेजा जा सकता है जहाँ मथुरादास रह रहे हैं। जब चाहो तब तार भेजो।

जहाँतक दूधका सवाल है, तुम या तो नेसलका संघनित (कन्डेंस्ड) दूध लो, या अशीरीं दूध या फिर हॉरलिक्सका माल्टसे युक्त दूध लो। माल्ट मिले दूधमें

ताजे दूधके सारे गुण पाये जाते हैं, सिवा उन विटामिनोंके जो मेरे विचारमें कच्ची पत्तेवाली सब्जियोंसे प्राप्त होते हैं।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० ९४२२)से; तथा सी० डब्ल्यू० ५३६६ से भी।
सौजन्य: मीराबहन

२५४. बहिष्कार ही लोक-शिक्षा है

विदेशी वस्त्रके बहिष्कारको कामयाब बनानेकी दिशामें काम करते हुए कितनी लोक-शिक्षा दी जा सकती है, मामूली आदमी इस बातका खयाल भी नहीं कर सकता। भाई जेठालाल गोविन्दजीको बिजोलियामें इस कामका अनुभव हुआ है और इसी कारण वह समय-समयपर अपने विचार मुझे लिखते रहते हैं। यहाँ उनकी कुछ बातोंका मैं अपनी भाषामें सार-मात्र देता हूँ। इससे ऊपरके पहले वाक्यका अर्थ थोड़ा स्पष्ट होगा।

> अगर बाईस करोड़ किसान खादी पहनने लगें तो विदेशी वस्त्रका बहिष्कार फौरन कामयाब हो जाये। उन्हें खादी पहनानेका मतलब है, उन्हें खादी-शास्त्रकी बारीकियाँ समझाना, स्वावलम्बन पद्धतिके फायदे बताना, खादी की तमाम क्रियाएँ सिखाना आदि। इस कामके लिए स्वयंसेवकोंकी जरूरत है, चलती-फिरती शालाओंकी जरूरत है, और जरूरत है कातने-पींजनेकी क्रिया सिखानेवाली पत्रिकाओंके प्रकाशन और उनके प्रचार की।

यह तो उनके पत्रका थोड़ेमें आशय-मात्र हुआ। इसके भीतर छुपी हुई बातोंका विस्तारसे विचार करके पाठक बहिष्कार द्वारा होनेवाली लोक-शिक्षाका अन्दाजा खुद कर सकते हैं।

यह शिक्षा कौन दे? शिक्षा-शास्त्री इसे कौन-सा स्थान दें? जिन अंग्रेज शिक्षा-विशारदोंको वर्तमान ब्रिटिश साम्राज्यकी मजबूतीका खयाल रखना पड़ता है वे तो इसे स्थान देंगे नहीं; हाँ, भारतीय शिक्षा-शास्त्री, जो देशमें किसानोंका राज्य कायम करना चाहते हैं वे इस शिक्षाको अपना केन्द्र बनायें, तो अच्छा हो। अगर उक्त आशय ठीक हो तो ऊपर जिस शिक्षाका जिक्र किया गया है, वह राष्ट्रीय विद्यालयों द्वारा दी जानी चाहिए, यानी राष्ट्रीय विद्यालयोंमें इस तरहकी शिक्षा देनेवाले प्रचारक तैयार होने चाहिए। एक राष्ट्रवादीके लिए यह शिक्षा उसके राष्ट्रसेवा-साहित्यकी बारहखड़ी होनी चाहिए।

जितने शास्त्र हैं, सब रसपूर्ण हैं। जो यह कहते हैं कि फलाँ शास्त्रमें ही रस है, दूसरोंमें नहीं, वे शास्त्रका सच्चा मर्म ही नहीं समझते। कोई काम करने या

उसके करनेकी विधि जान लेनेमें और उसके शास्त्रको जाननेमें बड़ा भेद है। चमार चमड़ा कमाकर उसे रँगना जानता है, लेकिन इसीसे वह रसायन-विशेषज्ञ नहीं कहलाता। रसायन-विशेषज्ञ अपने शास्त्र द्वारा रसपान करता है, उसके पीछे पागल बन जाता है। चमार बाप-दादोंके जमानेसे चली आई हुई तरकीबें जानकर अपनी गुजर करता है, और अगर पढ़-लिखकर सुशिक्षित बन गया तो मौका पाते ही अपना धन्धा छोड़कर जीवन-निर्वाहके लिए दूसरा काम ढूँढ़ लेता है। यही बात तमाम शास्त्रोंके बारेमें कही जा सकती है। शास्त्री अपने शास्त्रमें मनचाहा रस उँड़ेलता है, नित नई खोज करता है, और उसे सजाता है। आज बुनाईके धन्धे और बुनाई-शास्त्रके बीच इसी तरहका प्रत्यक्ष भेद देखा जा सकता है। मगनलाल गांधी चौबीसों घंटे इसीके विचारमें तल्लीन रहते थे और आखिर इसी तरहकी नित नई रचना करते-करते मौतकी गोदमें जा पड़े। लक्ष्मीदास आज किसी दूसरी बातका खयाल ही नहीं कर सकते। अगर कोई उन्हें खादीके वायुमण्डलसे निकाल कर दूसरा काम सौंपे तो वह उसी तरह बेचैन रहने लगें जिस तरह पानीके बाहर पड़ी हुई मछली। जेठालाल गोविन्दजी किसी दूसरे काममें दिलचस्पी ले ही नहीं सकते, उलटे मुझे खादीके सिवा दूसरे कामों में पड़ा देख वह मीठा उलाहना देते हैं। मीराबहन कभी तन्दुरुस्त और कभी बीमार रहा करती हैं, फिर भी वह बिहारके गाँवोंमें जमकर बैठी हैं; और पुराने चरखों वगैरामें कितनी शक्ति भरी हुई है, इस बातकी खोज कर रही हैं। ऐसी ही कई दूसरी मिसालें पेश कर सकता हूँ। लेकिन हमारे विद्यापीठ इसके महत्त्वको पहचाननेके लिए तैयार नहीं हैं, क्योंकि आज वैसा वातावरण नहीं है। अगर काका कालेलकरके समान कोई व्यक्ति इसके महत्त्वको समझनेके लिए तत्पर हो जाये तो उन्हें अपनी प्रतिष्ठासे हाथ धोना पड़ता है और विद्यापीठके पोथी-पण्डित उनके पास बैठनेमें सकुचाते हैं। बहुत हुआ तो वे ऐसे व्यक्तिको मिस्त्री कहने लग जाते हैं। यह सब कहकर मैं किसीकी बुराई नहीं करना चाहता। कौन है, जो स्वभावको जबर्दस्ती बदल सके? आज समाज न तो बुनाईके कामको शास्त्रके रूपमें स्वीकार करनेको तैयार है, न उसका नया शास्त्र रचनेको ही राजी है।

सारे शास्त्रोंका सभी जगह आदर हो यह कोई जरूरी बात नहीं है। सहारा (रेगिस्तान)के रहनेवाले नौका-शास्त्रको नहीं समझ पायेंगे। भारतके करोड़ों स्त्री-पुरुषोंको इस बातका खयाल तक नहीं है कि घुड़दौड़का भी कोई शास्त्र हो सकता है, कई तो उसे पाप समझते हैं। मगर यह सच है कि घुड़दौड़ पर बहुतेरी पुस्तकें लिखी गई हैं, उसका अपना शास्त्र है। अगर दैवयोगसे सहारा (रेगिस्तान) में पानी बहने लगे, और उसके निवासियोंके मनमें जलमार्ग द्वारा तिजारत करनेका विचार पैदा हो, उसीमें वे अपना सर्वस्व हित देखें, तो जरूर ही वे नौका-शास्त्रमें दिलचस्पी लेने लगें और नौका-शास्त्र उनके पाठ्यक्रमका एक विषय बन जाये। इसी तरह अगर हमारा समाज चरखेकी शक्तिका अनुभव करने लगे तो देशके विद्वान भी उसके पीछे पड़ जायें; उसीमें काव्यका अनुभव, कलाका दर्शन, अर्थकी प्राप्ति और कई दूसरी खूबियोंको ढूँढ़ निकालें।

हमारी राष्ट्रीय शालाओंको दुहरा काम करना है: एक तो चरखा चलाना, और दूसरे, समाजमें इसके अनुकूल वातावरण तैयार करना। संक्रमण-कालमें तमाम राष्ट्रीय शिक्षा इसी ढंगकी होती है। यह शिक्षा समाजके पीछे चलती है और समाजको राष्ट्रका पोषण करनेवाली नई चीजकी तरफ खींचती है। मेरे विचारमें भारतवर्षके विद्यापीठोंका बड़ेसे-बड़ा काम चरखेके शास्त्रकी रचना और उसे दिलचस्प बनाना होना चाहिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २१-४-१९२९

२५५. वाइसरायकी लाल आँखें

विट्ठलभाई पटेलने अपने आखिरी काम द्वारा अपूर्व साहस और सतर्कताका परिचय दिया है। धारासभाके प्रति मेरे मनमें कभी मोह पैदा हुआ ही नहीं था, अब तो वह पहलेसे भी ज्यादा निरर्थक मालूम होती है। इस धारासभाकी वजहसे हिन्दू-मुसलमानोंमें दुश्मनी बढ़ी है, नेताओंके स्वार्थमें वृद्धि हुई है। फिर भी अगर किसीका धारासभामें जाना सार्थक और सफल हुआ है, तो वह विट्ठलभाईका ही। बड़ी धारा-सभाके अध्यक्षके नाते उन्होंने अपना पूरा कौशल प्रकट किया है और भारतवर्षका गौरव बढ़ाया है। इस विषयमें 'यंग इंडिया' में लिख चुका हूँ।[1] शायद इसी अंकमें इसका महादेव द्वारा किया हुआ अनुवाद भी दिया गया है, इसलिए इसके बारेमें यहाँ ज्यादा नहीं लिख रहा हूँ।

लेकिन विट्ठलभाईके फरमानके एक हेतुको तो वाइसराय साहबने अपने एक शब्द द्वारा कुचल डाला है। अध्यक्ष पटेलने यह निर्णय दिया था कि 'लोकरक्षा बिल' धारासभाके माध्यमसे पास नहीं किया जा सकता; इसपर वाइसराय साहबने अपने विशेष अधिकारका प्रयोग करके उसे कानून बना दिया है। इस तरह धारासभाका थोथापन स्वयं उन्होंने साबित कर दिया है।

धारासभा वगैरा संस्थाएँ शासकके हाथके खिलौने-जैसी चीजें हैं। जबतक दिल लगता है, वे उनके साथ क्रीड़ा करते हैं और जब खिलौनोंसे उन्हें सन्तोष नहीं होता तो उन्हें तोड़-फोड़ डालते हैं। ऐसे खिलौनोंसे किसी भी हालतमें स्वराज्य नहीं मिल सकता।

अध्यक्षको अपने दूसरे हेतुमें पूरी तरह सफलता मिली है, और वे यह साबित कर सके हैं कि मॉन्टेग्यू-चेम्सफोर्ड रिपोर्टके आधारपर दिये गये सुधारोंका कोई अर्थ नहीं है। उनके फरमानसे यह बात दुबारा साबित हो चुकी है कि लोगोंको दी हुई यह सत्ता ऐन मौकेपर निरर्थक ठहरती है। अगर किये हुए सुधार सच्चे होते तो विट्ठलभाईको फरमान निकालनेकी जरूरत ही न पड़ती। सुधारोंका थोथापन तो वाइसरायने अपने कार्यसे सिद्ध कर ही दिया है।

१. देखिए "निर्भीक सभापति", १२-४-१९२९।

इस घटनासे प्रजाकी कमजोरी भी साफ जाहिर होती है। बड़ी धारासभाके अध्यक्ष भारतके प्रतिनिधियोंके अध्यक्ष हैं, मतदारोंके अध्यक्ष हैं, और इसलिए सारे भारतके अध्यक्ष हैं। अतएव विट्ठलभाईका अपमान सारे भारतका अपमान है। अगर विट्ठलभाईके पीछे प्रजाबल होता तो वाइसरायने जो कार्रवाई की है, वह कभी न कर पाते। देशकी जनताको कमजोर समझनेके कारण ही वाइसराय अपना हुक्म निकालनेका साहस कर पाये हैं और उन्होंने अध्यक्षसे भी आगे बढ़कर 'लोकरक्षा बिल'को कानून का रूप दे दिया है।

जनता अपनी शक्तिका प्रदर्शन दो प्रकारसे कर सकती है: बम अर्थात् राक्षसी बलसे, या आत्मबल यानी रचनात्मक कामसे। रचनात्मक कार्य आत्मबलकी और उस परके विश्वासकी निशानी है। राक्षसी बलके लिए संघशक्तिकी जरूरत नहीं होती; रचनात्मक कार्य और आत्मबलका उसके बिना काम ही नहीं चल सकता। यही वजह है कि राक्षसी बल सच्चा प्रजाबल नहीं होता। आत्मबल ही सच्चा प्रजाबल होता है। रचनात्मक काममें प्रजाके छोटे-बड़े अंगोंका संगठन निहित रहता है। यह बात आईनेके समान स्पष्ट है कि कांग्रेसने जो रचनात्मक कार्यक्रम तैयार किया है उसमें प्रजाके बड़ेसे-बड़े अंगका संगठन गर्भित है। फिर भी कार्यकर्त्ताओंके ढंगसे ऐसा मालूम होता है, मानो वे इसे पूरी तरह समझे ही न हों। इस बातसे कौन इनकार कर सकता है कि अगर आज ही विदेशी वस्त्रका बहिष्कार सफल बनाया जा सके तो तत्काल ही विट्ठलभाईकी ताकत बढ़ जायेगी, उनका अपमान आज ही धुल जायेगा। इससे भी कौन इनकार कर सकता है कि आज अगर शराबकी दूकानें और भट्ठियाँ बन्द हो जायें तो तुरन्त ही उसका असर पड़ेगा। लेकिन ये काम प्रजाकी एकताके बिना सफल नहीं हो सकते, इनका सफल होना प्रजाके आत्मबलका प्रत्यक्ष प्रमाण है।

अधीर पाठक पूछेंगे, सविनय अवज्ञा क्यों नहीं? मैं पूछता हूँ कि क्या कांग्रेसने यह नहीं कहा है कि इस सालके कार्यक्रमको पूरा किये बिना अगले साल सविनय अवज्ञा नहीं की जा सकती? मैं यह मान कर चलता हूँ कि इस बातमें कोई भी विश्वास नहीं रखता कि इस साल जो प्रजा नींदमें डूबी रहेगी वही अगले साल सविनय अवज्ञाके लिए तैयार होकर जागेगी।

अतः अगर हमें आत्मबलके जरिये लड़ना हो तो कांग्रेसका कार्यक्रम ही वाइसराय महोदय द्वारा किये गये विट्ठलभाई पटेलके अपमानका एकमात्र जवाब है। अगर दूसरे प्रान्त नहीं तो गुजरात तो अवश्य ही इस सीधी-सी बातको समझेगा और अपनी मिसाल द्वारा दूसरोंको समझायेगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २१-४-१९२९

२५६. अगर सच है तो दुःखद है

पिछले फरवरी महीनेमें, कलकत्तेमें, कवि श्री हंसराजने विदेशी वस्त्रके बहिष्कारके लिए गुजराती भाइयोंसे अनुरोध किया था। उनमेंसे एक गुजराती भाई लिखते है :[1]

मेरे विचारमें तो, जिन्होंने अपनी विदेशी टोपियोंको दे डाला था उन्हें भी मारवाड़ी भाईकी उदारताका लाभ नहीं लेना चाहिए था। कलकत्तेमें ऐसे गुजराती हैं ही नहीं जो अपने पैसोंसे खादीकी टोपी न खरीद सकते हों। मगर यदि शिक्षकों ने और उनसे प्रेरणा पाकर विद्यार्थियोंने भी अपनी विदेशी टोपियोंको बगलमें दबाकर मारवाड़ी भाइयोंके पाससे खादीकी टोपियाँ मुफ्त ली हों तो अवश्य ही यह चोरी हुई। किसीको भी ऐसा काम नहीं करना चाहिए। खासकर शिक्षक और विद्यार्थियोंके ऐसे काम तो अक्षम्य हैं। मैं आशा करता हूँ कि ऊपरकी बातमें कुछ-न-कुछ अतिशयोक्ति जरूर है। लेकिन अगर वास्तवमें ठीक हो तो जिन्होंने यह गुनाह किया है वे टोपियोंकी कीमतसे ज्यादा रकम खादी-प्रचारके लिए दे कर, फिरसे ऐसा गुनाह न करनेकी प्रतिज्ञा करें और इस तरह प्रायश्चित्त कर लें।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २१-४-१९२९

२५७. व्यापारी वर्ग और खादी

चरखा संघके एक सदस्य लिखते हैं :[2]

इसमें शक नहीं कि आखिर एक दिन व्यापारियोंको खादी अपनानी पड़ेगी, लेकिन व्यापारियोंके अबतक खादीकी ओर न झुकनेके लिए खादीसेवकोंका कोई दोष नहीं है। व्यापारी लोग लालची और डरपोक होते हैं। यही वजह है कि खादी फौरन ही उन्हें अपनी ओर खींच नहीं सकती। आज तो खादीमें वही लोग दिलचस्पी लेते हैं, जिन्हें परोपकारकी धुन है, और देशकी गरीबीको देखकर जिनका दिल जला करता है। आमतौरपर व्यापारके मामलोंमें व्यापारी लोग परोपकार-भावनासे काम नहीं करते, इसी कारण व्यापारीकी परोपकार-भावना दान आदि करनेमें खर्च होती है, जिनसे उसके व्यापारकी थोड़ी भी क्षति नहीं होती। मगर जिस दिन व्यापारियोंमें भी शुद्ध देश-दाह पैदा होगी उस दिनसे वे भी खादीके व्यापारको अपनायेंगे।

१. यहाँ नहीं दिया गया है। बिड़ला खादी भण्डारने घोषणा की थी कि विदेशी टोपीका त्याग करनेवालोंको खादीकी टोपी मुफ्त दी जायेगी। लेखकके अनुसार कुछ लोगोंने विदेशी टोपी बगलमें छिपा कर खादीकी टोपियाँ ले लीं और एक मारवाड़ी भाईकी उदारताका गलत फायदा उठाया।

२. यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें मथुरादास पुरुषोत्तमके उस सुझावका उल्लेख था जिसमें व्यापारी वर्गको कमीशन देकर उसे खादी बेचनेका काम सौंप देनेका विचार किया गया था।

उनके मार्गकी एक कठिनाईको हमें मंजूर करना चाहिए। आज वे जिस तरीकेसे व्यापार करते हैं, खादीके व्यापारमें उससे काम नहीं चल सकता। चालू व्यापार-पद्धतिमें खरीदारकी भलाईका कोई खयाल नहीं होता, यही वजह है कि अधिकांश व्यापारी अपनेको नीतिके बन्धनोंसे परे समझते हैं। अगर खादीमें भी इसी तरीकेसे काम लिया जाये तो खादी बरबाद हो जाये, मिट जाये। मतलब यह है कि खादीका व्यापार सिर्फ साधुमना व्यापारी ही कर सकता है। खादीके व्यापारमें मामूली व्यापारी की चोंच गीली नहीं हो सकती। सामान्य व्यापारमें फँसा हुआ व्यापारी शीघ्र ही धन कमानेकी आशा रखता है, मगर खादीके व्यापारीको तो आजीविका-मात्र कमाकर सन्तोष करना पड़ता है। मामूली कपड़ेके व्यापारीका मार्ग बन चुका है, उसके पास कपड़ेकी चुनिन्दा किस्में होती हैं, लेकिन खादीके व्यापारीको नित नई तरकीबोंसे काम लेना पड़ता है। इसी कारण यह आशा नहीं की जा सकती कि अभी तत्काल ही खादीके व्यापारको बहुत-से व्यापारी अपना लेंगे। जो मुट्ठीभर व्यापारी खादीके व्यापारमें हाथ डाल कर बैठे हैं वे अच्छी तरह जानते हैं कि इस व्यापारमें कामयाब होनेके लिए उन्हें किस तरह एड़ी-चोटीका पसीना एक करना पड़ता है।

अतएव जिस वर्गने इस वक्त खादीको अपने हाथोंमें ले रखा है, अच्छा हो अगर अपूर्ण होते हुए भी, अभी वही इसका प्रचार करे। आश्चर्य तो यह है कि अपूर्ण होते हुए भी यही वर्ग आज खादीको जिन्दा रखे हुए है।

श्री मथुरादास पुरुषोत्तमका सुझाव तो आज भी मुझे त्याज्य नहीं लगता। उसमें बहुत लोगोंकी तैयारी आवश्यक नहीं है। मेरे पास जो पत्र आये हैं उनसे ही मुझे पता चलता है कि सिलाई जाननेवालोंमें से बहुतसे खादीकी सिलाई कर सकते हैं। इस काममें संगठनकर्त्ताके अभावमें संगठनकी कठिनाई जरूर है। अगर एक आदमी इसी कामको करनेपर कमर कस ले तो यह काम हो सकता है। मेरा विश्वास है कि श्री मथुरादासका यह सुझाव एक-न-एक दिन जरूर ही सफल होगा।

खादीकी कई एक किस्मोंको रूढ़ (पेटेंट) बनानेकी कोशिशकी जा रही है, लेकिन इन पत्र-लेखकको और दूसरोंको जान लेना चाहिए कि इसकी अपनी सीमा है। खादी कारखानोंमें नहीं बल्कि लाखों घरोंमें पैदा होती है और उनका सूत एक सरीखा नहीं होता। इस प्रकार खादीकी किस्ममें फर्क तो हमेशा रहेगा ही। इस तरह का फर्क रहना कोई बुराई भी नहीं है। जिसमें मौलिकता नहीं है, व्यक्तित्व नहीं है, वह कला भी नहीं है। सूतकी हरएक लच्छीपर उसके बनानेवाले हाथोंकी कुछ-न-कुछ छाप तो रहेगी। मशीनसे निकले सूतके धागेमें यह खूबी कहाँ?

अतएव इस पत्रका उपयोग उसके दो सुझावोंमें है: एक तो स्वदेशी अर्थात् खादीकी भावनाका प्रचार, और दूसरे, व्यापारियों द्वारा खादीको अपनाना। फिर भी पत्रकी दूसरी बातोंसे पत्र-लेखकके खादी विषयक प्रेमका पता चलता है। ये विचार दूसरोंके दिलमें भी आये होंगे, यही सोचकर इसपर चर्चा की गई है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २१-४-१९२९

२५८. स्त्रीकी दर्दनाक हालत

१

एक नौजवानके पत्रका सार इस तरह है:[1]

हिन्दू समाजमें ऐसी करुण कथाओंके अगणित उदाहरण मिल सकते हैं। यह सम्भव नहीं कि तुरन्त ही इनका प्रतिकार किया जा सके। कई बातें ऐसी हैं, जिन्हें इस समय सह लेनेके सिवा दूसरा चारा नही है। ऐसे मामलोंमें जो-कुछ मुझे सूझता है, सो तो यों है कि कोई रिश्तेदार ऐसी युवतीकी मदद करना चाहे तो उसे दृढ़तापूर्वक उसकी मदद करनी चाहिए। किशोर होते हुए भी अगर इस युवतीका पति समझदार है तो उसे चाहिए कि वह अनिच्छापूर्वक किये गये युवतीके साथके अपने इस सम्बन्धसे लाभ उठाकर उसे पढ़ाये, खुद उसे अपनी बहन समझे और उसके लिए योग्य पति ढूँढ़ दे। मैं जानता हूँ कि पन्द्रह वर्षके किशोरसे इतनी बुद्धिमानीकी आशा नहीं की जा सकती। लेकिन इस समय इस उम्रके भी परोपकारी बालक मेरी नजरोंमें हैं और इसी आधारपर मैंने ऊपरकी बात लिखी है। तीसरा मार्ग है, लोकमतको सुशिक्षित बनानेका — जिन्हें ऐसे बेजोड़ विवाहोंका पता चले, वे उन्हें प्रकट तो जरूर ही कर दें। यदि इससे संकट-ग्रस्त बालाकी रक्षा न हो सके तो भी यह निश्चित ही है कि धीरे-धीरे ऐसी घटनाएँ कम होती जायेंगी।

उल्लिखित विचारधारासे यह नतीजा निकलता है कि ऐसे कामोंके लिए सत्यपरायणता, निडरता, दृढ़ता और साहसकी जरूरत है। जो विवाह विवाहकी सच्ची व्याख्याके अनुसार नहीं हुआ है, वह विवाह ही नहीं है, इसे मान लेनेपर ही हम लोग आगे बढ़ सकेंगे। जिसे जातिका, गरीबीका, और ऐसी ही दूसरी बातोंका डर है, वह कभी सुधार कर ही नहीं सकता। सुधारकोंने दुःख उठाये हैं, निन्दा सहन की है, भूखों मरे हैं, जानें कुर्बान की हैं। इन बातोंके अभावमें दुनियाके किसी भी हिस्सेमें सच्चे सुधार नहीं हो सके हैं।

२

एक डाक्टर लिखते हैं:[2]

यह डाक्टर धन्यवादके पात्र हैं। उनका कहना बिलकुल ठीक है कि ऐसे मौकों पर बहुतेरे डाक्टर फीसके लोभमें पड़कर लोगोंके पापोंमें मददगार होते हैं। लेकिन यह लेख मैं डाक्टरोंको उनका धर्म बतलानेके लिए नहीं लिख रहा हूँ। यह पत्र स्त्रीकी

१. यहाँ नहीं दिया गया है। पत्रमें एक १५ वर्षीय बालकका विवाह एक सत्रह वर्षीय युवतीसे होनेकी घटनाका उल्लेख करके लेखकने पूछा था कि यदि बड़ा होनेपर लड़का पुनर्विवाह करना चाहेगा तो उस स्थितिमें लड़कीका क्या होगा?

२. यहाँ नहीं दिया गया है। डाक्टरने लिखा था कि एक पाटीदार भाईने उनसे किसी वणिक विधवाके लिए जिससे उसका अवैध सम्बन्ध रहा था, गर्भपातकी दवा लिख देनेका अनुरोध किया था।

दुर्दशाका दूसरा चित्र है। इसका इलाज वही है जो ऊपर बताया गया है। अहिंसा धर्मके नामपर अहिंसाको डुबानेवाला आजकलका समाज इस तरहकी निर्दयतासे काम लेते समय बिलकुल भी आगा-पीछा नहीं सोचता, वह हर रोज स्त्री-रूपी गौकी हत्या किया ही करता है। स्त्रीके सतीत्वकी रक्षाके बहाने वह उसपर कई तरहके अंकुश लादता है; उसके जुल्मसे पीड़ित स्त्रियाँ दूसरोंकी तरह छिपकर गुनाह करती हैं लेकिन जबर्दस्ती किसीकी पवित्रताकी रक्षा नहीं की जा सकती। स्त्री या पुरुष पर्देकी ओटमें पाप करें, इससे बेहतर तो यह है कि वे जाहिरा तौरपर नम्रतासे अपनी कमजोरीको कबूल करके पुर्नविवाह वगैरा कर लें और पापसे बचें। मगर स्त्रीकी मदद कौन करे? मर्दने तो अपना रास्ता साफ बना लिया है। लेकिन स्त्रीपर जुल्मसे भरे हुए कायदे लादकर पुरुषोंने जो दोष अपने सिर ओढ़े है, उनके प्रायश्चित्तके तौर पर उन्हें अब स्त्रीकी मदद करनी चाहिए। जिन बड़े-बूढ़ोंके विचार एक बारगी ही पुख्ता हो गये है, उनसे ऐसे प्रायश्चित्तकी आशा रखना फिजूल है। हाँ, नौजवानोंका मर्यादा पालन करते हुए स्त्रियोंकी मदद करना मुमकिन है। यों तो आखिरकार स्त्रीका उद्धार स्त्री ही करेगी; लेकिन आज भारतमें ऐसी स्त्रियोंकी संख्या बहुत थोड़ी है। जब नौजवान बहुत बड़ी तादादमें स्त्री-जातिकी मददके लिए दौड़ पड़ेंगे तभी स्त्रियोंमें जागृति फैलेगी और उनमें सेवापरायण वीरबालाएँ व वीरांगनाएँ पैदा होंगी।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २१-४-१९२९

२५९. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

मौनवार, २२ अप्रैल, १९२९

बहनो,

आज तो ऐसे गाँवमें पड़े हैं, जहाँ कोई सुविधाएँ ही नहीं हैं। इसलिए डाक जल्दी तैयार करनी पड़ेगी। फिर यहाँसे आठ मील दूर डाकखाना है, वहाँ पत्र जायेंगे। परेशानी काफी होती है, साथ ही उतना अनुभव भी मिलता है। पैसा मिलता ही रहता है।

यह तो तुम जानती ही हो कि यहाँकी कुछ स्त्रियाँ कातनेमें बहुत कुशल होती हैं। स्त्रियोंमें खादीका प्रचार गुजरातसे बहुत ज्यादा है। परदे या घूँघट जैसी कोई चीज नहीं है, इसलिए स्त्रियोंके शरीर मजबूत दिखाई देते हैं। मेहनत भी वे खूब करती हैं।

मेरी झोलीमें स्त्रियोंने गहने बहुत डाले हैं। बहुतेरी तो अपनी अँगूठियाँ दे देती हैं। कुछ चूड़ियाँ और कोई अपने हार दे देती हैं। अबतक लगभग एक लाख रुपये इकट्ठे हो गये होंगे।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–१ : आश्रमनी बहेनोने

२६०. पत्र : नारणदास गांधीको

मौनवार, २२ अप्रैल, १९२९

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। जो घटनाएँ हुई हैं उनसे दुख तो हुआ पर उससे भी ज्यादा दुख मुझे तुम्हारे निर्णयसे हुआ है। क्योंकि मुझे तुमसे बहुत आशाएँ हैं। इस समय आश्रममें रहना ही तुम्हारा कर्त्तव्य है। यदि तुम इस कर्त्तव्यको समझो तो इसके पालन द्वारा अर्थात आश्रममें रहकर ही शान्तिका अनुभव होना चाहिए। किन्तु यदि तुम्हें ऐसा लगे कि आश्रमको छोड़ देना तुम्हारा कर्त्तव्य है तो खुशीसे जाओ। मैं तुम्हें तुम्हारा कर्त्तव्य समझानेका प्रयत्न तो करूँगा; लेकिन तुमपर जबरदस्ती नहीं करूँगा। किसी भी प्रकार बने रह सकते हो तो बने रहो। अपने निर्णयकी सूचना तार द्वारा देना। तुम जो भी करोगे सो तुमने अपने अन्तःकरणके निर्देशसे किया है, मैं यह मानकर धैर्य धारण कर लूँगा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–९ : श्री नारणदास गांधीने

२६१. पत्र : माधवजी वी० ठक्करको

[२३ अप्रैल, १९२९ से पूर्व][1]

भाईश्री माधवजी,

तुम्हारे दो पत्र मेरे पास पड़े हुए हैं।

दातुन करते समय नमक अथवा चाक इस्तेमाल करना ठीक है।

एकादशीके दिन यदि धर्म मानकर रोटी और दूध न लो तो भी ठीक है और केवल शरीरके लिए भी ऐसा करो तो भी ठीक है।

अपनी ऊँचाई और छातीका सामान्य तथा साँस खींचकर लिया हुआ माप भेजना। रोज प्राणायाम तो करते होगे?

तुम्हारा धन्धा क्या है? इसमें कितना समय लगाना पड़ता है, और उसमेंसे कितना समय तुम बचा सकते हो। बाहर जा सकते हो या नहीं? तुमने शिक्षा कहाँतक पाई है? आजकल स्त्री-संग करते हो या नहीं, आदि तथा आसपासके

१. साधन-सूत्रमें किसी अन्य व्यक्तिकी लिखावटमें अंग्रेजीमें १३ मई, १९२९ तारीख पड़ी हुई है। तथापि पत्रके पाठसे स्पष्ट है कि गांधीजीने यह पत्र एल्लोर जानेसे पूर्व लिखा था, और एल्लोर वे २३ अप्रैलको गये थे।

वातावरणकी पूरी जानकारी देना। इसका जवाब एल्लोर भेजना; कुछ जल्दी मिल जायेगा, क्योंकि मुझे एल्लोरके इर्दगिर्द पाँच दिनतक यात्रा करनी है।

मोहनदास

गुजराती (जी० एन० ६७८१) की फोटो-नकलसे।

२६२. पत्र : फूलचन्द शाहको

२४ अप्रैल, १९२९

भाईश्री फूलचन्द,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हें नानाभाईसे जो कहना हो कहो। उसके काममें विघ्न डालनेके लिए वेणीलालको न बुलाना। नानाभाई उसे भेज सकते हों तो मैं कुछ नहीं कहूँगा।

तुम तबीयत बिगाड़कर तो नहीं लौटे हो न? अबीसीनिया गये थे या नहीं? यदि जानने लायक कुछ अनुभव हो तो लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २८६०)की प्रतिसे।
सौजन्य: शारदाबहन शाह

२६३. भाषण: पोतुनूरुकी सार्वजनिक सभामें

२४ अप्रैल, १९२९

खादी कोष तथा लाजपतराय कोषके लिए आपने जो थैलियाँ भेंट की हैं उनके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। आपने मुझसे यहाँ पुस्तकालयका[1] शिलान्यास करनेके लिए कहा है और मुझे ऐसा करनेमें खुशी हो रही है, क्योंकि मुझे यकीन है कि इससे एक लाभकारी उद्देश्यकी सिद्धि होगी। मैं चाहता हूँ कि आप इससे हमेशा लाभ उठायें। आपने मुझे खादी कोषके लिए पैसा और जवाहरात दिये हैं लेकिन मैं आपसे केवल खद्दर पहनने तथा सारे विदेशी वस्त्र उतार देनेके लिए कहता हूँ। यदि आपने ऐसा ही किया होता तो फिर इन चन्दोंकी जरूरत ही न पड़ती। मैं समझता हूँ कि यहाँ शराब पीनेवाले लोग नहीं होंगे। आज ब्रान्डी और दूसरे मादक पेय शैतानों और दानवोंके समान हैं। अभी मुझे पता चला कि यहाँ पंचमोंमें एक नियम है कि यदि किसीको शराब पीते हुए देखा जाता है तो उसपर पाँच रुपयेका जुर्माना लगाया जाता है। यह एक बड़ी अच्छी बात है।

१. विवेकानन्द पुस्तकालय।

इसके बाद उन्होंने अस्पृश्यता तथा बालविवाहके खतरनाक अभिशापको दूर करनेकी अपील की और कहा कि यदि आप लोग स्वराज्य हासिल करनेको कृत-संकल्प हैं तो आप अपने कार्यक्रमकी छोटी-से-छोटी चीजको भी नगण्य मानकर छोड़ नहीं सकते।[1]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २७-४-१९२९

३६४. भाषण : गुण्डुकोलनुमें[2]

२४ अप्रैल, १९२९

खद्दर किसी भी कीमतपर महँगा नहीं है। यदि आपके किसी स्वजन और प्रिय व्यक्तिकी कैद हो जाये तो क्या उसे किसी भी कीमतपर छुड़ानेके लिए आप भरसक प्रयत्न नहीं करेंगे। यदि आप स्वराज्य प्राप्त करना चाहते हैं तो इसके लिए त्यागकी भावनाका होना जरूरी है। खद्दरको त्यागकी भावनाके साथ पहनना चाहिए। खद्दर तो महँगा है, यह कहनेका मतलब है कि आप स्वराज्य बिना कोई मूल्य चुकाये हासिल करना चाहते हैं। आपका कहना है कि विदेशी कपड़ा सस्ता है। चाहे वह मुफ्तमें भी मिले तो भी लेने योग्य नहीं है। इसके पीछे आपकी दासताकी बुराई और आपकी दुर्बलता छिपी हुई है। इससे छुटकारा पाइए और कपड़ेके मामलेमें आत्म-निर्भर बनिए। किसी भी हालतमें अपना पैसा अपने देशसे बाहर मत जाने दीजिए।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २७-४-१९२९

२६५. एक अध्यापिकाका प्रमाणपत्र

सरोजिनी देवीके शिष्टमण्डलकी महान सफलताके बारेमें अमेरिकासे प्राप्त पत्रोंमें से मैं एक दूसरा पत्र यहाँ दे रहा हूँ जिसे डेना हॉल स्कूल, वेलेज़ली, मैसाच्युसेट्सकी उप-प्रधानाध्यापिका, कुमारी डोरोथी वाल्डोने लिखा है।[3]

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५-४-१९२९

१. इसके बाद एक चाँदीकी कन्नी ३० रुपयेमें नीलाम की गई।

२. गांधीजी अपने कई व्यस्त कार्यक्रम निपटानेके बाद गाँवमें सवा आठ बजे पहुँचे थे। विश्रामके लिए लेटनेसे पहले बहुतसे ग्रामीणोंने उनसे कुछ शब्द कहनेका बार-बार अनुरोध किया। श्रोताओंमें से किसीने यह कह दिया कि खादी उनके लिए बहुत महँगी है।

३. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है।

२६६. विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार

स्थानिक स्वराज्य संस्थाओंका कर्त्तव्य

श्रीयुत जयरामदास दौलतरामने स्थानिक स्वराज्य संस्थाओंके नाम एक गश्ती चिट्ठी भेजी है। उसमें से निम्नलिखित अंश उद्धृत करता हूँ:

> **हमारे देशकी स्थानिक स्वराज्य संस्थाएँ हमारे काममें नीचे बताये जा रहे तरीकोंसे महत्त्वपूर्ण मदद दे सकती हैं:**
>
> **१. उनके इलाकेमें जो भी विदेशी वस्त्र आयात किया जाता हो उसपर वर्जनात्मक चुंगी या इसी तरहका कोई दूसरा कर लगाकर। जहाँ स्थानिक स्वराज्य संस्थाओंसे सम्बन्धित वर्तमान कानून ऐसा करनेकी इजाजत न देते हों वहाँ प्रान्तीय विधान मण्डलोंमें अपने स्थानिक प्रतिनिधिसे मिलकर उक्त कानूनमें अनुकूल परिवर्तन करानेके लिए कहना चाहिए।**
>
> **२. हाथकते और हाथबुने सूतकी खादीको चुंगी या इसी तरहके दूसरे स्थानिक करोंसे मुक्त करके।**
>
> **३. खादीकी तथाकथित महँगाईकी परवाह किये बिना अपने आवश्यक कपड़ेकी सारी जरूरत हाथकते और हाथबुने सूतकी खादी खरीदकर ही पूरी करें।**

हम जानना चाहेंगे कि कितनी स्थानिक स्वराज्य संस्थाओंने इस अपीलपर ध्यान दिया है और किस हदतक अमल किया है।

कांग्रेस कमेटियोंकी कसौटी

विदेशी-वस्त्र-बहिष्कार-समितिने प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियोंको एक गश्ती चिट्ठी भेजकर उनसे उनके प्रान्तमें बहिष्कारकी प्रगतिकी जानकारी माँगी है। किन्तु इस कमेटीकी ओरसे जो पत्रिका प्रकाशित होती है उसके ताजा अंकमें मैं देखता हूँ कि कई कमेटियोंने इस चिट्ठीकी उपेक्षा की है; तथा कईने जो रिपोर्ट भेजी है उसमें महज खाना-पूरीकी गयी है। अगर कांग्रेस कमेटियाँ सुव्यवस्थित ढंगसे काम करनेवाली संस्थाएँ हों तो उन्हें नियमित रूपसे इस तरहकी उत्साह-वर्धक रिपोर्ट भेजनेमें कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए। अपने दौरेके दरम्यान मैं देख रहा हूँ कि अगर जनताके नेता इस कामकी दृष्टिसे उसे संगठित करें तो जनता बहिष्कारके लिए तैयार है। जानकारी निम्नलिखित मुद्दोंके सम्बन्धमें माँगी गई है:

> **१. बहिष्कार कोषके लिए इकट्ठी की गई राशि।**
>
> **२. सम्बन्धित सप्ताहमें बहिष्कारके लिए जो स्वयंसेवक काम करते रहे उनकी औसत संख्या।**

३. उस सप्ताहमें स्वयंसेवक कितने घरोंमें पहुँचे?

४. कितने लोगोंने बहिष्कार करनेका वचन दिया?

५. आपके क्षेत्रमें वर्षमें खपनेवाले विदेशी कपड़ेकी कीमत।

६. संख्या-३में निर्दिष्ट प्रचार-कार्य द्वारा जितनी मात्रामें विदेशी कपड़ेका बहिष्कार हुआ हो, उसकी कीमत।

७. बहिष्कारके प्रचारके उद्देश्यसे कितनी सभाओं, जुलूसों, नगर-कीर्तन यात्राओं या खादी-बाजारोंका आयोजन किया गया?

८. बेची गई खादीकी कीमत?

९. कमेटीके प्रयत्नोंके फलस्वरूप कितने नये चरखे चलने लगे हैं?

१०. उन नगरपालिकाओं और जिला-बोर्डोंकी संख्या जो इस कमेटी द्वारा विदेशी-वस्त्र-बहिष्कार-पत्रिकाके दूसरे अंकमें पृष्ठ ४ पर दिये गये सुझावों-को अभीतक नहीं अपना पाये हैं।

पत्रिकाके इस अंशमें अन्तमें यह कहा गया है:

इन साप्ताहिक रिपोर्टोंके सिवा कांग्रेस कमेटियोंको ३० अप्रैल, १९२९ तक किये हुए अपने कुल कामकी समेकित रिपोर्ट भी भेजनी चाहिए क्योंकि १ मईका दिन इस सम्बन्धमें सारे राष्ट्रमें हुए कामका लेखा-जोखा निकालनेके लिए तय हुआ है। ये रिपोर्टें इस दफ्तरमें ६ मईतक आ ही जानी चाहिए। जो रिपोर्टें इस समयके भीतर नहीं आयेंगी उनका समावेश उन बड़ी रिपोर्टोंमें, जिन्हें यह कमेटी मईके अन्तिम सप्ताहमें कार्यसमितिको सौंप देना चाहती है, नहीं हो सकेगा।

जाहिर है कि यह जानकारी अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके पास उसकी २४ मईको होनेवाली बैठकके पहले ही पहुँच जानी चाहिए।

सात शहर

विदेशी-वस्त्र-बहिष्कार-समिति द्वारा प्रकाशित पत्रिका बताती है कि विदेशी कपड़ेका आयात मुख्यतः कलकत्ता, बम्बई, कराची, मद्रास, दिल्ली और अमृतसर शहरोंमें होता है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि यदि बहिष्कारका कार्य अच्छी तरह संगठित किया जाये तो उसे सिद्ध करना कितना आसान है।

पत्रिका इसी सम्बन्धमें आगे कहती है:

यदि इन शहरोंके स्थानिक कार्यकर्त्ता पर्याप्त उत्साहसे काम करें तो काफी-कुछ किया जा सकता है। इनमें से कुछ शहरोंमें (शायद कलकत्ता और कान-पुरमें) कार्यकर्त्ताओंने औपचारिक रूपमें दूकानदारोंसे सम्पर्क स्थापित कर लिया है। आशा है अन्य नगर भी इनका अनुकरण करेंगे। कानपुरमें हुए कामको देखते हुए, यही उपयुक्त समय है कि अब दिल्ली और अमृतसरके कार्यकर्त्ता भी कानपुरके समकक्ष खड़े होनेके लिए कुछ कारगर कदम उठायें।

इसका प्रभाव

पत्रिकाने 'टैटरसल' से निम्नलिखित उद्धरण दिया है। उद्धरण बताता है कि बहिष्कारकी इस थोड़ी-बहुत सफलतासे ही मैनचेस्टर बाजारपर कितना अधिक असर पड़ा है:

> **वस्त्र-व्यापारी भारतकी माँगके अभावको महसूस कर रहे हैं। . . . भारतीय खरीदारोंके अलग हो जानेपर मैनचेस्टरमें कामकी तेजी बनी नहीं रह सकती।**
>
> **चीन और दूर-पूर्वी देशोंसे (मैनचेस्टरके मालके बारेमें) अधिक जानकारी माँगी जानेकी खबरें हैं। भारत अब भी . . . बहिष्कार आन्दोलनके कारण इसमें पीछे ही है।**

खादीका उत्पादन

कुछ शंकालु देशभक्त अभी भी यह सवाल उठा रहे हैं कि विदेशी वस्त्रोंके सफल और पूर्ण बहिष्कारके फलस्वरूप उत्पन्न होनेवाले वस्त्राभावकी पूर्ति खादी कैसे कर पायेगी? प्रश्न निस्संदेह सर्वथा संगत है। पर इसका उत्तर भी आसानीसे दिया जा सकता है। खादी ही एक ऐसी चीज है जिसकी माँग उत्पन्न होनेपर इसमें प्रसारकी असीमित सम्भावनाएँ मौजूद हैं। हर एक झोंपड़ी थोड़ी-सी पूँजीसे एक कताई-मिलकी शक्ल अख्तियार कर सकती है। बातकी बातमें चरखे लगाये जा सकते हैं। और कौशल तथा समय तो उपयोगके अभावमें व्यर्थ जा रहा है। और जब खादीकी माँग आम और सुस्थिर हो जायेगी, तब आज विदेशी वस्त्रोंके बाजारोंका मुँह जोहनेवाले छोटे-छोटे दूकानदार खादीका काम हाथमें लेना अपना सौभाग्य मानने लगेंगे। तब खादीके अतिरिक्त उत्पादनके लिए प्रयास करनेमें उसे लाभ दिखने लगेगा। साथ ही यह भी याद रखना चाहिए कि बाजारसे यह अपेक्षा नहीं की जाएगी कि वह करोड़ों व्यक्तियोंके लिए पर्याप्त खादीके भण्डार रखे, ठीक उसी तरह जैसे कि हम बिस्कुट-निर्माताओंसे यह अपेक्षा नहीं रखते कि वे अपने ही बिस्कुटोंसे करोड़ों लोगोंकी आवश्यकताएँ पूरी कर देंगे। एक बार खादीके चल निकलनेके बाद तो मेहनतकश लोग खुद ही सूत कातकर उसे अपने बुनकरोंसे बुनवाने लगेंगे। पहले भी वे यही करते थे। यह विकेन्द्रीकरण अत्यन्त ही स्वाभाविक है और इसमें धोखा-धड़ीकी कमसे-कम गुंजाइश रह जाएगी। इसलिए जरूरत सिर्फ इस बातकी है कि हमारे खादी-कार्यकर्त्ता खादी-उत्पादनकी विधियों और इसके कौशलको सीखें और अवसर पाकर गाँवोंको उसके लिए तैयार कर दें। देशमें खादीका वातावरण तैयार होते ही, गाँवोंकी ओरसे गाँवोंमें उसका संगठन किये जानेकी आवाज उठने लगेगी। इस प्रकार खादीमें आत्म-उत्पादनकी क्षमता मौजूद है, जबकि मिलके वस्त्रोंमें इसका नितान्त अभाव है। इसमें सन्देह नहीं कि खादीकी माँग आम तौरपर बढ़नेपर कुछ समयतक तो जनताको मोटी खादीपर ही संतोष करना पड़ेगा। अ० भा० च० सं० का अपना अनुभव है कि महीन खादीका उत्पादन समय-साध्य प्रशिक्षणके द्वारा ही सम्भव है।

महिलाएँ साधारण तौरपर मोटे किस्मका सूत आसानीसे कात सकती हैं, लेकिन उनको महीन सूत कातना सिखानेमें समय लगेगा। यह उनको धीरे-धीरे ही आयेगा, जिसके लिए उनको धैर्यपूर्वक प्रशिक्षित करना पड़ेगा। गत सात वर्षोंमें खादी जितनी महीन बन गई है वह काफी उत्साहवर्धक है। परन्तु खादीकी माँग अनिवार्य और सुनिश्चित बन जानेपर महीन किस्मकी खादीके उत्पादनको कुछ समयके लिए स्थगित करना ही पड़ेगा। और मुझे पूरा भरोसा है कि वैसा अवसर आनेपर लोग अपने उस जोशमें मोटी खादीके खुरदरेपन पर इतनी नाक-भौं सिकोड़ना भूल जायेंगे, और मोटी या महीन जैसी भी हो, शुद्ध खादी पाकर खुश रहेंगे।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २५-४-१९२९

२६७. शैतानी पंजा

हम उस साम्राज्यके अधिवासी हैं, जिसकी कीर्तिके आगे रोमका प्राचीन गौरव भी पानी भरता है।

संसारके कुल क्षेत्रफलका चौथाईसे भी ज्यादा हिस्सा और उसकी आबादीका एक चतुर्थांश हमारे कब्जेमें है। यानी दुनियाके कुल १,८५२,०००,-००० निवासियोंमें से ४६,००,००,००० लोगोंपर हमारी हुकूमत है। हमारे ३००,००० लोग भारत, लंका, ब्रिटिश उत्तरी बोर्नियो, ब्रिटिश मलाया, पैलेस्टाइन, ईराक और एशियाके दूसरे भागोंमें बसे हुए करीब ३३,३३,७३,००० लोगोंपर हुकूमत करते हैं, जो बीस लाख वर्गमीलसे भी ज्यादाके क्षेत्रफलमें आबाद हैं। इस बातको याद रखते हुए आनन्दसे अपना पाइप पियो ! ! !

आफ्रिकामें ३८,२०,००० वर्गमीलके क्षेत्रफलमें बसनेवाले ६ करोड़ वतनियों पर ७,०६,००० अंग्रेज राज्य कर रहे हैं। कनाडामें ५० लाख और आस्ट्रेलियामें ६० लाखसे कुछ अधिक अंग्रेज निवासी दुनियाकी सतहके ७२,७८,००० वर्गमील घेरेमें बसे हुए हैं। . . .

हमारा व्यापारिक जहाजी बेड़ा दुनिया-भरमें सबसे बड़ा और अभूतपूर्व है। ये जहाज हर साल एक अरब गजसे भी अधिक सूती कपड़ा और १ करोड़ २० लाख पौंडसे भी ज्यादाकी कीमतकी मशीनें भारत ले जाते हैं — यह भारत वही देश है, जहाँसे अंग्रेज हिस्सेदारों, साहूकारों और नौकरोंको हर साल ३ करोड़ पौंडकी रकम मिलती है ! ! !

ब्रिटिश जहाजी बेड़ेके लिए खुदाके शुक्र-गुजार बनो और 'हिज मैजेस्टी दि किंग' (बादशाह सलामत)की दीर्घायुकी दुआ मनाते हुए प्यालियाँ ढालते चलो !

ऊपरकी पंक्तियाँ 'ब्रिटानिया' पत्रिकाके पिछली १५ फरवरीवाले अंकमें 'मौज करो' (चिअर अप) शीर्षकसे छपे हुए एक लेखके कुछ अंश है। एक सज्जन अंग्रेजने यह लेख मेरे पास निम्नलिखित टिप्पणीके साथ भेजा था :

> **अगर श्रीयुत गांधी, जो इन बातोंपर हड़ताल फेरनेकी घातमें रहते हैं, इस भयंकर पचड़ेको देखेंगे तो मुमकिन है, वह अपने किसी चरखेसे अपनी गर्दन काट डालेंगे।**

फिलहाल तो मैंने यह तजवीज की है कि मैं अपनी गर्दन न काटूँ। मैं उस दिनको देखनेके लिए जिन्दा रहना चाहता हूँ जब चरखे द्वारा वह अरबों गज कपड़ा भारतमें ही बनने लगेगा, जिसे 'दुनियाका सबसे बड़ा और अभूतपूर्व व्यापारिक जहाजी बेड़ा' विलायतसे भारतमें लाता है। देर सिर्फ भारतको अपनी कुंभकर्णी निद्रासे जागकर होशियार होनेकी है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २५-४-१९२९

२६८. एक राष्ट्रीय दोष

यद्यपि हम अपनी शारीरिक सफाईके लिए दुनियामें मशहूर हैं, फिर भी हम यह सर्टिफिकेट पाकर सन्तुष्ट नहीं हो सकते। दूसरे देशोंके मुकाबले हमारी सफाईका आधार हमारी हर रोज नहाने-धोनेकी आदत और मकानको साफ-सुथरा रखनेका हमारा स्वभाव है। लेकिन मुझे भय है कि हमारी सफाईकी भावना यहीं खतम हो जाती है। हमारी सफाई हमारे पड़ोसीको नुकसान पहुँचाती है, उसके लिए खतरनाक बन पड़ती है। यही वजह है कि हमारे देहात गोबर-गारेके ढेर सरीखे और उनकी सड़कें व गलियाँ आमद-रफ्तके लिए बिलकुल बेकार होती हैं, हालाँकि खासियत यह है कि देशके लाखों स्त्री-पुरुषोंको नंगे पैर ही चलना पड़ता है। हम अपने घरोंको झाड़ना-बुहारना तो जानते हैं लेकिन साथ ही घरके कूड़े-करकटको सड़कोंपर फेंकना भी बखूबी जानते हैं, और ऐसा करते समय समाजकी भलाईका तनिक भी खयाल नहीं रखते। हम व्यक्तिशः तो साफ रहते हैं लेकिन राष्ट्र और समाजके एक सदस्यके नाते, उसके एक नन्हेसे अंगके नाते हम सफाईसे नहीं रहते।

जब-जब मैं दक्षिण भारतमें मुसाफिरी करता हूँ, यह भयंकर कमजोरी बरबस मेरा ध्यान अपनी ओर खींचती है और मुझे बेचैन व गमगीन बना देती है। यह बुराई दक्षिण भारतकी कोई खासियत नहीं है, लेकिन मेरे खयालमें वह यहाँ ज्यादा प्रखर रूपमें मौजूद है। दक्षिण भारतमें नदियोंके जलको जिस तरह गन्दा किया जाता है, देशके और किसी हिस्सेमें उतना नहीं किया जाता।

पिछली १७ तारीखको सवेरे ६ बजे हम मोटरपर सवार होकर बेजवाड़ासे गन्टूरके लिए रवाना हुए। रास्तेमें हमें कृष्णा नदी पार करनी पड़ी। दक्षिणमें

रेल गाड़ीसे मुसाफिरी करते समय जो दृश्य मैंने अक्सर दुःखपूर्वक देखे हैं, उन्हींको अब नजदीकसे देखनेका मौका मिला। यह कहूँ तो चलेगा कि हमारी मोटर नदी-तटसे कुछ ही गजकी दूरीपर पाखाना फिरते हुए सैकड़ों स्त्री-पुरुषोंके पाससे होकर निकली। लोग इसी नदीमें नहाते और इसीका पानी पीते हैं। इससे लोगोंकी बढ़ी हुई निर्लज्जता तो प्रकट होती ही है; साथ ही तन्दुरुस्तीके मामूली नियमोंकी घोर उपेक्षा भी प्रकट होती है। आर्थिक दृष्टिसे देखें तो भी इतनी कीमती खाद यों ही नष्ट हो जाती है। अगर लोग खेतोंमें पाखाना फिरें और उसे जमीनकी प्राणपूर्ण सतहमें गाड़ दिया करें तो वह पोरस मिट्टीमें मिलकर अच्छी-सी खाद बन जाये और साथ ही नागरिकोंकी तन्दुरुस्तीको धक्का पहुँचानेवाली उस गन्दगीका डर मिट जाये जो नदी-किनारे पाखाना फिरनेसे पैदा होती है।

नगरपालिकाओंके लिए यह एक अच्छा-सा कार्यक्षेत्र है, बशर्ते कि वे अपनी देख-रेखमें बसनेवाले नागरिकोंके स्वास्थ्यकी रक्षाको अपना मुख्य कर्त्तव्य मानें और उसका पालन करें। मुझे मालूम है, लोगोंमें यह कहनेकी प्रथा-सी चल पड़ी है कि अगर हम इस तरहके सुधारोंकी तरफ ध्यान देंगे, तो राष्ट्रके स्वराज्य-प्राप्तिके काममें बाधा पड़ेगी। मैं साहसपूर्वक यह कहता हूँ कि राष्ट्रीय स्वास्थ्य और सफाईकी रक्षा स्वराज्यका ही काम है और किसी भी कारणसे एक दिनके लिए भी उसकी उपेक्षा नहीं की जानी चाहिए। सचमुच ही अगर हमें शान्तिपूर्ण उपायों द्वारा स्वराज्य हासिल करना है, तो राष्ट्रीय जीवनकी हरएक छोटी-बड़ी बातपर पूरा-पूरा ध्यान दिया जाना चाहिए। इस तरहका काम कार्यकर्त्ताओंमें एकता पैदा करेगा और उनके तथा जनताके बीचकी खाईको पाटकर आपसके सम्बन्धको अटूट बनायेगा। इस तरहका अटूट सम्बन्ध वर्तमान शासन-प्रणालीको समूल उखाड़ फेंकनेके लिए बहुत जरूरी है। हमारे राष्ट्रकी कमजोरियोंपर ही यह शासन प्रणाली जी रही है। जब कोई ऐसी कमजोरी ही नहीं बचेगी जिसका लाभ उठाया जा सके तब वह शासन-प्रणाली अपने आप नष्ट हो जायेगी। इस देशमें विदेशी सरकारका वही महत्त्व है जो एक रोगी शरीरमें विजातीय तत्त्व — जैसे, पीब, कफ आदि — का होता है। और जिस तरह इस विजातीय तत्वको मिटानेके लिए जीवनयन्त्रको भीतरसे स्वस्थ बनानेकी जरूरत पड़ती है उसी तरह विदेशी सरकारको मिटानेके लिए राष्ट्रीय रोगोंके तमाम अन्दरूनी कारणोंको मिटाना जरूरी है। सामाजिक गन्दगी ऐसे रोगसे किसी कदर कम नहीं है।

जो नगरपालिका इस गन्दगी-रूपी शैतानसे लड़ाई ठानेगी, उसे जरूर ही कड़ी परीक्षाका सामना करना पड़ेगा। इन सुधारोंके लिए धन-संग्रह करनेमें उसे उतनी कठिनाई नहीं होगी, जितनी लोगोंके भयंकर राष्ट्रीय पूर्वाग्रहों और स्वभावका रूप धारण कर चुकी आदतोंसे भिड़नेमें होगी। अतः स्वराज्यके लिए यह एक अच्छी-सी तालीम हो जायेगी।

आर्थिक दृष्टिसे भी इन सुधारोंमें न केवल बहुत थोड़ा धन व्यय होगा, बल्कि आखिर वे ही आमदनीके जरिये बन जायेंगे। मेरी रायमें, भारतवर्षमें ये सुधार तभी

कामयाब हो सकते हैं जब नगरपालिकाओंके सदस्य खुद अपने हाथमें झाड़ू और टोकरी लेकर काम करेंगे। इसमें शक नहीं कि यह इलाज बहादुराना इलाज है, लेकिन साथ ही सस्ता और कारगर है तथा इसे फौरन ही कार्य रूप दिया जा सकता है। जब नगरपालक लोग इन सुधारोंको तहेदिलसे चाहने लगेंगे, तो वे देखेंगे कि असंख्य स्वयंसेवक स्वेच्छासे उनका हुक्म उठानेको तैयार हैं।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २५-४-१९२९

२६९. बी० आई० एस० एन० कम्पनी द्वारा प्रतिवाद

मैंने आन्ध्र देशके गाँवोंकी यात्राके दौरान 'हिन्दू' में प्रकाशित फ्री प्रेसका निम्नलिखित सन्देश देखा है:

> **बी० आई० एस०.एन० कम्पनीने 'इंग्लिशमैन' को दिये गये एक वक्तव्यमें महात्मा गांधी द्वारा लगाये गये आरोपोंका प्रतिवाद किया है। महात्मा गांधीने रंगून जानेवाले यात्री-पोतोंमें सफाईकी व्यवस्थाका उल्लेख करते हुए उसे मुसाफिरोंकी भलाई और उनकी भावनाओंकी घोर उपेक्षा बतलाया था।[1] कम्पनीका कहना है कि महात्मा गांधीका खयाल था कि डेकपर यात्रा करनेवाले यात्रियोंको दूसरे दर्जेके यात्रियोंकी सुविधाएँ मिलती हैं। महात्मा गांधीने जिसे काल-कोठरी कहा है वह वास्तवमें अतिरिक्त स्थान था जिसकी व्यवस्था डेक-यात्रियोंके लिए कर दी गई थी और उसमें हवा आने-जानेके लिए विपादद्वार खुले रखे गये थे। सफाईकी व्यवस्थाके बारेमें कम्पनीका कहना है कि संडासों आदिकी सफाईके लिए पर्याप्त संख्यामें कर्मचारी मौजूद रहते हैं और ऐसी किसी भी असुविधाकी कोई भी शिकायत कमाण्डर या पोतके प्रधान अधिकारीके पास नहीं आई। अस्पतालकी व्यवस्था भी रहती है, पर महात्मा गांधी और उनके मित्रोंने रंगूनसे अपनी वापसीकी यात्राके दौरान अनुमति लिए बिना ही उसमें अपना डेरा जमा लिया था।**

क्या ही अच्छा होता कि इस बयानका पूरा पाठ[2] मेरे सामने होता। परन्तु यदि फ्री प्रेस द्वारा भेजे गये तारमें बी० आई० एस० एन० कम्पनीके प्रतिनिधिके बयानका काफी-कुछ ठीक सारांश आ गया है, तो वह खेदजनक है। अपने यहाँकी शर्मनाक स्थितिको सुधारना तो अलग रहा, कम्पनीके प्रतिनिधिने डेक-यात्रियोंके साथ किये जानेवाले बर्तावके बारेमें मेरे व्यक्तिगत अनुभवोंपर आधारित मेरी एक अत्यन्त ही संयत भर्त्सनाका प्रतिवाद करना ही ज्यादा पसन्द किया। मैं समझता हूँ कि मैं

१. देखिए "डेकके मुसाफिर", ११-४-१९२९।
२. देखिए "एक कुत्सित दोषारोप", २-५-१९२९।

इतना मूढ़ तो नहीं हूँ कि डेक-यात्रियोंके लिए दूसरे दर्जेके यात्रियों जैसी सुविधाएँ दी जानेकी उम्मीद करूँ। हाँ, लेकिन मुझे इस बातका दुःख जरूर है कि डेक-यात्रियों और दूसरे दर्जेके यात्रियोंके बीच एक इतना अस्वाभाविक-सा अन्तर किया जाये। यह तो ठीक है कि डेक-यात्रियोंको सैलून-यात्रियों जैसी बड़ी-बड़ी सुविधाएँ और वैसा आराम नहीं दिया जा सकता, लेकिन संडासों इत्यादिकी सफाई और रहनेके लिए पर्याप्त तथा स्वच्छ स्थान तो ऐसी चीजें हैं जो उनको बिना माँगे मिलनी ही चाहिए। साफ-सुथरे ढंगसे रहनेके आदी लोगोंके लिए भी यह सम्भव होना चाहिए कि वे बीमार पड़नेका, या संडासोंकी उचित व्यवस्थाके अभावके कारण मेरी तरह अधपेट भोजन करनेका खतरा उठाये बिना डेक-यात्रियोंके रूपमें यात्रा कर सकें।

'कालकोठरी' को 'डेक-यात्रियोंके लिए व्यवस्थित अतिरिक्त स्थान' नहीं बताया जाना चाहिए। मेरा सुझाव है कि डेक-यात्रियोंको ऐसे किसी भी स्थानपर कब्जा जमानेसे रोका जाना चाहिए जो मनुष्योंके रहनेके लिए न बनाया गया हो। मैं बिलकुल मानता हूँ कि डेक-यात्री घिचपिच होनेसे बचने और चलने-फिरनेकी थोड़ी सुविधा महसूस करनेकी खातिर किसी भी ऐसे स्थानमें डेरा जमाना चाहेंगे जिसमें उनकी पहुँच हो सके।

'कम्पनी' के पास संडासे इत्यादि की सफाईके लिए पर्याप्त संख्यामें कर्मचारी मौजूद रहनेका यह मतलब तो नहीं होता कि वे संडासोंकी सफाई करते ही हैं। मेरा आरोप तो यह है कि संडासोंकी सफाई नहीं की जाती, उनमें से आधे संडासोंके दरवाजे टूटे-फूटे पड़े हैं जिसके कारण उनको अन्दरसे बन्द करना सम्भव नहीं रहता और यात्रियोंको देखते हुए संडासोंकी संख्या भी बहुत ही कम है।

मुझे तो यही उम्मीद थी कि कम्पनीका प्रतिनिधि ऐसी चालबाजीका सहारा नहीं लेगा जैसो कि इन मामलोंमें अक्सर की जाती है, जैसे, 'पोतके प्रधान अधिकारीके पास किसी भी असुविधाके बारेमें कोई शिकायत नहीं आई।' डेकपर यात्रा करनेवाले लोग जिस श्रेणीके होते हैं उस श्रेणीके लोग असुविधाओंकी शिकायतें करनेका ढंग जिस दिन सीख लेंगे, उस दिन फिर मेरे जैसे लोगोंके लिए कोई काम ही नहीं रह जायेगा। दुर्भाग्यकी बात तो यह है कि हम लोगोंका राष्ट्रीय चरित्र ही ऐसा है कि हम पहले तो अपना असन्तोष व्यक्त ही नहीं करते और जब करते भी हैं तो बड़े अनगढ़ तरीकेसे करते हैं और हम लोग ऐसी-ऐसी असुविधाएँ भी बर्दाश्त कर लेते हैं जो किसी भी आदमीको कभी बर्दाश्त नहीं करनी चाहिए। और मैं मानता हूँ कि सबसे बड़ी बात तो यह है कि डेकपर चलनेवाले साधारण यात्रियोंको सफाईका कोई खयाल ही नहीं होता। लेकिन मैं तो समझता हूँ कि इसीलिए यात्रियोंको लाने-ले जानेका काम करनेवाली कम्पनीके लिए यह और भी जरूरी हो जाता है कि वह अपने पोतों या अपनी रेलगाड़ियोंमें सफाईकी व्यवस्था करनेके मामलेमें और अधिक सावधानी बरते। यदि यह अजीब-सा बयान कम्पनीके प्रतिनिधिके मूल वक्तव्यका बिलकुल ठीक-ठीक सारांश है, तो इसके अन्तमें जो बात कही गई है वह एकदम मिथ्या और अपमानपूर्ण है। मैं किसी भी ऐसे स्थानपर कब्जा जमानेका आदी

नहीं हूँ जिसका मैं अधिकारी नहीं। ऐसा आचरण मेरे अबतकके जीवनके विरुद्ध पड़ता है। और अस्पतालके लिए सुरक्षित स्थानमें तो मैं अनजाने भी डेरा नहीं जमा सकता था। कम्पनीके अधिकारियोंने ही वह स्थान मेरे और मेरे मित्रोंके लिए निश्चित किया था। इसलिए अनुमतिके बिना किसी स्थानपर कब्जा जमानेका कोई सवाल ही नहीं उठता। अब मैं बताता हूँ कि मुझे किस स्थानपर डेरा डालनेकी अनुमति दी गई थी। वह पोतके सबसे अगले भागमें दो लाइफ-बोटोंके बीच, एक खुला स्थान था और उसके चारों ओर यात्री लोग थे, और उस स्थानमें केवल मैं और मेरे साथी ही नहीं, अन्य लोग भी थे। और मैंने देखा था कि पोतके अधिकारी उस स्थानको आदमियोंको डूबनेसे बचानेके अभ्यासोंके लिए भी इस्तेमाल करते थे। वहाँ ऐसा कोई सूचना-पट नहीं था जिसपर लिखा हो कि वह स्थान अस्पतालके कामके लिए सुरक्षित था और मैं यह भी बतला दूँ कि उस स्थानपर तीनों दिनों तक कोयलेकी धूलके गुबार लगातार छाये रहते थे। वहाँ किसी भी चीजको साफ रखना मुश्किल था। यदि ऐसे स्थानको अस्पतालके लिए सुरक्षित भी किया गया था तो कम्पनी या चिकित्सा-अधिकारीकी इस सूझपर मुझे तरस आता है कि वे बीमारोंको चिकित्साके लिए एक ऐसे स्थानपर रखनेकी भी सोच सकते हैं जिसमें किसी स्वस्थ व्यक्तिका रहना भी खतरनाक हो, जो कुछ किस्मके रोगियोंके लिए तो घातक भी सिद्ध हो सकता था। और यह बतलानेकी तो कोई जरूरत ही नहीं रह जाती कि जिस स्थानमें अधिकारियों और यात्रियोंका आना जाना लगा ही रहता हो उस स्थानमें व्यक्तिगत एकान्त या परदेकी तो कोई बात ही नहीं उठती। मैंने अन्य पोतोंपर डेक-यात्रियोंके लिए की जानेवाली अस्पतालकी व्यवस्था देखी है। उनमें अस्पतालके लिए एक अलग कैबिन रहता है जिसमें रोगियोंके वास्ते अलगसे संडासोंकी व्यवस्था की जाती है। एस० एस० 'एरोंडा' पर मैंने और मेरे साथियोंने इस प्रकारकी कोई व्यवस्था नहीं देखी। और फिर मैंने यदि उस स्थानपर अनधिकृत रूपसे कब्जा जमा भी लिया था तो निश्चय ही पोतके कप्तान और अन्य अधिकारियोंका कर्त्तव्य था कि वे उस अनधिकृत कार्यकी ओर मेरा ध्यान आकर्षित करते। मैं आशा करता हूँ कि कम्पनी अपने अपमानजनक कथनको वापस ले लेगी और उसके लिए या तो क्षमायाचना करेगी या फिर इतने अविवेकपूर्ण ढंगसे लगाये गये अपने आरोपको सिद्ध करेगी। निश्चय ही कम्पनीके लिए लाभदायक यही रहेगा कि वह ऐसे दम्भपूर्ण प्रतिवादोंका सहारा लेनेके बजाय अपनी गलतियोंको ही सुधार ले।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५-४-१९२९

२७०. आन्ध्र देशमें [–२]

दूसरे सप्ताहमें मैं जहाँ-जहाँ गया और वहाँ जो-कुछ धन इकट्ठा किया, उसका विवरण पाठकोंके लिए अन्यत्र दिया जा रहा है। हालाँकि मुझे आन्ध्रके ग्राम्यजीवनका दिनोंदिन ज्यादा अन्तरंग परिचय होता जा रहा है, लेकिन दौरेकी रफ्तार बहुत तेज है जो मुझे पसन्द नहीं है। मैं गाँवोंको देख कर भी भागाभागीमें उन्हें देख नहीं पाता। निस्सन्देह चन्दा इकट्ठा करना अच्छा तो है, लेकिन इस भागादौड़ीमें गाँवोंके अपेक्षाकृत अधिक मूल्यवान अनुभवसे वंचित होना पड़े, तो वह उतना अच्छा नहीं रह जाता। लेकिन मेरी यात्राको आर्थिक दृष्टिसे सफल बनाने तथा सात सप्ताहोंकी यात्राके दौरान ज्यादासे-ज्यादा गाँवोंतक खादीके सन्देशको पहुँचानेके लिए मेरे जो सेवानिष्ठ साथी कार्यकर्त्ता अविश्रान्त जुटे हुए हैं उनके द्वारा निर्धारित कार्यक्रमोंके बारेमें शिकायत करना मेरी मूर्खता होगी। गाँववालोंके सामने अपने भाषणोंमें मैं स्वर्गीय सर सुरेन्द्रनाथ बनर्जीके उदाहरणकी नकल कर रहा हूँ। लगभग १८९० में जब वह इंग्लैंडमें थे, तब उनसे पूछा गया कि वह लगभग सभी सभाओंमें एक ही भाषण क्यों दोहराते हैं। उन्होंने उत्तर दिया: "क्योंकि मुझमें जो सर्वोत्तम है उसे मैं सबको समानरूपसे देना चाहता हूँ। अपनी पूरी योग्यतासे मैंने अपना जो सर्वप्रथम भाषण दिया, उसके बाद उससे घटिया चीज मैं दूसरोंको क्यों दूँ?" इसलिए गाँव-वालोंको मैं जो सन्देश देता हूँ वह एक ही होता है:

१. विदेशी कपड़ेका बहिष्कार कीजिए;

२. अपने गाँवमें बनी खादी ही पहनिए;

३. अस्पृश्यताको समाप्त कीजिए;

४. हिन्दुओं, मुसलमानों, ईसाइयों तथा अन्य लोगोंमें एकता स्थापित कीजिए;

५. शराबकी बुराईको उखाड़ फेंकिए; गाँवके बड़े-बूढ़े शराबखोरोंके पास जायें और उन्हें शराब छोड़नेके लिए समझायें; तथा

६. आंतरिक कलहसे बचिए, लेकिन अगर झगड़े हों ही तो उन्हें स्वैच्छिक गाँव पंचायतोंके जरिये हल कीजिए।

मैं तो केवल बड़ी-बड़ी जगहोंपर ही, जहाँ 'राजनीतिज्ञ' लोग फूलते-फलते हैं, लोगोंके साथ तर्क करता हूँ और अन्य विषयोंपर बोलता हूँ।

जैसे, मसूलीपट्टममें मुझे कई विवादास्पद विषयोंपर बोलनेका अवसर मिला जिनमें से कुछ प्रश्न मुझे भेंट किये गये अभिनन्दनपत्रोंमें उठाये गये थे। लेकिन ज्यादातर अभिनन्दनपत्रोंमें मेरी प्रशंसामें प्रयुक्त लम्बे-चौड़े विशेषणोंके सिवा कुछ नहीं था। इस प्रकारकी प्रशंसासे प्रशंसा करनेवालोंका कोई भला नहीं होता। बल्कि प्रशंसित व्यक्ति यदि गम्भीरतापूर्वक यह विश्वास करे कि जिन गुणोंको उसमें आरोपित किया गया है वे सब उसमें हैं तो उससे उसका शायद नुकसान ही होगा। इसलिए मैंने

अपने प्रशंसकोंको आगाह किया कि उन्हें अपने अभिनन्दनपत्रोंमें बहुत बढ़ा-चढ़ाकर प्रशंसा नहीं करनी चाहिए। मैंने उनसे कहा कि किसी अन्य व्यक्तिमें यदि कोई प्रशंसनीय गुण हों, तो उस गुणको अपने आचरणमें उतारना ही उस व्यक्तिकी प्रशंसा करनेका सर्वोत्तम तरीका है। मैंने आन्ध्रके कार्यकर्त्ताओंको ज्यादातर मामलोंमें इस सलाहपर अमल करते पाया। मेरे इशारेपर शीघ्र ही अमल किया गया। गुन्टूरमें जो अभिनन्दनपत्र दिये गये उनमें से ज्यादातर सीधे-सादे थे। अभी इससे भी आगे एक कदम और जाना है। उन्हें अपने अभिनन्दनपत्रोंमें निम्नलिखित मुद्दोंपर विस्तृत जानकारी देनी चाहिए: जिस गाँव या क्षेत्रकी ओरसे अभिनन्दनपत्र दिया जा रहा है उसमें पुरुषों और स्त्रियोंकी संख्या; हिन्दू, मुसलमानों और अन्य लोगोंकी संख्या; 'अस्पृश्यों' की संख्या और उनकी दशा; कांग्रेसके स्त्री और पुरुष सदस्योंकी संख्या; शराब पीनेवाले लोगोंकी संख्या; कतैयोंकी संख्या, उनके कामके घंटे, कमाई, प्रतिमाह तैयार होनेवाले सूतकी मात्रा और उसका नम्बर, अगर कपासकी खेती होती है तो उसकी मात्रा, क्या कतैये अपनी रुई स्वयं धुनते हैं, केवल हाथ-कते सूतका कपड़ा बुननेवाले करघोंकी संख्या, हाथ-कते और मिलके कते, दोनों प्रकारके सूतका कपड़ा बुननेवाले करघोंकी संख्या, केवल मिलके कते सूतका इस्तेमाल करनेवाले करघोंकी संख्या; प्रतिमाह तैयार होनेवाली खादीका वजन, खादी तैयार करनेकी विभिन्न प्रक्रियाओंके लिए अलग-अलग दी जानेवाली मजदूरी; राष्ट्रीय पाठशालाओंकी संख्या और उनमें विद्यार्थियोंकी संख्या, तथा अन्य ऐसी सूचनाएँ जो राष्ट्रीय दृष्टिकोणसे उपयोगी हों। ऊपर लिखे मुद्दोंके बारेमें सही सूचनाएँ देनेवाले अभिनन्दनपत्र एक ऐसा रिकार्ड होंगे जिन्हें मैं मूल्यवान समझूँगा और सहेज कर रखूँगा। मेरे लिए वे बहुमूल्य सूचना-भण्डार होंगे।

अब मैं मसूलीपट्टममें दिये गये अपने उस भाषणका सार संक्षेपमें देता हूँ जिसकी चर्चा यहाँ ऊपर की है। यह जलियाँवालाबाग दिवसके दिन दिया गया था।[1]

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २५-४-१९२९

१. इस भाषणके पाठके लिए देखिए "भाषण: आन्ध्र जातीय कलाशाला, मसूलीपट्टममें", १३-४-१९२९।

२७१. तार: मीराबहनको

भीमावरम
२५ अप्रैल, १९२९

मीराबाई
खादी भंडार
मुजफ्फरपुर

खुशी है कि तुमने आश्रमकी चिन्तासे अपनेको मुक्त कर लिया। क्या तुम अम्बालालके कारखानेमें जा रही हो? उत्तर तारसे बनूकूके पते पर दो।

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० ९४२३) से; तथा सी० डब्ल्यू० ५३६७से भी।
सौजन्य: मीराबहन

२७२. भाषण: टाडेपल्लीगुडममें

२५ अप्रैल, १९२९

गांधीजीने उन सभीको धन्यवाद देते हुए अपने भाषणमें कहा कि आप सभी लोगोंने अपनी मातृभूमिके करोड़ों गरीबोंके लिए अपनी सामर्थ्यके मुताबिक दान दिया है। इससे मुझे आशा बँध गई है कि आप मात्र धन और आभूषणोंके दानसे आगे बढ़कर थोड़ा और काम करनेको भी तैयार होंगे। मुझे अपने आपपर और आन्ध्र देशपर भरोसा है और मैं जानता हूँ कि मैं यदि इस प्रदेशमें कुछ कहूँगा तो आप अवश्य ही उसपर कान देंगे। सबसे पहले तो मैं एक बहुत छोटी-सी बात लेता हूँ। वह यह कि आपको अपने मानपत्र कीमती फ्रेमोंमें नहीं मढ़ाने चाहिए। आपको याद रखना चाहिए कि इन फ्रेमोंपर जितना अधिक धन खर्च किया जाता है, दरिद्रनारायणको दी गई आपकी सहायतामें उतनी ही कमी आ जाती है। आपको, आपमें से प्रत्येकको दरिद्रनारायणकी सेवाके लिए खूब दिल खोलकर दान देना चाहिए और देते ही रहना चाहिए, तभी दरिद्रनारायण आपको आशीर्वाद देंगे। आपको धनके ही नहीं, सेवाके रूपमें भी दान देना चाहिए। आप जितना अधिक फल चाहते हैं उतना ही अधिक दीजिए, बल्कि उससे भी अधिक दीजिए और किसी फलकी अपेक्षा रखे बिना भी दीजिए, क्योंकि इसीमें आपकी और आपके देशकी मुक्ति है। यहाँकी मिलोंके मुनाफों और उनकी साखको देखते हुए उन्होंने बहुत थोड़ा दिया है। क्या उनके दिलोंमें

इतनी ही गुंजाइश है? आपको देना क्यों चाहिए? इसलिए कि खादी आन्दोलनने भुखमरीसे पीड़ित करोड़ों लोगोंके लिए थोड़े बहुत भोजनकी व्यवस्था करनेमें सफलता पाई है और आप खादीके कामके लिए जितना अधिक धन देंगे, उन भूखे लोगोंको उतना ही अधिक भोजन जुटाया जा सकेगा। और यदि आप सेवाके रूपमें भी अपना योगदान देते रहें, मतलब यह कि आप लगातार खादीके वस्त्र धारण करते रहें, तो गाँवोंमें आपके भाई-बहनोंको भोजन और यह काम मिलता रहेगा कि वे आपको वस्त्र देते रहें। गरीबोंके हाथों बुने वस्त्रमें कृतज्ञता और विनयशीलताकी गंध समाई रहती है, जबकि मैनचेस्टरकी मिलोंके वस्त्रोंसे लोभ-लालच और प्रभुत्व जमानेकी बू आती है। आन्ध्रके खद्दरको कौन नहीं जानता? बम्बईके लोग और महीन किस्मके खद्दरकी माँग आन्ध्रसे कर रहे हैं। तब फिर सारा भारत आन्ध्र-खद्दर ही क्यों न धारण करे?

मैं जब देखता हूँ कि यहाँ उपस्थित एक भी महिला खद्दर नहीं पहने है तो हृदयको बड़ी ठेस लगती है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २९-४-१९२९

२७३. पत्र : छगनलाल जोशीको

२६ अप्रैल, १९२९

चि० छगनलाल,

हम एक ऐसे छोटे गाँवमें हैं जहाँ डाक मिलनेकी आशा कम है। आज डाकके बिना तीसरा दिन होगा। डाक मिले भी तो कहाँ? दिनको कहीं, रातको कहीं। किन्तु सबका स्वास्थ्य ठीक है। हमें विभिन्न और बहुत-से अनुभव हो रहे हैं। चि० कान्तिसे कहना कि मनु जाना चाहे तो अच्छा साथ मिलनेपर बलीबहनके पास भेज दे। उसे पत्र बादमें लिखूंगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५४०६)की फोटो-नकलसे।

२७४. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

२७ अप्रैल, १९२९

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम्हारे पत्र नीरस होते हुए भी आते तो हैं; मुझे इसीसे सन्तोष है। मेरे पत्र न आनेकी तुम शिकायत करना चाहो तो कर सकते हो; किन्तु जिस हालतमें मैं आजकल सफर कर रहा हूँ उसे समझो तो मुझपर दया आये और तुम पत्र न आनेकी शिकायत न करो। फिर 'यंग इंडिया' और 'नवजीवन' के रूपमें मेरे पत्र तो तुम्हें मिलते ही रहते हैं।

आज भी सबेरेके ५-३० बजे यात्राके लिए रवाना होनेसे पहले जो समय मिल गया है उसीमें यह पत्र लिख रहा हूँ। रोज सुबह ६ बजे यात्रा शुरू होती है। ९ बजे पड़ाव डालते हैं, फिर ५-३० बजे शामको चलना शुरू करके रातके ८ बजे पड़ाव डालते हैं। ९ के स्थानपर १० तथा ८ के स्थानपर ११ तक बज जाते हैं। इस स्थितिमें डाक मिलनेमें भी कठिनाई हो जाती है। मईकी २२ तारीखको यह यात्रा पूरी हो जायेगी।

बा, प्रभावती (ब्रजकिशोर बाबूकी लड़की), इमाम साहब तथा सुब्बैया मेरे साथ हैं। मेरा स्वास्थ्य ठीक चल रहा है। इस समय तो मुझे दूध रहित खुराक अनुकूल पड़ रही है। कोई बीमारी आ जाये तब क्या होगा, यह देखना बाकी है।

शास्त्रीजीकी कीमत जैसे-जैसे समय बीतेगा वैसे-वैसे तुम सब और अच्छी तरह समझोगे। वे जबतक थे तुम्हारे लिए ढालके समान थे। यहाँकी सरकार कुछ करेगी ऐसा तो नहीं है। शास्त्रीजी अपने तेजके बलपर ही कर सकते थे; सो उन्होंने किया।

छगनलालका दुखद किस्सा तो तुम्हें मालूम हो गया होगा। तुम वहाँ खूब सावधान रहना। भूखों मरना ज्यादा अच्छा समझना किन्तु चोरीकी एक कौड़ी भी न रखना। किसीसे कर्ज लेना भी चोरी मानना।

वहाँ तुम दोनोंको शान्ति हो तो वहाँका काम बिगाड़ कर यहाँ आनेका लोभ न करना। शास्त्रीजी कहते थे कि चाहे जैसे चले, 'इंडियन ओपिनियन' की कीमत तो है ही। कुछ न करते हुए भी उसे छपते-छपते अब २४ वर्ष तो हो ही गये हैं, यह याद है न?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ४७५३)की फोटो-नकलसे।

२७५. पत्र : छगनलाल जोशीको

२७ अप्रैल, १९२९

चि० छगनलाल,

कल पोस्टकार्ड लिख लेने और डाक चले जाने पर दो दिनकी डाक एक साथ मिली। गंगाबहनको कुछ नहीं लिखूँगा। जो-कुछ हुआ मैं अपने मनमें अभीतक उसका चित्र नहीं बना पाया हूँ।

बहनोंके विषयमें जो-कुछ किया है वह पहलेसे ज्यादा ठीक है। इसके लिए तुम्हें अपने सिर दोष तो ओढ़ना ही नहीं है। इसकी जिम्मेदारी तो सिर्फ मैंने ही अपने ऊपर ली थी। इसलिए इसमें तुम्हारे निराश होनेकी कोई बात नहीं है। यदि निराश होना है तो मुझे होना चाहिए। किन्तु निराशा जैसी भावना मेरे मनमें आ नहीं सकती। अपनी त्रुटियों, भूलों और क्षीण अनुमानोंको देखते हुए भी मैं निराश नहीं होता; क्योंकि अन्तरात्माको जैसा सूझे वैसा कहने और करनेके सिवा आगे बढ़नेका कोई दूसरा उपाय मुझे दिखाई नहीं देता। स्त्री विभागके बारेमें अपनी हार मैंने देख ली, इसलिए विनीत भावसे तुम्हें लिखा। मैं किसी दिन क्षेत्र-संन्यास ले लूँ और आश्रममें ही रह जानेकी प्रतिज्ञा करूँ तो स्त्री विभागका पहलेकी ही तरह संगठन करनेकी धृष्टता करूँगा। और अपनी उपस्थितिसे उन्हें बाँध तो लूँगा ही। किन्तु ऐसा दिन कहाँसे आये?

मैं चाहता हूँ कि तुम निराश न हो। जहाँ दोष अपने सिर लेनेका कोई कारण नहीं, वहाँ अपनेको दोषी न मानो। कहीं भटक न जाऊँ, ऐसा भय छोड़कर यह निश्चय करो कि कदापि नहीं हारूँगा। ऐसा निश्चय मनमें रख कर पूर्ण सफलताका विश्वास बनाये रखो। ऐसा करते हुए यदि हार भी गये तो दीन भावसे उसे स्वीकार करके उस समय जो धर्म हो उसका आचरण करना। व्रतधारी भी यदि अपने विषयमें सोलह आना आश्वस्त हो, तो व्रतधारी नहीं बल्कि भगवान माना जायेगा। मनुष्य इसी स्थिति तक पहुँच सकता है; किन्तु इतिहासमें ऐसे पुरुषका वर्णन नहीं मिलता। मौतसे पहले रोज क्यों मरें? व्रत टूटनेसे पहले रोज उसके टूटनेका भय क्यों करें? इतना ही काफी है कि हम उसको तोड़नेकी दिशामें एक भी कदम न उठायें। तुम प्रतिदिन जो मनमें डरते हो सो किसलिए? रमाबहनके लिए? या किसी और स्त्रीके लिए? या केवल मनोविकारके ही कारण? इसके सिवा क्या कोई दूसरा भय भी मनमें है?

तुम्हारे पत्रमें एक दूसरा प्रश्न भी है। मेरे प्रेमके वशमें होकर मेरे साथ बँधे रहनेमें पतन तो नहीं है? यह प्रश्न प्रसंगोचित और योग्य है। यदि मेरे संग रहते हुए मनसे विषय-सेवा करते हो और बाहरसे ही संयमका आभास जगतको देते हो,

तो तुम गिर रहे हो और मेरा साथ छोड़ देना तुम्हारा कर्त्तव्य है। फिर ऐसा करनेसे आश्रम तबाह होता हो तो हो जाये।

कर्मेन्द्रियाणि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरन्।
इन्द्रियार्थान्विमूढात्मा मिथ्याचारः स उच्यते।[1]

अपने अध्यात्म-कोषके इस श्लोकपर विचार करना। यदि वह तनिक भी लागू होता हो तो तुम्हें इस मिथ्याचारसे बचनेके लिए मेरा त्याग करना ही चाहिए। मेरे साथ रहनेका यही परिणाम होता है, ऐसा आरोप मुझपर लगाया गया है, यह तो तुम्हें मालूम होगा ही। शायद छगनलाल गांधीका उदाहरण इसके समर्थनमें दिया जा सकता है। किन्तु जिस प्रकार तुम बाहरसे अर्थात् शरीरसे विषय-सेवनसे दूर रहते हो वैसे ही मनसे भी उनसे दूर रहनेका भगीरथ प्रयत्न करते हो और उसमें मेरे साथ रहनेसे तुम्हें सहायता मिलती हो तो तुम मन्दिर और मुझे जी जानसे गले लगाये रखो। तुम्हारी स्थिति किस प्रकारकी है, इसकी जानकारी तो सिर्फ तुम्हींको हो सकती है।

यस्त्विन्द्रियाणि मनसा नियम्यारभतेऽर्जुन।
कर्मेन्द्रियैः कर्मयोगमसक्तः स विशिष्यते।।[2]

मेरी तुम्हारी सबकी यही स्थिति होनी चाहिए। किन्तु ऐसे व्यक्ति भी गिर सकते हैं। इसीलिए इसी अध्यायमें अर्जुनका प्रश्न है:

अथ केन प्रयुक्तोऽयम् पापं चरति पूरुषः।
अनिच्छन्नपि वार्ष्णेय बलादिव नियोजितः।।[3]

इसका जवाब पढ़कर विचार करना। इसके बाद छठे अध्यायके अन्तमें अर्जुन और भगवानका अमर संवाद है। उसे पढ़कर भी विचार करना। फिर "यथेच्छसि तथा कुरु।"

नारणदासने अबतक अपना निर्णय कर लिया होगा। उसके जानेका दुख होगा। किन्तु वह जो-कुछ करेगा, सो विचार कर करेगा, मुझे उसपर इतना विश्वास है।

जमनादास पाठशाला नहीं छोड़ेगा, ऐसी आशा तो मुझे है; किन्तु वह छोड़ देगा तो मैं उसे भी सहन कर लूँगा।

. . .[4]का पतन प्रकाशमें आना कोई छोटी-मोटी बात नहीं मानी जायेगी। उसे पवित्र समझकर बहुत-से व्यक्ति दोषोंसे दूर रह सके। अब उसका दोष जाहिर होनेसे वे हिल जायें तो कोई नई बात नहीं है। इसका असर उसके सगे भाइयों पर एक-न-एक तरीकेसे तो पड़ेगा ही। प्रभुदासका हृदय स्वच्छ है और वह बालकके समान सरल है। इसलिए उसपर तो अच्छा प्रभाव पड़ा ही लगता है। नारणदास और जमनादास संसारी हैं। इसलिए उन्हें इसपर क्षोभ हुआ हो तो मुझे आश्चर्य न होगा। हालाँकि मैंने यह नहीं सोचा था कि उनपर ऐसा असर होगा। अभी

१, २ और ३. गीता, अध्याय ३, श्लोक ६, ७ और ३६।
४. नाम नहीं दिया गया है।

तो यही आशा करता हूँ कि यह असर क्षणिक ही होगा। छगनलालका भावी व्यवहार भी बहुत गहरा असर डालनेवाला होगा। हम तो छगनलालको शुद्ध प्रेमसे नहला दें।

मेरे विचारमें सन्तोक अभी आश्रम नहीं छोड़ेगी। रुखीको बनारसीदासको सौंपकर सन्तोकने बहुत बहादुरी, कार्यक्षमता, दृढ़ता और पतिव्रतका परिचय दिया है और अपना आश्रममें रहना उसने अनिवार्य बना लिया है। मगनलालका पंथ भी न्यारा था। यदि तुम उसके जीवनपर विचार करो तो तुम्हें मालूम होगा। हममें से किसीसे कहे बिना मगनलालने पर्वत काटकर अपना मार्ग बनाया था। मगनलालके दोष पहाड़-जैसे थे किन्तु उसके गुण और उसकी वीरता उसके दोषोंको ढाँकते हुए उन्हें फूलके समान बना देती थी। मगनलालके साथ अपनी तुलना करो और जरा भी हिम्मत न हारना। मगनलालने अपना काम किया, तुम्हें अपना करना है। "श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः"।[1] मगनलालका युग गया। हमने अब दूसरे युगमें प्रवेश किया है।

नवीन और धीरू हमेशाके लिए चले गये हैं या सिर्फ गर्मीकी छुट्टियोंके लिए? जैसे भी हो हम उसे ठीक मान लें। नवीनका छुट्टियोंके लिए जानेका कोई कारण तो न था।

मन्दिरमें जीवन सादा बनानेका बहुत अवकाश है, मैं ऐसा मानता हूँ। किन्तु किशोरलालकी तुलनामें मुझे कुछ कमी दिखाई देती है। विलेपार्लेमें रहते हुए बच्चे चाहे जैसी सादगीसे रहते हों, पर वे नियमोंके बन्धनसे मुक्त होनेके कारण स्वेच्छाचारी माने जायेंगे। वे जबरदस्ती सादगीका पालन करते हैं। हमारे पड़ोसमें रहनेवाले मजदूर उनसे ज्यादा सादा जीवन व्यतीत करते हैं, किन्तु उनकी सादगीका कोई मूल्य नहीं है। तुम और मैं रोज दूध पीते हुए भी, दूसरी अनेक वस्तुएँ अपने सामने होते हुए भी उनका जानबूझकर त्याग करते हैं, इसलिए उन मजदूरोंसे सादा जीवन व्यतीत करते हैं। तात्त्विक निष्कर्ष तो यही हुआ। किन्तु हम इसपर गर्व करते हुए अपने आपको ऊँचा मानें तो नीचे गिरेंगे। मजदूर भाई लाचारीसे जिस गरीबीको भोगते हैं, हमारा कर्त्तव्य तो उसका अनुकरण करना है। और जबतक वैसा न कर सकें तबतक अपने प्रति सात्विक असन्तोष तो रहना ही चाहिए।

मन्दिर खाली रहेगा या भरा हुआ, इसके चक्करमें मत पड़ना। जब जनकपुरी जलने लगी थी तब जनकने जो जवाब दिया था वह याद करना। मन्दिरको सुरक्षित रखनेके लिए अपनी समझसे एक भी उपाय न छोड़नेके बाद हम कह सकते हैं कि मन्दिर जले या बचे, उससे हमें क्या? उसे जलानेवाला या बचानेवाला जाने। इसलिए जो जाना चाहे उसे जाने देना और उसका वियोग सहन कर लेना।

इस समय आधी रात बीत चुकी है। मच्छर काफी हैं। मच्छरदानी नहीं लगाई है। १२-४५ बजे उठा और बची हुई दैनन्दिनी लिखी। १२-५५ पर यह पत्र लिखना शुरू किया था। देखता हूँ, इस समय घड़ीमें ठीक दो बजे हैं। तुम्हारे कलके दोनों

१. गीता, १८, ४७।

पत्र मिलनेके बाद विचार करता रहा हूँ। उसका यह परिणाम है। यह पत्र है सिर्फ तुम्हारे ही लिए किन्तु किसीको पढ़ाना चाहो तो पढ़ा सकते हो। मैं चाहता हूँ कि महादेव आदिको पढ़ने देना। लेकिन तुम किसीको भी पढ़नेको न दो तो मुझे दुख नहीं होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५४०७) की फोटो-नकलसे।

२७६. पत्र: गंगाबहन वैद्यको

२७ अप्रैल, १९२९

चि० गंगाबहन,

ऐसा लगता है कि तुमने आजकल पत्र लिखना बन्द कर दिया है। पागलपनसे भरे छोटे-बड़े किन्तु तुम्हारे उद्‌गारोंको व्यक्त करनेवाले पत्र तो मुझे मिलने ही चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–६: गं० स्व० गंगाबहेनने

२७७. मूक सेवा

ठक्कर बापाका नीचे लिखा एक पत्र आन्ध्र देशकी मुसाफिरीमें मिला है:[1]

मुझे इन ढेढोंके पुरोहित और भीलोंके गुरुसे[2] ईर्ष्या होती है। हम दोनों समान उम्रके हैं। मगर मेरे शरीरको हिफाजतकी जितनी जरूरत है, ठक्कर बापाके शरीरको उतनी जरूरत नहीं है। मैं आन्ध्र देशकी यात्राका कष्ट सहन कर सकता हूँ, इस विचारसे मन-ही-मन कुछ-कुछ फूल रहा था, दौड़-धूपको सोच-सोचकर अपने ऊपर तरस खा रहा था, देशभक्त वेंकटप्पैया वगैरा साथियोंको बहुत ज्यादा दौड़धूप कराने पर डाँटता-फटकारता भी था कि इतनेमें मेरे मदको चूर-चूर करनेके लिए यह पत्र आ ही पहुँचा। कहाँ तो ऊँट और सिन्धका रेगिस्तान, और कहाँ ऊबड़-खाबड़ होने पर भी जिसपर मोटर चल सके ऐसा यह रास्ता — और मोटर भी ऐसी जिसमें मेरे सोनेकी सुविधा रहती है।

लेकिन मैं अपनी ईर्ष्या प्रकट करनेकी गरजसे यह पत्र नहीं दे रहा हूँ। ठक्कर बापाके ऊँटका होदा देखकर मैं गरीब अपनी छोटी-सी मोटरको छोड़ नहीं दूंगा। सिन्धके रेगिस्तान मुझसे आन्ध्रके आसान रास्तोंको नहीं छुड़ा सकते।

१. यहाँ नहीं दिया गया है। लेखकने गुजरात और सिन्धके अपने दौरेका वर्णन करते हुए भील और कोली बालकोंके लिए एक विशेष आश्रमकी आवश्यकता बताई थी जिसमें उन्हें बुनाई आदि सिखाई जाये।

२. गांधीजी ठक्कर बापाको यही कहा करते थे।

यह पत्र तो मैं यह बतानेके लिए छाप रहा हूँ कि मूक सेवा किसे कहते हैं। सच्ची सेवा इसीका नाम है। भील वगैरा भाई-बहनोंके साथ भी पुराना रिश्ता हमें फिरसे ताजा करना हो तो ठक्कर बापाके पाससे गुरुमन्त्र लेना चाहिए। उन्हें लूलों-लँगड़ोंकी सोहबतमें ही आनन्द आता है, उनके बिना उन्हें चैन नहीं पड़ता। उनके पीछे भटकनेमें ही वे आराम समझते हैं और उसीमें देवदर्शन और उसीमें पेटपूजा भी समझते हैं।

ठक्कर बापा जुग-जुग जियें, उनकी गद्दी सलामत रहे, उनका वंश बढ़े। सरकारी कमेटीकी बात तो मुझे इस पत्रसे ही मालूम हुई है। इस कमेटीका सदस्य बनना उन्हें माफ है। इस कमेटीमें रहते हुए भी वे उसमें नहीं हैं।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २८-४-१९२९

२७८. मेरठके कैदी

मेरठ जेलमें बन्द कैदियोंके बारेमें एक भाई लिखते हैं:[१]

मैं तो लेखकके विचारको ठीक नहीं समझता। कांग्रेसको तो सूर्यवत बरतना चाहिए। जो सूर्यको गाली देते हैं और जो उसकी स्तुति करते हैं, सूर्य उन दोनोंके लिए एक समान प्रकाश देता है। कांग्रेस तीस करोड़के प्रतिनिधित्वका दावा करती है। चाहे उसमें तीन सौ सदस्य ही क्यों न हों, उनका काम तीस करोड़की सेवा करना और उनकी मददपर दौड़ जाना है। उन्हें चाहिए कि वे किसी भी भारतवासीको अपना दुश्मन न समझें और जब उसपर आफत आये, उसकी मदद करें। इसी कारण मेरे मतानुसार यहाँ कांग्रेसकी मित्रता अथवा शत्रुताका सवाल नहीं उठ सकता। लेकिन कांग्रेस मेरठके और दूसरी जगहोंके कैदियोंकी मदद कैसे करे? कांग्रेस उनके लिए दौड़धूप करे, विचार-विमर्श करे, जहाँ पत्र-व्यवहारसे अथवा समाचारपत्रोंमें लेख लिखनेसे काम चलता हो, वहाँ उनका सहारा ले, और ऐसे दुःखोंसे तपकर वह अधिक जागृत, अधिक बाहोश बने, जल्द ही स्वराज्य प्राप्त करे और ऐसे कैदियोंकी कोठरीके ताले तोड़े। मगर कांग्रेस उनके लिए वकील न करे। कांग्रेसने असहयोगका सर्वथा त्याग नहीं किया है। ऐसे कैदियोंको अपना बचाव करनेकी जरूरत नहीं होनी चाहिए।

अगर उन्हें जेल मिले तो वे उसे भोग लें, अगर वे खुद वकील करना चाहें तो खुशी-खुशी करें। अगर उनकी हैसियत वकील करने जितनी नहीं है, तो उनके दोस्त उनकी मदद करें, या कांग्रेसका सदस्य होते हुए भी जो ऐसे मामलोंमें वकील करना उचित समझते हैं, वे स्वयं सहायता करें। इससे मेरा मतलब यह है कि खुद कांग्रेस वकील वगैरा करनेकी झंझटमें न फँसे। अगर वह फँसना चाहेगी भी, तो उसकी

१. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। लेखकका विचार था कि कांग्रेसको सभी प्रकारके राजनीतिक कैदियोंकी समान रूपसे सहायता नहीं करनी चाहिए।

इतनी ताकत नहीं है कि वह हर मामलेको लड़ सके। ऐसे मामलोंमें तो देशको उन वकीलोंकी जरूरत है जो श्री मनमोहन घोष या चित्तरंजनदासकी तरह अपने खर्चसे सारे मुकदमे लड़ सकें। यही उनका धर्म भी है। कांग्रेसको तो वकीलों या डाक्टरोंकी फीस चुकानेकी जरूरत ही नहीं होनी चाहिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २८-४-१९२९

२७९. माता-पिताका विरोध

एक बम्बई-निवासी बहन लिखती हैं:[१]

इस विरोधका तो यह मतलब हुआ कि माता-पिता सेंत-मेंत स्वराज्य चाहते हैं। वे किसी भी तरहकी कठिनाई सहना नहीं चाहते; फिर भी स्वराज्यके ख्वाहिशमन्द तो होंगे ही। मुमकिन है, उन्हें वह भी पसन्द न हो। अगर बम्बई-निवासी यह महिला स्वराज्य चाहती हैं, तो वह माता-पिताका विरोध विनयपूर्वक सहन करें और खादीसे मुँह न मोड़ें। खादी पहननेवालोंका पहरावा बड़ी हदतक सीधा-सादा हो जाता है। खादी पहननेवाले अपना धोबीका खर्च बचा लेते हैं, क्योंकि वे कपड़े हाथसे धोते हैं। यदि हम खादी पहनकर भी अपनी पोशाकमें कोई तबदीली न करें तो मैं मानता हूँ कि कपड़े धोनेमें कुछ ज्यादा वक्त लगे। लेकिन जो देशभक्त हैं वे इन या ऐसी कठिनाइयोंकी परवाह नहीं करते। मैं यह भी मानता हूँ कि अभी फी गजके हिसाबसे खादी महँगी पड़ती है। जो सस्ती खादी पाना चाहते हैं, वे खुद कातें। यूरोपीयोंके डरानेसे डर जानेवाला तो अपना डर मिटानेके लिए ही सही, खादी अवश्य पहने और पहले दर्जेमें सफर करे; अगर सरकारी मदरसोंमें खादी पहननेपर प्रतिबन्ध हो तो उन्हें छोड़ दिया जाये। जबतक हममें यूरोपीयोंसे डरनेकी आदत है और उनकी संस्थाओंके प्रति मोह है तबतक आजादीकी रटन और उसकी प्राप्ति आकाश-पुष्पके समान है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २८-४-१९२९

१. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। लेखिकाके माता-पिता खादीका विरोध इन कारणोंसे करते थे: (१) उसे धोना कठिन है। (२) खादी महँगी होती है। (३) खादी पहननेवालोंको सरकारी शालाओंमें भर्ती होने और रेलगाड़ीके पहले दर्जेमें यूरोपीय यात्री होनेपर यात्रा करनेमें कठिनाई होती है।

२८०. चक्रवर्ती और मांडलिक

भाई कक्कलभाईने कई प्रश्न पूछे हैं। उन्हें उत्तर सहित नीचे दे रहा हूँ :[1]

रियासतोंपर से ब्रिटिश राज्यका छत्र हटाना बाकी है। इतिहास बताता है कि चक्रवर्ती राजाके पतनके बाद उसकी छत्रच्छायामें बढ़नेवाले छोटे राज्य भी पहले जैसे रह नहीं पाते। उनमें आपसमें झगड़े हो जाते हैं। कई राज्य नष्ट हो जाते हैं और कई पहलेसे ज्यादा बलवान हो जाते हैं। यदि चक्रवर्ती राजा दुष्ट हो तो उसका नाश होनेपर बची हुई रियासतोंमें से कई सुधर भी जाती हैं। हमारी कल्पना तो यह है कि चक्रवर्तीकी गद्दी ब्रिटिश भारतको मिलेगी और उसमें इतना बल होगा कि बटलर कमेटीकी रिपोर्टके बावजूद यदि भारतको सच्चा स्वराज्य मिला तो रियासतोंको मन न होनेपर भी उन्हें उसका अनुसरण करना पड़ेगा।

मुझे लगता है कि रियासतोंकी बुराइयाँ मैं खूब अच्छी तरह जानता हूँ। पहले भी वे मनमानी कर पाती थीं। किन्तु आज एक चक्रवर्तीकी छत्रच्छायामें होनेके कारण ही उनकी बुराइयाँ निभ रही हैं। सरदारके होते हुए गुलामके दोषोंको अलगसे गिना नहीं जा सकता। कक्कलभाई पूरा विश्वास रखें कि वे अपनी रियासतके दोषोंको जितना जानते हैं उससे ज्यादा इन दोषोंको सरकार जानती है। कक्कलभाई दो आँखोंसे देखते हैं तो सरकार हजार आँखोंसे देखती है। इतना होनेपर वह रियासतोंके दोष सहन करती है तो वह स्वयं दोषी बन जाती है। यह बात प्रसिद्ध है कि जिस कुकर्मको करनेमें सरकार डरती है या शर्माती है उसे वह रियासतोंकी मारफत कराती है। कानूनके अनुसार प्रतिनिधि या कार्यकर्त्ता द्वारा किये हुए कामके लिए नेता या मालिक जवाबदेह है। उद्योग-मन्दिरमें कोई कुछ चोरी करे और मैं उसे सहन कर लूँ तो वह मेरे स्वयं अपराध करनेके बराबर है।

प्रश्नकर्त्ताने अपने प्रश्नमें[2] कुछ अंश तक उसका जवाब भी दे दिया है। पहले जैसी स्थिति भविष्यमें भी उपस्थित होनेकी सम्भावना नहीं है; क्योंकि आसपासकी परिस्थितियाँ बदल चुकी हैं। यह भी नहीं है कि इतिहासमें जिन स्वतन्त्र राज्योंका उल्लेख है वे सभी खराब थे। सभी देशोंके इतिहासमें राम-जैसे और रावण-जैसे राजा हो गये हैं। आज भी हमारा अनुभव है कि सभी रियासतें एक-जैसी बुरी नहीं हैं। कुछ-एक तो बहुत अच्छी हैं और यदि वे दुष्ट साम्राज्यके अधीन न हों तो बहुत ही अच्छी हो सकती हैं। यदि यह साम्राज्य न होता तो वर्तमान भ्रष्ट राज्य भी नहीं टिक सकते थे; या उनके अत्याचारमें ज्वार-भाटा आता रहता। आज उनके

१. प्रश्न यहाँ नहीं दिये गये हैं। पहले प्रश्नका आशय यह था कि ब्रिटिश साम्राज्यकी तरह क्या रियासतें भी नष्ट करने योग्य नहीं हैं? वहाँ कौनसा अत्याचार नहीं होता?

२. लेखकने लिखा था कि अगर ब्रिटिश राज्य न होता तो क्या छोटी रियासतोंमें कम अत्याचार न होते?

अत्याचारोंके बढ़नेमें रुकावटें हैं। किन्तु उनके कम होनेके लिए साम्राज्यकी छत्रच्छायासे किसी तरहकी रुकावट उपस्थित नहीं होती।

इस प्रश्नका[1] उत्तर उतना सरल नहीं जितना प्रश्नकर्त्ता समझता है। 'फ्यूडलिज्म' (सामन्तवाद) क्या है यह मैं पूरी तरह नहीं जानता हूँ। प्रश्नकर्त्ता उसे पूरी तरह जाननेका दावा करे तो मैं उसे स्वीकार करनेके लिए तैयार नही हूँ। 'फ्यूडलिज्म' में इम्पीरियलिज्म (साम्राज्यवाद) या कैपिटलिज्म (पूंजीवाद) आ जाता है, यह माननेके लिए भी मै तैयार नहीं हूँ। 'फ्यूडलिज्म' में सभी-कुछ बुरा है और प्रजासत्तात्मक राज्य स्वच्छताकी परिसीमा है, ऐसी कोई बात नही है। इस समय तो सभी कुम्हारके चाकपर चढ़े हैं। अब देखना है कि कौन किस रूपमें उतरता है। जन्मसे अधिकार पानेवाले सभी राजा बुरे नही हैं और नियुक्त किये हुए सभी राजा नीतिके अवतार नहीं होते। पोप भी अच्छे-बुरे होते हैं। शंकराचार्योंमें हीरे भी हैं और कोयले भी। अमेरिकाके सभी राष्ट्रपति सोनेके पुतले नहीं थे। कुछ तो मिट्टीके मनुष्य ही सिद्ध हुए।

ब्रिटिश राज्य एक व्यक्ति नहीं बल्कि एक पद्धति है। जिस पद्धतिसे वह चलता है उससे हिन्दुस्तानका सर्वनाश हुआ है और होता जा रहा है। इसीलिए मैं इस पद्धतिको समाप्त कर देना चाहता हूँ। मैं और दूसरे सब लोग भी यही चाहते हैं। रियासतें तो व्यक्तिनिष्ठ हैं। मनुष्योंमें सुधारकी गुंजाइश है इसलिए रियासतोंमें भी उसकी गुंजाइश है। यदि इन रियासतोंको अपने स्वेच्छाचारके लिए साम्राज्यका सहारा न होता तो आज इन रियासतोंकी प्रजा राजाओंसे कई हक प्राप्त कर सकी होती। रियासतें छोटी हैं इसलिए उनमें सुधार जितनी आसानीसे हो सकते हैं उतने बड़े राज्योंमें नहीं हो सकते। इतना तो स्पष्ट ही है। किन्तु मैं यह नहीं कहना चाहता कि बड़े राज्योंको विभक्त करके छोटा कर दिया जाये। मै तो राज्यके छोटे होनेके लाभ बता रहा हूँ। कई ऐसे प्रयोग जो ब्रिटिश भारत आसानीसे नहीं कर पाता, रियासतें मजेमें कर सकती हैं; जैसे मद्यपान निषेध, लगान सम्बन्धी सुधार, हिन्दू कानूनमें आवश्यक सामाजिक सुधार, छोटे बैंकोंका प्रयोग, ऐसे दुग्धालय चलाना जिनपर व्यक्तिका नहीं प्रजाका अधिकार हो, आदि, अनेक काम यदि सरकार इनमें बाधा न डाले तो रियासतोंमें तुरन्त हो सकते हैं। मैं अवश्य ही यह मानता हूँ कि रियासतोंमें अर्थात् राजाओंमें आगे बढ़नेकी अनन्त गुंजाइश है। तब राजाओंके दोष क्यों ढूंढ़ें और प्रजाको बिलकुल निर्दोष क्यों मान लें? यहाँपर प्रजाका अर्थ है राजनीतिज्ञ। यदि इस वर्गके लोग थोड़े निर्भय बनें, खुशामद कम करें, स्वार्थ छोड़कर परमार्थका ध्यान करें तो वे राजाओंको सुधार सकते हैं। वे राजाके हाथ-पैर हैं। यदि हाथ-पाँव चलनेसे इनकार कर दें तो बेचारा राजा तो असहाय हो जाये। इस बातको कौन नहीं जानता कि राजा और प्रजाका स्वार्थ एक ही है। राजा तो अब विलायत और पेरिसमें रहने लगे हैं; और यदि वहाँ नहीं तो विलायत-जैसी ही

१. इसमें कहा गया था कि ब्रिटिश सल्तनतके साम्राज्यवाद और पूँजीवादके अतिरिक्त रियासतोंमें सामंतवादी प्रभाव होनेके कारण रियासतें नष्ट कर दी जानी चाहिए और उत्तराधिकारके बलपर राजाओंके नालायक वारिसों द्वारा राज्य करते चले जानेकी प्रथा भी समाप्त करनी चाहिए।

अपने राज्यको किसी पहाड़ीपर। जिस धनको वे अपने भोग-विलासमें उड़ा देते हैं उसे प्रजापर खर्च करें। अत्याचार करनेकी उनकी शक्तिकी सीमाएँ हैं लेकिन भला करनेकी शक्तिकी कोई सीमा नहीं है। उधर सरकारको देखें तो हर तरह झूठ, प्रपंच, दंभ, दुष्टता, शराबखोरी, जुआ, व्यभिचार, दिन-रात लूट, डायरशाहीका बोलबाला है। उसकी वेदीपर सभीका बलिदान हो रहा है। उसके जो लाभ दिखाई देते हैं वे तो सिर्फ देखने-भरके लिए हैं। वह अपना व्यापार चलानेके लिए जीती है और उसे बचानेके लिए ही जान दे देगी। इन तीखे शब्दोंका कोई अनर्थ न करे। पश्चिमके जिन सुधारोंकी प्रशंसा की जाती है वे मुझे अच्छे नहीं लगते। उसका एक सीधा-सादा चित्र मैंने 'हिन्द स्वराज्य' में दिया है।[1] समय बीत जानेपर भी उसमें कोई अन्तर नहीं पड़ा है। पश्चिमकी हर बात खराब है मेरा यह अर्थ कदापि नहीं है। मैंने वहाँसे बहुत-कुछ सीखा है। वहाँ बहुतसे ऐसे लोग भी हैं जो शुद्ध हृदयवाले तपस्वी हैं। पश्चिममें मेरे बहुत-से मित्र हैं; किन्तु पश्चिममें सुधारके नामपर तो सोनेकी प्रतिमा ही पुजती है। देखता हूँ कि उसकी चमकसे प्रश्नकर्त्ता और दूसरे लोगोंकी आँखें चौंधिया गई हैं।

रियासतोंको परेशान करनेसे उनका सुधार नहीं होगा। जिस तरह खुजलानेसे दादका रोग बढ़ता चला जाता है उसी तरह परेशान करनेसे वे चक्रवर्ती राजाके पास जाकर अपना इलाज करायेंगे। प्रश्नकर्त्ता तो बटलर कमेटीकी रिपोर्टको बिलकुल ही नहीं समझा है। वह उन्हें ब्रिटिश सरकारकी छत्रच्छायामें क्यों रखना चाहता है? यदि यह छत्र हटा दिया जाये तो वे स्वतन्त्र भारतके विरुद्ध लड़ाई नहीं कर सकते; और न ही करेंगे।

इसलिए रियासतोंसे विनती करके और यदि हममें शक्ति हो तो सत्याग्रह करके जो-कुछ प्राप्त कर सकें वह प्राप्त करें। हममें और कोई शक्ति न हो और हमारी प्रार्थना वे न सुनें तो हम धैर्यपूर्वक मूलको अर्थात सरकारको ही जड़से उखाड़नेका प्रयत्न करें। देशी राजा तो हमारे-जैसे ही हैं। वे तो यहीं पैदा हुए हैं। जो दोष हममें हैं वे उनमें भी हैं; इसलिए जो गुण हममें हैं वे भी उनमें होंगे, यह स्वीकार करनेकी उदारता हममें होनी चाहिए। जो दृश्य मोरवीके ठाकुर साहबकी अन्त्यज शालामें अनायास ही देखनेको मिला, उससे मुझे बहुत आश्वासन मिला था।

भाई कक्कलभाईके प्रश्नोंमें एक बात रह गई है जो मेरी समझसे बाहर है। यदि अन्तमें वे यही मानें कि प्रशंसा-प्राप्त रियासतोंका शासन भी ब्रिटिश सरकारकी अपेक्षा बुरा है तो म अपने सब जवाब निरर्थक समझूँगा क्योंकि वहाँ उनके और मेरे बीच सिद्धान्त-भेदकी नाजुक दीवार खड़ी हो जाती है। मैं ठहरा आशावादी, और कक्कलभाई निराशावादी हैं। मुझे मनुष्य-स्वभावमें विश्वास है, उन्हें नहीं है। पर वे एकदम नास्तिक नहीं हैं, यही मानकर मैंने उनके प्रश्नोंके उत्तर दिये हैं।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २८-४-१९२९

१. देखिए खण्ड १०, पृष्ठ ६-६८।

२८१. भाषण: सार्वजनिक सभा, विजगापट्टममें[1]

२८ अप्रैल, १९२९

अभिनन्दनपत्रोंके लिए और खादी कोषमें चन्दा देनेके लिए मैं आप सबको धन्यवाद देता हूँ। मैं उस बंगाली बहनको भी धन्यवाद देता हूँ जिसने मुझे ये सोनेके आभूषण भेंट किये हैं। आपके अभिनन्दनपत्रोंमें से एकमें १९२१ में सरकार द्वारा की गई मौलाना मुहम्मद अलीकी गिरफ्तारीका जिक्र है और यह एक ऐसी बात है जिसने आपके शहरको गौरवान्वित किया है और जिसे हम कभी भुला नहीं सकते। आपने अपने अभिनन्दनपत्रमें उस समय दी गई मेरी सलाहका भी जिक्र किया है जो मुख्यतः तीन बातोंसे सम्बन्धित थी — आप सरकारपर क्रोध न करें, खद्दरको लोकप्रिय बनायें और दूसरे सम्प्रदायोंके साथ मित्रता बढ़ानेके लिए काम करें। आपने यह भी बताया है कि यद्यपि विजगापट्टम इस प्रान्तके सबसे बड़े जिलोंमें से एक है और उत्कर्षको भी प्राप्त हो रहा है, तो भी यह सबसे गरीब जिलोंमें से एक है। फिर भी आपके जिलेमें अनेक धनी जमींदार और भू-स्वामी मौजूद हैं। हालाँकि खद्दरको लोकप्रिय बनाने और इसके विकासके लिए आपके जिलेमें बहुत-सी सुविधाएँ हैं, तो भी विदेशी वस्त्रको यहाँ आज भी फलते-फूलते देखकर मुझे दुख होता है।

अपने एक अभिनन्दनपत्रमें आपने कहा है कि स्वराज्य हासिल करनेके लिए आप सन् १९३० में तैयार हो जायेंगे। उसी उत्साहकी भावनाके साथ जो बात मुझे कहनी है वह यह कि आपको १९३० तक इन्तजार नहीं करना चाहिए बल्कि अभीसे तैयार हो जाना चाहिए। अगर आप इस समय सोये रहे तो १९३० में जागनेपर आपको मौके नहीं मिलेंगे। आप अभीसे कार्य आरम्भ कर दीजिए। कलका इन्तजार न करिए।

विदेशी कपड़ेके बहिष्कारका जिक्र करते हुए आपने अखिल भारतीय चरखा संघसे सहायताकी याचना की है। मेरा निवेदन है कि आप सुव्यवस्थित ढंगसे एक योजना तैयार करें और उसे स्वीकृतिके [लि]ए अखिल भारतीय चरखा संघके पास भेज दें। बस, आपकी योजना सफलता[पू]र्वक होनी चाहिए; उसके बाद आपको सहायताकी कोई कमी नहीं रहेगी।

दूसरी चीज जिसपर मैं जोर [देना] चाहता हूँ यह है कि शराबकी बुराईको देशसे मिटा देनेके लिए आपको [सच्चा] प्रयत्न करना चाहिए। अगर आप सच्ची लगनसे और गम्भीरताके साथ शराबकी इस बुराईको दूर करनेके लिए जुट गये तो निश्चय ही सरकारको आपकी इच्छाके सामने झुकना पड़ेगा और जैसा आप चाहते हैं वैसा उसे करना पड़ेगा। लेकिन इसके लिए यह निहायत जरूरी है कि जनता जबर्दस्त

१. गांधीजी हिन्दीमें बोले थे। इस भाषणका कोंडा वेंकटप्पैयाने तेलुगुमें अनुवाद किया था। हिन्दी भाषण उपलब्ध नहीं है।

प्रयत्न करे। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसने यह प्रस्ताव पास किया है कि जहाँ कहीं भी शराबका बोलबाला है वहाँ उसे उखाड़ फेंकनेके लिए जनताको गम्भीर कदम उठाने चाहिए; और इसके लिए भारतके एक छोरसे दूसरे छोर — हिमालयसे कन्याकुमारी — तकके लोगोंको, जिनमें मुसलमान, हिन्दू, पारसी तथा दूसरे सम्प्रदायके लोग भी शामिल हैं, एक हो जाना चाहिए। हिन्दुओंमें भी बहुत-से समुदायोंको मैं आपसमें लड़ते देखता हूँ और अगर हम इन सारी मौजूदा बुराइयोंको दूर करना चाहते हैं तो हमें हर हालतमें एक हो जाना चाहिए।

अपने एक अभिनन्दनपत्रमें आपने हिन्दी भाषाका जिक्र किया है और कहा है कि इस सम्बन्धमें अधिक व्यापक पैमानेपर प्रचार किया जाना चाहिए। इस बातसे मैं बिलकुल सहमत हूँ। मैंने पूरे देशका दौरा किया है और इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि अगर हम सभी हिन्दी सीख लें तो हम स्वराज्यके एक कदम और निकट आ जायेंगे। मैंने पूरे आन्ध्र देशका दौरा किया है, और ईश्वरकी कृपासे, अंग्रेजीमें भाषण देनेके बजाय मै हिन्दीमें बोलता रहा हूँ। गाँवोंमें अगर मैं अंग्रेजीमें बोलूँ तो वहाँ मेरी बात कोई नहीं समझ सकता। हिन्दीमें बहुतसे ऐसे शब्द हैं जो तेलुगु भाषामें बोले जाते हैं और जिन्हें आप आसानीसे समझ सकते हैं। और इसीलिए आपको अपने स्कूलोंमें हिन्दीकी शिक्षाको प्रधानता देनी है। मैं आपसे तेलुगुकी उपेक्षा करनेको नहीं कहता; बल्कि मैं तो कहता हूँ कि आप हिन्दीके लिए काम करें, क्योंकि आन्ध्र देशमें हिन्दी-प्रचार भारतके लिए स्वराज्य-प्राप्तिका एक साधन है।

अब असली बातपर आइए। मैं अब कुछ बनियेवाला काम करना चाहता हूँ। जहाँ-जहाँ मैं दौरा करता रहा हूँ, मैं अपना बनियेका धन्धा भूला नहीं हूँ। आप मुझे कितना भी ज्यादा धन दे दीजिए, फिर भी दरिद्रनारायणको आप आसानीसे सन्तुष्ट नहीं कर सकेंगे, क्योंकि देशके ३० करोड़ लोगोंमें से दस करोड़से भी अधिक लोगोंको दिनमें एक जून खाना भी नसीब नहीं होता है। आप एक संन्यासीसे, जो उन भूखे लोगोंकी ओरसे भीख माँग रहा है, यह उम्मीद नहीं कर सकते कि वह आसानीसे अपनी भूख शान्त कर लेगा। आपने बताया है कि विजगापट्टम एक गरीब जिला है। आप यह भी कहते हैं कि आपके जिलेमें बहुत-से जमींदार हैं। तब तो मैं एक 'बनिया' होनेके नाते उनके धनमें हिस्सा लेनेका अधिकारी हूँ। अगर मैं इन सोनेके जेवरोंको जो इस बंगाली बहनने मुझे दिये हैं इन जमींदारोंको नहीं बेचूँगा तो फिर और किसे बेचूँगा?

अपने अभिनन्दनपत्र आपने खूबसूरत और मोहक हाथी-दाँतकी पेटियोंमें भेंट किये हैं। मैं इन आकर्षक वस्तुओंको अपने पास रखनेका अधिकारी नहीं हूँ और मेरे पास उन्हें रखनेके लिए जगह भी नहीं है। ये वस्तुएँ तो धनवानोंके घरोंमें रखी जानी चाहिए। इसलिए मेरी विनती है कि जिन लोगोंने पहले खादी-कोषमें कुछ नहीं दिया है वे इन वस्तुओंका उचित मूल्य देकर इन्हें पुनः वापस ले लें। आपने मुझे कुछ खादीकी चीजें भी भेंट की हैं जिन्हें मैं अब नीलामीके लिए रख रहा हूँ। एक बंगाली बहनने मुझे सोनेके दो कीमती कंगन दिये हैं; क्या आन्ध्रकी कोई बहन

मुझे कुछ नहीं देगी? स्वराज्यकी लड़ाईमें पुरुषोंके साथ-साथ महिलाओंपर, सभी महिलाओंपर, बराबरकी जिम्मेदारी है। मेरी प्रार्थना है कि जैसे आप अबतक शान्त रहे हैं उसी तरह [आगे भी] शान्त रहेंगे ताकि मैं इन वस्तुओंको नीलाम कर सकूँ।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ३०-४-१९२९

२८२. तार : नारणदास गांधीको

२९ अप्रैल, १९२९

नारणदास
आश्रम
साबरमती

आश्रम अवश्य छोड़ दो। जो-कुछ भी तुम करो ईश्वर तुम्हारी सहायता करे। मेरा सुझाव है कि शंकरलालसे परामर्श लो और खादी कार्य करो। इस तूफानी और थकाऊ यात्रा में जमनादास शायद शामिल न हों। २३ तारीखको वह बम्बईमें शामिल हो सकता है। इस बीच लिखना।

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ७७३२)से।
सौजन्य : नारणदास गांधी

२८३. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

विजगापट्टम
२९ अप्रैल, १९२९

प्रिय सतीशबाबू,

इस समय मैं उस स्थानपर हूँ जो इस दौरेमें आपके सबसे ज्यादा निकट है। हम विजग [ापट्टम] में हैं और बुधवारकी सुबहसे पहले रवाना नहीं होंगे।

खादीमें आत्म-निर्भर होनेका आपका कार्यक्रम मुझे पसन्द आया। कितना अच्छा हो, अगर यह प्रभावशाली ढंगसे चले। इससे बहिष्कारका सवाल और किसी चीजकी अपेक्षा अधिक प्रभावशाली ढंगसे हल हो जाता है।

हेमप्रभा देवीका क्या हाल है? तारिणी कैसी है? आप खुद कैसे हैं? कुछ अवकाश मिलनेपर और लिखूँगा।

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० १६०४)की फोटो-नकलसे।

२८४. पत्र : मीराबहनको

२९ अप्रैल, १९२९

चि० मीरा,

मेरे पास केवल तुम्हें प्यार भेजने और तुम्हारे सुखकी कामना करने-भरके लिए समय है। तुम्हें अपनी पुरानी शक्ति और स्वास्थ्य पुनः प्राप्त करना चाहिए।

यह जगह समुद्र-तटपर है।

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५३६८)से।
सौजन्य : मीराबहन

२८५. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

२९ अप्रैल, १९२९

प्रिय जवाहर,

तुम्हें पत्र लिखनेका मुझे कभी समय ही नहीं मिलता। बरेलीकी रिपोर्टको मैंने पढ़ लिया है। जहाँतक मैं देख सकता हूँ, उसमें खादीकी सम्भावनाके बारेमें कुछ नहीं कहा गया है। क्या तुमने उसे पढ़ा है? तुम्हारा उसके बारेमें क्या करनेका विचार है?

रही दौरेकी बात, तो तुम जैसा ठीक समझो वैसा प्रबन्ध कर लेना। प्रभुदासने एक फौरी पत्र लिखा था। मैंने उसको लिखा है कि मैं १० जूनके बाद जानेको तैयार रहूँगा और वह तुमसे परामर्श करके कार्यक्रम निश्चित कर ले।

यह दौरा थोड़ा क्लान्तिकर तो है लेकिन मैं बहुत आसानीसे इसे झेल रहा हूँ।

बमके बारेमें तुम्हारे भाषणका संक्षिप्त विवरण मैंने देखा — मुझे पसन्द आया।

तुम्हारा,
बापू

[पुनश्च :]

मेरे दौरेका कार्यक्रम तुमको भेज दिया गया है।

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९२९।
सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

२८६. पत्र : बालकृष्ण भावेको

२९ अप्रैल, १९२९

चि० बालकृष्ण,

परेशान तो नहीं हो न? घड़ी किसीने चुरा ली तो चुरा ली। हम लोगोंके बीच चोरी देखनेमें आई है; इसलिए और चोरियाँ आजकल हो रही हों तो इसमें आश्चर्य क्या है। यह भी एक प्रकारकी महामारी है। कोई झूठ बोले तो भी उपवास न करना; उसके लिए भी वातावरण होना चाहिए। अपने काममें मस्त रहो और आसपासकी किसी खलबलीसे परेशान मत होना। शरीरको दुर्बल न बनाकर मजबूत बनाना। सुरेन्द्रको भी ऐसा ही कुछ लिखना था। वह अब इसीको पढ़कर समझ ले।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८०२)से।
सौजन्य : बालकृष्ण भावे

२८७. पत्र : छगनलाल जोशीको

[२९ अप्रैल, १९२९ या उसके पश्चात्][1]

चि० छगनलाल,

तुम्हारे पत्रोंसे आजकल रोज नई खबरें मिलती हैं। जहाँ संघर्ष चल रहा हो वहाँ तो ऐसा होगा ही। निरन्तर संघर्षका नाम ही जीवन है। मोहवश हम ऐसा मान बैठते हैं कि संघर्ष नहीं है। छगनलालके किस्सेने हमें इस संघर्षका विशेष भान कराया है सो भी ठीक ही हुआ है।

नारणदासको तार दिया है कि वह खुशीसे जा सकता है। रमणीकलालको भी वैसा ही तार भेजा है। रमणीकलालका तार शायद तुम देखोगे। उसे मैंने जो सलाह दी है, वैसा करे तो ठीक होगा।

तुम्हें मेरी यही सलाह है कि जो जाना चाहे उसे जाने देना। हम बहुत आग्रह कर चुके हैं, बहुत समझौता कर चुके हैं। इतना परिवर्तन तो फिलहाल कर ही लेना। आश्रमकी जमीनका कुछ हिस्सा किरायेपर दे देना और वहाँ नियमोंका कोई बन्धन नहीं रखना। जिनका हमें अनुभव है, उनकी सज्जनता देखकर ही दे दें। उनपर और हमपर एक महीनेके नोटिसका ही बन्धन रहे। बुधाभाई किसी नियमसे बँधे हुए नहीं हैं, फिर भी पड़ोसीके रूपमें वे हमें पसन्द हैं। जिसे हम जमीन दें

१. २९ अप्रैल, १९२९ को नारणदास गांधीके नाम दिये गये तारके उल्लेखसे।

उसके बारेमें भी वैसा ही समझें। इस प्रकार रहनेवालेको हम भण्डार वगैराकी सुविधा नहीं दे सकते। व डजके वे भाई अपनी जिम्मेदारोपर भण्डार चलाना चाहें तो जरूर चलायें। यदि वे ऐसा करें तो हम अपना भण्डार बन्द करके उनसे सौदा ले सकते हैं। इसपर तो तुम्हें विचार करना है।

गोशालाकी सारो व्यवस्था उद्योग-मन्दिर या आश्रमसे स्वतन्त्र रहे तो मुझे अच्छा लगेगा। उसके लिए जितना हिस्सा जरूरी हो उतना अलग करके नामका किराया ले लें। पारनेरकर खुशीसे उसे अपनी जिम्मेदारीपर चलाये। अपनी जिम्मेदारी अर्थात उसके लिए नियम वगैरह वह खुद सोच ले। पैसेकी जैसी सुविधा अभी है वह सब उसे प्राप्त होगी। किन्तु व्यक्तियोंको रखने-न-रखनेके बारेमें उसे स्वतन्त्रता होगी। यदि वह समिति नियुक्त करना चाहे तो कर ले। मतलब यह है कि वह दुग्धालयके लिए सर्वार्पण करनेके लिए तैयार हो तो वह यह काम उठा ले। आश्रमको और दूसरे लोगोंको अपनी सुविधाके अनुसार पूरा-पूरा दूध आदि दे। आश्रम-में रहनेवाले उसमें काम करना चाहें तो करें। कुछ व्यक्तियोंको तो मदद देनेके लिए रहना ही चाहिए। पारनेरकर स्वयं भी आश्रममें रहना चाहता है या नहीं, यह उसके विवेकपर है। यह परिवर्तन मेरे वहाँ लौटनेसे पहले करने हों तो कर सकते हो; उसके लिए गोसेवा संघकी समितिकी आज्ञाकी जरूरत रहेगी, किन्तु उसे प्राप्त करनेमें तो कोई कठिनाई नहीं होगी।

यह सब करनेसे मन्दिरमें कम लोग रह जायें तो कोई बात नहीं। पूरा ही बन्द हो जाये तो भी कोई बात नहीं है। इसमें से कुछ भी प्रकाशित करते हुए मुझे शर्म नहीं आयेगी। सत्यको संसारमें कहीं भो शर्म नहीं लगती। यदि सत्य शर्माये तो यह जान लेना चाहिए कि वह असत्य है, सत्य नहीं।

इसमें तुम अकेले रह जाओ तो भी घबराना नहीं। उसके बाद जैसा जहाजका कप्तान करता है, वैसा करना। वह पहले सबको डूबता हुआ देखता है, पीछे खुद डूब जाता है अथवा यदि कोई भागकर बच सकता हो तो उसे बचा कर उसके साथ खुद भी बच जाता है। अगर वह खुद नहीं बचता तो सब डूब जाता है।

जो जाये वह बुरा, जो रह जाये वह अच्छा, ऐसा इस स्थानपर नहीं सोचा जा सकता। महादेवकी तुलनामें अच्छे होनेपर ही तुम रह सकते हो, तुम्हारा यह हिसाब लगाना गलत है। महादेवमें रहनेकी शक्ति न हो तो वह चला जाये। तुममें शक्ति हो तो तुम रहो। इसमें होड़ तो नहीं हो सकती।

मुझे आघात पहुँचनेका विचार तो मनमें कभी न लाना। सभी अपनी-अपनी शक्तिके अनुसार काम करें तो मुझे कमसे-कम दुख होगा।

स्त्री-विभागके विषयमें जो करना ठीक हो सो करना। रह जायें तो उससे अच्छी बात नहीं हो सकती। न रह सकें तो उन्हें छूट दे देनेकी सलाह मैं दे ही चुका हूँ। इस सलाहको कायम मानना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (एस० एन० ११७९२)की फोटो-नकलसे।

२८८. पत्र : नारणदास गांधीको

मौनवार [२९ अप्रैल, १९२९][1]

चि० नारणदास,

तुम्हें तार दे दिया है। तुम आश्रम छोड़ोगे किन्तु खादी तो नहीं छोड़ दोगे? इसीलिए मैंने सुझाव दिया है कि शंकरलालसे मिलकर किसी काममें लग जाओ। आश्रमके बारेमें मैंने छगनलालको जो लिखा है, उस सुझावके अनुसार रह सको तो रह जाना। लेकिन सबसे बड़ी बात तो यह है कि जिस काममें तुम्हारे मनको शान्ति मिले वही काम करना और उसके लिए तुम्हें मेरा आशीर्वाद प्राप्त है। पुरुषोत्तम मेरे पास रह रहा है और यदि वह आगे भी रहना चाहे तो मुझे अच्छा लगेगा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–९ : श्री नारणदास गांधीने

२८९. पत्र : पुरुषोत्तम गांधीको

२९ अप्रैल, १९२९

चि० पुरुषोत्तम,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं तो राह देख ही रहा था। मोरवी जानेका विचार मुझे तो पसन्द है। वहाँके लिए सिफारिशी चिट्ठीकी जरूरत है क्या? यह प्रयोग मेरे लौटनेतक आजमा लो और उससे भी ठीक न हुए तो मेरे साथ अल्मोड़ा आ जाना। उसके बाद मझे आश्रममें आना है। जुलाई और अगस्त आश्रममें ही बिताऊँगा। उस समय उपवासकी आजमाइश करेंगे।

तुम्हारा जन्म-दिन तो निकल गया। तुम्हारा तार मुझे छः दिनमें मिला। तुम दीर्घायु हो और तुम्हारी सदिच्छाएँ पूरी हों। तुम्हारे गीता-पाठ और भजनकी रोज याद कर लेता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८९६)से।
सौजन्य : नारणदास गांधी

१. साधन-सूत्रके अनुसार।

२९०. पत्र : वसुमती पण्डितको

मौनवार [२९ अप्रैल, १९२९][1]

चि० वसुमती,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। गंगाबहन तुम्हारा साथ देती है इसलिए चाहो तो स्त्री-विभागकी जिम्मेदारी उठा सकती हो। किन्तु मेरे पत्रके कारण ऐसा कुछ नहीं करना है। इस पत्रमें तो मैंने तुम्हें तुम्हारा कर्त्तव्य ही सूचित किया है। फिर मुझे तुमपर इतना विश्वास है कि तुम जितना दोगी उतना लेकर ही सन्तोष कर लूँगा। इतने वर्ष हो गये, मैंने तुमसे लिया है न? कुछ दिया है तो बापका बेटीको देनेमें आश्चर्यकी क्या बात है, किन्तु तुम तो मेरे पास दान लेकर ही आई। सत्याग्रहकी प्रतिज्ञा ऐसी नहीं है कि कभी भुलाई जा सके। पैसा दिया उसकी कीमत मेरे सामने कुछ नहीं है। वह तो मैंने कई स्त्रियोंसे लिया है। उसका कुछ दुख नहीं और कइयों-की तो याद भी नहीं है। अभी जो विधवा हुई है उस सत्यवतीके पाससे उसके सारे गहने इस मुसाफिरीके दौरान लेते हुए मुझे तनिक क्षोभ नहीं हुआ, किन्तु क्या सत्यवती कोई प्रतिज्ञा करके उसका पालन करना चाहती है? ऐसा करे तो बहुत अच्छा होगा। तुममें प्रतिज्ञा-पालनकी शक्ति है इसलिए तुम्हें जागृत करता रहता हूँ और निद्रावश होने नहीं देता। इतने भरके लिए ही मैंने पत्र लिखा है, ऐसा समझना। तुम जिदमें आकर कुछ काम करो और पीछे शरीर बिगाड़ कर पिछड़ जाओ तो मेरे कड़वे वचन सुनने पड़ेंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ५५३)की फोटो-नकलसे।
सौजन्य : वसुमती पण्डित

२९१. पत्र : माधवजी वी० ठक्करको

२९ अप्रैल, १९२९

भाईश्री माधवजी,

इधर तुम्हारा पत्र नहीं मिला है। इसका यही अर्थ लगाता हूँ कि तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक चल रहा है। तुनीके पतेपर पत्र लिखनेसे जल्दीसे-जल्दी मिल जायेगा।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजराती (जी० एन० ६७७८)की फोटो-नकलसे।

१. गांधीजी सत्यवतीसे २३ अप्रैलको मिले थे, पत्र उसके बादके मौनवारको लिखा गया होगा।

२९२. पत्र : गंगाबहन झवेरीको

२९ अप्रैल, १९२९

चि० गंगाबहन झवेरी,

यह पत्र बहनोंके लिए भी है, ऐसा समझना।

तुमने और वसुमती बहनने स्त्री-विभागका बोझ उठाया है। मुझे इसका कारण तुम्हारी इच्छा और शक्तिके बजाय मेरे प्रति स्नेह ही अधिक दिखाई देता है। ऐसा हो तो ईश्वर तुम्हें इच्छा और शक्ति भी दे। कुछ भी हो, अपनी शक्तिसे बढ़कर कोई काम न करना।

पूरे आश्रमकी कड़ी परीक्षा हो रही है; उसमें बहनें भी आ जाती हैं। जिन्हें अलग रहना हो वे रह सकते हैं, ऐसा मैंने छगनलालको लिखा है। जिन बहनोंका पुरुष वर्गमें कोई आत्मीय नहीं है, उनके लिए क्या करना है, इसका विचार करना बाकी है। किन्तु इस सम्बन्धमें तुम सब मिलकर विचार कर सको तो करना। जो आश्रम या मन्दिर छोड़ देंगे, उनपर एक भी नियम लागू नहीं होगा; फिर वे सिर्फ एक किरायेदारकी तरह रहें, ऐसा मेरा सुझाव है। इस सुझावमें जोखिम तो भरा हुआ है किन्तु देखता हूँ इसके सिवा कोई दूसरा उपाय भी नहीं है। कोई नरम कायदे उनपर लागू करना भी ठीक नहीं लगता। किरायेदारोंको जबतक पुसाये और जबतक मकान-मालिकको उनका रहना अनुकूल लगे तबतक वे रहें। इस स्थितिमें कोई बहन रहना चाहती है कि नहीं, अथवा रहना भी चाहे तो उसके इस प्रकार रहनेका जोखिम हम उठायें या नहीं, यह निर्णय मैं अभीतक नहीं कर सका हूँ, किन्तु तुम सब वहाँ हो इसलिए अभी विचार तो कर ही सकती हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६९६)की फोटो-नकलसे।

२९३. पत्र : छगनलाल जोशीको

[२९ अप्रैल १९२९ या उसके पश्चात्][1]

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। बालकृष्णकी घड़ी गई इससे मुझे आश्चर्य नहीं होता। उसे अपने यहाँका या बाहरका कोई भी व्यक्ति ले सकता है। ऐसी घटनाएँ तो हुआ करती हैं। जितने सावधान रह सको, उतने सावधान रहो।

पन्नालाल आश्रमकी जमीन लेकर जोते तो मुझे अच्छा लगेगा। आश्रमके टुकड़े करके उसमें हमारे ही लोग रहते हुए यथाशक्ति नियमोंका पालन करें और आश्रमको जो पसन्द है, ऐसे धन्धे करें, इससे बढ़कर अच्छी बात और क्या हो सकती है? ऐसा करते हुए हम जहाँ पहुँचना चाहते हैं वहीं पहुँच जायेंगे।

इस समय मेरी स्थिति तो यह है कि किसीसे जबरदस्ती नहीं करनी है। सभी अपनी-अपनी इच्छासे जो काम करना चाहें करें। मेरे वहाँ पहुँचनेकी राह देखें, मुझे इसकी जरूरत नहीं दिखाई देती है। क्योंकि मैं किसीको समझाना नहीं चाहता। मुझे जो कहना और समझाना था, वह मैं कर चुका हूँ।

गंगाबहन एक मासके लिए गई हों तो ठीक है। उन्हें कुछ परिवर्तनकी जरूरत थी। वह कुछ कमजोर हो गई थीं। लक्ष्मीबहन और दुर्गा रसोई-घर अच्छी तरह सँभाल सकती हैं। रोटीका क्या होगा?

सिर्फ प्रयोगके रूपमें तुम बाहर नहीं जा सकते। आवश्यक होनेपर तुम्हें जाना पड़े तो कुछ-न-कुछ बंदोबस्त तो होगा ही।

रावजीभाईको काम सौंप देनेमें मुझे तो कोई बुराई नहीं दिखाई देती। किन्तु उसके विषयमें तो तुम मुझसे ज्यादा अच्छी तरह बता सकते हो।

धोलकावाली चरागाहके बारेमें मुझे जानकारी है। अपनी चादर देखकर पैर फैलाना। पारनेरकर हमारी चादर है। उससे बन पड़े तभी इसमें हाथ डालना, नहीं तो इस समय जाने देना।

मोरवीके ठाकुर साहबका पत्र इसके साथ है। पारनेरकरने जो दो गायें माँगी थीं वे अब वहाँ आ जानी चाहिए। आने पर ठाकुर साहबके मन्त्रीको लिख देना। और उन गायोंकी रिपोर्ट हर महीने जानी चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५४८०) की फोटो-नकलसे।

1. देखिए "पत्र : बालकृष्ण भावेको", २९-४-१९२९।

२९४. पत्र: घनश्यामदास बिड़लाको

[३० अप्रैल, १९२९ से पूर्व][1]

भाई घनश्यामदासजी,

आपका पत्र मोला है।

मेरे लेखके[2] बारेमें मुझे विश्वास है की मैंने बा को अन्यायसे बचा ली है। बा भी दिलमें यही समजती है ऐसा मुझको प्रतीत होता है। अन्यथा इतने प्रफुल्लित चित्तसे मेरे साथ घूम न सकती। कई वृधा [वृथा] दोषारोपणसे बा को छगनलालादि को मैंने बचा लीये हैं। दोषके जाहिर स्वीकारका मीठा अनुभव मैंने जितना लीया है इतना शायद [ही] और किसीने हमारे समाजमें लीया हो। मुझको आश्चर्य है की यह बात आपने नहिं पहेचान ली।

मीलवालोंके पाससे पैसे लेनेकी चेष्टा अवश्य करें। उसमें किसी प्रकारकी शर्त नहिं होनी चाहिये। खादीको लाभ मीलो या न मीलो मीलोंको तो अनहद लाभ हो रहा है ऐसा वाडीयाने भी स्वीकार कीया हैं। मील मालेक और थोड़ा समझ जाये तो भी लाभ उठा सकते हैं। काल जाते समझेंगे।

मेरे प्रवासकी मुख्य तारीख यह है:–

३० विजागापट्टम
२ मई टुनी
३ पिद्यापुरम
४ सामलकोट
५ रामचन्द्रपुरम
८ राजमन्दरी
१० नैलोर
१६ चित्तौर
२२ अडोनीसे बम्बईके लिए।

आपका,
मोहनदास

सी० डब्ल्यू० ६१६७ से।
सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

१. यात्राके कार्यक्रमसे यह पत्र ३० अप्रैलसे पूर्व लिखा प्रतीत होता है।
२. देखिए "मेरा दुःख, मेरी शर्म", ७-४-१९२९।

२९५. भाषण: सार्वजनिक सभा, विजगापट्टममें

३० अप्रैल, १९२९

खादी कोषके लिए आपने जो चन्दा दिया है उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। आप सबको एक बात अच्छी तरह याद रखनी चाहिए; वह यह कि आप अपने अभिनन्दनपत्रोंमें जो-कुछ लिखें उसपर आप गम्भीरतापूर्वक अमल भी करें। सहकारी कताई और बुनाई समितिके अभिनन्दनपत्रसे मुझे बेहद खुशी हुई है। यह एक आदर्श संस्था है और अपनी तरहकी अकेली ही है। बेशक सहकारी समितियाँ और स्थानोंपर भी हैं, जैसे कि मैसूरमें। लेकिन इस समितिकी यह खासियत है कि इसमें हर तरहके कर्मचारी हैं और कर्मचारियोंका इसके लाभमें हिस्सा रहता है। मैं आपके अभिनन्दनपत्रका अनेक देशी भाषाओंमें अनुवाद कराऊँगा और हर स्थान पर उसको बँटवाऊँगा। मेरा विश्वास है कि अगर यह समिति इसी तरह काम करती रही और अपने कार्यक्षेत्रको बढ़ाती रही तो देशके आर्थिक पुनरुत्थानमें यह बहुत सफल रहेगी। मैं प्रार्थना करता हूँ कि आप सभी लोग जो इस समय विदेशी वस्त्र पहन रहे हैं, हमेशाके लिए उसका परित्याग कर देंगे। यह एक बुराई है और एक लज्जाजनक बात है, और जितनी जल्दी हो सके हमें इसका त्याग कर शुद्ध हो जाना चाहिए। इस लांछनको मिटा दीजिए कि हम इतने असहाय हैं कि दूसरे राष्ट्रोंको हमें पहननेके लिए कपड़ा देना पड़ता है। मद्यपानके अभिशापको, जो इस देशकी दूसरी शर्मनाक चीज है, दूर कर दीजिए। ये दोनों ही हमारे पिछड़ेपन और हमारी कमजोरीके कारण हैं। अस्पृश्यताको हर उपायसे खत्म कर देना चाहिए। हिन्दुओं और मुसलमानोंको भाई-भाईकी तरह रहना चाहिए, क्योंकि हम सभीको समान लक्ष्यकी प्राप्ति करनी है। विभिन्न सम्प्रदायोंमें मित्रताका भाव होना चाहिए। इसके सिवा भारतको स्वराज्य दिलानेमें पुरुषोंकी जो जिम्मेदारी है वही महिलाओंकी भी है। मेरा यह सच्चा विश्वास है कि खादीके प्रचारके लिए महिलाएँ पुरुषोंसे ज्यादा कुछ कर सकती हैं। मैं ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि वह आपको प्रकाश दे ताकि भारतको स्वतन्त्र करानेका सच्चा मार्ग आप देख सकें, आपको अपने बलका ज्ञान हो, तथा आप इस देशको स्वतन्त्र कर सकें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २-५-१९२९

२९६. पत्र : कृष्णदासको

कैम्प, अनकापल्ली
१ मई, १९२९

प्रिय कृष्णदास,

तुम्हारा पत्र मिला। इससे मुझे तसल्ली नहीं हुई। रामविनोदके ऊपर जो कर्ज बकाया है उसे छोड़ देनेकी सिफारिश सतीश बाबूको नहीं करनी चाहिए थी।[1] इसकी छूट तो केवल संस्था ही दे सकती है। अगर रामविनोद बकाया रकमके बारेमें कोई शंका उठाता है तो इसकी जाँच होनी चाहिए। लेकिन यह देखते हुए कि वह अपना निजी व्यापार चलाता था और असाधारण अनुकूल शर्तोंपर कर्जा लेता था, निश्चय ही अब उसे अपने बकाया ऋणकी छूटकी माँग नहीं करनी चाहिए। वह उदार रहा है, लेकिन किसकी कीमतपर? और वह यह स्वीकार करता है कि नारणदासने जो हिसाब इकट्ठा किया है उससे तो लाभ प्रकट होता है। वास्तवमें जिसको व्यापारमें इतना फायदा होता हो वह भुगतानमें अपनी असमर्थताकी बात नहीं कह सकता। और न ही इससे पहले रामविनोदने कभी, जहाँतक मुझे याद है, अपनी देनदारीसे माफी पानेकी इच्छा व्यक्त की थी। इसके विपरीत उसने तो अपने पत्रोंमें और मेरे सामने भी यही बात कही है कि वह अपनी देनदारीको फलाँ-फलाँ तारीख तक पूरा करना चाहता है, लेकिन वह तारीख हमेशा बदलती चली गई। इसलिए मेरे खयालमें वह जो कमसे-कम कर सकता है वह ऋणकी अदायगी ही है।

लाभका जो हिसाब दिया गया है मुझे उससे भी तसल्ली नहीं हुई है। उसमें, निःसन्देह, लाभको छिपानेकी कोशिश की गई है।

द्विज प्रसादके तथाकथित वक्तव्यपर[2] मैं और ध्यानसे विचार करूँगा।

क्या रामविनोद अब हिसाबके अथवा ऋणके बारेमें कोई और सफाई पेश करना चाहता है? क्योंकि यदि उसे कुछ नहीं कहना है तो मैं अपनी राय देनेके लिए तैयार बैठा हूँ।

उम्मीद है कि गुरुजीके दायें हाथमें जो तकलीफ थी वह ठीक हो गई होगी।

रामविनोदने मुझे 'सैवन मन्थ्स' के प्रथम खण्डके बारेमें लिखा है। मैं नहीं समझता कि 'यंग इंडिया' के गणेशनको या मोहनलालको दूसरे खण्डकी अमुक संख्याके

१. देखिए "पत्र: सतीशचन्द्र दासगुप्तको", २१-२-१९२९।

२. पंच-निर्णायकोंको यह बताया गया था कि कार्यभार सौंपनेके वक्त ५,००० रु० मूल्यका कपड़ा दूसरी दूकानमें छिपा दिया गया था।

विरुद्ध प्रथम खण्डकी उतनी ही प्रतियाँ देनेपर राजी करनेमें कोई कठिनाई होगी। लेकिन असली चीज तो यह है कि अगर इन्हें हस्तान्तरित किया जाये तो यह . . .[1]

अंग्रेजी (एस० एन० १४९००)की माइक्रोफिल्मसे।

२९७. पत्र : अब्बास तैयबजीको

कैम्प, अनकापल्ली
१ मई, १९२९

प्रिय भर्र . . .

आपका पत्र मिला। मेरे पत्रकी किसी बातसे क्या आपको ऐसा लगा कि आप सालेहकी[2] उपेक्षा करते रहे हैं? निश्चय ही उसने तो कभी मुझे ऐसा समझनेका मौका नहीं दिया। इसके विपरीत, जब कभी मैं उसपर अपनी स्थितिको आपकी जानकारीमें न लानेके लिए नाराज हुआ हूँ तो, यदि मुझे ठीक याद है, उसने कहा कि वह आपको परेशानीमें डालना नहीं चाहता और अपनी परेशानियोंसे खुद निपटना चाहता है, जो कि वास्तवमें बिलकुल ठीक भी था। चूंकि मैंने ऐसा अनुभव किया कि आपकी सहायताके बगैर उसका अपनी परेशानियोंसे उबर पाना सम्भव नहीं है, अतः मैंने उसकी इन परेशानियोंको आपके सामने रखनेके लिए उससे अनुमति प्राप्त की। मुझे मालूम है कि आप एक अनुकरणीय और उदार पिता हैं, बल्कि मेरे अपने दृष्टिकोणसे तो कुछ ज्यादा लाड़-दुलार करनेवाले बाप हैं। इस बातकी मुझे खुशी है कि आपने उसे लिख दिया है, और अगर वह भारत आता है तो निश्चय ही मैं यह आशा करूँगा कि उसके भविष्यको तय करनेके लिए जो राय-मशविरे होंगे उसमें भी मैं हिस्सा लूँ।

हृदयसे आपका,
साथी भर्र. . .

श्री अब्बास तैयबजी
बड़ौदा कैम्प

अंग्रेजी (एस० एन० ९५६६)की फोटो-नकलसे।

१. साधन-सूत्रमें पत्र अधूरा है।
२. अब्बास तैयबजीका पुत्र।

२९८. भेंट : एबेल[1] के साथ

१ मई, १९२९

जब मैंने आपको देखा, तो सचमुच मेरा हृदय खुशीसे उछल पड़ा। और जब मैंने मानवजातिकी सेवामें समर्पित आपके जीवनपर विचार किया तो मुझे सचमुच क्राइस्टका खयाल आ गया। क्राइस्टके बारेमें आपके क्या विचार हैं, यह जाननेके लिए मैं आपके पास खास तौर पर आया हूँ।

गांधीजी : मैं क्राइस्टको विश्वके महान शिक्षकोंमें से मानता हूँ। इससे अधिक मैंने नहीं सोचा है।

क्राइस्टने मोक्षका जो रास्ता बताया है, क्या उसके अलावा भी कोई रास्ता है?

इन सब बातोंका लाक्षणिक अर्थ ग्रहण करना चाहिए, शाब्दिक अर्थ नहीं। निःसन्देह क्राइस्टने कहा था : "मैं ही मार्ग हूँ" आदि, लेकिन उन्होंने यह भी कहा था : "शब्दोंके जालमें भावार्थ नष्ट हो जाता है।" क्राइस्टने जो-कुछ कहा वह तो कोई भी गुरु कह सकता है। आखिरकार क्राइस्ट तो एक जातिवाचक संज्ञा है-और जीसस क्राइस्टका मतलब है अभिषिक्त क्राइस्ट। यह बात तो ऐसा कोई भी गुरु कह सकता है जिसने अपना जीवन प्रभु तथा मानव जातिकी सेवामें अर्पित कर दिया हो और जो पूर्ण शुद्धताको प्राप्त हो चुका हो। 'गीता' भी बिलकुल यही बात कहती है।

क्या मोक्ष-प्राप्तिकी आपकी कोई विशेष योजना है?

मेरा जो ज्ञान है वह मुझे सभी धर्मग्रन्थोंके अध्ययनसे प्राप्त हुआ है। आत्म-त्याग और सेवामें पूर्ण शुद्धताकी प्राप्तिसे बड़ा मोक्ष और क्या है जिसकी मनुष्यको आवश्यकता हो?

क्या अकेले जीसस क्राइस्ट ही एक ऐसे नहीं हैं जो सर्वथा निष्पाप हैं?

क्राइस्टके सम्पूर्ण जीवनके बारेमें हम क्या कह सकते हैं? न्यू टेस्टामेंटके चार सिद्धान्तोंमें वर्णित उनके जीवनके अतिरिक्त हम उनके शेष जीवनके बारेमें कुछ नहीं जानते। 'बाइबिल' का एक अच्छा ज्ञाता होनेके नाते आपको यह बात तो जाननी ही चाहिए। इसमें कोई सन्देह नहीं कि क्राइस्ट उन लोगोंमें से एक हैं जिन्होंने निष्पापताकी स्थिति प्राप्त कर ली थी। और फिर इन मामलोंका विवेचन बुद्धि द्वारा नहीं किया जा सकता, बल्कि ये सब बातें तो हृदयसे अनुभव की जानेवाली हैं। ये सब विवादके विषय नहीं हैं।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ३-५-१९२९

१. विजगापट्टमके एक ईसाई मिशनरी।

२९९. भाषण: अनकापल्लीकी सार्वजनिक सभामें

१ मई, १९२९

आपके अभिनन्दनपत्रोंके लिए तथा खादी कोषके लिए भेंट की गई थैली तथा बहुमूल्य आभूषणोंके लिए मैं आपको हार्दिक धन्यवाद देता हूँ। आज आपमें से बहुतसे लोगोंने इस देशके निर्धनोंको पैसा देकर उनसे जो अपने लिए कातने और कपड़ा बुननेको कहा है, वह सब देखकर मुझे खुशी हुई है। इन सब मूल्यवान जेवरों तथा अन्य वस्तुओंको अपने पास रखना मेरे लिए सम्भव नहीं है इसलिए मैं उनको यहीं नीलाम कर दूँगा और मैं जानता हूँ कि यहाँपर मौजूद धनवान लोग उन्हें खरीद-कर मुझे पैसा दे देंगे। आप जानते हैं कि खद्दरका उत्पादन और उसका पहनना हमारे राष्ट्रीय उद्देश्यकी सिद्धिका सबसे अच्छा और सबसे सहज साधन है। धनवानोंका और साथ ही निर्धनोंका यह कर्तव्य है कि वे राष्ट्रके हित कुछ-न-कुछ करें। आपने अपने अभिनन्दनपत्रमें खद्दर-उत्पादनसे सम्बन्धित एक स्थानीय कार्यकर्त्ताके प्रयत्नोंका उल्लेख किया है जिसकी वजहसे कुछ निर्धन व्यक्तियोंके लिए अपनी अल्प आयमें वृद्धि कर सकना सम्भव हो गया है, और साथ ही आपको अपने ही शहरमें उचित मूल्यपर खद्दर खरीद सकनेकी सुविधा भी हो गई है। मैं इन कार्यकर्त्ता महोदयको बधाई देता हूँ और आशा करता हूँ कि आप लोग भी उनका अनुसरण करेंगे और उन्हें मदद पहुँचायेंगे। क्योंकि याद रहे कि उन्होंने इस शहरमें स्वतन्त्रताकी दिशामें एक मिसाल कायम कर दी है। उन्हें सहायता दीजिए तथा मैंनचेस्टरसे कपड़े आनेकी प्रतीक्षा किये बिना यहाँके बने कपड़े ही पहनिए। आपने यह भी बताया है कि पैसा पर्याप्त न होनेके कारण खादी-कार्यमें रुकावट आ गई है। इस शहरमें जहाँ इतने सारे समृद्धिशाली व्यापारी हैं, खद्दरका उत्पादन और प्रचार-कार्य पैसेके अभावमें रुके, ऐसा नहीं होना चाहिए। हो सकता है कि इस समय आपके पास पैसे न हों। लेकिन यदि आपके प्रयत्न सच्चे हैं तो पैसेकी कमीके कारण खद्दरका कार्य रुकना नहीं चाहिए। आपकी सहायतार्थ मुझसे जो-कुछ बन पड़ेगा, मैं करूँगा। आखिरकार पैसा तो एक नगण्य तत्त्व है। यदि किसी जगह खद्दर-कार्यमें बाधा उपस्थित होती है तो समझ लीजिए कि इसका कारण पैसेकी कमी नहीं, बल्कि हमारे अन्दर साहस तथा निष्ठा और स्वतन्त्रताकी भावनाका अभाव है।

यहाँ अब विदेशी कपड़ेको जलाये जानेका प्रबन्ध है। यह एक पुनीत कार्य है क्योंकि ऐसा करके आप 'विदेशी कपड़ेसे लिपटे राष्ट्र' की शर्मको जलाते हैं और मेरी आपसे प्रार्थना है कि आप इसकी भावनाको कायम रखें। स्वराज्यके चार स्तम्भोंको हमेशा अपने ध्यानमें रखिए। केवल खद्दर पहनिए, शराब तथा मादक वस्तुओंकी बुराईका उन्मूलन कीजिए, अस्पृश्यताका निवारण कीजिए तथा हिन्दू-मुस्लिम एकता और अन्तर्साम्प्रदायिक एकताके लिए काम करिए। राष्ट्रीय मुक्तिके लिए शारीरिक

प्रशिक्षण आवश्यक है, इसीके साथ-साथ हमारा मानसिक विकास तथा आध्यात्मिक विकास भी होना चाहिए। जो-कुछ भी आपके पास है—चाहे पैसा हो, चाहे जवाहरात हों या दूसरी वस्तुएँ हों—मैं आपसे उन्हें मुझे देनेकी प्रार्थना करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ३-५-१९२९

३००. आन्ध्र देशमें [-३]

चालू सप्ताहका यात्रा-कार्यक्रम और प्राप्त होनेवाली रकम निम्नलिखित हैं:[1]

पहुँचनेके तुरन्त बाद ही मैंने देशभक्त कोंडा वेंकटप्पैया तथा दूसरे साथियोंको यह बता दिया था कि यात्रासे सम्बन्धित खर्चे कमसे-कम कर दिये जायें और यदि उन खर्चोंको जमा राशिमें से काटना हो, जैसा कि मैंने पिछली बहुत-सी यात्राओंमें होते देखा है, तो उसके बारेमें मुझसे पहले पूछ लेना चाहिए। कार्यकर्त्ताओंने मुझे बताया कि जमा राशिमें से खर्च काटनेका कारण यह था कि स्थानीय कांग्रेस कमेटीकी तिजोरीमें धन नहीं था और अगर वे स्वागत-प्रबन्धके सिलसिलेमें खास चन्दा करते तो उतनी राशि चन्देमें कम मिलती। इसीलिए मैंने सलाह दी थी कि जो खर्च हो उसके बारेमें मुझसे पुष्टि करा लें। कार्यकर्त्ताओंने मेरी सलाहको मान लिया और यह योजना ठीक-ठाक चलती दिखाई पड़ती है।

खर्चोंसे सम्बन्धित जो पहला बिल मेरे हाथोंमें आया है उसे मैं नीचे देता हूँ:

(१) मोटरकारोंका किराया पूरे जिलेके लिए बी० पी० सीतारमैया, एम० कृष्णराव, सी० एच० वी० नरसिंहमको दी गई नई फोर्ड गाड़ीका किराया १७ मार्च से १६ अप्रैलतक ३१ दिनका १२ रु० प्रतिदिनके हिसाबसे	रु०	३७२–०–०
(२) सामान ढोने तथा दूसरे छुट-पुट कार्यके लिए पुरानी रगबी गाड़ीका १० रु० प्रतिदिनके हिसाबसे १० दिनका किराया		१००–०–०
(३) ताल्लुका-कार्यसे सम्बन्धित कारोंका खर्चा		
१. दीवी द्वीप; शेवरलेट गाड़ी २५ मार्चसे १५ अप्रैलतक		२४०–०–०
२. देवरकोटा; जी० ब्रह्मैया, ५ दिनका कार्य		९१–८–०
३. पूर्वी देवरकोटा; के० अंजानेयुलू		९५–०–०
४. गुडीवड़ा; बी० अंजानेयुलू		५८–०–०

१. यहाँ नहीं दी गई है। इसमें विभिन्न गाँवोंमें इकट्ठी की गई रकमका ब्योरा था। कुल जमा राशि १,११,६५३ रु० ९ आने ७½ पाई थी।

(४) यात्राके दौरान			
एक अतिरिक्त डॉज गाड़ीका ५ दिनका खर्चा			७५–०–०
(५) पेट्रोल और मोबिल ऑयल तथा मार्ग-करकी अदायगी			२२१–०–०
(६) पेट्रोल और मोबिल ऑयलका बिल, जिसका भुगतान होना है			२०२–१३–०
(७) विविध	६––०–०		
सैर-सपाटा	१–१४–०		
फुटकर सामान	१–१२–०		
हुण्डी मंजूषाएँ	५––०–०		
		कुल :	१३–१०–०
(८) छपाई			७०––०–०
(९) एक महीने तककी व्यवस्था			७५––०–०
		कुल :	१,६१३–१५–०
वेंट्राप्रागाड़ामें दिये गये साथवाले बिलकी कुल राशि : ७०–१३–०। अत :			
ऊपरका जोड़		रु०	१,६१३–१५–०
वेंट्राप्रागाड़ाका बिल			७०–१३–०
		कुल रु०	१,६८४–१२–०

इसका मतलब यह हुआ कि लगभग ३०,००० रु० इकट्ठा करनेमें १,६८४-१२-० खर्च हुए। यह ५ प्रतिशतसे कुछ ऊपर ही बैठते हैं। मुझे पता है कि पिछले अवसरों पर खर्च इससे बहुत ज्यादा रहा है और इसमें मेरे साथियोंके राशनका खर्चा भी शामिल रहा है। इस बिलमें ये सब चीजें नहीं हैं। यदि आज कोई यात्रा करनी पड़े तो मैं समझता हूँ कि इन खर्चोंमें और कमी करना सम्भव है। यह तो सच है कि डा० पट्टाभि हमारे कुछ नियोजित ढंगसे काम करनेवाले मुस्तैद कार्यकर्त्ताओंमें से हैं। और वे बेकारके सारे खर्चोंको भी बचा देते थे। लेकिन यात्रा करनेवाले स्वयंसेवकोंकी संख्यामें कमी की जा सकती है और चाहिए भी। इन मामलोंमें बहुत ज्यादा सख्ती बरतनेकी आवश्यकता होती है। दलमें उन्हींको शामिल किया जाना चाहिए जिनसे काम लेना हो। मैं मानता हूँ कि इस प्रकारकी ग्राम-यात्राओंकी व्यवस्था करना कोई आसान नहीं है। यह एक नया क्षेत्र है और इसमें जनताके बीच पहलेसे बहुत ज्यादा प्रचार करनेकी जरूरत होती है। जहाँ-जहाँ भी कार्य व्यवस्थित रूपसे हुआ है वहाँ जनताने हजारोंकी संख्यामें मौजूद होनेपर भी असाधारण संयम दिखाया है। जहाँ इसके बारेमें पहलेसे शिक्षा नहीं दी गई है वहाँ 'महात्मा गांधीकी जय' के नारोंकी आवाज कभी-कभी इतनी असह्य हो जाती थी कि मुझे अपने कानोंमें अँगुलियाँ डालनी पड़ जाती थीं, और यह नारेबाजी मुझे अक्सर बहुत बेतुकी लगती है। मैं नहीं समझता कि इससे जनताके उत्साहमें कोई वृद्धि होती हो, बल्कि सच तो

यह है कि जहाँ लोगोंने चिल्लानेकी अपनी इच्छाको दबाये रखा है वहाँ जोश हर तरह ज्यादा रहा है। डा० पट्टाभिने मुझे बताया कि इस बार उनके जिलेमें जो संग्रह हुआ है वह तिलक-स्वराज्य-कोषके लिए इकट्ठा की गई मात्रासे ज्यादा है।

खादीपर बातचीत

जिन विभिन्न जिलोंमें मैंने यात्रा की है उसके हरएक केन्द्रमें मैंने कार्यकर्त्ताओंसे खादी, शराब, राष्ट्रीय शिक्षा आदिके सम्बन्धमें बातचीत की है। अन्य किसी चीजकी अपेक्षा मुझे खादीमें ज्यादा आस्था दिखाई दी है। डॉ० पट्टाभिका तो यह निश्चित मत है कि यदि खादी-कार्यको भली प्रकार व्यवस्थित कर लिया जाये तो खादीका उत्पादन काफी हदतक बढ़ाया जा सकता है। श्रीयुत सीताराम शास्त्रीका भी यही ख्याल है। लेकिन मुझे यह कहते दुःख होता है कि मैंने आन्ध्र देशमें इस प्रश्नपर वैज्ञानिक ढंगसे कोई गहरी जाँच-पड़ताल नहीं की है। और मैं आन्ध्रके ऐसे एक भी विशेषज्ञको नहीं जानता जो कि दिवंगत मगनलाल गांधी या लक्ष्मीदास या सतीशबाबू या उन लोगों जैसा हो जिनका उल्लेख मैं दूसरे प्रान्तोंके सम्बन्धमें कर सकता हूँ। कतैयोंके बीच धुनाईका काम शुरू करानेकी भी कोई कोशिश नहीं की गई है। बहुतसे अनुभवी कार्यकर्त्ताओंकी यह राय है, और मेरी भी यह राय है कि जबतक कतैये अपनी रुई स्वयं धुनना शुरू नहीं करेंगे तबतक कतैये अधिक समयतक काम नहीं कर पायेंगे और सूतकी किस्ममें भी ज्यादा उन्नति नहीं हो सकेगी।

और न ही इस बातको भली प्रकार समझा गया है कि यदि खादीका सूत उन लोगों द्वारा तैयार किया जाता है जिन्हें अपने जीविकोपार्जनके पूरक साधनके रूपमें कातनेकी जरूरत नहीं है तो उस हालतमें खादीका कोई दर्जा नहीं रहता। यदि ऐसे लोग ही न हों जिनके लिए सिर्फ चरखा ही एक सहायक धन्धा हो सकता है तो फिर दरिद्रनारायणके नामपर चन्दा इकट्ठा करना लोगोंको धोखा देना होगा। इसलिए आन्ध्र देशका एक ऐसा नक्शा होना चाहिए जिसमें उन स्थानोंका संकेत रहे जहाँ घोर गरीबी है और जहाँ कार्यकर्त्ताओं और धनकी व्यवस्था होते ही शीघ्रातिशीघ्र खादीका संदेश पहुँचाया जायेगा। इसलिए मैंने कार्यकर्त्ताओंको उनके मार्गदर्शनके लिए निम्नलिखित सुझाव दिये हैं:

१. मजदूरी अर्जित करनेके लिए कताई केवल उन्हीं गाँवोंमें शुरू की जाये जहाँ लोग कृषिसे पर्याप्त आमदनी न होनेके कारण हमेशा तंगीमें रहते हों और उनके पास खाली समय हो। इस प्रकार तैयार की गई खादीके लागत मूल्यमें ऊपरी खर्च न जोड़ कर उसे आर्थिक सहायता प्रदान की जा सकती है।

२. लेकिन लोगों द्वारा अपनी-अपनी जरूरत भरके लिए कताईका काम सारे गाँवोंमें, गरीबीका भेदभाव किये बिना शुरू किया जाना चाहिए। ऐसे मामलोंमें लोगोंको दी जानेवाली सहायताका रूप यह होना चाहिए कि उन्हें ओटाई, धुनाई या कताईकी शिक्षा दी जाये, उन्हें लागत मूल्यपर कपास और उपकरण प्रदान किये जायें तथा उनके सूतको उनके लिए साधारण दामोंपर बुनवाया जाये। इस हालतमें संगठन और व्यवस्थाका व्यय-भार तो उठाना पड़ेगा।

३. जहाँ संभव हो वहाँ यज्ञार्थ कताई करनेको प्रोत्साहन देना चाहिए। सहायता दी जा सकती है, जैसे कि नं० २ स्थितिमें, लेकिन नियमके तौरपर इस सम्बन्धमें प्रधान कार्यालयपर रुपयेका खर्च नहीं पड़ना चाहिए। त्याग-वृत्तिसे की जानेवाली कताई जब घाटेमें चलती है तो उसका सारा महत्त्व खत्म हो जाता है। इस प्रकारकी कताईमें स्वयं अपनी रुई धुननेका आग्रह होना चाहिए। मेरे विचारसे कताई-शिक्षाकी शुरुआत ओटाई और धुनाईसे करना बुद्धिमत्तापूर्ण है। वस्तुतः एक होशियार कार्यकर्त्ता इन तीनों प्रक्रियाओंकी मूल बातोंको एक दिनमें ही सीख सकता है।

पूर्वोक्त विवरणसे यह प्रकट होता है कि सम्पूर्ण आन्ध्र देशमें १२ अंकोंसे कम वाले सूतकी कताईके लिए एक समान मजदूरी निर्धारित होनी चाहिए। बढ़िया अंकोंके लिए अच्छे दाम दिये जा सकते हैं और ऐसी स्थितिमें खादीकी कीमतमें ही उसको जोड़ना चाहिए। इस सम्बन्धमें आन्ध्रमें एक छोटा-सा तकनीकी विभाग चलानेके खास उद्देश्यसे मुनागलाके राजा नयानी वेंकटरंगा राव बहादुर द्वारा हैदराबाद (दक्षिणमें) उदारतापूर्वक दिये गये १५०० रु० के दानका उल्लेख कर देना उपयोगी होगा। अब मुझे ऐसा लगने लगा है जैसे इस बातका उन्हें सहज-ज्ञान था कि आन्ध्रमें ऐसे विभागका कितना अभाव था। जब आन्ध्रमें चरखा इतना लोकप्रिय है तो कोई वजह नहीं कि यह सम्पूर्ण भारतमें अपने ढंगका सबसे बढ़िया खादी-उद्योग न चला पाये। जरूरत सिर्फ उन लोगोंकी है जिनकी चरखेमें पक्की आस्था हो और जिनमें कताई विद्यामें पारंगत होनेका दृढ़ निश्चय हो। यदि ऐसा एक तकनीकी विभाग खोलना ही है तो दो-एक होनहार नौजवानोंको प्रशिक्षण देनेकी खातिर साबरमती, सोदपुर अथवा ऐसी ही कोई दूसरी जगह भजना जरूरी है।

एक अल्पवयस्क विधवासे भेंट

जब हम बजवाड़ासे एल्लोरकी ओर जा रहे थे तो मुझे बताया गया कि एक लड़की, जो हाल ही में विधवा हुई है, मुझे अपने सारे आभूषण, जिनका मूल्य १४०० रु० है, भेंट करना चाहती है। और यह भी कहा गया कि वह मुझे गाँवमें स्थित अपने घर भी ले जाना चाहती है जो पेडापाडुसे, जहाँ कि हमें जाना था, दो मीलसे भी कम फासलेपर स्थित है। उसकी जातिके लोग परदा प्रथाके कायल थे और हाल ही में विधवा हुई लड़की खासकर सार्वजनिक सभामें तो आनेका साहस नहीं कर सकती थी। आभूषणोंका मुझे कोई मोह नहीं था। सच तो यह है कि जब मुझे सूचना देनेवालोंने यह बताया कि विधवा लड़की सम्भवतः अपने सारे बहुमूल्य जेवर देना चाहती है तो मुझे उनपर यकीन नहीं आया। लेकिन वह लड़की जवान है तथा हालमें ही विधवा हुई है, (मुझे बताया गया था कि वह कुँआरी विधवा है) यह तथ्य ही मुझे उसके घर तक ले जानेके लिए काफी था। और मुझे उसके घर जानेकी खुशी हुई। लड़कीका नाम सत्यवती देवी है। वह बीस वर्षसे कम उम्रकी है। उसका पति एक पढ़ा-लिखा राष्ट्रवादी था। वह तेलुगु अच्छी तरह जानती है। मुझे तो वह एक साहसी और दृढ़ निश्चयी लड़की दिखाई दी। उसके माता-पिता जीवित थे। जहाँतक मुझे ध्यान है, उसने मेरे हाथोंमें अपने सारे आभूषण सौंप

दिये थे। और देखनेमें उनका मूल्य पूरे १,४०० रु० तो अवश्य लग रहा था। उसने मेरे हाथोंमें एक पुर्जा भी दिया जिसमें उसने मुझसे अनुरोध किया था कि मैं उसे आश्रम ले जाऊँ। सत्यवती देवीसे मेरी भेंटके वक्त उसके माता-पिता वहाँ मौजूद थे, और वे दोनों खादी-कार्यके लिए उसके आभूषण देनपर राजी थे। मैंने उसके माता-पिताको यह बात सुझाई कि आपको अपनी लड़कीको घरमें ही बन्द नहीं रखना चाहिए और उसके साथ भी वैसा ही सलूक करना चाहिए जैसा कि परिवारकी दूसरी लड़कियोंके साथ किया जाता है। मैंने लड़कीसे कहा कि तुम्हें केवल इस कारण कि तुम एक विधवा हो, अपने आभूषण उतार फेंकनेकी जरूरत नहीं है। लेकिन वह दृढ़ रही। उसके लिए अब वे आभूषण आगे किसी कामके नहीं थे। मैंने उससे कहा कि यदि तुम्हारे माता-पिता सहमत हों तो मै तुम्हें खुशीसे आश्रम ले जाऊँगा। उसके माता-पिताने इस मामलेपर गौर करनेका वादा किया है और लड़कीको इस बातकी आशा बँधाई है कि मेरी यात्राके खत्म होनेपर उसे मेरे साथ भेज दिया जायेगा। मुझे लगा कि उसके पिताको अपनी पुत्रीके साथ ज्यादा सहानुभूति है हालाँकि इसमें कोई शक नहीं कि वे सावधान और मौन थे। मुझे इस बातका दुःख है कि मैं उस विधवाको कोई ज्यादा तसल्ली नहीं दे पाया। मुझे भारी हृदयके साथ उससे विदा लेनी पड़ी।

यही वजह है कि पेडापाडुमें दिया गया मेरा भाषण सत्यवती देवीको समर्पित था। मैंने श्रोताओंसे कह दिया था कि आपका कर्त्तव्य है कि आप पर्दा-प्रथाको तोड़ें और यदि कोई विधवा पुनर्विवाह करना चाहती है तो इस काममें उसके माता-पिताकी मदद करें। यदि १८ वर्षका नौजवान विधुर पुनर्विवाह कर सकता है तो फिर उसी उम्रकी एक विधवाको यह अधिकार क्यों न मिले? स्वेच्छया ग्रहण किया गया वैधव्य राष्ट्रकी महान सम्पत्ति होती है, लेकिन जबरदस्ती अनजानेमें थोपा गया वैधव्य एक कलंक है। श्रोताओंने यह बात आदर और बहुत ध्यानपूर्वक सुनी। सभामें विधवाके पिता भी मौजूद थे। बादमें मुझे यह भी पता चला कि आभूषणोंका त्याग विधवाका अपना मौलिक विचार है और पुनर्विवाह करनेकी उसकी कोई इच्छा नहीं है। मुझे बताया गया कि उसकी सबसे बड़ी इच्छा है कि वह अध्ययन करे ताकि अन्तमें वह राष्ट्रीय सेवामें अपना जीवन अर्पित कर सके। यदि सत्यवतीने खूब सोच-विचार कर ऐसा इरादा किया है तो उसका अभिनन्दन है। हिन्दू समाजको ऐसी विधवाओंके लिए वे जब चाहें तब पुनर्विवाह करनेका रास्ता बिलकुल खोल देना चाहिए। सत्यवतीकी घटना हजारों हिन्दू घरोंमें हर रोज घटित होती है। उन सभी विधवाओंका शाप, जो पुनर्विवाहकी इच्छासे अन्दर ही अन्दर जलती रहती हैं लेकिन क्रूर रीति-रिवाजोंके डरसे वैसा करनेकी हिम्मत नहीं कर पातीं, हिन्दू समाजपर तबतक लगता रहेगा जबतक कि वह समाज विधवाओंको अक्षम्य दासतामें जकड़े रहेगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २-५-१९२९

३०१. एक कुत्सित दोषारोप

'इंग्लिशमैन' पत्रके संवाददाताके साथ बी० आई० एस० एन० कम्पनीके एक अधिकारीकी जो बातचीत हुई थी, उसका पूरा समाचार अब मेरे सामने है। नीचे मैं उसे सारा-का-सारा उद्धृत करता हूँ:

> कल 'इंग्लिशमैन' के एक प्रतिनिधिसे बातचीत करते हुए स्टीमशिप कम्पनीके एक अधिकारीने कहा:
>
> एस० एस० 'एरोंडा' जहाजके तीसरे दर्जेमें मुसाफिरी करते वक्त श्री गांधीके साथ कोई खास रिआयत नहीं की गई थी, बल्कि उन्होंने और उनके मित्रोंने अपने लिए डेकका एक ऐसा हिस्सा चुन लिया जो सचमुच दूसरे दर्जेवालोंके लिए था। अपने साथी डेक-मुसाफिरोंसे श्री गांधी अलग रखे गये, इसकी जिम्मेदारी भी उनकी या उनके साथियोंकी व्यवस्थापर है। जहाँ गांधी-दलने डेरा डाला था, वह स्थान बादमें उन्हींके जिम्मे रहने दिया गया था। जहाजके अधिकारियोंने गांधी-दलके लिए दूसरे 'सलून डेक' का कोई खास हिस्सा अलग नहीं रख छोड़ा था, न उन्होंने उसीको काममें लानेका आग्रह ही किया था। श्री गांधीने यदि दूसरे दर्जेके पाखानेका उपयोग किया, तो यह भी नियम और आज्ञाके विरुद्ध था। श्री गांधी हकीकतन डेककी मुसाफिरी कर रहे थे, ऐसी हालतमें उन्हें अपने साथी मुसाफिरोंकी कथित कठिनाइयोंको देखने-भालनेसे कोई नहीं रोक सकता था।
>
> जिस शोरोगुलकी शिकायत की गई है, वह भी सिर्फ डेकके मुसाफिर ही कर सकते थे।
>
> यह भी कहा गया है कि मुसाफिरोंके लिए सुरक्षित जगहपर मोटर-गाड़ियाँ, मुर्गे-मुर्गियाँ और मवेशी वगैरा लाद दिये गये थे, लेकिन बात ऐसी नहीं थी। वह उतनी जगह खासकर ऐसी ही चीजोंके लिए अलग रख छोड़ी गई थी। मुसाफिरोंके उपयोगके लिए वह थी ही नहीं। जिन मोटरगाड़ियोंका जिक्र किया गया है वे भी मुसाफिरोंके सोनेकी जगहपर नहीं रखी गई थीं, बल्कि एक ऐसे डेकपर थीं, जिसका उपयोग खास मौकोंपर उन दिनों होता है जब मुसाफिर पूरी तादादमें सवार रहते हैं। श्री गांधीकी यात्राके समय तो इन मौकोंके मुकाबले बहुत थोड़े आदमी जहाजपर सवार थे।
>
> यह जो कहा गया है कि पाखाने गन्दे थे इसके बारेमें मुझे यही कहना है कि जहाजपर चार कर्मचारी सिर्फ पाखानों और डेकको साफ रखनेका काम करते रहते हैं। खुद डेकके मुसाफिर डेक और पाखानोंकी सफाईमें हमेशा

आपत्ति उठाते रहते हैं, फिर भी जहाँतक हो सकता है उन्हें साफ रखनेकी कोशिश की जाती है।

हरएक पाखानेके दरवाजेपर अपने आप बन्द होनेवाला एक ताला लगा रहता है और भीतरसे बन्द करनेके लिए साँकल भी होती है। डेकके आसपास कई जगहोंपर इस आशयकी सूचनाएँ लगी हुई हैं कि अगर मुसाफिरोंको किसी तरहका कष्ट हो तो वे उसकी शिकायत जहाजके कमांडरसे उस वक्त करें जब वह निरीक्षणके लिए चक्कर लगाने आये। इस खास मौकेपर कोई शिकायत नहीं की गई थी। जहाजके कमांडर खुद जाकर मुसाफिरोंवाले डेकका दिनमें दो बार और कभी-कभी तीन बार निरीक्षण करते रहते हैं।

इंडियन पैसेंजर ऐक्टके मुताबिक जहाजमें साधारणतः जितने मुसाफिर सवार हो सकते हैं, उतने तो मुश्किलसे कभी-कभी होते हैं, और श्री गांधीने जिस समय यात्रा की थी उस समय आती-जाती, दोनों बार जहाजपर लगभग ४०० यात्री ही थे।

अस्पतालपर कब्जा कर लिया

श्री गांधीने जिस 'ट्वीन' या निचले डेकका 'काल कोठरी' कहकर उल्लेख किया है, उसे तो कम्पनी हमेशा डेक-मुसाफिरोंके लिए खुला रखती है। यह वह अतिरिक्त स्थान है जो कानूनन ठहराई गई पूरी तादादमें मुसाफिरोंके सवार हो जानेपर भी बच रहता है। इस डेककी निचली खिड़कियाँ हमेशा पूरी-पूरी खुली रहती हैं, जिससे ताजी हवा खूब आ-जा सकती है।

मुख्य डेकके जिस अगले भागको उन्होंने मवेशी-बाड़ा कहा है वह मुसाफिरोंके लिए था ही नहीं, फिर भी यह स्पष्ट है कि उन्होंने खुद ही उसका उपयोग किया। छायादार डेककी पिछली बाजूमें जिस पिंजरेका होना बताया गया है और जिसमें भेड़, बकरी, बत्तख और मुर्गे-मुर्गी वगैरा (यद्यपि बकरे कभी होते ही नहीं) रखनेकी बात कही गई है, वह जहाजवालोंके जानवरोंका स्थान है।

जहाजमें मुसाफिरोंके लिए अस्पतालका इन्तजाम है, लेकिन रंगूनसे लौटते वक्त श्री गांधी और उनके साथियोंने, जहाजके अधिकारियोंकी अनुमतिके बिना ही उसी भागपर अपना कब्जा जमा लिया।

बरसातके दिनोंकी जिन कठिनाइयोंका श्री गांधीने जिक्र किया है, उनके बारेमें यही कहना है कि डेक-मुसाफिरोंके गीले होनेकी कोई सम्भावना ही नहीं है, बशर्ते कि वे अपनी खुशीसे व्यायामवाले डेकपर सोना पसन्द न करें। वजह यह है कि मुसाफिरोंके बैठनेकी सारी जगहें छायादार हैं।

'फ्री प्रेस' में प्रकाशित इस सारांशके मुकाबले भेंटकी मूल रिपोर्ट कहीं ज्यादा कुत्सित है। मुझे, कमनसीबीसे ही क्यों न हो, कई बार झूठी बातोंका पर्दाफाश करना पड़ा है, लेकिन मुझे याद नहीं पड़ता कि कभी मैंने किसी समाचारपत्रके

एक ही स्तम्भमें इतनी सारी झूठी बातोंको, जितनी कि इस बातचीतके विवरणमें है, एक साथ पढ़ा हो। होशियार पाठक तो जरूर ही इस बातचीतकी झुठाईको ताड़ जायेंगे, बशर्ते कि वे मुझे झूठी खबरें गढ़नेमे सिद्धहस्त और आत्म-सम्मान हीन व्यक्ति न समझते हों। क्या ही अच्छा होता अगर यह बात सच होती कि कलकत्तासे रंगून जाते वक्त डेकका मुसाफिर होते हुए भी मुझे खास सुविधाएँ नही दी गई थीं। खुद मेरे एक साथी टिकट खरीदने गये थे, क्योंकि डेकके मुसाफिरोंके टिकटपर नाम नहीं लिखे जाते, लेकिन मेरा टिकट एक खास 'कूपन' था जिसपर मेरा नाम भी लिखा हुआ था। जब मैं जहाजपर सवार हुआ तो कम्पनीके आदमी मुझे एक ऐसे स्थानमें ले गये जो बकौल उनके मेरे लिए 'सुरक्षित' रखा गया था। मैं धन्यवाद देकर वहाँ बैठ गया, फिर भी मेरी बिलकुल इच्छा न थी कि मै दूसरे दर्जेकी सहूलियतोंसे लाभ उठाऊँ। अतः मैं डेकके एक पाखानेका उपयोग करने गया। जहाजके कर्मचारियोंने मुझे देखा। उसी समय एक आदमी मेरे पास आया और कहने लगा कि उच्च अधिकारीकी इच्छा है कि आप (मैं) डेकके पाखानोंका उपयोग न करके दूसरे दर्जेवाला पाखाना काममें लायेंगे तो अच्छा होगा। मैंने सन्देशवाहकसे कहा कि मैं डेकपर मुसाफिरी करनेका निश्चय कर चुका हूँ, अतएव डेकके पाखानोंसे काम ले सकूँगा; इनसे मुझे कोई कष्ट न होगा। इसपर उन सन्देशवाहक कर्मचारीके और मेरे बीच थोड़ा वाद-विवाद हो गया, अतः अधिक खुचड़पेची प्रतीत न होने देनेकी गरजसे मैंने अधिकारियोंके इस सौजन्यसे लाभ उठा लेना ठीक समझा। यह मुमकिन नहीं है कि जिस कम्पनीके अधिकारी प्रेस-संवाददातासे बातचीत करते हुए इतने कुत्सित और बेपरवाह हो सकते हैं, जितने कि प्रस्तुत अधिकारी साफ दीख रहे हैं, वह मझे या मेरे साथियोंको मनचाही, लेकिन अनधिकृत जगहपर बैठ जाने देती, या हमारे बैठ जानेपर थोड़ा भी एतराज न करती और हमें स्वान्तः सुखाय उस स्थानका उपयोग करने देती जिसके हम अधिकारी नहीं थे।

अगर मुर्गा-मुर्गी, मवेशी और मोटरगाड़ियोंके लिए सुरक्षित स्थान वास्तवमें उन्हींके लिए था, अगर सचमुच उसका डेकके मुसाफिरोंसे कोई ताल्लुक नहीं था तो कहना पड़ता है कि मनुष्य-यात्रियोंके बनिस्बत पशु-यात्रियोंके लिए सुरक्षित स्थान बहतर था। वजह यह थी कि 'पशु यात्रियों' का यह स्थान निहायत उम्दा और खूब हवादार था। अगर हो सकता तो अवश्य ही बड़ी खुशीके साथ मैं उस जगह पर बैठना पसन्द करता जहाँ मोटरें रखी हुई थीं। इन मोटरोंने फर्श तो घेर ही रखा था, इनकी वजहसे हवाका मार्ग भी अवरुद्ध हो गया था। और यह कहना कि कम्पनीके अधिकारियोंने बिना किसी रुकावटके डेक-मुसाफिरोंको उस जगहपर बैठने दिया, जो वास्तवमें उनके लिए नहीं थी, सरासर अविश्वसनीय है। मैंने अपनी आँखों कम्पनीके अधिकारियोंको किसी मुसाफिरके गलत जगहपर बैठ जानपर उसे ठोकरें मारकर उठाते देखा है।

शेष भेंटकी खबरके बारेमें मैंने पिछले सप्ताह लिखा था।[1]

१. देखिए "बी० आई० एस० एन० कम्पनी द्वारा प्रतिवाद", २५-४-१९२९।

मुझे दुःख है कि मेरे लेखका जो कि उक्त भेंटका विषय है, बिलकुल उलटा असर हुआ। होना तो यह चाहिए था कि कम्पनी मेरी बातोंकी शान्तिपूर्वक जाँच कराती और डेकके मुसाफिरोंकी दिक्कतोंको कम करने का इन्तजाम करती, लेकिन उसने किया कुछ और ही। सरकारी आश्रय और धनके मदसे मत्त होकर उसने अपनी उद्दाम सत्ताका नग्न प्रदर्शन किया है। मैं कम्पनीको चुनौती देकर कहता हूँ कि वह इस मामलेकी गहरी छानबीन करवाये और उक्त अधिकारीने जिस लापरवाहीके साथ कुत्सित दोषारोपण किये हैं उन्हें वापस ले, और साथ ही डेक-मुसाफिरोंके साथ जो अन्याय हो रहा है उसे बन्द करके उनके साथ इंसाफ करे।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २-५-१९२९

३०२. दक्षिण आफ्रिकासे लौटाये गये भारतीय

दक्षिण आफ्रिकी भारतीय कांग्रेसके मन्त्रियोंने मेरे पास निम्नलिखित पत्र भेजा है:[1]

> **कहा गया था कि भारत सरकारने स्वदेश लौटनेपर विवश किये गये इन भारतीयोंकी सहायताके लिए कोई कार्रवाई नहीं की, कि वे बुरे फँस गये हैं और उनको कोई काम नहीं मिलता, कि भारतकी वर्तमान परिस्थितियाँ उनको अनुकूल नहीं पड़ रही हैं, कि भारतीयोंके पत्रोंसे इस प्रकारके विवरण मिले हैं कि जीविका और सरकारी सहायताके अभावमें या तो वे भूखों मर रहे हैं या अत्यधिक कष्ट पा रहे हैं और इसीके फलस्वरूप प्रतिकूल परिस्थितियोंसे त्रस्त होकर उनमेंसे अनेक फिजी या मलाया चले गये हैं।**
>
> **केपटाउन-समझौतेमें सम्बन्धित योजनाके सिलसिलेमें भारत सरकारने एक यह शर्त स्वीकार कर ली थी कि इन प्रवासियोंके भारत पहुँचनेपर उनको उनकी रुचि, क्षमता या संसाधनोंके अनुरूप सर्वाधिक उपयुक्त धन्धोंमें प्रतिष्ठित करानेमें उनकी भरसक मदद की जायेगी।**
>
> **लौटे हुए उन भारतीयोंसे प्राप्त विवरणको देखकर ऐसा सन्देह मनमें उठता है कि क्या भारत सरकार इन लोगोंकी सहायताके लिए कुछ कर भी रही है?**
>
> **कांग्रेस आपकी अत्यन्त आभारी होगी यदि आप इस विषयमें कोई जानकारी हमें दें जिससे कि अधिकारियोंके सामने कांग्रेस अपनी पूरी-पूरी बात रख सके।**

१. यहाँ कुछ अंश ही दिये गये हैं।

मैं इस समय इसपर कोई टीका नहीं करूँगा। लेकिन मैं इस बातका इन्तजार करूँगा कि अधिकारी इस सम्बन्धमें कोई बयान जारी करें। निःसन्देह, यदि इन प्रवासियोंको भारत आनेकी दावत दी जाती है तो विशेष रूपसे उनकी देखभाल करना जरूरी हो जाता है। उनमेंसे अधिकांशके लिए तो भारत विदेश जैसा बन गया है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २-५-१९२९

३०३. तार: छगनलाल जोशीको

तुनी
२ मई, १९२९

छगनलाल जोशी
उद्योग मन्दिर
साबरमती

यदि गोशालावाले कान्तिको छोड़ सकें तो वह राजकोट जा सकता है।

बापू

अंग्रेजी (एस० एन० १५३९२) की माइक्रोफिल्मसे।

३०४. पत्र: मीराबहनको

तुनी
२ मई, १९२९

चि० मीरा,

इच्छा होते हुए भी मैं तुम्हें इन दिनों पत्र नहीं लिख सका हूँ। मेरे पास जो समय बचता है, उसे मैं बाकी बचे हुए कामको निपटानेमें लगाता हूँ।

साथमें रोलाँके नाम मेरा पत्र है।[1] इसे अनुवाद करके भेज देना। हाँ, तुम चाहो कि मूलमें मुझे सुधार करना चाहिए तो दूसरी बात है।

आशा है अब तुम्हें मेरा विस्तृत कार्यक्रम मिल गया होगा और तुम्हें ठीक-ठीक मालूम रहेगा कि इस महीनेकी २८ तारीख तक मैं किस दिन कहाँ रहूँगा। मुझे मुजफ्फरपुरसे तुम्हारी तरफसे कुछ-न-कुछ समाचार मिलनेकी उत्सुकतापूर्ण प्रतीक्षा रहेगी।

१ देखिए अगला शीर्षक।

मैं यह इत्मीनान कर लेना चाहता हूँ कि तुम अपनी शक्ति पुनः प्राप्त करनेके रास्तेपर निश्चित रूपमें लग गई हो।

सप्रेम,

बापू

संलग्न–१

श्रीमती मीराबहन
मारफत खादी भण्डार
मुंजफ्फरपुर

अंग्रेजी (जी० एन० ९४२५)से; तथा सी० डब्ल्यू० ५३६९से भी।
सौजन्य : मीराबहन

३०५. पत्र : रोमाँ रोलाँको

स्थायी पता :
आश्रम
साबरमती
२ मई, १९२९

प्रिय मित्र

आपके दिनांक १७ फरवरी, १९२९ के स्नेहसिक्त, मर्मस्पर्शी पत्रका मीरा द्वारा किया गया अनुवाद मेरे सामने है। आपकी अनुमति मिल ही जायेगी, यह सोचकर मैंने आपका नाम दिये बिना काफी होशियारीसे इस पत्रकी कुछ पंक्तियोंको इस्तेमाल भी कर लिया है।

मुझे यह जानकर बड़ी खुशी हुई कि मेरी तरह आपका भी यही विचार है कि मुझे इस वर्ष यूरोप नहीं जाना चाहिए।

प्रश्न है कि भारतकी आवाजपर यूरोप कान देगा या नहीं? इस सम्बन्धमें मेरी राय है कि यूरोपको या पाश्चात्य जगतको अपनी बात सुननेपर विवश करने योग्य बननेके लिए भारतको अभी इससे कहीं अधिक और कहीं बड़े पैमानेपर कष्ट-सहन करना चाहिए, अभीतक वह जितना कर चुका है उससे कहीं अधिक। अन्यथा इस समय तो भारतकी आवाज नक्कारखानेमें तूतीकी आवाजकी तरह डूब कर रह जायेगी। और यदि भारत अपना प्रतिनिधित्व नहीं करेगा, या अपनी आवाज वहाँ नहीं पहुँचायेगा, तो मेरा खयाल है कि पहलेसे ही पूर्वग्रह-ग्रस्त और कभी-कभी भ्रष्ट यूरोपीय पत्रकार ब्रिटिश सरकार द्वारा फैलाये गये एकतर्फा और निरे मिथ्या प्रचार तथा उसकी हर अतिरंजनाको सर्वथा प्रामाणिक माननेमें अधिक संकोच नहीं करेंगे।

मुझे यह भी लगता है कि हमारा यह अहिंसात्मक संघर्ष प्रचारका उतना मुहताज नहीं जितना कि हिंसात्मक संघर्ष होता है। तीसरी चीज यह कि, जैसा आपने कहा है, ऐसा एक व्यक्ति मिलना भी तो मुश्किल है जो हर परिस्थितिमें लोगोंको

अपनी बात बरबस सुना सके। मुझे तो ऐसा व्यक्ति एन्ड्रयूज ही दिखता है, क्योंकि कविकी सेवा सुलभ नहीं है। हाँ, एन्ड्रयूज सभी महत्त्वपूर्ण हलकोंमें अपनी आवाज पहुँचा सकते हैं।

आशा है आप स्वस्थ होंगे और ईश्वर आपको भारतके संघर्षकी समाप्तिका दिन देखनेतक जीवित रखेगा।

हृदयसे आपका
मो० क० गांधी

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९७६६)की प्रतिसे।

३०६. पत्र: गंगाबहन झवेरीको

२ मई, १९२९

चि० गंगाबहन,

तुमने एक ठीक उत्तरदायित्व अपने सिर लिया है। यदि स्त्री-निवास किसी भी प्रकार चलता रहे तो उससे मैं बहुत बड़े परिणामकी कल्पना कर सकता हूँ। स्त्रियोंको किसी-न-किसी दिन तो एक साथ रहते हुए एक दूसरेसे निभाना सीखना ही है। मैंने ईसाई महिलाओंको इस प्रकार रहते हुए देखा है। इस प्रकार मिलजुल कर रहना हमेशा सभ्यताकी निशानी मानी गई है। अब तुमने इसे हाथमें लिया है, इसलिए उसमें जुटे रहनेकी सलाह देता हूँ। यशोदा देवीका क्या हाल है? सरोजिनी देवी किस तरह बरत रही हैं?

नारणदासके जानेकी सम्भावना ज्यादा है। फिर उसके जानेसे तुम्हारे [पढ़ने-लिखनेके] काममें भी बाधा पड़ेगी, मुझे इसका दुःख है। मेरे साथ रहनेवालेको यह कठिनाई तो झेलनी पड़ेगी। क्योंकि किताबी ज्ञानका स्थान चरित्रके बाद है; उससे पहले नहीं; ऐसी मान्यता आश्रममें है। इसीलिए, चरित्रकी वेदीपर कई बार पढ़ने-लिखनेका बलिदान करना पड़ा है। नारणदास चला जाये, दूसरा कोई मदद न करे तो भी तुम अध्ययन न छोड़ना। जो व्यक्ति खुद जितना कुछ कर सके उतना करे।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३०९५) की फोटो-नकलसे।

३०७. पत्र : छगनलाल जोशीको

२ मई, १९२९

चि० छगनलाल,

तुम्हारे २६ और २७ तारीखके दोनों पत्र एक-साथ मिले। चि० रतिलालके बेटेके आपरेशन पर खर्च हुआ; कोई बात नहीं। ऐसे मामलोंमें वह धनी बापका बेटा है, यह बात वह एकाएक भूल नहीं सकता। चम्पा उसे भूलने भी न देगी। धीरे-धीरे जितनी सादगी सिखा सको उतनी सिखाना। वह नवयुवक बहुत सरल हृदय है। उसे अपने पास बैठा कर ठीक ही किया है। कुछ लिखे, कुछ पढ़े, कुछ कताई करे तो बहुत अच्छा होगा। इस आपरेशनके बारेमें डॉक्टर मेहताको सीधा पत्र लिखना। उसमें कितना खर्च हुआ है यह भी लिखना।

मैं चि० नारणदास या रमणीकलालपर दबाव नहीं डालना चाहता। तुम, बहनें, सुरेन्द्र वगैरह उन्हें समझा कर रोक लो तो दूसरी बात है। आखिर काम तो तुम्हें ही लेना है। यदि उन्हें न रोका जा सके तो मैं उसमें तुम्हारा तनिक भी दोष नहीं मानूँगा। मेरे आनेतक रुकें तो अच्छा है। मेरे विचारसे छगनलालके पास दस हजार रुपये इस प्रकार इकट्ठे हुए: गहने बेचकर, फीनिक्समें बचे, ब्याजसे बढ़े रुपये तथा डा० मेहताने जो रुपये दिये थे उसमेंसे बचे हुए। डा० मेहताने जो रुपये दिये थे वे तो एक विशेष काम अर्थात् विलायतके खर्चके लिए थे। उसमेंसे कुछ बचा था तो उन्हें लौटा देना चाहिए था। ऐसा करनेके बदले छगनलालने उसे अपने पास रख लिया तो यह चोरी ही मानी जायेगी। उसने भी उसे चोरी ही माना है। जब उसने पैसा दिया तब उसने ऐसा ही कुछ कहा था। किन्तु मुझे किसी भी तरहका शक न था इसलिए मैंने कुछ नहीं कहा। किन्तु चोरीकी बात मालूम पड़नेपर मुझे समझमें आया और छगनलालने भी अधिक स्पष्ट रीतिसे बताया। यह पैसा कितना था यह मैं नहीं जानता। चाहे जितना भी हो, जिसमें चोरीका धन शामिल है, उसका उपयोग नहीं किया जा सकता।

रमणीकलालको मेरी यही सलाह है कि वह जबलपुर चला जाये। किन्तु किशोरलाल जानेको तैयार हो तो ठीक ही है। पीछे किसीको बुलाना हो तो बुला ले। हाँ, यदि कामका क्षेत्र हो तो।

विधवा सत्यवतीका किस्सा 'यंग इंडिया' में देखना।[1] यह 'नवजीवन' में भी छपना चाहिए। यदि वह आना चाहे तो उसे लिये बिना छुटकारा नहीं होगा। उसके आनेकी सम्भावना कम ही है।

महादेवको फुरसत हो तो बहनोंको पढ़ाये। मगनलाल[2] और सोमणको[3] बुलानेका विचार न करना। काकाके पाससे अभी किसीको नहीं ले सकते। मन्दिरकी पद्धति

१. देखिए "आन्ध्र देशमें [-३]", २-५-१९२९ का उप-शीर्षक "एक अल्पवयस्क विधवासे भेंट"।

२. मगनभाई देसाई।

३. रामचन्द्र सोमण।

दूसरी तरहकी है। किताबी ज्ञान होना ठीक है; किन्तु वह गौण है। मन्दिरका मूल्यांकन किताबी ज्ञानसे नहीं होना है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

इसके साथका पत्र पूरा करनेपर दूसरी डाक भी यहाँ मिली। कान्तिके विषयमें आज तार देनेका विचार किया है जिससे तुम्हें कठिनाई न हो। यदि उसे दुग्धालयके काममें कुछ हानि हुए बिना छुट्टी दी जा सके तो वह चाहे तो हो आये। मालूम होता है कि हरिलाल उसे कैमरा देना चाहता है। यदि दे तो उसकी मनाही कर देनेकी इच्छा नहीं होती। फिर तुम्हें जो ठीक लगे, उसे वही सलाह देना।

पन्नालालको जमीन देना तो मुझे अच्छा लगा है। इसके प्रस्तावके विषयमें मुझे पूछनेकी जरूरत नहीं है। इसके अलावा काका हैं; इसलिए और क्या चाहिए? किन्तु गोसेवा समितिकी सहमति काफी नहीं है। इस बातकी योग्यताका विचार यह समिति कर तो सकती है; किन्तु किरायेपर देनेका हक कार्यवाहक समितिका है। इसलिए नियमपूर्वक काम करनेके लिए उसकी अनुमति चाहिए। मैं तो यह चाहता हूँ कि पन्नालाल नया घर भी न बनाये। जोशीवाला मकान किरायेपर ले; क्या ऐसा ही निश्चित भी किया गया है?

मैत्रेयी चली गई यह ठीक ही हुआ। क्या दुर्गा और महावीर काम करते हैं?

जयन्तीको बुखार क्यों हो गया? और बाल[1] को भी क्यों आया?

तुम मन्दिरकी शाला जिस तरह चला रहे हो वह तो बढ़िया है ही। यही हमारा आदर्श है।

जिसे तुम 'संकट-काल' मान रहे हो मैं उसके बारेमें प्रसन्न हूँ। जो-कुछ हो रहा है उसमें मैं यहाँ बैठा-बैठा रस ले रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५४०८ तथा ५४९३) की फोटो-नकलसे।

३०८. भाषण: तुनीकी सार्वजनिक सभामें

२ मई, १९२९

तुनीके यूनियन बोर्ड और यहाँके लोगोंने मुझे जो अभिनन्दनपत्र भेंट किये हैं तथा खादी कोषके लिए जो थैलियाँ दी हैं उनके लिए मैं आप सबको धन्यवाद देता हूँ। इससे जाहिर होता है कि आप लोगोंने राष्ट्रकी आवश्यकताको समझ लिया है। आपके अभिनन्दनपत्रमें खादीके बारेमें बहुत-कुछ कहा गया है। खद्दरके बारेमें विचार प्रकट करनेके आप बेशक काबिल हैं क्योंकि मुझे मालूम है कि आपका यह शहर एक खादी उत्पादन-केन्द्र है और यहाँके बहुतसे व्यापारी खादीके व्यापारमें लगे हुए हैं। इसीलिए यदि आपमेंसे कोई एक व्यक्ति भी विदेशी कपड़ा पहने तो

१. काका कालेलकरका पुत्र।

यह आपके शहरके लिए और ज्यादा शर्मकी बात है। जब आप यहाँ सूत कातने और अपना कपड़ा स्वयं बुननेमें समर्थ हैं तब फिर आप विदेशसे मँगाया हुआ कपड़ा क्यों पहनें? क्या यह आपके पुरुषत्वका अपमान नहीं है? मैं चाहता हूँ कि आप इस शर्मको मिटा दें और इस बातका ध्यान रखें कि विदेशी वस्त्रका एक टुकड़ा भी आजके बाद यहाँ न आने पाये। इसके लिए यह जरूरी है कि आपका बोर्ड लोगोंमें केवल खद्दर ही पहनने तथा यहाँका काता और बुना कपड़ा खरीदनेके सम्बन्धमें प्रचार करे। आपको यह भी चाहिए कि आप विदेशी वस्त्रोंके व्यापारियोंके पास जायें और शान्तिपूर्वक उनके बीच प्रचार-कार्य करें तथा शान्तिपूर्ण उपायों द्वारा उन्हें अपनी ओर खींचें। आप उनको यह भी बता दीजिए कि जिस हदतक वे विदेशी वस्त्र खरीदते हैं उस हदतक वे अपने ही भाई-बहनोंको भूखा मारते हैं और देशको कंगाल करते हैं।

मुझे आशा है कि वे आपकी बात मान लेंगे। मैंने तो यह भी सुना है कि कुछ लोग मिलके सूतसे बुने कपड़ेको खद्दर कहकर बेच रहे हैं। उनका ऐसा करना उचित नहीं है। आपके सीधे-सादे भाइयों और सेवानिष्ठ बहनों द्वारा चरखेपर काता हुआ सूत तथा इसके बाद आपके बुनकर भाइयों द्वारा हाथ-करघेपर बुना गया कपड़ा ही खद्दर कहलाता है। किसी दूसरे तरीकेसे तैयार की गई अन्य कोई चीज खद्दर नहीं कहला सकती और इस प्रकारकी किसी दूसरी प्रक्रिया अथवा साधनको अपनाना पापमय है। पण्डित मोतीलाल नेहरूने विधान सभामें इस आशयका विधेयक पेश किया था कि यदि कोई व्यक्ति नकली खादीका उत्पादन करके या उसे बेचकर जनताको धोखा देता है तो वह दण्डका भागी होना चाहिए। मैं समझता हूँ कि अगर देशके लोगोंमें सच्चा और वास्तविक अनुशासन हो तथा धर्ममें निष्ठा हो तो यह विधेयक बेकार और अनावश्यक है। इसलिए मैं यह प्रार्थना करता हूँ कि धोखेका व्यापार करके इस सम्बन्धमें जो कोई भी पाप करता है वह आजके बाद ऐसा नहीं करेगा। मैं उन लोगोंसे जो इस शहरमें विदेशी कपड़ा पहनते हैं— ऐसे शहरमें जहाँ उनके अपने भाई और बहन उनकी जरूरतका कपड़ा देनेको तैयार हों— यह प्रार्थना करता हूँ कि वे अपना सारा विदेशी वस्त्र त्याग कर उसकी होली जला दें। मेरी यह भी प्रार्थना है कि जो लोग ताड़ी, ब्रान्डी और दूसरे मादक-पेय पीनेके आदी हैं वे भी अपनी इस आदतको छोड़ दें। आप इस बातका भी ध्यान रखें कि कोई भी व्यक्ति अस्पृश्य न रहे। स्वतन्त्रताके सामान्य लक्ष्यके लिए हिन्दू, मुसलमान तथा दूसरे सम्प्रदायोंके लोगोंको एक हो जाना चाहिए। सारे साम्प्रदायिक झगड़ोंका निपटारा आपको आपसमें ही कर लेना चाहिए और संघ-भाव बनाये रखना चाहिए। यदि हमने ये सब चीजें कर लीं तो स्वराज्य हमारी मुट्ठीमें होगा।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ४-५-१९२९

३०९. पत्र : रमणीकलाल मोदीको

[३ मई, १९२९ से पूर्व][1]

चि० रमणीकलाल,

इस समय सबेरेके ५-३० बजे हैं। पहले तुम्हारा पत्र लिया है। तुम्हें भेजनेके लिए तार[2] लिखकर भेज भी दिया है। तुम उद्योग मन्दिर या आश्रमसे बेशक मुक्त हो जाओ। इस समय इसीमें तुम्हारी भलाई है, ऐसा मैं मानता हूँ। तुम्हारा हृदय अत्यन्त सरल है; किन्तु तुम्हारी बुद्धि कच्ची है। तुम धर्माधर्मका निर्णय स्वयं नहीं कर पाते और किसी बातके बारेमें तुम तर्कपूर्ण विचार भी नहीं कर पाते। इसलिए कई बार भटक जाते हो और बादमें घबराते हो। ऐसी स्थितिमें मैं मानता हूँ कि तुम्हारा अलग रहकर कुछ अनुभव प्राप्त करना ही अच्छा है। तुम्हारा हृदय साफ है, इसलिए जहाँ रहोगे शोभा पाओगे।

मेरी सलाह तो यह है कि जिस प्रकार पन्नालाल आश्रमके पास अलग घर लेकर रहेगा और जिस प्रकार बुधाभाई रहते ही हैं उसी तरह तुम भी आश्रममें एक मकान किरायेपर लेकर अपना स्वतन्त्र जीवन व्यतीत करो। तुम्हें आश्रमके बाह्य नियमोंके पालनके बन्धनसे मुक्त होना है। अपनी इच्छासे प्रार्थनामें आओ, यह अलग बात है। तुम्हारी वेतन लेनेकी इच्छा हो या उसकी आवश्यकता हो तो वेतन भी लो। इस समय तुम तुरन्त जबलपुरके आसपास जो अकाल फैला है, उसके कारण वहाँ खादी-कार्यका क्षेत्र कैसा है, इसकी खोजबीन करने निकल पड़ो। इसमें एकाध महीना लग जायेगा। उस प्रदेशकी आबोहवा अच्छी मानी जाती है। यह काम पूरा होनेपर क्या करना है, यह देख लेंगे। तुम्हारे लिए काम तो बहुतसे तैयार रखे हैं। मुझे लगता है कि ताराका आश्रमसे सम्बन्धित रहना जरूरी है। स्त्रियोंके लिए जो-कुछ वहाँ है वह और कहीं नहीं है। तारा स्वतन्त्रतापूर्वक रहे और आश्रमसे वह जो ले सके ले, जो दे सके वह दे। इस संसारमें बिना दिये कोई ले नहीं सकता। कोई स्वेच्छासे देते हैं, कोई जबरदस्ती, कोई समझबूझ कर देते हैं, कोई अनजाने।

इस सबको तो मेरी सलाह-भर ही मानना। यदि मनकी शान्तिके लिए तुम्हारा इस समय इस वातावरणसे बाहर रहना जरूरी हो, तो जरूर वैसा करो।

अब तुम्हारे पत्रमें जो स्पष्ट विचारदोष हैं, उनके बारेमें लिखता हूँ।

ये तुम्हारे वाक्य हैं: "मसालेवाला भोजन खाऊँ तो अस्वाद व्रतके भंगका दोष मेरे सिर आता है, ऐसा मुझे नहीं लगता। 'गीता' जबानी याद न हो तो आश्रमका नियम तोड़ता हूँ और इससे मेरी उन्नति बाधामें पड़ती है, ऐसा मुझे नहीं लगता।" स्वतन्त्र रूपसे देखें तो ये वाक्य ठीक हैं; किन्तु वस्तुस्थितिके वर्णनके रूपमें ये

१. साधन-सूत्रके अनुसार पत्र ३ मई, १९२९ को आश्रममें प्राप्त हुआ था।

२. उपलब्ध नहीं है।

गलत हैं। हमारी नियमावलीमें मसालोंको अस्वाद व्रतका विरोधी माना गया है, इस-लिए उन्हें खाना दोष है। सम्भव है, वास्तवमें इसमें कोई दोष न हो। यदि दोष नहीं है, तो यह नियम रद्द कर देना चाहिए। किन्तु जबतक यह नियम बरकरार है तबतक उसका पालन करना हमारा कर्त्तव्य है। पाँच वस्तुएँ मात्र खानेके साथ अस्वाद व्रतका भले ही कुछ सम्बन्ध न हो; किन्तु मैंने यह व्रत लिया है। इसके पालनमें कोई अनीति नहीं है, इसलिए इसका पालन मेरा कर्त्तव्य ही बन जाता है। गीता-पाठके सम्बन्धमें भी यही बात लागू है। वह हमारे नियमोंमें नहीं है; पर उसकी योग्यताको हमने स्वीकार किया है। हम उसे बालकोंको कण्ठस्थ कराते हैं और उसे अपना आध्यात्मिक कोष कहते हैं। इसलिए मैंने ऐसा माना है कि मेरी इस मान्यतासे तुम सब भी सहमत हो। यदि इसके बाद हम उसके लिए प्रयत्न न करें तो हमारे सत्यके व्रतपर कलंक लगता है। तुम सब अवकाशके अभावमें 'गीता' कण्ठस्थ न कर सको यह बात समझमें आती है; किन्तु हमेशा गीता-पाठकी स्तुति करते रहकर भी तुम उसके लिए समय न निकालो तो क्या तुम सत्यका भंग नहीं करते?

किन्तु इस समय तो इससे अधिक नहीं लिखूँगा। सामान्य रीतिसे विचार करने-वाला आदमी थककर उधेड़बुनमें पड़ जाता है। इसी कारण सत्यकी आराधना करने-वाला बहुत विचार करनेके फेरमें नहीं पड़ता और कुछ बातोंको प्राणपणसे अपनाये रहता है और अन्तमें वह उन्हींमें से पूर्ण सत्यकी खोज कर लेता है। अमुक बात ठीक है या गलत, नित्य ऐसी शंका करनेके बदले वह जो-कुछ स्वीकार कर लेता है, नम्रतापूर्वक उसीमें निमग्न रहता है। "सर्वारम्भा हि दोषेण धूमेनाग्निरिवावृताः।" हमारा हर विचार, हर काम ही जब अपूर्ण है तो वहाँ भूलें होनेका अवकाश तो है ही, ऐसी अवस्थामें क्या करें? जबतक वे सम्पूर्ण न हो जायें तबतक यदि हम उन्हें करें ही नहीं अथवा उनके विषयमें शंकित बने रहें तो कोई भी काम कभी सम्पन्न नहीं हो सकता?

तुम दोनोंका भला हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ४१४४)की फोटो-नकलसे।

३१०. भाषण : सार्वजनिक सभा, पीठापुरममें

३ मई, १९२९

गांधीजीने कहा कि मुझे जो अभिनन्दनपत्र दिये गये हैं उनके अनुवाद सुपाठ्य नहीं हैं और उनमें विस्तार कुछ ज्यादा है। हिन्दी भाषा इतनी असमर्थ नहीं है। यदि अनुवादक भाई मुझसे कोकोनाडामें मिलनेका कष्ट करें तो मैं उन्हें उनकी गलतियाँ बताऊँगा और उनमें सुधार करवाऊँगा। तो भी मैं उनका आशय समझ गया हूँ। उनमें कहा गया है कि खादीका उत्पादन वहाँ अच्छी तरह चल रहा है। मैं इस समाचारका स्वागत करता हूँ किन्तु मुझे इससे पूरा सन्तोष नहीं होता। हमारा लक्ष्य यह होना चाहिए कि कोई एक भी आदमी ऐसा न हो जो विदेशी कपड़ा पहनता हो। हमें तबतक चैन नहीं लेना चाहिए जबतक कि हरएक आदमी विदेशी वस्त्रोंका व्यवहार करना बन्द न कर दे और केवल खद्दरका ही उपयोग न करने लगे। मैं देख रहा हूँ कि इस सभामें भी कुछ बालक और कुछ वयस्क व्यक्ति ऐसे हैं जो विदेशी कपड़ा पहने हैं। यदि खादीका उत्पादन यहाँ अच्छी तरह हो रहा है तो फिर यहाँ विदेशी कपड़ा पहननेवाले कुछ लोग भी क्यों होने चाहिए? क्या वे हमारे देशमें स्वतंत्रताका जो उदय हो रहा है उसे स्वीकार करनेसे इनकार करते हैं? मैं आशा करता हूँ कि आप सब लोग केवल खादी ही पहननेकी प्रतिज्ञा करेंगे और इस प्रतिज्ञाका पालन करेंगे। यदि ऐसा हुआ तो हमारी जनताको ज्यादा अन्न मिलेगा, हमारे देशसे पैसा बाहर जानेसे रुकेगा, लोगोंमें अपनी आवश्यकताका सूत कातने-बुनने और अपने काते हुए सूतका कपड़ा पहननेकी शक्ति बढ़ेगी और यह देश तथा उसकी संतान ज्यादा स्वतन्त्रताका उपभोग करेगी।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ४-५-१९२९

३११. पत्र : कुसुम देसाईको

कोकोनाडा
३ मई, १९२९

चि० कुसुम,

तेरा पत्र मिल गया है। अब जड़ावबहन स्वस्थ हो गई होंगी। अभीतक तो सफरका कोई बुरा असर दिखाई नहीं पड़ा। और अब तो 'बहुत गई थोड़ी रही।' अन्य समाचार प्रभावतीके पत्रसे जान लेना।

बापूके आशीर्वाद

चि० कुसुमबहन
उद्योग मन्दिर
साबरमती

गुजराती (जी० एन० १७८९)की फोटो-नकलसे।

३१२. पत्र : मीराबहनको

४ मई, १९२९

चि० मीरा,

तुम्हारा कोई पत्र मिले आज चार दिन हो गये हैं। इस छोटे-से गाँवमें, जहाँसे मैं यह पत्र लिख रहा हूँ, आज मुझे कुछ पानेकी आशा भी नहीं है। अबकी बार की यात्रा अत्यन्त रोचक है। उड़ीसाके गाँव और तमिलनाड तो कुछ भी नहीं थे। यहाँ तो भीतरी प्रदेशका दौरा ही करना है। यदि मुझे खाली समय मिलता तो मैं कुछ सीख सकता था। लेकिन मुझे तो जो-कुछ भी सामने आये उसे ही ग्रहण करके सन्तुष्ट होना होगा। स्वास्थ्य अब भी बहुत अच्छा है।

सस्नेह,

बापू

श्रीमती मीराबाई
मार्फत बाबू राजेन्द्रप्रसाद
डाकखाना जीरादेई
(सारन) बिहार

अंग्रेजी (जी० एन० ९४२६)से; तथा सी० डब्ल्यू० ५३७०से भी।
सौजन्य : मीराबहन

३१३. पत्र : द० बा० कालेलकरको

४ मई, १९२९

दोबारा नहीं पढ़ा

चि० काका,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। 'जोडणी कोश' की[1] संशोधित दूसरी आवृत्तिका प्रबन्ध किया जा रहा होगा। इस विषयमें मेरा ऐसा ख्याल है कि बालूभाईसे कहा जाये कि वे नगरपालिकाओंकी पाठशालाओंमें शब्दोंकी इस वर्तनीका प्रचार करायें; अर्थात् शिक्षकोंका तदनुसार शब्दोंके हिज्जे करना आवश्यक कर दिया जाये। इसी प्रकार गुजरातमें जो-जो संस्थाएँ चल रही हैं उनमें भी इनके प्रवर्तनका विचार कर लेना।

इस प्रचारके साथ-साथ हमें अपने कोशकी प्रतियाँ भी अधिक मुद्रित करनी चाहिए। इसका आकार भी कम किया जाना चाहिए और इसके लिए खास कागज काममें लाया जाना चाहिए। बने तो इसे प्लेटें या स्टीरियोटाइप कराकर छाप लेना चाहिए।

मथुरादासके बारेमें तो अब इतना ही बाकी रह जाता है न कि तुम उसे बुलवा लो? मैं तुम्हारे ही मोढ़िएसे काम ले रहा हूँ। लक्ष्मीदासके मोढ़िएसे अधिक इसमें कोई खासियत मुझे नहीं दिख सकी। केशूके मोढ़िएसे तो यह बढ़कर जरूर है। क्या तुमने इसपर लक्ष्मीदासकी राय मालूम की है? तुम्हारे मोढ़िएपर अपेक्षाकृत कितना कम खर्च बैठता है? इस विषयमें तुम्हें मीराबहनसे चर्चा कर लेनी होगी। वह हर चीजको गाँववालोंकी दृष्टिसे देखती है, यह अच्छी बात है। गराड़ीको वह इसी दृष्टिसे छोड़कर नरम तकुएका उपयोग करती है। यदि यह तकुआ ठीक काम देता हो तो हम तकुआ सीधा करना सिखाना बन्द ही कर सकते हैं और उसकी कीमत एक पैसा ही रख सकते हैं। यह कोई मामूली बात नहीं होगी। सम्भव है ऐसे तकुएके लिए तुम्हारा मोढ़िया असफल सिद्ध हो क्योंकि इस हिस्सेके लिए थोड़ी जगहकी जरूरत पड़ती है। तुम्हारे और केशू दोनोंके मोढ़ियोंमें तकुआ कैद हो जाता है और उस हालतमें अगर तकुआ बिलकुल सीधा न लग पाये तो मुझे लगता है वह चल नहीं सकेगा। इस पर सोचना और जब मैं वहाँ आऊँ तब चर्चा करना; अगर लिखना चाहो तो लिखकर भेजना।

आशा है कि मैं २८ मईसे १० जूनतक तो वहाँ रहूँगा ही। इस अवधिमें से एक पूरा दिन तुमको दूंगा।

१. देखिए "जोडणी-कोश", ७-४-१९२९।

प्रभुदास तुम्हारे पास आये या अलमोड़ा रहे इनमेंसे क्या अधिक ठीक होगा सो तो अलमोड़ाके बारेमें अधिक समझनेपर ही तय हो सकेगा। अगर मै अलमोड़ा गया तो मै पता लगा लूँगा; नहीं तो अन्तिम निर्णय उसीपर छोड़ देंगे।

जमनादासकी उलझन सुलझाना कठिन है। गांधी-परिवारके प्रति तुम्हारे मनमें कोई झिझक नहीं है, यह एक प्रकारकी जीत ही है। जबतक झिझक हो व्यक्तिमें तटस्थता नहीं आती। अब अगर कोई गांधी कुछ कहे तो उसे कहने दो। तुम्हें जो योग्य जान पड़े वही कहो और तदनुसार करो तो बस है। मुझे लगता है कि जमनादास इत्यादिको इन दिनों बहुत जल्दी चींटे लग जाते होंगे। यों भी जमनादास खीझ उठता है, इसलिए उसे जहाँतक बने निभाना तो पड़ेगा ही। शालाके इस विषयमें आखिर हमें क्या करना होगा सो तो अभी सोच नहीं पा रहा हूँ।

बाल इन दिनों चुप हो गया है। उसकी मनोदशा कैसी है?

मैं तुम्हें उद्योग मन्दिरके विषयमें नहीं लिखता। उसका उद्देश्य तुम्हारी शक्ति और अपना समय बचाना है। किन्तु अगर तुम्हें कुछ लिखने लायक लगे तो अवश्य लिखना। जहाँ सहज ही बीचमें पड़ना जरूरी हो जाये वहाँ अवश्य ऐसा करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४८१)से।
सौजन्य : काकासाहब कालेलकर

३१४. पत्र : बालकृष्ण भावेको

४ मई, १९२९

चि० बालकृष्ण,

जितनी हिम्मत है, चाहो तो उतना काम करो; किन्तु फिर हार मत मानना और अपना स्वास्थ्य मत बिगाड़ लेना। और बातें तो मिलनेपर ही करेंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८०३) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य : बालकृष्ण भावे

३१५. पत्र : कुसुम देसाईको

४ मई, १९२९

चि० कुसुम,

आजकी डाकके सब पत्र रातको ८-३० बजे सफरसे आकर लिख रहा हूँ, क्योंकि सवेरे फिर तैयार होना है। और पत्र यहाँ न लिखूं तो फिर जा नहीं सकते।

तेरा पत्र मिल गया है। सब-कुछ लिखनेमें जरा भी संकोच न रखना।

तू गई इसका फायदा जड़ावबहनको मिला, इसमें तो शक ही नहीं है। वहाँ-का काम अधूरा छोड़कर तो नहीं आई होगी। इस समय और कुछ नहीं लिखा जा सकता।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

सुलोचनाबहनने लिखा है, "कुसुमबहन भी नहीं है, इसलिए अच्छा नहीं लगता।"

गुजराती (जी० एन० १७९०)की फोटो-नकलसे।

३१६. पत्र : छगनलाल जोशीको

४ मई, १९२९

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। तुम्हारी स्थिति मैं समझता हूँ। जबतक तुममें हिम्मत और श्रद्धा हो तबतक चलते ही रहो। मैं तुम्हारा वियोग भी सहन करनेको तैयार हूँ। जो आश्रमके बाहर न रह सकें वे ही आश्रममें रहें, मैं हमेशासे यही चाहता था और आज भी यही चाहता हूँ। आज तो यह इच्छा और भी तीव्र है। तुम्हें जैसा ठीक लगे वैसा करना। जबरदस्तीसे कुछ न करना। इस मासके आखिरतक निभा लो तो यह मेरे लिए काफी है। इस प्रकार एक ओर तुम्हें मुक्त करते हुए दूसरी ओर मैं यह भी कहूँगा कि तुम सब या जितने लोग रह जायेंगे वे सब जैसे ठीक लगे वैसे मन्दिरका गठन कर सकते हैं। मैंने तुम्हें लिखा है कि मकानोंमें जो लोग हैं, वे वहाँ रह सकते हैं; और जिन्हें दूसरे लोगोंको रहनेके लिए देना हो, वे भी दिये जा सकते हैं। मैं स्वयं सभी तरहकी छूट देना सहन कर सकता हूँ। किन्तु लोग कितनी छूट ले सकते हैं यह मैं अभी समझ नहीं पाया। वहाँ पहुँचनेपर ही इसपर विशेष विचार कर सकता हूँ।

महावीर प्रसादका पत्र इसके साथ है। इस पत्रका जवाब मैंने दे दिया है।[1] वह जो बेच सकता है बेच दे। खराब माल हमारी जिम्मेदारीपर बेच दे। पैसा अपनी सुविधाके अनुसार हमें भेज दे। वह दिलका साफ है इसलिए जो करेगा, हमें स्वीकार होना चाहिए। इसलिए अभी तुम उससे पैसेके लिए तकाजा न करना और जब करना जरूरी हो तो मुझे बताना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५४०९)की फोटो-नकलसे।

३१७. पत्र : रुक्मिणीको

४ मई, १९२९

चि० रुक्मिणी,

तुम्हारा पत्र आज ही मिला है। राधाके साथ तुम भी जरूर चली जाओ। अब माथेरानमें तो थोड़े ही दिन मिल पायेंगे। इसलिए जमनालालजी जो करें वही ठीक होगा। उन्हें तार दे रहा हूँ।[2]

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ९०४५)की फोटो-नकलसे।

३१८. पत्र : छगनलाल जोशीको

रातके दस बजे
४ मई, १९२९

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। तुम तो सचमुच घबरा गये हो। लड़कों और लड़कियोंको विद्यापीठ भेजनेकी बात मुझे तो कठिन ही लगती है। किन्तु उसमें भी मैं आग्रह नहीं करूँगा। तुम सबको यह निर्णय ठीक लगे, काकाको भी ऐसा ही लगे तो इसपर मेरे आनेसे पहले अमल कर सकते हो। कोई भी कदम उठानेमें संकोच करनेकी जरूरत नहीं है। मेरा अपना विचार तो यह है कि बालकोंको हम जितना सिखा सकते हों उससे वे सन्तुष्ट हों और फिर रहना चाहें तो अवश्य रहें। असली प्रयोग तो यही है। ऐसा प्रयोग आश्रममें ही हो सकता है। ऐसी सुविधाका प्रबन्ध हमने किया है। यह प्रयोग करते समय हार माननेकी जरूरत नहीं है। किन्तु यदि तुम यह मानते हो कि हम हारे हैं तो जैसा ठीक लगे वैसा करना।

१. यह पत्र उपलब्ध नहीं है।
२. तार उपलब्ध नहीं है।

चि० राधा और रुखीको वायु परिवर्तनके लिए भेजे बिना नहीं चलेगा। मैंने मथुरादासके पास माथेरान भेजनेका विचार किया था। किन्तु अब वहाँ जानेका समय नहीं रहा। इसलिए जमनालालजीको तार किया है।[1] वे जो लिखें वैसा करना अथवा कोई दूसरी बात सूझे तो उसके अनुसार करना। बालकृष्णका तो ऐसा ही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५४११)की फोटो-नकलसे।

३१९. हरिद्वारमें खादी

हरिद्वार जैसे धाममें खादीकी नन्ही-सी दूकान खुले और बन्द हो जाये और फिर वेद विशारद एवं आचार्यके पदकी योग्यता रखनेवाले पण्डित देव शर्माके समान सज्जनके प्रयत्नसे खादीकी दूकान खुले, यह बात जितनी सुखद है उतनी ही दुःखद भी है। सुखद इसलिए कि खादी-कार्यकी कद्र करनेवाले लोग एक खास धार्मिक वर्गके हैं, दुःखद इसलिए कि जिसके द्वारा करोड़ों लोगोंकी आर्थिक उन्नति हो सकती है, उस खादीकी खपत हरिद्वार जैसे स्थानमें कोशिश करनेपर ही हो पाती है। विदेशी कपड़ेकी दूकानें तो हरिद्वारमें चाहे जितनी मिल सकेंगी, लेकिन खादीकी दूकानके लिए पण्डितोंका सहारा चाहिए। पण्डित देव शर्माने इस भण्डारके बारेमें एक पत्र हिन्दीमें भेजा है, उसमेंसे थोड़ी बातें नीचे देता हूँ :[2]

मैं आशा रखता हूँ कि भण्डारकी वृद्धि होगी और उसे पूरा-पूरा प्रोत्साहन मिलेगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५-५-१९२९

३२०. हमारा कलंक

ठक्कर बापाके 'अन्त्यज सर्वसंग्रह'का दूसरा हिस्सा इस अंकसे छपना शुरू हो रहा है। यह संग्रह मेरे पास कई महीने पहले आ चुका था। किन्तु मुसाफिरीके प्रारम्भमें वह मेरे साथ नहीं था। और फिर जब मेरे पास भेज दिया गया तो प्रवासकी दौड़-धूपके कारण मैं उसे देख नहीं सका। समय ही कहाँ था? इसमें शक नहीं कि आन्ध्र देशकी यात्रा कठिनाइयोंसे भरी हुई है, फिर भी लोग दयालु और मोहमाया रखनेवाले हैं, तथा देशभक्त वेंकटप्पैया बड़ी सतर्कता बरत रहे हैं। दोपहरका जो समय मेरे अवकाशका समझा जाता है, वे उसमें किसीको मेरे पास तक नहीं फटकने देते; इसी कारण मैं इस संग्रहको अब देख पाया हूँ।

१. तार उपलब्ध नहीं है।

२. यहाँ नहीं दिया गया है। पत्रमें भण्डारकी समिति, प्रारम्भिक पूँजी और दानसे प्राप्त रकमका विवरण था।

यह संग्रह हमारे यानी हिन्दुओंके कलंकका इतिहास है। 'हमारे' सर्वनामका उपयोग मैं जान-बूझकर कर रहा हूँ। 'नवजीवन' के ग्राहकोंमें तो मुसलमान, पारसी और ईसाई भी है। मगर मै एक हिन्दूके नाते यह लेख तो सिर्फ गुजरातके हिन्दुओंके लिए लिख रहा हूँ।

जिस धर्मके अनुयायियोंके कारण अन्त्यजोंको पानीतक मिलना दुश्वार हो जाये, उसकी निर्दयताको क्या कहा जाये। पानीका त्रास तो एक दुश्मनको भी नहीं दिया जाता। जब हम अन्त्यजको अपने कुओंसे पानी भी नहीं भरने देते, ऐसी दशामें वे हमारे यहाँ आकर पानी पीनेकी हिम्मत कैसे कर सकते हैं? अन्त्यजके लिए रेलगाड़ीमें 'हटो-बचो' दूकानपर आये तो 'दूर-दूर' मन्दिरमें पैर रखे तो हम-जैसे उच्च वर्णवालोंके भगवानके अपवित्र होनेका डर, और वह हमारे बच्चोंके साथ पढ़ने बैठे तो हमारे बच्चों तकको इसमें आपत्ति होती है और यह सब चलता है धर्मके नाम पर।

मैंने 'सनातन' धर्ममें इसका कोई आधार नहीं देखा। जो देखना चाहते हैं, वे देख सकते है कि आज सनातन धर्मके नामपर पाखण्ड फैल रहा है। हम अपनी पीठ स्वयं नहीं देख सकते; किन्तु अगर दूसरे उसे देखकर उसकी गन्दगीकी बात हमें बतायें, तो हम उसे भी नहीं सुनना चाहते।

मुझ जैसे लोग, जो इसी वातावरणमें रह कर बड़े हुए हैं, और फिर भी अपने आसपासकी गन्दगी देख सके हैं, 'सनातनियों' द्वारा 'भ्रष्ट' कहे जाते और सताये जाते हैं। लेकिन यह सच है कि अब अधिक समयतक हम इस कलंकको छातीसे लगाकर न रख सकेंगे। मेरे समान एक नहीं बल्कि अनेक हिन्दुओंने इस पापको अपनी आँखों देखा है और इसे दूर करनेकी कोशिश कर रहे हैं। यह संग्रह उनकी इस कोशिशमें मददगार बन सकता है। यह हमें हमारे पापोंकी याद दिलाता है और उनकी भीषणता बतलाता है।

मैं चाहता हूँ कि इस संग्रहसे लाभ उठाया जाये। अन्त्यज सेवाके काममें हमें द्रव्यकी उतनी कमी नहीं है। श्री रामेश्वरदास बिड़ला द्वारा दी गई दानकी सारी रकम अभी खर्च नहीं हो पाई है। वस्तुस्थिति तो यह है कि जिस तरह खादीमें श्रद्धा होनेपर अनेक नवयुवक खादी-कार्य द्वारा अपना जीवन सुखी बना सकते हैं, उसी तरह अन्त्यज सेवामें श्रद्धा रखनेवाले लोग भी सुखी हो सकते हैं। हजारों अच्छे और साफ दिल हिन्दू, जिन्हें इस कामसे न नफरत है, न जो इसे करते हुए ऊबते ही हैं, इसके द्वारा सुखपूर्वक अपना जीवन-निर्वाह कर सकते हैं। लेकिन अन्त्यज शालाओंके संचालनके लिए योग्य हिन्दू शिक्षक हमें कहाँ मिलते हैं? अन्त्यजोंके लिए कुएँ खोद देनेवाले लोग कहाँ हैं? रेलकी पटरियाँ बिछा देनेवाले साहसी कच्छियोंको जहाँ-तहाँ देखता हूँ, लेकिन बाजार-दरसे मजदूरी लेकर अन्त्यजोंके लिए कुएँ खोद देनेवाले कारीगर और ठेकेदार कहाँ हैं? अगर कोई शिक्षक, कारीगर, मजदूर और ठेकेदार इस कामको अपने हाथों लेना चाहें तो वे सब ठक्कर बापाको लिखें और उनके कार्यालयमें अपने नाम दर्ज करायें।

इस लेखके अर्थका कोई अनर्थ न करे। जिसे दान देनेकी इच्छा हो वह निःसंकोच दे। मगर इस संग्रहको प्रकाशित करनेका मुख्य अभिप्राय तो यह है कि इससे हमें अपने पापोंका अनुमान हो और हम इस क्षेत्रमें काम करनेवाले सेवकोंके संघको बढ़ायें।

संग्रहकर्त्ताके लिए मेरा एक सुझाव है। संग्रहमें 'फलाँ बातका होना मुमकिन है' को व्यक्त करनेवाली भाषा अधिक न हो। संग्रहकर्त्ताको इस तरहके अनुमान करनेका अधिकार नहीं है। वह तो जो देखे उसे लिख-भर दे, उस परसे अन्दाज लगानेका काम पाठकोंका है।

जहाँ 'गेलेस्पीपुरा', 'ब्रूकहिल' जैसे नाम आते हैं वहाँ ऐसे गाँवोंकी उत्पत्तिका विवेचन कर देनेसे संग्रह अधिक दिलचस्प और शिक्षाप्रद बन सकेगा।

साथ ही अगर संग्रहमें मुख्य अन्त्यजोंके परिचयमें कुछ पंक्तियाँ लिखी जा सकें तो अच्छा हो। अगर अन्त्यजोंमें संयम, साधुता वगैरा देखे गये हों तो संग्रहमें उनका उल्लेख किया जाना चाहिए। संग्रहका आकार-प्रकार न बढ़ जाये इस दृष्टिसे ऐसी बातें एक-दो सतरोंमें ही दी जानी चाहिए। इससे संग्रहमें वैचित्र्य आयेगा और वह उपयोगी भी बन जायेगा। सच्ची कला कभी निरुपयोगी नहीं होती। कई कलावादी कहते हैं कि कला और उपयोगिताका बैर सनातन है; लेकिन उनकी इस बातपर ध्यान नहीं देना चाहिए। हम प्रतिदिन देखते हैं कि इस संसारमें प्रकृतिकी कलाका कोई अन्त नहीं है। जिन्हें प्रकृतिका अनुभव है उनका कहना है कि कुदरतका कण-कण उपयोगी है। मोरके पंखका एक भी रंग निरुपयोगी नहीं है। यह हमारी त्रुटिकी निशानी है कि हम उनमें से हरएकका उपयोग करना नहीं जानते। इसमें दोष कुदरतकी स्वच्छन्दताका नहीं है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५-५-१९२९

३२१. टिप्पणियाँ

मुसाफिरीका कार्यक्रम

कई पाठकोंका कहना है कि उन्हें मेरी यात्रा और उद्योग-मन्दिरसे मेरी गैर-हाजिरीकी कोई निश्चित खबर नहीं रहती। इस वजहसे उन्हें कठिनाई होती है और अगर मुझतक कोई बात पहुँचानी हो या उन्हें मुझसे मिलना हो तो यह भी सम्भव नहीं हो पाता। इस शिकायतमें सार है। इसीलिए आन्ध्र देशकी यात्राका ५ मईसे आगेका कार्यक्रम नीचे देता हूँ। इसमें सम्बन्धित तिथियोंमें जिन छोटे-मोटे गाँवोंसे गुजरूँगा उनका जिक्र नहीं कर रहा हूँ। आमतौर पर सुबह छः बजे मुसाफिरी शुरू होती है और नौ बजने तक जितने गाँवोंमें जाया जा सकता है, उतने गाँवोंकी यात्रा कर ली जाती है। ९ बजे पड़ाव डाल दिया जाता है और फिर शामके साढ़े ५ बजे

कूच करके रातके आठ बजे फिरसे पड़ाव डाल देते हैं। नीचे उन्हीं गाँवोंके नाम दे रहा हूँ जहाँ दिनभर मुकाम रहेगा।

५ मई	पालीवेला
६ ,,	अमलापुरम्
७ ,,	गोलम्मादीदादा
८-९ ,,	राजमुंदरी
१०-१३ ,,	नेल्लोर
१४ ,,	नायुडुपेटा
१५ ,,	तिरुपति
१६ ,,	मदनापल्ली
१७ ,,	अनन्तपुर
१८ ,,	ताडीपत्री
१९ ,,	नंदियाल
२० ,,	कुरनूल
२१ ,,	पत्तीकोंडा
२२ ,,	अडोनीसे बम्बई, गाड़ीमें
२३-२७ ,,	बम्बई
२८ ,,	साबरमती

२८ मईसे १० जूनतक उद्योग-मन्दिर

१० जूनके बादका कार्यक्रम अभी तय नहीं हुआ है। अलमोड़ाकी मुसाफिरीके बारेमें पत्र-व्यवहार हो रहा है। जुलाई और अगस्तका ज्यादातर हिस्सा उद्योग-मन्दिरमें ही बीतेगा।

एक विधवाकी कहानी

एक तेईस वर्षकी विधवा बहन, जिसने अपना नाम और पूरा पता लिख भेजा है, लिखती हैं:[1]

इन और ऐसी दूसरी बहनोंको मेरी यही सलाह है कि वे जरूर ही पुनर्विवाह करें और ऐसा करते हुए जो दिक्कतें पेश आयें उन्हें सह लें। योग्य पति मिलने पर तो काका और भाईके साथ की जरूरत बहुत थोड़ी रहेगी। मनसे विषयका चिन्तन करनेके बदले शरीरको वैसी सहूलियत करा देनेमें ही भला है। मनमें विषय सम्बन्धी विचारोंके उठते हुए भी उनका बुरा लगना और उन्हें रोकनेकी कोशिश अच्छे लक्षण हैं। मगर शारीरिक संयोगके अभावमें जो मन विषयोंमें लीन रहता हो, जैसा कि इन बहनका मालूम पड़ता है, तो शरीरकी जरूरतको सन्तुष्ट करना ही धर्म है। इसमें मुझे कोई शंका नहीं है। विधवा विवाहमें कोई पाप नहीं है अथवा उतना ही है जितना विधुरके विवाहमें है। वैधव्य एकान्तिक धर्म नहीं है।

१. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है।

जो इसका पालन कर सकती हैं उनके लिए यह भूषण-रूप है। अगर इन बहनकी हिम्मत हो तो यह अपने काका और भाईसे अपने मनकी बात कहें और उनकी मदद माँगें। अगर वे मदद न कर सकें, करनेमें असमर्थ हों, तो इन्हें उनका घर छोड़ देना चाहिए और किसी विधवा-सहायक संस्थाका आश्रय लेना चाहिए। इन बहनके रिश्तेदार जिस स्थितिमें हैं, वैसी स्थितिमें पड़े हुए काका और भाइयोंको मेरी सलाह है कि वे जमानेको पहचानें और इन बहन-जैसी गरीब गायोंको दुःखसे मुक्त करें।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, ५-५-१९२९

३२२. पत्र : मीराबहनको

प्रातः ५-३० बजे
रविवार, ५ मई, १९२९

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र और तार दोनों मिल गये। उत्तरमें 'नहीं' लिखते हुए मुझे दुख होता है।[1] मैं एक स्थानपर मुश्किलसे दो रात रहता हूँ। गरमी दिनपर-दिन बढ़ रही है। मेरे सिवाय और किसीके लिए न कोई आराम है, न खानेका पूरा प्रबन्ध है। और चूँकि मैं दूध नहीं लेता, इसलिए क्वचित ही अच्छा दूध मिलता है। चूँकि मैंने अपनी फलोंकी आवश्यकता कम कर दी है, इसलिए नारंगियाँ भी नहीं होतीं। ऐसी स्थितिमें तुम्हारी मौजूदा हालतमें तुम्हें यहाँ लाना अत्यन्त जोखिमकी बात है और इससे स्वागत-समितिपर अत्यधिक भार पड़ जायेगा। समितिको मोटरकी भी व्यवस्था करनी पड़ती है। हमारे दौरेका सबसे कठिन भाग नेल्लोरसे शुरू होगा। तुम्हें जितनी सुविधाएँ मिलनी चाहिए, वे सब मैं अपने आसपासके तमाम लोगोंपर अनावश्यक भार डाले बिना नहीं पा सकता। मुझे यकीन है कि तुम ऐसा करना नहीं चाहोगी। इसलिए तुम २३ मईतक धीरज रखो। उसके बाद मैं खुशीसे तुम्हें सँभाल लूँगा। इसका यह अर्थ नहीं कि खुद मुझे कोई असुविधा होती है। कितने ही सारे लोग मेरी खबर रखते हैं और इससे भी बड़ी बात तो यह है कि मैं खुद अपनी जरूरतें आग्रहपूर्वक पूरी करा लेता हूँ। मुझे अपना स्वास्थ्य बिना बरबाद किये दौरा पूरा कर लेना हो, तो मुझे ऐसा करना ही चाहिए। इसलिए मेरे लिए तुम्हें जरा भी चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं। मेरी तन्दुरुस्ती बहुत अच्छी है। लेकिन मेरी

१. लगता है कि मीराबहनने गांधीजीसे अपनी यह इच्छा प्रकट की होगी कि वह नेल्लोरमें उनके यात्रा-दलमें शामिल होना चाहती हैं। गांधीजी १० मईको नेल्लोर पहुँचनेवाले थे। देखिए "पत्र : मीराबहनको", ६-५-१९२९ भी।

देख-भालका काम ही काफी बड़ा है। इस समय सब लोग प्रतीक्षा कर रहे हैं कि मैं सफरके लिए तैयार हो जाऊँ।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५३७१) से।
सौजन्य : मीराबहन

३२३. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

५ मई, १९२९

चि० गंगाबहन,

तुम्हारा पत्र बहुत दिनोंके बाद मिला है। तुम्हें तो वैद्यकी तरह चीर-फाड़ करनी ही होगी। तुम जरा भी नरम पड़ोगी तो उससे बच्चोंकी भलाई नहीं होगी। उनको अपने वशमें कर लेना। . . .को[1] स्पष्ट रीतिसे यह कहने पर कि उसे एक पाई भी नहीं मिलेगी वह सुधरेगा और तुम उसके अकल्याणमें भागीदार होनेसे बचोगी।

अपना स्वास्थ्य सुधारो। किसी भी स्थितिमें चिन्ता न करना। हम अपना कर्त्तव्य पूरा करनेके बाद परिणाम ईश्वरपर छोड़ दें। टहलने जरूर जाना। पूरी नींद लेना, फल खाना और दूध-घी न छोड़ना।

मैत्रीको ले जाकर ठीक ही किया है। उसका स्वास्थ्य भी सुधर जाये तो अच्छा हो।

तुमने अपने अक्षर काफी सुधार लिये हैं। हिज्जोंको सुधारना बाकी है। काकू वहाँ हो तो उसकी सहायता लेना। शब्द-कोष देखना भी सीख लेना।

'पित्ता' नहीं 'पिता' होना चाहिए, 'पलतु' नहीं 'पडतुं' होना चाहिए, 'स्विकार' नहीं 'स्वीकार', तथा 'मेनत' नहीं 'महेनत' लिखना चाहिए।

आशा करता हूँ कि २३ मईको बम्बई पहुँच जाऊँगा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो-६ : गं० स्व० गंगाबहेनने

१. साधन-सूत्रमें नाम नहीं दिया गया है।

३२४. पत्र : गंगादेवी सनाढ्यको

मौनवार [६ मई, १९२९ या उससे पूर्व][1]

चि० गंगादेवी,

अब तुमारा शरीर कैसा है। सिवाय दूध और फल कुछ भी मत खाओ। परिश्रम कभी उठाना नहिं। मुझे लिखो। तोतारामजीसे भी कहो लिखे।

बापुके आशीर्वाद

जी० एन० २५३२ की फोटो-नकलसे।

३२५. तार : मीराबहनको

[६ मई, १९२९][2]

मीराबाई
भाटपोखर

नेल्लोर मत आओ। दौरा बड़ा कष्ट-साध्य है। गर्मी बढ़ती जा रही है। ठहरनेकी सुविधाएँ बहुत कम हैं। बम्बईमें मिलो या चाहो तो वहाँ पहले पहुँच जाओ। सस्नेह।

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५३७२)से।
सौजन्य : मीराबहन

१. पत्र-वस्तुके आधारपर यह पत्र ११ मई, १९२९ के पत्रसे पहले लिखा गया प्रतीत होता है। इससे पहले सोमवार ६ मईका था।

२. तार जिस रूपमें मिला था, उसमें केवल तिथि ही पढ़ी जा सकती है, वर्ष और मासका पता नहीं चलता। लेकिन तारके पाठसे स्पष्ट है कि वह मई, १९२९ में भेजा गया होगा। देखिए अगला शीर्षक भी।

३२६. पत्र : मीराबहनको

दोबारा नहीं पढ़ा

६ मई, १९२९

तुम्हारा स्वभाव मैं जानता हूँ, इसलिए तुमको नेल्लोर न आनेके लिए आगाह करनेके बाद मन बड़ा चिन्तित रहा। फिर भी आशा है कि तुम इस न टाली जा सकनेवाली परिस्थितिमें अपने मनको किसी तरह समझा लोगी। मुझे पता नहीं प्यारेलालने तुम्हें क्या लिखा था। मैंने उसे यही हिदायत दी थी कि वह तुम्हें लिख दे कि दौरा समाप्त होनेके बाद तुम जहाँ भी पसन्द करो मेरे साथ आ सकती हो। जमनालालने आनेके लिए तार दिया था। उन्हें भी मुझे तार द्वारा सूचित करना पड़ा कि न आयें।[1] लगभग पूरा दौरा मोटर द्वारा ही हो रहा है और दौरेका प्रबन्ध करनेवालोंको किसी भी अतिरिक्त व्यक्तिके लिए गुंजाइश करनेमें बड़ी कठिनाई पड़ती है। फिर तुम्हें इस कमजोरीकी हालतमें इस दौरेमें अपने साथ रखनेमें इतना बड़ा खतरा था कि मैं उसे मोल नहीं लेना चाहता। यदि तुम्हें विद्यापीठमें कोई परेशानी महसूस हो रही हो, तो तुम बम्बई जा सकती हो। बम्बई मई महीनेमें काफी ठंडा रहता है, और रेवाशंकर भाईकी छतपर काफी सुहावना लगता है। तुम माथेरान भी जा सकती हो और वहाँ मथुरादासके साथ ठहर सकती हो। अब तुम इनमें से कोई स्थान चुन लो और आरामसे रहो।

इस दौरेमें इतनी अनिश्चितता रही कि मैंने जो तिथियाँ तुमको लिखी थीं वे भी बिलकुल निश्चित नहीं हैं। जहाँतक डाककी बात है, उसपर इस सबका कोई असर नहीं पड़ेगा। हाँ, तारोंके मिलनेमें गड़बड़ी हो सकती है। लेकिन अब देखा जाये तो केवल दो सप्ताह ही रह गये हैं। यह पत्र एक साइकिल-सवारके हाथों भेजा जायेगा, जिसे रेलवेकी छोटी लाइनके एक स्टेशनतक पहुँचनेके लिए बारह मीलका फासला तय करना पड़ेगा और कह नहीं सकता कि इसपर भी वह बिलकुल सही डाक गाड़ीके समयतक पहुँच भी पायेगा या नहीं। हाँ, तुम पूर्वी देशके एक बिलकुल ठेठ किस्मके इलाकेमें पाश्चात्य देशों जैसी सुविधाओंकी उम्मीद भी नहीं कर सकती। और मुझे इसमें कोई गलत बात भी नही लगती कि लोग एक-दूसरेसे मीलों दूर रहें और रोजाना पत्रों या तारोंके जरिये एक दूसरेसे सम्पर्क स्थापित न करें। पहले यही पर्याप्त माना जाता था कि वे अपने हृदयोंके जरिये एक-दूसरेकी बात सुनते-समझते रहें। बाह्य भौतिक साधनोंने जो दूरी मिटा दी लगती है उसे किसी भी तरह एक ऐसी बड़ी देन नहीं माना जा सकता जिसका कोई कुपरिणाम है ही नहीं। इसलिए हमें पश्चिमी देशोंकी इस देन, इन साधनोंका इस्तेमाल यह समझते हुए ही करना चाहिए कि हम अपनी कमजोरियोंके साथ थोड़ी रियायत कर

१. यह तार उपलब्ध नहीं है।

रहे हैं, और इसीलिए जब वे हमारे लिए सुलभ न हो पायें तो हमें परेशान होनेके बदले उल्टा यह महसूस करना चाहिए कि उनके अभावमें हमें सहज ही उनसे मुक्ति मिल गई है।

मौन-दिवसकी इस भोर मैंने अपने-आपको थोड़ा आराम देनेकी बात मान ली है। जो लिखनेकी आवश्यकता न हो, वह लिखना अपने-आपको आराम देना ही है। पर अब मुझे यह प्रेम-पत्र यहीं रोक देना चाहिए। मुझे अन्य पत्र भी लिखने हैं और साढ़े दससे पहले-पहले 'नवजीवन'का सम्पादन भी पूरा कर देना है, क्योंकि तबतक साइकिलवालेको यहाँसे चल देना चाहिए। इस पत्रके बिहार पहुँचनेके समयतक यदि तुम पटनामें ही रहोगी, तो यह तुमको हदसे-हद गुरुवारतक मिल जाना चाहिए।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५३७३)से।
सौजन्य : मीराबहन

३२७. पत्र : छगनलाल जोशीको

प्रातः ६-२५ बजे
मौनवार, ६ मई, १९२९

चि० छगनलाल,

तुम्हारे अभी-अभीके पत्रोंसे मैं कुछ चिन्तामें पड़ गया हूँ। उनसे ऐसा आभास मिलता है कि तुम अपने साथ जबरदस्ती करते हो। संकोचके कारण कुछ भी नहीं करना। अकेले खड़े रहनेमें तुम्हें कठिनाई जान पड़ती है, यह मैं जानता हूँ। दुग्धालय या बुनाई शाला भी हर हालतमें चलती ही रहनी चाहिए, ऐसी कोई बात मत सोच बैठना।

मैंने घरोंको तोड़नेका धन्धा ही अपना रखा है; घरोंको खत्म करते हुए मेरे मनमें कभी क्षोभ नहीं हुआ। यह मैंने १८९१ में शुरू कर दिया था। इस प्रकार जबसे मैं स्वतन्त्र हुआ हूँ तभीसे मैं यह करता आया हूँ। बम्बईमें घर बसाया और तोड़ दिया। राजकोटमें बसाया और तोड़ा, और केवलरामके[1] एक ही शब्दसे राजकोटसे बम्बई चला गया। फिर एक ही वर्षके लिए दक्षिण आफ्रिका जानेके लिए हिन्दुस्तान छोड़ा। किताबें तितर-बितर हो गईं, सामान बरबाद हो गया, सब पोशाकें बेकार हो गईं और सभी कुछ नये सिरेसे लेना पड़ा। नेटालका घर बहुत सोच-विचार कर बनाया था, चुन-चुन कर घरका मनपसन्द साज-सामान खरीदा था। व्यायाम-शाला बनाई थी। वह सब एक क्षणमें मिटाकर धर दिया। कुछ सामान किसीको, कुछ सामान किसीको, इस तरह बहुत सारा तो दे डाला। बम्बई गिरगाँवमें डेरा लगाया।

१. केवलराम मावजी दवे, राजकोटके प्रसिद्ध वकील।

वहाँ मणिलाल मृत्यु-शय्यापर पड़ गया। फिर वहाँ रहना सम्भव नहीं था। बड़ी खोज-बीनके बाद अन्तमें 'विलर-विला' पसन्द किया। किरायानामा लिखवाया। रेवाशंकरभाई भी साथ रहने आये। पहले दर्जेकी 'सीजन-टिकट' ली। बम्बईमें पेन गिल्बर्टके मकानमें आफिस लिया। सोचा, आखिर अब चैनसे ठिकाने पहुँच गये हैं। तभी तार आ गया: "दक्षिण आफ्रिका पहुँचो।" बा को छगनलालके पास छोड़कर, जो नवयुवक आना चाहते थे उन्हें साथ लेकर, दक्षिण आफ्रिका चला गया। वहाँ भी यही हाल हुआ। फरनीचरमें ही कितना पैसा बरबाद किया है, इसका आज अन्दाज लगाना कठिन है। किन्तु इन सारे तूफानोंमें किसी भी समय मनमें क्षोभ हुआ हो, ऐसा मुझे याद नहीं है। हर बार हलका हो जानेका ही अनुभव हुआ और 'ईश्वर यही चाहता है इसलिए अच्छा ही है' यही मनमें विश्वास रहा है।

इस आश्रमको भंग करके नया बनाऊँ तो इसमें मुझे तनिक भी दुख नहीं होगा। हाँ, मैं एक बातका भूखा हूँ, सत्यका। तुम सब सच्चे मनसे रह सको तभी रहो। लोग संकोच और दबावके कारण रहें तो वे भी सच्चे मनसे रहते हैं, ऐसा नहीं कहा जा सकता। सत्य कई बार निर्दय दिखाई देता है। तुम मेरे प्रति निर्दय होनेमें संकोच न करना।

चाहे जो सहना पड़े किन्तु सचाई न छोड़ो। एक पलके लिए भी कृत्रिम न बनो। कृत्रिमका अर्थ समझ लो। उसका अर्थ 'ढोंगी' नहीं 'अस्वाभाविक' है। तुम्हारी अन्तरात्मा कहे कि मुझे यह काम करना है, वही करना। उसीमें तुम्हारी भलाई है। इसीमें तुम्हारी जीत है। मुझसे तुम्हें यही सीखना है। हालाँकि थोड़े लोग ही इसे सीख पाये हैं। तुम्हें आश्चर्य होगा कि मगनलाल यह प्रमाणपत्र ले पाया था। तुम्हें याद होगा कि वह मेरे विरुद्ध सभामें भी किस तरह जमकर जूझता था। कई बार मुझे परेशान देखता; किन्तु मुझे सवेरे आकर कह जाता था, "बापू, तुमने यही सिखाया था न कि जो मैं ठीक न समझूँ उसमें तुम्हारा विरोध करूँ।" इतना कह कर चला जाता था। इसलिए मैं हँस कर शान्त हो जाता था। एक बार कताईके बारेमें हम दोनोंमें बहस हो गई। मैंने एक पक्षका समर्थन किया, उसने दूसरे पक्षका। मेरा कहना वह समझता ही न था; इसपर मैं परेशान हो रहा था और मेरा चेहरा देखकर वह परेशान हो रहा था। किन्तु उसने अपनी बात नही छोड़ी। अन्तमें मैंने देखा कि मेरा तर्क अनुभवाभावपर आधारित था। बात मामूली-सी थी किन्तु उसने देखा कि मेरा अनुचित लिहाज करनेसे मेरी भलाई नहीं होगी। ऐसी तो कई बातें मुझे याद हैं। उसने मुझे छोड़ा नही, इसका भी कारण है। यह उसने स्वयं अपने पत्रमें बताया था। मुझे उसकी कुछ याद न थी।

अब तुम्हें क्या लिखूँ? किस प्रकार आश्वासन दूँ कि तुम निर्भय बनो। जितना मैं निर्भय हूँ उतने ही तुम भी बनो। उसके लिए सिर्फ ईश्वरपर श्रद्धा होनेकी जरूरत है। हम क्या चीज हैं? एक काल्पनिक बिन्दु-मात्र — जिसे पाटीपर बनाया भी नहीं जा सकता। वही सब-कुछ है। 'सर्वंत एव सर्व'[1] यह 'गीता'का वाक्य है न? तो

१. अध्याय ११-४०।

फिर हम हवाई किले क्यों बनायें? जो सूझे और हाथमें आये उसे कर डालें और फिर सिरपर कोई बोझ भी न रखें।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मीराबहनको कुछ इसी प्रकारका पत्र लिखनेके बाद तुम्हें यह पत्र लिखा है। उसने भी मुझे चिन्तामें डाल दिया है। नेल्लोर आने और मेरे साथ रहनेकी माँग की है। मुझे तारसे 'ना' कहना पड़ा है। इसीलिए मरहम-पट्टी करते हुए पत्र लिखना पड़ा।

पत्र दोबारा नहीं देखा है।

गुजराती (जी० एन० ५४१२)की फोटो-नकलसे।

३२८. पत्र: आश्रमकी बहनोंको

रेजोल
६ मई, १९२९

बहनो,

यह पत्र जहाँसे लिख रहा हूँ, वह रेलसे दूर एक गाँव है। वहाँसे कहीं भी जाना हो, नदी पार करके ही जा सकते हैं। नदीपर पुल नहीं होनेसे यह स्थान टापू जैसा ही माना जायेगा। जब नदीमें बाढ़ आ जाती है, तब आसपासकी जमीनमें कीचड़ जमा हो जाती है। इससे जमीन बहुत उपजाऊ बन गई है। इस कारण यहाँके लोगोंमें कुछ सम्पन्न हैं; और इसीलिए रुपयेका लालच देकर मुझे यहाँ लाया गया है। रुपया मिल भी रहा है।

काकीनाड़ासे दुर्गाबाई नामकी एक बहन हमारे साथ घूम रही है। उसके पतिकी सालाना आमदनी ४,००० रुपये है। यह बहन हर साल इसमेंसे २,००० रुपये एक महिला विद्यालयमें लगाती है। उस पाठशालामें वह खुद ही हिन्दी पढ़ाती है। चरखेकी शिक्षा भी देती है। लगभग ८० लड़कियाँ हिन्दी जानती हैं। स्त्री भली है, मेहनती है। मेरे खयालसे उसकी काममें श्रद्धा है, ज्ञान इतना नहीं। यह नहीं कहा जा सकता कि वह बहुत हिन्दी जानती है। कताईके बारेमें भी यही कहा जा सकता है। वह कहती है कि उसे रास्ता बतानेवाला या मदद देनेवाला काकीनाड़ामें कोई नहीं है। ऐसा मालूम होता है कि इससे उसकी शक्तिका पूरा उपयोग नहीं होता।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६९७) की फोटो-नकलसे।

३२९. पत्र : छगनलाल जोशीको

६ मई, १९२९

चि० छगनलाल,

आजकी डाक तो ग्यारह बजे भेज दी; दोपहरको तुम्हारी डाक मिली। रमणीक-लालको पत्र तो मैंने तुरन्त अलग लिफाफेमें भेज दिया था। वह न मिले, यह होना तो नहीं चाहिए। पता लगाना।

अक्याबका पैसा चरखा संघको दिया जायेगा। तुमने अक्याबवालोंको पैसेकी पहुँच तो लिख ही दी होगी। योगेन्द्रका जाना ठीक हुआ। सरोजिनी देवीका मामला कुछ कठिन है। यह बहन है तो बहुत अच्छी किन्तु बात-बातमें रो पड़ती है। पद्मा उसे काफी दुखी करती है।

राधा और रुखीको कहीं भेज सकनेका प्रबन्ध कर पाओ तो अच्छा है। किन्तु आसानीसे यह प्रबन्ध न किया जा सके तो वर्तमान स्थिति सहन कर लें। यह तो सही है कि जमनालालजी कुछ-न-कुछ करेंगे। इसका सुख है, पर दुख भी है। इस प्रकारकी सुविधाएँ प्राप्त हैं इसलिए उनका लाभ तो उठाना ही पड़ता है। ऐसा लाभ उठानेसे तो हम गरीब नहीं बच रहते; गरीबीका दिखावा-मात्र रह जाता है। यह मेरी दोहरी स्थितिका फल है। हमारे लिए आदर्श स्थिति तो यह है कि हम कहीं न जायें। जिस तरह गरीब व्यक्ति अपना गाँव छोड़कर नहीं जा सकता, उसी तरह हम भी अपना स्थान न छोड़ें और वहीं मरें। किन्तु क्या ऐसी मनःस्थिति जबरदस्ती बनाई जा सकती है? जब मैं देखता हूँ कि मेरे कारण पूरे घरकी व्यवस्था उलट-पुलट हो जाती है और मैं उसे सहन कर लेता हूँ तब क्या कहूँ? आज जिस घरमें हम लोग हैं, उसका मालिक मेरी सुविधाके ध्यानसे अपने घरमें कैदी ही बन गया है। मैं यह देख रहा हूँ और फिर भी वेंकटप्पैयाको प्राप्त सुविधाएँ पर्याप्त नहीं लगतीं।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५४१३)की फोटो-नकलसे।

३३०. पत्र : माधवजी वी० ठक्करको

६ मई, १९२९

भाईश्री माधवजी,

तुम्हारा २ तारीखका पत्र मिल गया है। पहलीका पत्र घूमघामकर अब मिलेगा। दूधकी मात्रा बढ़ानी हो तो बढ़ा सकते हो। कच्ची सब्जीको कुछ छौंक देनेसे हानि नहीं होगी। सब्जीके साथ रोटी खूब चबाकर तो खाते ही होगे। खानेके बाद दाँत और मसूड़े हमेशा उँगलीसे दबाकर तथा मलकर साफ करते हो न? क्या देशी तरीकेके अनुसार सबेरे दातुन करते हो? रातको सोनेके समय दाँत अच्छी तरह साफ करके कुल्ला करके सोते हो न? पेटमें जरा भी बोझ लगे तो एक वक्त खाना न खाना अथवा हलका भोजन लेना। फल छोड़कर अच्छा ही किया। जो खाते हो वही काफी है।

अबसे चौदह तारीखतक पत्र नेल्लोरके पतेपर भेजना। नेल्लोरसे १५ तारीखको रवाना होंगे।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजराती (जी० एन० ६७७९)की फोटो-नकलसे।

३३१. भाषण : सार्वजनिक सभा, राजमुंदरीमें

७ मई, १९२९

मानपत्रों और खादी-फंडके लिए मुझे भेंट की गई राशिके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। मुझे भेंट किये गये मानपत्रोंमें कुछ बातें ऐसी हैं जिनके बारेमें मैं आपसे कुछ शब्द कहना चाहता हूँ। मैं यह बात भूला नहीं हूँ कि कुछ समय पहले भी मैं इस स्थानपर आया था।

मैं सबसे पहले नगरपालिका द्वारा भेंट किये हुए मानपत्रको लेता हूँ। उसमें अस्पृश्यताकी समस्याका उल्लेख किया गया है। उसमें यह भी कहा गया है कि "हम परिषदके सदस्यगण बड़ी आशा लगाये हुए हैं कि (शराब और अन्य नशीली वस्तुओंके) पूर्ण निषेधके लिए किये जानेवाले आपके प्रयासोंको सफलता मिलेगी।" इन दोनों उल्लेखोंको देखकर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। मैं आपको बतला दूँ कि मद्य-निषेध और अस्पृश्यता-निवारण, ये दोनों अकेले मेरे ही काम नहीं हैं। एक व्यक्तिसे कहीं अधिक इनकी जिम्मेदारी नगरपालिकाके पार्षदोंपर है, और इसका बहुत बड़ा दायित्व

विवेकशील जनतापर ही है। यह मात्र एक भ्रम ही है कि मैं अकेला ये चमत्कार कर दिखाऊँगा। मैं तो आपको प्रेरणा भर दे रहा हूँ कि आप लोग अपने कर्त्तव्य, अपने देशके प्रति जागरूक बनें, क्योंकि आपका देश इन दोनों बुराइयोंके कारण दुःसह पीड़ा पा रहा है। यदि हम मातृ-भूमिके प्रति अपना कर्त्तव्य नहीं करते, तो हमारा जन्म ही व्यर्थ हुआ, और इस प्रकार हम अपना धर्म भी नहीं निभाते।

मैं नगरपालिका परिषदके सामने उसके विचारार्थ एक और भी विषय प्रस्तुत करना चाहता हूँ। मैंने यहाँ आते समय देखा था कि एक सड़ककी दशा तो बहुत ही बुरी थी और कुछ सड़कोंका रख-रखाव खराब ढंगसे किया जा रहा है। आपको तो अपनी नगरपालिकाको एक आदर्श नगरपालिका बना देना चाहिए। इसे एक बड़ा ही पावन स्थल माना जाता है और अनेक लोग यहाँ गौतमीमें स्नान करने आते हैं। और यदि बाहर सारी गन्दगी और गन्दा पानी मौजूद रहा तो आपके खयालसे इसका नतीजा आखिरमें क्या निकलेगा? इसीलिए यह बहुत जरूरी है कि नगरको साफ-सुथरा रखा जाये, गन्दगी और बदबूका कहीं नाम भी न रह जाये। लेकिन यह बात तो आप मुझसे कहीं ज्यादा अच्छी तरह समझते हैं। खद्दर-कार्यके लिए मैं नगरपालिकाको बधाई देता हूँ। . . .

मैंने सुना है कि यहाँ एक हिन्दू समाज है जो बहुत दिनोंसे काम कर रहा है। लेकिन (समाजके अध्यक्ष) श्री एन० सुब्बाराव पन्तुलुने मुझे बताया है कि आजकल समाजका काम ठीकसे नहीं चल रहा है। हिन्दू धर्म माननेवालोंको 'भगवद्गीता'के पठन-पाठनमें दिलचस्पी लेनी चाहिए। बड़े दुःखकी बात है कि 'भगवद्-गीता'के पठन-पाठन और जीवनके मार्गदर्शक सिद्धान्तोंको सीखनेके लिए अपने पास ही में एक इतनी उपयोगी संस्था होते हुए भी लोग उसमें पर्याप्त रुचि नहीं लेते।

मानपत्रोंमें वारांगनाओंका भी उल्लेख कई स्थलोंपर आया है। घोर लज्जाकी बात है कि आज भी हमारी बहनोंका एक तबका वेश्याओंका जीवन बिता रहा है। आपको तबतक चैन नहीं लेना चाहिए जबतक आपके बीच एक भी ऐसी पतिता बहन रह जाये। समूचे राष्ट्रके इस कलंकको जबतक आप बिलकुल धो न डालें तबतक आपको नींद नहीं आनी चाहिए। याद रखिए कि यह काम आप अपनी पवित्रता और नैतिक दृढ़ताके बलपर सम्पन्न कर पायेंगे। मेरा अनुरोध है कि आप सभी लोग ईर्ष्या और भेदभावोंको त्याग कर एक हो जायें और साम्प्रदायिकताकी भावना पैदा न होने दें, क्योंकि हम सब लोग स्वराज्यके लिए लड़ रहे हैं और हम सभी एक ही फौजके सिपाही हैं। हम अपनी आत्मिक शक्तिसे, अपने उत्तेजनारहित साहस और स्वतन्त्रतामें अपने अटल विश्वासके बलपर विजय प्राप्त करेंगे। विदेशी वस्त्रोंके बहिष्कारको पूर्ण और प्रभावशाली बनाइए। विदेशी वस्त्रको हाथतक मत लगाइए, केवल खादीका ही आग्रह कीजिए और इस प्रकार अपने सभी कार्यकर्त्ताओंके लिए काम जुटाइए। शुरू करनेके लिए दूसरोंकी और दूसरे स्थानोंके आगे बढ़नेकी राह मत देखिए। यहीं, राजमुंदरीमें ही कालेज और अन्य संस्थाएँ मौजूद हैं। आपके नगर-में ही समाज-सेवा और सार्वजनिक कार्य करनेवाले कई बड़े-बड़े लोग मौजूद हैं। यदि

आप सब एकता कर लें और एक होकर काममें जुट जायें, तो मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि हम अपने लक्ष्यपर और शीघ्रतासे पहुँच जायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १०-५-१९२९

३३२. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

सीतानगरम्

८ मई, १९२९

बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके बहीखातोंके हिसाबकी जाँचके लिए क्या आप कृपया किसी प्रसिद्ध और प्रमाणित लेखा-परीक्षकका इन्तजाम कर सकते हैं?

पण्डित जवाहरलाल नेहरूने जो पत्र भेजा है उसे मैं इसके साथ ही संलग्न कर रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

मो० क० गांधी

संलग्न १

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ७८८०)की प्रतिसे।

सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

३३३. पत्र : नारणदास गांधीको

बुधवार [८ मई, १९२९][1]

चि० नारणदास,

तुम्हारे पत्रसे मुझे बहुत शान्ति मिली है। सामान स्टेशनपर भेज देनेपर भी तुमने जानेका विचार छोड़ दिया, यह तुम्हारे लिए शोभाकी बात है। अब इस समय मुझे ज्यादा कुछ नहीं लिखना है। जब आऊँगा तब देखूँगा। मुझे किसी प्रकारका भी आग्रह नहीं है। तुम सब मिलकर मेरे आनेसे पहले ही निर्णय कर सको तो अवश्य कर लेना।

अच्छा हुआ जो चि० पुरुषोत्तम मोरवी चला गया। वैद्य[2] बहुत अच्छा है। मुझे तो ऐसा ही लगा है। वह मुझे नियमपूर्वक पत्र लिखता रहे।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो-९ : श्री नारणदास गांधीने

१. बापुना पत्रो-७ : श्री छगनलाल जोशीने के पृष्ठ ९२ के अनुसार।

२. मोरवीके वैद्य लक्ष्मीप्रसाद विश्वनाथ जो खेलशंकरभाईके नामसे जाने जाते थे।

३३४. पत्र : छगनलाल जोशीको

८ मई, १९२९

चि० छगनलाल,

तुम्हारे दो पत्र मेरे पास पड़े हैं। नारणदास और रमणीकलाल रह जायें तो अच्छा ही है। साथके पत्र पढ़ लेना क्योंकि उनसे तुम्हें मेरे विचार मालूम हो जायेंगे।

मेरे वहाँ पहुँचनेतक इन्तजार करना चाहते हो तो कर सकते हो। मुझे लगता है ऐसा करनेकी जरूरत नहीं है। सभी अपनी-अपनी शक्तिका अनुमान लगा कर जिस प्रकार रहना सम्भव हो, वैसे रहें; जैसा करना ठीक समझें, वैसा करें। मेरी इच्छा चाहे जो हो, किया तो वही जा सकता है जो सम्भव है, और जो सम्भव है उसे करते हुए जहाँ पहुँचेंगे वही ठीक होगा। मेरी गैरहाजिरीमें तुम सब जो विचार करोगे वह अधिक स्वतन्त्र होगा। पूर्णतया स्वतन्त्र रूपसे विचार तो मेरी मृत्युके बाद ही हो सकेगा। इस समय तो बापू क्या चाहते हैं, क्या सोचते हैं, यह विचार तुम सबको परेशान करेगा ही।

राधा जितनी जल्दी सिंहगढ़ या माथेरान पहुँचे उतना अच्छा होगा।

मैं रातको जल्दी उठकर जवाब दूँ इससे चिन्ता नहीं होनी चाहिए। शरीर जितना दे सकता है, उससे उतना ही काम लेता हूँ। आसानीसे उठ सकता होऊँ और दिनमें दूसरा काम हो फिर भी न उठूँ तो यह दोष माना जायेगा।

मथुरादास पुरुषोत्तमको तो काकाने अपने लिए रोक ही लिया है। वह उनके लिए ही लौटकर आ रहा है। इसलिए उसकी आशा न करना।

जयसुखलालकी समस्या कठिन हो गई है। उसके विषयमें मुझे और विचार करना पड़ेगा। मैं जब आऊँगा तब मुझे इसकी याद दिलाना। जयसुखलालको आश्रममें बुला लो।

मेरी तबीयत अच्छी नहीं है, ऐसा कहाँसे सुना? ताँबे जैसी है। इमाम साहबकी गाड़ी धीरे-धीरे चल रही है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

इसके साथ रघुनाथका पत्र है। मुझे लगता है कि उसकी स्त्रीको आने देना चाहिए।

गुजराती (जी० एन० ५४१४) की फोटो-नकलसे।

३३५. पत्र : वसुमती पण्डितको

८ मई, १९२९

चि० वसुमती,

तुम्हारे पत्र मिल गये हैं। कर्त्तव्यका पालन करते-करते मनुष्य धीरे-धीरे उसमें प्रगति करता है। प्रगति होती ही रहेगी, मैं मनमें यही श्रद्धा रखे बैठा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ५०७) से।
सौजन्य : वसुमती पण्डित

३३६. पत्र : सुरेन्द्रको

८ मई, १९२९

चि० सुरेन्द्र,

तुम्हारे पत्रने मुझे आश्चर्यमें डाल दिया है। उसमें गम्भीर विचार-दोष है। तुम्हारे आचरणमें कृत्रिमता है। मनुष्यका स्वाभाविक ढंगसे रहना ही ठीक है। छः फुटका मनुष्य टेढ़ा झुककर पाँच फुटका दिखाई देनेका ढोंग करे तो वह दोष होगा। सच्चा विनीत व्यक्ति हाथीके हौदेपर भी बैठ सकता है और झोंपड़ीमें रहनेवाला दानी भी हो सकता है। जिसे व्रतका बन्धन कष्टप्रद लगता है वह उसे छोड़ सकता है; लेकिन उसके कारण वे दूसरे लोग, जिन्हें उससे आगे बढ़नेमें सहायता मिलती है, व्रत क्यों छोड़ें? सभी किरायेका मकान लेकर रहना चाहें तो मैं क्या करूँ? जब सब लोग दूसरे तरीकेसे न रह सकें तो मुझे क्या करना चाहिए, यह मैं जानता हूँ। किन्तु तुम्हारे जैसा व्यक्ति किरायेके मकानमें रहना चाहे तो मुझे क्या करना होगा, यह विचारणीय हो जाता है। यदि दूसरे सन्तानकी इच्छा करते हैं तो उनका साथ देनेके लिए तुम भी विवाह करोगे और सन्तानकी कामना करोगे?

तुम्हें यह पत्र लिखनेसे पहले मुझसे इन निर्णयोंके बारेमें पूछना चाहिए था। यदि तुममें आश्रमके नियम पालन करनेकी शक्ति न हो तो बेशक तुम किरायेके मकानमें रहो; और यदि उनका पालन करनेकी शक्ति हो, श्रद्धा हो, तो अपनी भूलको स्वीकार करके पत्र वापस ले लो।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–७ : श्री छगनलाल जोशीने

३३७. पत्र : माधवजी वी० ठक्करको

८ मई, १९२९

भाईश्री माधवजी,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। दूध बढ़ानेपर भी भूख जान पड़े तो दो तोले रोटी बढ़ा लेना। वजन बढ़ रहा है इसलिए भूख लगे तो उसकी चिन्ता नहीं करनी है। वजन बढ़ता रहे तो समझना कि ठीक खूराक ले रहे हो। अब तुम्हारी खूराक-की मात्रा यहाँसे निश्चित करनेकी जरूरत नही है। तुम्हारे मार्गदर्शनके लिए खूराककी अधिकसे-अधिक मात्रा नीचे दे रहा हूँ।

दूध ३ सेर[1]=१२० तोला
रोटी १० तोला
मुनक्का ४ तोला
नींबू २ (सोडाके साथ)
सब्जी ५ तोला
बादामकी गिरी १ तोला
हापुस आम २
मक्खन ३ तोला

यह खूराककी ज्यादासे-ज्यादा मात्रा है। तुम्हें आजसे ही इतनी खूराक लेना शुरू नहीं कर देना है। हो सकता है कि इतनी खूराक कभी न ले सको। किन्तु अपने शरीरकी जाँच करके यदि देखो कि मुँहका स्वाद ठीक है, डकारें न आती हों, पाखाना जानेके समय ही हवा निकलती है, किसी और वक्त नहीं, तो तुम धीरे-धीरे ऊपरकी मात्रातक जा सकते हो। अबसे एक-दो बादाम खूब चबा कर खाओ तो कोई हानि नहीं है।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजराती (जी० एन० ६७८०)की फोटो-नकलसे।

१. आशय रतलसे है।

३३८. रमणीकलाल मोदीको लिखे पत्रका अंश

८ मई, १९२९

छगनलालने लिखा है कि मेरे नये विचारके अनुसार तो तुम भी रह जाना चाहोगे। यदि इस प्रकार रह सको तो बहुत ही अच्छा होगा और मुझे भी अच्छा लगेगा। तुम्हारी इच्छा न हो तो ऐसा करना भी जरूरी नहीं है। तारा किसी संस्थामें रहकर किताबी ज्ञान प्राप्त करे, इसमें मुझे कोई बुराई दिखाई नहीं देती। . . .[१] जहाँ भी रहोगे वहाँ काम तो वही करोगे न? आश्रममें कुछ सार होगा तो अन्ततः वहाँ खिंच ही आओगे।

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो–७ : श्री छगनलाल जोशीने

३३९. भाषण : सार्वजनिक सभा, सीतानगरम्‌में

८ मई, १९२९

इस आश्रममें[२] आकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई है। पहले भी मैंने इस आश्रमके बारेमें सुन रखा था। अब मैंने इसके विभिन्न कार्य भी देख लिए हैं और उनसे मुझे पर्याप्त सन्तोष है। आशा है कि इस आश्रमके उपयोगी कामसे आस-पड़ोसके गाँवोंको काफी लाभ पहुँचेगा। मैं तो समझता हूँ कि यहाँ जो सबसे महत्त्वपूर्ण काम हो रहा है वह खद्दरका काम ही है। आस-पड़ोसके गाँवोंमें भी इस दिशामें कुछ काम हो रहा है, लेकिन उनसे और अधिककी आशा है। आपको सदा ही चरखा चालू रखना है, क्योंकि इसीपर आपके देशकी समृद्धि और मुक्तिका दारोमदार है। सेवाके सभी साधनोंमें चरखा ही सबसे अधिक समर्थ साधन है और वह आपको समृद्धिका वचन देता है। आप यदि इस कामको नियमित रूपसे ही करने लगें, तो आश्चर्य-जनक परिणाम हासिल कर सकते हैं। आप सबको इस कार्यमें सहयोग और सहायता करनी चाहिए।

मुझे आशा है कि आप इस दिशामें और अच्छे परिणाम हासिल कर दिखानेमें आश्रमको पूरा सहयोग देंगे और इसकी सहायता करेंगे। आपको अपने बच्चे आश्रममें भेजने चाहिए और इसका ध्यान रखना चाहिए कि उनको आश्रममें वास्तविक शिक्षा मिलती रहे। आपको अपनी पूरी सामर्थ्यसे इस श्रेष्ठ आश्रमकी सहायता करनी चाहिए। आपने शराबखोरीकी बुराईको अपने यहाँसे मार-भगाने और उसके दण्ड-

१. साधन-सूत्रमें जगह खाली है।

२. गौतमी सत्याग्रह आश्रम।

स्वरूप ७,५०० रुपयोंका जुर्माना भरनेका जो साहस दिखाया है, उसके लिए मैं आपको बधाई देता हूँ। ऐसे संघर्ष तो अनिवार्य रूपसे आते ही रहेंगे। साहसपूर्वक उनका सामना कीजिए। स्वराज्य-प्राप्तिके इस विशाल अभियानमें धन तो क्या जीवनकी हानि भी नगण्य है।

मैं खादी-कोषके लिए धन जमा कर रहा हूँ। मै चाहता हूँ कि आप भी मुझे कुछ दें। मैं समझता हूँ कि धनी लोगोंने मुझे कुछ धन दिया है। वे बड़ी-बड़ी राशियाँ दे सकते हैं। लेकिन आप जैसे गरीबोंसे यदि मुझे एक-एक पाई भी मिले, तो मुझे उतनी ही प्रसन्नता होगी जितनी कि बड़ी-बड़ी राशियाँ प्राप्त करके होती है। बिहार और उत्कलमें मैंने पाइयाँ भी चन्देमें ली थीं। उन पाइयोंसे अनेक भूखे ग्रामवासियोंके लिए भोजन तथा वस्त्रोंकी व्यवस्था की गई है और उन ग्रामवासियोंसे कहा गया है कि छोटीसे-छोटी सहायताका भी अपना महत्त्व है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ११-५-१९२९

३४०. गौरवपूर्ण जीवन

'फॉरवर्ड' को स्व० देशबन्धु दासने जन्म दिया था। अपने महान् जन्मदाताके बाद भी इस पत्रने अपने नाम और उनके आदर्शोंको सार्थक करके दिखाया है। अपनी हिम्मत, साहसिकता, साधन-सुलभता और सबसे ऊपर, अपनी निडरताके कारण यह सरकारकी राहका काँटा साबित हुआ है। यही वजह है कि सरकारने इसे भले या बुरे, हर साधनसे मिटा देनेके लिए खासकर चुन लिया था। अपनी खरी-खरी बातोंके कारण और निर्भीकतापूर्वक राष्ट्रके विचारोंको प्रकट करनेकी वजहसे इस पत्र पर मौके-मौकेसे अनेक मुकदमे चलाये गये हैं। लेकिन फिर भी यह जीवित रहा है। अपने मुद्रक और सम्पादकको जेलकी सजा होती रहनेपर और बार-बार मुकदमोंकी पुनरावृत्ति होनेपर भी पत्र मानों और उन्नति करता गया है। लेकिन एक निर्धन समाचारपत्रके लिए खासकर बदलेकी भावनासे प्रेरित होकर की गई क्षतिपूर्तिके फैसलेका मुकाबला करना असम्भव है। न्यायाधीशका फैसला सच्चा हो सकता है, तथापि उनके दिये हुए फैसलेको पढ़कर पाठक उनकी मनोवृत्तिका पता पा सकते हैं। लेकिन यह सच है कि सरकारकी और उसी तरह रेलवे कम्पनीकी कार्रवाई भी दोषपूर्ण थी। अगर यह मान भी लिया जाये कि 'फॉरवर्ड' में प्रकाशित लेख अतिशयोक्तिपूर्ण था, तो भी उसके द्वारा जिन पक्षोंपर आक्रमण किया गया था वे इतने शक्तिशाली हैं कि उनको किसी प्रकारकी आर्थिक क्षति पहुँचनेकी कोई सम्भावना न थी। दूसरे, अगर सचमुच ही उनकी कोई आर्थिक क्षति हुई है तो भी क्षतिपूर्तिकी कोई रकम उसे पूरा नहीं कर सकती। अगर सवाल नैतिक हानिका था, तो मैं यह कहनेका साहस करता हूँ कि जिन मामलोंको लेकर 'फॉरवर्ड' ने अपनी टीका प्रकाशित की थी उनके सम्बन्धमें न तो सरकारकी ही कोई ऐसी प्रतिष्ठा है जो रक्षणीय हो, न

कम्पनीकी ही। चाहे जो हो, अब तो इस बहुमूल्य निर्णयको पाकर उनका आत्मप्रेम अवश्य ही सन्तुष्ट हो चुका होगा।

लेकिन अनिवार्य 'लिक्विडेशन' (दीवाले)की जो अपील की गई है, उससे पता चलता है कि इस अभियोगका हेतु वादीकी क्षतिपूर्ति कराना नहीं, बल्कि प्रतिवादीका सत्यानाश करना था। अगर वे इसीमें सन्तुष्ट हैं, तो भले ही रहें। उन्हें यही मुबारक हो। इसमें शक नहीं कि उनकी यह उड़ान पतनकी निशानी है। जिस 'फॉरवर्ड'को इतनी बेदर्दीके साथ कुचला गया है, वह लोगोंके जीवनमें प्रतिफलित होकर जीवित रहेगा। उसके हाथों सुलगी हुई आग उन हजारों दिलोंमें दूने जोशके साथ भभक उठेगी, जो अब अपने प्रिय पत्रके स्तम्भों द्वारा अपने विचार प्रकट करनेका वैध साधन खो चुके हैं। आन्ध्रके देहातोंकी यात्रा कर रहा होनेके कारण मैं इन घटनाओंका सिलसिलेसे अनुशीलन नहीं कर सका हूँ, फिर भी मै देखता हूँ कि नवजात 'न्यू फॉरवर्ड' के प्रकाशनको रोकनेके लिए भी कुत्सित प्रयत्न किये जा रहे हैं। सम्भव है कि कई विषम कठिनाइयोंके रहते हुए भी जो साधन-सम्पन्न कानूनदाँ लोग बंगालके राष्ट्रीय आन्दोलनको जीवित रखे हुए हैं, वे इस मामलेमें भी सरकारको पीछे छोड़ दें। लेकिन अगर वे सरकारको प्राप्त और उसके द्वारा मनमाने ढंगसे प्रयुक्त कानूनी और विशेष कानूनी अधिकारोंका सफलतापूर्वक मुकाबला न भी कर सकें तो भी सरकारके साथ वीरता और निडरतापूर्वक बराबरीसे लड़नेके लिए देश उनका आभारी होगा। देशमें एक ऐसी भावना जाग्रत हो चुकी है, जिसे दुनियाकी कोई ताकत कुचल नहीं सकती। 'फॉरवर्ड' मर चुका है, 'फॉरवर्ड' दीर्घायु हो।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ९-५-१९२९

३४१. आन्ध्र देशमें [-४]

यात्रा-कार्यक्रम और विभिन्न स्थानोंपर एकत्र किये गये चन्देके विवरणसे देखा जा सकता है कि कार्यका दबाव बना हुआ है, हालाँकि विभिन्न गाँवोंमें जो विविध अनुभव हो रहे हैं और लोगोंमें जो जोश और उत्साह दिखाई पड़ता है उससे मेरा ज्ञान भी बढ़ा है और मेरी आस्था भी दृढ़ हुई है।

चन्देकी कुल रकम जो 'यंग इंडिया' में पहले ही छापी जा चुकी है, १,११,-६५३ रु० ९ आ० ७$\frac{1}{2}$ पा० है।[1]

मुझे यह भी कहना चाहिए कि साथी कार्यकर्त्ताओंमें प्रत्येक कार्यको निश्चित समय पर कर डालनेकी प्रवृत्तिमें बहुत तेजी आई है और उनमें निर्धारित समय-क्रमका पालन करनेकी तो मानों एक सुखद होड़ ही चल रही है। फलतः इस समय हम

१. इसके बाद पश्चिमी गोदावरी जिलेके विभिन्न गाँवोंमें प्राप्त चन्देका ब्योरा दिया गया था। चन्देकी कुल रकम १,५४,९६१ रु० १५ आ० ०$\frac{1}{2}$ पा० थी।

एक्सप्रेस रेलगाडीकी नियमबद्ध गतिसे यात्रा कर रहे हैं और सभाओं आदिके कार्यक्रम निपटा रहे हैं। सुबह या शाम एक गाँवसे दूसरे गाँवको रवाना होनेके निश्चित समय पर देशभक्त कोंडा वेंकटप्पैया और अन्य स्थानीय मित्र हँसते हुए मेरे पास उपस्थित हो जाते हैं। समय-पालनकी इस नियमितता और पहलेकी तुलनामें सभाओंकी अपेक्षाकृत सुव्यवस्थितताके फलस्वरूप हमारा दौरा ग्रीष्मऋतु की इस गरमीमें भी न केवल सह्य बल्कि सुखद भी हो गया है। पुरुष और स्त्रियाँ जिस उत्साहसे अपने रुपये और पैसे देनेके लिए आती हैं उसे देखकर मन आशा और आनन्दसे भर उठता है। मैं ये पंक्तियाँ तुनी नामक एक गाँवमें स्त्रियोंकी एक सभा[1] करनेके तुरन्त बाद लिख रहा हूँ। एक बूढ़ी स्त्री, जो स्पष्टतः गरीब थी और जिसकी उमर लगभग ७५ वर्ष रही होगी, जिसका शरीर तो वर्षोंके बोझसे झुक गया था किन्तु जिसके चेहरे और आँखोंमें आनन्दकी चमक थी, मेरे पास आई और उसने मेरे हाथमें चार आने रख दिये। पैसा देते समय उसकी आँखोंमें, जिन्हें मैं कभी नहीं भूल सकता, किसी प्रकारका दीनताका भाव नहीं था। उसके तुरन्त बाद एक खादीधारिणी प्रौढ़-सी महिलाने मेरे हाथमें ५ रुपये और एक पैसा रखा। मैंने उससे सीधा सवाल किया, "किसका दान ज्यादा बड़ा है, तुम्हारा या इस वृद्ध बहनका?" उसने बिना किसी झिझकके निर्णयके स्वरमें उत्तर दिया, "दोनों बराबर हैं।" मुझे बेहद खुशी हुई। इस उत्तरने मुझे निरुत्तर कर दिया, लेकिन मैं प्रसन्न हुआ। मैं इस बहुत ही बुद्धिमत्तापूर्ण और गहराईमें जाकर सत्यको छू लेनेवाले उत्तरके लिए तैयार नहीं था। उसने आगे कहा, "मैं राष्ट्रीय आन्दोलनमें कई वर्षोंसे रुचि लेती रही हूँ और उसमें अपनी शक्तिके अनुसार मुझसे जितना अधिक बना है सदा दिया है। खादीमें मेरा विश्वास है और मैं हमेशा खादी ही पहनती हूँ।" इस दौरेकी अवधिमें मुझे जो अनेक सुखद अनुभव हुए हैं उनके अक्षय संग्रहसे लिया गया यह केवल एक ही उदाहरण है। ऐसे अनेक उदाहरण मेरे पास हैं, लेकिन अब मुझे अन्य विषयोंकी चर्चा करनी चाहिए।

कार्यकर्त्ताओंकी सभा

तनकूमें और जगहोंकी तरह कार्यकर्त्ताओंकी एक सभा हुई। ऐसी सभा मैं खासकर हरेक जिलेके दौरेकी समाप्ति पर करता हूँ, और उसका समय शामको ३ और ४ के बीचका होता है। इस सभामें कोई १०० कार्यकर्त्ता थे। उसमें हर तरहके सवालोंकी चर्चा हुई। यह एक सवाल तो हर जगह पूछा ही जाता है कि कांग्रेसियोंके ताल्लुका या जिला बोर्डों, नगरपालिकाओं और विधान परिषदों आदिके चुनावोंमें भाग लेनेसे क्या खादी और दूसरे रचनात्मक कार्योंमें बाधा नहीं पड़ेगी। इस सभामें यही सवाल और भी ज्यादा आग्रहके साथ पूछा गया। मेरा अनुभव यह है कि इन संस्थाओंसे हमें जितना लाभ हो सका है उसकी तुलनामें उनपर हमारे अच्छे कार्यकर्त्ताओंकी शक्तिका व्यय कहीं अधिक होता है। यह देखा गया है कि हमारे कुछ

१. २ मईको।

उत्तम कार्यकर्त्ताओंको ज्यादा ठोस काम करनेकी इच्छासे नगरपालिकाओं आदिको छोड़कर बाहर आना पड़ा। इसके सिवाय, इन संस्थाओंमें बहुत सारा राग-द्वेष, लड़ाई-झगड़ा, अपनी मनचाही चीज करानेके लिए पर्देकी आड़में की जानेवाली बहुत सारी खींचतान होती है; अपने स्वार्थोंकी सिद्धिके लिए इतनी ज्यादा कोशिश की जाती है कि ईमानदार कार्यकर्त्ता उनमें बहुत ज्यादा दिनतक नहीं रह सकते। कांग्रेसी लोग इन संस्थाओंमें दिलचस्पी लें, इसके पक्षमें एक कांग्रेसी भाईने उसका एक लाभ यह बताया था कि उनमें कांग्रेसियोंकी उपस्थितिसे हुकूमतके आगे दीनतापूर्वक झुक जानेकी मनोवृत्तिके बदले उसके खिलाफ लड़नेकी स्वस्थ मनोवृत्तिको बल मिलता है। किन्तु कुल मिलाकर मुझे ऐसा लगता है कि यदि लड़नेकी मनोवृत्तिको हम रचनात्मक कार्यका बलिदान करके पैदा कर रहे हैं तो कहना होगा कि हम उसकी बहुत ज्यादा कीमत चुका रहे हैं। इसलिए तनकूकी सभामें मैंने कार्यकर्त्ताओंको सुझाया कि अगर उन्हें यह निश्चय हो गया हो कि चुनावमें भाग लेनेसे या इन संस्थाओंमें दिलचस्पी लेनेसे कोई प्रभावकारी सेवा नहीं की जा सकती तो उन्हें अपने दिमागसे इन संस्थाओं-की बात निकाल देनी चाहिए। यदि कांग्रेसी इन चुनावोंमें कोई हिस्सा न ले रहे होते तो जिस तरह वे इन संस्थाओंकी बात न सोचते उसी तरह उक्त परिस्थितिमें भी उन्हें उनका खयाल अपने मनसे निकाल देना चाहिए। यदि इन संस्थाओंमें जाकर काम करने और रचनात्मक कार्य करनेके बीचमें चुनाव करना ही हो तो इसमें कोई सन्देह ही नहीं है कि रचनात्मक कार्य ज्यादा बड़ी चीज है। आखिर हमारे पास कांग्रेसके कार्यकर्त्ता हजारोंकी तादादमें हैं जबकि इन तथाकथित निर्वाचित संस्थाओंमें हरेक जिलेसे कुछ इने-गिने लोग ही प्रवेश कर सकते हैं। जो लोग उनमें विश्वास करते हैं वे भले उनमें प्रवेश करें, लेकिन जो उनमें विश्वास नहीं करते वे प्रवेश करनेवालोंके प्रति न किसी तरहकी ईर्ष्याका भाव रखें और न किसी तरहकी नाराजी दिखायें।

इस सभामें एक सुझाव यह भी पेश किया गया था कि जिन जिलोंमें सूत काफी प्रमाणमें काता जाता है वहाँसे वह उन जिलोंमें लाया जाये, जहाँ बहुत ज्यादा गरीबी न होनेके कारण सूत कातनेके लिए तो कोई तैयार नहीं होता किन्तु जहाँ ऐसे बुनकर जरूर हैं जिन्हें अगर हाथ-कता सूत दिया जाये तो वे उसकी खादी सहर्ष बुन देंगे। इस सुझावसे मैंने जोरदार असहमति जाहिर की। मैंने कहा, जो जिला सूतका उत्पादन करता है वह जबतक उसका उपयोग कर सकता हो तबतक वहाँसे सूत लाना गलत होता है। सफल हाथकताईका रहस्य ही इस बातमें है कि सारा सूत वहीं बुना जाये जहाँ वह काता जाये। जहाँ स्थानिक बुनकर विदेशी सूत या मिलका सूत बुनते हैं वहाँ उनसे उनका यह धन्धा छुड़वानेमें तबतक कोई जल्दबाजी नहीं होनी चाहिए जबतक कि उसी जगह या उस जिलेमें हाथकते सूतका उत्पादन न होने लगे। अलबत्ता अपनी शक्तिके अनुसार हम हाथकताई करने या यज्ञार्थ सूत कातनेका प्रचार करनेकी पूरी कोशिश अवश्य करें। यदि ऐसा सूत पर्याप्त मात्रामें काता जाने लगे तो उससे किसी भी जिलेके बुनकरोंको काफी काम मिल जायेगा।

एक आदर्श सहकारी संस्था

विजयानगरममें मैंने एक सहकारी खादी संस्था देखी जो अपना काम बहुत सफलतापूर्वक कर रही है और जो अपने क्षेत्रमें मेरे खयालसे सारे भारतवर्षमें अद्वितीय है। मैं नीचे इस संस्था द्वारा दिये गये अभिनन्दनपत्रमें से निस्संकोच एक अंश उद्धृत करता हूँ :[1]

> **हमारे इस भण्डारमें जो भी कपड़ा है वह सारा हमारे द्वारा खरीदे हुए कपाससे बनाया गया है। बाहरसे हमने कुछ भी नहीं मँगाया है। हमने दूसरे प्रान्तोंसे, यहाँ तक कि अपने ही प्रान्तके दूसरे जिलोंसे खादी न मँगानेका संकल्प किया है क्योंकि हमारा विश्वास है कि खादीके ऐसे आयातसे खादीकी प्रगतिकी उसी तरह हानि होगी जिस तरह कि विदेशी कपड़ेके आयातसे होगी।**
>
> **हमारा यह भी विश्वास है कि खादी आन्दोलनका उद्देश्य यह है कि जगह-जगह कताई और बुनाईका ज्यादासे-ज्यादा व्यापक प्रसार किया जाये, और उस जिलेके लोगोंको ज्यादासे-ज्यादा बड़ी संख्यामें रोजगार मुहैया किया जाये। ऐसा किया जाये तो ही खादीका सही विकास होगा। . . .**
>
> **हमारे अमुक कपड़ोंकी कीमतें अखिल भारतीय चरखा संघकी कीमतोंसे छः पाई प्रति गज अधिक हैं। हम आपको अत्यन्त विनयपूर्वक एक पैंट और एक २½ गज चौड़ा तथा ३ गज लम्बा कम्बल दे रहे हैं। ये दोनों चीजें पप्पू जगन्नायाकुलुकी बनाई हुई हैं। यह भाई बुनकर हैं और हमारी संस्थाके संचालक हैं।**
>
> **हम नम्रतापूर्वक प्रार्थना करते हैं कि ये दोनों वस्तुएँ आश्रमके संग्रहालयमें रखी जायें।**

पप्पू जगन्नायाकुलुकी ये दोनों कृतियाँ आश्रमके संग्रहालयमें अवश्य रखी जायेंगी। दोनों अपने ढंगकी बेजोड़ वस्तुएँ हैं। मुझे विजगापट्टममें अपने मेजबान श्री बानोजीराव-से महीन खादीके दो टुकड़े भी भेंटमें मिले हैं। श्री बानोजीराव जमींदार हैं और यह खादी उनकी जमींदारीके एक गाँव बोंटलकोडुरुकी बनी हुई है। ये कपड़े क्रमशः ५३ और ६६ वर्ष पुराने हैं।

मुझे इस आदर्श सहकारी संस्थाके उपनियम प्राप्त हो गये हैं। ये नियम जिस उद्देश्यसे बनाये गये हैं उसे सिद्ध करनेमें समर्थ हैं। उनके अनुसार कातनेवाले और बुनाई करनेवाले लोग संस्थाके सदस्य बन सकते हैं। सदस्योंके लिए संस्थाके द्वारा पैदा की गई खादी खरीदना जरूरी है; इसी प्रकार सदस्य जो सूत कातें या जो खादी तैयार करें उसको उन्हें संस्थाको बेचना चाहिए। इन उपनियमोंमें से 'व्यापार' शीर्षकके अन्तर्गत दिया गया यह अंश मैं यहाँ उद्धृत कर रहा हूँ।[2]

१. यहाँ केवल कुछ अंश ही दिये गये हैं।

२. यहाँ नहीं दिया गया है।

संस्था जो उपयोगी कार्य कर रही है उसके लिए मैं उसे बधाई देता हूँ और आशा करता हूँ कि वह निरन्तर प्रगति करेगी।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ९-५-१९२९

३४२. एक पेचीदा समस्या

रेवरेण्ड बी० द० लिग्टने अपने खुले पत्रमें युद्धके प्रति मेरे दृष्टिकोणके बारेमें एक प्रश्न पूछा है। बिलकुल निस्संकोच होकर मैं इसका उत्तर नहीं दे पा रहा हूँ। लोगों द्वारा गलत समझे जानेका खतरा उठाकर भी चुप्पी साधे रहना मेरे सामने आई इस कठिन परिस्थितिसे निकलनेका एक आसान-सा उपाय है, और यह स्वीकार कर लेना तो और भी आसान होगा कि उल्लिखित अवसरोंपर युद्धमें भाग लेकर मैंने गलती की थी। परन्तु इतने मैत्रीपूर्ण ढंगसे पूछे गये प्रश्नोंके उत्तर देनेसे कतराना एक अमैत्रीपूर्ण व्यवहार होगा, और फिर यह भी है कि यदि मैं हृदयमें कोई पश्चात्ताप महसूस नहीं करता तो मुझे उसका अभिनय नहीं करना चाहिए। मैं इस प्रश्न पर चर्चा करनेसे इसलिए नहीं कतराता कि मेरे अन्दर विश्वासका अभाव है; मैं इस आशंकासे कतरा रहा हूँ कि मै शायद अपना अर्थ ठीक-ठीक नहीं समझा पाऊँगा और तब युद्धके प्रति मेरे दृष्टिकोणके बारेमें लोगोंके दिमागोंपर कुछ ऐसी छाप पड़ जायेगी जैसी कि मैं पड़ने नहीं देना चाहता। बहुधा मुझे लगता है कि मेरी कुछ मूलभूत भावनाएँ भाषाके माध्यमसे पूरी-पूरी अभिव्यक्ति नही पातीं। इसीलिए श्री बी० द० लिग्ट और अपने अन्य युद्ध-प्रतिरोधी सहयोगियोंसे मेरा अनुरोध है कि वे मेरे त्रुटिपूर्ण या अधकचरे तर्ककी चिन्ता न करें और यदि युद्धमें भाग लेनेके मेरे कार्यकी वे युद्ध-सम्बन्धी मेरे विचारोंके साथ पटरी न बैठा पायें तो उसकी भी बिलकुल कोई चिन्ता न करें। बस वे इतना समझ लें कि मैं सभी युद्धोंके सर्वथा विरुद्ध हूँ, हर हालतमें विरुद्ध हूँ। यदि वे मेरे तर्कको समुचित नहीं मान सकते, तो युद्धमें मेरे भाग लेनेको वे मेरी ऐसी कमजोरी मान सकते हैं जो मुझसे अनजाने में हो गई है। इसलिए यदि कोई किसी भी परिस्थितिमें मेरे उस कार्यकी दुहाई देकर युद्धका औचित्य सिद्ध करनेकी कोशिश करेगा, तो मुझे हार्दिक दुख होगा।

परन्तु इतना कहनेके बाद मुझे उस लेखमें[1] रखी गई अपनी बातपर दृढ़ रहना चाहिए जिसे श्री बी० द० लिग्टने अपने पत्रका विषय बनाया है। यूरोपीय युद्ध-प्रतिरोधियोंको यह समझना चाहिए कि मेरे और उनके बीच एक बड़ा महत्त्वपूर्ण अन्तर है। वे शोषित देशोंके प्रतिनिधि नही हैं, जबकि मैं संसारके एक सबसे अधिक शोषित देशका प्रतिनिधि हूँ। उपमा खटकनेवाली तो है, फिर भी कहा जाये तो वे यदि बिल्लीके प्रतिनिधि हैं तो मैं चूहेका प्रतिनिधि हूँ। क्या चूहेको अहिंसाका कोई

१. देखिए खण्ड ३७, पृष्ठ २८१-८३ तथा खण्ड ३६, पृष्ठ ९१-९३ भी।

खयालतक होता है? क्या चूहेके लिए यह एक मूलभूत आवश्यकता नहीं है कि वह युद्धक्षेत्रमें अहिंसाके नियमकी सर्वोपरि सार्थकता, उसकी श्रेष्ठताको सीखनेसे बहुत पहले ही, उसकी बात सोचे बिना ही, सफल हिंसापूर्ण प्रतिरोध करनेकी कोशिशमें लग जाये। फिर क्या चूहोंकी जातिका प्रतिनिधि होनेके नाते मेरे लिए यह जरूरी नहीं हो जाता कि चाहे उनको विनाश न करनेकी श्रेष्ठता सिखानेके लिए ही सही, मैं विनाश करनेकी उनकी इच्छामें उनका साथ दूँ?

बिल्ली और चूहेकी उपमा बस यहीं समाप्त हो जाती है। चूहेमें अपना स्वभाव बदलनेकी क्षमता नहीं होती, परन्तु मनुष्यमें यह क्षमता होती है कि वह जाति या वर्णकी सीमाओंमें बँधे बिना महानसे-महान मनुष्य द्वारा प्राप्त ऊँचाईतक उठ सकता है, फिर वह स्वयं कितना ही खोटा या पतित हो। इसलिए मैं अपने देशवासियों द्वारा महसूस की जानेवाली युद्धकी तैयारीकी आवश्यकतामें काफी दूर तक उनका साथ तो दे सकता हूँ, लेकिन ऐसा मुझे इस पूरी-पूरी आशासे ही करना चाहिए कि एक दिन मैं उनको युद्धसे सचमुच विरत कर सकूँगा और उनको युद्धकी निस्सारता समझा सकूँगा। याद रखनेकी चीज है कि मैं युद्धमें भाग लेता प्रतीत होता हुआ भी अहिंसाका एक बहुत बड़ा प्रयोग कर रहा हूँ, समूची जनता द्वारा बरती जा सकनेवाली अहिंसाका एक इतना बड़ा प्रयोग जितना कि इतिहासमें पहले कभी किसीने नहीं किया था। हो सकता है कि यह प्रयोग कौशलके अभावमें असफल ही हो जाये; पर यूरोपके युद्ध-प्रतिरोधियोंको यह तो चाहिए कि वे अपने कालमें भारतमें होनेवाली इस महत्त्वपूर्ण घटनाको समझनेका हर सम्भव प्रयास करें कि अहिंसाके क्षेत्रमें ऐसा एक साहसपूर्ण प्रयोग वही व्यक्ति कर रहा है जो युद्धकी तैयारी करनेवालोंके साथ भी चल रहा है।

अहिंसाकी योजनाका ही यह एक भाग है कि यदि मैं अपने देशवासियोंको किसी दिन अहिंसाका समर्थक बनाने की आशा करता हूँ तो मुझे उनकी भावनाओंसे भी अनुप्राणित होना चाहिए। उल्लेखनीय तथ्य यह है कि भारतकी जनता और भारतके सुशिक्षित राजनीतिज्ञ भी चाहे-अनचाहे, जैसे भी हो, यह विश्वास करने लगे हैं कि जनताको सदियोंकी गुलामीसे केवल अहिंसा ही मुक्ति दिला सकती है। यह सही है कि अहिंसाके लाजिमी नतीजोंको सभी लोग नहीं समझ पाये हैं। कौन समझ सकता है? मैं शेखी मारता हूँ कि मैं अहिंसाके सत्यको समझता हूँ और यथाशक्ति उसपर अमल करता हूँ, लेकिन मै खुद भी इस सिद्धान्तके लाजिमी नतीजोंको अक्सर पूरी तौर पर नहीं समझ पाता। मनुष्यके हृदयमें चलनेवाली प्राकृतिक प्रक्रिया बड़ी रहस्यपूर्ण होती है और उसकी व्याख्या करना कठिन होता है।

हाँ, इतना मै जानता हूँ कि यदि भारत अहिंसात्मक उपायोंसे अपनी स्वतंत्रता हासिल करेगा तो भारत कभी नहीं चाहेगा कि वह कोई बड़ी भारी थल-सेना और उतनी ही सशक्त नौसेना और उससे भी अधिक शक्तिशाली वायुसेना रखे। स्वतंत्रता-संग्राममें अहिंसात्मक उपायोंसे विजय पानेके लिए जितने ऊँचे स्तरकी आत्म-चेतना दरकार है, यदि भारत उस स्तर तक उठ जायेगा, तो उसकी दृष्टिमें सांसारिक या

भौतिक मूल्य और माप-मान बदल जायेंगे और युद्धकी अधिकांश सज्जा उसे बेमतलब लगने लगेगी। हो सकता है ऐसे भारतकी कल्पना मात्र दिवा-स्वप्न या एक बचकानी बहक भर हो। परन्तु अहिंसाके बलपर भारतके स्वतंत्र होनेका निस्संदेह यही परिणाम होगा — ऐसी मेरी राय है।

यदि कभी स्वतंत्रता मिली, तो वह ग्रेट ब्रिटेनके साथ हमारे सौजन्यपूर्ण समझौतेके फलस्वरूप ही मिलेगी। लेकिन तब ब्रिटेन आज जैसा दम्भपूर्ण, ऐसा साम्राज्यवादी ब्रिटेन नहीं रह जायेगा जो संसारपर प्रभुता जमानेकी साजिशोंमें लगा हो। तबका ब्रिटेन तो पूरी विनम्रताके साथ मानवताके कल्याणके लिए चेष्टारत रहेगा। तब भारत भी शोषणके लिए छेड़े जानेवाले ब्रिटेनके युद्धोंका एक बेबस भागीदार नहीं रह जायेगा; तब उसका स्वर एक ऐसे शक्तिसम्पन्न देशका स्वर होगा जो संसारकी सभी हिंसक शक्तियोंको संयत बनानेकी कोशिशमें लगा होगा।

यह सभी कल्पनाशील विचार कभी फलित हों या न हों, पर मैं तो अपने जीवनकी बाजी लगा चुका हूँ। मैं किसी भी परिस्थितिमें कभी भी ब्रिटेनके युद्धोंमें हाथ नहीं बँटा सकता, और मैं इन पृष्ठोंमें पहले लिख ही चुका हूँ कि यदि भारतने हिंसापूर्ण उपायोंसे स्वतंत्रता हासिल की (जिसे मैं तथाकथित स्वतंत्रता ही कहूँगा), तो मुझे इस देशपर गर्व नहीं रह जायेगा; उस समय मैं नागरिककी हैसियतसे अपनेको मृत मानूँगा। इसलिए शोषणकी खातिर भारत द्वारा छेड़े गये किसी भी युद्धमें प्रत्यक्ष या परोक्ष रूपसे मेरे भाग लेनेका कभी कोई प्रश्न ही नहीं उठ सकता।

परन्तु मैं इन पृष्ठोंमें पहले भी बतला चुका हूँ कि पाश्चात्य देशोंमें युद्धका प्रतिरोध करनेवाले मेरे सहयोगी तो शान्तिकालमें भी युद्धमें हाथ बँटा रहे हैं; सो इस रूपमें कि वे युद्धके लिए की जानेवाली तैयारियोंके लिए धन दे रहे हैं और दूसरी तरह भी उन सरकारोंको बल पहुँचा रहे हैं जिनका मुख्य पेशा युद्धकी तैयारी करना ही है। मैं फिर कहूँगा कि जबतक युद्धके मूल कारणोंको नहीं समझा जाता और उनका सख्तीसे इलाज नहीं किया जाता, उनको सख्तीसे दूर नहीं किया जाता, तब तक युद्धकी कपाल-क्रिया करनेके सभी प्रयास निष्फल सिद्ध होते रहेंगे। क्या आधुनिक युद्धोंका सबसे बड़ा और मूल कारण यही नहीं है कि सभी सबल देश इस धरती पर बसनेवाली अपेक्षाकृत निर्बल जातियोंके शोषणके लिए एक अमानवीय होड़में लगे हुए हैं?

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ९-५-१९२९

३४३. पत्र: छगनलाल जोशीको

९ मई, १९२९

चि० छगनलाल,

चोरीके बारेमें तुम्हारा पत्र मिला। जो चोर बहनोंकी खाटके नीचेसे कुछ ले गया, उसने बहनोंको नुकसान पहुँचाया होगा ऐसा माननेका कोई कारण नहीं है। यह कोई एक ही आदमी है जो हमारी जगहको अच्छी तरह जानता है और ऐसी फुटकर चीजें चुरा कर सन्तोष कर लेनेवाला भी है। मौका लगे तो सब-कुछ उठाकर ले जाये। उसे हमारा डर नहीं रहा। जबतक हमारे बीच किसी-न-किसी तरहका दुराव-छुपाव रहेगा, तबतक ऐसी चोरियाँ होती रहेंगी। कृत्रिमताके सहारे हम अपने बीचसे चोरीका भाव निकाल नहीं सकते। इसलिए हम चौकीदार आदिका प्रबन्ध करके इससे जितना बच सकें, उतना बचकर मनको स्वस्थ रखें। प्रसंग आनेपर हमें दिनमें सोकर रातको जाग सकना चाहिए और इसपर स्वास्थ्य भी ठीक रहे। बहनें डर तो नहीं गईं?

मेरे बारेमें स्वप्न आया; उसका कुछ अर्थ नहीं है। मेरा स्वास्थ्य बहुत अच्छा है और अब तो बहुत कम दिन बाकी रह गये हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५४१५) की फोटो-नकलसे।

३४४. भाषण: सार्वजनिक सभा, पोलावरम्‌में

९ मई, १९२९

मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि मैं इस सुदूरवर्ती पहाड़ी इलाकेमें आ पाया हूँ, जहाँ हिन्दुस्तानके कार्यकर्त्ता आसानीसे नहीं पहुँच पाते। हालात बदल जानेके कारण, मेरा यहाँ पहुँच पाना कठिन हो गया था। मैंने सुना है कि मुझे (पुरुषोत्तापटनममें) नदीके पार लानेको तैयार होनेवाले नाविकको पुलिसने धमकाया था जिससे उसने नावपर आनेसे मना कर दिया था, लेकिन पुलिसकी धमकियों और तंग करनेके बावजूद वाष्प-चालित नौकाके मालिक श्री चुरुकुवाडा रामस्वामीने मुझे यहाँ लानेकी कृपा की। मनुष्यों द्वारा संचालित सरकार और उसके कारिन्दे दोनों मिलकर अनेक प्रकारकी बाधाएँ उत्पन्न करनेके अनेक तरीके निकाल सकते हैं, लेकिन समस्त संसारका संचालन करनेवाला, ब्रह्मांडका स्वामी उनको नाकाम कर देता है। यदि ईश्वरका वरद-हस्त हमारे सिरपर हो, तो सब ठीक हो जाता है। मुझे इसका पूरा भरोसा है। ईश्वर नहीं चाहता कि हम लम्बे कालतक कष्ट पाते रहें। मेरा बहुत पक्का

विश्वास है कि शीघ्र ही हम सब सुखी हो जायेंगे। मैं चाहता हूँ कि आप इससे सबक हासिल करें। आपको किसी भी मनुष्यसे डरने या भय खानेकी कोई जरूरत नहीं। ईश्वरके अतिरिक्त किसीसे भय मत खाइए। पुलिस कर ही क्या सकती है? आखिर उनकी ताकतका इस्तेमाल हमारी देहपर ही तो हो सकता है, आत्मापर तो नहीं। वे हमारे खिलाफ जो-कुछ भी कर सकते हैं, उससे उत्तेजित होकर हमें बदला लेनेकी बात नहीं सोचनी चाहिए। रामकी कथा बतलाती है कि रामने रावणका बुरा नहीं किया। रावणने खुद ही अपने दुष्कर्मोंसे अपनी बर्बादी बुलाई थी। आपको जिस चीजकी जरूरत है, वह है निर्भीकता; लेकिन आपको अपने मनमें किसीके प्रति दुर्भाव या प्रतिशोधकी भावना पनपने नहीं देनी चाहिए। आपकी आत्मा शुद्ध, शरीर और मन निर्मल रहना चाहिए। आपको ताड़ी आदिसे दूर रहना चाहिए। यदि आपको लगे कि आपकी आय दिन-दिन घटती जा रही है तो आपको चरखा चालू करना चाहिए।

आप हिन्दू हों या मुसलमान या ईसाई या अन्य कोई, सबको भाईचारेसे रहना चाहिए। मैं आपसे यही कहने यहाँ आया हूँ। आप इन बातोंको याद रखिए। यदि हम दूसरोंसे भय खायें, तो हम कुछ भी नहीं कर सकते और हमारा जीना व्यर्थ है। ईश्वरकी इस सृष्टिमें ऊँच और नीचका कोई भेद नहीं। ईश्वरने सबको बराबर बनाया है। यहाँसे थोड़े ही फासलेपर डा० सुब्रह्मन्यम द्वारा संस्थापित एक सत्याग्रह आश्रम है। मैंने सुना है कि यहाँ पोलावरम्में एक दूसरा आश्रम स्वराज्य आश्रम भी है। आप सब इन दोनों आश्रमोंका लाभ उठा सकते हैं। इनमें लड़कोंको शिक्षित किया जाता है और कताई तथा अन्य काम और अच्छी आदतें सिखाई जाती हैं। इन संस्थाओंकी सहायता करके भारतके सपूत बनिए।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ११-५-१९२९

३४५. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

कावली
१० मई, १९२९

प्रिय जवाहर,

कमला और कृष्णा, इन दोनोंपर रोगके जिस भयंकर आक्रमणका तुमने विवरण दिया है, उसका तुम्हारे दिमागपर कितना बोझ होगा। मेरा खयाल है कि इन घरेलू संकटोंको भी राष्ट्रीय अनुशासनका ही एक अंग मानकर लेना चाहिए। मुझे खुशी है कि कृष्णाको आपरेशनकी जरूरत नहीं है।

तुम्हें शायद पता न हो कि आन्ध्र देश अपने प्राकृतिक चिकित्सकोंके लिए प्रख्यात है और उनमेंसे कुछ तो सचमुच बहादुर मनुष्य हैं, बहादुर इस अर्थमें कि वे कीमतकी

परवाह किये बिना अपनी खोज अनवरत जारी रख रहे हैं। जहाँ अन्य सभी उपाय विफल हुए हैं, ऐसे बहुतसे मामलोंमें यह इलाज सफल हुआ है, और इसका गुण यह है कि यह अत्यन्त सादा इलाज है और जिन मामलोंमें लाभ नहीं होता उनमें भी इससे कोई हानि नही पहुँचती। मै चाहूँगा कि तुम अपना ध्यान इस चिकित्साकी ओर दो। बेशक, इस पद्धतिमें आहार-संयमका बहुत ज्यादा महत्त्व है; और जिन मामलोंमें रोगी लोग आहार-संयम नहीं बरतते उनमें इलाज व्यर्थ हो जाता है।

मै मान रहा हूँ कि अ० भा० कांग्रेस कमेटीकी बैठक स्थगित करनेकी बंगालकी इच्छाके बावजूद उसकी बैठक सूचित की गई तारीखको ही होगी।

अल्मोड़ाके सम्बन्धमें तुम्हारा तार मिला। मै १० जूनके बाद आश्रमसे निकलनेकी आशा करता हूँ ताकि १५ तारीखको अल्मोड़ा पहुँच जाऊँ।

हाँ, संयुक्त प्रान्त और पंजाब और दिल्लीके दौरेके लिए तुम मुझे पूरे सितम्बर और अक्टूबरके लिए ले सकते हो, बशर्ते कि अक्टूबरकी भी आवश्यकता हो। इलाहाबाद नगरपालिकाके बारेमें तुम्ही निर्णय कर लेना। अभिनन्दनपत्रोंसे मेरा जी भर गया है। इसलिए इसमें कोई राजनीतिक या कोई अन्य लाभ होनेकी सम्भावना हो तो तुम उसे मेरी तरफसे स्वीकार कर लेना। यदि मुझे नगरपालिकासे कोई पत्र मिला भी है तो उसकी मुझे सुध नहीं है।

आन्ध्र प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीने इस आधारपर जूनतक समय बढ़ानेका अनुरोध किया है कि अधिकांश कांग्रेस कार्यकर्त्ता अपने-अपने जिलोंमें दौरेकी तैयारियोंमें लगे हैं और इसलिए मैं जो सूचनाएँ चाहता हूँ उन्हें भेजनेमें असमर्थ हैं। यह तथ्य स्वयंमें उस अराजकताका प्रमाण है जो हमारे अपने घरमें फैली हुई है, क्योंकि जो चीज मैं सारे आन्ध्रमें देखता हूँ वह लगभग अन्य सभी प्रान्तोंके मामलेमें भी सही है।

मुझे उत्कलसे कोई भी सन्तोषजनक परिणाम नहीं मिल सका है।

तमिलनाड (प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी)के मन्त्री इतवारको मुझसे नेल्लोरमें आकर मिलेंगे ऐसी आशा है।

बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके हिसाबकी परीक्षाके लिए मैंने रामजीभाईके बजाय घनश्यामदास बिड़लाको एक प्रसिद्ध लेखा-परीक्षक ढूँढ़नेको कहा है।[1]

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९२९।
सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

१. देखिए "पत्र: घनश्यामदास बिड़लाको", ८-५-१९२९।

३४६. महादेव देसाईको लिखे पत्रका अंश

शुक्रवार, १० मई, १९२९

आश्रमके विषयमें तुम्हें जो प्रस्ताव पेश करने हों या फेरफार करने हों उन्हें साहसपूर्वक पेश करो। मैं भी आश्रम चलानेमें यही बात करता रहा हूँ न? जिन्हें काम सौंपता हूँ, उन्हें अपनी शक्ति और इच्छाके अनुसार काम करने देता हूँ और उनके काममें दखल नहीं देता। इस प्रकार आश्रमके रूपमें हम विशुद्ध 'डेमोक्रेसी' (प्रजातन्त्र)का प्रयोग कर रहे हैं। यह बहुत जल्दीमें लिख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो-७ : श्री छगनलाल जोशीने

३४७. भाषण: सार्वजनिक सभा, बुचिरेड्डीपालममें[1]

१० मई, १९२९

मुझे सूचना मिली थी कि बुचिरेड्डीपालम पूरे आन्ध्र देशमें सबसे अधिक समृद्ध नगर है। सरकारकी भाँति मेरे भी अपने गुप्तचर हैं। (हँसी) सरकारके सद्गुणोंका, —यदि उसमें सचमुच कोई सद्गुण हैं—मैं चाहे अनुसरण न भी कर पाऊँ पर इस मामलेमें कमसे-कम उसकी बुराइयोंको तो अपना ही सकता हूँ। मेरे गुप्तचरोंने मुझे पूरा यकीन दिला दिया है कि इस नगरसे मुझे कमसे-कम दस हजार रुपये मिलने ही चाहिए। अत: आप लोगोंको बकाया राशि भर देनी चाहिए। मैं तो भारतके करोड़ों भिखमंगोंकी ओरसे एक भिक्षुक ही हूँ और मै उस दरिद्रनारायणके लिए भिक्षा माँगता फिर रहा हूँ जो तबतक सन्तुष्ट नहीं होगा जबतक आप अपनी शक्तिभर दान नहीं देंगे। मैं १९२१में नेल्लोर आया था और आप सब लोगोंको शायद दक्षिणा-मूर्ति हनुमन्त राव नामक व्यक्तिका स्मरण होगा, जो मेरे लिए पुत्रवत् था और जिसके प्रयासके फलस्वरूप ही पल्लिपाडका सत्याग्रह आश्रम शुरू किया गया था। उसने अपना सारा जीवन इसीके लिए उत्सर्ग कर दिया। मैंने स्वयं अपनी आँखोंसे देखा है। मैं इस बातका गवाह हूँ कि उसने पल्लिपाडमें अस्पृश्यताकी समस्याके हलके सिलसिलेमें वहाँ सत्याग्रह किया था। मैंने अबतक श्री सी० वी० कृष्णके अतिरिक्त अन्य किसी भी व्यक्तिको आश्रममें दिलचस्पी लेते और उसके लिए लगातार काम करते नहीं देखा। मेरी बड़ी कामना है कि हनुमन्त राव द्वारा शुरू की गई संस्थाको

१. सभामें गांधीजीको सात हजार रुपयोंकी थैली भेंट की गई थी।

चालू रखा जाये। इसके लिए कार्यकर्त्ता दरकार हैं। इसलिए आप लोगोंमें से ही कुछको कार्यकर्त्ताओंके रूपमें आगे आकर आश्रममें शामिल होना और उसके कामको आगे बढ़ाना चाहिए।

आप महिलाओंसे मेरा अनुरोध है कि आप इस देशमें रामराज्य लानेमें सहायता दें। आप जानती ही हैं कि आप जबतक सीताकी तरह आचरण नहीं करेंगी तबतक आप देशकी आवश्यकताकी पूर्ति नहीं कर पायेंगी। आपके पति और आपकी मातृभूमि स्वतन्त्र नहीं हैं, इसलिए आपके आभूषण हीरे-जवाहरात नहीं हैं। स्त्रीका आभूषण, उसकी शोभा तो उसके हृदयकी पवित्रता ही है, आपका आभूषण तो मातृभूमिके प्रति आपका प्रेम ही हो सकता है। इसलिए अपने हृदय पवित्र रखिए और अपनी भूखसे मरती बहनों तथा भाइयोंकी खातिर अपने जेवरात त्याग कर उनके लिए काम जुटाइए।

आपके यहाँके संघ द्वारा मुझे भेंट किये गये मानपत्रसे मुझे मालूम हुआ है कि आप अपनी सड़कोंको साफ-सुथरी और अच्छी हालतमें रखते हैं। यदि यह सच है, तो मुझे आपको बधाई देनी चाहिए। लालाजी-स्मारक और खादी-कोषके लिए भेंट की गई आपकी थैलियोंके लिए मैं आपका बड़ा आभारी हूँ। मुझे आशा है कि इस नगरसे मेरे प्रस्थान करनेके समयतक आप थैलीकी राशिको दस हजारतक पहुँचा देंगे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ११-५-१९२९

३४८. भाषण: कावलीकी सार्वजनिक सभामें

१० मई, १९२९

आपकी थैली और मानपत्र और वस्त्रोंकी भेंट पाकर मुझे बड़ी खुशी हुई है। भेंटमें दिये हुए ये वस्त्र बड़े ही उत्तम हैं। ये सब दरिद्रनारायणके लिए ही दिये गये हैं। आप तो जानते ही हैं कि मैं इन वस्त्रोंको स्वयं नहीं पहन सकता। इसीलिए मैं इनकी बिक्री करके दरिद्रनारायणके लिए जितना भी धन जमा कर सकता हूँ, करूँगा। मैं देख रहा हूँ कि यहाँ आप काफी महीन वस्त्र बुन सकते हैं। मेरी हार्दिक इच्छा है कि आप विदेशी वस्त्रोंको त्याग दें और स्वदेशीको अपना लें। आपके ताल्लुका-मंडलको खद्दरका प्रचार करनेका प्रयास करना चाहिए। मानपत्रमें कहा गया है कि उसके उत्पादनके लिए कोशिश की जा रही है। यदि आप डटकर कोशिश करें तो इसमें कोई कठिनाई नहीं पड़ेगी। आपको शराबखोरीकी बुराई दूर करनी चाहिए। हिन्दुओं, मुसलमानों और ईसाइयों — सभीको कंधे-से-कंधा मिलाकर काम करना चाहिए, क्योंकि मातृभूमिकी सेवामें जाति-भेद कोई अर्थ नहीं रखता। अस्पृश्यताको भी उखाड़ फेंकना चाहिए। यह हिन्दू-धर्मका कलंक है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १४-५-१९२९

३४९. पत्र : माधवजी वी० ठक्करको

[१० मई, १९२९ के पश्चात्][1]

भाईश्री माधवजी,

तुम्हारा १० तारीखका पत्र मिल गया है।

सोडा नींबूके साथ ही लिया जा सके, ऐसी कोई बात नहीं है। सोडा और नींबू एक साथ लेनेका सुझाव इस कारणसे दिया था कि उससे अन्न पचानेवाला पेय पदार्थ प्राप्त हो जाता है; किन्तु अम्ल पदार्थ चूँकि तुम्हें माफिक नहीं आता इससे नींबू अलग लेनेका सुझाव दिया है। फिर भी शाकके साथ नींबू जरूर ले सकते हो और सोडा अलगसे पानीमें मिलाकर ले सकते हो।

हापुस आमका सुझाव भी खटाईसे बचनेकी खातिर दिया है। लँगड़ा ले सकते हो। इस समय एक या दो आम लेनेसे कोई हानि नहीं होगी। प्रयोग करना चाहो तो करके देखो।

मक्खन दो-एक सप्ताह न लेना ही अच्छा है। मक्खन अच्छी डेरीका हो या घरमें निकाला हुआ हो तो दोनोंमें अन्तर नहीं होता, होना नहीं चाहिए। घरमें निकाले हुए मक्खनमें खटास हो तो उस हदतक वह सदोष माना जायेगा।

तुम्हें आजकल नींद आती है, इतना ही काफी है।

मक्खन रोटीके साथ खाया जा सकता है; दूधमें डालकर भी लिया जा सकता है।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजराती (जी० एन० ६७८३) की फोटो-नकलसे।

३५०. पत्र : मीराबहनको

११ मई, १९२९

चि० मीरा,

मैं आबादीसे दूरके एक स्थानमें पंखेके नीचे हूँ। परन्तु हवा गरम चल रही है, और हमें ८० मीलकी यात्रापर साढ़े ५ बजे रवाना हो जाना है। इमाम साहबके स्वास्थ्यने लगभग जवाब दे दिया है। वह किसी तरह अपनेको खींचे चल रहे हैं। प्रभावतीपर भी गरमीका प्रभाव हो रहा है। मैं प्रार्थना कर रहा हूँ कि इन आखिरी दस दिनोंमें हम टिके रहें। आशा है रुके रहनेके आघातके असरसे अब तुम

१. यह माधवजीके १० मई, १९२९ के पत्रके उत्तरमें लिखा गया था।

मुक्त हो गई होगी। बम्बईका मिलन और भी सुखद होगा। मैं खुद बहुत अच्छी हालतमें हूँ, क्योंकि मुझे जो जरूरत होती है उसे पूरी करनेका आग्रह रखता हूँ।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५३७४) से।
सौजन्य : मीराबहन

३५१. पत्र : छगनलाल जोशीको

११ मई, १९२९

चि० छगनलाल,

यह पत्र नेल्लोरसे दूर एक स्टेशनसे लिख रहा हूँ। तुम्हारा ७ तारीखका पत्र मेरे सामने है।

आश्रमवासियोंकी बैठक करना ठीक लगे तो जरूर बैठक कर लो। मैं वहाँ २८ मईसे लेकर १० जूनतक तो रहूँगा ही; ऐसा मैंने सोचा है। इस बीच तुम विचार कर जो तारीख निश्चित करना चाहो कर लेना। किन्तु इस समय बैठक बुलानेकी योग्यताका विचार भी कर लेना। तुम कार्यकर्त्तागण किस स्थितिमें हो और क्या चाहते हो, असली बात तो इसका विचार करना है। इसमें तुम्हारी मदद कौन कर सकता है? किन्तु जो तुम सबको अच्छा लगे वही करना।

भगवानदास पागल है, यह मैं कबका जानता हूँ, और कभी-कभी उसे कुछ लिख भी देता हूँ।

रामाश्रमके १२५ रुपयोंके बारेमें जैसा तुमने लिखा है वैसा करना।

फिलहाल जगजीवनदासको यही लिखना कि यह पैसा हाथ नहीं आया। तुम रेवाशंकरसे पूछ लेना कि उसका क्या हुआ है।

रणछोड़भाईकी मिलमें दूध जाने लगा है, यह तो बहुत अच्छा हुआ।

साखी गोपालको मैंने अपने पास रख लिया है। इसके बारेमें तार कर दिया है। सब कुछ ठीक लगे तो मरम्मतके लिए पैसा भेजनेके लिए वल्लभभाईको लिखूँगा। विधवाओंके लिए उन्होंने जितना पैसा माँगा है, उतना भेज देना। जगन्नाथ रथका पत्र वापस भेज रहा हूँ। खादीका विवरण वहाँ देख लेना और मेरे लिए उसपर टीका तैयार करनी हो तो मेरे लौटनेसे पहले उसे तैयार कर रखना। कोई जानकार ही उसपर टीका तैयार करे।

महादेव रोजमर्राके काम करता है, इससे उसकी शक्ति क्षीण होनेका तनिक भी भय नहीं है। ये काम उससे कराये जाते हैं, इससे तो उसकी शक्ति बढ़ी ही है। रोजमर्राके कामोंसे विचारोंमें दृढ़ता और स्पष्टता आदि आ जाती है। जो केवल

विचार करे और उसपर अमल न करे उसकी भाषामें सच्चा जोर नहीं हो सकता। इसका उदाहरण इन्दौरके टिकेकरका चरखा सम्बन्धी लेख है। इसके बारेमें न मालूम हो तो मुझसे पूछना। जानने योग्य वस्तु है।

प्रेमराजको जबलपुर जानेके लिए लिखकर ठीक ही किया।

राधाको भेजनेसे पहले मथुरादाससे पूछ लिया होगा?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५४१६) की फोटो-नकलसे।

३५२ पत्र: घनश्यामदास बिड़लाको

११ मई, १९२९

भाई घनश्यामदासजी,

लालाजी स्मारकके बारेमें आपके तरफसे पत्र आया है। लाल जसवंतरायके पैसे हालके ही लीये होंगे। इस बारेमें जितने पैसे आये हैं सोसायटीको भेजना उचित समजता हुं। और तो इस बारेमें लीखनेका नहिं है।

इस बखत मैं खोराकका एक प्रयोग कर रहा हुं। इसको तीन ही दिन हुए हैं इसलीये कुछ कह नहिं सकता। परंतु एक सज्जन मीला है जिसने कहा है यह प्रयोग बहोत सफल होता है। इसका रहस्य तो यह है की सब खोराक वगैर पकाया हुआ खाना चाहीये।

सीतारामजीका खत मुझे मीला था। उत्तर दीया है।

आपका,
मोहनदास

सी० डब्ल्यू० ६१६८ से।
सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

३५३. पत्र : गंगादेवी सनाढ्यको

११ मई, १९२९

चि० गंगादेवी,

तुमारा और तोतारामजीका खत मीला है। तोतारामजीकी आंते अच्छी हो गई वह बहोत ठीक हुआ। अब बिगड़ने न दें। सूर्य स्नानको कभी न छोड़ो। मुझे तो विश्वास है कि तुमारा दर्द प्राकृतिक उपायसे हि मीट सकता है मीटे नहिं तो अंकुशमें रह सकता है; दवाईयोंसे कभी नहिं। तुमारा खाना तो ठीक सादा ही होना चाहीये, ज्यादा भी नहिं। शारीरिक परिश्रम बहोत कम उठाना।

बापुके आशीर्वाद

जी० एन० २५४६ की फोटो-नकलसे।

३५४. विदेशीकी व्याख्या

एक सज्जन पूछते हैं:

हम सभी विदेशी वस्तुओंका बहिष्कार करें या कुछ एकका?

यह प्रश्न कई बार पूछा गया है और इसका उत्तर भी मैं कई बार दे चुका हूँ। फिर भी यह प्रश्न सिर्फ एक ही सज्जनने नहीं पूछा है। इस सफरमें, मैं जहाँ-जहाँ जाता हूँ लोग हर जगह यही प्रश्न करते हैं।

मेरे विचारमें, जिस चीजका आग्रहपूर्वक, अचूक और कष्ट सहकर भी त्याग करना उचित है, वह तो केवल सभी प्रकारके विदेशी वस्त्रोंका त्याग ही है। यह बहिष्कार खादी द्वारा ही हो सकता है और यही उचित भी है।

प्रत्येक विदेशी चीजका त्याग करना असम्भव है, अयोग्य है। स्वदेशी और विदेशीके बीचका भेद न तो स्थायी है और न सब चीजोंके विषयमें उसका पूरा-पूरा पालन किया जा सकता है। खादीका स्वदेशीपन परिस्थिति सापेक्ष है। अगर भारतमें जलप्रलय हो जाये, वह एक द्वीप-मात्र रह जाये, उसमें थोड़े ही लोग बच रहें, पृथ्वी पर एक भी पेड़ न रहे तो ऐसे समय उस द्वीपमें रहनेवालोंका स्वदेशी धर्म यही है कि लोग उन्हें जो कपड़े पहननेको दें, वे उन्हें पहनें और समुद्रपारसे कोई उदारचित्त आदमी जो अन्न भेजे, उसे खायें। यह तो मैंने एक आत्यन्तिक दृष्टान्त दिया।

अब हमें यह विचार करना है कि इस समय हमारा स्वदेशी धर्म क्या है। देशमें आजकल विदेशोंसे ऐसी अनेक चीजें आती हैं, जिन्हें हम काममें लाते हैं, जो हमपर जबर्दस्ती नहीं लादी जातीं, जो हमारे निर्वाहके लिए जरूरी हैं। मसलन, अनेक विदेशी औषधियाँ, आलपीनें, सुइयाँ, कई तरहके उपयोगी औजार वगैरा।

लेकिन जो लोग खादी पहनते हुए भी दूसरी सब विदेशी चीजें खरीदनेमें बड़प्पन मानते हैं अथवा ऐसा करते हुए जिन्हें संकोच नहीं होता, वे खादीके रहस्यको नहीं जानते। खादीका रहस्य तो यह है कि जो चीज इस देशमें सहज ही बन सकती है और बनती भी है, जिससे गरीबोंका पेट पलता है, उस स्वदेशी चीजका उपयोग करना हमारा धर्म, और उसे छोड़कर उसकी जगह इच्छापूर्वक विदेशी चीजका उपयोग करना अधर्म है।

जिसे देशके प्रति सच्ची लगन है, जो गरीबोंसे प्रेम करता है, वह अपने कामकी तमाम चीजोंके बारेमें विचार करेगा और जहाँ-जहाँ अपने भोगके लिए अबतक अधिक सुन्दर प्रतीत होनेवाली विदेशी चीजोंको काममें लाता आया है, अबसे आगे उनकी जगह देशी चीजोंका उपयोग करेगा।

इस सफरमें ही मैं देखता हूँ कि लोग मेरे उपयोगके लिए विदेशी साबुन खरीदते हैं। मद्रास, मैसूर, बम्बई, बंगाल, और दूसरी कई जगहोंमें बनाये जानेवाले साबुनोंमें से कोई भी साबुन मेरे लिए नहीं खरीदते। खूबी यह है कि यह विदेशी साबुन खरीदकर लानेवाले सज्जन खादीधारी होते हैं। आजकल केवल प्रचारको ध्यानमें रखकर मैं जहाँ जाता हूँ वहाँ खादीधारी नाई बुलवाता हूँ। ऐसे नाईके मिलनेमें थोड़ी कठिनाई होती है। लेकिन उसके पास भी बहुत-कुछ सामान विदेशी ही होता है; विदेशी उस्तरा, विदेशी ब्रुश, विदेशी साबुन और विदेशी आईना इत्यादि, और यह सारा विदेशी सामान विदेशी पेटीमें ही सजाया हुआ! इसलिए मुझे खादीधारी नाईको अपना मामूली साज-सामान देना पड़ता है और उसे स्वदेशी धर्म समझाना पड़ता है। मैं अपने ऐसे कई अनुभव यहाँ लिख सकता हूँ। आजकल हमारे देशमें स्याही, पेन्सिल आदि चीजें बनती हैं। विचारवान लोग ऐसी चीजोंकी खोज करें और जहाँतक हो सके देशमें बनी हुई चीजें ही काममें लायें। लोगोंके इस कथनमें सार हो सकता है कि देशमें बनी हुई सब चीजें अच्छी नहीं होतीं। लेकिन ऐसा कोई धर्म नहीं, जिसके पालनमें कठिनाई न होती हो। जिस कामके करनेमें कठिनाई न होती हो उसके पालनकी कीमत ही क्या हो सकती है? जब समझदार आदमी इच्छापूर्वक, कष्ट सहन करके भी स्वदेशी वस्तुका उपयोग करेंगे तभी वे ऐसी कठिनाइयोंको दूर करा सकेंगे। मैं देशी साबुनका उपयोग करूँ, उसमें दोष देखूँ, और उसके बनानेवालेका ध्यान उस ओर खींचूँ तो सम्भव है कि वह उस दोषको दूर करनेका प्रयत्न करे। इसी तरह चीजोंकी बनावट और उनके आकार-प्रकारमें सुधार हुए हैं और होते हैं।

यहाँ एक बातपर विचार कर लेना जरूरी है। विदेशीसे मतलब अंग्रेजीका है या हिन्दुस्तानसे बाहरकी सब चीजोंका? मुझे मालूम है कि देशमें इस बारेमें मतभेद है। इस समय मैं इस प्रश्नपर अहिंसाकी दृष्टिसे चर्चा करना नहीं चाहता। मैं तो व्यावहारिक दृष्टिसे ही विचार करना चाहता हूँ। जिस कामको हम न कर सकते हैं, न कर सकेंगे उसे करनेकी धमकी देना अपनी कमजोरीका प्रदर्शन करना है। मेरे विचारमें हम कई अंग्रेजी वस्तुओंका उपयोग अनिच्छासे ही क्यों न हो, लेकिन करते हैं। जो सज्जन हिन्दुस्तानके आयातके आँकड़े पढ़ेंगे उन्हें मालूम होगा कि सरकार

करोड़ोंका अंग्रेजी माल खुद ही इस देशमें लाती है और हम उसका उपयोग भी करते हैं। मसलन, रेलकी पटरियाँ और रेलगाड़ीका बहुत-सा दूसरा सामान। अंग्रेजी पुस्तकोंका उपयोग तो हम स्वेच्छासे करते ही हैं। व्यवहार-दृष्टिसे दूसरी बात यह है कि अंग्रेजी और विदेशीका भेद करनेपर सम्भव है कि दूसरी विदेशी चीजोंके नाम पर अंग्रेजी चीजोंका उपयोग होने लगे। पहले यह हो चुका है, अब भी हो सकता है। अंग्रेजी पेन्सिल पर 'आस्ट्रियामें बनी हुई' लिखनेसे अंग्रेज बनानेवालेको कौन रोक सकता है, अंग्रेजी छाप फाड़कर कई देशद्रोही बजाजोंने विलायती धोतियाँ स्वदेशी-के नामपर बेची हैं। जापानके रास्ते अंग्रेजी कपड़ेको जापानी नामसे आते हुए कौन रोकेगा? तीसरे, अंग्रेजी वस्तुओंको छोड़कर दूसरी विदेशी चीजोंको देशमें आने देनेसे हम देशका कोई लाभ न कर सकेंगे। और आखिर इस दूसरे विदेशी मालके बहिष्कारका नये सिरेसे प्रयास करना पड़ेगा और फिर वह मुश्किल भी हो जायेगा। हमारा उद्देश्य स्वराज्य है, स्वतन्त्रता है। अंग्रेजी राज्यसे मुक्त होनेके बाद हम किसी दूसरे राज्यकी अधीनता नहीं चाहते। यों सब तरह विचार करनेपर व्यवहार-दृष्टिसे कोई एक निश्चय करना ही उचित मालूम होता है।

शुद्ध खादी शुद्ध स्वदेशी है, जो इस धर्मको समझता है वह अपनी दूसरी जरूरतें भी देशमें बनी हुई चीजोंसे पूरी कर लेगा, और जो चीजें देशमें न बनती होंगी उनमेंसे अनावश्यक चीजोंको काममें लाना छोड़ देगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १२-५-१९२९

३५५. पत्र : मीराबहनको

नेल्लोर
१३ मई, १९२९

चि० मीरा,

मुझे उम्मीद है कि तुम्हारे पास जो ब्योरेवार कार्यक्रम भेजा गया था, वह तुम्हें जरूर मिल गया होगा। आज तुम्हारा कोई पत्र नहीं आया। आशा है विद्यापीठमें तुम्हारे पास खूब मनोनुकूल कार्य होगा।

द लिग्टकी दूसरी खुली चिट्ठी 'यंग इंडिया' में छप चुकी है। उसके उत्तरमें लिखे मेरे लेखपर[1] तुम्हारी आलोचना जानना चाहता हूँ। मैंने अपने खानेमें परिवर्तन किया है। उसका वर्णन इसलिए नहीं कर रहा हूँ कि हम जल्दी ही मिलेंगे। यह परिवर्तन मैंने केवल प्रयोगके तौरपर इसलिए किया है कि वह मुझे पसन्द है और

१. देखिए "एक पेचीदा समस्या", ९-५-१९२९।

मुझे ऐसा आदमी मिल गया है जिसे इस चीजका पूरा ज्ञान है। अलबत्ता, इसमें कोई चिन्ता करनेकी बात नहीं है। अगर यह मुझे माफिक नहीं आया तो छोड़ दूँगा।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५३७५) से।
सौजन्य : मीराबहन

३५६. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

नेल्लोर
मौनवार, १३ मई, १९२९

बहनो,

अब हमारे मिलनेमें थोड़े ही दिन बचे हैं। वहाँकी तरह यहाँ भी गरमी बढ़ती जा रही है। वैसे, मुझे तो बहुत नहीं मालूम होती। तुम प्रार्थना वर्गको, बाल मन्दिरको और पाठशालाको आग्रहपूर्वक चला रही हो, इसमें कल्याण दिखाई देता है। ये सब अपूर्ण हैं, सदा ही अपूर्ण रहेंगे। मगर हम जागृत रहकर उनमें सुधार करते रहें तो काफी है। उन्हें टूटने न दें तो इसीमें कुछ-न-कुछ सुधार हो जाता है। बहनोंकी प्रार्थनाके श्लोक सब बहनोंको ठीक अर्थ सहित सीख लेने चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६९८)की फोटो-नकलसे।

३५७. पत्र : छगनलाल जोशीको

मौनवार, १३ मई, १९२९

चि० छगनलाल,

तुम्हारे ६, ८ और ९ के तीन पत्र इकट्ठे हो गये हैं। अच्छा किया जो प्रार्थना और भोजनका समय बदल दिया। इसमें कुछ बुराई नहीं।

लेडी रामनाथनको रुपयोंके पहुँचनेकी सूचना तो दे ही दी होगी। यह रकम अभी तिरुचेनगोडु नहीं भिजवाई? 'यंग इंडिया'में उसकी स्वीकृति नहीं दी?

फ्रांससे जो रुपया आता है वह किसी भाईका नहीं, बहनका है। वही मीरा-बेल जो हमारे यहाँ एक महीना रह गई थी — यह उसीका भेजा हुआ है।

शिवाभाई स्वस्थ हो गये होंगे।

तुम्हें 'गीता' जबानी याद रखनेका आग्रह करनेकी जरूरत नहीं है। 'गीता' विद्यार्थियोंको ही कण्ठस्थ करनी चाहिए। हम सबको शुद्ध पढ़ना तो अवश्य आना चाहिए।

सबेरेका नाश्ता छोड़ देना कोई त्याग नहीं है। सिर्फ मुसाफिरीके दौरान ऐसा करना जरूरी हो गया था। सुबह-शाम सैर करने नहीं जाता — यह भी लाचारी है। 'गीता' पढ़ानेके लिए मैंने कोई अलग समय निश्चित नहीं किया है। मेरा उत्साह ही सुविधा ढूँढ़ लेता है। वहाँ कातनेका समय आश्रमवासियोंके साथ बातचीतमें बिताता था। यहाँ पहलेका आधा घंटा प्रभावतीको देता हूँ, दोपहरका काम करने-वालोंको। प्रार्थनाके समय सबके एक साथ बोलनेके बजाय बारी-बारीसे एक व्यक्ति रोज श्लोकोंका पाठ करता है; और जिसकी बारी होती है उसका उच्चारण सुधारते हैं। इस तरह बहुत कुछ सुधार हो सका है। अभीतक भूलें होती तो हैं; किन्तु कम होती जा रही हैं। इनमें किसी भी बातसे मेरे दिमाग या समयपर बोझ नहीं पड़ता और मनकी शान्ति बढ़ती है। सीखनेवालेको भी यह बात पसन्द आती है और उसे बोझका अनुभव नहीं होता।

रंगूनके पैसेके बारेमें तो अब वहाँ पहुँचकर ही लिख सकूँगा, ऐसा लगता है।

क्या तुम रोकड़बही (कैशबुक) रोज देखते हो? उसमें रोज हस्ताक्षर करते हो? रसीदें (वाउचर) रोज देखते हो? ऐसा न करते हो तो अब जरूर शुरू कर देना। कोई भी क्यों न देखता हो, यह नियम अवश्य लागू करना।

लगता है सीतलासहाय काममें ठीक जुट गया है। मुझे २३ की सुबह पहुँचना था; उसके बदले २२ की रात बम्बई पहुँचूंगा। आशा है आश्रम २८ से पहले पहुँच सकूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५४१७)की फोटो-नकलसे।

३५८. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

नेल्लोर
मौनवार, १३ मई, १९२९

चि० गंगाबहन,

तुम्हारा पत्र मिला। हिज्जे चाहे जैसे हों तो भी पत्र लिखनेमें संकोच नहीं करना चाहिए। हिज्जे गलत हो जायें तो इसमें तुम्हारे लिए शर्मकी कोई बात नहीं है। यदि इस काममें भी काफी समय लगाया जाये तो उनमें कोई कमी न रहे। किन्तु इस कामके लिए इस प्रकार समय नहीं दिया जा सकता। इसलिए जो हो सके वही करो। महत्त्व विचारका है, व्याकरणका नहीं।

काकूके पिताका[1] निबटारा तो करना ही है। किन्तु अपना स्वास्थ्य भी सुधारना। मैत्रीको भी लाभ होगा।

१. दामोदर सरैया; गंगाबहनके दामाद।

मैं तो यह मानता ही हूँ कि बालिकाओंको भी शिक्षा दी जानी चाहिए। इस विषयमें बात करेंगे। अब बहुत दिनोंका वियोग नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो-६ : गं स्व० गंगाबहेनने

३५९. एक पत्रका अंश[1]

नेल्लोर
१३ मई, १९२९

नये बनाये गये कार्यक्रमके अनुसार मैं २२ की रात बम्बई पहुँचूंगा। इसमें और पुराने कार्यक्रममें कोई ज्यादा अन्तर नहीं है।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजराती (जी० एन० ६७८२)की फोटो-नकलसे।

३६०. पत्र : महादेव देसाईको

१४ मई, १९२९

चि० महादेव,

यह मंगलवारको प्रार्थनासे पहले ३-३० बजे लिख रहा हूँ। ६ बजे रवाना होना है और जहाँ जाकर रहना है वहाँ डाककी क्या गति होगी इसकी कुछ खबर नहीं है।

उनाईके विषयमें (खादी प्रवृत्ति और मद्यपान सम्बन्धी) तुम्हारे लेखका सार 'यंग इंडिया' में छपना चाहिए। आजकल 'यंग इंडिया' और 'नवजीवन' के बीच कोई सम्बन्ध नहीं होता, यह देख रहे हो न? उसका कारण यही है कि तुम और मैं अलग-अलग जगहपर हैं और काममें लगे हुए हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (एस० एन० ११४३४)की फोटो-नकलसे।

१. पत्र किसे लिखा गया था, यह अज्ञात है।

३६१. पत्र : मीराबहनको

१४ मई, १९२९

चि० मीरा,

तुम्हारा १० तारीखका पत्र मिला। तुम्हारे सारे पत्र मिल गये, पर इतनी देरसे कि मैं जीरादेईके पतेपर एक भी पत्र नहीं भेज सका। तुम्हारा तार पाकर मैंने सदाकत आश्रमके पतेपर पत्र भेजने शुरू किये थे। आशा है उस पतेपर भेजे सभी पत्र तुमको मिल गये होंगे।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५३७६)से।
सौजन्य : मीराबहन

३६२. आन्ध्र देशमें [-५]

निम्नलिखित यात्रा-विवरणसे पाठकोंको इस बातका अन्दाजा मिल जायेगा कि पिछले सप्ताह हम कहाँ-कहाँ गये और कहाँ-कहाँसे कितना-कितना चन्दा मिला।

'यंग इंडिया' में कुल रु० १,५४,९६१-१५-०½ की प्राप्ति तो पहले ही स्वीकृत की जा चुकी है।[1]

इस यात्राके क्रममें एकके बाद एक घटनाओंकी ऐसी भीड़ लगती चली गई है कि उन सबके बारेमें लिखना या इसके लिए उनमेंसे कुछ खास घटनाओंको चुन सकना कठिन है। इसलिए मुझे कतिपय बहुत ही महत्त्वपूर्ण घटनाओंकी मोटी रूप-रेखा बताकर ही सन्तोष करना पड़ेगा।

अस्पृश्यता

अस्पृश्यताका यह घातक साँप जख्मी तो जरूर हुआ है, लेकिन अभी यह मरा नहीं है। जब आप इसकी बिलकुल उम्मीद नहीं कर रहे हों, तब भी यह अपना विषदन्त दिखाता है। निश्चय ही, मैंने निम्नलिखित पत्र प्राप्त करनेकी आशा नहीं की थी :

> बड़े दुःखके साथ मैं निम्नलिखित तथ्य आपके ध्यानमें ला रहा हूँ। यह बात उस समयकी है जब इसी महीनेकी २२ तारीखको तनकूमें आयोजित

१. इसके बाद पूर्वी गोदावरी जिलेके विभिन्न गाँवोंमें प्राप्त चन्देकी रकमका ब्योरा दिया गया था। चन्देकी रकमका कुल जोड़ २,०१,७९२ रु० १४ आ० ३ पा० था।

महिलाओंकी सभा अभी खत्म ही हुई थी। ५ बजे शामके आसपास सभामें कोई तीन-चार सौ महिलाएँ उपस्थित थीं। इसी बीच किसीने कानाफूसी की कि आपकी बगलमें बैठी युवती पंचम वर्णकी थी।

ज्यों ही सभा खत्म हुई, उसमें मौजूद सारी महिलाएँ सीधे नहरके पास पहुँचीं और अपने-आपको एक अस्पृश्यका स्पर्श करनेके अक्षम्य पापसे शुद्ध करनेके लिए उसमें स्नान किया। मैंने अपनी आँखों देखा कि छोटे-छोटे बच्चों पर — और उन्हीं पर क्यों, दुधमुँहे बच्चों तक पर पवित्र जल छिड़का गया ताकि उन्हें इस पापसे बचाया जा सके। एक ओर हम आपको छलते हैं और दूसरी ओर सम्मानित करते हैं। हमारा यह पुरातन पाखण्ड है। . . .

लोग अज्ञान और अन्धविश्वासमें डूबे हुए हैं, और इस अज्ञान और अन्धविश्वासके साथ मिलकर उच्च वर्णवालोंका अहंकार ही हमें चला रहा है और यह वर्तमान सरकारसे भी अधिक शक्तिशाली प्रतीत होता है।

मगर सचाई यह थी कि मेरी बगलमें बिहारके प्रसिद्ध नेता ब्रजकिशोर बाबूकी पुत्री श्रीमती प्रभावती देवी बैठी हुई थीं। वे कुछ दिनोंसे मेरे साथ आश्रममें हैं और आन्ध्रके दौरेमें मेरे साथ यात्रा कर रही हैं। अधिकांश लोगोंने उन्हें मेरी पुत्रीके समान माना है, कुछ लोगोंने उन्हें मेरी पुत्र-वधूके समान माना है, लेकिन अब यह तनकूकी महिलाओंके लिए रह गया था कि वे उन्हें अन्त्यज लड़की लक्ष्मी मानें, जिसे मैंने अपने ही तरीकेसे अपनी पुत्री बना लिया है; और इसलिए वे सब मेरे जरिये उस काल्पनिक अन्त्यज लड़कीकी छूत लग जानेसे अपवित्र हो गई और फलस्वरूप उन भली महिलाओंने खुद पवित्र जलसे स्नान करके और अपने बच्चोंको स्नान कराकर या उनपर जल छिड़ककर अपने-आपको और उन्हें भी शुद्ध किया। इस हास्यास्पद किन्तु दुखद घटनासे हमें एक सबक मिलता है। पुरुष खुद ही अन्धविश्वासी हैं और इसलिए उन्होंने महिलाओंको जागृत करनेकी ओर कोई ध्यान ही नहीं दिया। फलतः महिलाएँ अन्धविश्वासके और भी गहरे अन्धकारमें डूबी हुई हैं। इस पत्रको पानेके बाद मैं सावधान हो गया और आगे जो सभाएँ हुईं उनमें उपस्थित होने-वाले श्रोताओंकी जाँच करने लगा। मैंने पाया कि अधिकांश सभाओंमें अस्पृश्य और सवर्ण लोग साथ ही बैठाये गये थे। मैंने श्रोताओंसे साफ शब्दोंमें पूछा कि क्या उन्हें बैठनेकी इस व्यवस्थापर कोई आपत्ति है। उन्होंने कहा कि उन्हें कोई आपत्ति नहीं है। राजमुंदरीके पास एक गाँवमें एक बड़ी ही सुव्यवस्थित सभामें मैंने स्वयंसेवकोंको अपने-अपने हलकेके अस्पृश्यों, सवर्णों और महिलाओंकी ओर बड़ी शानसे इंगित करते देखा। मैंने उन्हें झाँसा देकर पूछा: "मेरा खयाल है, आप लोगोंने अस्पृश्योंको अलग बैठानेके लिए विशेष रूपसे यह व्यवस्था की है?" मेरे प्रश्नका उत्तर देनेवाला बेचारा स्वयंसेवक झाँसेमें आ गया और उसने कहा, "हाँ साहब।" बादमें मुझे पता चला कि वह अंग्रेजी बहुत कम जानता था और उसने मेरा सवाल नहीं समझा था। क्योंकि मैंने श्रोताओंसे सीधे पूछा कि क्या आप लोगोंको इसपर कोई आपत्ति है कि

अस्पृश्य लोग आपके साथ बैठें। उन सबने हाथ उठाकर बताया कि उन्हें कोई आपत्ति नहीं थी। मुझे इतनेपर भी सन्तोष नहीं हुआ, सो मैंने पूछा कि क्या मैं आप लोगोंके बीच अस्पृश्योंको भेजूँ। उन्होंने फिर हाथ उठाकर स्वीकृति जाहिर की। मैंने बोलकर स्वीकृति देनेको कहा। उन्होंने वैसा ही किया, मगर पहले जरा धीमी आवाजमें। इसपर मैंने कहा कि आप अपनी स्वीकृति जोरसे बोलकर जाहिर करें। उत्तरमें सभी पूरे जोरसे एक साथ बोल पड़े, "सरे, सरे।" तब मैंने अस्पृश्योंसे उनके बीच बैठनेको कहा और वे खुशी-खुशी उनके बीच जाकर बैठ गये। फिर मैंने सभामें अस्पृश्यतापर ही भाषण दिया। मैंने कहा कि अपने अस्पृश्य भाइयोंको अपने साथ बैठाकर आपने एक पुण्य कार्य किया है और किसी भी मनुष्यको अस्पृश्य मानना पाप है। लोगोंने इस विषयमें अपनी भावनाका जो प्रत्यक्ष प्रदर्शन किया उसके, तथा मैंने ऊपर जो दलील देकर उनके विश्वासको बल पहुँचाया उसके बावजूद यदि महिलाओंने अथवा किसी अन्य व्यक्तिने अपने-आपको पवित्र करनेके लिए स्नान किया तो यह सवाल ऐसा है जिसपर मनोविश्लेषकोंको विचार और छानबीन करनी चाहिए। अब मैं इस कहानीको यह बताकर समाप्त करता हूँ कि अस्पृश्योंको अपने बीच बैठनेकी सहमति देनेवालोंमें महिलाएँ भी थीं, और वास्तविकता यह है कि जब तथाकथित अस्पृश्य लोग सवर्ण पुरुषों और स्त्रियोंके पास उनके बदनसे सटकर बैठे तो मैंने किसीको उनसे अलग होनेके लिए इधर-उधर खिसकते नहीं देखा। पासके एक गाँवमें एक ऐसा स्कूल चलाया जा रहा है जिसमें बिना किसी झगड़ा-तकरारके सवर्ण और अस्पृश्य दोनों वर्गोंके बच्चे साथ-साथ रहते-पढ़ते हैं। इसलिए, जहाँ मैं तनकूमें हुई घटनापर दुख प्रकट करता हूँ, वहाँ इस बातसे इनकार नहीं किया जा सकता कि अस्पृश्यता बड़ी तेजीसे अपनी शक्ति खोकर दम तोड़ रही है।

एक महान संस्था

इस छोटेसे गाँवमें हमारा जाना उस क्षेत्रमें हमारे प्रवेशका प्रारम्भ था जो डा० बी० सुब्रह्मण्यम् द्वारा १९२४में स्थापित गौतमी सत्याग्रहाश्रमकी प्रवृत्तियोंके अन्तर्गत आता है। डा० बी० सुब्रह्मण्यम् राजमुंदरीमें अपने धन्धेसे खूब पैसा कमा रहे थे, किन्तु राष्ट्र-सेवाके निमित्त उन्होंने अपना वह धन्धा छोड़ दिया। उन्हें यह देखते देर नहीं लगी कि जबतक वे गाँवोंके बीच जाकर नहीं रहते और ग्रामवासियोंसे सीधा सम्पर्क स्थापित नहीं करते तबतक वे राष्ट्र-सेवाका कार्य नहीं कर सकते। इसलिए वे राजमुंदरीसे १४ मील दूर सीतानगरम् नामक स्थानमें जा बसे; क्योंकि सीतानगरम्के आस-पासके गाँवोंके ही लोगोंने असहयोग आन्दोलनके चर्मोत्कर्षके दिनोंमें सरकारके विरुद्ध जमकर संघर्ष किया था। उनमेंसे बहुत तो ग्राम-अधिकारी थे, जिन्होंने इस संघर्षमें अपनी-अपनी नौकरियाँ छोड़ दी थीं। इस धृष्टताके लिए उनपर लगभग ५,००० रुपयेका दण्डात्मक कर लगाया गया था।

आश्रम लगभग दस एकड़में है। खादी इसकी मुख्य प्रवृत्ति है और आनुषंगिक प्रवृत्तियाँ ये हैं: निःशुल्क चिकित्सीय सेवा, हिन्दी-प्रचार, पुस्तकालय-विकास, तेलुगु पत्रिकाओंका प्रकाशन, दलित वर्गोंकी सेवा करना और कांग्रेसका सामान्य कार्य करना।

इस समय मेरे सामने आश्रमके कार्योंका एक विवरण पड़ा हुआ है। उसके अनुसार "आश्रमके चारों ओर पाँच मीलके अन्दर जो गाँव हैं, उन सभीमें कताईका संगठन किया गया है। इससे एक ही कार्यकर्त्ता नियमपूर्वक सप्ताहमें एक बार प्रत्येक घरमें जाकर वहाँ कामकी देख-रेख कर आता है।" छः धुनकरोंको स्थायी रूपसे कामपर रखा गया है। ये ५ आनेमें ३ पौंडके हिसाबसे पूनियाँ तैयार करते हैं। आश्रमकी बहीमें १९३ पेशेवर कतैयोंके नाम दर्ज हैं। अबतक धुनकरोंने ७९५ रुपये कमाये हैं और कातनेवालोंने २,०३६ रुपये। ऐसा अनुमान है कि एक कातनेवाली स्त्री महीने भरमें ६ से ९ पौंड सूत कातती है और इस तरह रु० १–८–० से रु० २–४–० तक कमा लेती है। सूत ८ से १५ अंक तकके होते हैं। ३ पौंड पूनियोंसे सूत कातनेका पारिश्रमिक १२ आनेसे १४ आने तक होता है। इस क्षेत्रके १३ बुनकर इस सूतसे तौलिये, लुंगियाँ, धोतियाँ और कुरतेका कपड़ा आदि बुनते हैं। बुनकरकी औसत मासिक आय १५ रुपये होती है। आश्रमके बुनाईघरमें भी बुनाईका कुछ बहुत ही श्रेष्ठ काम होता है। बुनकरोंने इस कामसे ८,११४ रुपये कमाये हैं। ब्लीच करने और रँगनेके काममें १,२१७ रुपयेका खर्च आया है। कुल मिलाकर इस फिरकेके २३५ पुरुषों, स्त्रियों और बच्चोंमें १२,१६४ रुपये वितरित किये गये हैं। आश्रमकी एक शाखा पीठापुरम्में भी है, जहाँ इसकी देख-रेखमें ४५० चरखे और १२ करघे चलाये जाते हैं और उनके सर्वेक्षणसे पता चलता है कि अगर पूँजी मिले तो और भी चरखे चलाये जा सकते हैं। १९२७ की बंगलोर प्रदर्शनीमें इस केन्द्रमें तैयार किये गये कपड़ेपर सादे कपड़ोंमें सर्वश्रेष्ठ स्थान प्राप्त करनेके लिए स्वर्ण-पदक दिया गया था। आश्रमके बिक्री-केन्द्र भी हैं। चार फेरीवाले आसपासके क्षेत्रमें नियमित रूपसे फेरी लगाकर खादी बेचते हैं। फेरी लगानेवालोंकी सिरताज डा० सुब्रह्मण्यम्की वृद्धा माता हैं। वे उन लोगोंमें सबसे अधिक उत्साही हैं और उनके अथक परिश्रमसे खादी-को सबसे अधिक ग्राहक प्राप्त होते हैं। आश्रम सुपात्र पंचमोंके हाथों आधे दाम पर खादी बेचता है। विवरणमें कहा गया है:

> **यहाँ इस फिरकेमें खादीकी सामान्य सम्भावनाओंपर दो शब्द कहना असंगत नहीं होगा। इस फिरकेके २२ गाँवोंका निकटसे सर्वेक्षण करनेपर निष्कर्ष यही होगा कि अभी एक दशक पूर्व तक रुई उद्योग पूरे जोर पर था, उसका उत्पादन हर गाँवमें होता था और हर घरमें उसे जमा करके रखते थे; तथा हाथकताईको विकसित करनेके लिए कार्य आरम्भ करना आवश्यक है और यह कार्य बड़े उत्साहवर्धक परिणामोंके साथ चलाया जा सकता है। इस समय स्थिति यह है कि यदि कार्यकर्त्ता कताईके कामके सिलसिलेमें घूम-घूम कर देखें तो वे पायेंगे कि ऐसे परिवारोंकी एक अच्छी खासी तादाद है जो अपने-अपने घरोंमें रुई इकट्ठा करके रखते हैं और अपने उपयोगके लिए सूत कातते हैं। अकेले सीतानगरम् गाँवमें ही पिछले वर्ष ९ परिवारोंने अपने उपयोगके लिए ४०० गज कपड़ा बुनने लायक सूत काता।**

मुझे ऐसे कई स्थानोंमें ले जाया गया जहाँ कई-कई परिवार स्वेच्छासे कातते थे और उनकी कताईका उद्देश्य आर्थिक लाभ नहीं बल्कि उससे प्राप्त होनेवाला आनन्द ही था। उनमें दो विधवाएँ थीं, जिनका एकमात्र धन्धा कताई करना ही था। जब डा० सुब्रह्मण्यम्ने उनमेंसे एकसे मेरा परिचय करवाया तब चरखेके प्रति उसके प्रेमकी बात बताते हुए वे अपने आँसू नहीं रोक पाये।

चेरला पेरला ख्यातिके स्वर्गीय आन्ध्र-रत्न गोपाल कृष्णय्याके पास जितनी भी पुस्तकें थीं, वे सारीकी-सारी आश्रम पुस्तकालयको भेंटस्वरूप प्राप्त हो गई और इस तरह पुस्तकालयमें अब पुस्तकोंकी कोई कमी नहीं रह गई है। इसके साथ एक वाचनालय भी है, जिसमें सारे भारतसे पत्र-पत्रिकाएँ आती हैं।

हिन्दी प्रचार कार्य इसकी एक खास विशेषता है। पण्डित पी० वी० सुब्बाराव इस कार्यके प्रधान हैं। १९२५ के सितम्बर महीनेसे पिछले वर्षके अन्त तक १४५ लोगोंने हिन्दी सीखी है, और हिन्दी सीखनेके इच्छुक लोगोंके लिए आश्रममें नियमित रूपसे कक्षा चलाई जाती है। इस कामपर १,५२८ रुपये खर्च किये गये हैं, जिनमें पण्डितको वेतन स्वरूप दिये जानेवाले ४९५ रुपये भी शामिल हैं।

दलित वर्गोंके बीच किये जा रहे कार्यमें विकासकी गुंजाइश है। आश्रम उनके लिए निःशुल्क रात्रि-शाला चलाता है। एक ऐसा स्कूल भी है, जिसमें सवर्ण और अस्पृश्य दोनों साथ-साथ शिक्षा प्राप्त करते हैं। उनमें भजन मण्डलियोंका भी आयोजन किया जाता है।

आश्रमके अधीन ३ खैराती दवाखाने हैं, और एक साफ-सुथरा अस्पताल भी है, जिसमें ५ मरीज रह सकते हैं। अस्पतालमें भरती हुए बिना अबतक बाहरसे चिकित्साका लाभ पानेवालोंकी संख्या ६२,४९८ पहुँच गई है और अस्पतालमें भरती होकर अबतक ३०० मरीजोंने चिकित्साका लाभ उठाया है।

इस फिरकेमें कांग्रेसके ७१६ सदस्य बनाये गये हैं, जिनमें ९ मुसलमान और एक ईसाई हैं। इनमें से ६१ महिलाएँ हैं और ५१ अस्पृश्य।

आश्रमसे 'कांग्रेस' नामक एक तेलुगु साप्ताहिक भी प्रकाशित होता है, और अब इसे लगभग आत्म-निर्भर हो गया माना जाता है। इसके सम्पादक श्रीयुत एम० अन्नपूर्णय्याको राजद्रोहके अपराधमें गिरफ्तार होनेका भी गौरव प्राप्त हुआ। लेकिन उनके गिरफ्तार किये जानेपर भी पत्रको बन्द नहीं होने दिया गया। उनकी जगह श्रीयुत के० रामचन्द्ररावने ले ली, लेकिन जब उन्हें भी गिरफ्तार कर लिया गया, तब उस स्थानपर स्वयं डा० सुब्रह्मण्यम् आ गये और तबतक पत्रका सम्पादन करते रहे जबतक कि श्रीयुत अन्नपूर्णय्याने जेलसे छूटकर सम्पादक-पदका दायित्व फिर सँभाल नहीं लिया। इस पत्रका प्रकाशन फुलस्केप आकारके पर्चेके रूपमें प्रारम्भ हुआ और तब यह साइक्लोस्टाइलमें ही छापा जाता था। किन्तु आज यह रॉयल साइजका १४ पृष्ठोंका एक पत्र है। इसमें खास-खास विज्ञापन ही लिये जाते हैं और विदेशी कपड़ों, शराब और ब्रिटिश मालका विज्ञापन नहीं छापा जाता और जैसा कि मेरे सामने मौजूदा विवरणमें गर्वपूर्वक कहा गया है, 'यह औपनिवेशिक स्वराज्यके बजाय पूर्ण स्वराज्यका पक्षधर है।' तमिल लिपिमें हिन्दी पाठोंका प्रकाशन इसमें

नियमित रूपसे होता है। गत वर्षके अन्ततक आश्रमको अनुदान-स्वरूप ३२,४९१ रुपये नकद, अन्नके रूपमें ३,७४७ रुपये, रोगियों द्वारा स्वेच्छासे दी गई भेंटोंके रूपमें १,२५६ रुपये और लकड़ीके रूपमें ४,००० रुपये प्राप्त हो चुके हैं। इसकी इमारत पक्की है, जिसमें आश्रमवासी रहते हैं। उनके भरण-पोषण पर १०,५३५ रुपये खर्च किये गये हैं। आश्रमके १२ सदस्य हैं। अकेले व्यक्तिको २० रुपयेका भत्ता मिलता है, दो के परिवारको ३० रुपये और किसी परिवारमें दो से अधिक जितने सदस्य हों उनके लिए प्रति व्यक्ति ५ रुपये और दिये जाते हैं। इसमें कपड़ेका खर्च भी शामिल है। आश्रममें ३१ परिवार रहते हैं और उनसे प्रति व्यक्ति ७ रुपयेके हिसाबसे खर्च लिया जाता है।

तथ्योंका यह शुष्क विवरण इस महान् संस्थाकी महत्ताका ठीक अन्दाज नहीं दे पाता। इस यात्राके दौरान मैंने इन गाँवोंमें जीवनका जैसा उच्छ्वास देखा, वैसा अन्यत्र कहीं भी देखनेको नहीं मिला। आश्रमवासी यद्यपि अपने ही तरीकेसे रहते हैं, लेकिन वे ग्रामवासियोंके जीवनके अंग बन गये हैं और इसलिए उन लोगों पर उनका बड़ा प्रभाव है। ये गाँव अपेक्षाकृत निर्धन ही हैं, फिर भी इनसे चन्देमें ५,००० रुपये मिले। इतना अधिक चन्दा आन्ध्र प्रदेशमें और कहीं नहीं मिला। जिस सभामें मैंने भाषण दिया उसमें ५ एकड़ जमीन दानमें दी गई। यह ग्रामवासियोंके बीच आश्रमकी लोकप्रियताका एक स्पष्ट प्रमाण है। यह आश्रम ग्रामोद्धारका पदार्थ-पाठ प्रस्तुत करता है। चूंकि आश्रमवासी गाँववालोंके बीच रहते हैं, इसलिए ग्रामीण भाइयोंकी आवश्यकताओं और आकांक्षाओंको ध्यानमें रखकर क्रियाशील होना उनके लिए अनिवार्य है और समय आनेपर वे अपनी योग्यता और आत्म-विश्वासके अनुसार अपनी प्रवृत्तियोंका विस्तार भी अवश्य करेंगे। मैंने देखा कि डा० सुब्रह्मण्यम् बहुत सँभल-सँभल कर कदम रखते हैं। वे कहते हैं: "हम साधारण गृहस्थका जीवन व्यतीत करते हैं और यद्यपि आश्रमवासियोंके पास निजी सम्पत्ति बहुत कम ही है, किन्तु हमने आश्रमपर निजी सम्पत्ति रखनेके सम्बन्धमें रोक नहीं लगाई है। आश्रममें शादी-ब्याह और दूसरे घरेलू संस्कारोंके लिए कोई व्यवस्था नहीं है। हमने सदस्योंके जीवनका बीमा नहीं कराया है। हम मानते हैं कि हम बहुत ही साधारण राष्ट्र सेवी-जन हैं।" ऐसे साधारण राष्ट्र-सेवी होनेके लिए उन्हें जितना भी सम्मान दिया जाये, वे उसके योग्य पात्र हैं। कोई शिक्षित भारतीय यदि भारतके गाँवम रहता है तो यह उसके लिए असाधारण बात क्यों होनी चाहिए? असाधारण चीज तो हमपर छद्म रूपसे थोपी गई वह शिक्षा है जो हमें गाँवोंमें रहने और गाँवोंके लिए काम करनेकी दृष्टिसे अयोग्य बनाती है।

पुलिसकी निगहबानी

आश्रमसे हम लोग पोलावरम्[1] जानेवाले थे। यह नदीके पार सीतानगरम्से छः मीलकी दूरीपर स्थित एक गाँव है। यह एजेन्सी क्षेत्रमें पड़ता है। जैसा कि मुझे मालूम हुआ, एजेन्सी क्षेत्रका मतलब नॉन-रेगुलेशन क्षेत्र है। मुझे बताया गया कि

१. देखिए "भाषण: सार्वजनिक सभा, पोलावरम्में", ९-५-१९२९।

यहाँ पुलिस नौकावालेको भयभीत करके कार्यकर्त्ताओंकी तरफसे उसे विमुख करनेमें सफल हुई और फलतः उसने हमें पार उतारनेसे इनकार कर दिया। यह स्थिति परेशान करनेवाली थी। इस तरह पुलिस द्वारा हमारी योजनाका विफल किया जाना मुझे अपमानजनक लगा। सुबह वहाँ पहुँचनेसे पहले हमने एक काफी व्यस्त कार्यक्रम निबटाया था और अब आगे भी उतना ही व्यस्त कार्यक्रम हमारा इन्तजार कर रहा था। और अगर मुझे उस गाँवमें जाना था तो पहले जहाँ उसमें एक घंटा लगना था वहाँ अब उस गाँवमें जानेके मतलब थे साढ़े चार घंटे लगाना। लेकिन मुझे समयकी फिक्र नहीं थी, उस गाँवमें पहुँचना हमारा कर्त्तव्य हो गया था। हमारे मोटरगाड़ीसे सीधे उस गाँवके सामने पहुँचने और वहाँसे नदी पार करनेके बजाय कार्यकर्त्तागण हमें किसी दूसरे लांच (यंत्र-चलित नौका) से सीतानगरम्से सीधे पोलावरम् ले जा सकते थे। मेरे सामने यह सुझाव रखा गया तो मैंने इसे स्वीकार कर लिया। लांच तक जानेमें भी कुछ अतिरिक्त श्रम और समय लगना था; लेकिन हम सफलतापूर्वक अपने गंतव्य स्थान तक पहुँच गये। मुझे इस बातकी खुशी थी कि मनुष्यके अहंकारपूर्ण उद्देश्यको उस सर्वशक्तिमान स्रष्टाने विफल कर दिया जो अहंकारियों और धृष्ट व्यक्तियोंके अहंकार और धृष्टताका भंजक है।

पोलावरम्में श्रीयुत पी० कोदण्डरमय्या और ए० वेंकटरमय्या द्वारा संचालित एक छोटा-सा आश्रम है। वे आदिवासियोंके कुछ बच्चोंका लालन-पालन कर रहे हैं। वे लोग आदिवासियोंके बीच काम करते हैं और उन्हीं लोगोंने इस यात्राकी योजना बनाई थी। यहाँ यह बता देना असंगत न होगा कि हमारी पूरी यात्रामें हमारे पीछे पुलिसका भी एक दल लगा रहा है। वे संवाददाता बनकर और न जाने किस-किस रूपमें आते रहे हैं। सामान्यतः मैंने उनसे किसी तरहकी परेशानीका अनुभव नहीं किया है। बल्कि खुद मेरे प्रति तो उन्होंने काफी सौजन्य भी दिखाया है। एक बार हम जिस गाड़ीसे यात्रा कर रहे थे जब वह खराब हो गई तो उन्होंने हमें अपनी गाड़ी दी। उन्हें इतनेका श्रेय तो देना ही पड़ेगा। लेकिन वे लोग अपनी सत्ताका रोब दिखाते हुए भी पाये गये हैं और हमारे दलपर हाथ डालनेमें भी उन्होंने संकोच नहीं किया है। सीतानगरम्में यदि कार्यकर्त्ताओंने डटकर विरोध न किया होता तो वे उस छोटेसे लांचपर आ जमते जिससे हम सीतानगरम्से पोलावरम् गये। कहनेकी जरूरत नहीं कि पाठक इससे यह न समझें कि यह वही पुलिस दल था जिसने नौकावालेके साथ दखलन्दाजी की थी। पुलिसकी निगहबानीका उल्लेख मैंने सिर्फ यह दिखानेके लिए कर दिया है कि जहाँतक हिंसात्मक इरादोंका सम्बन्ध है, मेरा खयाल है, मुझे सन्दिग्ध व्यक्ति नहीं माना जाता। फिर भी जब मेरे रास्तेमें इस तरह बाधा डालना जरूरी समझा जाता है तब उन लोगोंका क्या हाल होगा जिन्हें सन्देहकी दृष्टिसे देखा जाता है और जो इतने तुनकमिजाज हैं कि पुलिसकी निगहबानीको बर्दाश्त ही नहीं करते। मैंने अपने जीवन भर अपने सिद्धान्तके एक अंगकी तरह इस नियमका निर्वाह किया है कि पुलिसकी निगाहसे बचकर न चलो बल्कि उसे अपने सारे कार्योंको देखनेमें मदद ही दो, क्योंकि मैं गोपनीयतासे सदा दूर ही रहा हूँ और इस तरहकी

निगहबानीके प्रति उदासीन रहनेसे मेरा जीवन और कार्य अधिक सुगम हो गया है। इस उदासीनता और पुलिसके प्रति बराबर दिखाये गये सौजन्यका परिणाम यह हुआ है कि उनमें से कईका हृदय-परिवर्तन हो गया है। लेकिन मेरी उदासीनता एक अलग और मेरे लिए एक निजी चीज है। एक प्रणालीके रूपमें तो पुलिसकी इस निगहबानीके बारेमें यही कहा जा सकता है कि यह एक गर्हित चीज है और किसी भी अच्छी सरकारके लिए अशोभनीय है। कर के दुर्वह भारसे दबे कर-दाताओंके सिर पर यह एक बेकारका बोझ है। कारण, यह याद रखना चाहिए कि इस सामान्य व्ययके लिए आवश्यक सारा पैसा करोड़ों मेहनतकश लोगोंकी जेबोंसे आता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १६-५-१९२९

३६३. दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय

दक्षिण आफ्रिकामें भारत सरकारके प्रतिनिधिका पद सँभालना निश्चय ही कोई फूलोंकी शय्या नहीं है। दक्षिण आफ्रिकासे आई डाकके एक पत्रसे मुझे मालूम हुआ है कि सर के० वी० रेड्डीको अनेक पेचीदा समस्याओंसे उलझना पड़ रहा है और उनको दम मारने तककी फुर्सत नहीं है। उनके लिए अबतक सबसे अधिक चिन्ताका विषय जो मैं समझ पाया हूँ, वह ट्रान्सवालमें गोल्ड एरिया नामसे विख्यात क्षेत्रमें व्यापारिक परवानोंसे सम्बन्धित है। ट्रान्सवालमें भारतीय व्यापारियोंका सबसे अधिक जमाव इसी क्षेत्रमें है और उनके लिए ये व्यापारिक परवाने जीवन-मरणके प्रश्न जितने ही महत्त्वपूर्ण हैं। उन्होंने इसी आशा से बड़े-बड़े व्यवसाय खड़े कर लिए हैं कि उनके परवाने हर साल नये बनते ही जायेंगे। क्रूगर-शासनके दिनोंमें किसी भी समय उनका सारा व्यापार एकदम बन्द कर दिये जानेका खतरा पैदा हो गया था। पर वह संकटकी घड़ी टल जानेके बाद उन्होंने सही या गलत यही सोचा था कि वे जबतक ईमानदारीसे व्यापार करते रहेंगे उनके परवानोंका नवीकरण हमेशा हर साल होता ही जायेगा। अवश्य ही मेरा विचार यह था कि १९१४ का समझौता इन सभी व्यापारियों और उनके उत्तराधिकारियों पर लागू होता है। यदि इनको भी निहित अधिकार न माना जाये, तो मेरी समझमें नहीं आता कि ट्रान्सवालमें भारतीयोंके निहित अधिकार और हो ही क्या सकते हैं। पर अब मुझे पता चला है कि नगरपालिकाएँ स्वर्ण-कानूनके एक खण्डकी आड़ लेकर ऐसे परवाने जारी करनेसे इन्कार कर रही हैं। कानूनकी दृष्टिसे शायद स्वर्ण-कानूनके तहत एशियाइयोंके व्यापार करनेपर प्रतिबन्ध लगाया जा सकता है। लेकिन यह कानून तो क्रूगर-शासनके दौरान भी लागू था। यह समझौता सम्पन्न होनेके समय भी यह कानून मौजूद था। इसलिए श्री के० वी० रेड्डीको इन व्यापारियोंके लिए संरक्षण प्राप्त करनेमें कोई कठिनाई नहीं पड़नी चाहिए। हबीबुल्ला प्रतिनिधिमण्डल द्वारा सम्भव बनाये गये इस समझौतेमें यह संकल्पना

सन्निहित थी कि दक्षिण आफ्रिकामें ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थितिमें सुधार करके उनको समान दर्जा दिलाया जाये। परन्तु यदि उनकी रोजी-रोटीका एकमात्र साधन भी उनसे छीन लिया जाये तो इन व्यापारियोंके लिए समानताका कोई अर्थ ही नहीं रह जायेगा। इसलिए जरूरी है कि हमारे देशका लोकमत इन व्यापारियोंकी संरक्षण पानेकी माँगको फलीभूत बनानेमें दक्षिण आफ्रिका-स्थित भारत सरकारके प्रतिनिधि और भारत सरकारके हाथ मजबूत करे। मैं जानता हूँ कि इस काममें मुश्किलें हैं। दक्षिण आफ्रिकामें आम चुनाव होनेवाले हैं। संघके मन्त्रियोंको यदि अपने मनकी करनेकी छूट दी जाये तो वे शायद संरक्षण देना मंजूर कर लेंगे और संरक्षण है भी अत्यन्त वांछनीय। और यदि केपमें हुए समझौतेको सम्मानपूर्ण ढंगसे निभाना है तो ऐसा संरक्षण देना अनिवार्य माना जाना चाहिए। परन्तु दक्षिण आफ्रिकामें चुनावकी परिस्थितियाँ संसारके अन्य भागोंकी परिस्थितियोंसे अधिक भिन्न नहीं हैं। परन्तु परिस्थिति कितनी ही जटिल हो, इन व्यापारियोंको तो संरक्षण मिलना ही चाहिए। एक नया कानून बनानेके अतिरिक्त, एक सर्वथा उचित, वैध और सरल दूसरा भी मार्ग मौजूद है जिससे इस समस्याको हल किया जा सकता है। ट्रान्सवालमें १८८५ का कानून ३ अभी भी लागू है। स्वर्ण-कानून इसको रद नहीं करता। इसलिए स्वर्ण-कानूनको ट्रान्स-वालके १८८५ के कानूनके साथ रखकर पढ़ना और उसका अर्थ लगाना पड़ेगा। वह कानून सरकारको यह शक्ति प्रदान करता है कि वह भारतीयोंके बसने और व्यापार करनेके लिए कुछेक हलकों, सड़कों और बस्तियोंको उचित घोषित कर सकता है। इसलिए संघ सरकार चाहे तो प्रशासकीय तौर पर ऐसे क्षेत्रोंकी घोषणा कर सकती है जहाँ भारतीय इस समय भी व्यापार कर रहे हैं। वह उन क्षेत्रोंको भारतीयोंके निवास और व्यापारके लिए उचित करार दे सकती है।

अन्य कुछ मामले भी इतने ही नाजुक हैं, लेकिन इस समय उनका उल्लेख करना जरूरी नहीं है क्योंकि उनको लेकर कोई फौरी खतरा नहीं है; और इस समय सबसे ज्यादा जरूरत इसी बातकी है कि सारा लोकमत इसी एक तात्कालिक खतरेपर केन्द्रित करके उसे एक निश्चित रूप दिया जाये।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १६-५-१९२९

३६४. 'वैचारिक नशा'

मैंने पिछले साल यूरोप-यात्राकी जो योजना बनाई थी, उसे स्थगित करनेके मेरे निर्णयका अनुमोदन करते हुए मेरे एक यूरोपीय मित्रने अन्य बातोंके साथ एक यह अत्यन्त सारगर्भित बात भी लिखी है कि आजकल यूरोपीय समाचारपत्रोंकी क्या गत बना दी गई है:[1]

> आप जानते ही हैं कि युद्धकी हालतमें कोई आधुनिक राज्य सबसे पहला काम यही करता है कि वह अपने विरोधीको शेष संसारकी नजरोंमें बिलकुल गिरा देता है; और ऐसा करनेके लिए वह उसकी आवाज एकदम बन्द करके संसार भर में अपनी ही अपनी आवाज गुँजाने लगता है। आपको मालूम ही है कि इस कलामें ब्रिटिश साम्राज्यका जवाब नहीं, और वह भारतकी नाकेबन्दी करने, उसे अन्य देशोंसे अलग-अकेला करने और उन देशोंके कान अपने ही प्रचारसे भर देनेके लिए हर उपायका सहारा ले रहा है। काम शुरू भी हो चुका है। पिछले महीने बम्बईकी घटनाओंकी आड़ लेकर उसने संसारको यह जतानेकी कोशिश की है कि भारत तो आगजनी और खूनखराबीमें लगा हुआ है।...
>
> यूरोपके देश आजकल बौद्धिक निष्क्रियताके जिस भयंकर अंधे गर्तमें गिरते जा रहे हैं उसका अब मुझे काफी अनुभव हो चुका है। १९१४के युद्धकी शुरुआतके दिनोंसे ही यूरोप भरके समाचारपत्र जनताके असन्तुष्ट मस्तिष्कको पत्रकारिताके जरिए ऐसे ही वैचारिक नशेका आदी बनाते रहे हैं और अब हालत यह है कि जनता अपने विचारोंके सही स्वरूपको पहचाननेमें ही असमर्थ हो गई है। यह भी एक प्रकारका नशा है, वैचारिक नशा, जो अन्य किसी भी नशेसे कम ध्वंसकारी नहीं है। कहा जा सकता है कि पाश्चात्य देशोंमें अब लगभग कोई भी समाचारपत्र ऐसा नहीं जिसे स्वतन्त्र कहा जा सके।...

यह तो सही है कि गलतफहमियाँ पैदा करनेवाला प्रचार आन्दोलन हमारे मार्गमें काफी मुश्किलें खड़ी करता रहा है, पर यदि हम मुस्तैदी और मजबूतीसे काम करें तो हम उसकी उपेक्षा कर सकते हैं और मनम विश्वास रख सकते हैं कि यदि हमारा काम, हमारा प्रयत्न सच्चा है, सचाईसे भरा है, तो हम यूरोप ही नहीं अमेरिकामें भी किये जानेवाले इस मिथ्या प्रचारका सफलतासे सामना कर लेंगे और हमारा काम प्रभावशाली सिद्ध होगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १६-५-१९२९

१. यहाँ कुछ ही अंश दिये गये हैं।

३६५. करनेका ढंग

आन्ध्र देशमें मुझे जो मानपत्र मिले हैं, उनमें से एककी कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं:

> **हमें यह स्वीकार करते हुए दुःख होता है कि अस्पृश्यता-निवारण, नशाबन्दी-प्रचार और हिन्दी-प्रचारमें से कोई एक भी काम ऐसा नहीं, जिसे करनेका हम दावा कर सकें। हम आपसे मदद और रहनुमाईकी प्रार्थना करते हैं और आशा रखते हैं कि आप हमें कुछ ऐसे उपाय बतलायेंगे जिनके द्वारा हम उक्त कामोंके लिए आवश्यक धन और निःस्वार्थ कार्यकर्त्ता पा सकें।**

यह एक ऐसी बेबसीकी स्वीकारोक्ति है, जिसे दुनियाके दूसरे हिस्सोंमें बसनेवाले लोग शायद मुश्किलसे समझ सकेंगे। क्योंकि मुझसे न केवल आवश्यक धन-प्राप्तिका तरीका बतानेको कहा गया है, बल्कि निःस्वार्थ कार्यकर्त्ताओंके संग्रहका उपाय भी पूछा गया है। इस मानपत्रके देनेवाले वे लोग हैं, जो अपने आपको 'आपके (मेरे) अत्यन्त विश्वासपात्र एवं अत्यन्त विनम्र अनुयायी, नगर कांग्रेस कमेटीके सदस्य' कहते हैं। अगर कोई मेरे 'विश्वासपात्र और विनम्र' अनुयायी हैं, तो मैं सबसे पहले उनसे निःस्वार्थ होनेकी आशा रखता हूँ। कांग्रेस कमेटियोंके जो सदस्य निःस्वार्थ नहीं हैं, वे कांग्रेस कमेटियोंमें बैठनेके भी अयोग्य हैं। मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि आज कांग्रेस कमेटियोंमें भी पदाधिकार पानेके लिए अशोभनीय स्पर्धा चल रही है। परन्तु यह तो हरएक कांग्रेसी मंजूर करेगा कि अगर कांग्रेसका प्रतिनिधि निःस्वार्थ नहीं है, तो वह कुछ भी नहीं है। और अगर "सूर्य ही प्राण-पोषण करना छोड़ देगा तो दुनिया 'प्राण' किससे पायेगी?" अगर मेरे अनुयायी और कांग्रेस कमेटीके सदस्य ही निःस्वार्थ नहीं हैं तो फिर मैं इन लोगोंके लिए निःस्वार्थ सेवक या कार्य-कर्त्ता कहाँ पा सकूँगा? इसलिए इन प्रश्नकर्त्ताओंको निःस्वार्थ सेवक या कार्यकर्त्ता पानेका जो एक मार्ग मैं बता सकता हूँ, वह है, 'आप स्वयं निःस्वार्थ कार्यकर्त्ता बनो, मैं आपको वचन देता हूँ कि आवश्यक धन अपने-आप आपके पास चला आयेगा।' बिना सूर्यके छाया रह नहीं सकती। धन कमाना आदमीका काम है। धनसे आदमी पैदा होनेकी बात कभी सुनी नहीं गई है। हाँ, सम्भव है धनसे भाड़ेके टट्टू मिल भी जायें, लेकिन उनसे न तो अछूतोद्धारका काम हो सकेगा, न नशा-बन्दीका कार्य आगे बढ़ सकेगा और न सच्चा हिन्दी-प्रचार-कार्य ही हो सकेगा। इसमें शक नहीं कि दुनियाके अर्थशास्त्रमें भाड़ेके टट्टुओंका भी अपना एक स्थान है, लेकिन उनका आगमन सुधारके बाद होता है। स्वयं वे किसी तरहका सुधार नहीं कर सके हैं। अतः कांग्रेसजनोंको तिहरा सुधार सफल बनाना है। जब छुआछूत देशमें बीते जमानेकी बात बन जायेगी, जब नशाबन्दी आन्दोलन एक लोकप्रिय आन्दोलन बन जायेगा और जब हरएक स्त्री-पुरुष हिन्दी पढ़ना चाहेगा, तब उन लोगोंकी कोई कमी न रहेगी

जो किरायेपर काम करना चाहेंगे और उस कामको पूरा कर सकेंगे जो सर्वथा जोखिमसे परे है।

लेकिन दुर्भाग्यवश इन यात्राओंमें मैं बराबर यह देख रहा हूँ कि बहुतसे कांग्रेस-जन रचनात्मक कामकी उतनी परवाह नहीं करते जितनी परवाह वे लोगोंमें उत्तेजना फैलानेवाले और सहज ही अपने आपको लोगोंमें प्रतिष्ठित बना देनेवाले कामकी करते हैं। कार्यकर्त्ताओंकी लगातार आमदका रास्ता खोलनेके लिए पहले इस मनोवृत्तिको बदलना आवश्यक है। मैं जहाँ जाता हूँ वहाँ अपने चारों ओर चतुर, चुस्त व तन्दुरुस्त स्वयंसेवकोंको खड़ा पाता हूँ, जो मुझे सुख पहुँचानेकी इच्छासे हर तरहका कष्ट सहनेको तैयार रहते हैं और सेवा-भावनासे प्रेरित होकर लगातार रात-दिन काम करते नहीं थकते। अगर इन लोगोंकी एक व्यक्ति-विशेषके प्रति इस भक्तिको उस कार्यके प्रति भक्तिमें बदला जा सके, जिसका वह व्यक्ति प्रतिनिधि है, तो यह समस्या हल हुई समझिए। जिस व्यक्तिके प्रति इतनी प्रचण्ड सेवा-भावनाका प्रदर्शन किया जाता है, उसे तो उसकी जरूरत नहीं है, उलटे वह तो इस सेवा-भावके प्रदर्शनसे दुखी होता है, मारे शर्मके गड़ जाता है। मैं जहाँ जाता हूँ कार्यकर्त्ताओंकी सभा बुलाता हूँ। मेरे विचारमें जो काम हमें करना है उसके लिए उतने कार्यकर्त्ता काफी होते हैं, बशर्ते कि वे उसे करनेमें सच्चे दिलसे लग जायें। लेकिन ये ही कार्यकर्त्ता उक्त मानपत्र-जैसे मानपत्रोंकी रचना करते हैं और इन शान्त सभाओंमें मुझसे धन और जनकी प्राप्तिके उपाय पूछते हैं। अतः मैं प्रत्येक कांग्रेस कमेटीके सामने यह सूचना पेश करता हूँ कि वह अधिक व्यवहार-कुशल बने और सच्चे कार्यकर्त्ताओंको चुन-चुन कर उनके वेतनकी रकम निश्चित कर दे और इस तरह रचनात्मक कामके चक्रको चलाती रहे। इस कामके लिए कांग्रेसकी उपसमितियाँ प्रान्तीय या केन्द्रीय संस्थाओंकी रहनुमाईकी प्रतीक्षा न करें। प्रान्तीय संस्थाएँ अपने प्रान्तीय सेवा मण्डल रखें या न भी रखें। यह हो सकता है कि उनका बोझ इतना ज्यादा बढ़ जाये कि वे इस तरहका कोई प्रयत्न न कर सकें; लेकिन ताल्लुका या ग्राम कांग्रेस कमेटियोंके बारेमें ऐसी कोई सम्भावना नहीं है। वे एकदम स्वावलम्बी हैं। वे धन-संग्रह करने और अपनी पसन्दके सुधारोंको लागू करनेके लिए सर्वथा स्वतन्त्र हैं। आन्ध्र देशकी इस दिलचस्प यात्रामें मैंने कहीं-कहीं कुछ सुयोग्य समितियोंको वह काम करते पाया है, जिसकी अन्य समितियोंने बुरी तरह उपेक्षा की है।

कांग्रेसीजन १९३० का ध्यान धरना छोड़ दें। १ जनवरी, १९३० के दिन कोई जादुई चमत्कार नहीं होगा। मुहलत और तैयारीके इस सालमें जितना राष्ट्रीय काम हो सकेगा, १ जनवरी उसीका सच्चा प्रतिबिम्ब होगी। पहली जनवरीको सारे राष्ट्रमें एकाएक कोई परिवर्तन हो जानेकी कोई सम्भावना नहीं है। इसलिए कांग्रेसका प्रत्येक सदस्य इस वर्ष जितना काम कर सके, करे और बखूबी करे। ऐसे लोग ही राष्ट्रको जागृत कर सकेंगे। उन्हें यह नहीं सोचना चाहिए कि किसी राष्ट्र या ध्येयके लिए एक आदमीके किये कुछ नहीं हो सकता। दुनियामें जितने भी काम होते हैं, वे सब व्यक्तियोंके समुदाय द्वारा किये जाते हैं। किसी-न-किसी एक व्यक्तिको शुरुआत तो

करनी पड़ती है। इसलिए हरएक व्यक्ति, जो किसी कामकी सफलताके रहस्यको समझता है, अपना काम ध्यानपूर्वक करता जाये और दूसरे लोग अपना काम करते हैं या नहीं इसकी चिन्ता छोड़ दे।

किसीको भी की हुई सेवाके बदलेमें मेहनताना लेते हुए शर्माना नहीं चाहिए। जो काम करता है उसे पारिश्रमिक मिलना ही चाहिए। उसके पारिश्रमिक स्वीकार कर लेनेसे उसकी निःस्वार्थतामें कोई कमी नहीं आती। सच्ची बात तो यह है कि एक अत्यन्त निःस्वार्थ मनुष्यको अपना सर्वस्व (तन, मन और आत्मा) देशके अर्पण कर देना पड़ता है। मगर फिर भी उसे अपना पोषण तो करना ही पड़ता है। राष्ट्र ऐसे स्त्री-पुरुषोंकी जीविकाका खुशी-खुशी प्रबन्ध करता है और फिर भी उन्हें निःस्वार्थ मान कर उनका सम्मान करता है। एक स्वयंसेवक और मजदूरके बीच जो अन्तर है, वह यह है कि जहाँ मजदूर मजदूरी देनेवालोंकी सेवा करता है, वहाँ राष्ट्रीय स्वयंसेवक अपनी सारी सेवाओंको राष्ट्रके उस कार्यके लिए अर्पण कर देता है, जिसमें वह श्रद्धा रखता है और उसके लिए भूखों मर मिटना भी पसन्द करता है।

[अंग्रेजीसे]

***यंग इंडिया*, १६-५-१९२९**

३६६. टिप्पणियाँ

पण्डित सुन्दरलालकी पुस्तक

संयुक्तप्रान्त[1] सरकारने पण्डित सुन्दरलालकी 'भारतमें अंग्रेजो राज' नामक पुस्तक जब्त करनेमें बड़ी सख्तीसे काम लिया। लेकिन उसे इतने ही से सन्तोष न हुआ। अब वह उन लोगोंको भी सता रही है, जिनके पास जब्तीकी घोषणासे पहले उक्त पुस्तककी प्रतियाँ पहुँच चुकी थीं, या जिनके पास उसके होनेका सरकारको शक है। संयुक्तप्रान्त सरकारकी प्रेरणासे हो, या स्वेच्छासे, मध्यप्रान्त सरकारने भी संयुक्तप्रान्त सरकारकी नकल करते हुए अपने प्रान्तमें इस पुस्तकका प्रवेश रोक दिया है। एक संवाददाता पूछते हैं, "अब वे लोग क्या करें जिनके पास उक्त पुस्तक मौजूद है?" मेरे विचारमें, जिन लोगोंके पास यह पुस्तक है उनके लिए यह जरूरी नहीं है कि वे उसकी जिल्दोंको पुलिसके हवाले कर दें। पुस्तकको अपने पास रखनेसे किसी तरह नीतिका उल्लंघन नहीं होता। और जो लोग पुस्तककी जब्तीको दुष्टतापूर्ण लूट समझते हैं; उनका न केवल यह कर्त्तव्य है कि वे जब्तीके काममें सरकारकी मदद न करें, बल्कि उन्हें तो चाहिए कि वे हर कानूनी उपायसे अधिकारियोंकी उन घोर दुष्टतापूर्ण हरकतोंको असफल बनायें, जिनके जरिये वे पुस्तककी उन प्रतियोंको भी हड़प जाना चाहते हैं, जो प्रकाशकके हाथसे निकल कर ग्राहकों तक पहुँच चुकी हैं। अगर मेरे पास उस पुस्तककी कोई जिल्द होती, और मैं सरकारी अभियोगकी

१. आजका उत्तर प्रदेश।

जोखिमको सिरपर लेना न चाहता तो मैं उसे जला डालता। लेकिन अगर मैं सरकारके अभियोगको अपने सिर लेना चाहता, तो तुरन्त ही पुलिसको सूचित करता कि पुस्तक मेरे पास है और उसे चुनौती देता कि वह मुझे गिरफ्तार कर ले। अगर मैं अभियोगको अपनी ओरसे न्योता तो नहीं देना चाहता होता, मगर उसके लगाये जानेकी मुझे चिन्ता भी न होती, तो उस हालतमें भी मैं पुस्तकको अपने पास ही रखना कर्त्तव्य समझता और पुलिसको स्वयं उसका पता लगानेका अवसर देता।

मुझे मालूम हुआ है कि मध्यप्रान्त सरकारकी उक्त विज्ञप्तिके अनुसार उक्त पुस्तकके उद्धरणका छापना भी जुर्म करार दिया गया है। आशा है, यह खबर झूठ होगी। लेकिन अगर सच है, तो समाचारपत्रोंके लिए जहाँ ग्रन्थकर्त्ता और प्रकाशकके प्रति स्पष्ट सहानुभूति प्रकट करनेका यह एक अच्छा अवसर है वहाँ इसीके द्वारा सम्बन्धित सरकारोंका मनोरथ विफल भी किया जा सकता है। यह काम इस तरह किया जा सकता है कि जिनके पास पुस्तककी प्रतियाँ हों, वे समाचारपत्रोंके पास उसके चुने हुए उद्धरण भेजें और समाचारपत्र उन्हें छापें। केन्द्रीय और स्थानीय सरकारें हमें एक छोटे पैमानेपर सविनय अवज्ञाका मौका दे रही हैं। अतः जो लोग सविनय अवज्ञामें विश्वास रखते हों वे इन अवसरोंसे लाभ उठानेमें न चूकें। यद्यपि इस समय देशका वातावरण अत्यन्त निराशाजनक और कायरतापूर्ण हो रहा है, तथापि जो निडर और अविचलित हैं उन्हें इस वातावरणसे प्रभावित ही नहीं होना चाहिए, बल्कि उन्हें ऐसे हर उचित और वैध अवसरका लाभ उठाना चाहिए जब वे सरकारको अपनी राक्षसी शक्तिका भरपूर उपयोग कर देखनेकी चुनौती देकर कार्यकर्त्ताओंमें आशा और उत्साह फूंक सकते हों।

अभय आश्रम

'यंग इंडिया' के पाठक इस महत्वपूर्ण राष्ट्रीय संस्थासे अपरिचित नहीं हैं। संस्थाके १९२८ के दौरान किये गये कार्योंका विवरण अभी-अभी मिला है। यह उसकी चतुर्दिक प्रगतिका विवरण है। संस्थाका सबसे बड़ा कार्य उसका खादी-विभाग है। उसकी दिनोंदिन बढ़ती बिक्रीका लेखा इस प्रकार है:

१९२४ — २१,८२२ रुपये
१९२५ — ७०,६२० ,,
१९२६ — १,४२,९६० ,,
१९२७ — १,४२,८२० ,,
१९२८ — १,८८,०९१ ,,

मजूरीके तौर पर दी गई कुल राशि ७०,५२५ रुपयेका वितरण इस प्रकार किया गया:

बुनकरोंको — २९,४९२ रुपये
दर्जियोंको — ७,०८१ ,,
कतैयोंको — ३०,४५३ ,,
धोबियोंको — ३,४९४ ,,

यह सारा काम २३ खादी-केन्द्रोंके जरिए किया जाता है, जिनसे पूरे समय काम करनेवाले ६१ कार्यकर्त्ताओंकी जीविका चलती है। इन केन्द्रोंका नियंत्रण एक मण्डल करता है जिसका प्रतिवर्ष चुनाव किया जाता है। इस समूचे काममें १,२१,-००० रुपयेकी पूंजी लगी हुई है, जिसमें से ५५,००० रुपये अ० भा० च० संघसे बतौर कर्ज लिये गये हैं। शेष राशि बैंकोंसे उधार ली गई है जिनको काफी ऊँचे दर पर सूद चुकाना पड़ता है। सूदकी राशि प्रति वर्ष ५,००० रुपये पड़ती है। अब जनता चाहे तो सूदकी यह राशि साल-दर-साल अदा करती रहे या फिर आश्रमको बिना ब्याजके उतनी रकम बैंकों जैसी शर्तोंपर ही उधार दे दे।

आजकल आश्रम रँगाईके क्षेत्रमें प्रयोग कर रहा है और उसका दावा है कि "मशीनोंके इस्तेमालके बिना ही वह बिलकुल एकसार और पक्के रंगोंमें वस्त्र रँग सकता है।" विवरणमें कहा गया है — "हम अपने खरीदारोंसे अपने रँगे खाकी रंगके वस्त्र खरीदनेका विशेष आग्रह करते हैं, जो धूप, धुलाईके मसालों और पसीनेसे बदरंग नहीं होते।"

आश्रमका दूसरा कार्य-क्षेत्र है — राष्ट्रीय शिक्षा। वह ३१ प्राथमिक पाठशालाएँ चला रहा है, जिनमें से १९ ढाका, ९ टिपरा और ५ बाँकुरा जिलेमें हैं। इन पाठशालाओंमें १,०५८ छात्र शिक्षा पा रहे हैं। माध्यमिक शिक्षाके तीन विद्यालय हैं, जिनमें १९९ विद्यार्थी हैं। शिक्षापर कुल ४,७०२ रुपये ९ आने ६ पाई खर्च किया गया है। आश्रमका एक चिकित्सा-विभाग भी है जिसमें बाहरी रोगियोंके लिए एक डिस्पेंसरी, एक अस्पताल एक मेडिकल स्कूल और एक सेवा समिति है। डिस्पेंसरीसे ३,१५७ रोगियोंने लाभ उठाया, जिनमेंसे ७२१ महिलाएँ थीं। मलेरियासे पीड़ित रोगियोंकी संख्या ही सबसे अधिक रही। दूसरे नम्बरपर थे उदर-कृमियोंसे पीड़ित २७७ रोगी और तीसरे नम्बर पर कालाजारके रोगी। अस्पतालमें २० पलंग हैं। आलोच्य वर्षमें २१५ रोगी दाखिल किये गये थे। डिस्पेंसरी और अस्पतालपर क्रमशः १,५७४ और ४,४०० रुपये खर्च हुए। मेडिकल स्कूलमें २० विद्यार्थी प्रशिक्षण पा रहे हैं। 'सेवा सदन' का मुख्य काम अस्पतालमें दाखिल गरीब रोगियोंके लिए घर-घर जाकर चावल उगाहना है। आश्रम अस्पृश्यता या वंशगत जाति-भेदमें विश्वास नहीं करता। आश्रम छोटे-मोटे पैमानेपर खेती भी करता है और उसने १८ बीघे जमीनमें २०० मन चावलकी पैदावार कर दिखाई और इतनी साग-सब्जियाँ भी पैदा कर लीं जो आश्रमके ५० सदस्योंके लिए छः महीने तक पूरी पड़ती रहीं। आश्रममें ६ गायें और १० भैंसें हैं। ढाकामें एक आदर्श डेरी फार्म बनानेकी कोशिश चल रही है। आश्रमके अनेक केन्द्रोंके पास अपने पुस्तकालय भी हैं। आश्रमने अपने विभिन्न कार्योंके लिए जनतासे ३७,००० रुपये जमा किये हैं। आश्रमको अपने पाँच वर्षोंके जीवनकालमें कुल मिलाकर डेढ़ लाख रुपयेकी राशि चन्दोंके रूपमें मिली है। अगले वर्षकी उसकी आवश्यकता है — ५०,००० रुपये खादी-विभाग और ५०,००० रुपये अन्य विभागोंके लिए। इस प्रकारकी संस्थाको विवेकशील जनतासे आवश्यक रकम प्राप्त करनेमें कोई कठिनाई नहीं पड़नी चाहिए।

विदेशी वस्त्रका बहिष्कार

विदेशी वस्त्र-बहिष्कार समितिने नीचे लिखा सूचना-सार[1] प्रकाशित किया है। आशा है, दूसरी म्युनिसिपैलिटियाँ और लोकल बोर्ड इससे प्रेरणा पाकर काम करेंगे।

मोटी खादी

विदेशी वस्त्र-बहिष्कार आन्दोलनके कारण खादीके उत्पादन और बिक्रीकी मात्रा सहज ही बढ़ गई है। मगर यदि खादीके उत्पादनको असीमित बनाना है, तो थोड़े समयके लिए खादीकी अच्छाईमें तो फर्क अवश्य पड़ेगा। अखिल भारतीय चरखा संघ अपने शान्त प्रयत्न और प्रयोगोंके कारण खादीकी सुन्दरता, और उसकी बनावट वगैरामें लगातार प्रगति करता गया है। लेकिन जब कार्यकर्त्ता कच्चे या नौसिखुए कतैयोंके पास जायें और उनसे सूत तलब करें तब कोई खास शर्तें उनपर न लादें। नौसिखुए कातनेवाले आरम्भमें एकदम महीन और इकसार सूत नहीं कात सकेंगे। इसलिए अगर जनता खादी-आन्दोलनको और उसके द्वारा लाखों भूखों मरनेवालोंको मदद पहुँचाना चाहती है तो उसे चाहिए कि वह खादी-आन्दोलनके प्रत्येक नये दौर और प्रत्येक नये विकासके मौकेपर थोड़े समयके लिए मोटी-झोटी खादी पहनकर ही सन्तोष कर ले। विदेशी वस्त्र-बहिष्कारको सफल बनानेके लिए या भारतके गरीबोंकी मददके लिए मोटी-झोटी खादी पहनकर रहना कोई इतना बड़ा त्याग तो नहीं है।

अ० भा० च० संघकी सदस्यता

पाठकोंने पिछले हफ्तेके 'यंग इंडिया' के अंकमें अ० भा० च० संघ द्वारा प्रकाशित यह सूचना देखी होगी कि उसने 'बी' श्रेणीकी सदस्यता समाप्त करनेका निश्चय कर लिया है। मैं इसे एक सही कदम मानता हूँ। 'बी' श्रेणीकी सदस्यता उन लोगोंको अँटानेके लिए ही चालू की गई थी जो हर महीने एक हजार गज हाथ-कता सूत तैयार करके संघको भेजनेमें अपनी असमर्थता प्रकट करते थे। लेकिन हमारा अनुभव यह रहा है कि प्रतिवर्ष दो हजार गज सूत कातनेकी शर्तपर दी जानेवाली इस 'बी' श्रेणीकी सदस्यताका लाभ कोई बहुत ज्यादा लोगोंने नहीं उठाया। और फिर जब संघकी कार्यकारी परिषदके लिए सदस्योंके निर्वाचनमें मर्यादित अधिकार दिये जानेकी घोषणा की गई तब तो फिर 'बी' श्रेणी की सदस्यताका अटपटापन और भी उभर कर सामने आ गया। मतदानका अपना अधिकार बनाये रखनेके लिए 'ए' श्रेणीके सदस्य बारम्बार आग्रह करने लगे कि उनको 'बी' श्रेणीमें रख दिया जाये। परिषद नहीं चाहती थी कि वह मतदानके लिए निश्चित किये गये अपने नियमोंसे मुकरे। इसलिए मूल सूचीमें तो कोई संशोधन-परिवर्तन नहीं किया गया, लेकिन यह तय कर लिया गया कि आगेसे सदस्योंकी केवल 'ए' श्रेणी ही रखी जाये। और चूँकि अखिल भारतीय चरखा संघकी नीति प्रारम्भसे ही केवल उन

१. यह यहाँ नहीं दिया गया है।

लोगोंको सदस्यता देनेकी रही है जिनको चरखेके सन्देशपर पूरी आस्था हो, इसलिए यही ठीक समझा गया कि सदस्योंकी एक ही श्रेणी रखी जाये और उसकी शर्तें अपेक्षाकृत कड़ी रहें। निस्सन्देह इसके फलस्वरूप संघकी सदस्यसंख्या काफी घट जायेगी। परन्तु परिषदको ऐसा खतरा मोल लेनेमें कोई संकोच नहीं है। यदि सदस्यगण प्रति दिन आधा घंटा भी कताईके लिए देनेको तैयार न हों, तो इससे चरखेके संदेशपर उनकी कोई अधिक आस्था प्रकट नहीं होती।

अ० भा० च० संघ के तकनीकी विभागने कताईके विषयमें अपनी अनेक शाखाओं-को लिख भेजा है कि सदस्यताके चन्देके रूपमें भेजा जानेवाला सभी सूत समान रूपसे अच्छे किस्मका नहीं रहता। उसे जैसे-तैसे पैकिटोंमें रख कर भेज दिया जाता है और बहुधा इस बातका भी खयाल नहीं रखा जाता कि उसपर डाक-खर्च कितना ज्यादा पड़ता है। टिप्पणीमें कहा गया है:

> **कई बार तो सूतकी कीमतसे कहीं ज्यादा उसपर डाक-खर्च आ जाता है। एक क्षेत्रसे जितना सूत भेजा गया था उसपर कुल डाक-खर्च ५५ रुपये आया था, अर्थात् सूतकी कुल कीमतका ६० प्रतिशत। इसलिए हमारा सुझाव है कि हर प्रान्तसे केवल एक ही जगहसे सूत भेजा जाये और वह भी माल-गाड़ीके जरिए।**

कुछ मामलोंमें तो सूत इतना मोटा-झोटा और गाँठ-गठीला था कि उसका कोई उपयोग ही नहीं था। मैं बार-बार कहता रहा हूँ कि बेकार किस्मका सूत चन्देके रूपमें स्वीकार ही नहीं किया जाना चाहिए। चन्देके रूपमें सूत देनेका मतलब ऐसा सूत देना है जिसे बुना जा सके, ठीक उसी तरह जैसे कि चन्देके रूपमें दी जानेवाली मुद्रा ऐसी होनी चाहिए जो बाजारमें चल सके, खोटी न हो। चन्दा देनेवाले कतैयों-को कताई और लच्छियाँ बनानेके सम्बन्धमें पर्याप्त जानकारी होनी चाहिए और संघकी शाखाओंको इस बातपर ठीक ध्यान देना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १६-५-१९२९

३६७. पत्र : मीराबहनको

१६ मई, १९२९

चि० मीरा,

११ तारीखका एक पत्र मिला। बेशक तुम जितनी बार चाहो पत्र लिखो और दूरी-निवारक सुविधाओंका मनचाहा उपयोग करो। मैंने तो बस इतनी बात कही थी कि सुविधाएँ छिन जानेकी स्थितिमें हमें अपना मन अशान्त नहीं होने देना चाहिए।

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च :]

अब मैं कलकत्ताके रास्तेसे जा रहा हूँ। इसलिए मैं शायद बिलकुल ही न लिख सकूँ। ईश्वरने चाहा तो हम २२ तारीखको बम्बईमें मिलेंगे ही।

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५३७७)से।
सौजन्य : मीराबहन

३६८. पत्र : छगनलाल जोशीको

[१६ मई, १९२९][1]

चि० छगनलाल,

इस समय ऐसी जगहोंमें घूम रहा हूँ जहाँ डाकका कोई भरोसा नहीं रहता। कार्यक्रममें थोड़ा भी फेरफार हो जाये तो डाक आगे-पीछे हो जाती है और जब मिलनी चाहिए उससे देरमें मिलती है। लेकिन अब ज्यादा दिन नहीं हैं। आज गुरुवार है। बुधवारकी रातको बम्बई पहुँच जाने की आशा है।

अभीतक तबीयत ठीक रही है। और मुझे लगता है कि अब बिगड़नेकी सम्भावना कम ही है। यहाँ 'दत्तमण्डल'में जितनी सोची थी उतनी गर्मी नहीं है। आन्ध्रके लोग 'सीडेड ट्रैक्ट्स'को 'दत्तमण्डल' कहते हैं।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

शंकरन यहाँ पहुँच गया है। उसने कोई तीन मासके बाद आश्रम आनेकी बात कही है। सुब्बैयाको राजाजीके पास भेजा है। सम्भव है कि मेरे बम्बई पहुँचनेतक वापस आ जाये।

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–७ : श्री छगनलाल जोशीने

१. गांधीजी बुधवार, २२ मईको बम्बई पहुँचनेवाले थे। पत्र उससे पूर्व गुरुवार, १६ मईको ही लिखा गया होगा।

३६९. पत्र: मोहनलाल भट्टको

१६ मई, १९२९

भाईश्री मोहनलाल,

'यंग इंडिया' के लिए जितनी सामग्री तैयार हुई है उतनी भेज रहा हूँ। आज सुब्बैया यहाँ नहीं, इसलिए जैसीकी तैसी ही भेज रहा हूँ। यह तुम्हें सोमवारको मिल जानी चाहिए। बहुत ध्यान रखनेपर भी जो सामग्री तुम्हें सोमवारको मिलनी चाहिए वह क्यों नहीं मिलती, यह समझ नहीं आता।

'नवजीवन' में महादेवका लेख देख लिया है। उसमें गलतीसे भाषाके दोष रह गये हैं। 'नवजीवन' तो संग्रहणीय वस्तु है। उसकी मार्फत हम शुद्ध भाषा तथा शब्दोंकी वर्तनी देना चाहते हैं। इसलिए भाषा और शब्दोंके हिज्जे हमारे नियमोंके अनुसार होने चाहिए। इसके लिए किसी सतर्क मनुष्यको नियुक्त करनेकी जरूरत हो तो वैसा करें; किन्तु हमारी छपी सामग्री हमेशा निर्दोष होनी चाहिए। महादेवका लेख देख लोगे तो मेरी बात और स्पष्ट हो जायेगी। यह पत्र महादेवको पढ़ा देना।

बापूके आशीर्वाद

[संलग्न:]

प्रोहिबिशन (नशाबन्दी)
आन्ध्र नोट्स (आन्ध्रकी टिप्पणियाँ)
नीड ऑफ द आवर (समयकी पुकार)
लिबरेट द विमेन (स्त्री स्वातन्त्र्य)[१]

गुजराती (एस० एन० ११७५६)की फोटो-नकलसे।

३७०. पत्र: छगनलाल जोशीको

१७ मई, १९२९

चि० छगनलाल,

तुम्हारा १४का पत्र आज मिला है। दूसरे घूम-फिरकर मिल जायेंगे। यह तो अच्छा हुआ कि रणछोड़भाई आ गये हैं।

मगनलालके श्राद्धकी मुझे बिलकुल याद न थी। दैनन्दिनी न लिखूँ तो मुझे तारीख और वारका भी ध्यान न रहे। किन्तु मैं तो रोज ही मगनलालका श्राद्ध मनाता हूँ, इसलिए इस लौकिक तिथिका ध्यान नहीं रहा, इसका मुझे तनिक भी शोक

१. मूलमें ये नाम अंग्रेजीमें हैं।

नहीं है। इसे याद रखना तुम सबका कर्त्तव्य था। और लगता है कि तुमने इसका अच्छी तरह पालन किया है।

अखण्ड चरखा चलानेके विचारको बहुत प्रोत्साहन नहीं देना चाहिए, ऐसा मुझे भी लगता है। ऐसे अवसरपर एक चरखा चलता रहे, यह तो मैं ठीक मानता हूँ।

सफाईके लिए जो निश्चित किया है, वह रोज निभ सके तो ज्यादा अच्छा हो। हमारे पाखाने और पेशाबखाने जितने साफ होने चाहिए, उतने साफ नहीं रहते।

महादेवका पत्र उसे शोभा देनेवाला है। उसमें जितना निराशाका अंश है उसका मुझपर असर नहीं हुआ है। सब कोई अपनी सामर्थ्यके अनुसार काम कर रहे हैं, ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है। हम नीचे नहीं गिरे। जागृत तो रहना चाहिए; इसलिए आत्मनिन्दा एक हदतक आवश्यक है।

अब तो हम लोग बम्बई पहुँचनेके दिन गिन रहे हैं। आज शुक्रवार है। रविवार और सोमवार तो कुरनूलमें रहेंगे। मंगलवारकी रात अडोनीसे फास्ट पैसेन्जर लेनेका इरादा है और बुधवारकी रात बम्बई।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

तकुएके बारेमें मीराबहनका पत्र देखने लायक है। तुममें से जिसे उसमें दिलचस्पी हो उसके पढ़नेके लिए साथ भेज रहा हूँ।

बापू

गुजराती (जी० एन० ५४१८)की फोटो-नकलसे।

३७१. पत्र : नारणदास गांधीको

१८ मई, १९२९

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। भले हो जिन्दगी-भर मुझे यही करना पड़ा है, फिर भी मुझे लगता है कि दूर बैठे-बैठे आश्रमकी व्यवस्था देखना मेरे लिए ठीक नहीं है। मगनलालके समय भी ऐसा ही था। यह सही है कि जैसे-जैसे वह मुझे जानता गया वैसे-वैसे मेरा बोझ हल्का होता गया और मुझसे कुछ पूछनेकी जरूरत कम पड़ने लगी। लेकिन जो जरूरी लगता था सो तो वह पूछ लेता था। फिर भी इस बार वहाँ आनेपर दूसरा जो प्रबन्ध कर सकूँगा, करूँगा। मुझे सब व्यवस्था अपने हाथमें रखनेका मोह तो नहीं है। तुम्हारा पत्र पढ़कर फाड़ दिया था।

अगर कोई आश्रममें छगनलालकी निन्दा करता है तो उसे सहन करना चाहिए। कुछ लोग निन्दा करते हैं तो स्तुति करनेवाले भी तो हैं।

मुझे जितने भी पत्र प्राप्त हुए हैं सभी प्रेमभाव व्यक्त करनेवाले हैं। क्या तुम्हें नहीं लगता कि छगनलालको प्रायश्चित्तके लिए आश्रममें रह ही जाना चाहिए। यदि वह ऐसा करनेमें असमर्थ हो तो दूसरी बात है। धर्म तो यही कहता है। लगता है कि शून्यवत रहनेके बारेमें मेरे कथनका तुम अर्थ नहीं समझ पाये हो। शून्यवत रहनेका अर्थ काम-काजके बिना नहीं वरन अभिमानरहित रहना है। 'मैं कुछ हूँ' ऐसा अभिमान हमेशा छगनलालके मनमें रहा है। इसलिए तो उसे पाप करनेकी प्रेरणा हुई। मेरे कथनका यही अर्थ था कि यह सब छूट जाना चाहिए। छगनलाल आश्रम जीवनके अनुसार न रह सके, संयुक्त रसोईमें शामिल न हो सके तो तुम्हारी तरह भी रह सकता है। आश्रममें रहनेसे वह निरभिमानी बनेगा लेकिन इस विषयमें और बात करेंगे। इस बारेमें मुझे कोई आग्रह नहीं है।

जिसमें छगनलाल और काशीका भला हो मैं वही करनेको तैयार हूँ और उसीकी इच्छा करता हूँ।

पुरुषोत्तमके विषयमें मिलनेपर बात करूँगा। उसका स्वास्थ्य सुधारना ही होगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

बहुत लोग आ-जा रहे हैं; उसी भीड़-भाड़में यह पत्र लिखा है।

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–९ : श्री नारणदास गांधीने

३७२. पत्र : के० नरसमको

[१८ मई, १९२९]

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। यदि कमरे अलग-अलग होनेसे भी संघर्षका अन्त नहीं आता, तो आपको अलग-अलग मकानों या अलग-अलग गाँवों तकमें जाकर रहना चाहिए।

ईश्वरमें अपना चित्त पूरी तरह लगानेसे सभी मनोविकार नष्ट हो जायेंगे?

यदि कोई आदमी अपने-आपको गाँवके लोगोंके साथ बिलकुल घुलामिला देना चाहे, तो खद्दर पहनना उसका परम कर्त्तव्य हो जाता है।

अहिंसा जीवनकी आधार-शिला है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत के० नरसम
तनकू

अंग्रेजी (जी० एन० ८८०९) की फोटो-नकल से।

३७३. एक प्रश्न

मिलमें काम करनेवाले एक नवयुवक लिखते हैं:[1]

अंग्रेजीमें एक कहावत है। उसका आशय यह है कि डिब्बेको लड्डूसे भरा बनाये रखना और उसमें से खाते भी रहना, दोनों काम एक साथ नहीं हो सकते। अगर लड्डू खायेंगे तो डिब्बेका खाली होना अनिवार्य है। इसी तरह मिलकी नौकरी छोड़ना और १००) मासिक व्ययको निभानेवाली नौकरी ढूँढ़ना, दोनों काम एक साथ नहीं हो सकते। थोड़ा गम्भीर विचार करनेपर हमें पता चलेगा कि बड़ी-बड़ी तनख्वाहें ज्यादातर उन्हीं धन्धोंमें मिलती हैं, जो अंग्रेजी राज्यमें शुरू हुए हैं और जो अंग्रेजी राज्यको बनाये रखनेमें कुछ अंशतक उसके मददगार होते हैं। जिस देशमें एक आदमीकी दैनिक आय सात पैसेसे ज्यादा नहीं है, जहाँके १० करोड़ स्त्री-पुरुष प्रतिदिन आधा पेट खाकर जीते हैं, उस देशमें न तो बड़ी-बड़ी तनख्वाहें हो सकती हैं, न होनी चाहिए। व्यक्तियोंकी तनख्वाहें जितनी बड़ी होती हैं, गरीबोंका बोझ उतना ही ज्यादा बढ़ जाता है। अतः जो मिल वगैरा विभागोंमें नौकरी करना पसन्द न करते हों, उन्हें अपना खर्च घटाना चाहिए। खर्च घटानेके दो रास्ते हैं: एक तो रहन-सहन सादा बनाना; दूसरे अपने आश्रितोंकी संख्या कम करना। जो काम करने योग्य उम्रके हैं, अपंग नहीं हैं, उन्हें उद्यम करके घर-खर्चमें हाथ बँटाना चाहिए। घरेलू उद्योग-धन्धोंकी कोई कमी नहीं है। कई घरेलू धन्धे तो सहज ही सीखे जा सकते हैं और बिना पूँजीके हाथमें लिये जा सकते हैं। जो इन दो मार्गोंमें से एक पर भी चलनेको तैयार न हो, वह अपने वर्तमान कामपर डटा रहे और यह काम करते हुए वह जो-कुछ बचा सके, बचाये, और जितनी सेवा कर सके, करे। मिल मजदूरोंके दुःखोंका निरीक्षण करके, उनके निवारणके लिए जिन उचित उपायोंका अवलम्बन लिया जा सके, उनसे काम ले। वह अपने चरित्र द्वारा साथियोंके चरित्र पर असर डाले और स्वयं अपना चरित्र शुद्ध बनाये रखे। अगर नौकर प्रामाणिक और होशियार हो तो वह अपने मालिकको भी प्रभावित कर सकता है और इस प्रकार मजदूरोंके लिए न्याय प्राप्त कर सकता है।

संसारमें कर्म-मात्र, आरम्भ-मात्र दोषमय समझे गये हैं। यह होते हुए भी जहाँ तक हो सके हम दोष-मुक्त रहें और निर्दोष काम करते जायें। साथ ही कर्म विशेषके दोष देखकर निराश होनेके बदले या तो उस कर्मको छोड़ देना चाहिए या उसमें लिप्त रहकर भी जहाँतक शुद्ध रहा जा सके, रहना चाहिए। कसाई भी अगर चाहे

१. यहाँ नहीं दिया गया है। युवकने लिखा था कि मजदूरोंके साथ होनेवाले अन्याय और मिल-मालिकोंकी स्वार्थ-वृत्तिको देखते हुए वह वहाँ काम नहीं करना चाहता; पर किसी दूसरे धन्धे द्वारा पर्याप्त धन कमाना भी उनके लिए सम्भव नहीं। इस दशामें उसे क्या करना चाहिए?

तो एक हदतक दयालु बन सकता है। मैं ऐसे कसाइयोंको जानता हूँ। 'महाभारत' के सुप्रसिद्ध कसाईका जीवन इस सम्बन्धमें विचार करने योग्य है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १९-५-१९२९

३७४. एक भ्रम

बम्बईसे एक मित्र लिखते हैं:[1]

इस तरहकी दलील मैं पहले भी सुन चुका हूँ। वहमकी दवा अबतक कोई हकीम या वैद्य नहीं खोज सका है। इस कारण मुझे बहुत कम आशा है कि मैं जो दलीलें दूँगा, उनसे बी० ए० और एल० एल० बी० के मोहमें फँसे हुए लोग अपना मोह छोड़ देंगे। फिर भी जिनके हृदयमें अबतक शंका है, उनके लिए दो तीन सचोट बातें पेश करता हूँ।

देशमें वकीलोंकी तादाद बेशुमार है, मगर उनमें से कितने सेवा करते हैं? जो सेवा करते हैं उनमें से कितने वकील कानूनी परीक्षाका उपयोग करते हैं?

गोखले वकील नहीं थे, फिर भी उनकी सेवामें कहीं कमी नहीं मानी जाती। सर दिनशा वाछा वकील नहीं हैं, दादाभाई वकील नहीं थे, ह्यूम भी वकील नहीं थे।

फिर यह बात भी नहीं है कि जो वकील लोग इस समय सेवाक्षेत्रमें हैं, वे अपनी वकालतके कारण चमकते रहे हों, मगर उनमें दूसरी ऐसी शक्तियाँ हैं जो उन्हें चमकाती हैं।

दुनियामें अबतक जो महान् देश-सेवक हो चुके हैं, उनमें वकीलोंके नाम इने-गिने ही दिखाई पड़ेंगे।

देशकी स्वाधीनता कानूनी बारीकियोंसे हासिल नहीं होती। उसके लिए या तो लोहेकी तलवार जरूरी है या सत्याग्रहकी खड्ग। प्रताप, शिवाजी, नेलसन, वेलिंग्टन, क्रूगर वगैरा वकील नहीं थे, अमानुल्ला वकील नहीं हैं, न लेनिन ही वकील था। इन सबमें वीरता, स्वार्थ-त्याग, साहस आदि गुण थे, यही वजह है कि ये इतनी सेवा कर सके।

मैं ये पंक्तियाँ वकीलोंकी या वकालतकी निन्दा करनेकी गरजसे नहीं लिख रहा हूँ। जीवनमें इनका अपना भी क्षेत्र है। भारतवर्षके अर्वाचीन इतिहासमें वकीलोंकी सेवाका हिस्सा बहुमूल्य है। इन पंक्तियों द्वारा मैं यही बताना चाहता हूँ कि सेवाके लिए वकील बनना आवश्यक नहीं है, और जिन वकीलोंने सेवा की है, उनकी सेवामें वकालतका हाथ बहुत थोड़ा था।

१. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। लेखकने अपने एक मित्रका उल्लेख किया था जो देश-सेवा करनेके पहले वकालत करना चाहते थे और पूछा था कि इन मित्रका भ्रम कैसे दूर किया जा सकता है।

एक बात और। वकील होना, और कानूनकी कामचलाऊ जानकारी हासिल करना, दो भिन्न बातें हैं। कानूनकी जरूरी जानकारी हरएक ख्वाहिशमन्द सेवक हासिल कर सकता है। सर्टिफिकेट पैसे कमानेका साधन है, सेवाका कदापि नहीं।

इस समय हमें हजारोंकी तादादमें सेवकोंकी आवश्यकता है। बहुत थोड़े लोग वकील हो सकते हैं। सेवाका क्षेत्र अनन्त है। सेवकोंकी आज बहुत ज्यादा जरूरत है। इसलिए जिनके दिलमें सेवाके लिए उत्साह है, सच्ची लगन है, वे वकील बनने या दूसरी उपाधियाँ पानेके लिए एक क्षण भी न रुकें। सेवा-मार्गमें सेवकको जिस ज्ञानकी जरूरत पड़ेगी, उसे वह सहज ही प्राप्त कर लेगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १९-५-१९२९

३७५. डाक्टर दलाल

डाक्टर दलालके देहान्तसे उन अनेक रोगियोंको, जिन्होंने उनकी शस्त्रक्रियासे लाभ उठाया है, बहुत अधिक दुःख हुए बिना न रहेगा। वह शस्त्रक्रियामें लगभग अद्वितीय हो गये थे। मेरा उनका सम्बन्ध कई मधुर स्मृतियोंसे पूर्ण है। सन् १९१८ में, जब उनसे पहली बार भेंट हुई थी, उन्होंने अपने आत्मविश्वास, अपनी विनोदप्रियता, और अपनी चातुरी द्वारा मेरा मन चुरा लिया था। उनकी 'फीस' बहुत ज्यादा मानी जाती थी। एक बार इस बारेमें जब मैंने उन्हें ताना दिया था, तब जवाबमें उन्होंने कहा था: "जो देने योग्य है उनसे अगर मै कसकर फीस न लूँ तो आप-जैसोंकी सेवा कैसे कर सकूँ?" इस घटनाके बाद तो कई वर्ष बीत गये, और इस बीच कई रोगियोंके लिए मुझे उनकी सेवाकी जरूरत पड़ी थी। इन रोगियोंमें दीनबन्धु एन्ड्र्यूज और आचार्य गिडवानी जैसे भी थे। इनमें से किसी एकके लिए भी डाक्टर दलालने कभी संकोच प्रकट नहीं किया। उनकी मृत्युकी खबर देते हुए महादेव देसाई लिखते हैं:

> **अपने देहान्तके एक सप्ताह पहले डाक्टर दलालने जमनालालजीसे कहा था कि "अब आपके सुझावानुसार नासिकमें सेनेटोरियम खोलूँगा और वहीं बस जाऊँगा। अब मुझे धनका लोभ नहीं रह गया है।" मई महीनेमें तो वह तन्दुरुस्त हो जानेकी आशा रखते थे। एक अति उत्तम गुजराती सर्जनके चल बसनेसे गुजरातकी बड़ी भारी क्षति हुई है।**

ईश्वर डा० दलालके कुटुम्बियोंको धीरज बँधाए। यह जानकर डा० दलालके कुटुम्बका दुःख हलका होना चाहिए कि उनके दुःखमें भाग लेनेवालोंमें डा० दलालके अनेक रोगी और मित्र भी हैं।

ऐसी मौतें हमें अधिक सावधान बनानेवाली होनी चाहिए। यह जानकर कि बड़े-बड़े डाक्टरों और हकीमोंको भी बेखबर रहकर यों ही कूच कर देना पड़ता है,

हम-जैसे सामान्य लोगोंको चिकित्साके सम्बन्धमें धीरज रखना चाहिए और उसकी मर्यादा नियमित कर देनी चाहिए। इलाजके लिए जगह-जगह भटकना, चक्कर काटना और पानीकी तरह पैसा बहाना, हमारे मिथ्या मोहकी निशानी है। यह जानकर कि मौत जब चाहेगी तब हमें उठाकर ले जायेगी, हमें चाहिए कि जो अच्छा काम, जो सेवा करनेका हमारा दिल हो उसे हम भविष्यपर कभी न छोड़ें।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, १९-५-१९२९

३७६. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

१९ मई, १९२९

चि० मणिलाल और सुशीला,

नीरस होनेपर भी तुम दोनोंके पत्र आते अवश्य हैं। मैं तो सरस या नीरस नियमपूर्वक कुछ भी नहीं लिखता। इसलिए तुम दोनोंकी शिकायत सच्ची मानी जायेगी। किन्तु इस यात्रामें तारीखोंका कुछ ध्यान नही रख पा रहा हूँ। मेरी समझमें मै बर्मा और आन्ध्र देशकी यात्रामें तुम्हारी डाक नही देख पाया। अब यात्राकी गति कुछ कम होगी इसलिए मैं ज्यादा सावधान रहूँगा।

सीता नाम तुम्हें न पसन्द आनेकी खबर मुझे नानाभाईकी मार्फत मिली थी। न पसन्द आनेका कारण तो ठीक लगता है। सुशीलाके लिए तो सीताका आदर्श ठीक है। किन्तु बालिकाके लिए तो किसी विद्रोही महिलाका नाम होना चाहिए। ऐसे सब गुणोंवाली किसी कन्याका शास्त्रोंमें विवरण है या नहीं, इस समय मुझे याद नहीं आ रहा। इस भावनाकी खबर मुझे पहले दे देनी चाहिए थी। अब कोई दूसरा नाम सोचूँगा। हम लोगोंमें अंग्रेजोंकी तरह एक व्यक्तिके दो-तीन नाम हो सकते हैं। सीताके चाहे दो तीन नाम रख दें। ऐसा लिख कर मैं सीता नामका समर्थन करना चाहता हूँ। सीता जैसे पत्नीत्वका आदर्श है, वैसे ही वह कौमार्यका भी आदर्श है। पर मेरा आदर्श तो है कि स्त्रियाँ विवाहित होते हुए भी कुमारिकाका जीवन बितायें। सीता और पार्वती आदि इन दोनों आदर्शों तक पहुँच चुकी थीं। 'रामायण' आदिमें उनका जैसा वर्णन है उसके अनुसार वे विकार-रहित थीं। जब सीताको रामचन्द्रका वियोग सहना पड़ा तो उसे कोई कठिनाई नहीं हुई क्योंकि उसका मन इतना निर्विकार था कि रावण उसे मलिन भावसे स्पर्श भी नहीं कर सका। इसलिए सीता नाम होते हुए भी स्त्री निर्विकार बननेकी सतत चेष्टा करे। इसीलिए सीता सात सतियोंमें से एक है। सतीका अर्थ यह नहीं कि वह पतिके प्रति वफादार हो। सतीका अर्थ है वह स्त्री जो निर्विकार हो। सीताके दो बालक हुए इसे उसके दोषोंमें गिननेकी आवश्यकता नहीं है, क्योंकि वहाँ जो वर्णन है वह यही है कि केवल सन्तानकी इच्छासे ही राम और सीता मिले। आज ऐसा नहीं होता। आजके बच्चोंका

जन्म विकारके कारण होता है। इसलिए मेरे जैसा व्यक्ति प्रजोत्पत्तिको निषिद्ध मानता है। मैं तो सीता आदिके विषयमें जो मान्यता है उसकी बात करता हूँ। सीताको हम ऐतिहासिक स्त्री न मानें। केवल एक आदर्श नारी समझें। ऐतिहासिक राम-सीताको हम नहीं मानते। ऐतिहासिक राम आज मौजूद नहीं है। किन्तु जिसके बारेमें हम सम्पूर्ण ईश्वरत्वका विश्वास करते हैं, जो साक्षात् ईश्वर है, वह राम आज मौजूद है। उस रामनामको रटकर हम तरेंगे। गुण-दोषोंवाले राममें किसीको तारनेकी शक्ति नहीं होगी। यह सब समझमें न आया हो तो मेरे साथ चर्चा अवश्य करना। जो कुछ मैंने अबतक पढ़ा है उसमें मुझे सीताके नामसे उच्च आदर्शवाला कोई नाम मिला नहीं, इसीलिए यह नाम मुझे बहुत प्रिय है। फिर बोलनेमें मधुर और छोटा है। दोनों व्यंजन भी हलके हैं। संयुक्ताक्षर एक भी नहीं और अन्तमें 'आ' होनेसे नाममें संगीतकी ध्वनि भी है। किन्तु तुम इसी नामसे बालिकाको बुलाओ, इसका मैं आग्रह नहीं करता। तुम स्वयं कोई नाम ढूँढ़ कर रख लो, इसमें कुछ दोष नहीं है। धार्मिक ग्रन्थोंमें या उपन्यासोंमें से कोई नाम तुम्हारे सोचे हुए गुणोंका सूचक हो तो वह नाम रख दो। मैं तो और खोजबीन करूँगा ही।

छगनलालका दुःखद किस्सा तो तुम्हें मालूम हो ही गया है। उससे उद्योग मन्दिरमें बड़ा तूफान आ गया है। अब जब मैं वहाँ थोड़े दिन बाद पहुँचूँगा तब ज्यादा खबर मालूम होगी। देवदास अभी वहीं है। नीमू वापस बारडोली पहुँच गई है। रामीका मोरवीका पता है: कुँवरजी खेतसीका घर, त्रिभुवन पारेखकी गली, मोरवी।

मेरा स्वास्थ्य अच्छा है। बा भी कुशलपूर्वक है। इमाम साहब कुछ कमजोर तो हैं; पर वैसे ठीक हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ४७४६)की फोटो-नकलसे।

३७७. पत्र : गंगाबहन झवेरीको

१९ मई, १९२९

चि० गंगाबहन,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। तुम ठीक आनन्द ले रही हो; इसे बनाये रखना। चि० कुसुमने लिखा है कि तुम दोनों एक-दूसरेके नजदीक आती जा रही हो। मैं यही चाहता हूँ। तुम लोगोंमें जो एक-दूसरेको जानती हैं एक हृदय हो जायें तभी वे नई अनुभवहीन बहनोंके आनेपर उनकी सेवा कर पायेंगी। वसुमतीको भी यही लिखता रहा हूँ। तुमने और वसुमतीने एक-दूसरेको ठीक पहचान लिया है। तुम्हारा मण्डल बड़ा हो जाये तो बहुत काम हो सकता है। दो ही बहनोंकी आपसमें बने तो उसमें स्वार्थ आ जाना सम्भव है। सबके साथ बने तो उससे सेवावृत्तिकी वृद्धि हो

सकती है। इसलिए मैं तुमसे यही माँगता हूँ कि तुम सब एक-दूसरेके साथ घुल-मिल जाओ। उसके लिए पहला कदम तो एक-दूसरेको अच्छी तरह जान लेना है।

जब चोर आये तब कोई नहीं डरा, यह बहुत अच्छी बात है। वे आते हैं तो आते रहें। हम जितनी सावधानी रख सकते हैं उतनी रखनेपर भी आते हैं तो आयें। मेरा ख्याल है कि ये लोग हमें शारीरिक हानि पहुँचाने नहीं आते। वे हमें जाननेवाले लोग हैं और हो सकता है हमारा मजाक करने ही आते हों।

डाहीबहन पटेलको क्या हो जाता है?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३०९६) की फोटो-नकलसे।

३७८. पत्र : छगनलाल जोशीको

१९ मई, १९२९

चि० छगनलाल,

तुम्हारा १२ तारीखका पत्र काफी चक्कर काटनेके बाद मिल गया है; यानी १४ तारीखके पत्रके बाद मिला है।

बालकृष्ण मध्यम मार्गको जानता ही नहीं है। किन्तु अन्तमें ठिकाने आ जायेगा। उसकी कठिन शर्तोंका जो पालन कर सकें, वे करें। मैं इस समय इस विषयमें किसीको कुछ नहीं लिखूँगा। वहाँ पहुँचनेपर ही बात करेंगे।

जयकृष्णको[1] तो मैंने समझाया था। तो भी उसने व्रतका संकल्प कर ही लिया। उसे जबरदस्ती कैसे रोकता? अच्छा काम करनेके इच्छुकको तो प्रोत्साहन देना ही चाहिए। वह प्रयत्न करते हुए असफल भी हो जाये तो इससे क्या होता है?

योग्यताकी क्या पहचान है? छगनलालसे बढ़कर अच्छा पात्र हम कहाँसे लायें? हमारा इतिहास यही बताता है कि योग्य व्यक्तिका ही पतन होता है। इसमें आश्चर्य और दुःख करनेकी बात नहीं है। अधिकार आदिके उपयोगकी भी मर्यादा है। जिन्हें हम योग्य नहीं मानते, पर जो समय आनेपर योग्य सिद्ध हुए, ऐसे व्यक्तियोंके मेरे पास अनगिनत उदाहरण हैं। हम जितने सावधान रह सकें, उतने सावधान रहते हुए आगे बढ़नेका प्रयत्न करें। इस संसारमें जोखिम उठाये बिना कुछ काम नहीं हो सकता। मोक्ष प्राप्त करनेके पुरुषार्थमें कोई भी जोखिम उठाना पड़े, उठानेसे न डरें।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

इस पत्रको पूरा करते ही मीराबहनका पत्र हाथमें आया। उससे भी अधिकारीका निर्णय करनेके बारेमें प्रकाश पड़ता है। जिसे हम पागल समझते हैं वह व्यक्ति

१. भणसाली; मूलमें जयकरन है, जो कि स्पष्ट भूल है।

अपनेको योग्य सिद्ध करेगा कि नहीं यह तो भगवान जाने। किन्तु हमें कैसे मालूम हो? हमारा ज्ञान कितना है? भविष्यकी कौन जानता है? दूसरी तरह भी मीराका पत्र उपयोगी होगा, यह सोचकर भेज रहा हूँ।

बापू

गुजराती (जी० एन० ५४१९) की फोटो-नकलसे।

३७९. टिप्पणी: अनाथाश्रम संघ, नेल्लोरके सम्बन्धमें[1]

१९ मई, १९२९

मुझे आशा है कि ये अनाथ अब अपने आपको अनाथ महसूस नहीं करते।

मो० क० गांधी

अंग्रेजी (जी० एन० ३२३०) की फोटो-नकलसे।

३८०. पत्र: बालकृष्ण भावेको

[१९ मई, १९२९के आसपास][2]

तुम्हारे जानेसे मुझको दुःख हुआ। दुःख इस बातके लिये हुआ कि मैंने यह आश्रम आत्मदर्शनके लिये ही बनाया है; सेवा इसका बाह्य अंग है, व्रतपालन इसका अंतरंग है। मूल उद्देश्य आश्रमका हरिदर्शन ही है। इस हालतमें तुम हरिदर्शनकी लालसामें बाहर क्यों चले गये, यह मैं समझ नहीं पाया।

बापुना पत्रो – ७ : श्री छगनलाल जोशीने

३८१. पत्र: कुसुम देसाईको

[२० मई, १९२९ से पूर्व][3]

चि० कुसुम,

तेरा बेचैन होना ठीक ही था। हालाँकि मैंने कहा था कि जो ठीक लगे वही करो। प्रभावती थककर इस समय मेरे पास गहरी नींदमें सोई पड़ी है। पूरी रात

१. संघ द्वारा प्रकाशित एक पर्चेसे उद्धृत।

२. १९ मई, १९२९ को छगनलाल जोशीको लिखे पत्रमें बालकृष्ण भावेका उल्लेख होनेसे यह पत्र इसी तिथिके आसपास लिखा गया प्रतीत होता है।

३. **बापुना पत्रो – ३ : कुसुमबहेन देसाईने**में दी गई सूचनाके अनुसार यह पत्र आन्ध्रकी यात्राके दौरान लिखा गया था। गांधीजीने २१ मई, १९२९ को आन्ध्रकी यात्रा समाप्तकी थी।

ट्रेनमें शोर होता रहा। तीसरे दर्जेकी भीड़में महात्माको भी थोड़ी तकलीफ सहनी पड़ती है, ऐसा कह सकते हैं। प्रभावती अपने शरीरकी देखभाल कर सकेगी या नहीं, यह देखना बाकी है।

कुछ भी हो, अगली बार यात्रापर तो तुझे साथ रखूँगा ही। कैसे सहन कर सकोगी, यह देखना होगा।

सुलोचनाबहन आनन्दसे होंगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० १७९१) की फोटो-नकलसे।

३८२. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

कुरनूल
मौनवार, २० मई, १९२९

बहनो,

आशा तो यह है कि इस सफरका मेरा यह आखिरी पत्र है। दूसरे सोमवारको तो पत्रके बजाय मैं खुद ही बम्बईसे मन्दिरके लिए रवाना हो जाऊँगा।

इस शहरमें लोगोंने मुझे अपूर्व शान्ति दी है। बाहर भी दर्शनोंके लिए भीड़ खड़ी नहीं होती। अबतक तो मैं सोमवारको भी भीड़से नहीं बच सका हूँ। दो दरवाजोंपर खसकी टट्टी लगा दी गई है, इसलिए बाहर गरम हवा चलनेपर भी अन्दर ठंडक है। इतने प्रेमका अनुभव होनेपर भी मैं सफरकी तकलीफोंकी शिकायत करूँ, तो मेरे जैसा कृतघ्न कौन होगा?

कानोंमें पाँच-सात जगह, नाकमें तीन जगह, हाथकी हरएक अँगुलीमें और पैरकी हरएक अँगुलीमें बाली, अँगूठी व कंगन पहननेवाली बहनोंको कौन समझा सकता है कि इसमें कतई शृंगार नहीं है?

कुछ पढ़ी-लिखी बहनें भी यह सब पहने दिखाई देती हैं। जब-जब इस तरह सजी हुई बहनोंको देखता हूँ, तब-तब (अपने) मन्दिरकी बहनोंकी याद आती है। तुम लोग कितनी उपाधियोंसे छूट गई हो?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६९९) की फोटो-नकलसे।

३८३. पत्र : छगनलाल जोशीको

मौनवार, २० मई, १९२९

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। 'आश्रम समाचार' भी मिला। कुछ पत्र अब भी इधर-उधरसे आनेको बचे ही होंगे।

आजकल स्वदेशीकी चर्चा होती रहती है। आज एक विद्यार्थीको इस विषयमें 'नवजीवन'में जवाब दे रहा हूँ। उससे मन्दिरमें रहनेवालोंको भी चेतावनी देनेका मन होता है। दूसरे व्यक्ति क्या करते हैं यह तो एक ओर छोड़ ही दें; किन्तु हम मन्दिरके लिए जो कुछ लिख मँगायें उसमें स्वदेशीका आग्रह तो करें ही। हमारी डोरी, पट्टी आदि तो हाथसे कते सूतकी होनी ही चाहिए। मगनलालने सीनेका डोरा भी हाथ-कते सूतका ही बनाया था, यह तो मालूम है न? हमारी पेन्सिल, स्याही, कलम आदि स्वदेशी ही होनी चाहिए। जो स्याही मेरे पेनमें है वह स्वदेशी है। इस तरह हर चीजका विचार कर लेना चाहिए। अपने जीवनमें हम जिस असंगतिको दूर कर सकते हों, उसे दूर कर देना जरूरी है। जिस विदेशी वस्तुकी आवश्यकता हो उसे लेनेमें शर्म न मानें, किन्तु उसकी आवश्यकता सिद्ध कर लेनी चाहिए।

वहाँ पहुँचनेपर लेडी रामनाथनकी याद कराना। आनेपर कुछ लिखूँगा। 'यंग इंडिया'के लिए तो २७ तारीखको बम्बई पहुँचनेपर लिखा जायेगा। और यदि उससे पहले वहाँ न पहुँच पाया तो?

भणसाली जगह ले तो इसके लिए उसे रोकनेकी इच्छा नहीं होती। उसका आदर्श अलग होनेपर भी दिशा एक है। वहाँ भी संयम प्रधान है। किन्तु यह तो चर्चाका विषय है; और बात करेंगे।

मैंने तो सोचा था कि कच्चे अनाजके विषयमें अपने प्रयोगकी बात मैं स्वयं आकर बताऊँगा और यहाँसे कोई नहीं लिखेगा। हाँ, रोटी छोड़े दस दिन हो गये हैं। मैं तो मजेमें हूँ। आज ही अपना वजन लिया है। जितना वजन वहाँ था उतना ही आज भी है। काँटा ठीक हो तो यह थोड़ा ज्यादा भी हो सकता है; ९५½ है। अभी तो प्रयोग डरते-डरते कर रहा हूँ। २० वर्षकी उम्रमें शुरू कर अधूरा छोड़ दिया था। वही प्रयोग आज मुझे साठ वर्षकी आयुमें करते हुए बहुत आनन्द आ रहा है; क्योंकि मैं देखता हूँ कि इस प्रयोगकी सफलताका नतीजा मेरे लिए तथा मेरे साथियोंके लिए बहुत बड़ा निकलेगा। यह प्रयोग कहाँतक सफल हुआ है, यह अभी कहा नहीं जा सकता। १८९३ का प्रयोग पन्द्रह दिन करनेके बाद छोड़ दिया था। फल और गिरी तो बहुत वर्षोंतक लेता रहा हूँ; ये तो बिना राँधे हुए ही होते हैं। किन्तु यह एक निराला प्रयोग है। विशेष मिलनेपर बताऊँगा। कोई भी घबराये नहीं। मैंने कोई व्रत नहीं लिया है। शरीरको बिगाड़कर प्रयोग जारी नहीं रखूँगा। खाना तो संयुक्त रसोई-घरमें ही खाऊँगा।

चिमनलाल आदि सब ऊपरके घरोंमें चले गये हैं इसलिए यदि घर इस्तेमाल न किये गये तो खण्डहर हो जायेंगे। मुझे लगता है कि उसमें बिना कुटुम्बवाले लोग भी बस सकते हैं।

बालकृष्ण 'गीता'का अध्ययन जिस तरह चाहे उस तरह जारी रखे।

पण्डितजी[1] यज्ञमें अच्छा योग दे रहे हैं। नकद पैसा सँभालनेका काम भी उनके ही सिर पड़ेगा, इसकी मैंने कल्पना तक नहीं की थी; किन्तु यह भी सच्चा संगीत है। जिन्दगीके अनेक तार जब भी संग-संग बजते हैं तभी सच्चा संगीत सुनाई देता है। दूसरी तरहका संगीत तो जगतमें कई व्यभिचारी भी गा गये हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५४२०) की फोटो-नकलसे।

३८४. पत्र: श्रीमती सोहनलाल शर्माको[2]

२१ मई, १९२९

प्रिय बहन,

तुम्हारा पत्र मिला। जो ब्योरा मुझे बताया गया है यदि वह अक्षरशः ठीक है तो तुम्हारे उस नवयुवकके साथ विवाह करनेमें, जो तुम्हारी रक्षा करनेको तैयार है, मुझे कोई आपत्ति नजर नहीं आती।

तुम्हारा,
मोहनदास गांधी

अंग्रेजी (जी० एन० २८२४)की फोटो-नकलसे।

३८५. आन्ध्र देशमें [-६]

यह दौरा मेरे लिए सबसे अधिक शिक्षाप्रद और दिलचस्प रहा है। इस दौरेके विवरणकी अन्तिमसे एक पहली किस्त इस प्रकार है:[3]

निस्सन्देह, दौरा कष्ट-साध्य रहा, और उतनी ही कष्टकर यहाँकी गरमी भी। पर मुझे यह देखकर बेहद खुशी हुई कि गाँवोंके लोग अद्भुत उत्साहके साथ आगे आये। दौरेका कष्ट स्वयंसेवकोंकी तत्परता और अनथक शुश्रूषाने काफी हल्का कर दिया। स्वयंसेवकोंमें सबसे प्रमुख थे सुब्बारमय्या। श्री सुब्बारमय्याने सरकारी नौकरीको लात मार दी थी और तबसे कांग्रेसकी ही सेवामें लगे हैं। पर मेरी सुख-सुविधाका सबसे

१. नारायण मोरेश्वर खरे, संगीतकार।

२. पत्र स्पष्टतः श्रीमती सोहनलाल शर्माके विवाहसे पूर्व लिखा गया था।

३. यहाँ नहीं दी गई है। इसमें विभिन्न जिलोंके गाँवोंमें प्राप्त चन्देकी रकमका ब्योरा था। चन्देकी कुल रकम २,४३,२८३ रु० ३ आने ६ पाई थी।

अधिक ध्यान रखनेवाले थे देशभक्त कोंडा वेंकटप्पैया। अब उन्हें इस बातके लिए आड़े हाथों लिया जा रहा है कि ऐसे कठिन मौसममें वे ही मुझे आन्ध्र ले गये और तिस पर इतना व्यस्त कार्यक्रम बना दिया। किन्तु दोनोंमें से किसी भी चीजकी जिम्मेदारी उनपर नहीं डाली जा सकती। समूचे आन्ध्र देशके दौरेका कार्यक्रम तो बनाना ही था। तब फिर जितना समय दिया गया था, उतनेमें इससे कम व्यस्त कोई कार्यक्रम हो ही नहीं सकता था। आन्ध्रके नेतागण मुझे फरवरीमें बुलाना नहीं चाहते थे। और मार्चका महीना मुझे बर्माको देना था। इस तरह आन्ध्रके लिए इस वर्षमें अप्रैल या मई दो ही महीने बच रहे थे, या फिर दौरा अगले वर्षके लिए टाल देना पड़ता। पहले इतनी बार इसे टाला जा चुका था कि अब और टालना सम्भव नहीं रह गया था। परन्तु दौरेको देशभक्त कोंडा वेंकटप्पैयाने जितना कम कष्टप्रद बना दिया, उससे अधिक किसीके बसका नहीं था। समयकी पाबन्दी रखने, शोर-शराबेसे बचाने और मेरे ठहरनेके स्थानोंको सुविधाजनक बनानेकी कोशिशमें उन्होंने अपने-आपको बिलकुल थका डाला। मुझे जिन लोगोंके सम्पर्कमें आनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ है उनमें श्री कोंडा वेंकटप्पैया सबसे ज्यादा सौम्य व्यक्तियोंमें से एक हैं। लेकिन इस दौरेके दरम्यान उन्होंने इतना सख्त और ऐसा शासकोचित लहजा अपना लिया था कि वह उन्हें तनिक भी नहीं फबता था; वह इतना बनावटी लगता था कि उनके सहयोगी उनकी उस सख्तीको मजाककी चीज समझते थे। ऐसी परिस्थितियोंमें, हम कहीं भी क्यों न हों, और इन्तजाम कितना भी बढ़िया क्यों न हो, गलतियाँ तो होती ही हैं। श्री कोंडा वेंकटप्पैया उनपर नाराज होते थे और उनकी यह बनावटी नाराजी ऊबड़-खाबड़ रास्तोंपर लगातार मोटरसे यात्रा करनेसे पैदा हुई एकरसता और ऊबको मिटानेमें मेरे लिए बहुत कामकी सिद्ध हुई। देशभक्त जैसे अधीक्षकोंकी देखभालमें और आन्ध्रकी जैसी जनताके बीचमें ऐसे सैकड़ों दौरे करनेको मैं बिलकुल तैयार हूँ।

सबका दाता

देशभक्त कोंडा वेंकटप्पैयाके बारेमें लिखते समय मुझे देशोद्धारक नागेश्वररावका जिक्र करना नहीं भूलना चाहिए। मैं सदासे यह कहकर उनका मजाक करता रहा हूँ कि उन्होंने सुन्दर-से नामवाले एक पेटेण्ट मलहमसे काफी रुपया कमाया है। इस पर उन्होंने हमेशा मुस्कराते हुए यही जवाब दिया है कि "हाँ, काम बुरा तो है, लेकिन मैं कर ही क्या सकता हूँ? उससे मिलनेवाले धनसे मैं देशकी सेवा करनेकी कोशिश करता हूँ। और यह मलहम किसी भी तरहसे नुकसानदेह भी नहीं है।" मैं उनकी इस सफाईको भी उसी तटस्थतासे सुनता रहा हूँ जिस तटस्थतासे मैंने उनके पेटेण्ट मलहमका मजाक उड़ाया है। इसीलिए इस दौरेके दौरान जब मुझे यह सुखद जानकारी मिली कि वे अपनी दूकानके बलपर आन्ध्रके सार्वजनिक कार्योंके लिए सबके दाता बननेमें समर्थ हुए हैं तो मुझे थोड़ा आश्चर्य हुआ। उनके सदा खुले द्वारसे कभी भी कोई ठीक किस्मका याचक खाली हाथ नहीं लौटा। मैं जहाँ-जहाँ भी गया, मैंने मान-पत्रोंमें उनके दानका उल्लेख पाया है। नागेश्वररावने जहाँ अस्पृश्योंके आनन्द आश्रमके लिए कई इमारतें खड़ी करा दी हैं, वहीं उन्होंने जरूरत पड़नेपर पाठशालाओंको भी

मदद पहुँचाई है। और यदि डा० सुब्रह्मण्यम्को अपने आश्रमके लिए छापाखानेकी जरूरत हुई है तो नागेश्वररावने ही उनका उद्धार किया है। सबसे अधिक सुख उनको दान देनेमें ही मिलता है। और जहाँतक मैं समझ पाया हूँ, वे अपने दानोंका कोई लेखा भी रखनेकी चिन्ता नही करते। अपने दौरेके दिनों मैंने एक सार्वजनिक कार्यकर्त्तासे जो टिप्पणी सुनी थी मुझे उसपर कोई आश्चर्य नही हुआ। मैंने उनकी 'पेटेण्ट लूट'को लेकर कोई विनोद किया था। उस सार्वजनिक कार्यकर्त्ताने चटसे उत्तर दिया: "मैं तो चाहता हूँ उन्हें इस लूटसे और भी ज्यादा धन मिले। वह साराका-सारा धन सार्वजनिक कार्योंके ही काम तो आयेगा।" निजी बातचीतमें मैं अक्सर आन्ध्रवासियोंकी उनकी इस आदतके लिए आलोचना करता आया हूँ कि ये लोग अपने राष्ट्रीय कार्यकर्त्ताओंको बड़ी उदारतापूर्वक उपाधियाँ देते रहते हैं। लेकिन मै मानता हूँ कि देशोद्धारक नागेश्वररावको जो उपाधि उनके प्रान्तवासियोंने दी है वे सचमुच उसके पात्र हैं। अस्तु, अब मैं अपने दौरेके विवरणको आगे बढ़ाऊँ।

एक उल्लेखनीय मानपत्र

मुझे दौरेकी कई महत्त्वपूर्ण बातें तो अगले अंकके लिए ही छोड़नी पड़ेंगी। डाकका समय हुआ जा रहा है अतः जल्दीमें घसीटी जा रही इन टिप्पणियोंको अब मैं बस एक उल्लेखनीय मानपत्रका उल्लेख करके यही समाप्त करने जा रहा हूँ। यह मानपत्र मुझे नेल्लोर जिलेके उल्लावापाडु गाँवमें भेंट किया गया था। वह एक सादे-से मोटे कागजपर तेलुगु और हिन्दी दोनों भाषाओंमें लिखा गया था। एक छोटे-से गाँवमें आमतौरपर जैसे चित्रकार मिलते हैं, वैसे ही एक चित्रकारने उसके हाशिए बेलबूटेसे सजा दिये थे। हिन्दी मानपत्रकी भाषाको न संस्कृत बनानेकी कोशिश की गई थी और न ही फारसी बनानेकी। उसे आमतौरपर व्यवहारमें आनेवाली ठीक किस्मकी हिन्दी भाषामें रखा गया था। वैसी हिन्दी जैसी कि संयुक्त प्रान्तमें वे लोग बोलते हैं जो न तो हिन्दीके विरोधी हैं और न ही जो मुसलमान-विरोधी पूर्वग्रहोंसे ग्रस्त हैं। प्रारम्भिक पैरामें मेरे आगमनका शिष्टतापूर्ण उल्लेख था, लेकिन उसमें भाषाका कोई चमत्कार दिखाने या लम्बे-चौड़े विशेषण लानेकी कोई कोशिश नहीं दिखती थी। मानपत्रके पाठका अनुवाद कुछ इस तरह है:[1]

> **'यंग इंडिया'में प्रकाशित आपकी हिदायतोंके मुताबिक, आपकी माँगी हुई जानकारी हम यहाँ इस आशासे यथासम्भव पूरी-पूरी आपके सामने रख रहे हैं कि इसको देखनेके बाद आप हमें हमारे गाँवकी अपनी विशेष परिस्थितियों-के अनुरूप मार्ग-दर्शन प्रदान करेंगे। . . .**
>
> **. . . हमें जिस चीजकी तंगी सबसे अधिक दुख देती है, वह है— पीनेका पानी। इस गाँवमें एक विष्णु-मन्दिर और एक धर्मशाला भी है, जहाँ साधुओं और ब्राह्मणोंको मुफ्त भोजन दिया जाता है।**

१. मानपत्र मूलतः हिन्दी और तेलुगु भाषामें था, किन्तु हिन्दीका मूल पाठ न मिलनेके कारण इसके कुछ अंशोंको अंग्रेजीसे अनुवाद करके यहाँ दिया गया है।

इस गाँवमें 'दलित वर्गों' के ८९७ लोग हैं। वे गाँवसे बाहर एक खास बस्तीमें रहते हैं और उनके दो समुदाय हैं। ये दोनों समुदाय अपने बीच छूतछात तो नहीं मानते, लेकिन उनमें खानपानका सम्बन्ध नहीं है। एक समुदाय दूसरेको अपने कुँओंका उपयोग भी नहीं करने देता। . . . वे मुरदार मांस खाते हैं, चाहे पशुकी मौत किसी संक्रामक रोगसे ही क्यों न हुई हो। नतीजा यह है कि उनमें, विशेषकर मालंग जातिमें, कोढ़ बहुत फैला रहता है। शराबकी भी उनको बड़ी लत है। . . . इस गाँवमें कोई कांग्रेस कमेटी नहीं है।

यहाँ अ० भा० च० संघकी कोई शाखा नहीं है। इस गाँवमें ५२ चरखे हैं, जिनमें से २२ चालू हैं। उन्हें अधिकतर फुर्सतके समयमें ही चलाया जाता है। इन चरखोंसे महीनेभर में कुल मिलाकर १० सेर सूत निकलता है। इससे प्रति व्यक्तिकी औसत मासिक आय २ रुपये होती है। २० से २५ नम्बरका सूत काता जाता है।

इस गाँवमें ६५ करघे हैं। इनमें से २६ अत्यन्त ही साधारण किस्मके खड्डी करघा (पिटलूम्स) हैं, जिनमें से १२ करघे मिल-कता और हाथ-कता दोनों ही किस्मका सूत इस्तेमाल करते हैं, लेकिन १४ सिर्फ मिलका कता सूत ही इस्तेमाल करते हैं। बाकी सभी करघे उड़न-भरती (फ्लाई शटिल) हैं, जो हाथ-कता सूत इस्तेमाल नहीं करते।

. . . इस गाँवमें एक पुस्तकालय और वाचनालय है। ग्रामीण युवकोंने ही ये खोले थे। पुस्तकालयमें १,२३० पुस्तकें हैं और औसत रूपसे प्रतिदिन ३ पुस्तकें पढ़नेके लिए उधार ली जाती हैं। यहाँ हिन्दी और तेलुगु पत्रिकाएँ भी आती हैं। सरकार द्वारा कुछ प्रतिबन्ध लगानेकी कोशिश नाकाम कर देनेके कारण इधर दो वर्षोंसे संगठनकर्त्ताओंको कोई सरकारी सहायता नहीं मिली है।

यदि इस गाँवमें कांग्रेस कमेटी होती और उसका काम काफी आगे बढ़ा हुआ होता, तो भी यह अपने यहाँके जीवनका इससे अधिक पूर्ण विवरण प्रस्तुत नहीं कर सकती थी। आश्चर्य ही है कि इस गाँवमें कांग्रेस कमेटी और अ० भा० च० संघ का एक कार्यकर्त्ता तक क्यों नहीं है। मैं इस गाँवमें काफी सुबहके समय गया था। गाँववालोंकी कोई गलती न होनेपर भी, मुझे इस मानपत्रकी प्रति पहलेसे नहीं मिल पाई थी। और चूँकि मैंने मानपत्र पढ़ा नहीं था, इसलिए किसान जनता द्वारा अपेक्षित मार्गदर्शन भी मैं उनको नहीं दे पाया था। वह अब दे रहा हूँ।

१. गाँवके बड़े-बूढ़ोंको तत्काल एक कांग्रेस कमेटी गठित करनी चाहिए और हर वयस्क युवक-युवतीको उसका सदस्य बनानेका निश्चय कर लेना चाहिए।

२. उनको अछूतोंके साथ मैत्रीपूर्ण व्यवहार करना चाहिए और मुरदार मांस खाने तथा शराबखोरीकी लतसे छुटकारा दिलाकर उनको अपने ज़्यादा करीब लाना

चाहिए। इसी दृष्टिसे उनको अपने जिला-नेताओंको अछूतोंकी बस्तियोंमें जानेके लिए आमंत्रित करना चाहिए।

३. ग्रामके बड़े-बूढ़ोंको एक साथ बैठकर योजना बनानी चाहिए और जिलेके परोपकारी वृत्तिके किसी इंजीनियरकी सहायतासे जल सुलभ बनानेकी कोई परियोजना चालू करनी चाहिए।

४. उनको एक व्यवस्थित ढंगसे हर घरमें हाथ-कताई शुरू करानी चाहिए और लक्ष्य यह रखना चाहिए कि गाँवभर की जरूरतके लायक खादी वहीं तैयार करने लगें।

५. पुस्तकालयका सरकारसे सम्बन्ध टूटना उनको परोक्ष रूपसे मिला एक वरदान ही समझना चाहिए और अब पुस्तकालयको पूरी तौरपर राष्ट्रीय रूप देने तथा उसे प्रौढ़ साक्षरताके प्रसारका एक सच्चा केन्द्र बना डालनेका संकल्प कर लेना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २३-५-१९२९

३८६. मद्य-निषेध आन्दोलन

कार्य-समितिने मद्य-निषेध आन्दोलन संगठित करनेका काम श्रीयुत च० राजगोपालाचारीको सौंप दिया है। तदनुसार उन्होंने कार्य-समिति द्वारा अनुमोदित कार्यक्रम प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियोंके पास भेजा है। कार्यक्रम इस प्रकार है:[1]

आशा है प्रान्तीय कमेटियाँ इसपर शीघ्र ही और प्रभावकारी ढंगसे काम करेंगी। कार्य-समितिने जिन आन्दोलनों — मद्य-निषेध, अस्पृश्यता-निवारण तथा विदेशी वस्त्र-बहिष्कारके लिए अलगसे विशेष समितियाँ गठित की हैं, जैसा कि स्वाभाविक है, उनकी सफलताका दारोमदार इस सम्बन्धमें कांग्रेस-संगठनों द्वारा शीघ्रतासे उठाये जानेवाले कारगर कदमोंपर ही रहेगा। कांग्रेस-संगठनोंकी वर्तमान दशा सन्तोषजनक तो नहीं ही है। इसलिए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके आगामी अधिवेशनका यह कर्त्तव्य होगा कि वह संगठनकी मौजूदा टूटी-फूटी स्थितिके कारणोंकी जाँच करे और उसे प्रभावशाली तथा कार्यक्षम ढंगपर पुनर्गठित करनेके उपाय सोचे।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २३-५-१९२९

१. परिपत्रके लिए देखिए परिशिष्ट २।

३८७. सामयिक आवश्यकता

नेल्लोर जिला कांग्रेस कमेटीने, जब मैं नेल्लोरमें घूम रहा था, मेरे सामने नीचे लिखा वक्तव्य[1] पेश किया था। इस वक्तव्यसे समितिकी हालतपर अच्छा प्रकाश पड़ता है।

मुझे यह कहते दु:ख होता है कि जो दशा नेल्लोरकी है, ठीक वही दशा अधिकांश कांग्रेस कमेटियोंकी है, जिनके सम्पर्कमें मैं अबतक आया हूँ। नेल्लोर कांग्रेस कमेटीके इस कथनसे मैं सहमत हूँ कि कांग्रेसवालोंके चुनावके दलदलमें फँसनेसे कांग्रेसका संगठन कमजोर पड़ा है और उसका मनोबल कम हुआ है। इस बुराईका उपाय खोज निकालना तबतक कठिन ही रहेगा, जबतक कांग्रेसवाले एक बार फिरसे १९२१ के बहिष्कारवाले कार्यक्रमको न अपना लेंगे। दूसरी जगहोंकी भाँति ही कांग्रेसमें भी द्वितन्त्रकी कोई गुंजाइश नहीं दीख पड़ती है। कुछ भी क्यों न हो, यह सच है कि रचनात्मक काम और कौंसिल-प्रवेश दोनों एक साथ नहीं चल सकते। जो लोग कौंसिलों या स्थानीय बोर्डोंमें है उन्हें रचनात्मक कामके प्रति बहुत कम रुचि या दिलचस्पी है। और जो लोग रचनात्मक काममें जुटे पड़े है उनमें निर्वाचित संस्थाओंके प्रति कोई दिलचस्पी नही है। इन दोनों दलवाले लोगोंके भाषणों और इनके मतोंसे तो पता चलता है कि वे दोनों ही रचनात्मक कार्यक्रममें विश्वास रखनेवाले हैं। अतः कोई ऐसा उपाय ढूँढ़ निकालना सम्भव होना चाहिए जिसके जरिये कांग्रेस-यन्त्रका पूरी गति और पूरी योग्यताके साथ संचालन किया जा सके। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीका यह परम कर्त्तव्य है कि वह सब काम छोड़कर — अगर उनका छोड़ना आवश्यक हो जाये तो — इस समस्याको हल करनेका पूरा प्रयत्न करे। मैं बराबर यह सुना करता हूँ कि स्थानीय कमेटियोंके कोषागार खाली पड़े रहते है। मगर जो लोग यह बात कहते हैं वे यह अनुभव नहीं करते कि कांग्रेस निधिके लिए कांग्रेसके संविधानमें एक ऐसी तजवीज है जिसके द्वारा रुपया अपने आप बहता चला आ सकता है। अगर कांग्रेस जनताकी सच्ची प्रतिनिधि संस्था बन जाये तो उसे कभी किसी बातकी कमी न रहे। सन १९२१ में अकेले नेल्लोर जिलेमें १०,००० कांग्रेस-सदस्य थे। किसी भी प्रान्तीय कमेटीके ३०,००० से कम सदस्य नही होने चाहिए। अगर यह हो जाये तो प्रत्येक प्रान्तीय कमेटीको सालाना ७,५००) की आमदनी होती रहे, जिसके द्वारा एक प्रान्तीय कमेटीका काम बड़ी सुगमताके साथ चलाया जा सकता है। जिस संगठनके इतने सदस्य हों उसे विशेष अवसरोंपर विशेष चन्दा उगाहनेमें कठिनाई नहीं होनी चाहिए। अगर कांग्रेसका कार्य ईमानदारीके साथ किया जाये तो उसके सदस्योंकी तादाद ६० लाखके करीब होनी चाहिए; यह संस्था विधान सभाओंके चुनावोंमें मत देनेका अधिकार रखनेवाले तमाम मतदाताओंकी संख्याके बराबर बैठती

१. इसे यहाँ नहीं दिया गया है।

है। अतः तात्कालिक आवश्यकता तो इस बातकी है कि कांग्रेसका नये सिरेसे फिर संगठन किया जाये और उसको मजबूत बनाया जाये। आशा है, अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी अगली बैठक अपने इस स्पष्ट कर्त्तव्यपर विचार करेगी।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २३-५-१९२९

३८८. स्त्रियोंको आजाद करो

मद्रासकी सुप्रसिद्ध समाज-सेविका डाक्टर मुत्तुलक्ष्मी रेड्डीने मेरे आन्ध्र देशवाले एक भाषणके बारेमें एक लम्बा पत्र लिखा है। उसमें से नीचे लिखा दिलचस्प अंश यहाँ देता हूँ:[1]

बैजवाड़ासे गुन्टूर तकके अपने प्रवासमें आपने समाज-सुधार और साथ ही हम लोगोंकी दैनिक आदतोंमें स्वस्थ परिवर्तन करनेकी तात्कालिक आवश्यकताके बारेमें जो बातें कहीं हैं, उनका सचमुच मुझपर गहरा असर पड़ा है।

मैं आपसे नम्रतापूर्वक निवेदन करती हूँ कि एक डाक्टरकी हैसियतसे मैं आपके साथ पूरी तरह सहमत हूँ। मगर साथ ही नम्रतापूर्वक यह भी कह देना चाहती हूँ कि अगर शिक्षा द्वारा समाज-सुधार, स्वच्छता और जनताका आरोग्य आदि जैसे शुभ परिणामोंकी आशा रखी जाती है, तो कहना चाहिए कि स्त्री-शिक्षा ही इसकी सफलताका एकमात्र उपाय है।

क्या आप यह अनुभव नहीं करते कि वर्तमान सामाजिक स्थितिमें बहुत कम स्त्रियोंको शिक्षाका, शरीर और मनके सम्पूर्ण विकासका और आत्माभिव्यक्तिका मौका दिया जाता है?

अगर कांग्रेसके सदस्य स्वतन्त्रताको प्रत्येक राष्ट्र और प्रत्येक व्यक्तिका जन्मसिद्ध अधिकार मानते हों, और चाहे जो कीमत देकर भी इस अधिकारको पानेका वे निश्चय कर चुके हों, तो क्या उनका यह कर्त्तव्य नहीं है कि वे स्त्रियोंको उन कुरीतियोंके बन्धनसे मुक्त करें, जो उनके सर्वांगीण विकासमें बाधा डालती हैं और ऐसा कर सकना, उनके अपने हाथकी बात है।

हमारे कवियों, सन्तों और ऋषियोंने बार-बार इसी बातपर जोर दिया है। स्वामी विवेकानन्दने एक जगह कहा है: "जो देश या जो राष्ट्र स्त्रियोंका सम्मान नहीं करता, वह न कभी महान् हुआ है, न भविष्यमें ही कभी होगा। आपकी जाति आज जिस पतनावस्थामें है, उसकी खास वजह यह है कि आप शक्तिकी इन सजीव प्रतिमाओंके प्रति जरा भी आदरभाव नहीं रखते। जो स्त्रियाँ जगन्माताकी साक्षात् मूर्तियाँ हैं, अगर आप उनका उद्धार नहीं करते हैं तो याद रखिए कि आपके उद्धारका कोई दूसरा मार्ग है ही नहीं।"

१. केवल कुछ अंश ही यहाँ दिये गये हैं।

तमिल प्रान्तके प्रतिभाशाली कवि स्वर्गीय सुब्रह्मण्य भारतीके विचार भी इन्हीं भावनाओंसे गूँज रहे हैं।

अतएव आशा है, आप अपनी यात्राके दौरान पुरुषोंको स्वतन्त्रता प्राप्त करनेका यह सीधा और अचूक मार्ग ग्रहण करनेकी सलाह देनेकी कृपा करेंगे।

डाक्टर मुत्तुलक्ष्मीको पूरा-पूरा अधिकार है कि वह कांग्रेसवालोंसे इस जिम्मेदारीको उठा लेनेकी आशा रखें। बहुतेरे कांग्रेसजन इस ओर व्यक्तिगत या सामुदायिक तौर पर प्रयत्न कर भी रहे हैं, लेकिन इस बुराईकी जड़ ऊपर-ऊपरसे देखनेमें जितनी दिखाई देती है उससे कहीं ज्यादा गहरी है। इसमें अकेली स्त्री-शिक्षाका ही दोष नहीं है। हमारी सारी शिक्षा-प्रणालीमें ही सड़न घुस गई है। किसी एकाध रीति-रिवाजको दोष देना ही काफी नहीं है; बल्कि इस कुरीतिको दूर करनेकी जरूरत स्पष्ट प्रतीत होनेके बावजूद उसके प्रति हमारी उदासीनता ही हमें उसके विरुद्ध कुछ प्रयत्न करनेसे रोकती है। उक्त पत्रमें जो दोष गिनाये गये हैं वे सिर्फ मध्यम श्रेणीके लोगोंमें, यानी नगर-निवासियोंमें यानी भारतके करोड़ों निवासियोंमेंसे मुश्किलसे १५ फीसदी लोगोंमें हैं। देहातमें बसनेवाली जनतामें न बाल-विवाह है, न विधवा-विवाहका निषेध है। यह सच है कि उनके विकासमें बाधक होनेवाली दूसरी बुराइयाँ उनमें जरूर हैं। जड़ता तो दोनों वर्गोंमें एक-सी है। वास्तविक आवश्यकता तो यह है कि देशकी शिक्षा-प्रणालीमें आमूल परिवर्तन कर दिया जाये और एक ऐसी शिक्षा-प्रणाली तैयार की जाये, जो करोड़ोंकी संख्यामें बसनेवाली प्रजाके लिए अनुकूल पड़े। जिस प्रणालीमें बड़ी उम्रके मनुष्योंकी तालीमको बालकोंकी तालीमके समान ही महत्त्व नहीं दिया गया है वह प्रणाली निरर्थक कही जा सकती है। और जिस प्रणालीमें देशी भाषाओंको उनका जन्मजात अग्रस्थान नहीं मिला हो, कहना चाहिए कि वह प्रणाली इस समस्याका स्पर्शतक नहीं करती। यह काम हमें आजकलके शिक्षित वर्गकी मददसे ही करना है, फिर भले ही यह वर्ग चाहे जैसा क्यों न हो। अतएव बड़े पैमाने पर सुधार करनेके पहले शिक्षित वर्गकी मनोदशाको बदलनेकी जरूरत है। और मैं डाक्टर मुत्तुलक्ष्मीसे कह देना चाहता हूँ कि भारतमें जो थोड़ी-बहुत पढ़ी-लिखी बहनें इस समय हैं, उन्हें पाश्चात्य सभ्यताकी चोटीपर से भारत-वर्षके मैदानोंमें उतर आना पड़ेगा। पुरुषोंने स्त्रियोंकी जो उपेक्षा की है, उनका जो दुरुपयोग किया है, उसके लिए उन्हें पर्याप्त प्रायश्चित्त करना ही है, मगर सुधारका रचनात्मक कार्य तो उन्हीं बहनोंको करना पड़ेगा जो अन्धविश्वासोंको छोड़ चुकी हैं और जिन्हें इस बुराईका खयाल हो आया है। आप स्त्रियोंकी आजादी, उनके उद्धारका प्रश्न लीजिए, देशकी स्वतन्त्रता, अस्पृश्यता-निवारण और जनताकी माली हालतके सुधार आदि किसी बातके सवालको उठाइए, आखिर ये सब इस एक सवालमें मिल जाते हैं और वह सवाल है, ग्राम-प्रवेश, देहातमें जाकर रहना, और ग्राम्य-जीवनको पुनर्गठित करना, बल्कि सच पूछा जाये तो उसकी कायापलट करना।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २३-५-१९२९

३८९. तार : सीतलासहायको

बम्बई
२३ मई, १९२९

सीतलासहाय
आश्रम
साबरमती

जवाहरलाल और मैं सहमत हैं कि आपको यह कहकर दायित्व माननेसे इन्कार कर देना चाहिए कि वकीलोंकी राय है कि इसका आप पर कोई दायित्व नहीं और यदि दायित्व है भी तो आपके पास अपनी कोई सम्पत्ति नहीं।

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १५३९४)की माइक्रोफिल्मसे।

३९०. भेट : 'बॉम्बे क्रॉनिकल'के प्रतिनिधिसे

२४ मई, १९२९

क्या ऐसा समय नहीं आ गया है जब जोरदार कार्रवाईके लिए एक निश्चित योजना बनाकर बहिष्कारको अधिक प्रभावकारी बनाया जा सकता है?

उत्तरमें महात्माजीने कहा कि जो-कुछ सम्भव है, विदेशी वस्त्र बहिष्कार समिति सब कर रही है और मैं इस समय केवल इतना ही कह सकता हूँ कि जो लोग इस आन्दोलनमें विश्वास रखते हैं और इसमें मदद देना चाहते हैं, उन्हें समय-समयपर समितिके निर्देशोंको कार्यान्वित करके उसके हाथ मजबूत करने चाहिए।

हमारे प्रतिनिधिने विशेष बहिष्कार समितियोंके गठनका सुझाव दिया। उसका कहना था कि ऐसी समितियोंमें कांग्रेसी कार्यकर्त्ता और मिल-मालिक दोनों सहयोगके आधारपर साथ मिलकर काम कर सकते हैं।

मगर गांधीजीने कहा कि मैं नहीं समझता कि इस समय इससे कोई काम बन सकता है।

लेकिन अगर विदेशी वस्त्र बहिष्कार समिति अपने तरीकेसे बहिष्कारके लिए काम करनेवाली अन्य संस्थाओं और संगठनोंके साथ सहयोग करे तो क्या इससे बहिष्कारका काम बहुत अधिक आगे नहीं बढ़ सकता है?

इस प्रश्नका उत्तर देते हुए महात्माजीने विदेशी वस्त्र बहिष्कार समितिकी ओरसे यह आश्वासन दिया कि दूसरे सूत्रोंसे जो भी सहायता प्राप्त हो सकती है, उसका उपयोग किया जा रहा है और भविष्यमें भी किया जायेगा।

क्या इस आशयकी एक गम्भीर प्रतिज्ञा कि प्रतिज्ञापत्र पर हस्ताक्षर करनेवाले लोग केवल स्वदेशी वस्तुओंका ही इस्तेमाल करेंगे, बहिष्कार आन्दोलनमें किसी तरह सहायक होगी?

उन्होंने कहा कि मैं नहीं समझता कि बहिष्कार आन्दोलनको लोकप्रिय बनानेके लिए किसी प्रतिज्ञाकी जरूरत है। उन्होंने यह भी बताया कि विदेशी वस्त्र बहिष्कार समितिने प्रतिज्ञाके सवालपर विचार किया था। जरूरत प्रतिज्ञाकी नहीं, बल्कि तत्काल वास्तविक कार्य करनेकी है।

इस प्रश्नके उत्तरमें कि कपड़ोंकी होली जलाना अधिक बड़े पैमानेपर और संगठित ढंगसे फिरसे शुरू करना चाहिए या नहीं, महात्माजीने कहा कि फिलहाल तो यह आन्दोलन जिस तरह वि० व० ब० समिति चला रही है उसी तरह चलाना ज्यादा लाभदायक होगा।

चूँकि हमारी दृष्टि अगली जनवरीमें हम जो लड़ाई शुरू करनेवाले हैं उसपर टिकी हुई है और चूँकि हमारी राष्ट्रीय माँगको मंजूर करानेके लिए अपेक्षित शक्ति जुटानेकी समस्या हमारे सामने मुँह बाये खड़ी है, इसलिए क्या यह नीतिज्ञताकी बात है कि हम कांग्रेसियों द्वारा पद ग्रहण करने जैसे छोटे-मोटे सवालोंपर अपनी शक्ति बर्बाद करें?

उत्तरमें महात्माजीने पहले तो तुरन्त अपनी वही कूटनीतिज्ञोंवाली हँसी बिखेरी और फिर उससे भी कूटनीतिभरी बात कही कि इस सवालका जवाब देने लायक मैं तो नहीं हूँ।

क्या यह सच नहीं है कि कांग्रेस शिविरमें जो अलग-अलग विचारधाराएँ सामने आई हैं, उन सबके बीच सामंजस्य बैठानेके लिए आप मध्यस्थका काम कर रहे हैं? इस प्रश्नके उत्तरमें वे फिर जोरसे हँस पड़े। [उन्होंने कहा:]

आपको काफी-कुछ बता दिया। अब तो आप मुझसे कुछ ऐसी बातें उगलवाने-की कोशिश कर रहे हैं जिन्हें उगलनेको मैं तैयार नहीं हूँ।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २५-५-१९२९

३९१. पत्र : देवचन्द पारेखको

२५ मई, १९२९

भाईश्री देवचन्द भाई,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। गोंडलकी जनताके बीच खादीकी फेरी लगानेमें शायद कोई दोष नहीं है। मैंने तो अभी यह विचार व्यक्त किया है कि खादीके उत्पादनपर जोर दो। यज्ञके रूपमें सभी सूत कातने लगें तो खादी सहज तैयार की जा सकती है। इस समय अच्छे सूतकी जरूरत है। काठियावाड़में यज्ञार्थ कातनेपर ही ज्यादा खादी उत्पन्न की जा सकती है, अलबत्ता ऐसा वातावरण तैयार किया जा सके तब। इनामी चरखेके बारेमें तो मेरे आश्रम पहुँचनेपर ही कुछ तय किया जा सकेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५६९६) की फोटो-नकलसे।

३९२. भाषण तथा प्रस्ताव : अ० भा० कां० कमेटीकी बैठकमें

बम्बई
२५ मई, १९२९

ब्रिटिश सरकार देशभरमें अपना दमन-चक्र चला रही है। इसका प्रमाण है कि कार्य-समितिके सदस्य श्रीयुत साम्बमूर्ति और अन्य अनेक राष्ट्रीय कार्यकर्त्ताओंको सजाएँ सुना दी गई है; अ० भा० कां० कमेटीके सदस्यों और मजदूर नेताओं तथा कार्यकर्त्ताओंको चुन-चुनकर गिरफ्तार कर लिया गया है और उनके साथ बर्बरतापूर्ण व्यवहार किया गया है; मजदूर नेताओं और कार्यकर्त्ताओंपर मेरठमें मुकदमा चलाया जा रहा है; अकारण ही लोगोंके मकानोंकी तलाशियाँ ली जा रही हैं और पण्डित सुन्दरलालकी पुस्तक 'भारतमें अंग्रेजी राज' को मनमाने ढंगसे जब्त कर लिया गया है। अ० भा० कां० कमेटीकी राय है कि इस सबको देखते हुए देशको ऐसे तरीकोंका कारगर ढंगसे मुकाबला करनेके लिए तैयार रहना चाहिए; और चूँकि यह स्पष्ट है कि जबतक एक संतोषप्रद आधारपर कांग्रेस संगठनका पुनर्गठन नहीं किया जाता तबतक कोई भी राष्ट्रव्यापी प्रतिरोध सम्भव नहीं होगा, इसलिए यह समिति प्रान्तीय संगठनोंका आह्वान करती है कि वे अपने-अपने प्रान्तोंका पुनर्गठन करें जिससे कि निम्नलिखित शर्तोंको पूरा करनेमें वे समर्थ हो सकें :

प्रान्तीय कांग्रेस संगठनमें उस प्रान्तकी कुल जनसंख्याका $\frac{१}{४}$ प्रतिशत भाग मूल सदस्योंके रूपमें शामिल रहेगा और वह कमसे-कम पचास प्रतिशत जिलोंका प्रतिनिधित्व करेगा।

जिला संगठनमें उस जिलेकी कुल जनसंख्याका एक प्रतिशत भाग[१] मूल सदस्योंके रूपमें शामिल रहेगा और वह कमसे-कम पचास प्रतिशत तहसीलोंका प्रतिनिधित्व करेगा।

तहसील-संगठनमें उस तहसीलकी कुल जनसंख्याका $\frac{१}{४}$ प्रतिशत भाग मूल सदस्योंके रूपमें शामिल रहेगा और वह अपने इलकेके कमसे-कम दस प्रतिशत गाँवोंका प्रतिनिधित्व करेगा।

ग्राम-संगठनमें उसकी कुल जनसंख्याका कमसे-कम तीन प्रतिशत भाग[२] मूल सदस्योंके रूपमें शामिल रहेगा।

बम्बई और दिल्ली प्रान्तोंके लिए मूल सदस्योंकी संख्या इन प्रान्तोंकी कुल जनसंख्याका कमसे-कम तीन प्रतिशत होगी।[३]

बर्मा प्रान्तके[४] बारेमें कार्य-समिति उस प्रान्तके[५] कार्यकर्त्ताओंसे परामर्श करके जो भी उचित समझेगी वैसी हिदायतें जारी करेगी।

जो भी प्रान्तीय संगठन अगले अगस्तकी ३१ तारीखके अन्दर[६] उक्त कसौटी पर खरा नहीं उतरेगा उसे समिति मान्यता नहीं देगी?

कार्य-समितिको इस बातकी छूट रहेगी कि वह अ० भा० कां० कमेटी या कार्य-समिति द्वारा समय-समयपर जारी की जानेवाली हिदायतोंका पालन न करनेवाले किसी[७] भी संगठनकी सदस्यता रद्द कर दे।

गांधीजीने प्रस्ताव पेश करते हुए पहले हिन्दी और बादमें अंग्रेजीमें भाषण किया। उन्होंने कहा कि मैं समितिसे आग्रह कर रहा हूँ कि वह इस प्रस्तावकी प्रतियाँ सदस्योंमें घुमाये बिना और उनको इसपर विचार करनेका अवसर दिये बिना ही इसे स्वीकार कर ले। यह तो एक जल्दबाजीका तरीका हुआ। लेकिन मैं इसे इसलिए अपना रहा हूँ कि परिस्थितिकी यही माँग है। मैं समितिसे कहूँगा कि वह प्रस्तावनाको अपने दिमागसे निकाल दे, क्योंकि प्रस्तावनामें बड़े विस्तारसे चीजोंको लिया गया है। प्रस्तावका मुख्य भाग तो उसका वह कार्यक्रम है, जिसपर अमल

१. इसे संशोधित करके इस तरह कर दिया गया था: '$\frac{१}{४}$ प्रतिशत भाग'।

२. संशोधित रूप: 'एक प्रतिशत'।

३. संशोधित रूप: 'बम्बई प्रान्तके लिए मूल सदस्योंकी संख्या उसकी कुल जनसंख्याका कमसे-कम डेढ़ प्रतिशत भाग होगी।'

४. संशोधित रूप: 'सीमा प्रान्त और बर्मा प्रान्तके'।

५. संशोधित रूप: 'प्रान्तों'। यह वाक्य जोड़ा गया था: "भारतीय रजवाड़ों और नॉन-रेगुलेशन इलाकोंसे मिले-जुले एजेन्सी-प्रदेशोंको सदस्योंकी गणनासे अलग रखा जा सकेगा।"

६. संशोधित रूप: 'तक'।

७. संशोधित रूप: 'एक'।

करना है। कांग्रेसने विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार, खादीका उत्पादन और मद्य-निषेधका संगठन करनेवाली तीन समितियाँ नियुक्त की हैं। समितिके सामने इस समय जो प्रस्ताव है वह कांग्रेसके अन्दरूनी संगठनसे सम्बन्धित है। यदि कांग्रेस एक ऐसी अदमनीय शक्ति बनना चाहती है, जिसकी बात या जिसके आदेशका सभी लोग सम्मान करें, तो उसे अपने आपको एक ऐसा शक्तिशाली संगठन बनाना पड़ेगा जिसके सभी भागोंमें परस्पर पूर्ण सामंजस्य हो। आजकल उसमें ऐसा सामंजस्य नहीं है।

यह प्रस्ताव आपको काफी उग्र लग सकता है। लेकिन हमारे सामने जो विषम परिस्थिति आ खड़ी हुई है उसका मुकाबला करनेके लिए हमें उग्र किस्मके उपाय ही करने पड़ेंगे। सच तो यह है कि कार्य-समिति तो इससे भी एक अधिक उग्र रूपमें इस प्रस्तावको स्वीकार करनेके लिए तैयार हो गई थी, अर्थात् यह स्वीकार करनेको तैयार थी कि प्रान्तीय समितियाँ खत्म कर दी जायें और जिला समितियाँ केन्द्रीय समितिके साथ सीधा सम्बन्ध स्थापित करें। लेकिन उसके लिए संविधानमें संशोधन करना आवश्यक हो गया था, और तभी इसकी कठिनाइयोंको महसूस किया गया। पण्डित जवाहरलालकी भी यही राय थी कि समितिको बादमें पछताना पड़ सकता है, लेकिन उनके दिमागमें संशय नहीं था। प्रस्तावमें उग्र किस्मके सुझाव रखे गये। कार्य-समिति यदि समझती है कि देशकी परिस्थिति ऐसे उग्र साधनोंकी अपेक्षा रखती है तो उसे कांग्रेसका दायित्व अपने ऊपर लेना चाहिए। यदि इस प्रस्ताव पर पूरी तौर पर अमल हुआ तो फिर वाइसराय विधान-मण्डलका और विस्तार करके देशका अपमान नहीं कर सकेंगे, और न वह विधान सभामें अध्यक्षका अपमान करनेका साहस करेंगे।[1]

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २७-५-१९२९

३९३. 'गोरक्षा कल्पतरु'

धूलियाके श्री रामेश्वरदासने अपने चाचाकी लड़कीके स्वर्गवासके निमित्त २५ रु० इस विचारसे भेजे हैं कि उक्त पुस्तक योग्य व्यक्तियों और संस्थाओंके पास मात्र डाक-खर्च लेकर भेज दी जाये। इस रकमकी समाप्ति तक सिर्फ डाक-खर्चके लिए सवा आनेके टिकट और अपना पूरा-पूरा पता लिख भेजने पर गोशालाके संचालकों और दूसरे गोसेवकोंके पास यह भेज दी जायेगी। इस सम्बन्धमें पत्र-व्यवहारका पता है, मन्त्री, गोसेवा संघ, उद्योग-मन्दिर, साबरमती।

१. प्रस्तावका समर्थन श्रीनिवास अय्यंगारने किया था। बादमें प्रस्ताव संशोधनोंके साथ पास हो गया।

श्री रामेश्वरदासने अपने हिन्दी पत्रमें कुछ विचारणीय बातें भी लिखी हैं, जिनका भावार्थ नीचे देता हूँ:

> मैं यह दान ऊपर बताये अनुसार कर रहा हूँ, इसका यह भी एक कारण है कि हम लोगोंके यहाँ आजकल मृत व्यक्तिके नामपर गोदान किया जाता है। लेकिन मैं मानता हूँ कि इससे तनिक-सी भी गोसेवा नहीं होती। हमारे यहाँ अब गोचर — चारागाह — नाम-मात्रको रह गये हैं, अतएव ब्राह्मण-वर्ग अन्त तक गायोंका पालन नहीं कर सकता; फल यह होता है कि आखिर वे कसाइयोंके हाथ पड़ती हैं। अतएव आज गोदान शुद्ध गोसेवाके प्रचारमें है। इस प्रचारका एक रूप 'गोरक्षा कल्पतरु' जैसी पुस्तकोंका बड़े पैमानेपर प्रचार करना है। मुझे आशा है, हिन्दू समाज इस बातको समझेगा और यह पुस्तक मँगा कर पढ़ेगा, उसपर विचार करेगा और उसमें सूचित उपायोंपर अमल करेगा।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २६-५-१९२९

३९४. पत्र: माधवजी वी० ठक्करको

२६ मई, १९२९

भाईश्री माधवजी,

तुम्हारे तीन पत्र मुझे बम्बईमें मिले। मैं साबरमती दो दिन पहले पहुँच रहा हूँ।

तुम्हारा जीवन-वृत्तान्त मिल गया। मुझे इसकी जरूरत थी।

तुम्हारे गुस्सेका एक इलाज तो यह है कि तुम थोड़े समयके लिए मेरे साथ रहो। मैं यह चाहता भी हूँ। जुलाई, अगस्तमें मैं आश्रममें रहूँगा। इस बार तो १० जूनतक यहाँ रहूँगा।

बादाम तो खाँसी शुरू हो जानेका कारण नहीं हो सकता। सम्भव है इसका कारण मक्खन हो; सो उसे छोड़कर अच्छा किया है। बादाम भिगोकर छिलका उतार लो और उसे पीस कर दूध बना लो तो कोई हानि नहीं है।

डबल रोटी बनानेके लिए तुम्हारे पास भट्ठी है? थोड़ी तादादमें उन्हें बनाना कठिन है; इसे बनानेकी झंझटमें न पड़ो और फलाहार करो, मैं तो यही चाहता हूँ।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजराती (जी० एन० ६७८४)की फोटो-नकलसे।

३९५. पत्र : डी० को

२७ मई, १९२९

प्रिय मित्र,

आपके पत्रोंसे मैं अत्यन्त ही असन्तुष्ट हूँ। आपपर तो जैसे दौरे पड़ते हैं। आप शीघ्र ही उत्तेजित हो उठनेवाले, अस्थिर और प्रतिहिंसक वृत्तिके मनुष्य हैं। आपको उस लड़कीके बारेमें सोचना बिलकुल ही बन्द कर देना चाहिए। उसके साथ अपने सम्बन्धके बारेमें संसार भरमें ढोल पीटना आपके लिए अशोभनीय होगा। आपको तो इतनेपर ही बस करनी चाहिए कि लड़कीके पिताके सामने अपना प्रस्ताव रखें और अपनी पात्रता सिद्ध करें। आपको अपनी मर्यादा तो समझ ही लेनी चाहिए। क्या कोई भी पिता किसी अपाहिजको अपनी पुत्रीका हाथ खुशी-खुशी दे देगा? हाँ, लड़कीको पूरा अधिकार है कि वह चाहे तो अपने जीवन-साथीके रूपमें आपको वर ले। परन्तु यह कदम तो कोई ऐसी ही लड़की उठा सकती है जो साधारण लड़कियों से कहीं ऊपर हो। यदि यह लड़की सचमुच वैसी है तो वह अपनी आयुके अन्तर और अन्य सभी कठिनाइयोंपर स्वयं पार पा लेगी। उसको आपके संरक्षणकी बिलकुल कोई जरूरत नहीं। जरूरत तो आपको उसके संरक्षणकी है। आप अपनी मर्यादाको भूल रहे हैं और अपने दर्शनको ही नकार रहे हैं।

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६१६९)से।
सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

३९६. पत्र : वालजी गो० देसाईको

२८ मई, १९२९

भाईश्री वालजी,

तुम्हारा पोस्टकार्ड मिला।

मैंने तो तुम्हारे बारेमें सोचकर ही लिखा था। इसलिए तुम्हारा शरीर काम करने योग्य हो तो मैं तुमसे क्या काम लेना चाहता हूँ, सो लिखता हूँ।

१. हिन्दुस्तानकी प्रत्येक गोशालामें जाकर उसके प्रबन्धकोंसे मुलाकात और उनमें प्रचार करना;

२. यह काम करनेके लिए दुग्धालय और चर्मालयका सामान्य ज्ञान प्राप्त करना;

३. इस विषयमें डेनमार्क आदि जो देश आदर्श माने जाते हैं उनके दुग्धालयोंका अध्ययन और गुजरातीमें उसका विवरण तैयार करना;

४. 'नवजीवन' और 'यंग इंडिया' में हर सप्ताह इस विषयपर एक व्यावहारिक लेख लिखना;

५. कसाईखानोंमें जाना और उनका जी दहलानेवाला वर्णन लिखना।

इस समय तो इतना ही सूझता है।

दूसरी बात, मेरे काते हुए सूतको चन्देके तौरपर लेनेके बारेमें वहाँ आनेपर अधिक विचार करूँगा।

अपने यहाँके दूधकी बिक्रीके बारेमें 'नवजीवन' में लिखना हो तो लिखो।

विंछियाकी गोशालाको सँभालने योग्य कोई मनुष्य हमारे पास हो और हमें उसे चलानेकी पूरी स्वतन्त्रता मिले तो उसकी व्यवस्थाकी जिम्मेवारी ले ली जाये।

'जोडणी-कोश की जिल्दके बारेमें जानकर आश्चर्य हुआ है।

रामेश्वरदासके पैसेके बारेमें अबसे 'नवजीवन' में लिखूँगा।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७४०१) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य: वालजी गो० देसाई

३९७. पत्र: घनश्यामदास बिड़लाको

२८ मई, १९२९

भाई घनश्यामदासजी,

आपके दोनों खत मीले हैं। . . .के मेरे पास भी बहोत खत आये हैं। मैंने आज खत भेजा है उसकी नकल इसके साथ रखता हुं। मुझे दुःख होता है कि ऐसे आदमीके लीये मैंने आपको तकलीफमें डाला। मैं तो उनको कम हि जानता था। एक दो बार ही मीला था। आदमी अच्छा लगा। अब भी अच्छा तो लगता ही है। परंतु ऐसे लोगोंको आप नहिं रख सकते हैं। अथवा मैं आपको ऐसा खयाल करके अन्याय करता हुं। आपमें परोपकारवृत्ति तो है परंतु ऐसे लोगोंका संग्रह करने तक जाते हो तो बड़ा भारी कार्य है। उसको तो डर लगा है कि अब वहां नहिं रह सकेगा और आश्रममें बुला लेनेका लीखता है। कहीयो क्या करूं?

फारवर्डने क्या लीखा था इसके साथ मेरे लेखका कोई संबंध न था। फारवर्डको जो सजा दी गई है वह निर्दय, राक्षसी है उसमें कोई संदेह नहिं है। फारवर्डने बहादुरी बताई है इसमें कुछ शक मुझको नहिं है।

कच्चे अनाजका प्रयोग चल रहा है। ११ जुनको साबरमती छोडुंगा।

आपका,
मोहनदास

सी० डब्ल्यू० ६१६९ से।
सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

३९८. एक पत्र सरोजिनी देवीका, और एक उनके बारेमें

पश्चिममें भारतीय जनताकी राजदूत सरोजिनी देवीका ताजा पत्र इस प्रकार है :[1]

मैंने आपको पिछला पत्र लिखा था तबसे अबतक कोई एक माह में लगातार यात्रा करती रही हूँ। यह यात्रा लगातार तो हुई ही, काफी श्रम-साध्य भी रही। यह हजारों मील लम्बी यात्रा शिकागोसे आरम्भ हुई थी। शिकागोसे मैं लास एंजलीज तक गई और वापस आई। रास्तेमें अनेक प्रदेशोंसे गुजरी, जिनमें कहीं गेहूँ होता है, कहीं ताँबा, कहीं पशुधनकी बहुतायत है तो कहीं कपासकी। यह एक बहुत लम्बा-चौड़ा भू-क्षेत्र है जो प्रकृति पर मनुष्यकी विजयकी, उसके अदम्य साहस और पराक्रमकी, उसकी सहन-शक्ति, सूझ-बूझ, परिश्रम और उस नरोन्मेषशालिनी दृष्टिकी साक्षी भरता है जिसने प्रकृतिको खुश करके कहिए या बाध्य करके इतने अल्प समयमें इतने सुन्दर परिणाम प्राप्त कर दिखाये हैं। किन्तु एरिजोना रेगिस्तानके ग्रैंड केनयान नामक प्रसिद्ध स्थलमें मैंने प्रकृतिका जो रूप देखा उसकी तुलनामें मनुष्यकी यह सारी शक्ति निष्प्रभ हो जाती है। वहाँ काल-रूपी त्वष्टाने पहाड़की शिलाओंको काट-छाँटकर अज्ञात देवताकी अभ्यर्थनामें सुन्दर और भव्य मन्दिरोंका निर्माण किया है। इन मन्दिरोंमें हमें रंगोंका वह सारा वैभव मिलता है जो रत्नों और फूलोंमें पाया जाता है। मनको अभिभूत कर देनेवाले इस सौन्दर्यको देखकर हमारा स्तुति गीत मौनमें, और मौन पूजामें परिणत हो जाता है।

एरिजोनाका यह रेगिस्तान अनेक रेड इंडियन कबीलोंकी निवास-भूमि है। यह सारा देश किसी समय पूर्वजोंसे प्राप्त उनका अपना देश था। आज तो वे वहाँ शेष समाजसे विच्छिन्न दूर एकान्तमें ही अपनी रंग-बिरंगी, किन्तु आदिम जिन्दगी बसर करते हैं। पश्चिमसे आये हुए उन लोगोंकी तुलनामें जिन्होंने इन कबीलोंसे उनकी यह सम्पत्ति छीन ली है, ये लोग हमारे कहीं ज्यादा पास हैं। ऐसा लगता है कि दुनियाकी सारी आदिम जातियाँ सहज बन्धुत्वकी डोरसे बँधी हुई हैं क्योंकि लोक-हृदय हर जगह, फिर चाहे वह भारत हो या रूमानिया, जुलुलैंड हो या एरिजोनाका रेगिस्तान, अपनेको समान प्रतीकों द्वारा प्रकट करता है और अपने संगीत, अपनी पौराणिक आख्यायिकाओं और अपने नृत्यके द्वारा लगभग उन्हीं मूल गुणोंको प्रकाशित करता है जो आदिम जातियोंमें सर्वत्र पाये जाते हैं। वीरता, मेरा खयाल है, इन मूल गुणोंमें से एक है और ग्रैंड केनयानके पास होपी कबीलेके गरुड़-नृत्य, भैंसेके

१. यहाँ केवल कुछ अंश ही दिये गये हैं।

शिकारका नृत्य, विजय-नृत्य आदि नृत्योंमें इस गुणकी जैसी सशक्त अभिव्यक्ति होती है वैसी अन्यत्र मैंने नहीं देखी। इस प्रसंगमें मैं आपको सान-फ्रांसिस्कोमें मेरे एक भाषणकी समाप्तिपर इंडियन कबीलेके एक युवा प्रतिनिधिने मुझसे जो कहा था वह सुनाऊँ। यह युवक स्पष्टतः सुशिक्षित दिखता था और सम्भवतः किसी विश्वविद्यालयका स्नातक रहा होगा। उसने कहा, "आपने हमारे देशके बारेमें अपने भाषणमें जो-कुछ कहा उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। यह देश किसी समय मेरा और मेरे सजातीयोंका था। हम लोग अब नष्ट होते जा रहे हैं किन्तु मैं आपसे कह दूँ कि वे हमें मार सकते हैं किन्तु जीत नहीं सकते।" उसका यह कथन बिलकुल सही है। ये लोग आकाशचारी गरुड़की, हवा और विद्युत्‌की सन्तान हैं। उनके तेजोबलको कौन पराभूत कर सकता है? मैं जब एरिजोना गई तब मैंने इस युवककी दर्पोक्तिके सत्यको महसूस किया।

कैलीफोर्निया मुझे बहुत भाया — उसकी पुष्पोज्ज्वल और फेन-विचुम्बित भूमि का हर छोटा-बड़ा टुकड़ा कितना सुन्दर है। लेकिन मेरी प्रसन्नताके शुभ्राकाशमें एक मेघ-खण्ड भी था — यह था वहाँ बसे हुए भारतीयोंकी दुःखद दशा। वे बीस-तीस वर्षोंसे अपनी जमीनोंपर परिश्रमपूर्वक खेती करते आ रहे थे और समृद्धिके रूपमें उन्हें उसका सुफल भी मिला था, किन्तु आव्रजनसे सम्बन्धित हालके कानूनोंने उनसे जमीनके स्वामित्व और नागरिकताके अधिकार छीन लिये हैं। . . .

आफ्रिका और अमेरिकाकी अपनी यात्राओंके बाद मैं अब इस निष्कर्ष पर पहुँची हूँ कि भारतीय प्रवासियोंको दुनियामें तबतक सन्तोषप्रद दर्जा प्राप्त नहीं हो सकता जबतक कि स्वयं भारतको दुनियाके स्वतन्त्र राष्ट्रोंमें उसका सही दर्जा प्राप्त नहीं हो जाता।

आप यह तो जानते हैं कि मनुष्य-रूपी पुस्तकके अध्ययनमें मेरी कितनी गहरी रुचि है। इस पुस्तकके प्रत्येक खण्डमें, चाहे वह सुबोध हो या गूढ़, मुझे रस मिलता है और मैं उसे समझनेकी और उसकी व्याख्या करनेकी कोशिश करती हूँ। अपनी यात्राओंमें मैं न सिर्फ प्रत्येक प्रकारकी जलवायु और निसर्गके प्रत्येक रूपको परखती चलती हूँ बल्कि इस विशाल मानव-जातिके प्रत्येक प्रकारको भी। . . .

इस सप्ताह मुझे काफी देरसे कलकत्तेमें हमारे राष्ट्रीय सप्ताहके दरम्यान जो-जो घटनाएँ (मैं इसमें 'दुर्घटनाएँ' शब्द और जोड़ रही थी पर रुक गई) हुईं उनकी खबर मिली। अखबारोंकी अपेक्षा पद्मजाके छोटे-छोटे शब्द-चित्रोंमें उनका ज्यादा सजीव वर्णन हुआ है और उनसे मैं उनके बारेमें जितना जान पाई उतना अखबारोंमें प्रकाशित विवरणसे नहीं। वह लिखती है, "हमारे जादू-

गरके जादूमें कोई कमी नहीं आई है।" लेकिन जिस जादूसे सच्ची और सफल हिन्दू-मुस्लिम मैत्री होगी और जिस जादूसे हमारे स्वप्न और हमारी साधनाका वह योग सम्पादित होगा जो भारतको उसके जटिल बन्धनोंसे मुक्त करेगा — वह चरम जादू तो अभी प्रकट होना बाकी है।

तो हे जादूगर, इस यायावर गायिकाकी विनतीपर कान दो और अपना वह जादू चलाओ और स्वतन्त्र भारतके हमारे परम सुन्दर सपनेको साकार कर दिखाओ।

यह पत्र कंसास शहरसे ११ फरवरीको लिखा गया था और यदि मैं आन्ध्रके दौरे पर न होता तो पाठकोंको इसके पहले ही पढ़नेको मिल जाता। सरोजिनी देवीके पत्र मैंने इसके पहले जब भी दिये हैं तो उनमें से मैंने अपनेसे सम्बन्धित अंश हमेशा निकाल दिये हैं। किन्तु इस बार मैंने ऐसा नहीं किया; कर नहीं सका। उससे हिन्दू-मुस्लिम मैत्रीके लिए सरोजिनी देवीकी व्याकुलता प्रकट होती है। कितना अच्छा होता कि मैं उनकी इस आशाको पूर्ण कर सकता। लेकिन जादूगरकी जादूकी छड़ी खो गई है। उसका मन भी इस मैत्रीके लिए उतना ही व्याकुल है जितनी वह स्वयं, और 'चारों ओरसे जो अँधेरा घिरता चला आ रहा है' उसके बावजूद उसकी आस्थाकी ज्योति सदासे कहीं ज्यादा उज्ज्वल है। लेकिन लगता है कि शैतानकी माया अभी कायम है और पागलपनकी जो हवा आज देशमें बह रही है, जबतक उसका जोर खतम नहीं हो जाता और वह अपने-आप नष्ट नहीं हो जाती तबतक वह कुछ समय और चलेगी।

लेकिन हम इस भाव-प्रवाहसे निकलकर फिर इस गायिकाकी ओर लौटें। दीन-बन्धु एन्ड्रयूजसे प्राप्त एक पत्रसे सरोजिनी देवीसे सम्बन्धित ये पंक्तियाँ यहाँ उद्धृत करते हुए मुझे बड़ी खुशी होती है:[1]

सरोजिनी देवीकी यात्राकी सफलता आश्चर्यजनक है। उन्होंने सब लोगोंके मन जीत लिये हैं और मैं केनेडामें या अमेरिकामें जहाँ भी गया हूँ सर्वत्र उनकी प्रशंसा ही सुननेको मिली है। . . .उन्हें यहाँ बार-बार आना चाहिए क्योंकि उन्होंने पश्चिमका हृदय जीत लिया है और वे लोग अब उन्हें कभी भूल नहीं सकते। भारतके पक्षमें उन्होंने यहाँ जो मित्रता हासिल की है उसकी रक्षा होनी चाहिए। जो लोग क्यूबेकको जानते हैं उनका कहना है कि अगली बार जब वे यहाँ आयेंगी तो उनका इससे भी ज्यादा स्वागत होगा। क्योंकि तब प्रारम्भमें ही उनके साथ अनेक निष्ठावान मित्र होंगे जो यहाँ उनकी हर जगह मदद करना चाहेंगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३०-५-१९२९

१. केवल कुछ अंश दिये गये हैं।

३९९. व्यापारियोंकी उदासीनता

आन्ध्र-यात्रामें मिले हुए एक विचारपूर्ण अभिनन्दनपत्रका कुछ अंश नीचे दे रहा हूँ। खादीका जिक्र करते हुए उसमें कहा गया है:

> **अगर हम व्यापारी वर्गका सच्चा सहयोग पा सके होते तो खादीके रचनात्मक कामको पूरे जोशके साथ कर सके होते और इस तरह अपने जिलेके शेष भागोंके सामने एक आदर्श प्रस्तुत कर सके होते। लेकिन कहते दुख होता है कि बात कुछ और ही हुई। इस जिलेके ज्यादातर हिस्सोंमें उदासीनताके भावने घर कर रखा है।**

इस अभिनन्दनपत्रमें जो बात कही गई है, वह दुर्भाग्यसे देशके प्रायः हर हिस्सेके बारेमें सही है। यह सच है कि जब व्यापारी वर्ग राष्ट्रीय बातोंमें दिलचस्पी लेने लगेगा, तब हमें अपने ध्येय तक पहुँचनेमें ज्यादा समय नहीं लगेगा। जैसा कि मैं पहले कई बार कह चुका हूँ, व्यापारियोंके कारण ही हमारा देश विदेशियोंके हाथमें गया और अब वे ही उसे वापस भी लौटा ले सकते हैं। आखिरकार ये ही लोग सरकारके बड़े-से-बड़े सहयोगी हैं। इनमें भी कपड़े बेचनेवालोंका स्थान सबसे आगे है। अतएव प्रत्येक ग्राम कांग्रेस कमेटीका यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वह इस समस्या-को सुलझाये, इसे हल करनेकी कोशिश करे। अगर ये कमेटियाँ व्यापारियोंका सहयोग प्राप्त करना चाहती हैं, तो इन्हें उनको समझाना चाहिए और उन्हें विदेशी वस्त्रका व्यापार करनेसे होनेवाली हानियाँ बतानी चाहिए। मुझे विश्वास है कि इस तरहके प्रयत्न करनेवालोंको कई स्थानोंमें सफलता मिलेगी। इस कामके दो तरीके होंगे: एक, विदेशी वस्त्रके व्यापारीको राजी करना, दूसरे ग्राहकोंको रजामन्द करना। मैं देखता हूँ कि कांग्रेसके कार्यकर्त्ताओंमें मौलिकताका अभाव है। थोड़ेसे सदस्य बनाकर ही वे सन्तुष्ट हो जाते हैं और फिर बैठ जाते हैं। नई सदस्यताके लिए भी वे साधारणतः उन्ही लोगोंके पास जाते हैं, जो पढ़े-लिखे हैं, या जो उन्हींकी जाति या वर्गके हैं। आवश्यकता तो इस बातकी है कि कांग्रेसका सन्देश प्रत्येक वय-प्राप्त स्त्री-पुरुष तक पहुँचे। उदाहरणार्थ अपने लिए मैंने अब एक यह नियम बना लिया है कि खुद हजामत बनानेके बदले किसी खादी-धारी हज्जामसे हजामत बनवाऊँ। यह प्रचारका एक शान्तिपूर्ण साधन है। कांग्रेसवाले मेरी तरफ आश्चर्य-भरी निगाहसे देखते हैं और इस विचारसे घबरा जाते हैं कि खादीधारी नाई कहाँसे मिलेगा। वे यह महसूस नहीं करते कि खादीधारी नाई दुनियाकी एक अति सुलभ चीज है, खासकर गाँवोंमें। गाँवका नाई खुशी-खुशी खादी पहनने लगेगा, बशर्ते कि उसे खादी सस्ती या मुफ्त मिले। उसे एक छोटी-सी धोतीके सिवा और चाहिए ही क्या? सौभाग्य है कि वह पाजामा, जैकेट और लम्बे-लम्बे साफों या पगड़ियों वगैराका आदी नहीं है। उसका मामूली परिधान एक छोटी-सी धोती-भर है। साथ ही अगर कांग्रेसवाले अपनी सेवाके

लिए खादीधारी नाईको ही तरजीह दें, उसीको पसन्द करें, तो नाई-वर्ग शीघ्र ही यह ताड़ जायेगा कि उसके ग्राहकोंमें एक ऐसा दल भी तैयार हो चुका है, जिसे खादीधारी नाइयोंकी जरूरत है, और बस वह तत्काल खादी पहनना शुरू कर देगा। उसके साथ अगर थोड़ी आत्मीयता जताई जाये तो वह समझ जायेगा कि खादी पहननेका क्या अर्थ होता है, और इस प्रकार एक और व्यक्ति खादी-व्रती हो जायेगा।

आन्ध्रके देहातमें जो लोग मेरे आसपास जमा होते थे उनमें से खादी-धारियोंको विदेशी वस्त्र-धारियोंसे अलग करना मुश्किल था। क्योंकि दोनों तरहके लोग मोटा कपड़ा पहनते हैं और जब उनकी धोतियाँ काफी धुल-पिट जाती हैं तो दूरसे खादी और विदेशी कपड़ेको पहचानना कठिन हो जाता है। अतएव नगरवासियोंको खादीकी ओर रुजू करनेमें जितनी कठिनाइयाँ हैं, देहातियोंके सम्बन्धमें वैसी कोई अड़चन नही है। देहातमें सिर्फ दो बातोंकी जरूरत है: एक, खादीका प्रामाणिक प्रचार, दूसरे, खादी-उत्पादनकी योग्य व्यवस्था। यहाँ हमें यह भी जान लेना चाहिए कि गाँवोंमें ही करोड़ों रुपयोंका विदेशी कपड़ा इस्तेमाल होता है। अतएव जब नियमित और सुव्यवस्थित ढंगसे व्यापारियों और ग्राहकोंके बीच दोहरा प्रचार-कार्य सचाई और ईमानदारीके साथ शुरू किया जायेगा, तब विदेशी वस्त्रके बहिष्कारमें कोई कठिनाई नहीं रह जायेगी, और उसका स्थान खादी ले लेगी, जिसे लगभग प्रत्येक गाँवमें तैयार किया जा सकता है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ३०-५-१९२९

४००. राष्ट्रीय संगठन

कांग्रेसवालोंके लाभके लिए नीचे मैं अखिल-भारतीय कांग्रेस कमेटीके कार्यकारी प्रस्तावको[1] जैसाका तैसा दे रहा हूँ:

इस प्रस्तावका भावार्थ यह हुआ कि अगली ३१ अगस्तके पहले ही कांग्रेसके रजिस्टरमें कमसे-कम ७½ लाख ऐसे स्त्री-पुरुषोंका नाम दर्ज हो जाना चाहिए, जिन्होंने कांग्रेसके सन्देशको अपनाया है, जिन्होंने कांग्रेसके सिद्धान्तोंको स्वीकार किया है, और जो देहातों सहित देशके हर हिस्सेके रहनेवाले हैं। यह संख्या मेरी अपनी कल्पित मूल संख्याका अष्टमांश-मात्र है। यह उन मतदाताओंकी संख्याका भी आठवाँ हिस्सा है जो विधान सभाओंके सदस्योंके चुनावमें मत दे सकते हैं। साथ ही यह भी ध्यानमें रखना चाहिए कि इसमें से देशी राज्यों, 'नॉन रेगूलेटेड' क्षेत्रों, बर्मा और सीमाप्रान्तकी संख्या निकाल दी गई है। बोझ हलका करनेके लिए प्रस्तावमें जो भी

१. यहाँ नहीं दिया गया है। प्रस्तावके पाठके लिए देखिए "भाषण तथा प्रस्ताव: अ० भा० कां० कमेटी की बैठकमें", २५-५-१९२९।

संशोधन पेश किये गये थे सबको स्वीकार कर लिया गया था। प्रस्ताव बड़े उत्साहके साथ पास हुआ। अगर सदस्य सच्ची लगन रखते हों तो निर्धारित समयके पहले ही प्रस्तावकी बातोंपर पूरा-पूरा अमल हो जाना चाहिए। अगर प्रस्तावपर सचाईके साथ अमल किया जाये तो हमें फिरसे सन् १९२१ के जैसा एक संगठित और सक्रिय संगठन प्राप्त हो जाये, जो कांग्रेस द्वारा समय-समयपर की जानेवाली माँगोंकी भली-भाँति पूर्ति कर सकेगा। अगर विदेशी वस्त्र-बहिष्कार, शराबबन्दी और अस्पृश्यता-निवारणके त्रिविध कार्यक्रमके लिए बनाई गई विशेष समितियोंको भली-भाँति संगठित करना है, तो यह काम बहुत जरूरी है।

इस बैठकमें खादी-मताधिकारका सवाल भी उठाया गया था। सच पूछा जाये तो खादीका मताधिकारसे कोई खास सम्बन्ध नहीं है। कोई भी वय-प्राप्त व्यक्ति, जो कांग्रेसके सिद्धान्तोंको स्वीकार करता है और चार आना चन्दा देता है, वह कांग्रेसकी सदस्यताके लिए प्रार्थना कर सकता है। इस तरह कई लोग, जिनमें सरकारके खुफिया विभागके लोग भी हैं, कांग्रेसके सदस्य बन सके हैं। लेकिन जब कांग्रेसकी बैठकोंमें मतदानका मौका आये तब उसके लिए तो नियमित रूपसे खादी पहनना आवश्यक है। सम्भव है, यह धारा कांग्रेस संगठनके समुचित संचालनमें बाधक हो, मगर उसकी प्रतिष्ठा करनेमें नहीं। इस धाराको संविधानमें रहने दिया जाये या निकाल दिया जाये, यह एक ऐसा सवाल है जिसपर कांग्रेसको खास तौर पर फिरसे जाँच करनी चाहिए, और इसके गुण-दोषोंका विवेचन भी। अगर आज इतने समयके बाद भी कांग्रेसवालोंको खादीमें विश्वास न हो तो इस धाराको अवश्य ही हटा देना चाहिए। अगर खादीमें विश्वास रखते हुए वे उसे संगठनमें स्थान न देना चाहते हों तो भी उसका निकल जाना ही अच्छा। लेकिन अगर यह धारा कायम रहे, तो कांग्रेसकी प्रतिष्ठाको मद्देनजर रखते हुए उसका कड़ाईसे पालन करवाया जाना चाहिए। अगर ७½ लाख लोगोंको सचाईके साथ कांग्रेसका सदस्य बनाया जाये तो स्वभावतः कार्यकर्त्तागण उन स्त्री-पुरुषोंको, जिन्हें वे सदस्य बनायेंगे, यह भी बतायेंगे कि अबतक कांग्रेसने क्या किया है और आगे वह इन सदस्योंसे क्या आशा रखती है। अगर मैं 'कैनवासिंग' का काम हाथमें लूँ तो मैं इस अवसरका उपयोग खादी-बिक्री, अस्पृश्यो-द्धार आदि प्रचार-कार्योंमें करूँगा। साथ ही जिन लोगोंके पास मैं 'कैनवासिंग' करते-करते पहुँचूँगा, अगर वे राजनैतिक बातोंमें थोड़ी भी दिलचस्पी रखनेवाले हुए तो मैं उनसे नेहरू-संविधानके बारेमें बातचीत करूँगा और उनसे कहूँगा कि अगर सरकार उसे अगली ३१ दिसम्बरसे पहले या उस दिनतक मंजूर नहीं करेगी तो जहाँतक सम्भव है, कांग्रेस इस संविधानको फाड़ फेंकेगी और अपने आपको पूर्ण स्वातन्त्र्यके पक्षमें घोषित कर देगी। आखिरमें मैं उनसे यह भी कहूँगा कि अगर कांग्रेसने ऐसी घोषणा कर ही दी तो वह अपने प्रत्येक सदस्यसे यह आशा रखेगी कि वह कांग्रेस द्वारा आज्ञापित असहयोग या सविनय अवज्ञा वगैरा किसी भी आन्दोलनमें भाग लेगा। मैं जानता हूँ कि अगर हमारा संगठन उत्तम कोटिका प्रामाणिक संगठन बन जाये, वह ऊपर बताई गई तमाम न्यूनतम आवश्यकताओंका पूरक बन जाये और अनुशासन-

का पालन करने लगे तो हमें सविनय अवज्ञाके कार्यक्रमको सफल बनानेमें कोई भी कठिनाई न होगी — यानी कि अगर अगले साल सविनय अवज्ञा करना आवश्यक ही हो जाये तो। और वर्तमान परिस्थितिको देखते हुए इस आवश्यकताकी बड़ीसे-बड़ी सम्भावना स्पष्ट है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३०-५-१९२९

४०१. विदेशी वस्त्र बहिष्कारकी प्रगति

विदेशी वस्त्र बहिष्कार समितिने गत सप्ताह अ० भा० कां० कमेटीकी बैठकमें अपने कामका एक विवरण पेश किया था। मुझे आशा है कि इस आन्दोलनमें रुचि रखनेवाला प्रत्येक व्यक्ति इस विवरणकी एक-एक प्रति मन्त्री, कांग्रेस हाउस, बम्बईके पतेसे अवश्य प्राप्त कर लेगा। पत्र-लेखकोंको मेरी सलाह है कि वे डाक-खर्चके लिए एक आनेका डाक-टिकट साथमें भेज दें। विवरणमें ३० अप्रैल तकके केवल दो महीनों-के कामका ब्योरा दिया गया है। प्रगति संतोषप्रद तो रही है, पर यदि कांग्रेसका एक जागरूक संगठन पूरी तेजीके साथ इस दिशामें काम करता तो प्रगति और अधिक की जा सकती थी। नगरपालिकाएँ और स्थानीय निकाय श्रीयुत जयराम-दासकी अपीलपर धीरे-धीरे ही आगे आ रहे हैं। अबतक मुश्किलसे तीसने ही अपने उत्तर भेजे हैं। कांग्रेसने जिन स्थानीय निकायोंमें अपना बहुमत बना लिया है, उनमें से तो प्रत्येकको बहिष्कार सम्बन्धी प्रस्ताव पर निश्चय ही अमल करना चाहिए। संगठित सार्वजनिक निकायोंकी ओरसे हालाँकि बहुत कम पहल हुई है, फिर भी आन्दोलनका प्रभाव स्पष्ट दिखने लगा है। इस विवरणमें अनेक उद्धरण दिये गये हैं। मैं उनमें से एक प्रस्तुत कर रहा हूँ। यह उद्धरण 'दिल्ली पीसगुड्स एसोसिएशन' के अध्यक्ष, श्री जे० सी० रॉबर्ट्सके भाषणसे लिया गया है:

> चिन्ता उत्पन्न करनेवाली एक दूसरी बात भी है जो व्यापारियोंको काफी चिन्तित बनाये है। यह है — देशकी अनिश्चिततापूर्ण वर्तमान राजनीतिक परि-स्थिति और उसीके एक पहलूके रूपमें विदेशी वस्त्रोंके बहिष्कार-आन्दोलनका खतरा। भारतमें आयी मन्दीके इस मौजूदा दौरका प्रभाव उत्पादन-केन्द्रोंपर भी पड़ने लगा है और देश (इंग्लैंड)से आनेवाले विवरणोंसे पता चलता है कि भारतकी ओरसे माँग न होनेके कारण और भारतीय खरीदारों द्वारा वायदेके सौदे पूरे न कर पानेके कारण ग्रेटब्रिटेनकी कुल सूती कपड़ा मिलोंमें से एक-तिहाईको बन्द कर देना पड़ा है। . . . हालात बिगड़ते ही जा रहे हैं और भविष्य अनिश्चित तथा अंधकारपूर्ण दिखता है।

खादीकी बिक्रीपर प्रचारका काफी व्यापक प्रभाव पड़ा है। पिछले वर्षकी तुलनामें इस वर्ष उस अवधिमें ही खादीकी बिक्रीमें पचास प्रतिशत वृद्धि हो गई है।

लेकिन कलकत्ताके बारेमें 'टैटरसल' कहता है :

> **'पीसगुड्स' की माँग बढ़नेके लक्षण दिखाई दिये हैं। . . . जहाँतक भारतकी बात है, ऐसे लक्षण दिख रहे हैं कि कलकत्तामें सूती कपड़ेकी, विशेषकर धोतियोंकी और अधिक माँग है और अधिक बड़े पैमानेपर उनकी खरीद की गई है।**

विवरणमें इसके बारेमें कहा गया है :

> **गत वर्ष कलकत्ताने २,८२१ लाख रुपयेके मूल्यके विदेशी वस्त्रोंका आयात किया था, जबकि देशभर ने कुल ६,५१६ लाख रुपयेके मूल्यके विदेशी वस्त्रोंका आयात किया था। कलकत्ताका हिस्सा ४३ प्रतिशत रहा था। इस प्रकार कलकत्ता ही विदेशी वस्त्रोंके आयातका मुख्य द्वार है। यह तथ्य उक्त टिप्पणीका महत्त्व बढ़ानेमें ही योग देता है।**

कलकत्ताके कांग्रेसजनोंको इससे चेत जाना चाहिए।

अनेक लोगोंको आशंका है कि फिलहाल बाजारमें खादी आ ही नहीं पायेगी और उसके अभावमें हमें पहलेकी भाँति देशी सूती कपड़ा मिलोंकी दयापर ही निर्भर रहना पड़ेगा और उसमें फिर यह खतरा पैदा हो जायेगा कि जनताको भारतीय सूती कपड़ा मिलोंमें तैयार किये गये वस्त्रोंके नामपर विदेशी वस्त्र ही भेजे जायेंगे और उसे खरीदने पड़ेंगे, या कमसे-कम महँगे दाम तो चुकाने ही पड़ेंगे। यदि हम अपनी सारी शक्ति, समय और कौशल सभी सम्भव तरीकोंसे खादीका उत्पादन करनेमें नहीं लगायेंगे, तो यह खतरा वास्तविक बन जायेगा। खादी उत्पादनके तरीके हैं :

१. अपनी जरूरतके लिए कातना,
२. मजूरीके लिए कातना, और
३. यज्ञके रूपमें कातना।

पहला तरीका सबसे महत्त्वपूर्ण और सर्व-व्यापक है और एक बार शुरू कर देनेपर फिर इसकी असफलताका कोई सवाल ही नहीं। इस दिशामें प्रभावोत्पादक प्रचारका उपयुक्त समय बिलकुल यही है। खादी-प्रतिष्ठानके श्रीयुत सतीशचन्द्र दासगुप्तने यह बात समझ ली है और वह इसको एक बड़े पैमानेपर संगठित कर रहे हैं। खादी-उत्पादनका यही सबसे कमखर्चीला तरीका है, क्योंकि इसमें तैयार मालके लिए बाजार तलाशनेकी परेशानी नहीं उठानी पड़ती। मजूरीके लिए कताई करना दूसरा तरीका है। इसके विस्तारके लिए भी व्यापक क्षेत्र पड़ा हुआ है। परन्तु इस तरीकेमें रुईका स्टाक रखने और बिक्रीका प्रबन्ध करनेके लिए पूँजीकी जरूरत पड़ती है। और इस तरीकेके लिए हमारे अन्दर व्यावसायिक क्षमता होना भी बिलकुल जरूरी है। यह तरीका हमारे अन्दर सूझ-बूझ पैदा करता है और हमें एक विशाल संगठन खड़ा करनेमें समर्थ बनाकर मध्यवर्गीय लोगोंके लिए जीविकाका एक प्रतिष्ठित

साधन जुटानेकी क्षमता प्रदान करता है। तीसरा तरीका बड़ा उच्चादर्शपूर्ण है, लेकिन गिने-चुने लोग ही उसे अपना सकते हैं। यदि हमारे देशवासी त्यागकी आवश्यकता भली-भाँति समझ लें, तो इस तरीकेसे हम असीमित मात्रामें सूतका उत्पादन कर सकते हैं। नगरपालिकाओं द्वारा संचालित सभी पाठशालाएँ ही यदि चाहें तो लाखों लोगोंके वस्त्रोंके लायक सूत हमें दे सकती हैं। शहरोंमें रहनेवाले लोग यदि चरखेको आधा घंटा रोज दिया करें तो प्रत्येक शहरी कमसे-कम १०० गज बढ़िया सूत तो दे ही सकता है। इसपर अविवेकपूर्ण ढंगसे यह फब्ती मत कसिए कि उस आधा घंटेका उपयोग सूत कातनेसे कहीं उपयोगी किसी अन्य कामके लिए किया जा सकता है। रेगिस्तानमें फँसा हुआ साहूकार अपने समयका अच्छेसे-अच्छा उपयोग स्वच्छ और ताजा जल संचय करनेमें ही कर सकता है। इस वर्ष विदेशी वस्त्रोंका पूर्ण बहिष्कार सम्पन्न कर दिखानेके इच्छुक प्रत्येक भारतीय, बड़ेसे-बड़े भारतीय, के लिए अपने समयका सदुपयोग करनेका सबसे अच्छा तरीका एक यही है कि वह बहिष्कार सम्पन्न कर दिखानेके दिनतक स्वयं सूत कातता रहे। हम इस अत्यन्त ही सरल और स्पष्ट सत्यको इसलिए नहीं देख पाते कि हम इस बहिष्कारकी आवश्यकताको गहराईसे महसूस नहीं करते। खैर, इन तीनों तरीकोंसे खादीका उत्पादन किया जा रहा है और यदि हम सब लोग अपनी शक्तिभर जुटकर काम करें तो खादीका अकाल पड़नेका सचमुच कोई खतरा नही।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ३०-५-१९२९

४०२. टिप्पणी

अलमोड़ा-यात्रा

मैं ११ जूनको साबरमतीसे अलमोड़ाके लिए रवाना होनेकी आशा रखता हूँ। कार्यकर्त्ताओंको यह याद दिलानेकी शायद ही जरूरत हो कि

१. किसी तरहकी खर्चीली दिखावट और सजावट न हो,

२. जितने स्थानीय स्वयंसेवकोंकी नितान्त आवश्यकता हो सिर्फ उतने ही मेरे साथ यात्रामें रहें,

३. दरिद्रनारायणके लिए चन्दा इकट्ठा किया जायेगा,

४. मेरे साथ रहनेवालोंको बिलकुल सादा भोजन दिया जाये,

५. दिनमें मुझे कमसे-कम छः घंटे मिलने चाहिए, जिनमें मैं सम्पादन और पत्र-व्यवहारका काम भली-भाँति कर सकूँ, इसमें भोजन वगैराका समय शामिल न हो,

६. अगर स्वागतका खर्च, एकत्र होनेवाली चन्देकी रकममें से घटाना हो तो उसका जाँच किया हुआ हिसाब मुझे मिलना चाहिए, और

७. मेरे साथके लोग अपने पैसेसे सफर करेंगे, स्वागत-समिति उनके लिए परि-वहनकी सुविधा-मात्र उपलब्ध कर दे।

चूँकि पंडित जवाहरलाल नेहरूने मेरे आराम और काम दोनोंको मद्देनजर रखते हुए इस यात्राका आयोजन किया है, मैं अपने साथ कुछ ऐसे लोगोंको भी लाऊँगा जिनका यात्रासे कोई सम्बन्ध न होगा, मगर जो स्वास्थ्यकी वजहसे मेरे साथ रहेंगे। स्वागत-समितियोंपर उनका किसी भी तरहका बोझ नहीं पड़ना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ३०-५-१९२९

४०३. आन्ध्र देशमें [–७]

इस बार हमारी इस लेखमालाका यह शीर्षक उपयुक्त नहीं है। मैं ये टिप्पणियाँ आन्ध्र देशसे नहीं बल्कि उद्योग मन्दिरमें बैठकर लिख रहा हूँ। किन्तु मेरे चारों ओर अभी भी आन्ध्रका वातावरण है और आन्ध्रके मित्र हैं जिनमें श्री कोंडा वेंकटप्पैया भी हैं जो मेरी इस यात्राके दौरान मेरे प्रमुख जेलर थे। मैं अभी भी आन्ध्र प्रदेशसे सम्बन्धित काम कर रहा हूँ और इस समय इन मित्रोंके साथ तथा अखिल भारतीय चरखा संघकी परिषदके सदस्योंके साथ इस बातकी चर्चा कर रहा हूँ कि दौरेकी अवधिमें जो पैसा इकट्ठा हुआ है उसका सर्वोत्तम उपयोग किस प्रकार किया जा सकता है। अस्तु, यहाँ अपनी उगाहीकी अन्तिम सूची पेश कर रहा हूँ।[1]

जैसा कि मैंने अडोनीके विदाई भाषणमें कहा था, विभिन्न प्रान्तोंमें मैंने आजतक जितने दौरे किये हैं उनमें मेरा आन्ध्रका यह दौरा सबसे लम्बा और सबसे ज्यादा व्यस्त रहा है, और जहाँतक मुझे याद है यहाँ मुझे जो धन-राशि प्राप्त हुई है वह — यदि सन् १९२१ का खयाल न करें तो — किसी एक प्रान्तसे प्राप्त सबसे बड़ी राशि है। मैंने आन्ध्रमें ६ अप्रैलको प्रवेश किया था और ठीक ४५ दिनके बाद २१ मईको मैंने उसे छोड़ा था। इस अवधिमें मैंने ३१९ गाँवोंकी यात्रा की — गुन्टूर और पूर्व कृष्णा जिलोंके ५२ गाँव और पूर्व गोदावरी तथा पश्चिम गोदावरीके क्रमशः ५० और ४८। अगले सप्ताह मैं इनके सम्बन्धमें एक समेकित वृत्तान्त प्रकाशित करनेकी उम्मीद करता हूँ जिसे देशभक्त कोंडा वेंकटप्पैया और श्री नारायण मूर्ति मेरे लिए तैयार कर रहे हैं। असलमें ये साप्ताहिक सूचियाँ श्री नारायण मूर्ति ही तैयार करते रहे हैं।

सबक

इस दौरेसे मैं काफी कुछ सीखता रहा हूँ। आन्ध्रमें खादीके उत्पादनके लिए असीम अवकाश है। इसके सिवाय, वह कांग्रेसके कार्यक्रमके अन्य अंगोंके लिए भी आसानीसे संगठित किया जा सकता है। वहाँ कार्यकर्त्ता पर्याप्त संख्यामें हैं, किन्तु उन्हें तालीम देनेकी जरूरत है। उन्हें ऐसे नेतृत्वकी आवश्यकता है जो सशक्त हो और साथ ही सहानुभूतिसे काम ले। वहाँ बलिदानकी भावना तो है किन्तु कार्यकर्त्ता यह नहीं जानते कि उन्हें क्या-क्या करना है और कैसे करना है। पारस्परिक अनबन

१. सूची यहाँ नहीं दी गई है। गांधीजीको इस उगाहीमें कुल रु० २,५६,२७९-७-६ प्राप्त हुए थे।

उन्हें एक दूसरेसे अलग रखती है। विभिन्न और प्रायः परस्पर विरोधी कार्यक्रम तथा नीतियाँ उन्हें विभ्रान्त करती हैं। खादी एक ऐसा कार्यक्रम है जो उन्हें धीरे-धीरे ही सही किन्तु निश्चयपूर्वक एक-दूसरेसे बाँध रहा है तथा अनुशासनके नियन्त्रणमें ला रहा है। मेरे साथ यहाँ जो कार्यकर्त्ता साबरमती तट चले आये हैं उनके साथ मैं यहाँ जो बातचीत कर रहा हूँ उससे मैं बहुत-कुछ सुफलकी आशा करता हूँ।

सभाओंके आयोजकोंको एक सलाह

मैं कार्यकर्त्ताओंका ध्यान इस दौरेके अपने एक आविष्कार — सचल मंच — की ओर खींचना चाहता हूँ। यह आविष्कार बुद्धिकी नहीं उस आवश्यकताकी देन है जो अधिकांश आविष्कारोंकी जननी है। मेरा शरीर कमजोर है और आदेशके अनुसार बार-बार उठना और बैठना उससे सहन नहीं होता। मोटर-गाड़ीसे उतरना, फिर अपने प्रशंसकोंकी शोर कर रही भीड़को चीर कर आगे बढ़ना, और उसके बाद ऐसे मंचोंपर चढ़ना जिनके लक्षणोंसे लगता है ये जाने कब गिर जायेंगे और जो कभी-कभी गिर भी जाते हैं, फिर मंचसे उतरना और पुनः बढ़ी आ रही भीड़में से अपना रास्ता निकालना, बमुश्किल अपनी गाड़ीतक पहुँचना और उसमें चढ़कर अपनी जगह बैठना, और १५ मिनटके बाद फिर इसी क्रियाको दोहराना — यह ऐसी कसरत है जिसे मेरा शरीर अब झेल नहीं सकता। इसलिए मैंने अपने प्रमुख जेलर श्री कोंडा वेंकटप्पैयाको यह सुझाया था कि जहाँ भी मुझे बोलना हो वहाँ मेरी गाड़ीको ही उस स्थानके केन्द्र तक पहुँचा दिया जाये, और मंचकी तरह उस गाड़ीका ही उपयोग कर लिया जाये। मैंने कहा कि मैं गाड़ीकी पीठके किनारेपर बैठ जाया करूँगा और वहींसे बैठे-बैठे भाषण दूँगा। वे तुरन्त सहमत हो गये। इस साधनसे समय, शक्ति, स्थान और पैसा हर चीजकी बचत हुई। इसमें न मंचकी आवश्यकता थी, न कुर्सियोंकी, और सजावटके नामपर श्रोताओंके सुन्दर हृदयोंके सिवा, अन्य किसी सजावटकी आवश्यकता भी न थी। यह व्यवस्था हर तरहसे सम्पूर्ण सिद्ध हुई, और मैं सभाओंके संगठकोंको यह सलाह देता हूँ कि जहाँ बहुत सारी सभाओंमें भाषण देना हो, वहाँ पर वे मेरी इस ताकीदपर अमल करें।

खादीधारी हज्जाम

ज्यादातर मैं अपनी दाढ़ी स्वयं बना लेता हूँ। लेकिन इस बार मैं एक मित्रके दिये हुए अपने सेफ्टी-सेटको तिलांजलि देकर पुनः एक बिहारी उस्तरेपर आ गया, जिसे मगनलाल गांधी छोड़ गये हैं। हमारा देशी उस्तरा, यदि उसे अच्छी तरह रखा जाये तो, एक बहुत ही बढ़िया साधन है। हमारे हज्जाम अपना उस्तरा पैनानेके लिए पत्थरकी जिस सिलका या चमड़ेके जिस पट्टेका उपयोग इतनी खूबीसे करते हैं, उनका उपयोग करनेकी कला मैं अभीतक हस्तगत नहीं कर पाया हूँ, इसलिए अपने इस दौरेके प्रारम्भिक दिनोंमें मैंने एक खादीधारी हज्जामको बुला भेजा। आन्ध्रमें खादीधारी हज्जामको ढूँढ़ लेना बहुत आसान बात है। बम्बईमें ऐसा कर सकना कठिन है। मैंने उसे अपना यह उस्तरा दिया, और उसने मेरी दाढ़ी बहुत मजेसे

बनाई। मैंने देखा कि खादीधारी हज्जामकी सेवाओंका यह उपयोग विदेशी वस्त्र बहिष्कार समितिके अध्यक्षके लिए खादी-प्रचारके कार्यमें बहुत सहायक हो सकता है। इससे मुझे दरिद्रनारायणकी सेवाका सन्देश हमारी जनताके एक ऐसे वर्गको देनेका अवसर सुलभ हो गया जिनसे ज्यादा अच्छे प्रचारकोंकी आशा करना कठिन है। लेकिन, मैंने देखा कि यदि मैं इस भाईको अपने इस साधनका उपयोग करनेको कहता हूँ तो मै उसे पूर्ण स्वदेशीका सन्देश नहीं दे सकता और न उसे सफाईका ही सबक सिखा सकता हूँ। इसलिए अगली बार मैंने उसे अपने ही साधनोंका उपयोग करनेको कहा; अलबत्ता, उनका उपयोग करनेके पहले मैंने उससे उन्हें अच्छी तरह धो डालने और साफ करनेको भी कहा। इस सिलसिलेमें एक जगह तो मेरे पास एक ऐसा खादीधारी हज्जाम लाया गया था जिसके पास पश्चिमका एकदम नवीनतम उस्तरा था। पश्चिमका ही साबुन था, पश्चिमका ब्रुश था, पश्चिमका ही आइना था और ये सब पश्चिमकी ही एक पेटीमें बढ़िया ढंगसे सजे हुए थे। मुझे ऐसा सन्देह है कि ये सारी वस्तुएँ उसकी नहीं बल्कि मेरे खादीधारी उदार मेजबानकी थीं। मैंने महसूस किया कि यह परिस्थिति स्वदेशीके जिस सत्यकी मैं सेवा करना चाहता हूँ उसके अनुकूल नहीं है इसलिए अब मुझे इस बातका खयाल रखनेकी भी जरूरत महसूस हुई कि हज्जाम अपने साथ जो भी साधन लाये वे भी यथासम्भव स्वदेशी होने चाहिए।

तो कार्यकर्त्ताओंको मैं यह एक सलाह और देना चाहता हूँ। वे स्वदेशीके सन्देशको अपने नाइयों और धोबियों और उन अन्य लोगोंतक भी पहुँचायें जिनके साथ रोज मिलने-जुलनेका मौका आता है। हम उन्हें अपना अशिक्षित और उपेक्षणीय आश्रित न मानें। वे हमारे ऐसे साथी नागरिक हैं जिनकी सेवाओंकी देशकी प्रगतिके लिए उतनी ही आवश्यकता है जितनी कि हममेंसे बड़ेसे-बड़े लोगोंकी सेवाओंकी; और हमें यही मानकर उनके साथ व्यवहार करना चाहिए।

इस घटनासे मुझे एक और सबक भी सीखनेको मिला। हम प्रायः ऐसा मानते हैं कि अगर हमने खादीका पहनना आरम्भ कर दिया तो हमने स्वदेशीके सन्देशका पूरा-पूरा पालन कर लिया। खादी पहनकर हम समझते हैं कि हमें भारतके बाहरसे आनेवाली हरेक चीजका व्यवहार करनेकी, यहाँतक कि पेरिससे निकलनेवाले नवीनतम फैशनको भी अपनानेकी छूट मिल जाती है। यह स्वदेशीकी विडम्बना और खादीके सन्देशको अस्वीकारना है। खादीको पहनना निश्चय ही भारतवर्षमें हम लोगोंके लिए एक ऐसा कर्त्तव्य है जिसका पालन हमें सदा करना होगा, किन्तु साथ ही इसमें भी कोई सन्देह नहीं कि जहाँ भी सम्भव हो, हमें भारतमें ही बनी चीजोंका उपयोग करना चाहिए। फिर चाहे ये वस्तुएँ विदेशी वस्तुओंकी तुलनामें कुछ घटिया ही क्यों न हों। बाजारमें आजकल ऐसी अनेक स्वदेशी वस्तुएँ हैं जिन्हें यदि लोग खरीदें नहीं तो आश्रयके अभावमें वे लुप्त हो जायेंगी। सम्भव है कि ये वस्तुएँ जितनी अच्छी होनी चाहिए उतनी अच्छी न हों। ऐसी स्थितिमें हमारा कर्त्तव्य है कि हम उनका उपयोग करें और बनानेवालोंसे जहाँ उनमें सुधार सम्भव हो वहाँ सुधार करनेको कहें। 'सबसे अच्छा और सबसे सस्ता' यह नियम हमेशा सच नहीं होता। जिस

प्रकार हम अपना देश छोड़कर ज्यादा अच्छे जलवायुवाले किसी दूसरे देशमें जा बसना पसन्द नहीं करेंगे, बल्कि अपने देशको ही ज्यादा सुन्दर और स्वास्थ्यप्रद बनानेकी कोशिश करेंगे, उसी प्रकार हम अच्छी और सस्ती विदेशी वस्तुओंको देखकर स्वदेशी वस्तुओंको नहीं छोड़ सकते। यदि कोई पति अपनी सामान्य शकल-सूरतवाली पत्नीसे असन्तुष्ट होकर किसी ज्यादा सुन्दर स्त्रीको ढूँढ़ने लग जाये तो जिस प्रकार हम उसे अपनी पत्नीके प्रति विश्वासघातका दोषी मानेंगे, उसी प्रकार हम जो मनुष्य अपने देशमें बनी हुई चीजोंकी तुलनामें विदेशकी ज्यादा सुन्दर वस्तुओंको पसन्द करता है, उसे स्वदेशके प्रति द्रोहका दोषी मानेंगे। किसी भी देशकी प्रगतिके नियमका यह तकाजा है कि उस देशके निवासी अपने ही देशकी बनी हुई चीजोंको पसन्द करें।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ३०-५-१९२९

४०४. पंजाबकी परीक्षाएँ

ऐसा मालूम होता है कि पंजाबकी सरकार पंजाबमें कांग्रेस [अधिवेशन] की तैयारियोंमें हर तरह रोड़े अटकानेकी कोशिश कर रही है। पंजाब प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीने जो केन्द्रीय स्थान [कांग्रेस अधिवेशनके लिए] चुना था, सरकारने उसका उपयोग करने देनेसे इनकार कर दिया है। अब कार्यकर्त्ता गिरफ्तार किये जा रहे हैं, उनके मकानोंकी तलाशियाँ ली जा रही हैं और कई दूसरे तरीकोंसे उन्हें सताया जा रहा है। [प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके] मन्त्री डाक्टर सत्यपालको भी कैद कर लिया गया है। फिर भी यह एक शुभ चिह्न है कि पंजाबी निडर और निर्भीक होकर पूरे उत्साहके साथ तैयारी करनेमें लगे हुए हैं। मुझे आशा है, पंजाब-निवासी आगामी कांग्रेस अधिवेशनको सफल बनानेके लिए पूरी मुस्तैदीके साथ कोशिश करेंगे और सरकारको बतला देंगे कि दमनसे उनके जोशको कुचला नहीं जा सकता, उलटे उसमें और निखार आया है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ३०-५-१९२९

४०५. पत्र : पुरुषोत्तम गांधीको

आश्रम
साबरमती
३० मई, १९२९

चि० पुरुषोत्तम,

तुम्हारा पत्र मिला है। नारणदास तो तुम्हें लिखेगा ही। यदि वैद्य सलाह दे तो उसका उपचार अलमोड़ामें आजमा कर देखना। शायद यह ठीक होगा। यदि यह करना हो तो फिर तुम्हारा मेरे साथ घूमनेके बजाय एक ही जगह टिककर रहना ज्यादा अच्छा होगा। मैं जिन दिनों अलमोड़ामें रहूँगा उन दिनों तो तुम भी मेरे कहीं पास ही रहोगे। रतिलाल और चम्पाबहन भी किसी ठंडी जगहमें रहना चाहते हैं। यदि कोई साथ हो तो उन्हें भी भेजा जा सकता है। तुम्हें उलझन न हो तो एक बँगला लेकर उन्हें वहाँ रखूँ और तुम भी उनके साथ रहो क्योंकि उनके साथ तो किसी-न-किसीको भेजे बिना नहीं चलेगा। यदि यह सुझाव तुम्हें पसन्द न आये तो इनकार कर देना। अलमोड़ा जानेकी बात तो अलहदा है; उसका विचार रतिलालका खयाल आनेसे पहले ही मनमें आया था।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८९७) से।
सौजन्य : नारणदास गांधी

४०६. पत्र : हेमप्रभा दासगुप्तको

उद्योग मंदिर
साबरमती
३१ मई, १९२९

प्रिय भगिनि,

आपका पत्र मिला। रोग कुछ पहलेसे अच्छा है वह सुनकर चित्त प्रसन्न होता है। मैं भी चाहता हूँ कि हम कुछ अरसे तक साथ रहें ऐसा सुयोग्य कब मिलेगा ये तो भगवान ही जाने। मैंने तो यही मांगा है कि अब यदि आश्रममें शान्तिसे रह सकती है तो यही कुछ अरसे तक साथ रह जायें। जुलाई, अगस्तमें तो मैं यहीं रहने-वाला हूँ। ११ जूनसे अलमोढाके दौरामें जाता हूँ। जुलाईके आरम्भमें आ जाऊँगा। 'रामायण' का अभ्यास तो चलता ही रहेगा।

मेरा स्वास्थ्य ठीक है।

बापूके आशीर्वाद

जी० एन० १६६४ की फोटो-नकलसे।

४०७. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

उद्योग मंदिर
साबरमती
३१ मई, १९२९

भाई घनश्यामदासजी,

आपका पत्र मिला। . . . आत्महत्या की है उसमें कोई संदेह नहीं है। मैंने उसको तार[1] भेजा वह भी सख्त तो था ही। मेरे पर उसके कई तार और चिट्ठियाँ आ गई थीं। सब संसार उसके लिये जहरीला हो गया था। उसके प्रति लोगोंने कुछ अन्याय तो अवश्य किया। परन्तु ऐसा अन्याय होता ही रहेगा। . . . बहुत विद्वान थे, लेकीके[2] पुस्तकमें आत्म-हत्याके प्रशंसाके वचन पढ़े ही थे उसका अमल किया ऐसा प्रतीत होता है। आपने तो उसको सहारा हि दिया। मेरा तार उसका मिलनेके बाद मृत्यु हुआ कि पहले अगर इसका पता चले तो मुझे दें। और भी कुछ खबर मिले तो भेजिए।

आपका,
मोहनदास

सी० डब्ल्यू० ६१७० से।
सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१. तार उपलब्ध नहीं है।
२. डब्ल्यू० ई० एच० लेकी (१८३८-१९०३), हिस्ट्री ऑफ यूरोपियन मॉरल्स फ्रॉम ऑगस्टस टु शार्लमेनके लेखक।

परिशिष्ट

परिशिष्ट १

खादी और स्वराज्य[१]

स्वराज्य प्राप्त करनेमें खादी हमारी सहायता क्यों कर सकती है?

क्योंकि

भारतकी तीन-चौथाई आबादी ऐसे किसानोंकी है जिनके पास न पूरा काम है और न जिन्हें पूरा भोजन ही मिलता है, और खादी उन्हें काम और भोजन प्रदान कर सकती है।

क्योंकि

इंग्लैंडके लिए भारतको गुलाम बनाये रखनेका एक प्रमुख कारण यह है कि उसके सूती कपड़ेके लिए भारत एक बहुत अच्छा बाजार है और खादी उसके इस बाजारको खत्म कर सकती है।

भारतीय मिलोंके कपड़ेकी अपेक्षा खादी स्वराज्य-प्राप्तिमें क्यों अधिक सहायक है?

क्योंकि

खादी करोड़ों ऐसे दीन-दुखी किसानोंको अतिरिक्त रोजगार प्रदान कर सकती है जो अपनी जमीन नहीं छोड़ सकते और इसलिए मिलोंमें काम करनेके लिए नहीं जा सकते।

क्योंकि

सूती कपड़ा मिलें इतना पर्याप्त रोजगार मुहय्या नहीं कर सकतीं जिससे बेरोजगारोंके बहुत बड़े समुदायको कोई राहत पहुँच सके।

क्योंकि

खादीके उत्पादनको बहुत थोड़ी लागतपर शीघ्र ही एक अत्यन्त व्यापक स्तर पर संगठित किया जा सकता है, जब कि मिलोंकी संख्यामें कोई ठोस वृद्धि करनेके लिए जबर्दस्त खर्च पड़ेगा और इसमें कई वर्षकी देर लगेगी।

टिप्पणी

२०,००० तकुओंवाली एक आधुनिक सूत कातनेकी मिल बिठानेमें अनुमानतः रु० १,६६०,९१७ का खर्च बैठता है। यदि इतना धन चरखोंपर लगाया जाये तो २०,००० मिलके तकुओंके मुकाबले कमसे-कम १,६६०,९१७ हाथतकुए उपलब्ध किये जा सकते हैं और सूतका उत्पादन मिलके मुकाबले १३-१४ गुना ज्यादा होगा। इतना

१. इसे मीराबहन द्वारा लिखित "नोट्स ऑन खादी" में से लिया गया है; देखिए पृष्ठ ३५।

उत्पादन तब होगा जब हम यह मानकर चलें कि मिलमें हर तकुआ दस घंटे चलेगा और हर तकुआ प्रति घंटे ६०० गज सूत तैयार करेगा और इसके विपरीत हाथसे चलनेवाले हर तकुए पर ४ घंटे काम होगा और एक तकुएसे प्रति घंटा २५० गज सूत निकलेगा।

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५३४५)से।

सौजन्य : मीराबहन

परिशिष्ट २

मद्य-निषेध आन्दोलन[1]

१. प्रत्येक प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी प्रान्तमें कांग्रेसके मद्य और मादक-वस्तु विरोधी आन्दोलनके चलानेके लिए एक उप-समिति नियुक्त करेगी या किसी एक व्यक्तिको इसका संचालन-भार सौंपेगी और इस उद्देश्यके लिए पर्याप्त धन अलग निकाल कर रखेगी।

२. प्रत्येक प्रान्तमें उप-समिति या संचालक ऐसे अवैतनिक कार्यकर्त्ताओंको आमंत्रित करेंगे जो ताल्लुकोंमें मद्य-निषेध आन्दोलन संगठित करनेको तत्पर हैं। प्रान्तीय उप-समिति इनमेंसे प्रत्येक ताल्लुकेके लिए एक कार्यकर्त्ता चुनेगी जो ताल्लुका कमेटीमें मद्यपान-विरोधी संगठनका मंत्री होगा; बशर्ते कि उप-समितिको आवश्यक होनेपर मंत्रीको बदलनेका अधिकार होगा।

३. प्रत्येक ताल्लुकेमें संगठन मंत्री ताल्लुकेके ज्यादासे-ज्यादा कस्बों और गाँवोंमें मद्यपान-विरोधी सभाएँ संगठित करेगा और शराब तथा मादक वस्तुओंकी बुराईको समाप्त करने और पूर्ण मद्य-निषेधके लिए कानून बनवानेके उद्देश्यसे जिन लोगोंको सहानुभूति हो, उन सभी लोगोंको इन सभाओंका सदस्य बनायेगा। इन सभाओंके सदस्योंके लिए किसी कांग्रेस कमेटीका सदस्य होना या नियमित रूपसे खादी पहनना आवश्यक नहीं है।

४. ऐसी प्रत्येक मद्यपान-विरोधी सभासे सम्बद्ध और उसके नियंत्रणाधीन एक स्वयंसेवक दल संगठित किया जायेगा जिसमें उन स्त्री-पुरुषोंको भर्ती किया जायेगा जो अहिंसाके सिद्धान्तमें विश्वास रखते हुए बिना कोई वेतन लिए सक्रिय सेवा करनेको तैयार हों। वे प्रान्तीय उप-समिति और ताल्लुका-मंत्री द्वारा समय-समयपर जारी किये गये आदेशोंका पालन करेंगे।

५. प्रत्येक माहके हर दूसरे रविवारके दिन मादक पदार्थों और शराबके विरुद्ध सभाओं और जुलूसोंका आयोजन किया जायेगा।

६. उपरोक्त मासिक सभाएँ करनेके अलावा प्राथमिक संगठनों और ताल्लुका-मंत्रीका कर्त्तव्य होगा कि अपने-अपने क्षेत्रोंमें जितनी सभाएँ कर सकें, करें और अपने-अपने क्षेत्रोंमें नशीली वस्तुओंकी बुराईसे लड़नेके लिए गाँव-गाँव और घर-घर जाकर लोगोंसे मिलें।

१. देखिए पृष्ठ २१६ और ४२९।

७. लोगोंको मद्यपानकी आदतसे विमुख करनेके लिए मद्यपान-विरोधी सभाएँ और कांग्रेस कमेटियाँ जहाँ सम्भव हो वहाँ उपयुक्त स्थानों और उपयुक्त समयपर अन्य स्वस्थ मनोरंजनोंका संगठन करेंगी।

८. प्रत्येक मद्यपान-विरोधी सभामें लोगोंको गम्भीरतापूर्वक नशीली वस्तुओं और शराबका प्रयोग न करनेकी शपथ दिलाई जायेगी।

९. प्रान्तीय उप-समितिकी अनुमति प्राप्त करनेके बाद, जहाँ कहीं भी उपयोगी ढंगसे किया जा सके वहाँ सभाएँ शराब तथा मादक वस्तुओंकी दूकानोंपर अपने स्वयंसेवकोंके धरने बिठा लें।

१०. सभाएँ जमींदारों और जमीनके पट्टेदारोंपर प्रभाव डालेंगी कि वे अपनी जमीनके पेड़ोंको मादक द्रव्य तैयार करनेके लिए ठेकेपर नहीं उठायेंगे।

११. सभाएँ मादक पेय और मादक वस्तुओंकी दूकानोंके ठेकेकी नीलामीमें बोली लगानेसे लोगोंको रोकेंगी।

१२. प्रत्येक माहके तीसरे रविवारको या उससे पूर्व प्रत्येक ताल्लुकेका मंत्री सूचनाएँ एकत्र करेगा और पूर्ववर्ती रविवारकी सभाओंकी संक्षिप्त रिपोर्ट और ताल्लुकेमें महीने-भरके दौरान किये गये अन्य कार्योंका विवरण प्रान्तीय उप-समितिको भेजेगा। प्रान्तीय उप-समिति इन रिपोर्टोंको समेकित करके कार्य-समितिको, तथा प्रकाशनार्थ अखबारोंको भेजेगी।

१३. मतदाताओं और नागरिकोंसे पूर्ण मद्य-निषेधके समर्थनमें लिखित प्रतिज्ञा कराई जाये। प्रतिज्ञा निम्नलिखित रूपमें होनी चाहिए और उसमें नाम तथा पूरे पते साफ-साफ अक्षरोंमें लिखे जाने चाहिए:

"मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि अपने देशके नैतिक, आर्थिक और सामाजिक कल्याण तथा प्रगतिके लिए मादक द्रव्यों और पदार्थोंका पूर्ण निषेध करनेके लिए कानून बनानेका पूरा समर्थन करूँगा। मैं यह भी घोषित करता हूँ कि किसी स्थानीय संस्था या प्रान्तीय और अखिल भारतीय विधान मण्डलके किसी चुनावमें मैं किसी ऐसे व्यक्तिको वोट नहीं दूँगा और न समर्थन करूँगा जिसने पूर्ण निषेधके प्रतिज्ञापत्र पर हस्ताक्षर न किये होंगे।"

इन प्रतिज्ञाओंको लेनेके लिए उपयुक्त किताबें प्रान्तीय कमेटियाँ वितरित करेंगी।

१४. जिलेमें कामकी दृष्टिसे आवश्यक होनेपर प्रान्तीय उप-समिति एक जिला मद्य-निषेध मंत्री नियुक्त कर सकती है।

१५. विधान-परिषदों और विधान-सभाओंके लिए अगर कभी चुनाव होंगे और इन चुनावोंमें यदि कांग्रेसी लोग भाग लेंगे तब कांग्रेसी उम्मीदवार अपनी चुनाव प्रतिज्ञा-में यह भी घोषणा करेंगे कि वे पूर्ण मद्य-निषेध लागू करायेंगे और सक्रिय रूपसे उसे कार्यान्वित करायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २३-५-१९२९

सामग्रीके साधन-सूत्र

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी फाइलें: जो नेहरू स्मारक संग्रहालय, नई दिल्लीमें सुरक्षित हैं।

गांधी स्मारक संग्रहालय, नई दिल्ली: गांधी साहित्य और गांधीजीसे सम्बन्धित कागजपत्रोंका केन्द्रीय संग्रहालय तथा पुस्तकालय; देखिए खण्ड १, द्वितीय संस्करण, पृ० ३५५।

साबरमती संग्रहालय: पुस्तकालय तथा संग्रहालय: जिसमें गांधीजीके दक्षिण आफ्रिकी काल तथा १९३३ तकके भारतीय कालसे सम्बन्धित कागजात रखे हैं; देखिए खण्ड १, द्वितीय संस्करण, पृ० ३५५।

'अमृतबाजार पत्रिका': कलकत्तासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'आज': वाराणसीसे प्रकाशित हिन्दी दैनिक।

'ट्रिब्यून': अम्बालासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'नवजीवन': (१९१९-१९३१): गांधीजी द्वारा सम्पादित और अहमदाबादसे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक।

'प्रजाबन्धु': अहमदाबादसे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक।

'फॉरवर्ड': कलकत्तेमें चित्तरंजनदास द्वारा आरम्भ किया गया अंग्रेजी दैनिक।

'बॉम्बे क्रॉनिकल': बम्बईसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'यंग इंडिया' (१९१९-३१): गांधीजी द्वारा सम्पादित तथा अहमदाबादसे प्रकाशित अंग्रेजी साप्ताहिक।

'हिन्दुस्तान टाइम्स': नई दिल्लीसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हिन्दू': मद्राससे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी: जो स्वराज्य आश्रम, बारडोलीमें सुरक्षित है।

'बापुना पत्रो – १: आश्रमनी बहेनोने' (गुजराती): सं० काका कालेलकर, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद।

'बापुना पत्रो – ६: गं० स्व० गंगाबहेनने' (गुजराती): सं० काकासाहब कालेलकर, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९६०।

'बापुना पत्रो – ७: श्री छगनलाल जोशीने' (गुजराती): सं० छगनलाल जोशी, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९६२।

'बापुना पत्रो – ९: श्री नारणदास गांधीने' (गुजराती): सं० नारणदास गांधी, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९६४।

'बापुनी प्रसादी' (गुजराती): मथुरादास त्रिकमजी, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(१५ फरवरी, १९२९ से ३१ मई, १९२९ तक)

१५ फरवरी : गांधीजीने मीरपुर-खासमें सार्वजनिक सभामें भाषण दिया। सिन्धका दौरा समाप्त किया।

१५ फरवरी या उसके पश्चात् : सिन्ध कांग्रेससे सम्बन्धित मामलोंपर वक्तव्य जारी किया।

१७ फरवरी : दिल्ली पहुँचे।
कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठकमें भाग लिया।

१९ फरवरी : दिल्लीमें।
वाइसरायके संग विट्ठलभाई पटेलकी पार्टीमें शामिल हुए।

२० फरवरी : साबरमती आश्रम पहुँचे।

२८ फरवरी : अहमदाबादमें तिलक प्रतिमाके अनावरणपर, ध्वजा-रोहण समारोहके अवसरपर तथा सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

३ मार्च : कलकत्ता पहुँचे।

४ मार्च : कलकत्तामें श्रद्धानन्द पार्कमें भाषण करते हुए लोगोंको विदेशी वस्त्रका बहिष्कार करनेकी सलाह दी। भाषणके बाद विदेशी वस्त्रोंकी होली जलाई गई। गांधीजीको गिरफ्तार कर लिया गया और बादमें व्यक्तिगत मुचलकेपर छोड़ दिया गया।

५ मार्च : कलकत्तामें विदेशी वस्त्रोंकी होली जलानेसे सम्बन्धित घटनापर रात ढाई बजे समाचारपत्रोंको एक वक्तव्य जारी किया।
सुबह एस० एस० 'एरोंडा' से रंगूनके लिए रवाना हुए।

८ मार्च : रंगून पहुँचे। सार्वजनिक सभाओंमें भाषण दिये।
फ्री प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिसे भेंट की।

९ मार्च : रंगूनकी सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

१० मार्च : रंगूनमें गुजरातियों, आर्य-समाजियों, भारतीय द्वारपालों, भारतीयों तथा विद्यार्थियोंकी सभाओंमें भाषण दिये।

१२ मार्च : मौलमीनमें। गुजरातियोंकी सभामें भाषण दिया।

१३ मार्च : मौलमीनकी सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

१४ मार्च : रंगूनमें रामकृष्ण मिशन तथा स्त्रियोंकी सभामें भाषण दिया।

१५ मार्च : पौंगदे और प्रोममें भाषण दिये।

१८ मार्च : मांडलेकी सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

१९ मार्च : टौंगूकी सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

२० मार्च : श्रमिकों तथा विद्यार्थियोंकी सभाओंमें भाषण दिये।

२२ मार्च : रंगूनसे कलकत्ताके लिए रवाना। १,५०,००० रु० से ज्यादा एकत्र किये।
२४ मार्च : कलकत्ता पहुँचे।
२६ मार्च : चीफ प्रेसीडेंसी मजिस्ट्रेटकी अदालतमें अपने मुकदमेकी सुनवाईके दौरान बयान दिया।
दिल्लीके लिए रवाना।
२७ मार्च : दिल्ली पहुँचे। कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठकमें शामिल हुए।
अहमदाबादके लिए रवाना।
२९ मार्च : अहमदाबादमें एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिसे भेंट की।
३० मार्च : मोरवीमें वल्लभभाई पटेलकी अध्यक्षतामें आयोजित पाँचवी काठियावाड़ राजनीतिक परिषदमें भाषण दिया।
१ अप्रैल : रातको मोरवीसे रवाना।
२ अप्रैल : अहमदाबादमें।
५ अप्रैल : बम्बई पहुँचे। बम्बई प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी नई इमारतके उद्घाटन समारोहपर भाषण दिया।
बम्बईसे आन्ध्र प्रदेशके लिए रवाना हुए।
६ अप्रैल : आन्ध्र देश पहुँचे।
हैदराबाद (दक्षिण) और सिकन्दराबादकी जनताकी ओरसे दिये गये संयुक्त अभिनन्दनपत्रका उत्तर दिया।
७ अप्रैल : हैदराबादमें। स्थानीय स्कूलोंका दौरा किया।
बैजवाड़ाके लिए रवाना।
८ अप्रैल : नन्दीगाँवमें रात्रि व्यतीत की।
९ अप्रैल : सवेरे नन्दीगाँवमें भाषण दिया।
बैजवाड़ा पहुँचे।
१० अप्रैल : बैजवाड़ाकी सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।
११ अप्रैल : रात आठ बजे वुय्यूर पहुँचे।
१२ अप्रैल : वुय्यूरमें भाषण दिया।
१३ अप्रैल : मसूलीपट्टममें अरुन्धती आश्रम, आन्ध्र जातीय कलाशाला तथा स्त्रियोंकी सभामें भाषण दिये।
१७ अप्रैल : मसूलीपट्टमसे गुन्टूरके लिए रवाना।
गुन्टूर, केरिचेडु तथा पेडानानडिपाडुकी सार्वजनिक सभाओंमें भाषण दिये।
२४ अप्रैल : पोतुनूरुमें विवेकानन्द पुस्तकालयका शिलान्यास किया।
रात सवा आठ बजे गुण्डुकोलनु पहुँचे। वहाँ रात बिताई।
२५ अप्रैल : टाडेपल्लीगुडममें भाषण दिया।
२६ अप्रैल : अचन्तामें भाषण दिया।
२७ अप्रैल : चगल्लुके आनन्द निकेतन आश्रममें रात बिताई।
२८ अप्रैल : शाम ३ बजे विजगापट्टम पहुँचे।
विजगापट्टमकी सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

१ मई: अनकापल्लीकी सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।
२ मई: तुनीकी सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।
३ मई: पीठापुरमकी सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।
५ मई: पालीवेलामें।
६ मई: रेजोलमें।
७ मई: राजमुंदरीकी सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।
८ मई: सीतानगरम्की सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।
९ मई: पोलावरम्की सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।
१० मई: बुचिरेड्डीपालम तथा कावलीकी सार्वजनिक सभाओंमें भाषण दिये।
१३ मई: नेल्लोरमें।
१९ मई: नेल्लोरमें।
२० मई: कुरनूलमें।
२१ मई: अडोनीके विदाई समारोहमें भाषण दिया।
आन्ध्र देशमें ३१९ गाँवोंका दौरा करके तथा लगभग २,६४,४०० रु० इकट्ठा करनेके बाद बम्बईके लिए रवाना हो गये।
२२ मई: रातको बम्बई पहुँचे।
२४ मई: बम्बईमें 'बॉम्बे क्रॉनिकल' के प्रतिनिधिसे भेंट की।
२५ मई: अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें भाषण दिया।
२८ मई: साबरमती आश्रम पहुँचे।
३१ मई: साबरमती आश्रममें।

शीर्षक-सांकेतिका

विविध

सांकेतिका

ख

च

छ

ज

झ

ट

ठ

ड

त

थ

द

ध

फ

ब

भ

म

य

र

ल

व

श

ह